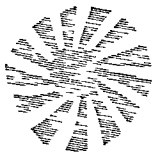


नई कहानी: प्रकृति और पाठ

श्री सुरेन्द्र



बड़ कदानी

प्रकृति
और
पाठ



परिवेश प्रकाशन

नई कहानी प्रकृति ओर पार
नई कहानी प्रकृति ओर पार
नई कहानी प्रकृति ओर पार

०

०

०

नई
कहानी
प्रकृति
ओर पार

श्री सुरेन्द्र

C धी सुरेद्र

- प्रथम सस्करण नवम्बर १९६८
- मूल्य २५ ००
- प्रकाशक परिवेश प्रकाशन
बी० १७७ मंगल भाग वापू नगर,
जयपुर
- कना सज्जा प्रमचद
- मुद्रक कण्डस प्रिण्टस एण्ड स्टेसनस
जौहरी बाजार जयपुर-३

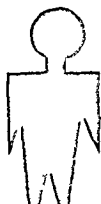
ऋषि व्यक्तित्व

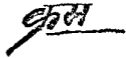
आचार्यं देवेन्द्रनाथ शर्मा

को

सादर

सविनय





नई कहानी : प्रकृति

यह पुस्तक और इसके बारे में	६
नई कहानी और उसकी प्रकृति	१

नई कहानी • पाठ

दोपहर का भोजन	१०७
भ्रमरकान्त	
बापसी	११४
उषा प्रियम्बदा	
दस बप भाव	१२३
धोमप्रकाश निमल	
खोई हुई दिशाएँ	१३४
कमलेश्वर	
मेरा दुश्मन	१४७
कृष्ण बल्देव वद	
आइस बग	१५६
दूधनाथसिंह	
गुलकी बप्नो	१७४
धमवीर भारती	
सदन की एक रात	१८६
निमल वर्मा	
तीन बियियाँ	२१७
फणीश्वरनाथ रेणु	
सून का रिश्ता	२३०
भीष्म साहनी	
एक और जिदगी	२४२
मोहन राकेज	

रूप और ब्रवा	२७०
माकण्डेय	
तीसरा भागमी	
मन्त्र भंडारी	२७६
टूटना	
राजेन्द्र यादव	३००
सोतर	
रामकुमार	३३०
कुछ बच्चे	
कुछ माएँ	३४१
रमेग बशी	
नौ सात छोटी परनी	
रवीन्द्र कालिया	३४६
दाम्पत्य	
राजकमल चौधरी	३५६
एक बुत सिक्कन का जन्म	
विजया चौहान	३७४
विदा महाराज	
शिवप्रसाद सिंह	३८१
कोसी का घटवार	
शेखर जोशी	३९०
दो दुस्रों का एक सुख	
धालेश मटियानी	४०२
शव यात्रा	
श्रीकान्त वर्मा	४१६
समय	
सुरेन्द्र	४२४
शेष होते हुए	
ज्ञानरजन	४३०
सेव	
रघुवीर सहाय	४४२

परिशिष्ट

शुद्धि-पत्र

यह पुस्तक और इसके बारे में

करीब तीन चार वष पहले की बात है, जो उतने पहले की नहीं भी हो सकती थी लेकिन इसीलिए महत्वपूर्ण भी न होती ? कम-अज कम मेरे तई ?

‘अनुबध कार्यालय म ‘नई कहानी पर आयोजित एक गोष्ठी के दौरान मन डा० राम विलास शर्मा स ‘नई कहानी दशा दिशा सम्भावना’ के लिए एक निबध पा सकने का आग्रह किया था डा० राम विलास शर्मा ने कहा था कि कमलेश्वर ने भी उनसे ‘नई कहानी पर लिखवाना चाहा था, जिसके उत्तर मे उन्होंने उन बीस कहानिया, (शायद बीम ही या कि कुछ कम बढ, मुझे पूरे तौर पर इस समय याद नहीं) को जुटा देने के लिये लिखा था (या कहा था) जो अब तक नई समझी जाती रही हैं गो यह उत्तर श्री कमलेश्वर को दिया गया था और प्रकारान्तर से मुझे भी इंगोलिये सहार भी लेना पडा और तभी से इस पुस्तक को तयार करते हुए, जबकि आज आपके हाथो सोंप रहा हूँ, तब डा० राम विलास शर्मा का धन्यवाद देना अपना कतव्यगत सक्ल्प समझता हूँ और इस सक्ल्प निर्वाह पर खुशी महसूस करता हूँ अपनी समूची आतरिकता मे यह खुशी इसलिए भी महसूस करता हूँ क्योंकि दबावा से थकी आज की जिदगी मे जिस कुछ का निर्वाह नहीं हो पाता वह सक्ल्प ही तो हैं कहू कि आदतन आस्कर वाइल्ड का यह लिखना—अच्छे सकरपो की तरह वायदे भी तोडने के लिए (शायद टूट जाने के लिये) ही किये जाते हैं—मुझे अपने ज्यादा करीब लगता रहा है और ज्यादा सुविधापूर्ण भी लेकिन इसका इजहार नहा और खासतौर पर यहाँ तो और भी नहीं ,—

‘नई कहानी के समूचे पाठ को एक ही जगह देख पाने की माँग दरअमल— डा० राम विलास शर्मा की ही माँग नहा है बल्कि यह माँग उन तमाम समीक्षका, दृष्टिवान मित्रा और सजग पाठका की भी हो सकती है और कदाचित् है भी जो अपनी क्या समझ को नई कहानी’ की आज तक की वस्तु-रूपगत विकसित हदा और हलचलो से परिचित विवसित करना तो चाहते ही हैं अपनी गहरी दिलचस्पी

की वजह से उसमें दूर तक सामंजस्य और शायित्व का निर्वाह भी करना चाहते हैं और इस तरह सीधे ही पाठ के माध्यम से 'नई कहानी' के बारे में अपनी कोई राय बनाना चाहते हैं या फिर बनी बनाई राय बदलना चाहते हैं। इस लिहाज से भी और इसके बावजूद भी, यहाँ मेरा प्रयत्न रहा है कि 'नई कहानी' के सम्बन्ध में पाठ को अलग अलग उसके बदले और बदलते हुए आयामों में एकत्र किया जाय। इसलिये ऐसा भी हो गया है कि दो एक कथाकारों की प्रतिनिधि समझी जाने वाली कहानियाँ यहाँ नहीं आ सकी हैं, बल्कि उन्हें बूझकर ही छोड़ दिया गया है इसकी वजह थी और वह यह कि मेरी दृष्टि प्रतिनिधि नई कहानियों को छुटा देने पर नहीं थी (हानाकि अब यह अलग बात है कि उस दृष्टि से भी यहाँ प्रतिनिधित्व हो सका है लेकिन वह एक अलग ही बात है और मुझे उसके होने से आखिर मुजायबा क्यों हो ?) 'नई कहानी' के पाठ की प्रतिनिधि दे पाना ही मेरे अभिप्राय में था, इतना कुछ स्पष्ट होने पर भी अगर मतलब यह बठाया जाय कि मने कुछेन कथाकारों की तथाकथित प्रतिनिधि कहानियों की अवमानना की है तो इस मतलब (?) से किसी का क्याकर राका जाय ?

इस तरह यह पुस्तक अब तक की 'नई कहानियों' के 'पाठ' की सम्पूर्ण होती हुई प्रतिनिधि पुस्तक है (प्रकृति भाग पर कहने के लिए आगे गुजाइश है, इसलिए उस पर वही) अपने सक्षम में यह वहाँ तक अथवान बन पाई है, इस पर मुझे अलग से कुछ नहीं कहना है और शायद इसका मुझे हक भी नहीं है, अगर हक हो भी तब भी यह काम में मित्रा की समीक्षा बुद्धि के ही हवाले करता हूँ, क्योंकि बावजूद तमाम बातों के आखिर यह प्रयत्न है ता उन्हीं के लिए ही

कहानियों का चुनाव करते समय सम्पादक के सामने जो श्रेष्ठ कठिनाइयाँ होती हैं या हो सकती हैं, मेरे सामने महज उतनी ही नहीं थी, इसलिए कि बिबली पीढी के कथा-समीक्षक-मित्र जिन कहानियों को बतौर नई प्रतिनिधि कहानियों के पेश करते या उछालते या जहाँ कहीं मौका लगा बहुतायत से उद्धृत करते रहे थे उनमें से काफी कुछ कहानियाँ मेरे यहाँ नई नहीं थी और प्रतिनिधि तो और भी नहीं नई कहानी के पाठ को अलग अलग सन्दर्भों में खोलने व उसे क्रम से तरतीब देने में भी वे पूरे तौर पर अभिप्रायहीन थीं। ये प्रतिनिधि कहानियाँ कौन कौन सी थी और इनके प्रतिनिधि न होने में रचनागत कौन-कौन से कारण हैं इस पर बहस के लिए पूरी गुजाइश होने हुए भी इसके लिए न तो यहाँ मौका ही है और न जरूरत ही। इतना जरूर कि इन उछाली गई या 'नई' के नमूने बतौर पेश की गई कहानियों की उनकी रचनाशीलता के चलते या कथा समीक्षा बुद्धि के चुनाव की वजह से या 'नई कहानी' के प्रतिमानों की सही आयाम देने के अभाव से चर्चा-परिचर्चा या बहस-मुवाहिज का उतना विषय नहीं बनाया गया था जितना कि

तत्कालीन सामग्री के रूप में सहज सुलभ होने के कारण, मित्रों को सफ़ाई देने के लिए या फिर प्रच्छन्न तौर पर मित्रों के साथ सम्बन्ध निवाह करने के लिए। इसलिए इन तथाकथित नई कहानियों का 'नयापन' किस स्तर का हो सकता है, यह तथ्य अलग से स्पष्ट की मांग करता है और जैसे-जैसे 'नये के प्रति अतिरिक्त मोह (किसी स्तर पर रोमान की हद तक पहुँचा हुआ) कटता जा रहा है और कथा-समीक्षा में जमा हुआ धुंधलका छूटता जा रहा है, वैसे-वैसे कहानी के नयेपन की रेखाएँ स्पष्टतर होती जा रही हैं और उनके आलोचकों में इन तथाकथित नई कहानियाँ के 'नयेपन' पर शक्य विश्वास का रूप लेती जा रही हैं, इसलिए इस बात की ज़रूरत अब कथा-समीक्षकों के यहाँ बराबर महसूस की जाने लगी है कि इन कहानियाँ के 'नयेपन' का जायजा सिरे से एक बार फिर ले लिया जाय, जो इस बान का भी नज़रन्दाज नहीं किया जा सकता कि नई कहानी पर हुए पिछले बहस-मुवाहिजे में जिन कहानियाँ पर जाने अनजाने 'नई' का माहुर लगा दी गई है उनमें से निश्चय ही कुछ नये कथा उमेद में अपनी जगह बरकरार बनाये हुए हैं कोई शुरुआत के तौर पर तो कोई थोड़ा हटकर लेकिन यह कहानियाँ बुद्धि हो हैं, जो महज आकस्मिकता के चलते ही हैं, सही समीक्षा-बुद्धि के चुनाव का मतीजा होकर नहीं।

हालाँकि यह एक आसान तरीका हो सकता था कि इस बहस मुवाहिजे में सामने आई हुई कहानियों को ही यहाँ सकलित कर लिया जाता, क्योंकि सम्पादक के लिए यह काय सुविधापूर्ण तो होता ही, वह खतरा उठाने से भी बच जाता खतरा इस माइन में कि जब इन कहानियाँ के रहते दूसरी कहानियाँ को लिया जाता तो पाठकों को यहाँ अपनी आग्रह-पुष्ट कहानियाँ को न पा सकने का जो सदमा होता वह तो होता ही, बिचली पीढ़ी के मित्र समीक्षकों की मन-बुद्धि और आँसू में रची बसी उनकी स्नेह-पालिता कहानियों के अपदस्थ होने से उनका समीक्षा आनन्द भङ्ग सकता था और यह भङ्ग हुआ आनन्द कितना खतरनाक (लिजलिजा और व्यक्तिगत) हो सकता है (इसके कुछ नमूने मैंने 'प्रकृति' भाग में उद्धृत किये हैं) इसे भुक्तिभोगी अर्द्धी तरह जानत हैं। समीक्षा प्रचारित लोकप्रिय नई कहानियाँ (लाक प्रिय कहानियाँ कितनी नई और क्लारमव होती हैं ? इस पर अलग से विचार किया गया है) को अगर यहाँ ले लिया जाता, तो इसमें उनके समीक्षा आग्रह ही पुष्टि पाते, हालाँकि वे इस बान से भी दुखी होते (क्योंकि तब उनसे उनके आनन्द प्रकाशन का एक नामाव मौका छिन जाता) और उन्हें कुछ न कह सकने यानी विरोध न कर सकने की स्थिति में डाल दिया जाता जो उनके लिए कम तबलीफ़देह बात न होनी और ये तबलीफ़ देह बातें मामूली नहीं होती, जिन्दगी के साथ-साथ दुखियारा स्वभाव ही विरासत में छोड़ जाती हैं "मुखिया सब सत्तार है दुगिया दास बबोर है 'लेकिन पाठकों का अपने (समीक्षा द्वारा ग्रहण किए गए) आग्रहो

को इन कहानियाँ से पुष्ट करने में मदद जरूर मिलनी और हमने उन्हें खुशी भी होनी लेकिन इतनी घामान और महज आसानो से मिथो हुई खुशियाँ अचमर कितनी मेंटमी सात्रिन होती है, यह कोई ऐसा तथ्य नहीं है जिसे समझने के लिए महान अचन की दरकार हो। फिर ऐसी आसान खुशियाँ लेकर भी क्या किया जाय जो खुद की समाधा बुद्धि के लिए तो आग्रह उत्पन्न करती हो हैं, व नयी रचनागोचना के उमेप की समझ न देकर एवज में आपनो गलत रास्ते भी दे जाती हैं। कौन नहीं जानता कि जहाँ ऐसे समीक्षा आग्रह ने आपन निवप पर पूरा न पडन वाल या समूचे निक्षप को ही डाय सेन वाले नये रचना उमेप को नकारने में मदद की है वहाँ आठ काट की रचनाआ के प्रयासका का काटि में उन्हें सामित भी कर दिया है, बल्कि इतना और भी कि तमाम नए क्या उमेप के विरोध में अनजान ही ये नए उमेप के हितपी खडे हो गए हैं और एक साग काट की बनती हुई कहानियो के वापस हो रहे हैं और इस तरह इन तमाम स्थितियाँ में दुली कबार पयो मित्र समीक्षका न आपन ही साथ युग-बोध के समानांतर न चन पाने का सनरनाक खेल भी खेला है और जिन तत्वशाँ मित्रा ने जिन्दगा और संसार को ही गल समझा हुआ है वे यदि क्या समीक्षा में भी यही गन आपनाने है तो इगम अजोर बुद्ध भी नहीं है।

कहानियाँ की चुनाव सम्बन्धी कठिनाइयाँ का अर्थ नहीं था क्योंकि नि तोरप्रियता के आधार पर वही-वही कहानियाँ बिना उनको पाठ सिगाया और प्रकृति सम्भावनाआ का ग्यान लिए हुए बार-बार सक्कना में ली जाती रही हैं जिनका पिष्ट पेरण उनके अर्थहीन होने जान की स्थिति में तो सुझ ही रहा है साग काट की ठहरा हुई क्या-शक्ति का मूल भी बनता जा रहा है और ये कहानियाँ लगानार अपने कानात्मक विवाग में जिन्गी का परड में पद्य छुटनी और चुननी जा रही हैं इतना ही नहीं बल्कि यह कहानियाँ आपन अस्तित्व में एनिहागिग होना जा रही हैं इन तमाम सतरा के बावजूद यहाँ कुछ पिष्ट-प्रति कहानियाँ को महज एगिग ल किया गया है कि व आपन क्रम में आठ के अन्त हुए आधाना का अन्त-अन्त ता प्रतिनिधित्व करती ही है निमित्त कान-आठ के अन्त में आठ का समूचा अन्तव्यता का भी अनुत्त करती है एन कागा में साग काट के कारण कुछ कहानियाँ काउ नई पिष्ट-पेरण के बावजूद ल सन में मुझ सुझाना महा हुआ और एगिग भा कि एन कहानियाँ के न लिए जान पर इतर सगर अना दूगगे कहानियाँ में एन ता पूरे रंग में गन उतर पा रहे थे (या आनुनिक जिन्गी का अन्तव्यता माध्यम में अन्त का उनका अना गन हिनरो है) और अन्त उतर में पा रहे थे ता एन पुम्त में दूगगा कहानियाँ के गान छुटने हुई पाठ का अन्तिका और उन अन्तिका का पूरा अन्तिका में व काग जिन्गी अन्तिका अन्तिका का अन्तिका नई ल पा रहा था अन्तिका अन्तिका एन अन्तिका के अन्तिका का भी गान अन्तिका रहा है कि अन्तिका अन्तिका अन्तिका का समानांतर आनु

निक बोध और कलात्मक वजन में इन्हीं लेखकों की दूसरी कहानियाँ हैं और कदाचित् लेखकों के प्रतिनिधित्व में उनीस भी पड़ती हैं, तब भी मने उन्हें बिना सकार के ले लिया है, इसलिए इस पुस्तक की कोई एक कहानी इसी पुस्तक की किसी दूसरी कहानी का 'पाठ प्रकृति में पिष्ट-मपण नहीं है बल्कि वह 'नई कहानी' को प्रकृति के एक आयाम की कहानी है यानी ये कहानियाँ 'नई कहानी' के प्रति आयामों का प्रतिनिधित्व करती हुई, उसे (पाठ को) अलग अलग इकाइयों में सम्पूति देती हैं। इसके लिए यह जरूरी हो गया था कि केवल उन प्रतिष्ठित लेखकों की ही कहानियाँ यहाँ न ली जायें, जो 'नई कहानी' की पाठ प्रकृति को एक हद तक ही उतार सके हैं, बल्कि उस 'प्रकृति' को आगे और उसके विरोध में आज के जीवन के सही वास्तव को सही सम्प्रेषण देने वाली कहानियों को भी यहाँ चुना जाना इसीलिए मने प्रतिष्ठित लेखकों के साथ-साथ उन प्रतिष्ठित होते हुए लेखकों की कहानियों को भी यहाँ लिया है जो अपने परिवेश और उस परिवेश में एक व्यक्ति की नियति को अनुभव करने में लूफ रहे हैं और इस तरह व्यक्ति और परिवेश की विडम्बना और सक्रान्ति का अपनी कहानियाँ के माध्यम से सही आकार (गेप) दे कर पेश कर रहे हैं।

कथा सफलता की हिंदी में जो परम्परा रही है यह सफलता उसमें हटकर है यानी हटकर किया गया प्रयत्न सफलता-परम्परा और उनको विस्तारित करने को यहाँ देना, अस्त में परीक्षित और कही गई बात होगी और अपने अर्थ में कदाचित् गुंजाइश हीन भी इसीलिए हम चर्चा का अभाव मानते हुए वम इतना भर कि अत तक के कथा-सफलता में सफलता-वर्तिका का लक्ष्य (लक्ष्य वाम तीर में) और दृष्टि सब श्रेष्ठ कहानियाँ (सब श्रेष्ठ कहानी होना है कहानियाँ नहीं) की पकड़ में हाँफने हुए यात्रा करना था या फिर व्यावसायिकता और पाठयक्रम (पाठ्यक्रम वाले सफलता भी व्यावसायिकता के नतीजा में सही हैं) सम्बन्धी नीतियों के गिक्का में बुद होकर रह जाना था, नतीजा यह होना था कि लट्ट पर समूचे अम में केन्द्रित अस्त दृष्टिहीन हो जाना था और दृष्टि में कटा हुआ लक्ष्य एक नटकाव मात्र होकर रह जाना था। यह नहीं, तो सफलता-वर्तिका रचि की दुहाई देकर किसी कान-बण्ड की रचि कर कहानियों को शोडिया तीर पर एक जगह जुगुलता था बहुत हुआ तो उन कहानियों के साथ लेखकों का सखिण्य परिचय (नाम-नाँव और जन्म तिथि और कृतियाँ की गिनती) और ली गई कहानी पर चलनी हुई मखिण्य टिप्पणी जाड दी जानी थी रचनात्मक या समाक्षात्मक दृष्टि जिसे कहते हैं उनका इन सफलता में नितात अभाव रहता था। बुद्ध सफलता-वर्तिका खान मनसरपन से बर्गोरण वाले परिगणनात्मक पद्धति के सफलता की आयोजना में विद्वान्त रखने में और इन तरह पञ्चीम सखिण्य का की पञ्चीस प्रतिनिधि कहानियाँ उन्नि या नवादिन (अन उन्नि) लेखकों की मय श्रेष्ठ कहानियाँ इम सन् में उस मन् तक का प्रतिनिधि कहानियाँ 'प्रतिनिधि प्रेम

कहानियाँ 'जातीय कहानियाँ गाँव जीवन की कहानियाँ 'कस्बाती शहराती कहा
नियाँ आदि में सकलन-दृष्टि का मनचीता साक्षात्कार कर लेते थे, गरज कि व तमाम
आधार इन सकलना की योजनाओं में हुआ करते थे जो कम अज कम साहित्यिक जुम्मे
वारी से बिल्बुल घरी होते हैं। बावजूद इन असहित्यिक प्रयत्नों के इन सकलना
की साहित्यिक गौरव दिलाने का समोदात्मक अभियान चलाया जाता था

आहिर है कि यह सकलन इन तमाम दृष्टियों (?) में से किसी भी दृष्टि का
हामी नहीं है। और इसमें जो दृष्टि बरती गई है वह इसे अपने लक्ष्य से काटती
नहीं, बल्कि स्वयं लक्ष्य हाकर उसके साथ जुड़ जाती है यानी यहाँ दृष्टि सकलन की
आयोजिका और निर्देशिका ही नहीं है स्वयं उसका लक्ष्य भी है और अगर दुहरा देना
जुम करार न दिया जाय तो इस सकलन की दृष्टि के सहित नई कहानी पाठ प्रक्रिया
और 'नई कहानी की प्रकृति को समूचे तौर पर यहाँ देख पाना ही विशिष्ट है।

इसलिए इस दृष्टि से ही नाइतिफाकी रखने वाले मित्रों को इस पुस्तक से भी
शिकायत हो, यह स्वाभाविक ही है, बल्कि मेरी ओर से इन मित्रों को शिकायत का
मौका न देना, इनके प्रति सरासर ज्यादाती करना होगा।

शिकायत उन ऐकेडेमिक मित्रों को भी हो सकती है, जो हर सकलन को
पाठ्य क्रम में ली जाने वाली पुस्तक के रूप में ही खेबन के आदी हैं और कुछ उसी तरह
से बतौर बीस-पच्चीस पृष्ठों की भूमिका—जिसमें भाष्य प्रया से जानन क्याओ तक
परम्परा पाए कहानी के इतिहास और तत्वा में गिनाई जान वाली मुविधात्मक या सर
लोकृत छात्रापयोगी क्या चर्चा—को अपेक्षा रखते हैं! निराशा उन मित्रों को भी
होगी, जो देगी-विदेगी लेखकों के प्राप्त वाक्य और देगी-विदेगी पुस्तकों से डेर-डेर
उदाहरण देकर अपनी (?) बात कहने के कायल हैं वन तरह व अपनी बात तो सर
क्या कह पाने हैं उन देगी विदेगी लेखकों की बात को भी कुछ का कुछ बना देते हैं
या इन्वर्टेड कामाज हटाकर दूसर की बात को अपनी बात बना लेते हैं। यह मुशौंग
घरल में वही लेखक (सम्बाधन को विडम्बना में घरा नहा जा सकता) लगाते हैं जो
अपनी बात में घुब गए होने हैं। इन लेखकों की स्थिति आकाश में के मानिन
है तबाल यह नहीं है कि देगी-विदेगी पुस्तक में क्या लिखा है (उने पाठ्य पर
छोड़िए वह पढ़ लेगा) बल्कि तबाल तो यह है कि आपका क्या कहना है? जो
विद्वान समासत हर नए प्रयत्न की जडे भाष्य ग्रन्थों में तजानने की सत पाठ चुके हैं
और उससे बटे हुए या टोक उमने विरोध में उमेय पाने हुए किसी भी नए प्रयत्न के
अस्तित्व को नकारना अपनी व्यक्तिगत या पाढ़ा मन प्रतिष्ठा कागवान बनाए हुए हैं
और किसी भी तम्य को समझन या समझान व लिए तजरोलता का नाम पर एग
भावात्मक उद्गार प्रकट करत हैं कि समझदारा चमकतुन होकर रह जाती है, यहाँ के
भा निराश हने।

धर्म-परायण पाठक और नीतिधर्मा समीक्षक को यहाँ कुछ कहानियों को लेकर आपत्ति हो सकती है और उनके कारण से यह आपत्ति बढ़ाचित् सही भी है लेकिन वे जिन बटखरा से—वे बटखरे गुजरे जमाने के नियमन में तो किसी बदर सहायक हुए थे—नई कहानी की तोल करना चाहते हैं उनकी भेरे यहाँ कोई ग्रहणियत नहीं है, इसलिए कि श्लील अश्लील के फीते साहित्येतर हैं साहित्य का सत्य ठीक वही नहीं होता, ज्यादा सही होगा यह कहना कि ठीक उसी तरह नहीं होता जिस तरह वह समाज का सत्य होता है यानी साहित्य और समाज के सत्य में प्रक्रियात्मक अन्तर है।

सम्भावनाएँ लिए हुए नये जीवन बोध के समानान्तर तीन दर्जन से भी अधिक प्रतिष्ठित और प्रतिष्ठित होती हुई प्रतिभाएँ आज कथा-लेखन कर रही हैं। स्वाभाविक है कि कुछ को मुझे प्रस्तुत पुस्तक को और बड़ा आकार न दे पाने की मजबूरी में छोड़ देना पड़ा है—इसमें उनकी अवमानना जसा कुछ भी नहीं है—और उनके लिए मैं एक अलग पुस्तक की बात सोचता हूँ, अलग पुस्तक की मतलब इस पुस्तक की दूसरी जिल्द की

‘पाठ प्रकृति को खास आयाम देने वाली कोई कहानी, हो सकता है कि यहाँ ली जाने से रह गई हो, गो इस कारण से मने पूरी सतर्कता बरतनी चाहिए है फिर मेरी अपनी सीमाएँ तो हैं ही।

पिछले दिनों तक हिन्दी ‘नई कहानी’ पर बहस मुवाहिसे या आयोजित गोष्ठियों में व पत्र-पत्रिकाओं के स्तम्भ और हाशिया पर चर्चा-परिचर्चा के दौरान एक बात धराबर खयाल को आसती रही कि चर्चा ‘नई कहानी’ पर शुरू तो होती है लेकिन अपनी गुरुआत के तुरन्त बाद वह या तो पश्चिमी कहानिया के सदभ और पश्चिमी समीक्षकों के उद्धरणों या नाम गणना की होड में फिमल कर खो जाती है या फिर नए कथाकार की किसी एक कहानी को लेकर उस पर समीक्षक मित्र नितान्त विरोधी मत-यो में पटे निकालते रहते हैं और तब हिन्दी ‘नई कथा’ की समीक्षा साहित्य की चीज न रहकर पहलवानों के ओर करने की जगह का मतलब देने लगती है

पहली स्थिति में समीक्षक की समझ हिन्दी ‘नई कहानी’ की पहचान से उतनी जुड़ी हुई नहीं रही है जितनी कि इस उत्साह से कि अधिक से अधिक विदेशी कथा और लेखकों के नाम गिनाकर वह साहित्य के विद्यार्थी को आतंकित कर सकें और आतंकित करन का यह चस्का हमारे कथा समीक्षकों के भुजबन को जिन रास्ता पर ले गया है, व रास्ते हिन्दी कहानी की प्रकृति-पहचान की तरफ बहुत कम लौटकर आते हैं विदेशी समीक्षकों और विदेशी कहानिया को गिनाने की लत ने यहाँ तक फैशन का रख पड़ा है कि गिना भारतीय कथा लेखन के परिवेग और जिन्दगी की प्रकृति का खयाल किए विदेशी समीक्षा के मुहावरे को उन पर भरपूर स्तेमाल किया गया है ऐसे कथा समीक्षकों के लिए प्रकण कथा समीक्षा में मुख्य सदभ—हिन्दी नई कहानी—महज

प्रसंग होकर रह गया है और प्रसंग-विदेशी कथा साहित्य-मुख्य सदस्य का मतलब हो गया है तब नतीजा यह होता है कि हिंदी कहानी पर जो चर्चा गुरु होती है तो सिर्फ हिंदी कहानी को छोड़कर और सब पर होती रहती है उस पर भी 'पाठ यह कि हिंदी कहानी की समीक्षा पद्धति की गम्भीर गुरुभ्रातृ हमारे ही 'वर कमलो' से हो रही है कभी कभी तो विदेशी लेखकों और कहानियों को गिनाने की सन इस हास्यास्पद स्थिति तक पहुँच जाती है कि सिर्फ दूसरे से नाम सुनकर ही उन्हें उद्धृत कर दिया जाता है, गनीमत यही तक होती तब भी सब किया जा सकता था, हालत यहाँ तक पहुँची है कि एक लेखक के नाम को तीन भागों में विभाजित कर तीन लेखकों का नाम बता दिया गया है इस समीक्षा में जोर इस बात पर नहीं रहा है कि नई हिंदी कहानी का कितना पढ़ा और समझा गया है, जोर इस बात पर ज़रूर रहा है कि विदेशी कथाओं को कितनी तादाद में पढ़ा और समझा (?) गया है अक्सर अपन आत्म-दर्शा राज की वजह से ये मित्र विदेशी कहानी की बनिस्बत हिन्दी कहानी पर कम सोचते हैं और यह सब हिन्दी कहानी के नाम पर हो रहा है और वह भी विदेशी लक्ष्यों में गोया यहाँ से कोई लक्ष्य विकसित ही नहीं किया जा सकता

मरे इस तरह सोचने का मित्र यह मतलब बतई न लें कि मैं विदेशी कथा लेखन और विदेशी साहित्य के पढ़ने-सोचने को दिलाफ्त करके कोई दरियानूस आग्रह में जुड़ रहा हूँ और हिंदी कथा प्रसंग में विदेशी समीक्षकों और विदेशी कथा उद्धरणों पर आपत्ति पैदा कर रहा हूँ, इतना मतलब ज़रूर लें कि विदेशी कथा-लेखन और विदेशी कथा-समाधा की बात प्रसंग के तौर पर ही हो, मुख्य विषय होकर नहीं वह इसलिए कि हिन्दी कहानी पर बहस करते-करते उसे बड़े बेमालूम ढंग से विदेशी कथा पर केंद्रित कर लिया जाता है और इस तरह हिन्दी कथा पर उचित और उचित यानावरण में विचार नहीं हो पाता

नई कहानी का चर्चा में भी एडगर एलिन पो, हायान फ्रान्सिस ग्रेट हाट थो० हेनरी हेमिंग्वे, फाकर, चम्ब, मापामा, जोना, पनाथर घनाथो घाम स्वाट फिटज जेरान्ड, कथरीन एन पोटर, जान स्टार्न बेन विनियम गागोयान मारियान जब लडन घाट्र जाण जा डिस्ट्रू फामू सात्र, काफ़ा रावट सुई स्पोरसन घाम्पर वाइन्ड, घायर वानन टाएन हड्याड विजिंग जार्ज बेन्स जान गाम्बर्नी सारेम मामरमट माम कथराइन मंगपीलड, निरोनाइ गागन, तुम्ब हटोन्डकन नोम्ननाय एच०जा० वान, बाल्जाक स्नापान दोन्तोयवम्की घारावार शुन कुप्रिन गोर्की गोत्रासाव फाम्पेर ल्या एहरन युग ईवान यूनिन, स्पोरन विनग जम्म ज्यारम फन घा वानार टामस मान कोरा एवे पुदियन नोत्रावाव फाम्सा मांग्ना प्रमन विकरर ह्युगा, टामस हार्नी हडमन, लूमन, सोन थना ममुान बरन घाम्दन धनन म्ल्वट मोराविद्या जया जन कावत्रू डूमन कपा घनाइ मम हानरिण म्यान ड्रवट फिम हम बेंडर, मोहानग बात्राएरी, गेड गाम्जर

राल्फ थाप्रस, फ्रेड चापेक, एदिना मारिस अर्नोस्ट सुस्तिग ईवान क्लीमा जोसेफ एकवोरेस्की लुदवीक अश्केनाजी और स्टीफेन स्पेण्डर वर्जीनिया बुन्फ पर्सील्युबक, ई०एम० फोस्टर, विक्टर फ़िरमुन्स्की, फिलिप गह्व हेनरी जेम्स रल्फ फॉक्स और विल्युल नए लेखक वालिन विल्सन विचारकों में लोनजाइनस नीटो, कीर्के गाद, शापेन हावर लुकाच और काली गुला' मिय ग्रव सिसिफस पतन, अजनवी प्लेग, यूलिसिस, कायाकल्प, 'धीन की दीवार, काना पानी, कासिन, टायल, 'इन्टी मेसी (की कहानियाँ) 'नीनिया मुक्ति पथ', 'नोलिटा विटर हुनीमून, 'एम्पटो कनवाम' व दूसरे-दूसरे ग्रन्थों में गुजरने का शौक पूरा कर सकता था लेकिन तब हिंदी कहानी पर रुकने के लिए दूसरे मित्रों की तरह ही बक्त बहुत कम होता और हिंदी नई कहानी पर गुरु की गई चर्चा 'नई कहानी' से उसी तरह घबराकर हो जाती, जिन तरह अब तक दूमरी के यहाँ होती रही है

हिन्दी कथा समीक्षा की दूमरी स्थिति में समीक्षक ने निहायत मुश्किलाना प्रदाज में एक-एक कहानी पर टिप्पणियाँ गोदना गुरु किया और कहानी समीक्षा को फिर विद्यापिया की समझने समझाने के स्तर पर न खड़ा करने की कोशिश की गो यह अर्थ तब की कथा की अध्येतवीय आलोचना से कारण बदला होने के कारण प्रकृत्या भिन्न जरूर थी लेकिन पटन वही था मतलब कि कहानी को लेकर समग्रता में और समूचे कथा सदन में विस्तार में जो विचार होना चाहिए था, वह न हो सका।

बुद्ध बाना की पुनरावृत्ति 'नई कहानी' की प्रकृति का समझने पहचानने में हुई है गोकि मुझे प्रसंगत उनका औचित्य लगा, इसलिए जरूरी भी समझा और बुद्ध मदभों में उपयोग भी किया यह इसलिए भी कि रात अधिक खुनासा और साफ हो सके या मित्रों की राय का मैं आनंद करूँगा

आभार और आभार पापित करते समय मुझे समीक्षक डॉ० राजेंद्र शर्मा का उनके 'नई कहानी' विरोधी रुख के लिए धन्यवाद इसलिए करता हूँ कि अगर उनकी विरोधी दलीलें मुझे लगातार न उकसाती रहता तो शायद यह पुस्तक काफी कुछ समय अभी और ले लेती न सही आज के प्रजातंत्र में लेकिन साहित्य में तो विरोधी दलीलें अपनी जगह रखती ही हैं विपक्ष पक्ष को जवादा मजबूत करता है और जवादा उजागर, उसकी नाव नितान्त बालू की नहीं हानी-होने को तो मित्रों के यहाँ बालू की नीचा पर हवाआ के महल तक होने हैं—यह अलग बात है कि जैसे-जैसे पक्ष चुनता जाता है वह इमारत सहित समूची बालू हो जाती है।

मुख्य नए कथाकार श्री राजेंद्र यादव के प्रति कृतज्ञता पापित करता हूँ उनकी खासी मदद न मिली होनी तो बुद्ध दिक्कतों सामने आ सकती थी, सहयोगी कथाकार मित्रों का कनाउटा हूँ।

इस तमाम खुशी में भाई देवी शंकर अवस्थी के न रहने की तकलीफ बराबर घाँसती रही है।

लेखन के समय काफी के प्यालो से सहयोग करते हुए अपनी भली-बुरी टिप्पणियों की एवज श्रीमती पूजा को स्मरण कर लेना कुछ खास बुरा न रहेगा हाँकि इसमें अचञ्छा क्या है ? इसको समझने की पूजा को ता दरकार है ही नहीं मुझ तक भी इसका कोई अर्थ स्पष्ट नहीं है।

प्रेस काफ़ी तयार करने के लिए प्रियवर हरिनारायण शर्मा का धन याद कर लेना जरूरी है।

लेखका के अकारादि क्रम से ही यहाँ कहानी क्रम दिया गया है हो यह भी सकता था कि उनकी उपलब्धि के लिहाज से, खास तौर पर लो गई कहानियों में निहित उपलब्धि को निश्चित करते हुए ही क्रम दिया जाता, लेकिन यह नहीं हो सका, इस लिए कि सबलनकर्त्ता की हैसियत ठीक बड़ी नहीं होती जो समीक्षक की होती है क्योंकि सबलनकर्त्ता लेखका का सहयोग पाता है और अगर लेखक चाहे तो उस सहयोग न भी करे जबकि समीक्षक लेखको को सहयोग करता है (और खास तौर पर पिछले दिना कुछ समीक्षक कुछ ही लेखका का खास सहयोग करते रहे हैं।) समीक्षक और सबलनकर्त्ता की इसी हैसियत के अनुपात से उनकी निर्भीकता में अन्तर आ जाता है

गा इस क्षत्र में हमें निर्भीकता का इतज़ार है जरूर

अंतिम कहानी प्रस कापी की भूल की वजह से अपने क्रम में नहीं जा सकी है उम्मीद है इस भूल को भूल ही समझा जायगा

और अंत में महज इतना भर कि यह पुस्तक अपने प्रकृति और पाठ वाले भाग के माध्यम से उन तमाम नई कहानी की समीक्षा सम्बन्धी रोचक मनोरंजक और विचारोत्तेजक हलचला विवादों नई कहानी में व्यतीत कहानी के मुद्दाबले आए बदलावा और पाठ में बदलते हुए रिस्ता उनके प्रति अब से पहले न करते गए कलात्मक व्यवहारों सही वास्तव को खुली आँखा देख पान वाले दबावों और नतीजों व आंतरिक सगतियों के समूचे कलात्मक प्रतिनिधित्व का विमर्शता वश चाहे दावा न करे लेकिन हम दिशा में इसका दावा है अरु और न सही दावा यहज एन कोशिश भर कोशिश—यानी

‘आगे के कवि मानिहें तो कविताई

न तो राधा कृष्ण सुमिरन को बहानो है।’

रामनवमी १९६८

‘अनुबन्ध’ कार्यालय

बी० १७७, मंगल माग, वापू नगर, जयपुर

[१]

नई कहानी : प्रकृति



नई कहानी और उसकी प्रकृति

“शेखजी बज्र म है यह रिदा की ।

गर बिगड़िएगा तो बन जाइएगा ॥

(पिछले दिनों 'नई कथा' की समीक्षा बुद्धि गैरोशायरी के हवालो से गुजरती रही है इसलिए इस तरह गुरुभ्रात के लिए मुझे भी नज़रन्दाज़ किया ही जा सकता है गोकि)

हिन्दी नई कथा-समीक्षा में कुछ मीधे सच्चे मित्रों ने यही सोचकर दाविला लिया था कि चलो बिगड़कर भी देख लेते हैं क्या पता कि बनने का रास्ता यही होकर गुजरता ही और जो लोग पहले से ही 'बने हुए थे उनके बिगड़ने की बात ही क्योंकर की जाय ? बहरहाल कुछ मित्रों के यहाँ बदनाम होकर भी नाम बमाने वाली प्रतिस्पर्द्धा की ताज़ी और उम्दा मिसाल 'नई कहानी' की समीक्षा-पत्रों में अलग से इन्द्राज की हुई मिलेगी इसलिए कि ऐसे मित्र-समीक्षकों ने जब लिखा था तब भी कुछ 'कमिट नहीं किया था और अब तो खर उठोने निखने से ही वास्ता तोड़ लिया है । इसलिए भी कि लिखना उनको नतिक मजबूरी या दायित्व निर्वाह की प्रातरिक विवशता का नतीजा होकर नहीं था वह तो पसा बमाने का भौतिक मजबूरी थी—और पसा बमाने के लिए लोग कुछ भी लिखते हैं—और अब मोटी नौकरियों और मोटी बतन राशि के चलते उन्हें लिखने की दरकार भी क्याकर हो ? बरिन् इत मित्रों को न लिखन से सुविधा ही हुई है, इसलिए कि लिखते थे तो कहा न कही पकड़े जाते थे और अब कथा-गोष्ठियों में (न लिखने वाला के लिए कथा गोष्ठियों का आयोजन साहित्यिक सुविधा है) जसो उपस्थिति' दखी बसी ही बान वह दी, अगर कोई काँपेसी नता गोष्ठी का अध्यक्ष हुआ तब गांधी नहरू और मोहू दा प्रधान मंत्री तन के उदाहरण द खाने, नया पीढ़ी का जमघट हुआ तो उनको खिचकर लगने जसा कह दिया बुझूग हुए तो परम्पराया का हवाला दे दिया और अगर किसी ने फिर भी धेरा तो साफ मुकर गए—आप जा कह रहूँ मैं मेरा मततब वह नहीं है बल्कि आप जो सोचते हैं

मेरा वही मतलब है—प्रब प्राप क्या कर लेंगे, बाना के फागे तो हाने नही प्राधिर

नयी क्या समीक्षा म प्रवसरवादिता के इम माहोन पर प्रगर रानेद्र यादव की तजबोज ¹ सही पाती है तो इम 'सही' की गिलाफन क्याकर की जा सकती है

नयी कहानी की समीक्षा मे जहाँ शरणवादी प्रसरवादिता का यह दौर दौरा चल रहा था वहाँ दूसरी तरफ बात बिल्युज प्रलग थी प्रलग यानी ठहरी हुई

पीठस्थ ऋषि आचार्य चुपाए बठे हुए थे शायद यह सोचकर कि नई कहानी स्कूली छात्रो का जसा ही कोई भान्दोनन है (गो स्कूली छात्रो के भान्दोलना के बारे म भी वे अब वस्तु स्थिति से सही तौर पर परिचित होने जा रहे हैं) जो न-कुछ समय म ही फिजिल आउट हो जायगा और तब वे गरदन उचका उचका कर सास मुद्रामो मे कह सकेंगे कि हम न कहते थे कि यह सब प्रशास्वत-प्रशास्वत यानी नश्वर-है, उनके चुपाए रहने की शायद एक वजह (वजहें कुछ और भी थी) 'नई कहानी के बारे म पलता हुआ उनका अपना अज्ञान भी था [क्याकि] कविता के फकत पाँच-दम सकलन सपाट म पढकर उन पर भालोचना लिख मारना कुछ मुश्किल काम नही है लेकिन कहानी को तो न सिफ सकलन बल्कि प्रतिनिधि पत्रिकाएँ साथ-साथ पढते हुए भी उसम साभेदारी निभाकर समीक्षा कर पाना काफी कुछ मुश्किल है, जो न सिफ प्राप से स्तरीय समीक्षा विवेक को माँग करती है बल्कि कालक्रम मे वहा पर्याप्त समय की भी दरकार होती है प्रतिनिधि कहानियाँ पढकर क्या समीक्षा मे सहयोगी बनना खतरे से खाली नही है इसलिए कि निरपेक्ष तौर पर कोई प्रतिनिधि कहानी होती ही नही वह प्रतिनिधि होती ज़रूर है, लेकिन उन कहानियो की और उही की वजह से भी जिनकी युग बोध के संदभ म अपने अपने तौर पर निभाई गई भूमिकाएँ काफी प्रहम होती हैं इसलिए कहानी से युग बोध की ज्यामिति समभन के लिए सिफ प्रति

¹अपनी साहित्यिक-बौद्धिक स्वीकृति बनाए रखने वाला समीक्षक राजनीति मे चुनाव लडता है और साहित्य मे सामाजिकता की खिल्ली उडारता है कला और चिंतन की महीन से महीन गुत्यी को वह उहाँ के स्तर और उहाँ के शब्दों से कितनी गहरी मुद्रा मे नया से नया मुहावरा देकर डिस्कस कर सकता है—यह 'रोप ट्रिक' (बाजीगरी) उसे रोज एक नयी शुरुआत करने के लिए बाध्य कर बेती है। राजनीति मे जिनक विरोध करता है साहित्य मे उनसे दो कदम आगे बढ़कर 'आधुनिकता बोध' के सॉर्टिकनेट और न्लब लिखता है फिर घर आकर आठ-आठ आसू रोता है कि 'शब्द' और 'अर्थ' के सम्बन्ध टूट गए हैं बौद्धिक बहसों में किसी को दिलचस्पी नहीं है तब बाजिनी द्वारा उद्धृत मुसोलिनी के बारे मे कही गई उगो ओजेती की बात याद आती है—'उसे देखकर यह खयाल आए बिना नहीं रहता कि सोते समय इस आदमी का चेहरा कितना दुखने लगता होगा '

निधि कहानिया से ही नहीं बल्कि कहानी की समूची रचनाशीलता से साक्षात्कार करना जरूरी होगा प्रतिनिधि कहानियाँ पढ़कर आप उन महीन रेशो को कैसे उकेर पाएंगे जिन्हें कँपाती हुई प्रतिनिधि कहानिया के गिद दूसरी-दूसरी कहानिया बिखरी हुई हैं जिनकी वजह से वे प्रतिनिधि हो सको हैं और उन्हें प्रतिनिधि होने का दजा मिल सका है और यदि आप उन्हें नजर-दाज करके कोई बात कहेगे तो निश्चय ही वह किसी स्तर पर लगडे तर्कों और अप्राहिज मति वाली बात होगी यही वजह है कि प्रतिनिधि कहानिया पढ़कर—अध्यापकोय लहजे में जो कथा की पहचान दी जाती है वह कहानी के समीक्षा विवेक की सही पहचान न होकर ऊपरी ऊपरी धार सतही होनी है किसी कदर कटी हुई भी क्याकि उसमें समूची कथा सजनात्मकता से गुजरने का सबूत नहीं होना और जो सबूत होता है वह यह कि आपने 'प्लाइन्टस म कुछ कहा होना है जो पूरे तौर पर प्रामाणिक न होने के बावजूद भी छात्रों को परीक्षा में अङ्क दिलाने में उनकी भरपूर मदद करता है कथा समीक्षा की सही पहचान देने के लिए जरूरी है कि आप कथा-सृजन के समूचे माहौल से गुजरें, प्रामाणिकता और अन्तरिक विवशता के साथ उससे जुटकर उत्तम हिस्सेदारी निभाते हुए और यह काम चन्द दिनों का नहीं है, चन्द महीना का भी नहीं इसके लिए वक्त की लम्बी पटरिया को नापना पडेगा उनके साथ-साथ चलने हुए] और यह भी कि 'नए चीतरफा पढते लिखन हैं, उनका पक्ष भी लें और भान लीजिए काई बात गलत भी निकल जाय (समीक्षा में गलत बात कहना और बात का गलत हा जाना कम गु जाइस तलब नहीं है) तब इसकी ही क्या सनद कि ये नए वरुक्ष देंगे और फिर भाड म जाय और 'इनके मुँह कौन लगे वाले अदाज में सबको भभट भानकर किनाराकशी, गोमुखी में हाथ डालकर अपने सत्य शिव मु'दरम् के मनका पर उँगलिया की दस्तकें या लोक मानस की जुगाली बही यह भी अनमनापन था ही कि 'नयी कविता का विरोध करके देख लिया, उसमें 'नयी कविता को स्वीकृति ही मिली—विरोध भी आखिर स्वीकार करके ही किया जाता है—'मलिए 'नयी कहानी' के लिए विरोधी रवैया भी नहीं

एक वग और भी था जो आलोचक होने से पहले ही चुक गया था, लेकिन बिना समझे वृत्ते उसने नई कहानी को जस का तस स्वीकार कर लिया था इन उम्मीद के साथ कि कुछ और न सही तो कम अज-कम उसे आलोचक ही मान लिया जायगा इस वग न 'नई कहानी' ही नहीं उसकी समीक्षा के भी उज्ज्वल होने की भविष्यवाणी की है और अपनी उम्र का खयाल आते ही डरते-डरते यह सोख भी देनी चाही है कि नयी कहानी पर निरपेक्ष चिन्तन होना चाहिए (निरपेक्ष यानी कहानी से भी और चिन्तन से भी) और नए लोग म ही नई कहानी के बारे में एक मत या समझौता (गोया समीक्षा समझौता होनी है और वह भी प्रजातांत्रिक पद्धति से) न होने का हवाना देवर उमे कमजोर भी साबित करना चाहा है, इस वग को

किसी भी बात को 'वाद और किसी भी शब्द को बाजी' बना देने की लत या 'मीनिया हो गया है और अब तो यह 'मीनिया 'एबनामे लिटी की हृद तक पहुँच गया है मसलन आप इनके सामने कहे अनुभव की प्रामाणिकता का सवाल ये नोद म भी बेमाख्या चीख उठेंगे—अनुभववाद आप एक शब्द रखें 'आयाम ये तुरन्त भर्राई हुई आवाज म वज उठेंगे आयाम बाजी फिर फटी फटी आँखा से देखते हुए माहौल म कोई प्रतिक्रिया न पाकर विस्तर म दुबक जायेंगे और अपनी लत पर शरमिन्दा होने हुए अंत म मुन्न हो जायेंगे

इस ज्योतिषी बग ने दबो जवान स सहमे सहमे यह भी कहना चाहा है कि अगर 'नई कहानी का परम्परा के साथ जोकर (जोड़-तोड़ की इनकी कायवाही की श्रदा पर गौर किया जाय) आख्यान हो तो बेहतर नए समीक्षक को क्या ऐतराज हो सकता है अगर परम्परा का अर्थ महज उहे आप्र ग्रथो म ही तलाशना नहीं है तब लेकिन इन तथा वधित समीक्षक मित्रा के यहाँ परम्परा का मतलब आम तौर पर उसे आप्र ग्रथा म ही तलाशने से लिया जाता है—इस निहाज से भी नई कहानी की कुछ बड़ियाँ तलागी जा सकती हैं जो परम्पराओं मे आगे लिखी हुई भी हो सकती हैं और ठीक उनके विरोध म भी, बेशक उहे आप्र ग्रथो म टटोलना नयी समीक्षा बुद्धि की सही पहचान क मातहत नहीं हागा लेकिन यह प्रश्न अभी वाद मे

नई कहानी की समीक्षा को जिनना बडा खतरा अबसरवादी समीक्षको से हो सकता है (नई कहानी की समीक्षा को ही क्या इस जमात से उतना ही बडा खतरा समूचे देश का भी क्या नहीं है?) उतना ही बडा खतरा नई कहानी को बिना समझे स्वीकार कर लन वाले भविष्य बरफामा ने भी है नागन की दोमती के खतरे दाना दुमन की दुदमनी से कही ज यादा खतरनाक नतीजे बाल होन हैं

लेकिन नई कहानी का समीक्षा पक्ष नतना अधरा हो बात एकदम एसी नहीं है बल्कि ठीक इससे उन्टी भी है, जबकि यह भी सही है कि नयी पीढ़ा पानी उम्र म नए तमाम समीक्षा नई कहानी पर एक मन होकर नहा सोच रहे हैं—विरोधी सिपाघा म भी मोच रह हैं—लेकिन उम्र के लिहाज से ही निमा को नया मान लना मतलब नए पुग बोध की समझ बाना मान लना और विरोधी सिपाघा म साचन की बडह से किमी एक का क्या समाधा क चिन्तन स ही खारिज कर देना, अस्त म नए के अर्थ का तो चिन्तन हा नहा समझ पाना है विचार क विराधा आयाम का भी समझने मे न्यार करना है और इसका नतीजा होकर अपना समाधा बुद्धि को पूव प्रहा का गिचार बनन देना है किउ नहीं मानूम कि उम्र की बडिग समझारी और धापुनितता बोध के लिए कई मानन नहीं लगता आनु कम होने पर भी १६ की स्थापना के चिन्तन म पाठित दृषा जा सकता है (प्रारम्भ १९०९-१९१० पत्रकारा और शरणा का रास्त घनत कारें शक कर मन्त्रो के सामन गिर भुनाउ, परा म

नई कहानी और उमकी प्रकृति

वाकायदे मंदिर में नए करते और समय में घटियाँ टुनटुनात देखने के लिए मोहन जोदड़ो की खुदाई को दरकार नहीं है इस बुद्धिजीवी तबके में कम आयु वाले की तादाद भी खासी बड़ी है) और नई पीढ़ी में (महज उम्र के लिहाज से) आयु में दुगना होन पर भी जिदगी की बारीक में बारीक हलचल को आग्रह और धारणा मुक्त होकर पहचाना जा सकता है और उसे उतना ही बेलौम हाकर अभिव्यक्त भी किया जा सकता है वृष्णा सोवती की मित्रो भरजानी' और यारा के यार' रेणु की 'प्रजा सत्ता आदि कहानियाँ इम बात का सबूत हैं ।

अन में नए का सवाल उम्र के कम ज्यादा होन से जुड़ा हुआ सवाल नहीं है बल्कि यह तो उस दृष्टि बोध का सवाल है जो आधुनिक जिदगी को उसके तमाम आंतरिक और बाह्य घिरावों में बदले और बलते हुए कोणों से बेचौस होकर देख पाता है इसीलिए 'नयी कहानी चाहे नाम हो (और वह एक स्तर पर नाम है भी) लेकिन 'नया अपने अर्थ में प्रक्रियावान है यानी प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया जिनकी आज की है उतनी ही आगे की भी इस बात पर कोई बहस नहीं कि इसके लिए चाहे नाम और-और आजायें या दे दिए जायें ।

नए समीक्षकों और नए कथाकार-समीक्षकों ने नयी कहानी को जिन आधारों पर व्यतीत कहानी से अलग किया है और युग बाध के साथ उसके जुड़े हुए रवा रेखे को जिन्गी के दृढ़ और परिवेश के तनावों में उमकी प्रकृति को दूर तक देख पाया है व आधार कामयाब प्रयत्न ही नहीं हैं बल्कि हिन्दी की कथा समीक्षा में मौलिक उपलब्धियों के तौर पर हैं इममें असमजस कुछ भी नहीं कि कथा की नई समीक्षा ने पुरानी कथा समीक्षा (वह जसी कुछ भी थी) की हदों को ताड़ा तो है लेकिन अपनी हदें कायम करने का दकियानूस प्रयत्न नहीं किया है (गोकि नई कथा की समीक्षा हिन्दी कथा समीक्षा में नितान्त नई गुरुआत है, उससे पहले कहानी पर लटकने में बँधे टिप्पणियाँ को समीक्षा कहना समीक्षा मात्र का मजाक होगा) मतलब कि उसे ठहराव को बिडम्बना से बचा लिया गया है (यद्यपि यह सतोप कहानी में सृजन स्तर पर लगा तार बदलावा के कारण ही शक्य हुआ है) इम सबमें नई कहानी की समीक्षा-मदति की (और कहानी मात्र की समीक्षा पद्धति की भी क्यों नहीं?) महत्वपूर्ण गुरुआत ही हो सकी है और नई कहानी की उम्र को देखते हुए यह गुरुआत कुछ कम विशिष्ट नहीं है

पुरानी पीढ़ी के कुछ समीक्षकों ने 'नई कहानी को उसके सही परिवेश के साथ समझने को भरपूर कोशिश की, लेकिन ये समीक्षक सख्या में नितान्त विरल ही रहे (नाम लेना इसलिए उचित नहीं होगा क्योंकि उन पुराने समीक्षकों को इस सब में अपना नाम न देखकर सदमा लगेगा जो खुद को नयी कथा का समीक्षक होने के मुगलते में जिलाए हुए हैं) नयी कहानी की समीक्षा में नए कथाकार समीक्षकों ने खाम

कसी भी बात को 'बाद और किसी भी शब्द को 'बाज़ी' बना देने की लत या मीनिया हो गया है और अब तो यह 'मीनिया' 'एबनामे लिटी' की हूँ तब पहुँच गया है। मसलन आप इनके सामने कहे 'अनुभव की प्रामाणिकता का सवाल ये तीर में भी बेसास्ता चीख उठेंगे— अनुभववाद आप एक शब्द रखें 'आयाम ये तुरन्त भर्राई हुई आवाज़ में वज्र उठेंगे 'आयाम बाज़ी फिर पटी फटी आँखा से देखते हुए माहील में कोई प्रतिक्रिया न पाकर विस्तर में दुबक जायेंगे और अपनी लत पर शर्मिन्दा होने हुए अन्त में सुन्न हो जायेंगे

इस ज्योतिषी वगैरे ने दबो ज़मान से सहमे सहमे यह भी कहना चाहा है कि अगर 'नई कहानी' का परम्परा के साथ जोड़कर (जोड़-तोड़ की इनकी कायवाही की श्रदा पर गौर किया जाय) आख्यान हो तो बेहतर नए समीक्षक को क्या ऐतराज हो सकता है अगर परम्परा का अर्थ महज उन्हें आप्रण ग्रन्थों में ही तलाशना नहीं है तब लेकिन इन तथा उचित समीक्षक मित्रों के यहाँ परम्परा का मतलब आम तौर पर उसे आप ग्रन्थों में ही तलाशने से लिया जाता है—इस लिहाज़ से भी नई कहानी की कुछ कड़ियाँ तलाशी जा सकती हैं जो परम्परा में आगे लिखी हुई भी हो सकती हैं और ठीक उनके विरोध में भी, बेशक उन्हें आप ग्रन्थों में टटोलना नयी समीक्षा बुद्धि की सही पहचान के मातहत नहीं होगा लेकिन यह प्रश्न अभी बाद में

नई कहानी की समीक्षा को जितना बड़ा खतरा अवसरवादी समीक्षकों से हो सकता है (नई कहानी की समीक्षा को ही क्या इस जमात से उतना ही बड़ा खतरा समूचे देश का भी क्या नहीं है ?) उतना ही बड़ा खतरा नई कहानी को बिना समझे स्वीकार कर लने वाले भविष्य वक्ताओं से भी है। नादान की दोस्ती के खतरे दाना दुश्मन को दुश्मनी से कही जगल खतरनाक नतीजे वाल होने हैं

लेकिन नई कहानी का समीक्षा पक्ष इतना अंधेरा हो बात एकदम ऐसी नहीं है बल्कि ठीक इससे उल्टी भी है, जबकि यह भी सही है कि नयी पीढ़ी यानी उम्र में नए तमाम समीक्षक नई कहानी पर एक मत होकर नहीं सोच रहे हैं—विरोधी दिशाओं में भी सोच रहे हैं—लेकिन उम्र के लिहाज़ से ही किसी को नया मान लेना मतलब नए युग बोध की समझ वाला मान लेना और विरोधी दिशाओं में साचन की बड़ह से किसी एक को क्या समीक्षा के चिन्तन से ही खारिज कर देना, अस्त में नए के अर्थ को तो विल्कुल ही नहीं समझ पाना है विचार के विरोधी आयाम को भी समझने से इन्कार करना है और इसका नतीजा होकर अपनी समीक्षा बुद्धि को पूरा प्रहा का गिनार बनन देना है किसे नहीं मानूँ कि उम्र की बढ़ित समझारी और प्रायुनिक्ता बोध के लिए कोई मानन नहीं रखती प्रायु कम होन पर भी १६ वीं शताब्दी के चिन्तन से पीड़ित हुआ जा सकता है (प्रोफेसर आर्य०ए०एस० पत्रकारी और डाक्टरों का रास्ते चलन धारें रोक कर मंदिरों के सामने सिर झुकाते, घरा में

नई कहानी और उमकी प्रकृति

बाकायदे मंदिर में नृत्य करते और समय से घंटियाँ टुनटुनाते देखने के लिए मोहन जोशी की खुदाई की दरकार नहीं है इस बुद्धिजीवी तबके में कम आयु वाले की तात्पर्य भी खाती बड़ी है और नई पीढ़ी से (महज उम्र के लिहाज से) आयु में दुगना होना पर भी जिन्दगी की वारीक से वारीक हलचल को ग्रहण और धारणा मुक्त होकर पहचाना जा सकता है और उसे उतना ही बेनौस होकर अभिव्यक्त भी किया जा सकता है कृष्णा सोबती की मित्रो मरजाती और यारो के यार 'रेणु की 'प्रजा सत्ता' आदि कहानियाँ इस बात का सबूत हैं ।

असल में नए का सवाल उम्र के कम ज्यादा होने में जुड़ा हुआ सवाल नहीं है, बल्कि यह तो उस दृष्टि बोध का सबान है, जो आधुनिक जिन्दगी की उसके तमाम आन्तरिक और बाह्य घिरावों में बदले और बदलते हुए कोणों से बेनौस होकर देख पाता है इसीलिए 'नयी कहानी चाहे नाम हो (और वह एक स्तर पर नाम है भी) लेकिन 'नया अपने अर्थ में प्रक्रियावान है यानी प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया जिनको आज की है उतनी ही आने की भी इस बात पर कोई वहस नहीं कि इसके लिए चाहे नाम और-और आजायें या दे दिए जायें ।

नए समीक्षकों और नए कथाकार-समीक्षकों ने नयी कहानी को जिन आधारों पर यतील कहानी से अलगायी है और युग बोध के साथ उसके जुड़े हुए खा रेखे की जिन्दगी के द्वन्द और परिवर्तन के तनावों में उमकी पृष्ठि को दूर तक देख पाया है वे आधार कामयाब प्रयत्न ही नहीं है बल्कि हिन्दी की कथा समीक्षा में मौलिक उपलब्धियाँ के तौर पर हैं इसमें असमजस कुछ भी नहीं कि कथा की नई समीक्षा ने पुरानी कथा समीक्षा (वह जसी कुछ भी थी) की हवा को तोड़ा ता है लेकिन अपनी हट्टे कायम करन का दक्कियानुम प्रयत्न नहीं किया है (गोविं नई कथा की समीक्षा हिन्दी कथा समीक्षा में नितान्त नई शुरुआत है उससे पहले कहानी पर लटका में बँधी टिप्पणियों की समीक्षा कहना समीक्षा मात्र का मजाक होगा) मतलब कि उसे ठहराव की विम्बना से बचा लिया गया है (यद्यपि यह सतोप कहानी में सृजन स्तर पर लगा तार बदलावा के कारण ही शक्य हुआ है) इस सबसे नई कहानी की समीक्षा-पद्धति को (और कहानी मात्र की समीक्षा पद्धति की भी क्यों नहीं ?) महत्वपूर्ण शुरुआत ही हो सकी है और नई कहानी की उम्र को देखते हुए यह शुरुआत कुछ कम विशिष्ट नहीं है

पुरानी पीढ़ी के कुछ समीक्षकों ने 'नई कहानी को उसके सही परिवेश के साथ समझन की भरपूर कोशिश की, लेकिन ये समीक्षक सख्या में नितान्त विरल ही रहे (नाम लेना इसलिए उचित नहीं होगा क्योंकि उन पुराने समीक्षकों को इस सदभ में अपना नाम न दखकर सदमा लगेगा जो खुद को नयी कथा का समीक्षक होने के मुगा लते में जिलाए हुए हैं) नयी कहानी की समीक्षा में नए कथाकार समीक्षकों में खाम

तौर पर घना और रचनात्मक सहयोग दिया है नयी कहानी के अंतर्गत व रचना प्रक्रियागत संसार का उद्घाटन जितना प्रामाणिक होकर इन्होंने किया है उतने नयी कथा का प्रबुद्ध समीक्षक भी अभी तक उग्रीस ही रहा है

लकिन नयी पीढ़ी में ही कुछ ऐसे मित्र समीक्षक हैं, जिन्हें नई कहानी से ही नहीं कहानी मात्र से ही शिकायत है, इनमें से कोई कहानी की मृत्यु घोषणा के साथ अपनी बात शुरू करना चाहता है (ठीक कविता की मृत्यु घोषणा के पटर्न पर) तो कोई कहानी मात्र को ही आधुनिक संवेदना के बहन में अनुपपुक्त पाकर उसे घाउटडेटड घोषित करना चाहता है तब सवाल यह नहीं रह जाता कि इन मित्रों को नई कहानी से शिकायत क्या है, सवाल तो यह है कि उन्हें यह शिकायत क्या नहीं है? जब किसी को जिदगी में ही शिकायत हो जाती है तो दुनिया को हर चीज उसके लिए वैसे ही शिकायत का वायस हो जाती है और इस शिकायत तलब जिनगी के चक्र में हर किसी के प्रति शिकायत का हक भी उसे हासिल हो ही जाता है तब जिदगी में ऐसा क्या रह जाता है जिसकी वजह से कहानी को ही शिकायत से बरी किया जा सके लेकिन सवाल तो फिर भी जहाँ का तहाँ रह ही जाता है कि आखिर इस शिकायत में शिकायताना जमा कुछ है भी या नहीं? और अगर है भी तो किस स्तर का? और कि वह भी कितनी दूरी तक? जो गहवाई से देखने की जरूरत महसूस नहीं की जाय, तब भी बात बिल्कुल साफ है कि ये तमाम शिकायताना तबियत के मित्र समीक्षक इस तरह की कोई चौक बात कहकर लोगो की गरदनो में खम पदा करना चाहते हैं या किसी खास मित्र की कहानिया के प्रति अपना मोह न काट पान की वजह से या उसके प्रति व्यक्तिगत विरोधी रवया रखने का वजह से इस तरह की गलत और साहसिक घोषणाएँ करते हैं चाहे इस बात से सबक नहीं लिया जाय कि साहित्य में इस तरह की मोहाघता की वजह से कितनी ही सही मसामत समीक्षक आखँ असमय ही अपनी दृष्टि खो चुकी हैं लेकिन जिस बात में सबक लिया जा सकता है वह यह कि क्या इस मोहाघता का नतीजा हुई कथा-समीक्षा दायित्वपूर्ण समीक्षा का नतीजा का मतलब रखती है और अगर नहीं तो क्या इससे समीक्षा में गर जुम्हेदार तत्व नहीं बन रहे हैं और कि स्तरीय समीक्षा की अनुपस्थिति और समीक्षा में अराजकता की जो चोरपा शिकायत सुनी जाती है वह इसी मोहाघ और दायित्वहीन समीक्षा का नतीजा नहीं है? निश्चय ही कृतिया की स्तरीयता और स्तरहीनता का जो अंतर समीक्षा में लुप्त हो गया है और जिसके सबब समूची समीक्षा अप्रामाणिक हो उठी है वह इसी दायित्वहीन समीक्षा का नतीजा होकर ही ता

कहानी के रचना प्रक्रियागत संसार का उद्घाटन व कहानी सत्य को उपलब्ध करने के लिए उस पर जोर पहली बार कहानी की नयी समीक्षा में ही हुआ है हार्नकिन्स सब को मान लेने से पहले ही यह मान लिया जाना चाहिए कि कुछ

जमा सही माइन म कहानो की सही समीक्षा की शुरुआत पिछले दशक म ही हुई है, इमसे पहले तो कथा समीक्षा के नाम पर महज कथानक का संक्षेप व तत्वा और प्रशानना के खाना म बँटी हुई सरल की गई छात्रोपयोगी सुविधा हुआ करती थी गो इमरी बजह कहानी के प्रति बरता गया मूल दृष्टिकोण ही था और किसी स्तर पर कविता और उसकी समीक्षा के हिन्दी म उच्च पस्थ होने का नतीजा भी एक दशक से कुछ पहले तक विरामत मे मिली कहानी सम्बन्धी समीक्षा के बारे मे यह कह दिए जान की गुजाइश है कि कहानी के व्यन्त आचाय समीक्षको ने उसे कभी गम्भीरता से निया ही नहीं था बू कि कहानी उनकी नजरो मे हल्के मनोरजन के स्तर का उप साहित्य ही माना जानी रही इमलिए उसकी समीक्षा भी आचार्यों से गम्भीर समीक्षा बुद्धि की मांग न कर सकी उपदेश-सदेश के लिए पचतत्र हितोपदेश, जातक कथाएँ व रामायण महाभारत की हाँगी बडी कहानियाँ और दृष्टान्त थे ही इनसे उहोने नीति के राज मुलभाए भारतन्द् के बक्त म कहानी से देश भक्ति राष्ट्रीयता व आदर्शों का युगतान जरूर किया गया, लेनिन कहानी के प्रति मूल रख म अभी भी कोई फक नही भाया था मउतव उसके लिए मूल दृष्टि मनोरजन वाली ही थी

प्रसाद और प्रमचद के यहाँ कहानी सृजन म गम्भीर और कलात्मक रख धनान के बावजूद समीक्षा स्तर पर यह महसूस नही किया गया कि वह साहित्य का काइ विविष्ट कला रूप है और उसका समीक्षा साहित्य की किसी कलात्मक र्काई के लीर पर मानकर का जानी चाहिए यहा तक कि यज्ञपाल जनेन्द्र, अनेय, इलाचन्द्र जोगी तक धान पर भी उसे समाप्ता स्तर पर कोई महत्व नही मिला इतना जरूर रहा और यह चाहे त्रिगुणा वय ही सही कि मिद्वान्त चर्चा करने समय व साहित्य के विविध रूपों पर विचार के दौरान कहानी का आचार्यों को खानी जगह भरन के लिए नाम लेना हा पर रूप तरह कहाना का (समीक्षा म) 'नाम लेवा और 'पानी देवा तो खर नही मिया लेकिन उन एर समूच सम्मानित साहित्यिक रूप म अब से पहल प्रतिष्ठा कभी नहीं मिया यहाँ तक भा कि १९४७ म देश के पूरा स्वतन्त्र हो जान के बावजूद समीक्षा स्तर पर कहानी का अपना स्वतन्त्रता के लिए बरीव एक दशक तक इन्तजार करना परा और अपना आकाश के इम मषप म अपने जिनती शक्ति सञ्चित की और फन-सम्प जो सम्मान अर्जित किया वह अब से पहल अपना शुरुआत मे कियी भी साहित्य रूप को टालन्य नहीं हुआ था लेकिन बावजूद इतना सब होने के धाज भी समीक्षा म हात यह है कि, जब तक एकांत कहाना का ही चर्चा न हो, वहाँ समूचे साहित्य का जायदा कविता म हा निया जाता है, कन्न-प्रवृत्त किमी उपवास को भी याद किया जा सकता है दरमन् यह कविता म आतन्त्रि समीक्षक की मानसिक गुलामी का ही मूत्र है और इत मानसिक गुलामी से मुक्ति की आन तब ही उठे जब कि सन् ४७ से पूरा आकाश हर्मित करतन के वा म श्रेय आत्र तब मानसिक गुलामी मे

आजाद हो पाया हो ? अगर ऐसा हो सका होता तो भ्रमजी के समय में लोग तो खिड़क कर क्यों मर गए होते ? यह मानसिक दासता समीक्षा स्तर पर हो नहीं है बल्कि साहित्य के हर 'रूप' में ढोई जा रही है इसी के तहत 'मनवाना' के धारक में चलने वाले साहित्य ने दोस्ता को घर का तो पहले ही नज़ा छोड़ा था भ्रम 'पाग' पर से भी उनका बख़्त उखल रहा है

पश्चिम की कथा प्रवृत्ति और कथा समीक्षा के तमाम प्रतिमानों व तुलना को ध्यान में मानते हिन्दी के नामा गिरामा कथा समीक्षा उसा तरह के निगम पेग कर रहे हैं और प्रच्छन्न तौर पर कथा की उनी समीक्षा बुद्धि के निवार हो रहे हैं जिसके व बराबर घालोचन रहे हैं ये समीक्षा भ्रमजी परिभाषा में बहुतायत में प्रयोगित उन कहानियाँ या हिन्दी नई कहानी के लिए नमूना मानकर प्रयत्न करत हैं जिनमें बात में से धान निचरती चलती है और ट्युन टॉन जगा मजा घाता पनता है

ये बातें दिलबस्तर हानी हैं कथानी समालन करत पर पाठक पाता है कि उनके हाथ कुछ नहीं लगा और अगर लगा तो कथन यह कि कुछ अच्छा अच्छा मा पड़ा और यम 'उन्हे इस बात में मज्जा पड़ेवा है कि हिन्दी कहानी में यह प्रवृत्ति बहुत कम है (मोघा इस प्रवृत्ति के बहुतायत में हान हो रिन्दा नई कहानी की सही दर्जा और सही निगा मित जायगी) इसका मतलब हुआ कि कथानी में निगी सम्भोर जावन

मध्य के उदात्त का मीत गहा का जा सक्ता गिक उो पत्रन में कुछ अच्छा अच्छा लो अच्छा अच्छा दाता सनारंजक और यम यदि कथानी व्यक्ति की निगी विह-इया का रेगारित्त करे, रिगा मोहन मध्य का तुग बांड के समानांतर उदाहर करे या उगका पत्र सजेन हो के (गरे) रिगा मर्याद का दंग का मरई का, रिन्गी के टले हुए मग की अभिरर्षि न, धा धा का रैगियन का उाके परिपत्र में कथन कथा और दायर इस तरह ब र्थिन हो जाय ब र्थिन पाय उो पत्रन में कुछ अच्छा अच्छा का मरथ-जाय म मने मरथ करण पाय सनारंजक तो एव मर्यादा की मरथ उा पा में उरं कथानी और कथन -कथन गहा क लई ये निच रिगा कथानी का मई उागारिगा क गिरे न मरथरने मरथ कथानी और एव और कथा कथन की उरथन का कथना केव कथन समीक्षा में उगाय हो कथनी उगा रि दायर का उरई का केला का मरथ है एव मरथरने का तुगले इस कथन में कथ है कि कथ कथ मरथरने उरथरने का मरथ मरथ कथनी क मरथ कथि रिन्दा के। का क मरथ मरथरने उरथरने के रि कथ । का मरि कथ कथ मरथरने का तुगई कथनमक है रिन्दा तुग मरथ कथन कथ की मरथ कथ मरथरने है कथि मरथ उग कथ का है कि कथ मरथ कथ कथ मरथरने का मरथरने का मरथरने का मरथरने केला मरथरने का मरथरने के मरथरने के मरथरने के मरथरने के मरथरने के

मरथरने की उ उगाय मरथरने का मरथरने के मरथरने के मरथरने के मरथरने के

१६ बहानी का समीक्षा में हमारे पारदर्शक बंधा-गम, ता-विधि व प्रभाव का एक स्तर तब अपनी तरफ से उपयोग किया है बहानी यह तब प्रभावों में कोई प्रसन्नता नहीं होता चाहिए कि न कि न बहानी और बहानी समानता, बहाने गति स्थित दूधरे-दूधरे रूप में पारदर्शक गतिस्थित में किमी न किमी गति में प्रभावित है और यह प्रभाव घब परस्पर गतिस्थित-गमक का धनियार्थ मन्त्रों का गम है किमका मुहावरे के तौर पर कोई धनियार्थ मानव नहीं होता किमा भा गतिस्थित की जागृता की धार यह पक्षों के है कि यह अपनी जागृता के रंग को मीनित रंगों हुए विभव मानविकी अनुभव व निगी भी रंग रंग का, धनता जमान का गम स्तर उपयोग कर गये (क्वाकि यह जमान प्रामाणिकता के लिए उच्छ्रित है) किमा

न दुनियाँ छोड़ी करके अपनी तरह में प्रभाव पाठ-पाठन में धनियार्थ गतिस्थित का मन्द की है सतिन १६ बहानी की समीक्षा में कुछ विषय प्रभाव की धार में गम की बहानी लिखा गया कर रहे है यह स्थिति बंधा-गमक का विषय गतिस्थित का है ही हास्यास्पद भा है विन्वचना तो यह है कि इस बहानी गम को १६ बहानी की समीक्षा-विधि की मौलिक मूलभूत की धीम व गम का किया जाता है और तब निम्न दो होकर पारदर्शक बंधा समीक्षा विधि का उत्तरे मन्त्रों दिखना और मानवता के साथ दिखना बहानी की समीक्षा में दार्शनिक किमा किमा जाता है धनर यह पारदर्शक बंधा-गमक विषय धीम के तौर पर किमा के यहाँ प्रहारा की गई होती ता बंधा-समीक्षा में इसमें मन्द विषय सवती धी और तब यह धनता जमान की गम के समानता-तर बंधा-गमक का उपयोग करन में बहा गहायता मानो जाती सतिन चसव लिए बंधा-गमक की धनता अनुभव बनान हुए प्रामाणिकता का बड़ी गर्त निभाना पक्षी है और कोई भी बड़ी धन धनियार्थ भासाता स बंधे निभाई जा सवती है ?

इस बड़ी धर्त के निर्वाह में धनियार्थ किमी न पारदर्शक बंधा-समीक्षा का जस का तस धनर यही स्वीकार कर किया और मौलिकता के धनियार्थ में चसव की बहानी 'धनता धन दि नैव' पर धनर द्वारा की गई समीक्षा की बंधा-समीक्षा के लिए प्रामाणिक मानव मान लिया 'धनता धन दि नैव' का गमालावता करते समय मौलिकता के तेज भँवर में बगम न समान समीक्षका की इस रूप को कि बहानी का मूल बन्धन इस विन्वचना में निर्वाह है कि जिस बानत साना धनियार्थ न धन उग्र धनता से इसलिए धादी की धी कि वह धनता पत्नी को दूधरे धनियार्थ की पत्निका की तरह गले में पडे हुए धन क मानिद नहीं रखना चाहता बल्कि उसकी सुन्दरता का उप योग धनता प्रतिष्ठा के लिए करना चाहता है परिचय विन्वतार में धनता धनर पति व ही धीजार की उसी के विरुद्ध स्तेमात कर ले जाती है और पति व परिचिता में से एक धनियार्थ की धनता प्र मी बनाकर उसके साथ हो जाती है इस तरह जो धनता धनर पति की उत्तति का साधन हा सवती धी वह उसकी जिन्दगी की सबसे बड़ी

विडम्बना बन जाती है जो अन्ना पति को मुक्त करके उसके गले का बोझ नहीं बनती एक और ग्रन्थ में उसके गले का बोझ बन जाती है पति न अन्ना के रूप में जो दाव अपनी खुशहाली के लिए स्तमाल विद्या था, वही उल्टा पढ़कर उसके घाव कर जाता है वगम इस मन्तव्य को तरजीह नहीं देता यह मन्तव्य तो कहानी को निम्नतः साधारण बनाकर छोड़ देता है, एक घिसा-पिटा मतलब रखकर वगम कहानी का मन्तव्य उन दो लड़कों में मानता है जो अन्ना के भाई हैं और कहानी में जिनकी निम्नतः संक्षिप्त भूमिका है एक बार व तब आते हैं जब पिता शराब पी रहा होता है और वे उसे रोकते हैं दूसरी बार भी वे पिता को रोकते हैं शराब पीने से नहीं अपने धनिक प्रेमी के साथ जाना हुई अन्ना को पैदा जाता हुआ पिता हैट उतार कर अभिवादा करते हुए जब उसे रोचना चाहता है तब वगम का कहना है कि ये दो लड़के समाज की अन्तर्प्रतिमा और नतिकता की आवाज हैं (गोया अतः आत्मा और नतिकता की एक आवाज के लिए प्रतीक रूप में दो लड़का का जाना बेहद जरूरी था) चाहें दूर दराज से क्यू लाकर ही लेखक ने इन प्रतीकों को साथकता देने की कोशिश की है, फिर भी क्या वे सत्य को उपलब्ध कराने के लिए निश्चय ही एक नए काण्ड में काम लिया गया है और इस कहानी को अफसर की विडम्बना से ज्यादा बड़का का विडम्बना की कहानी और फिर उनके माध्यम से समाज की विडम्बना की कहानी का एक नया परिप्रेक्ष्य दे दिया गया है, लेकिन इस समीक्षा विधि को पूरे तौर पर प्रामाणिक मानकर और इसके दृष्टि आलोक में लोटा डोर लेकर क्या मन्तव्य के नाम पर बच्चे वाली कहानियों को खोज यात्रा पर निकल पड़ना कहा का समीक्षा विधक है ? लेकिन मित्रा ने क्या समझ की मौलिक री में इस तथ्य की परवाह न करने हुए समीक्षा यात्रा प्रारम्भ करदी यानी क्या-समीक्षा की नयी गुल्म्रात और खुदा न खास्ता इसे खुग विस्मृती ही कहा जायगा कि उहे एसी कुछ बच्च वाली कहानिया उपलब्ध भी हो गई हमिन्वे की की कहानी 'निलस' में उन्होंने 'निक' नाम का एक बच्चा बरामद कर लिया और लगे हाथ उसमें कहानियों का मन्तव्य भी शोध लिया, निम्न वर्गों की कहानिया (डापरी का खेल माया का मम, अंधरे में, कुत्ते की मौल, पहाड़) में उहे बच्चे ही नहीं बच्चिया भी मिल गई (शायद इसी वजह से निम्न वर्गों की कहानियां उनकी निगाह में 'नयी कहानियों की गुल्म्रात और शायद अत भी हैं) शोध का इससे बड़ा नतीजा और क्या हो सकता था ? लेकिन सतोप मौल के इन्ही पत्थर पर मजिल पा जाने का क्याकर होता ? और इसमें मौलिकता भा क्या रहती, क्याकि बच्चों में तो वह विदेशी क्या समीक्षक ही मन्तव्य शोध चुका था नतीजा यह हुआ कि हमारे समीक्षक न इस यात्रा को और आगे बढ़ाया और द्राणायन के यहाँ चालान में एक झूड़ जा तलाशा और कुछ मानसिक दण्ड बठक लगाकर उसी वगम पद्धति से इस झूड़ को एक साथक प्रतीक में बढाने का (गोया

प्रतीक न हूया पीया रोगने के लिए गमना हो गया) अत्यन्त प्रयत्न करते हुए उगम कथा का मन्तव्य भी पा लिया बच्चे यात्री कहानीया म मन्तव्य सातन की इस दिशा म इससे महत्वपूर्ण घोर इगती आरवन्ता इगसे अलग घोर इगसे आगे घोर गोन सी माना हो सरती थी ? क्योंकि भ्रूम से पहले अक्षर की क्या स्थिति हो सरती है उसे बच्चे की सभा भी दो जा सरती है या नहीं, इसे तो बार्ड घुमरी महिना विचित्रक ही बता सरती है लेकिन तब वही कहानी का मन्तव्य खोजन के लिए यौद्धिक शौर्यागन विस स्तर का होगा, इसी कलात्मकता का युक्त से जाना सापद तब सुरिस्त होता ।

दरअस्त कहानी म बच्चे तलागात घोर बच्चो म कथा मन्तव्य की खोज गुण म बचपानपन का एक सूयमूरत गमूता हो सरती है ? गनीमा यह रहो कि बच्च घोर बच्चो म मन्तव्य तलागन का यह शीन या कहे कि यह रोग इगरे कथा-समीक्षा म नहो फना, करना हिन्दी की नई कथा-समीक्षा साता बटा जकारागात हो जानी घोर मित्र समीक्षा वहाँ से ऐगे-ऐसे हैरतअंगेज मन्तव्यवान बच्चे तलागने जो कहानी पाठक के लिए परीलोच के रहस्यो से कम दिवचस्य न होते ?

किसी भी विचार या देगी विदगी दर्शन की उप्मा की रचना प्रक्रिया से होकर कृति मे से सेने म किसी की क्या ऐतराज हो सरता है क्योंकि उप्मा सी नहा जानी बल्कि जिन्दगी म होकर उसके होने का सयून देना पडना है ऐतराज का सवान तो तब पदा होता है, जब रचनाकार या समीक्षक अपनी क्षमता की असाधयता म उसकी उप्मा को न जोह कर अथित विचार की हृदबन्दी की पहन लेता है घोर वसी हृदबन्दी की अपनी समीक्षा-बुद्धि या रचना दृष्टि की नियति भी मान सता है तब यह अस्वाभाविक नहो रह जाता कि 'गर जानिबदारी घोर वर्ग सधर्ष का अस्त जन वादी साहित्य व सात्र के 'आदमी स्वतन्त्र होने के लिए अभिगत है जैसे तल हुए पेटट' कुरकुरे वाक्य की रटते रटते उसकी समझ ही जवाब दे जाय घोर अपने समूचे लेखन मे हर तीसरे वाक्य मे इन आजमाए हुए टोटका की दुहरा दुहरा कर आजमाता रहे लेखन मे ऐसे समीक्षकी घोर रचनाधर्मी मित्रा की हानत कोलू के उस बल से क्या कुछ बेहतर है, जो जहाँ अपनी पुराना चक्कर खत्म करता है, नए चक्कर की वही से धुरु घोर वही खत्म करन के लिए विवग रहता है फर सिफ इतना सा कि वह अपने स्वामी के मानहृत है घोर ये साहित्यिक एक विचार की बाडे बन्दी के इस फर के साथ भी कि उसकी विवगता कुछ उपयोग करन के लिए है घोर इनकी साधकता महज शब्दादी करन के लिए

इसी तरह समीक्षा-बुद्धि की सत्भरणात्मक अदायगी का मनोरजक नमूना पिछल दिनी 'हिन्दी कहानियाँ घोर फलन म देखने म आया है उसके बचनान प्रस्तुती करण की अगर नहर-दाज भी कर दिया जाय, तब भी क्या उपलब्धि के विश्लेषण

का जो सपाट बंधव उसमें है उसी की बजह से नितनो ही की उसमें मिलवसी हो जायगी उसमें क्या समीक्षा की तज एवदम प्रमाण पत्र देने जसी है—अमुक कहानी उत्तीर्ण हुई और अमुक अनुत्तीर्ण अमुक कहानी उत्तीर्ण की जा सकती थी, लेकिन उसका क्या नाम अविश्वसनीय है या घटना अतिरिक्त है इसलिए पित्रहाल उसे अनुत्तीर्ण घोषित किया जाता है अमुक कहानी मुझे बहुत अच्छी लगी (क्यों ? यह साफ करने की जरूरत नहीं समझी गई) अमुक कहानी नए नए दुष्कृत कहानी है, कि अमुक कहानी यादगार कहानी है, (यानी कहानी को ताजमहल होना चाहिए) इन जागनधर्मियों को क्या मतलब लिया जायगा ? समीक्षा में इनका क्या बजह होगा ? बिना आवश्यक तथ्यों के अपनी परसंदगी-नापसंदगी का इजहार हो अगर समीक्षा है तब अपनी समीक्षा-दृष्टि के लिए निस्संगता और रचे-बोध-विश्वपण की मांग ही किजूल है ? गनीमन यही नहीं है लेखक ने अपना शिवायतनामा और उधार खाता भी खोल लिया है जिसका जितना आता है उसका फलत उतना ही हिसाब देना नहीं किया गया है भविष्य की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए उन पर कुछ ज्यादा ही खर्च किया गया है जिन मित्रों का जितना दना था, उदारता पूर्वक उससे कुछ अधिक हो दिया गया है 'आवेग' और उन्धवान के साथ जरूरत मुताबिक गाली-गलौज और भाव भोनी तकहीन स्तुतियाँ क्या-समीक्षा के नाम पर वही उपलब्ध (?) भी हो सकती हैं, यह इस पुस्तक में प्रमाणित हो जाना है। कौन नहीं जानता कि इस तरह की अनगणता समीक्षा दायरे में तो आती ही नहीं, वह समझने-समझाने के दायरे में भी नहीं आती

लेखक ने जहाँ तहाँ अपनी निष्पक्ष क्या समझ के प्रदर्शन के लोभ में विरोधियों की दो-एक कहानियों को सच्चरित्रता की सनद भी भेंट करदी है बिना उनके क्या सत्य को तब के निरूपण पर फलाए हुए नेतृत्व की भूल में नितान्त नए लेखकों को भी सराह दिया गया है (उनकी कहानियों को नहीं) हालाँकि यह अलग बात है कि इन नितान्त नए क्याकारा की क्याश्रो में उजागर होती हुई क्या क्षमता को यदि पुस्तककार चाहे भी तब भी नकार नहीं सकता हिन्दी कहानियाँ और फलान क लेखक का जार क्या-समझ से हटकर सिर्फ इस बात पर भी रहा है कि उतने काफी कहा नियो पढे हैं (अकसर यात्राश्रो में रहने वाले दवाइयों के प्रतिनिधि और 'वक्त कटे तब जि'दगा कटे वाले मुहावरे को जिन्दगी समझने वाले फालतू वक्त लोग देशी-विदेशी कहानियों से लेकर जामूसी अय्यारी और 'ब'दामामा तक के नए अद्भुत तब चाट जाते हैं) लेकिन इससे समीक्षा विवेक में किस स्तर पर अनेतरी हाती है, जब तक कि समीक्षा-बुद्धि से ही उनका जापजा न लिखा जाय ? जब तक किसी कहानी को समीक्षात्मक नजरिए से उतकी रचना प्रक्रिया सदिलक्ष्यता और आन्तरिक रचाव या लेखकीय टीटमेंट को मद्देनजर रखकर, उसके सत्य की उपलब्धि के लिए नहीं पढा

जाना तब तब उमके पढ़ लेने से समीक्षा स्तर पर क्या हासिल होगा ?

ही कहानियाँ और पत्र के सतत ने समीक्षा-नियम (?) के इस मुक्त पर भी राग जोर दिया है कि उसने उद्योग कहानियाँ में किसी दूसरे देशी विदेशी लेखक की कहानियाँ के पास बाँच लिए हैं और यह भ्रमस बाँचो यात्री तद्दीवान उसे एक निष्पत्ति तक पहुँचा गई है कि हिंदी के सतत की पर्याप्त कहानियाँ दूसरी कहानियाँ की कच्ची तब मात्र हैं विलुक्त महत्त्वपूर्ण यह तलाश नहीं है कि किन लेखक ने अपनी कहानी का प्रधानक कहाँ स भ्रष्ट लिया है (हमारे इन समीक्षा की निगाह में घुसा लिया है) या कि कौन कहाना किस लेखक की कहानी के गिला की कच्ची घ्रातमादा है 'नदी व द्वीप और भ्रमन भ्रमन भ्रमनबी (इस उद्योग को कहानी चर्चा में सम्मिलित कर लेने का कारण मरे भ्रमन का प्रमाण देने के लिए बतौर कहानी के पेश किया हुआ न मान लिया जाय) का क्या बिन्दु कहाँ से लिया हुआ है कि इनके गीपक तर के गद वही भा चुके हैं (इस तलाश का बुद्ध मतनव हो सकता है लेकिन एक अलग सदन म और नितान्त सतही तौर पर) महत्त्वपूर्ण तलाश यह है कि सतत की कोई अपनी कथात्मक दृष्टि है भ्रमवा नहीं, रचनात्मक सम्भावना उलके महीं किस स्तर तक है और रचनागत लेखकीय एोज अपनी कलात्मकता म किम आद्याम तक विरसित है वह वस्तु शिल्प की कौनसी हदें तोड़ रहा है और कि कौन से कोणों में उसके महीं सकेत मिल रहे हैं रचना निर्वाह म वह कितना घागे है और रचना के प्रति ट्रोटेमेट म वह कितना अपनी तरह है क्या उसकी रचनाएँ सामूहिक सृजन म अलग से कोई अपना रग दे पा रही हैं ? और कि वे किस सीमा तक आधुनिक हैं और जीवन वास्तव के सम्प्रण म अपनी कला की कौन सी नोकों की तरांग रही हैं इन उपलब्धियों म वह कितना भागे है और कहाँ-कहाँ चुकता है ?

रचना प्रक्रिया के निजी नियमों के चतते जिस तरह कवि किसी एक ही विम्ब का अपनी कविताओं में बार बार जाता है और महसूस करता है कि इस एक विम्ब को वह जिस तरांग और अर्थ बोध के साथ प्रस्तुत करना चाहता है, वह नहीं हो पा रहा है और जब वह विम्ब के समूचत्व को निचोड़ लेता है तभी वह लेखकीय नतिवता में दायित्व के सही निर्वाह का दप पाल सकता है कथाकार भी रचना-प्रक्रिया म इसी धम के करीब से गुजरता है वह एक ही कथानक पर कई कई कहानियों में तब तक श्रम करता रहता है जब तक कि उसे यह सतोप न हो जाय कि जिस कथा विश्वास को वह कहानी म आकार देना चाहता था उसे अभिव्यक्ति देने म सफलता मिल गई है इसा सतोप को पान के लिए वह कभी कभी दूर तक तिल चुवन के बाद भी उसी कथा बिन्दु पर फिर लौट आता है या कि उस कहानी की और मुड जाता है जिसे कि वह अरसा पहल मिल चुका था लेकिन उसके लेखकीय नतिक विश्वास म वह आज भी

उससे लिखाए जाने की माँग कर रही थी यानो लेखकीय तृप्ति में वह उमने आज तक भी नहीं लिखी गई थी यह सृजन प्रक्रिया के नियमों के अनुसार रचना स्तर पर ठहराव नही है और न ही किसी भास स्थिति या कथा प्रसंग के प्रति मोहाधना बल्कि काफ़ी कुछ आंतरिक रचनाधर्मी नतिकता के न निवाह कर पाने की त्रिवशता का नतीजा है इसलिए जब समीक्षक किसी कथाकार को यह मुहावरा देने की कागिस करना है कि वह अब खुद को दुहरा रहा है और इसी तर्क के आधार पर उसकी सिफारिस है कि सृजनशीलता के उभेप को इस लेखक के यहाँ ठप्प मान लिया जाना चाहिए, तब समीक्षक मित्र की उक्ति में सत्याग (सब सत्य नहीं और नभी-कभी सत्याग भी नहीं) होने के बावजूद क्या यह सवाल पूरी तरह उत्तरित हो चुकता है कि उसने लेखक की कृति के मदम में रचनाधर्मी नतिकता या दायित्व को एकबारगी महो नजर में परीक्षित कर लिया है ? आन्तरिक विवगता (रचनागत नतिकता) के चरने कभी-कभी लेखक न सिर्फ अपने बल्कि दूसरे लेखकों के कथानक का भी कथात्मक विश्वास के तर्क कुछ हद तक अनुभव देने की गरज से चुन लेता है तब क्या उस पर गौर किए जाने की माँग जायज न होगी ? बतौर फौशन के ही सही पिछले दिना एक ही कथानक पर कई-कई लेखक श्रम करते देखे गए हैं, और न सिर्फ कथानक बल्कि एक ही कहानी को उन्होने अपनी अपनी तरह प्रस्तुत किया है इसलिए एक ही कहानी में दूसरी या दूसरे की कहानी पढ़ने की लत पालना और इसी तहकीकात में मग्न रहते हुए लेखक और कहानी की रचनात्मक हृदा की अवहलता करना क्या सहिष्णु समीक्षा-बुद्धि का नतीजा माना जा सकता है ? हिन्दी कहानियाँ और फौशन के लेखक न इस समीक्षा-बिधि की पूरे तौर पर अवमानना की है, लेखक की ही समीक्षा-बुद्धि को अगर कहानी समीक्षा के लिए अपनाया जाय तो दुनियाँ के तमाम कहानीकार (गो उसके लिए दुनियाँ की तमाम कहानियों को पढ़ना पड़ेगा और उम्मीद की जा सकती है कि लेखक ने जो तत्परता प्रभाव खोजने और फनवे दन में दिखाई है दुनियाँ को तमाम कहानियाँ पढ़ने में भी उमका सबूत पस करेगा) एक दूसरे के कजदार मारित होंगे और यह भी साबित होगा कि वे किसी समाज गान्था, विचारक या दार्शनिक के यहाँ से उठाईगीरी के अपराध का गिरफ्त में हैं इस लेखक ने अपना जिन्दगी के तमाम सम्भरण को मद् नजर रखते हुए आवेगपूर्ण व्यक्तिगत प्रतिक्रिया के दौगन एक बात जरूर साफ करदी है कि वह मसखरा भी है (गा इस बात को साफ करने की कुछ गास जरूरत तो नहीं थी इसलिए कि इन पूरी पुस्तक का—अगर आप पड सकें तो—पढ़कर यह बात खुद ही साफ हो जाती है) इस सूचना की निरयनता के बावजूद इससे एक बात जरूर साफ हो गई कि निवच के तौर पर लिखे गए इस सम्भरण को कथा-समीक्षा के तहत गुमार न किया जाय यह सही है कि लेखक मसखरा भी हो सकता है, लेकिन हर मसखरा खुद को लेखक भी लगाने लगे तब तो लेखक की कृति

की घिनाह्न बड़ी मुश्किल हो जायगी और समीक्षा को बड़ी गलत स्थिति से गुजरना पड़ेगा यह मानते हुए भी कि कुछ रचनाकार ऐसे भी हैं, जिनमें समीक्षा बुद्धि है और कुछ समीक्षक भी सृजनात्मक रचाव से सम्पन्न हैं, लेकिन इसी वजह से यह कसे मान लिया जा सकता है कि हर रचनाकार समीक्षक भी होगा ही और इसका विलोम भी गजब कि कुछ लेखक समीक्षात्मक सतुलन के अभाव में, समीक्षा के नाम पर, जो मसखरापन करते हैं उसमें मसखरेपन की भी गरिमा नहीं होती और इसी के चलते उनकी कसी खस्ता हालत होनी है यह काफी साफ यहाँ ही ही चुका है

समीक्षा में इस विडम्बना से नई कथा ही नहीं गुजर रही है नयी कविता भी गुजर रही है, बल्कि दूसरे दूसरे साहित्य रूपों की भी कमोबेश यही हालत है, यहाँ समीक्षा की तटस्थ बुद्धि नहीं होती, बल्कि व्यक्ति को ध्यान में रखकर उसकी कृति समीक्षित की जाता है मतलब कि व्यक्ति से पहले दोस्ती दुश्मनी की जाती है (कुछ लोग अकारण ही दोस्त कम दुश्मन ज्यादा होते हैं) फिर वह रिश्ता मतलब दोस्ती दुश्मनी व्यक्ति की कृति के साथ निर्भाई जाती है इससे गुटवादी को जहाँ बढ़ावा मिलता है, वहाँ रचना उमेद में भयानक गतिरोध उत्पन्न हो जाता है और समूचा समीक्षा विवेक व्यक्तिगत सम्बन्धों का पर्याय होकर रह जाता है इस शोरशराबे में नतीजा यह होता है कि पाएदार समीक्षक और स्तरीय समीक्षा इन दोनों को ही छतरे में पड़ जाने की गुंजाइश होती है और इसके तहत समीक्षक या तो विरोधी होकर सामने आता है या फिर प्रशस्तियाँ बाचन की उसकी नियति हो जाती है सम्प्रति कदाचित् समीक्षक की यही स्थिति देखकर रचनाकारों के यहाँ यह आवाज जोर पकड़ती जा रही है कि समीक्षक सिर्फ बिचौलिया की गलत भूमिका ही कृति और पाठक के बीच प्रदा कर रहा है इसलिए उसकी उपेक्षा की जा सकती है और शायद इसीलिए (इसलिए भी) रचनाकारों को कृति का सही महत्व पाठकों तक पहुँचाने के लिए इस बिचौलिया के अस्तित्व को नकारते हुए छुट ही समीक्षा और सभालन की जरूरत पड़ गई है गोविं यह स्थिति भी कम खतरनाक नहीं है इसलिए कि रचनाकार अपने व्यक्तय में समीक्षक की निस्मग बुद्धि का प्रमाण नहीं ही पाता वह या तो कृति के मर्मधन विरोध में एक पक्ष हो जाता है या फिर वे बातें कहता है जो उसकी निगाह में कला की चरम प्राप्ति हैं और जिन्हें कृति की उपलब्धि बनाने की सृजन यात्रा में वह संलग्न है और फिरहाल वह सब कृति में नहीं है जिनके उसमें होने की वह बात करता है क्योंकि सृजन के विकसितनम आगामों की बात तो कही जा सकती है लेकिन सृजनात्मकता का साक्षी होने हुए उन्हें कृतियाँ में उपलब्ध कराना काफी कुछ मुश्किल है यही वजह है कि नए कथाकारों के पर्याप्त वे दावे झूठे पड़ गए हैं नयी कहानी में जिनके होने की उन्होंने वचनान की थी निश्चय ही कथा-समीक्षा की यह हस्तम्प स्थिति है लेकिन प्रगतिवादी सिरु कर्तनी है कि इस बंधे जल में से कथा-समीक्षा छुट को

न गोपिया की तरह ही समाक्षा बुद्धि का अपने 'मतवाद पुरख के हवाले कर दिया है और अब क्या-समीक्षा के नाम पर उसी की नींद सोना और उसी की नींद जगना इनका सतीकम भा शगल रह गया है साहित्य में ये सतीधर्मा समीक्षाएँ काल अथ पाठका क लिए कुछ उपयोगी हो तो हो, लेकिन दृष्टि देने के नाम पर ये समीक्षाएँ पाठको की दृष्टि धुँधनी ही करेंगी

इस तरह की 'टटोल वाली 'दस्तावेजी समीक्षा न राजेन्द्र यादव की छोटी-छोटी ताजमहल कहानी का मुआयना किया है, यानी इस कहानी में समीक्षक न उस सत्य को उपलब्ध नहीं करना चाहा है, जो यह कहानी देती है बल्कि उस भ्राष्ट्र को देखना चाहा है, जिसके लिए वह पहले स समर्पित है, जाहिर है कि अपने समर्पित' के प्रति कहानी का 'समर्पित न पाकर उसके बारे में गलत निष्कर्ष देना कितना आसान है ? और अपने समीक्षात्मक गलत चिन्तन के लिए लेखक तब तब अपनी ओर से आसान बना रहेगा जब तक कि वह छोटी-छोटी ताजमहल से छोटी छोटी बुजिया और गुमटियों की माँग करता रहेगा क्या-समझ की इस बातचीत को देखते हुए यह सवाल किया जा सकता है कि सृजन के लिए यदि संवेदन की तटस्थ अभिव्यक्ति जरूरी बात है तब समीक्षा के लिए यह सर्त जरूरी क्या नहीं है ?

मतवादा के तहत पनपी और शास्त्रीय खाना म बंदी क्या की समीक्षा-बुद्धि सस्कारी में पिट पिट कर इतनी चपटी और माथरी हो गई है कि उससे तटस्थता की माँग करना परिलोक की कहानियाँ को जिदगा म हूबहू देखना है

समीक्षा स्तर पर नई कहानी को इसलिए भी एक असें तक विश्लेषणा से गुजरना पडा है क्योंकि क्या समीक्षा को खुशबत इम्ता समझने वाली समीक्षका की मुर्तिसी प्रकृति ने कहानी से भी खुशबत इम्ता का दर्जा पाने की माँग की है यानी उनके लिए कहानी अपने सत्य की प्रतीति सतह पर हा बराए और वह भी पारदर्शी होकर इसलिए अपनी रचनात्मक सृज म जो कहानी सन्निष्ट सत्य की अभिव्यक्ति हो रही है उनकी निगाह से उन्माव पूण और वेचीन है, वह सजनात्मकता की सम्भावना वाली कृति का दर्जा नहीं स सकती इसलिए कि चक्रदार गिन्य और वेच पडा कहा किया उनके यहाँ क्या की सन्निष्ट कला क मौजू उन्हारण जो नहीं है

उन्माव चक्रदार गिन्य क्यानक म पच और मोडा का अपनी क्या समीक्षा के लिए नुस्ते बनाएर इनकी बुनियात पर क्यागारा क सखन का बायन राम दना प्रचारान्तर स 'नई कहानी को चक्रदार गिन्य उन्माव और नाग्योप मोडा को टहराना है "सचिन सवान यह है कि क्या यह तात्पर्य नई कहानी पर नई है ? क्या यह उन सम भा परम्परा का सचन नहीं है जो क्या की कविता को समझन क लिए दुरु समीक्षा दौर म बाड़ी नई की कवि को जो दन न चाहो किनाई तो पूछिए क्या की कविताई "गर्वे मवर्द्ध के दने को इस समागा परम्परा स बाट कर नैनाम को

चीज भी मान लिया जाय, लेकिन मिर्जा पर उनके समकालीनों द्वारा लगाई गई तोहमतों से तो इन तोहमना की प्रकृति धाम कुछ भिन्न नहीं ही ठहराई जा सकती "क्लाम मीर समझें और जबाने मीरजा समझे, मगर इनका वहाँ ये आप समझें या खुदा समझे जिसके तहत कृतित्व की अक्षमता का नहीं, समीक्षा की अक्षमता का सबूत मिलता है, क्या इस बात को फिर फिर दुहराने की दरकार होगी कि मरल और सीधी रचनाओं की माँग जवाबदेह समीक्षक की माँग नहीं है, वह कक्षा में अव्यापक से अपरिपक्व-बुद्धि विद्यार्थी की माँग है और क्या यह माँग उन समीक्षकों की बही जायगी, जो आज भी खुद को कक्षा की आखिरी कुर्सियों पर बठाने की ज़रूरत महसूस कर रहे हैं ?

कुछ सरल प्राण और सरल बुद्धि लोग जिन्दगी से भी सीधी सरल होने की माँग करते हैं और समीक्षकों में भी इनकी तादाद खासी है, और तब क्या अजब कि ये क्या समीक्षक भी कहानी से 'प्वाइंट वार' सरल होने की माँग करें लेकिन फकत माँग करने से ही जिन्दगी सपाट हो जायगी और कि कहानी भी ? क्या उनकी अपनी ओर से इसके लिए जद्दोज़हद की ज़रूरत नहीं है ? और कि यह माँग सीधी सरल जिन्दगी की अपनी उलझनों और खतरों पर सोचने के बाद की गई है ? इनके इस सपाट भोलेपन पर क्या कहा जाय ? गो मिर्जा ने इस बाबत कहा था, जिसमें रचनाकार का दृष्टिकोण साफ था और दब भी 'आसा कहन की करते हैं परमाइश गोय मुदि कल वगर न गोयम् मुदिकल ऐमे मित्र जिन्दगी (और कहानी भी) से तो आसान होने की माँग करते हैं हैं लेकिन अपनी ओर से मतलब अपने समीक्षा विषय में आसान होना नहीं चाहते, फिर इसका ही क्या सबूत कि आसानी ही उनके लिए मुश्किल और उलझन भरी न हो जायगी, जब अपने ही दीशे में दरार हो ता साबुत अकम देख पाना असम्भव नहीं तो मुश्किल ज़रूर है और आसानी भी किस कदर मुश्किल होती है, इसे मुश्किल समझने के बाद ही जाना जा सकता है गरज कि उहे इस बात को समझने की ज़रूरत ही महसूस नहीं होती कि उही के आसान न होने से जिन्दगी (कहानी) उलझी हुई है कि उलझी हुई लग रही है

यादव की कहानियों में चक्करदार शिल्प और कथानक में मोड़-पेचों की शिकायत खासकर नामवर के यहाँ ज्यादा सुनी गई है नामवर के साथ खास दिक्कत यह है (लेकिन ज़रूरी नहीं कि खास दिक्कतें होने की वजह से ही आदमी खास भी हो जाय) कि उनका मुख्य बोध इंसानी है सरल बिम्बों से आपूर कविताएँ वे खासकर पसंद करते हैं और उनके खुशनुमा शब्द लिखते हैं (शब्द वे उन कहानियों सप्रहा के भी लिखते हैं जिनमें सरल बिम्बा वाली कविता को गिना नहीं है) कहानियों में वे जहाँ दृष्टि का रोमान और कविता में सरल बिम्बों वाला 'टक्सचर' देखते हैं, वहाँ वे उहे उमग कर लेते हैं इसी खास वजह के चलते वे निमल वर्मा की कहानियों को धुनकर दाद देते

चलते हैं (दाद देने की वजह निमत की कहानियाँ का साम्यवाद की धोर झुटा होना भी है लकिन यह वजह सास नहीं है इसलिए कि यह बात कुछ दूसरे कथानाओं में भी मिलती है, लकिन वहाँ नामवर दूसरा ही रवया कथानाने हैं) और इसी पमान को लेकर जब वे राजेन्द्र यादव के यहाँ पहुँचते हैं तो भाजिजी से शिकायत करते पाए जान है कि यादव कक्करदार कथानक गढते हैं वही कथा में फेच डालते हैं तो वही भटका देन हैं हालाँकि वे मह स्वीकार करते चलते हैं (जबकि कोई भी साहित्यिक स्वीकरण कृति की परीक्षा के बाद ही सही समीक्षा बुद्धि का मतलब रखता है यानी कृति की परीक्षा के बाद आपका स्वीकार या अस्वीकार समीक्षा दायरे की चीज होगा, 'मतवाद' के अंधेरे में कृति के सत्य की टोह समीक्षा की सही दिशा नहीं होगी) कि श्रेष्ठ कहानियों के कथानको में नाटकीय मोड (पेच) पडना आम है 'मह राण्डगत अतिविराध की पकड श्रेष्ठ कहानियाँ के कथानको में नाटकीय मोड पना करती है'

अपनी रोमानी दृष्टि की वजह से ही (जिसका सपूत पसद की गई कहानियों के उद्धरण हैं) नामवर की राजेन्द्र यादव के यहाँ उनके इस भाषा रख से शिकायत है कि वे कहानियों में निबन्धात्मक रवैया कथानाने हैं लकिन नाइतिफाकी उहे इस सबब भी है कि यादव कथा गद्य में काव्य पत्तियाँ उदभूत करते हैं और काव्यात्मक अनुभूतियाँ या अनुभूति चित्रों का उपयोग करते हैं याना यादव अपने अनुभूति चित्रों से कविता जसा प्रभाव जरूरत मुताबिक कहानी में पना कर ले जाते हैं यह शिकायत तलब है और शिकायत तलब यह भी है कि यादव की कथा भाषा निबन्धात्मक हो उठनी है¹ तब मवाल यह रह जाना है कि यादव की कहानियों में ऐसा क्या है जो नामवर की शिकायत की गु जाइश न दे ? बहरहाल इसका उत्तर देना क्या जरूरी है और कि उत्तर भी चाहे जसा हो, वह शिकायत के लिए गु जाइश नहीं छोडेगा ? जब तबियत ही शिकायताना पाई हो तो चीजों का सही गलत होना कोई माइने नहीं रखना गोकि

दरअसल नामवर के यहाँ कहानी सास तीर से निमत बर्मा की कहानी है (जो उनके लिए न सिर्फ 'नई कहानी' की ही शुरुआत है बल्कि हर शुरुआत का गायद अन्त भी है ?) यानी कहानी का मतलब नामवर के लिए है कि कुछ तरल-तरल सा हो

¹ दूसरी और राजेन्द्र यादव हैं, जो सम्भवत कहानी के लिए निबंध की ही भाषा को आदश मानते हैं शायद इसलिए क्षति पूर्ति के लिए उन्होंने 'कुलटा' में उद्ग के शेरों की सहायता ली है (और शायद इसीलिए नामवर ने उद्ग के शेरों की सहायता कहानी की आलोचना में ली है ?) वहाँ तो आडेन-जसे कवि हैं कि इस मास-सता को ज्यों का त्यों समेट लेने के लिए कविता के ढाँचे की दूर तक श्रुतु करने की कोशिश करते हैं और कहीं हमारा कहानीकार है कि कहानी की कविता के तग दायरे की ओर धसीट डालना चाहता है ' (कहानी नयी कहानी पृष्ठ—४६)

प्रेमिया की खामोशी हो कही कच्ची मिट्टा पर तितनी या घटकता हुआ नूरा नहा दिल हो, कवूतरा की गरदना में फुहारें बँधी हा, रिखाड पर अंधरे में फून-पत्तिया उभर रही हो, स्वर के नरम नगे हाथ उहे पकड रहे हो हवा का घाम में हिलता हुआ घासला हो, जल पर कोमल स्वप्नित उमिया भँवरो का भिन्नमिलाता जान बुननी हा किस्ता बोनाह नामवर चूँकि काव्य के पाठक रहे हैं (वकौन उहो के 'मेरा अपनी सीमा यह है कि मैं अब तक मुख्यतः काव्य का पाठक रहा हूँ कहानियाँ मने कम पढी हैं) और कहानिया इतिहासन पढने रहे हैं इसलिए उहे वही कहानिया पसद हैं जा या तो छायावाद का अवसाद लिए हुए हा (परिन्द) या फिर हल्के दबावो वाले नरम' विम्बा से भरपूर चूँकि वे कविता के पाठक हैं, इसलिए छोटी कविता को समीक्षा विधि को उन्होंने कहानी पर भी फिट कर लिया है

नामवर निमल वमा की कहानिया के पमाने से ही यादव की कहानिया का जायजा लेते हैं—एक ही पमाने से दो लेखका की कला का तो क्या, एक ही लम्ब को दो कला कृतिया का मूल्याङ्कन करना पितामहा की उसी गलती को दुहराना है जिसके खिलाफ स्वयं मसीहा होकर इन लेखका ने जिहाद करने की घोषणा की थी—निमल वर्मा के यहाँ जो है वह उहे राजेद्र यादव के यहाँ चूँकि नहीं मिलता (और मिले भी तो कैसे, क्याकि जो राजेद्र यादव के यहाँ है, वह निमल के यहाँ जो नहीं है) इसलिए यादव की कला, कला नहीं है उनके लिए (सबके लिए नहीं) कला का वहम पदा करती है निमल वर्मा की कहानिया पर इस आरोप का कि उमे भावुकता है नामवर ने एक मादूल जवाब मोच निकाला है उनका दावा है कि भावुकता कृति में नहीं पाठक की निगाह में होती है— कुछ लोगो का कहना है (निमल वमा की कहा नियाँ पढकर) उनके मन में भावुकता उत्पन्न होती है। —अगर यह सच है कि कृति में नहीं, बल्कि पाठक की दृष्टि में भावुकता होती है तब फिर यह भी सच है कि कला-कृतियाँ कला का वहम पदा नहीं करती बल्कि वह आलोचक की निगाह ही है जो आलोचना के नाम पर सिर्फ आलोचना का वहम पदा कर रही है

व्यक्तिगत स्तर से हटकर एक ही कृतिवार की कृतिया को अपना समीक्षा मान न बनाते हुए समग्र दृष्टि से जत्र तक कोई समीक्षा दृष्टि विकसित नहीं की जानी तब तक किसी स्तरीय समीक्षा पद्धति की गुरुघात मुश्किल है अलवत्ता नई समीक्षा पद्धति का वहम जरूर पदा किया जा सकता है जिसे पदा करने के लिए हर कोई स्वतंत्र है सुरक्षित फिर वह चाहे न भी हो किसी कहानी के सत्य को उपलब्ध करने के लिए उससे होकर आना ही एक मान रास्ता है हर कहानी के शास्त्र को उसी में म ईजाद करना होगा एक ही बने बनाए समीक्षा ढांचे से हर कथावार या हर कहानी का जापजा लेना अवगानिक है यह पितामहा की ही समीक्षा दृष्टि का इजहार है पत्रन इस अन्तर के साथ कि आपन उत्तर बीसवी सदी के छठवें या सातवें दशक में किसी

सद्यः प्रकाशित कृति के आधार पर अपनी माग्रह मूलक समीक्षा दृष्टि या पद्धति का इजहार किया है उन्होंने पूव बीसवीं सदी या मध्ययुगीन किसी कृतिकार के समूचे कृतित्व का सामने रखत हुए उसे ईजाद किया था ?

दृष्टि बनाकर कृति की समीक्षा माग्रह है दृष्टि कृति में से होकर ही उनके लिए बननी चाहिए और यदि मूल्य परक समीक्षा दृष्टि से गुजरना है तो समूचे परिवेश के सदम स कृति के सत्य को पाना होगा किसी भी कृति को समीक्षा के जिस तिस प्रचलित ढाँचे में बठा लना सगत समीक्षा प्रयत्न नहीं है यदि निगाहों में एक ही कृतिकार का श्रेष्ठ मानकर (जानकर नहीं) दूसरे कृतिकार की समीक्षा की जायगी तो तमाम समीक्षा प्रयत्न बेबुनियाद हो जायेंगे एक लेखक का यह वाक्य जिसे मं स्पश कर लूँगा उसे अनुभव भी कर लूँगा और तब उसे साकार तो कर ही लूँगा । (अर्घा गिल्पी और आँखों वाली राजकुमारी) आपको असगत, अक्यात्मक और अप्रामाणिक लगना है लेकिन दूसरे लेखक का हूँ हूँ इसी नस्ल का वाक्य आपके यहाँ रेखाङ्कित किया जाता है ' (बीरेन की) आँखें हैं जिन्हें देखकर लगता है कि जिस वस्तु पर टिक जायेंगी वह अपन आप सँवर निखर जायगी । (अंधेरे में) और आपको जीवन सत्य का साक्षात्कार कराना है जाहिर है कि इस तरह की सपाट में की गई टिप्पणियाँ सही समीक्षा बुद्धि का नतीजा नहीं होती वे व्यक्तिक राग द्वेष की उपज हैं और व्यक्तिक राग द्वेष का निर्वाह साहित्य की अपेक्षा जिन्दगी में ज्यादा प्रभाव पूरा ढग से किया जा सकता है

उस उद्धृत शायर का भोली प्रेमिका के 'गुस्से पर 'प्यार आया करता था जो प्यार पर गुस्सा करते रहने की आदी हो चुकी थी उत्तर बीसवीं सदी के इस सातवें दशक में न तो उतनी भोली प्रेमिकाएँ ही रह गई हैं कि मिनावट और तग हस्ती के बावजूद इस जमाने में शुद्ध दुलभ प्यार जसी नियामत पाकर भी अनान या सनान का गुस्सा करती रहे और न ही है वह धयधारी शायर कि 'प्यार को एवज गुस्सा' पाकर भी अपनी ओर से प्यार में किसी तरह की कौताई न ध्यान दे वह तो भारतीय दूतावास पर चीनी घिराव का जकाव चीनी दूतावास पर भारतीय घिराव से दना चाहता है मतलब यह कि प्यार राजनीति हो गया है और राजनीति बड़े प्यार से की जाती है लेकिन क्या समीक्षा में उन भोले नागरिक समीक्षकों के लिए क्या कहा जाय जो इन हानता में भी, जराबि जिन्दगी ज्यादा जटिल और सखिल्य और पेचोदगी गुदा हो गई है और पाठकों की क्या सत्य को उपनय करने की दृष्टि बदल चुकी है—बदल रही है—कहानिया की प्रसंगगत परीक्षा किए बिना अपने भोलेपन के चलते उनके चक्करदार गिल्पी और कथानक में पेच' (मोड) पड़े देखकर उल्लास हो जात हैं और इस उदासी की हालत में ही सपाट से इन्हें निएवो से भी गुजर सते हैं हानाँकि

स्वस्थ समीक्षक हैसियत से जब कभी (अक्सर नहीं) वे विचार करते हैं तब कुछ निराय वे वास्तव के समीपतर भी पा लेते हैं अब यह बात जुदा है कि ठंडे दिमाग से लिए गए वे निराय, उनके छूद के पूर्ववर्ती निरायो के विरुद्ध पडते हैं कितनी के मुँह नहीं सुना है कि जल्दी का काम शैतान का काम है क्या जल्दी में लिए गए निराय भी पातानी (मिस्वीफ) से लिए गए निराय नहीं होते ? कुछ समीक्षक मित्रों को निराय लेने दिलाने की इस कदर जल्दी रहती है कि सामने चाहे कोई विचारणीय मसला न भी हो निराय उनकी जेब में जरूर होगा और वह निराय भी क्या जो अलग अलग मसला के मुताबिक अलग अलग तरह से लिया जाय, क्या लिया हुआ एक ही निराय जिन्दगी के तमाम मसला के लिए काफ़ी न होगा ? जिन मित्रों को जिन्दगी ही एक ऋपाटे में लिए गए निराय से अधिक कुछ भी नहीं लगती मतलब उन्होंने दुनियाँ में ज़म लिया यह एक इतिहास की बात है, तब वे कहानी के लिए भी एक इक्करा और सपाट खयाल रखें तो इससे ज्यादा की उम्मीद क्या उनके साथ आयाय न होगा ?

फिर ग्रहम सवाल यह नहीं है कि अमुक लेखक की कथाया की गिल्प चक्रुदार है और कि कथानक नाटकीय मोडो से अँटा पडा है, सवाल ग्रहम तो यह है कि उनका परीक्षित कर ले जाने का आपका दावा तो कही बेजा नहीं है ? जिन्दगी इतनी आसान तो नहीं है कि उसके जीने की कोई खास तक़्त आप बता दें और गैप तमाम जीवन विधियो को अवघ घोषित कर दें आप ही उसके सही मिजाज के विशेषज्ञ हा और बाकी सब विचार्यो हो और विचार्यो भी क्या ? क्या विलियम सारोयान के द ह्यूनन वॉमिडो के प्रोगन के इस कथन की कहानी की पहचान में बगौर इशारे के बूझ ले जाना कुछ गलत होगा ? "लोगा के सम्बन्ध की यदि कोई बात हो, तो मैं तुमसे कहूँगा कि इस बारे में तुम्हें बहुत सावधानी से काम लेना आवश्यक है यदि तुम कोई ऐसी बात दखो जिसके बारे में तुम्हें पूरा यकीन हो कि वह गलत है, तो अपने इस यकीन पर पूरा भरोसा मत करो कोई भी व्यक्ति भले ही किसी भी ढंग का क्या न हो उसके बारे में किसी प्रकार का निराय दे डानना न सिर्फ अनुचित ही है, अपितु भ्रष्टता की भी बात है और कहानी के बारे में एक प्रकार का निराय दे डानना ? निश्चय ही सारोयान का यह कथन उन मित्रों के लिए तकनीकतः हागा जो हर वक्त निराय लेने-दिलाने पर तो बमचखे बने रहते हैं लेकिन निराय क्या होना है इसकी समझ का सबूत वे अपनी जिन्दगी में, आज तक पेश कर पाने में फ़ियडडो रह हैं

जितनी जीने की पद्धतियाँ हो सकती हैं, उतनी कहानी कहने की पद्धतियाँ क्या नहीं हो सकती ? और अगर जिन्दगी पेचो और मोडो से आपूर है तब कहानी इनमें अछूनों कायकर रह सकती है ? क्या यह तथ्य स्पष्टि की दरवार रचना है कि कहानी करीब जिन्दगी की अभिव्यक्ति है ? 'करीब' शब्द का स्तेमाल बूमकर इसलिए कि जिन्दगी क्या है इसमें वह भोक्ता भी नहीं बता सकता, जिसने कि उसे जीया है, निमल वर्मा

क' यही 'तीगरा गवाह' म रोनागी मातृव की प्रम पर की गई टिप्पणी से यही पढ़े हुए की समान म गृहलिया हा सवती है ' हम क्या अनुमान हो तगा गया है, बरत माहव ' मरती बा उ सटरी के बरतवा सायन कोई नहीं जान सवता और मुभ मनेट है नि क्या यद गृह भी महा बारण जा पाएगी ? ' निमत की कहाना की गायिका क्या प्रगा साय पटित की दृष्टि सखीर पेग कर सवी है ? और सखीर भी तव पग की जाय, जबकि उन पूरा समझ तिया जाय और वीन तहा जानता कि बरमतीद गवाह होन क थायतून हम पूरे पटित की समूचे तीर पर नहा जा पात मगर यह मच है नि साधी हाा पर भी हम पटता' क पूर दृष्टा नहा होन, तव यह नी मच है नि क्या सत्य का प्रगत बागा स 'उपलभ्य करने क थायतून हम उगके समूच सदितष्ट सत्य की पात का दावा तहा कर सवी गोकि दावा ता कर सवी है लनिन प्रता यह मसत ही साधित होगा हो मरना है न भी हा, सेरिा यह एा वीरनी सम्भावता भर है मम प्रज वम मुभ एगा ही लगता है ।

हम किसी रचना क सत्य का प्राप्त कर पात का पूरा दावा न भी कर सपे लनिन उगक समीप-सत्य की यह पात की ता बाणिग कर ही मकते हैं और तव यह हमारी बाणिग एक एमा रचना हागी जिगम कृति का सत्य सम्भिन होगा इगलिए नि कृति क्या है, एमकी पुनर्कति स्वय कृतिवार भा नही कर सवता लनिन जिन लोगा के यहाँ मत्य इतना सतही होता है कि क उस नगी प्रागा ही देग से जाने हैं तव उनक त्रिए कहानी भी उननी ही सतही और सपाट होनी चाहिए पर चाहिए तो बहुत कुछ वह शक हो कहीं पाता है मसत है नि गुण गता नामून नहा देना करना भाग्यहीन पूे ही लोहूतुहान हा जाता (भाग्यहीन इसलिए नि एव तो या ही गुण न गजा बनाकर उस बिरात्री बाहर किया दूसरा ये कि चीतें मिटान तव की नाधून तव न लिए)

लनिन जिस तरह जिन्दगी पर महज आपका ही इजारा नहीं है, उसी तरह कहानी भी आप ही के लिए नहा होनी आप जम अपनी जिन्दगी के लिए दूसरो की जिन्दगी म शरीक होन हैं वम ही अपनी कहाना पात के त्रिए दूसरो की कहानिया म हिस्सेदार होना पडता है अत्र जब यह तय है कि जिन्दगी म मोड-पेव भी हाते हैं तव यह नी तय है कि क कहानी म भी हाते हैं-हो सक्ते हैं, फगत देगन के इस अतर के साम कि क्या वे कहानी की प्रातरिव रचना सगति क प्रनिवाय नताजे हैं ? क्या के स्नाथु मन्त्र के आवश्यक सस्वार हैं ? आया कि उहे कहन के लिए उदा भर लिया है और पगा बरकरार रखने म वे क तजवाजे ही हैं इसलिए भी राजेद्र यादव के लेखन की नवार कर नही इन दृष्टि बिन्दुमा स प्रश्नाकुल होकर बूझ ले जाने की जरूरत है फिर नतीजा चाहे जो हो हिन्दा नयी क्या समीक्षा म ऐसे समीक्षका की तानाद काफी है (गो कि उन सब की गुमार करत हुए भी क्या-समीक्षका की तानाद

काफी कम ही है स्यात इसलिए भी कि कविता की बनिस्वत कथा-समीक्षा जोखिम का काम है) जिनके यहाँ हर लेखक के बारे में नतीजे तय हैं, फिर उनकी कहानियाँ चाह जो और जसी हो उस उद्गू शायर ने प्रेमिका का खत आने से पहले ही जवाब में खत लिख छोड़ा था, लेकिन कम प्रज्ञ-कम उमे यह तो मालूम था कि प्रेमिका की प्रतिक्रिया क्या होगी ? नयी कथा का तथा-कथित समीक्षक दम धारे में उस उद्गू शायर से भी नहीं उपादा तजुर्बेकार निकला उनके लिए कहानी का मत्व कुछ भी हो उनके यहाँ जवाब बना बनाया हाजिर है

सपाट जिन्दगी के लोभी सपाट लोग चाहे जिस लेखक के लेखन को उलभा हुआ करार दे सकन हैं क्याकि इसमें उहे अतिरिक्त कुछ करना नहीं पडता जो लेखन आपको उलभा हुआ लग रहा है क्या खबर कि वह आपको उलभी हुई समीक्षा-शुद्धि का ही नतीजा हो ? या फिर उसके तनुप्रो को मुलकाकर कह पाने की सामर्थ्य के अभाव में आप आत्म रक्षा वश ही उमे उलभा हुआ घोषित कर रहे हा (या कि वजहे कुछ और भी हो सकती हैं कितने नहीं जानते कि दूसरा को भ्रम दिवाने के लिए भागता हुआ चोर भीड़ के साथ खुद भी पकडो-पकडो की घावाजें फेंकता चलता है

जिन समीक्षका को गजेद्र यादव का लेखन उलभा हुआ लगता है उनके लिए जरूरी है कि आपने राय कायम करने से पहले एक बार फिर अपने वक्तव्य पर विचार करलें और इसके लिए उहे सतह से और सपाटे से नहीं बल्कि गहरे उतर कर राजेद्र यादव के लेखन को जोहना होगा किसी लेखक का लेखन उलभा हुआ है, महज इतना भर कह देने से, बिना समीक्षा तक की सही बुनियाद दिए हुए, क्या समीक्षा शुद्धि का मौजू उदाहरण वह हो सकेगा ? उलभाव, जिसकी वजह से आपको तबियत शिकायताना हो रही है क्या उनके विश्लेषण की जरूरत नहीं है ? और तब क्या खबर कि उसे विश्लेषित करते हुए आप पाएँ कि वस्तु की खास बनावट की वजह से यह उलभाव-जो वस्तुत उलभाव नहीं उलभाव का प्राभास मात्र है—महसूस होता है और कि वस्तु गिल्प की सश्लिष्ट अभिव्यक्ति के लिए जिसका होना नितान्त जरूरी था और यह सम्भव था कि इसके अभाव में रचना सतही और माधारण होकर रह जाती यह प्रलय ही बात है कि किसी किसी लेखक का स्वभाव ही हो जाता है—जीवनानुभवों का सश्लिष्टता और समग्रता में टोहने की वजह से—कि अपनी कथा के तई ऐसी स्वभाव वाली वस्तु पुने जिसकी सही प्रकृति और 'पाठ-प्रक्रिया की जानकारी के अभाव में आपको कथा के सत्य तक जाने में उलभन महसूस हो लेकिन अपनी इस उलभन क चलते सश्लिष्ट-श्रुतिया का कथा-समीक्षा के रोजनामचे में स खारिज कर देना क्या जायज हागा ? खुद की कमजोरी के चलते किसी को सामर्थ्यहीन ठहराना एक बात है लेकिन मक्षम होने हुए किसी (कृति) की कमजोरी का अहसास कराना बिल्कुल अलग बात है जरूरत इस बात की है कि युग बोध के समूचे सभों में कहानी के मत्व को

बारीक निगाह से उसकी सदिनष्टता में पाया जाय लेकिन बकील बंद की कहानी के इस जुमले के कि निगाह की बारीकी हर किसी के बस की बात नहीं यह काम मुश्किल जरूर है बाबजूद इसके गर मित्रा को कहानी में चक्करदार गिल्प और कथागत मोड़ माफिक नहीं आते तब उन्हें कानों में बगना हार की जीत 'ममता मुजान भगत आदि या इही नमूना के जसी और और शाकाहारी, चरित्र निर्माण और राष्ट्रीय चेतना से 'आतप्रोत सेहतमद कहानियों का पाठक होना चाहिए और इनसे भी कहीं ज्यादा और नीति उपदेश देने पिलाने वाली कहानिया की दरकार हो, तब नानी दादो की कहानिया से लेकर जातक कथाओं तक में खासा बड़ा जखोरा उन्हें उपलब्ध है म यह जानता हूँ कि यह परामर्श बजतदार नहीं है क्योंकि इस दुनियाँ में ऐसे कितने ही हैं जिन्हें यह दुनियाँ सख्त नापसन्द है फिर भी इसी में रह रहे हैं खूब खा-पी रहे हैं और बाबजूद सारे चना के दुनिया के बारे में अपनी नापसंदगी उसी रूप तार से जाहिर भी कर रहे हैं, हम यह भी जानते हैं कि दुनियाँ के बारे में अपनी नापसंदगी के आखिर तक जाहिर करते रहेंगे और चाहे जवाब उनसे न भी पूछा गया हो वे अपनी शिकायताना साचारी में उत्तर जरूर देंगे और अगर उत्तर नहीं देंगे तो यह दिखाएँगे गोमा सवाल का जवाब तो उनके पास है, बस कुछ यूँ ही सा है कि मन उदास हो गया है

राजेंद्र यादव का लेखन उलभा हुआ है यह शिकायत कुछ मित्रा के यहाँ से जिस अंदा से आई और उसकी तस्वीक कुछ समीक्षक मित्रों द्वारा जिस फुर्ती से की गई उसे देखकर यही अहसास हुआ गोया राजेंद्र यादव के लेखन की समीक्षा का सवाल कथा साहित्य पर विचार के दौरान का सवाल नहीं है, बल्कि वह तो लोकसभा में माननीय विरोधी सदस्य द्वारा पारित किया गया कोई प्रस्ताव है, जिस पर दूसरे माननीय विरोधी विधायकों ने महज इमीलिए समयन दिया है कि इससे विरोधी दल की ताकत बढ़ेगी अब प्रश्न क्या है इससे उन्हें क्या सरोकार ? इस समय तो उनका फज फकत इतना है कि इस प्रस्ताव पर समयन देकर वे 'जी जान से विरोधिया का मनोमल ऊँचा करें सीमाध्य से (उनके लिए दुर्भाग्य से भी) साहित्य राजनीति नहीं है गो कुछ मित्रों ने अपने असफल राजनीतिक जीवन की सफ़्त साहित्यिक जीवन में बदलने की हरबंद कोशिश की है और उही अजारा से उहाँन यहाँ भी काम लिया है जिनकी बजह से वे राजनीति में असफल रहे थे और जिनकी बजह से वे यहाँ भी असफल हुए क्योंकि अगर साहित्य में राजनीतिक 'फामूले सफल हुए होने तो तमाम राजनीतिक मता उही के चलते आज सफ़्त साहित्यिक भी हुए हान

यादव के लेखन में उनभाव की शिकायत करने वान समीक्षक मित्रा न तद् जनित चक्करदार गिल्प और नाटकीय मोला—सतह से दगने पर ये चीजें बहुत जल्दी एब महसूस होन लगती हैं—तो तो देय दिया लेकिन रचना में सदिनष्ट जीवन सत्य

को गह पाने का रचना प्रक्रिया-गत अन्त समय में जूमने हुए हर वार नए हाते रहने की गति और हर वार सतग उठाकर वस्तु गिन्य की हटा को तोड़ने वाले प्रयत्न की धार नहीं देखी जिनका सवूत अनेक कहानियाँ—प्रतीक्षा एक बमजोर लडकी की कहानी विरादरो बाहर, टूटना किनारे में किनारे तक—उनके यहाँ हो रही है इन जोबन्त प्रयत्न के मुनाबले उस कथा लेखन को एक दना वहाँ तक समीक्षा दायरे की चीज होगी जिसमें लेखक ने जो और जिस तरह गुरु में लिखा था, उसका उसी तरह अभ्यास करते हुए आज तक दुहरा रहा है यात्रा की कहानियों में वही उलभाव नहीं है जो उलभाव भी पदा होता है, लेकिन तब जब समीक्षक अपनी उलभन में सत्रस्त हुआ गलत स्तर पर कहानी को पकड़ कर कथा की गलत समीक्षा पहचान देना है।

कहानी में रचना प्रक्रिया के गुरु सिरे की पहचान कहानी की सही पहचान से जुड़ी हुई है इसलिए मित्रों का यह दावा कि वे कहानी को कही से भी गुरु करके उसका सत्य उपबन्ध कर सकने हैं मासूमियत भरा दावा ही है कथा सत्य को पाने के लिए जरूरी है कि रचना प्रक्रिया के गुरु सिरे को पहचाना जाय और तब पाठ प्रक्रिया के माध्यम से रचना की ओह में सीढ़ी-र-सीढ़ी उतरते हुए उनके खे रेसो की पहचान से गुजरते बलिए वही भी आपकी खना नहीं पड़ेगा और आप तब तक नहीं ठहरने जब तक कि कथा स्वयं आपकी ठहरने के लिए हिदायत नहीं करती, रचना-प्रक्रिया अपने सास अथ में दरअस्त पाठ प्रक्रिया ही है जो लेखक और पाठक के प्रक्रियागत दायित्व का स्पष्ट करती है लेखक इन रास्ते अपने सजनात्मक क्षणा में गुजर चुका होता है और पाठक उसके सत्य को टोह लेता हुआ लखक के घाद उसके रास्त गुजरता है एक लिखते समय की लेखकीय यात्रा का अर्थ देती है दूसरी पढ़ने समय पाठक की पठन विधि की साक्षी है एक इतना ही है कि लेखक लिखकर रचना से गुजरता है और पाठक पढ़कर पाठ की प्रकृति को समझने के लिए कथा से किस तरह गुजरा जाय इस अर्थ में लेखक की रचना प्रक्रिया ही पाठक की मदद करती है और वही एक मात्र मदद भी है इसलिए एक सदभ में जो कहानी की रचना प्रक्रिया है दूसरे सदभ में वही पाठ की प्रक्रिया भी है

वाबजूद इसके यह कहने की गु जाइस रसनी ही होगी कि पाठक की कथा पाठ की प्रक्रिया वही नहीं हागी जा लेखक की कथा 'सृजन की प्रक्रिया है जो कि पाठ प्रक्रिया के माध्यम से वह उसका समीपतम जानकार हो सकेगा लेकिन सृजन प्रक्रिया के क्षणा में रचना के लिए लेखक जिस दुद्ध प तनाव से गुजरा है, पाठक को उससे—उतना वास्ता नहीं मतलब लेखक जिस तरह भेलेता है—जीवन में भेलेना और उसे फिर दोबारा कहानी लिखते समय रचनात्मक—तनाव और आवेग में भेलेना—पाठक को उसा तरह उतना नहीं भेलेता होता लखक सृजन प्रक्रिया में बोध देना स बने जिस जाल पर कथा के नियम कादना में सँभलकर गुजरा है और हर गाँठ

को और अधिक मजबूत करता चला गया है नौको पर नगी उँगलिया रख कर उसके पनपन को बिना किसी कवच के महसूस करता गया है और उसकी बोध को अनुभव की समूची सिकुडन और विस्तार में भेदना हुआ कथा के अन्त के समीप और अन्त तक पहुँचा है पाठक का इस साँसत में उतना वास्ता नहीं मतलब सृजन प्रक्रिया और पाठ प्रक्रिया में भेदने और देखने का अन्तर है, 'सृजन प्रक्रिया भोक्ता का सत्य है और 'पाठ-प्रक्रिया द्रष्टा का गोवि' 'पाठ-प्रक्रिया के माध्यम से कथा सत्य को उपलब्ध करने में कथा से गुजरना होता है और कथा से गुजरना लेखक का अनुभव को गुजरते हुए भेदना भी होता है इसलिए कथा से गुजरना पाठक का नितांत द्रष्टा होकर ही गुजरना नहीं होता, वह भाक्ता के त्रास का भी प्रतिनिधि होना है लेकिन उसी अन्तर के साथ जो लेखक और पाठक का अभिधा में अन्तर है बावजूद इसके कि कथा-पाठ के दौरान कथा के अनुभव को वह अपना अनुभव बनाकर यांत्रित होता है रचना प्रक्रिया में और 'पाठ प्रक्रिया' में गुणात्मक भेद वहाँ बना रहता है।

कथा की पाठ प्रक्रिया की बात, दरअसल पाठक के दायित्व की बात से ही जुड़ी हुई है इसलिए जब लीविस अपने अन्वेषणीय लहजे में यह कहते हुए पाए जाते हैं कि पाठक दो तरह के होते हैं एक तरह के ज्यादा दूसरी तरह के कम, तब यह बात प्रकारान्तर से 'पाठ-प्रक्रिया' का ही मतलब पेश करती है और दूसरी तरह के पाठक से मतलब साहित्यिक पाठक से होता है जो रचना की 'पाठ प्रकृति' के लिए स्वयं का पूरे तौर पर उत्तरदायी पाता है इसलिए यह सवाल उठ सकता है कि क्या पाठक का दायित्व रचनाकार के दायित्व जितना ही बड़ा और महत्वपूर्ण नहीं है? चाहे वह रचनात्मक कम न भी हो लेकिन उसकी जवाबदेही रचनाकार के दायित्व जितनी ही महत्वपूर्ण है, इसलिए लीविस जो कम तात्वाद वाले पाठकों की बात कहते हैं उसकी वजह यह कि जिल्गी में ऐसे लोगों की संख्या ज्यादा नहीं होती जो खतरो से गुजरते हुए अपने दायित्व का सही निर्वाह कर पाएँ और इनमें से भी कथा पाठ में ऐसे बितन हंगे जो पाठ की प्रकृति को पूरी अहमियत देते हुए, उसकी सही पहचान में अपने दायित्व का निर्वाह कर पाएँगे बावजूद इसके अगर साथ गम में मुश्किल है और उनके साथ दूसरे भी कि 'पाठक' तो बहुत हैं लेकिन पत्रिक नहीं तब उनके गम में कथोत्तर सारीक हुआ जाय? और क्या 'परीक' होना खुद को गन्त जुनूस का अंग बनाना न होगा?

दरअसल कहानी की पाठ-प्रकृति को समझने के लिए (और कहानी को भी) पाठ प्रक्रिया से गुजरना केन के गम में छिन्नक उतारना जाता है, इस अन्तर के साथ भी कि वहाँ अन्त तक छिन्नके उतारना जान की यात्रा ही गन्तव्य भा बनती है, हाथ कुछ नहीं लगता लेकिन यहाँ हम स्तर-स्तर कहानी के माध्यम से कहानी के लिए ही अर्थ समूह होना चयन है और उन ही कहानी गम के कराव भी होने चयन है।

हिंदी में डेढ़ेक दशक पहले तक जिस दुर्भाग्य से कहानी (और कहानी समीक्षा भी) को गुजरना पड़ा है, उसी दुर्भाग्य से हिन्दी कहानी लेखिका को भी गुजरना पड़ा है बल्कि कहानी लेखिका का दुर्भाग्य हिंदी कहानी से वही बढकर ही रहा है और आज भी वे इस दुर्भाग्य को वर्दाश्त कर ही रही हैं इसी दुर्भाग्य के चलते हिंदी में आज तक भी पहल दम्ने भगुमार की जा सकने योग्य कथा लेखिकाएँ नहीं हुईं जबकि विदशा में स्थिति गिल्डुन बदली हुई है गोवि सुधार हिंदी में भी हुआ है, लेकिन वह महज सुधार ही है समूचा परिवर्तन नहीं

जिस तरह अब से पहले कहानी मनोरंजन के लिए पढ़ी जाती थी—या आज भी खासी बड़ी संख्या उससे यही अर्थ ग्रहण करती है—और साहित्य के रूप के तौर पर समीक्षित होती थी उसी तरह कथा लेखिका के यहाँ लिखो तो वह पूरे कृतिकार के दायित्व आस्था और हैसियत में जाती है लेकिन जब उसकी समीक्षा की जाती है तब वह समीक्षक की नजरों में सामान्य तौर पर कृतिकार की कृति न होकर लेखिका की 'कहानी' होती है भारतीय पुण्य प्रधान समाज में सस्कारवश समीक्षक की निगाह लेखिका की कहानी को जिस कारण से छूनी है समीक्षका को लगता है कि वह कहानी को नहीं, बल्कि खुद लेखिका को छू रहा है जिसका मतलब होता है कि लेखिका के व्यक्तिगत रहस्य और अन्तरंग क्षणों के बारे में वह दिलचस्पी ले रहा है और इसी के चलते या तो वह लेखिकाओं को प्रशस्तियों को सन्दर्भ भेंट करता है या फिर उनके खिलाफ मुकदमा दायर करने से पहले ही कुर्की ल आता है साहित्य समीक्षा में यह कितनी भयावह स्थिति है इसका अंदाज लगा पाना कुछ मुश्किल नहीं है जाहिर है पुरुष समीक्षकों ने (और स्त्री समीक्षक हिंदी में या भी कम ही थी और सस्कारवश उनकी भी हालत मोहे ने नारि-नारि के रूपा जसी थी) लेखिकाओं की कृतियों को निस्संग होकर कृतियों के तौर पर ही नहीं देख पाया है लेखकों की कृतियों का समीक्षित करते हुए समीक्षक जहाँ नीति अनीति और सामाजिक ढाँचे को साहित्येतर मानकर सिर्फ कृति के तौर पर उनका जायजा लेता है, और लेखक के व्यक्तिगत जीवन को उनमें खोजने की बाँधा को अभिप्रेत नहीं बनाता यानी लेखक के व्यक्तिगत जीवन से निरपेक्ष रहते हुए उसकी कृति के सत्य को उपन्यास करता है उसी तरह वह लेखिकाओं की कृतियों का सहज होकर नहीं ले पाता और लेखिका की जमानत में तो लेखिकाओं को और भी नहीं अनायास ही वह उन्हें नतिकता और समाज के चालू दायरों में रख कर सोचने लगता है गोया स्त्री के लिए पुरुष की दृष्टि से समाज के होने का एक अलग अर्थ है फिर यह तो रहा ही कि समाज के व्यतीत और सम्भार जन्य सन्नाह में लेखिकाओं को रचना स्तर पर एक अरम तब ईमानदारी भी नहीं बरतते दो

मिथुने जिना कृष्णा मात्राती की लम्बी कहानियाँ मिथो मरजाती व 'यारा के यार पर जो समीक्षका और पाठका की प्रतिक्रियाएँ हुईं उनमें ऊपर बड़े हुए की ही

पुष्टि होती है, गोवि मित्रो मरजाती म जो सामी—कहानी के अन्त पर मा उल्लेख
 माना भावना हावी हो जाता है, बिना अपनी समिति की माना का सचुन लिए हुए—या,
 यह यारो के यार म रहा है लेकिन मित्रा को प्रतिक्रियाएँ इन कहानिया के परिवेश
 जनित यथार्थ को खपर नहीं था भाषा प्रयोग को खपर दनाल और अन्तोल के
 माउण्डा की सातिर थी, सासवर इसलिए नि गारो हाने हुए सोवती जी ने ऐग भाषा
 प्रयोग कर डाल, जिहे प्रयोग करन म पुरप लेगव तव हिवरते हैं तत्रिन मे प्रतिक्रियाएँ
 इन कहानिया की भाषा पर बिना इस बात की परीक्षा किए हुए की गई कि इस
 तरह के 'भाषा प्रयोग इन कहानिया के यथाप को गहरा कर त्रिव करने म जायज है
 और वृत्ति के कलात्मक विद्वान का अंग है या नि उनको गिला म पून उभारन के
 लिए सजायट के तौर पर तो कम अज्ञ-अम स्तेमान नहा ही किया गया है ? मित्रा न
 'यारो के यार के जिन स्थला पर आपत्तियाँ का है वे 'यूमन प्राँव रोम म चित्रित
 किही स्थला से कुछ अधिक हैं ? और क्या भारतवर्ष म भी इन सास सदभों म रोम
 निवासियो जसा अंग नहा रह रहा है ? व्यापारी, सारकारी आहदमन्द अफमरा और
 नताप्रा के बीच 'व्यापार क्या ब्ल्यू फिल्मज जैसे नजारे पैग नहीं कर रहा है 'गजर
 के चोरगी के अन्क स्थल इस तथ्य की गवाही म पेश किए जा सकते हैं लेकिन ये या
 इनमे मिलती-जुलती आपत्तियाँ अदर के यहाँ 'मरना और मरना (जो कहानी के नाम
 पर सिफ अच्चा मान है और वह विधर से कहानी है इसे परीलोक का राजमुमार ही
 जान पाएगा लेकिन वह भी कहानी को जानना चाहेगा, इसे क्या ? इसलिए कि यह
 अपन मुहावरे और सस्थितिया म 'आजाद लोव और 'फुट-पाथ पर चोरी छिपे बिकने
 वाले अनाडी हाथा की सस्ती और गई गुजरी चीज है) अंगवती बाबू के यहाँ रेखा
 (जिसका सारा नाम आम अद सस्त उपयास लेखन के नुस्खा पर ठहरा हुआ है और
 जिसमे उपयास म बन्द करके सक्स बेचा गया है सक्स' स उत्पन्न समस्याओं का सकेत
 और लेखकीय निदान नहीं ताकि चाटखोरो को 'टानिक मिल सके) महेंद्र भला के यहाँ
 एक पति के नोटस (जो अपनी सारी ऊब, अज्ञान और एकरसता की कलात्मक अभि
 व्यक्ति के बावजूद एक नुस्खेनुमा अन्त पर ठहरकर अन्त होती है) और रघुवीर सहाय के
 यहाँ तीन मिनट में (जो किसी न किसी माइने में तो नाटक घर से सम्बन्धित है ही,
 खुद भी रग सज्जा के साथ नाटक का मतलब देती है, लेकिन इससे ज्यादा नाटक अक्ष
 म है, उनके नाटकों में चाह मुहागरातें हम न भी तलाशें लेकिन उनकी कथावृत्तिया की
 हर मुहागर रात म एक नाटक जहर होता है) समीक्षा ने नहा उठाई हैं गोकि मेरा
 मतलब यह कतई नहीं है कि इस तरह का आपत्तिया का उठाना इन लेखका के यहाँ
 साहित्यिक दृष्टि स जायज है मेरा मतलब तो सिफ इतना है कि वृत्ति की लेखक या
 लेखिका की सृष्टि मानकर उस पर अलग अलग मानकों से सोचना वृत्ति को वृत्ति के
 तौर पर तो लेना है ही नहीं वह समीक्षा विचार का अक्षत उपाहरण भी नहीं है

लेखिकाया की कथाकृतियों को समूचे कथा प्रयत्न में रखकर विचार की तटस्थ पहल हुई तो है लेकिन वह भी निश्चयी सी ? पर जो हो सका है वह यह कि लेखिकाया ने इससे लिए जायज और समथ भूमिका जट्टर पेग की है मननय लेखिकाया के सृजन में प्रामाणिक जीवनानुभवों की अनुभूति और अनुभवों के अलग अलग स्तरों का वैविध्य उन्हें अप्रिमि दस्तों के कथाकारों से जोड़ता है सस्थिनियों और विचार विन्दुओं को बदले हुए कोणों से छूने में उन्होंने न सिर्फ परहेजों को तोड़कर और कथा कहने के चालू मुहावरे का अतिरमण कर अपनी प्रबुद्धता की मिसाल कायम की है, बल्कि कथागत उपलब्धियों में इन्होंने अपनी कथात्मक क्षमता का भी अहमाम कराया है कृष्णा सोबती तिन पहाड़ और वादलों के घेरे का भावुर और भोगा हुआ दायरा तोड़कर अपने कथाकार को 'मित्रो मरजाती और यारा के यार तक ले आती हैं तो मुझ जमे समीक्षक को मुत्तद अममजस में समो दिया जाता है और उनके कथा प्रयत्न पर कुछ धरऊ वाक्य कहने की हौंस हो आती है मन्नू भडारी अपने सहज शिल्प और नारी-पुरुष के द्वन्द्व सम्बन्धों को कह पाने में जिस कथा क्षमता का गहरा अहमाम कराती हैं उन्हीं 'तीसरा आदमी, 'यही सच है' ऊँचाई आदि में दूना जा सकता है लेकिन उनके यहाँ कथा प्रसंग में जीवनानुभवों के वैविध्य का अभाव, किसी स्तर पर उनके वास्तव को 'स्टील कर रहा है और वहाँ सब कही नकली हीरा का अहसास होना लगा है, महसूस होना है कि उनकी कहानियाँ में इपर कही हुई बात को ही कह पाने की विवगना लक्षित है जिस तरह रचनाकार हर वृत्ति में धुद को अतिरमण करने की नियति से जुड़ा हुआ है महसूस होता है यह नियति मन्नू भडारी के यहाँ टूट रही है और न सिर्फ मन्नू भडारी ही बल्कि कुछ औरों के यहाँ भी उपा प्रियम्बदा ने जिदगी में गुलाब के फूलों की फूल बोने की जो बाँझा की थी उसे देखकर यह जोड़ बठाना मुश्किल हो गया था कि जिदगी और गुलाब के फूल में गुलाब के फूलों की संख्या ज्यादा है या 'छोट छोटे ताज महल में 'ताज महल की धहरदान प्रतीक के तौर पर फूलों को स्तेमाल करने का मोह उनमें अभी भी है उपा प्रियम्बदा ने देशी विदेशी परिवेश में मानवीय रिस्ते-खास कर स्त्री पुरुष के सम्बन्धों को हिन्दी कहानी में प्रस्तुत किया है, व (रिस्ते) चाहे हिन्दी कहानी के लिए मौलिक चीज न भी हो लेकिन उनका अदायगी में शिष्टता भाव को विचार जसी गरिमा, भावुकता की जगह बौद्धिक अनुशासन और सब कहीं एक शिथिल सतुनित दृष्टि वहाँ है, उपा ने वृत्तिकार की ईमानदारी के साथ जीवनानुभव की प्रामाणिकता को कथा में उतारते हुए 'वर्जित सत्या, को भी जिम साहम लेकिन सहजता के साथ प्रस्तुत किया है, उसका सबूत 'चाँदनी में बर्फ पर, मछलियाँ, 'विधलती हुई बर्फ 'सागर पार का सगोत जसी कहानियाँ में तो है ही उनके सद्य प्रकाशित उपन्यास स्वामी नहीं राधिका में भी है, वे बिना किसी दावपेच के (कभी कभी पदस बक की मदद से) कहानी को बड़ी अतोनी सचाई से सामने रख

देनी है, काम बनना जगा कुछ नहीं है विवेकपूर्ण व्यवहार के साथ गहरी करुणा से मानवीय निर्यात को वे रेखांकित करती चमती हैं उनके यहाँ एक बात जरूर है कि हर बेहरा गोया सहने और धकेल पट जान का स्थिति में दयनीय हो उठता है और वहीं व बावजूत अपने सजग बोध के उन्हें गह देनी हुई लगती हैं उपा प्रियम्बदा व यहाँ खास बात यह है कि कथा की प्रचलित मामिया व जानी हुई ममजोरियो में अपनी कथाकृतियों को कथाकार की भावुकता को विवेक से जाह्न हूए उबार ल जानी हैं उपाहरण के लिए एक कोई दूसरा और भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'रेखा की बस्तु मोट तौर पर एक जती है भगवती बाबू सखीयम भावुकता यानो कुछ प्रोप वासिध गुस्ता के धम्माम-वग इस उपन्यास को स्तरहीनता तक पहुँचा देते हैं और वह अपनी समूची सृष्टि में बनाया हुआ हो जाता है लकिन उपा प्रियम्बदा इहाँ सामिया की मदती हुई उन नए सदर्भ में प्रतिष्ठित करती हैं जहाँ कहानी का घन एक मानवीय रिश्ते की नयी गुरुमात करता है गो भीगापन इस कहानी में भी है, लकिन समझकर उसका उपयोग किया गया है समझकर मतलब वह आरोपित नहीं है, उसमें रचना के लिए उत्तरदायित्व का सही निर्वाह है ममता कानिया (अग्रवाल) व यहाँ स्त्री-पुरुष के रिश्ता को जिस नए कोण और बेनाग अभिव्यक्ति में प्रस्तुत किया जा रहा है उनसे कहानी लेखिकाओं के रचनाकार की दायित्व गत ईमानदारी पर भास्था जमती है स्त्री की लवर आरोपित सामाजिक ढाँचे को ताड़कर इस नयी लेखिका ने समीक्षण का ध्यान आवर्धित किया है जिसमें सिफ बेभिक्रम कथार्थ को प्रस्तुत कर देन को ही विशेषता नहीं है, बल्कि विगपता है उसे जिन्दगी की राह होकर पेश करन के विश्वास को अर्जित करन को

नारी की बदली हुई नयी सामाजिकता और पुरुष का सत्य, कथा लेखिकाओं ने इन दोनों को ही प्रस्तुत करन में आधुनिक कोण से काम लिया है स्त्री पुरुष के बदल हुए सम्बन्ध (अनिरणय पत्नी—ममता कानिया) और बदले हुए परिवेश में स्त्री का बदली हुई हैसियत (कौनसा पथ—गाता सिन्हा) और उनसे जन्मे नए प्रश्नों (जिन्दगी और गुलाब के फूल—उपा प्रियम्बदा) को लेखिकाओं के यहाँ सिफ रचनाकार का ही हैसियत से जाहने का प्रयत्न है निश्चय ही इसर कथाकार पुरुषों में भी यह कोण बिकसित हुआ है क्योंकि स्त्री या पुरुष होने की वजह से जब-जब स्त्री या पुरुष के सत्य को अतिरिक्त संवेदनशील होकर रचना स्तर पर जोड़ा जायगा तब तब उसमें एकगो हान को अधिक गुजाइंग होगी और उतना ही रचना घन के निर्वाह में वह छोड़ा पड़ेगा

रचनाधर्मी नतिकता के निर्वाह की भरपूर कोशिश के बावजूद मूलतः हिन्दी नयी कहानी लेखिकाओं की एक बद्धमूल धारणा में अभी तक पूरा बदलाव नहीं आया है (जो आधुनिक कथा लेखन के लिए निरान्त अनिवार्य है) कि स्त्री सत्त और

सामाजिक ढाँचे में विद्रोह करने और अपने अस्तित्व की स्वतंत्र स्थिति प्रमाणित करने के बावजूद 'समर्पिता' की 'मुद्रा' से नहीं उबर पाई है। सारे आधुनिक आयोजन और पूरी-पूरी बौद्धिक श्रुतियों के होते हुए भी, वह आज भी ममपण परायण भारतीय नारी की परम्परा को अपने रक्त में ढोए जा रही है। गोया स्त्री को सिर्फ पुरुष ही 'पाता है, पुरुष को स्त्री नहीं पाती' यानी इन लेखिकाओं में स्त्री सत्य की रचनाकार की दृष्टि से उतना नहीं देखा जा रहा है जितना कि पुरुष की दृष्टि से या फिर बहुत कम नारी की दृष्टि से और उधर पुरुष क्याकार हैं कि पुरुष के नजरिए से ही स्त्री सत्य को आँक रहे हैं और नई कथा लेखिकाएँ अक्सर अपने अस्तित्व के लिए दूर तक क्रान्ति करने के बाद 'स्त्री सत्य' को परीक्षित करने में पुरुष सत्कार से ही आक्रान्त हैं।

इस आक्रान्त स्थिति और बढ़ते-बढ़ते धारणा से मुक्ति की धान तब न उठ जबकि नई कहानी में पति और प्रेमी के होने हुए दूसरे प्रेमी को दारीर देने के बाद (ऊँचाई 'यही सच है'—मन्नु भडारी) स्त्री के अपनी नतिकता में किसी तरह का 'मिन' न महसूस करने की बात पर ही पूरी बहस हो चुकी हो। लगता है कहानी लेखिकाओं के यहाँ अभी भी यह फारमूला बगैरकण का मतलब रखना है कि स्त्री समर्पित होकर ही पुरुष पर अधिकार पा सकती है और उधर पुरुष है कि स्त्री पर हावी होकर और अधिक निद्र 'द' होता जा रहा है। जबकि 'नई कहानी' के लिए मसला एन-दूगरे पर अधिकार पाने या हावी होने का उनका नहीं है जितना कि इस सवाल के उत्तर का कि बदले हुए परिवेश और नयी सामाजिकता में स्त्री-पुरुष अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व अलग अलग इकाइयों में किस तरह प्रमाणित कर रहे हैं। नाते रिश्ता से उठकर उनकी अपनी और सिर्फ अपनी जीन की अनिवाय शक्त क्या है? प्रजा-सत्ता (रेणु) और विवर (समरंश वसु) में इस बोग से प्रयत्न देखे जा सकते हैं।

स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों का लेकर पहली किश्त नई कहानी में जो दी गई है वह सबसे की है। पुरानी-कहानी में स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों पर बहस के दौरान निक सबसे को बचा दिया जाता था और आरामित-नतिकता और पवित्रता की छाया में प्रेम की चर्चा बड़े ही आध्यात्मिक लहजे में की जाती थी जो यथाय से उखड़कर 'प्लेटॉनिक' और एकदम हवाई होकर रह जाती थी। भावुकता और भीगी करणों के साथ हल्के उल्लुक्ता बाने रहस्य के रंग में डुबा कर उसे इन्द्रधनुषी बना दिया जाता था। किस्सागोई के फ्रेम पर चढ़ाकर नाटकीयता की विनारी के धेरे में आसुआ और आहा की उसने फुफकारी (आकाशदीप -जयशंकर प्रसाद) की जाती रहती थी और इस इन्द्रजाल में समाकर कहानी एक खूबसूरत कालीन होकर रह जानी थी। कालीन भी ऐसी जो चाँद-मितारी और आकाश गंगा का ससारा खुद में समेन्ती है और आदमियों की दुनियाँ से उतनी ही दूर हो जाती है। प्रेमिकाएँ तो वहाँ अक्सर मानाआ जसा व्यवहार करती रहती हैं। या फिर दासी के दर्जे से ऊपर नहीं उठ पाती।

जहर कि यहांगी म यह अमेरिकन रंग 'नई कहानी को कही गलत रास्ता पर न छोड़ जाय

नई कहानी लेखिकाओं ने कथा-लेखन में रचनाकार के नतिव दायित्व से जुड़-कर केवल उही-उन्ही जीवनानुभवों की अभिव्यक्ति में निजात पाली है जो बीत बक्त में कहानी लेखिकाओं के हिस्से पड़े थे मतलब कहानी में सिर्फ आदर्शों और नैतिकता पर दया-ममता से बहस करना और प्रचलित सामाजिक ढाँचे से आतंकित रहते हुए झेने हुए जीवनानुभवों की अभिव्यक्ति से बतराना एक तो स्त्री की कोणबद्ध सामाजिकता के चरते या ही नए-नए जीवनानुभवों के लिए गुजाइरा कम, फिर कुल बधू का लज्जा डोते हुए उनके प्रति भी ईमानदारी में कोनाई 'नतीजे' के तौर पर जो कथा-लेखन सामने आया, वह आमुआ और आहा से लदा-फेंग रहा, उगमें जीवन की प्रामाणिक अनुभूतियों के बजाय जीवन में पलायन था या फिर काल्पनिक और रोमांटिक रोगिल अनुभूतियों के साए (तिन पहाड़ और बादला के घेरे) में खुद को सीमित कर लेना था निश्चय हा इस समूची मानसिकता से हिंदी कहानी लेखिकाएँ उबरने की कोशिश में हैं जिनका सबूत 'तासरा आदमी चरमे 'मन्नू भंडारी) मछ-लियाँ सागर पार का सगीत (उपा प्रियम्बदा) पत्नी अनिणय (ममता कालिया) आदि कहानियों में उपलब्ध है, लेकिन उपा प्रियम्बदा की कहानियाँ को छोड़कर अनुभव-बविध्य नई कथा-लेखिकाओं की कहानियाँ में कम है गो पिछले खेबे की कथा-लेखिकाओं से बेहद अधिक और चाहे सीमित दायरे में ही सही लेकिन आधुनिक जावन को धारीकी से देख पान की कथा गत कलात्मक दृष्टि इन लेखिकाओं के यहाँ रेखाङ्कित की जा सकती है इसीलिए 'नई कहानी' पर विचार के दौरान नई कथा लेखिकाओं की कथात्मक-क्षमता और समीक्षा गत विडम्बना पर अलग से चर्चा कर लेना जरूरी था और यह जरूरत इसलिए भी बनी हुई थी, कि जिस महीन कथात्मक क्षमता से रोजमर्रा की परिचित जिंदगी में अपरिचित छूटते हुए पारिवारिक द्रव को जीवन की सादय के साथ कथा में इहान प्रस्तुत किया उसका इनकी उपलब्धियों के अभाव में पूरा प्रतिनिधित्व नहीं हो पा रहा था जिसमें कि रचना-प्रक्रिया-गत तटस्थता के साथ आत्मीयता बनाए रखते हुए सहजता का निर्वाह मुख्य बात है

समीक्षात्मक विडम्बना और कथा-गत उपलब्धियों के बावजूद कथा-लेखिकाओं में स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धों को नए आयामों में अभिव्यक्ति देना अभी बाकी है (इस अभिव्यक्ति की दरकार दूसरे कथाकारों के यहाँ भी है) मतलब कि कथा में शरीर गत नतिवता और अपना अस्तित्व प्रमाणित करने के लिए कथा के मुहावरे में, विद्रोह करने के बाद भी वे किसी स्तर पर सस्वारों से पूरी तरह मुक्त नहीं हैं और इसीलिए इस विषय के निर्वाह में पूरा सहज भी नहीं है नतीजा यह होता है कि उनका कथा के मुहावरे में विद्रोह कथा का पहवान बनते-बनते किसी स्तर पर उदत हो

उत्पन्न है घोर तब वहाँ धारोचित युग का सामान्य मितो लगता है जो जीवाणु-
भवा की सारय-प्रभिसक्ति म स्तर पर करता हुआ लगता है घोर की गीतिल घनामा
लिक भी हो। लगता है लेकिन यह नामो मित कहानी सेगितनामा म ही नहीं है
एक बड़ी सामान्य कहानी लगता की भी इगरी गितार है गो इत सगितनापो की घोषणा
बापी बुद्ध बाम

युग के नए मयों को बनाने का मगमार्ग के परिदृश्या म क्रिम घूरा बोप से
गद्य के कम उक्त घोर घोषणा म नई कहानी म सम्प्रणाल मिया है, यह बाहे हैरत
घनेज उतना न हो, जितना यह कि हिम्मी गद्य की उठ मंत्रावत् य तराग वहाँ उलस्य
हुई है घोर यह भी कि रचनागीतता म उसे कविता की समानान्तर हू। म वहीं पाया
जा सकता है उतनी ही मजबूती घोर उतनी ही गपासत के साथ बरीब-बरीब उतन
ही सपेस लिए हुए महान से महीन प्रतिक्रिया को उतनी ही मगी परड से घड़ोरे
हू। मपनी सामर्थ्य हू। म घब तब के मपन पूरे घोषारा से मग हातर यद्यपि यह
जानत हू कि कविता घोर उसके बंद घोर प्रकृति भिन्न-भिन्न है यद्यपि विरोधो न
होकर बल्कि एक-दूसरे के सहयोगी होतर

भाज का नया उपयास (गो तया घाण उपयास के साथ टेड उत माइने म
युग-मनुभव की उस प्रकृति की प्रतीति को रेखाङ्कित नहीं करता जिसे गत एक-डेड
दायक स यह कविता घोर कहानी के सदभं म करता रहा है) युग-सारय घोर उसकी
विडम्बनामा को टिक करते हुए जिस स्तर पर मया हुआ सा लगता है, घोर भादमी
के चहरे की लकीरें उजागर होते होके जहाँ घुँघसान लगती हैं 'नई कहानी वही सिरे
स इन लकीरो की अधिय गहराने हुए बदल हुए भादमी की नियति को रेखाङ्कित करती
है घोर बिना घोषी पडे परिदृश्या म उसे भावार देती हुई, सम्भावनामा तब की उँग-
लियो की सल्ल पकड स फिमलने नहीं देती यद्यपि मेरा इराता भाज के उपयास
की उपलधियो का नजर दाज करना जसा बिल्कुल नहीं है घोर खास तीर पर उसकी
सम्भावनामो को तो घोर भी नहीं (घोर इस लिहाज से कुछ छोड उपयास-मनदेखे
मनजान पुल मत्र विद्ध, बसाखियो वाली इमारत खोगी नहीं राधिका के दिन, दो
एकान (यद्यपि रुमानियत का रग लेकर) समुद्र म खोया हुआ भादमी, एक कटा हुआ
कागज एक कटी हुई जिन्दगी, लोग नीली रोशनी की बाहे उसका बचपन-सामने
भाए भी है लेकिन यह एक बडा सत्य है कि हिन्दी का भाज का उपयास, उस स्तर
तक प्राधुनिक घोर बदलते हुए सत्य के समानान्तर नहीं है, जिस स्तर तब कि कहानी ।
बल्कि ज्यादा सही यह कहना भी होगा कि प्राधुनिक जीवन की याथा के विसयतियों

के जिस मोड़ पर आकर उपन्यास लडखड़ा जाता है कहानी ने वही से अपनी यात्रा नई होकर प्रमाणित करता गुरू की है शायद इसकी एक वजह यह भी हो सकती है कि आधुनिकता हमारे जीवन में अभी प्रवाह नहीं बन पाई है वह महज छोटा म है इसलिए हिन्दी उपन्यास खुद में एक प्रवाह की प्राच्यन्त सृष्टि होने की वजह से आधुनिकता का वायस नहीं हो पाया है और कहानी चूँकि किसी नाक से नोक तक की ही यात्रा हाती है, इसीलिए वह इन छोटा में बिखरी आधुनिकता को समेट पाने में प्रमाण हो रही है।

हिन्दी उपन्यासकार चूँकि अपने सस्कारा में सन् ४७ से पहले और घोड़े बाद का ही सजक है इसलिए उपन्यास में 'आधुनिकता' समग्र सन्निष्ट रूप में उसका बोध नहीं हो पाई है या कि 'कम-अज-कम' उपन्यास में उसने अभी उसका सवृत पेश नहीं किया है और तब अगर 'अधूरे साक्षात्कार' की सत्ता उसे दी जाती है तो इसमें गलत कुछ भी नहीं है लेकिन गलत है इस अर्थ में कि एक असें तक को जिन्दगी के 'पूरे साक्षात्कार' वहाँ हैं लेकिन आज की त्वावो में उघड़ती, ठहरी और विघटित होनी हुई जिन्दगी को वह ठोक 'नई कहानी' की तरह वह पाए ऐसा मुहावरा अभी तक उभ नहा मिला है क्या यह मुहावरा उसे मिलेगा भी नहीं? मैं इस तथ्य से इसलिए इन्कार नहीं करता क्योंकि यह सम्भावनाएँ उपन्यास में साफ तौर पर उभर रही हैं किन्सागोई वहाँ चुक रही है, लेकिन सही जिन्दगी की अभिव्यक्ति के लिए वहाँ अभी सघष की जरूरत है इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता, इसलिए जीवन की साक्षी के साथ मतलब जिन्दगी से गुजरने की गवाही देने हुए आधुनिक मस्तिष्क की पूरी बनावट में समरेश बमु के विवर जये उपन्यास हिन्दी उपन्यास के एक अग्र की जरूरत की ओर साफ-साफ सकेत हो सक्त हैं जिसमें आधुनिक मस्तिष्क की समूची सग-तिया और विसगतिया के बीच सही वास्तव का प्रामाणिक नतीजा हाते हुए व्यक्ति को उसके नाते रिश्तों के बीच सिफ व्यक्ति के तौर पर ही प्रस्तुत किया गया है और जहाँ स्त्री माँ बहिन, पत्नी, प्रेमिका और बेइया के रिश्ता में उबर कर फक्त स्त्री है और जहाँ समाज और परिवार के आरोपित ढाँचे के अतिक्रमण की कोशिश के साथ पुरुष का पुरुष और स्त्री को स्त्री समझने की कोशिश है - यह कोशिश अपनी बोनो बानो वाली मुद्रा के साथ फणोद्वर के यहाँ 'प्रजासत्ता' कहानी में भी है लेकिन इस अन्तर के साथ कि रिश्ता की रुडि का धुँधलका पारदर्शी होन पर भी किसी स्तर पर अभी वहाँ ठहरा हुआ है गो वह जिन्दगी में भी अभी है इसमें इन्कार नहीं किया जा सकता इसलिए फिलहाल इस कहानी को 'अधूरे साक्षात्कार' वाले दर्जे में धकेलने से बचा ही जा सकता है

आम तौर पर 'नई कहानी' के साथ उपन्यास की बात करना जरूरी नहीं समझा जाता इसकी वजह भी रही है देगी स्वतंत्रता के बाद समीक्षा-बुद्धि ने छोटी

कहानी की साधनता युगीन बोध के समानांतर स्वीकार कर एक बड़ी गलती (जो अब तय होती रही थी) को सही कर लिया था लेकिन यही उससे एक और बड़ी गलती हो गई थी (जो आज तक भी हो रही है) कि उपन्यास की रचनागीलता में उसकी लिचस्पी घटने लगी थी और उपन्यास समीक्षा पसठ-छियासठ तक आते आते परीक्षाओं को घोर ग्रन्था और ऐकेडेमिक भाषणों तक ही सीमित रह गई थी व्यवहारतः सद्यः प्रकाशित उपन्यासों की ही पत्रिकाओं में चलताऊ तौर पर समीक्षाएँ की जाती रही और दो-एक पत्रिकाओं में उपन्यास समीक्षा-ग्रन्थ निवाले के छुट-पुट प्रयत्न भी किए, लेकिन कहानी के चलते उपन्यास को तबज्जो देना कम ही रहा हर पत्रिका कहानी के बारे में किसी न किसी स्तर पर बहस मुवाहिसे का केन्द्र होते हुए सृजन आलोचन में उसके लिए लोचन बनती रही और ज्यादातर पत्रिकाएँ सिर्फ कहानी सृजन और आलोचन को ही एकांत पनपाती और विकसित करती रही कथा-गाण्डियों और समारोहों के आयोजन कविता गाण्डियाँ और सम्मेलनों को भी पीछे छोड़ गए इसकी वजह अन्क थी लेकिन इसका जो नतीजा हुआ वह यह कि बड़े पमाने पर हिन्दी की सजक प्रतिभा (सजनात्मक और आलोचनात्मक) कहानी की ओर मुड़ गई और उपन्यास की सृजन स्तर पर यह दशा हुई कि कुछ नए लोगो को छोड़कर ज्यादातर स्वतंत्रता पहले की ही प्रतिष्ठित प्रतिभाएँ मोट-पतले उपन्यास लिखती रही (उहान कहाना लेखन को किसलिए तलाक दिया इसका कारण उनका युग बोध से पिछड़ जाना और मुहावरे में फामूला हो जाना ही था, गो फामूला व उपन्यास लेखन में भी हो गए थे जनद्र आदि कुछ लेखक ऐसे जरूर थे, जो युग के 'समान घर्मा' होने की हौंस में जब तक कहानी लेखन से भी गुजर लेते थे) इन लेखकों के उपन्यास पुस्तकालयों में खरीदे जाते रहे और गोघ-ग्रन्था के लिए या विचार के लिए कुछ न पढन में दिलचस्पी रखन वाला द्वारा पढे जाने रहे इस तरह उपन्यास की रचनागीलता के प्रति उपेक्षा न एक मजबूत गद्य रूप को युग बोध से पिछड़ जाने में मदद की अर्सा पहले प्रगतिवादिया न समीक्षा स्तर पर, जिस दकियानूस तरीके से सतही होकर क्रांति लाने के लिए अोजार के तौर पर उपन्यास का स्तेमाल किया था, उसने भी उपन्यास की समीक्षा में गम्भीर चिन्तन से काटने में मदद दी और वह किसी न किसी माइन में आज भी अपनी भूमिका निभा ही रहा है

इधर कहानी चर्चा में सतुलन आ रहा है और आधुनिक मन मस्तिष्क की उसके प्रामाणिक परिवेग के साथ कुछ नए बोध के लेखक उपन्यास में प्रतीति बनाने की कोशिस में हैं इसलिए जरूरी हो गया है कि समीक्षा में उपन्यास के माध्यम से युग सत्य को विदलेपित और उपलब्ध किए जाने की कोशिस हो लेकिन एकांत उपन्यास की समीक्षा को रेखाङ्कित करन का सक्ल्प हो सकता है छोटी कहानी के अस्तित्व की रानी विडम्बित स्थिति में केंद्र दे हालांकि इसकी सम्भावना कहानी ने पूरे तौर पर

अपने परो खंडो होकर लगभग ममाप्त ही कर दी है फिर भी समीक्षा विवेक में साहित्य के दूसरे-दूसरे रूपों के लिए अनुपात का मांग किसी भी युग की अपनी मांग होनी है

कहानी के साथ उपन्यास की चर्चा इसलिए तो जरूरी है ही कि उपन्यास की सृजन क्षमता के प्रति समीक्षा विश्वास उसे युग बोध के समाप्तान्तर उद्घाटित करने में मदद कर सक और उसे युग बोध की प्रामाणिक प्रतीति देने के लिए ज्वला सके, वह जरूरी इसलिए भी है ताकि कहानी की चर्चा को सीमित दायरे से निकाल कर कथा के बृहद परिप्रेक्ष्य में जोड़ा जा सके, मतलब कहानी को सिर्फ कहानी के सदर्भ में ही न विचार कर उसकी समूचे कथा-साहित्य के सदर्भ में रखकर पहचान की जाय यह उपन्यास विचार इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि किसी एक कहानी को लेकर उसके नुक्तों पर बात बहस करना और इस बहस में अपनी बातों के नुक्तों साफ करते रहना किसी बदर मुफीद तो हो सकता है लेकिन इनो वजह से उपन्यास की रचना-क्षमता पर चुप्पी साध लेना किसी स्तर पर अपनी समीक्षा शक्ति को छिपाना भी तो होता है ? इस दायरे में समीक्षा शक्ति इसलिए कि उपन्यास के आंतरिक रचाव को प्रकट करने के लिए जिस स्तरीय समीक्षात्मक बुद्धि अनुशासन और बिलंबे हुए सदर्भों को समग्रता में वृक्ष पान के लिए जिस गाढी कथा पहचान की जरूरत होती है वह अलग अलग कहानियों के नुक्तों पर समीक्षात्मक नुक्तों बठान जाने में नहीं होती पिछले दिनों एक एक कहानी को लेकर समीक्षा करने की जो चाल चली गई थी (इशारा चाल चलना मुहावरे की तरफ बतई नहीं है) वह अपने दायरे में काम-याव होने के बावजूद इम कोण से दखने पर बहुत आक्षेप नहीं लगेगी एक एक कहानी पर लिखी गई समीक्षा दृष्टि भिन्न हीन के बावजूद कक्षाओं में कराए जाने वाली समीक्षा विधि से प्रकृत्या कुछ खास भिन्न नहीं है इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि 'नई कहानी की पहचान उपन्यास से युक्त समूचे कथा प्रयत्ना व कथा उपलब्धिया के सदर्भ में होनी चाहिए, ताकि गद्य को पूरी प्रकृति के साथ अपनी रचना क्षमता में समोत्तर चलन वाला कथा रूप उपन्यास युग अनुभव को आवृत्तिक हानर वह पान में ओछा न पड जाय और नई कहानी पर छोटे दायरे से हटकर विस्तार में विचार हो सके' क्योंकि सिर्फ कहानी की चर्चा किसी स्तर पर समूचे युग सदर्भ के बीच वहाँ कटी हुई भी है, इसलिए कि उसका सब उपन्यास के सब से युक्त होकर ही सम्पूर्ण हो सकता है और तभी उसे युग गद्य का प्रामाणिक कथात्मक व्याकरण भी कहा जा सकता है उस गद्य का जिसके करोब आने के लिए कहानी से प्रकृत्या भिन्न कविता भी अपने ढाँचे को दूर तक ऋजु किए हुए है और वह गद्य का परिवेग की प्रामाणिकता में व्यक्ति व अक्षरों का सचनसम एतान्त युगान्त अभिव्यक्ति का विविध माध्यम सिद्ध हो रहा है

प्रगतिवादी समीक्षकों के यहाँ एक बार लगा था कि पूरी सम्भावनाएँ म उनके एकांगी और प्रतिवाणी बोण के बावजूद कथा रूपा को कथाचित् साहित्य में उनकी सही हैसियत मिल सके और उपन्यासों में उनकी मूल्य परक निगाह न यह कोशिश की भी थी इसलिए कि उनके यहाँ समाज को बदलने का एक मात्र औजार साहित्य में उपन्यास ही कारगर तौर पर साबित हो सकता था, इन्होंने अपने आशय की सिद्धि के लिए कथा-रूपों को इसलिए भी चुना क्योंकि कविता में यह बग अपनी प्रवारात्मकता और नारों की असम्भ्यता से परिचित हो चुका था इसलिए कि ये नारे और यह प्रचार जिस भद्दे और असहित्यिक ढंग से किए गए थे उससे पाठकों में कलात्मक विश्वास और कलात्मक रचि इस सदभ में और इनके मतलब के लिए पदा नहीं हो सकी थी कथा रूपों में जबकि थोड़ी सतकता बरतने पर इसकी पूरी गुंजाइश हो सकती थी, इसलिए डा० रामविलास शर्मा प्रेमचंद से लेकर राजेन्द्र यादव तक के उखड़े हुए लोगों को बराबर दाद देते रहे (लेकिन राजेन्द्र यादव न जब अपने रोमान पर काबू पाकर बग सघष की तकनीकी चौपट को छोड़कर अधिक वयस्क विचार होकर जिदगी के रुबरू खड़े हो गए—उसके सही वास्तव को रेखाङ्कित किया और इस तरह उपन्यासों और कहानियों में अपने रचना धर्म की दायित्वपूर्ण गवाही पेश करनी चाही तो मित्रों के दाद वाले स्वर को उनका दाद चर गया) और अमृतलाल नागर में प्रगतिवाद के पमाने पर फलाकर उनकी औप प्रासिक उपलक्ष्यों को (औपन्यासिक रचनागीलता से जोड़कर नहीं) स्वीकारते रहे (गो अमृतलाल नागर की औपन्यासिक उपलक्ष्यों को रचनाबध और भीतरी सृजन रचाव के तहत रेखाङ्कित किए जान की जरूरत थी और विस्तृत जीवन और संस्कृतियों में उनकी सृजन क्षमता को बूझा जाना चाहिए था जिनके कारण उनके उपन्यास अपनी विनिष्कृता की प्रतीति देते हैं) और फणोश्वरनाथ रेणु के यहाँ अपनी मूल्य मूल्या के कारण औपन्यासिक उपलक्ष्यों को नकारने में बराबर अणुघा बनाते रहे उपन्यासों के आन्तरिक रचाव और कला-संगठन की, उनकी सदिशकता में यहाँ भी नहीं परखा गया और जब इनके समीक्षा चिंतन के विशिष्ट केन्द्र कथा रूप उपन्यास की ही यह हालत थी तो कहानी की समीक्षा स्थिति इससे भी उग्राना बदतर होती यह स्वाभाविक ही था

कथाचित् इनके यहाँ यह पुरानी धारणा ही जड़ पकड़े हुए थी कि या तो कविता लिखकर ही (कविता की समीक्षा करने ही) साहित्य में सत्कार पाया जा सकता है या फिर अधिक से अधिक उपन्यास लिखकर (और पढ़कर भी) चूँकि रूस में उपन्यास लिखकर ही साहित्यकार मूल्या हा गए है (इन्होंने यह भुला लिया कि चलव आदि अपनी कहानियों के चलते ही विनिष्कृत हुए हैं) इसलिए हिन्दी में भी वे ही लक्ष्य मूल्या माने जान चाहिए जिन्होंने उपन्यास लिखे हैं या उन्हें मूल्य मानने के लिए जरूरी है कि उनके उपन्यासों का पहले मूल्या माना जाय मानो इन लक्ष्यों को महान मानने के लिए

बहरी है कि उनकी महानता के कारण उनके उपयाम लेखन में तलाग जायें इसलिए इन मित्रों की समीक्षा में यह निष्कर्ष रहे कि हिन्दी में उपयासकार महान हैं खासकर वे उपयासकार जो वर्ग सघन के चिन्ते हैं और समीक्षक तो महान होता ही है, इसलिए कि वे लेखक स्वयं समीक्षक हैं नतीजा यह हुआ कि अपने निश्चित भाषणों के चलते वे समीक्षक उपयाम की साहित्य में उसकी सही जगह नहीं देना सके चूँकि इनकी निगाह में छोटी कहानी उपयास के सामने नितांत छोटी थी, इसलिए उसकी रचना शालता को परखने और उसे प्रतिष्ठा दिलाने का सवाल ही नहीं उठता था यही वजह है कि डा० रामविलास शर्मा जैसे समीक्षकों ने प्रेमचंद को महान घोषित करने के लिए उनके उपयामों की तो महानता से तफतीश की, लेकिन उनकी कहानियों की विगिष्टता को वे बराबर नकारते रहे और तब लगा कि कवि ही 'स्वभाव से उच्च मन नहीं होता है कवि पद अजन्म 'राई' को 'राई' तो बना रहने देना है, इन समीक्षकों ने तो 'राई' (कहानी) के अस्तित्व में ही अनभिन्नता प्रकट की

समूचे देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ बढ़ती हुई बेकारी, हर सही पद पर कुछ सम्पन्न लोग और परिवारों के गहन अतिकार गरज कि आय के तमाम समृद्ध साधनों से वंचित सही लोगों की भीड़ काम के न मिलने पर अकेली होती जा रही है काम होता है तो आदमी को काम का ही साथ होता है काम के चलने अकेला होने के बावजूद अकेलापन काटता नहीं लेकिन स्थिति यह है कि सही प्रतिभा के उपयुक्त काम न मिलने पर आदमी काम होने हुए भी अकेला हो गया है, वह जहाँ होना चाहिए वहाँ तक पहुँचने में गलत हाथा की एक छोटी मगर मजबूत कतार है और यह कतार हर पक्ष इस आदमी को काँचती कुरेदनी और कुठित करती रहती है, नतीजे के तौर पर वह असंतुष्ट, पराजित और क्रुद्ध होता रहता है स्वतंत्रता से पहले स्वातंत्र्योत्सव के लो गई तस्वीर के बारे में वह अब स्वप्न भग की स्थिति से गुजर रहा है

चीनी आक्रमण और पाकिस्तान के साथ युद्ध इससे पहले देश का विभाजन और शरणार्थी होकर बड़ा संख्या में लोगों का विस्थापन और इससे भी पहले द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के प्रभाव (जिनसे किसी मानने में आज भी निजात नहीं मिली है), नतीजे के तौर पर सारे देश की मानसिकता और परिस्थितियाँ में बदलाव जनसंख्या बढ़न से परिवार नियोजन का प्रचार और सक्स जैसे 'ट्यूब' का टूटना और बड़ी बड़ी योजनाएँ और बड़े-बड़े निर्माण पुराने मूल्यों का विघटन और भ्रष्टाचार चोर बाजारी, रिश्वत और बेईमानी का सारे देश में माहौल इस सबकी मानसिकता से जुड़ी हुई हतास पराजित कमर झुकी नयी पीढ़ी धानक तनाव और विश्वासहीनता की

यायु म साँस लेता हुआ समूचा देश विघटन और ह्रास से गुजरती हुई आदमी की नतिवता और सस्त्रुति भौद्योगिक निर्माण के कारण। बड़े-बड़े शहर और इन महानगरों में भवेले आदमियों का बँधा हुआ समुद्र। अपने प्रास-पास से कटा हुआ और विवशता में डूबा हुआ भवेली आदमी सारे रिदता और सारी सस्थाओं पर अनास्था और फिर भी अपना भौचित्य और अस्तित्व प्रमाणित करने के लिए किसी स्तर पर झुंकी हुई प्राकाशा व्यक्तियों के लिए व्यक्तियों में बेद्वित राजनीति और जिसकी सबप्राप्ती छाया में काँपता और मुक्ति के लिए छटपटाता अपने को बसहारा महसूस करता हुआ मानव समूह आक्रोश और भुँभनाइत में खुद को ही नोचती हुई पागल भीड़ विश्व विद्यालयों पर राजनीति का अधिकार और रचणात्मकता सक्ती हुई शिक्षा-व्यवस्था निरक्षरता के भँवर में ऊभ-नूभ करती हुई विध्वंसक युवक-शक्ति जोने के साधनों का केद्रीकरण और दूसरों के रक्त पर पलता हुआ सुख-सुविधाओं पर जन्म सिद्ध अधिकार किए हुए एक वग रोज होती हुई हत्याएँ और दुघटनाएँ और उनका सत्रास 'नई कहानी का यही ससार है और उसमें अभिव्यक्ति पाती हुई इसी मानसिकता से गुजरने वाली भीड़ है

और नई कहानी में भाड में से छँटा हुआ जिस आदमी का चेहरा उभर रहा है वह सही मादने में किसी व्यक्ति का नहीं बल्कि खुद भीड़ का ही चेहरा है, जो नेताओं के खोखले आदनों और अदूरदर्शिता भरी योजनाओं पर धुँस है, उसके सामने देश का चमकीला प्रभाव, देश की उन रगों को ढक नहीं पाता जिनमें गंदा दुगंध भरा खून बह रहा है और जिसकी असलियत न जानने के लिए उन्हें ऊपर से सलमा सतारों में मड दिया गया है और यह मलमा सितारे भी निज के गहों हैं उधार लिए हुए हैं जिनकी कीमत चुकाने के लिए उसकी धमनिया का प्रवाह दाताओं की तरफ सोड दिया गया है, अब ये धमनियाँ उनका गरीर नहीं सीचती इस तरह मिटती हुई उसकी हम्ती जाने अनजाने दूसरों की हस्ती बनाने में बतौर उपकरण के स्तेमाल की जा रही है अब उसके निगम उसके लिए हुए निगम नहीं हैं यद्यपि लेता बही है लेकिन दूसरों के बतान पर और दूसरा द्वारा वाप्य विण जान पर कमलेद्वर न इस मत्य की एक मध्य वित्त परिवार में प्रतीक के तौर पर पहचाना है— घर का नितात अपना निगम ही कोई नहीं होना जरा-जरा सी बात में उन दूसरों का दखल रहता है, ना घर के नहीं हैं कितना घुँघला सा दखल है दूसरों का परकितना सम्पूर्ण (दूसरे पास का दगिया) न सिफ यहाँ के परिवारों में बल्कि इस देश में ही दूसरे-दूसरे देश घुम गए हैं और इस देश के हर-छोटे बड़े निगम में उनका दखल अब घुँघला नहीं है, बल्कि ताक-साफ है सचालक हाथ अपनी स्थिति बनाए रखने के लिए उन्हें दखल देने के बराबर मौके द रहे हैं और उनके लिए बराबर जमीन छोड़ रहे हैं यह देश चन्द लोग के स्वार्थों के लिए बराबर मुहताज होना जा रहा है और नतीजे के तौर पर

यहाँ का आदमी रोजी के बिना बेकार है और भूखा है वह इस देश की शक्ति है और देश का उमसे कोई वास्ता नहीं है वह देश के निर्णयो म सामीदार होना चाहता है और उसे साथ नहीं लिया जाता स्थूल स्थिति से कहीं बेजार उसनी आन्तरिक स्थिति है वहाँ वह बराबर चारो तरफ उपजाए गए दबावा और भीतरी विवृति का शिकार हो रहा है वह जानता है कि यह दरगुजर बदतर स्थिति सचालक के अयोग्य हाथो न पदा की है प्राथमिकता से हल माँगने वाले जिन्दगी के सवाल इन अयोग्य हाथा द्वारा पीछे धकेल लिए जाते हैं उसे अपने चारा तरफ जवानी मे कमर भुकी खोलती उदासी दिवाइ देती है और यह जितनी बाहर है उमसे कही अधिक उसके भीतर है तब वह असताप से भरकर विद्रोह कर उठता है विद्रोह ! हर प्रतिष्ठित सन्ध और हर पाखण्ड के प्रति हर मान्यता और हर स्थिति के प्रति समाज के प्रति और यहाँ तक कि अपने प्रति भी । वह एक बारगो सब कुछ बदल कर सिरे स मान स्थापित करना चाहता है और विद्रोह की रौ म वह 'माना से ही नफरत करने लगा है क्यकि उमे लगता है उसके चारा तरफ धोखा है हर शब्द खोलला हो चुका है और हर सत्तम अयहीनता मे बदलता जा रहा है लेकिन वह इहें बदल पाने म स्वय को असमय पा रहा है और लगातार टूटते जाने से उद्धन होकर वह जिन्दगी की बहुशियाने डग स जीने के उमाद म पड गया है इन टूटने म उसका व्यक्तित्व ही नहीं जिन्दगी के तमाम मत्य हैं तमाम सत्त्वों से जनित तमाम रिश्ते हैं और रिश्ता का दूर नक पडता हुआ समूचा प्रभाव है । हर रिश्ते में अराजकता है । व्यवस्था के नाम पर समाज व्यक्ति को पूरा का पूरा निचोड लेना चाहता है व्यक्ति जीने को अनिवाय शत के लिए उसके आखिरी कँगूरे तब तोड देने के प्रयत्न मे है सब कहा आपाधापी है और सब कही अव्यवस्था है इस सबसे मग्नस्त बीखलाया हुआ हैरान-वस्त यह आदमी स्त्री-पुरुष के धिनीन रूप को उनके धिनीने रिश्ते को धिनीनी तरह उछालता है, अघोरिया जमा व्यवहार करता है ऊब और संक्स को नियति मान लेता है इस अराजकता मे वह दुहरी जिन्दगी की जीने के लिए विवग है गोकि वह जानता है कि चेहरे पर जिननी ही कीमती क्रीम और पाउडर की पर्तें लगाकर समाज खूबसूरत दिखाई देना चाहता है भीतर से उनना ही उसका पीलापन और क्लाय लिए हुए चेहरा भाँक उठता है हर मूल्य बच्चों द्वारा उडाए गए सावुन के पानी वाले सतरों बुटबुदो की तरह है, जो हवा म जिन्दा रहने की कोशिश करन से पहले ही टूट जाता है

इस तरह नयी कहानी म जो आदमी उभर रहा है, उसका और उमके आसपाम का वास्तव दो स्तरा पर है—एक स्तर वह है, जहाँ देशी-विदेशी शोखा म विनापित चमकीले आँकड़ा मे लकड़क चित्र है जो महज फरेव है और भूड है दूसरा स्तर वह जहाँ उसकी बाहरी भीतरी स्थिति नितांत स्याह है—गाने वाली और विडम्बनापूर्ण स्यान् इस बदर स्याह दिखाई देने का कारण एक समृद्धि भरा कौमल स्वप्न भी लेना

रहा हो लेकिन जो भ्रव टूट चुका है

बहरहाल आज की स्थिति इस आदमी के स्वान भग या भम भग की स्थिति है और यदि उस स्थिति की अभिव्यक्ति में तित्ता या बडवाहट है तो अजब क्या है ? बल्कि अजब तो तब होता, जब अभिव्यक्ति की टोन में वह सब रेलाङ्कित न हुआ होता इस तित्ता और बडवाहट, तल्ली और व्यग्य की अहमियत का मतलब तब और साफ हो जाता है जबकि दिन प्रति दिन जीवन के प्रश्नों को तय करन के लिए व्यवस्था द्वारा प्रयत्न किए जाते हैं और इन प्रयत्नों से प्रश्नों को पहले से भी अधिक उलझा लिया जाता है इस आदमी के माह भग को और जिदगी की शिल्पहीनता की स्थिति को नयी कहानी में समूचे मोह भग (कृति और कृतिकार गत) के साथ अपने प्रति पूरी निममता बरतते हुए कथाकार अभिव्यक्ति दे रहा है गो इस बात पर एक राय हुआ जा सकता है कि कथा में समाज की अराजकता की हिमायत करना प्रश्न को सही कोण से उठाना नहीं है लेकिन इसीलिए इस अव्यवस्था को क्या अनचित्रित छोड़ दिया जाय ? मुख्य नए कथाकार राजेन्द्र यादव ने इस अप्रवस्था इसी गाढे स्याह चित्र को—नए या बदले हुए आदमी की समूची ज्यामिति मान लिया है (जो समूची चाहे न भी हो लेकिन इतना सही है कि वह दूरी तक उसके चेहरे को ढाँप रही है) इस आदमी के चेहरे को 'एक दुनिया समानांतर' में अपने चारों तरफ के घटित में समूचे विघटन के बीच जिस पनी दृष्टि से देखा गया है वह चेहरा भी और उससे भी कहीं अधिक चेहरा देख पाने की दृष्टि अत्यन्त महत्वपूर्ण है, लेकिन दृष्टि को यही तक सीमित कर लेना या इस महत्व के चलते दृष्टि का यहाँ सीमित हो जाना उसका सम्भावनाप्रा से कट जाना तो है ही

विचली पाढ़ी के मभल समीक्षका द्वारा पिछले दिना कहानी की पाठ प्रक्रिया को जबरदस्त सिफारिश की जाती रही है, जिससे किसी स्तर पर पाठक आतंकित भी हुआ है, आतंकित इस माइन में कि पाठ प्रक्रिया को लेकर मित्रा ने कुछ ऐसी गोल मटोल बातें कही हैं, गूढ रखते हुए उसे कुछ ऐसा अतकय बनाया है कि उनकी इस नियुणिया समीक्षा से सन्नस्त होकर पाठ-प्रक्रिया से तो क्या पाठक कहानी मात्र से पनाह माँगन की हालत में पहुँच जाय तो कुछ ताज्जुब न होगा जबकि अचरित इस बात की था कि पाठ की प्रक्रिया को 'रहस्यवाद न बनाकर कथा की रचना प्रक्रिया से जुड़ने हुए उस कथानिब तीर पर विश्लेषित किए जान की कोणित होती लेकिन हुआ यह कि मित्रो ने कहानी की पाठ प्रक्रिया के नाम पर या तो कविता करना मुँह बर दिया— क्षतिज का एक चयना हुआ दावरा है जो हर क्षण नया होना चयना है और उस दावरे में

होकर हम गुजरने हैं एक दुहरी प्रतीक्षा है, जिसमें अनागत शब्द पाठक का इंतजार करते हैं तो पाठक अनागत शब्द का एक भविष्य है जो शब्द से भरा है और हजारों शब्दों के द्वारा पाठक को एक अंत से अलगगाए हुए है एक फासला है जो दृष्टि के हर कदम के साथ घटता जाता है हर शब्द से दिखाएँ गुरु होती हैं बिजली की एक बोध सी होती है, आलोक की एक रेखा में अचानक सब कुछ जुड़ जाता है ।' (कहानी के सृजन में घने और तीखे संवेदना खण्डों में तो कथाकार कवि होने लगता है लेकिन कथा समीक्षा में कविता की यह मिसाल काफी मौजू है) या फिर लीविस की तरह 'तितान्त अध्यापकीय लहजे में कि 'पाठक दो तरह के होते हैं, एक तरह के अधिक दूसरी तरह के बहुत कम बात को इतना सनही और परीक्षार्थियों के मतलब का बना दिया कि उसका वचारिक गरिमा से ही नहीं गभीर विचार मात्र से सम्पर्क टूट गया और कहानी की पाठ प्रक्रिया के नाम पर एक माटी और जड़ रूप रेखा मात्र रह गई जिससे कहानी के सत्य को उपलब्ध करने में किसी भी स्तर पर मदद नहीं मिलती कहानी की पाठ प्रक्रिया' या पठन-विधि की ज़रूरत इन मिन समीक्षकों ने इसलिए महसूस नहीं की कि मौलिक होकर उनके मस्तिष्क में यह विचार था, मतलब कथा सत्य को उपलब्ध करने के लिए वे इसकी ज़रूरत महसूस करते थे, बल्कि इसका आवश्यकता इस तक पर बताई गई क्योंकि बर्जीनिया वुल्फ (द वामन रोडर) सान पर्सील्युबक (क्राफ्ट और फिक्शन) व दूसरे-दूसरे विदेशी लेखक इसकी सिफारिश कर चुके थे दरअसल कहानी की पाठ-विधि इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि वह किसी विदेशी लेखक का सुझाया हुआ रास्ता है बल्कि वह महत्वपूर्ण इसलिए है, क्योंकि उससे कहानी के प्रति बदला हुआ कोण जुड़ा हुआ है यानी जो उभे मनोरंजन के स्तर से उठाकर गम्भीर साहित्य रूप में प्रतिष्ठा देता है और कि वह प्रामाणिक कथा समीक्षा के लिए एक अनिवाय आग्राम है और उसका अर्थ भी जिसके चलते कथा समीक्षा में उस पाठक का और कि उस समीक्षक का कोई वजूद नहीं होता जो कथा सत्य को उपलब्ध करने के नाम पर महज कथा संक्षेप और कथानक-समझ के धटिया नाटक में ही सलग्न हो पाता है और जिसे समझने या उपलब्ध करने के लिए कहानी के हर अंगारे, हर प्रतीक और व्यंजक स्थिति या संवाक्य होना त्रिभुज जटिल नहीं होता बल्कि सिर्फ सरसरे तौर पर पढ़ने के संकल्प में उस कहानी पर से बीज-बीज में पल्ले छोड़ते हुए स्पष्ट लेना ही काफी होता है यानी जिसका मतलब होता है कहानी के सस्ते रहस्य को समझने की टुच्ची उत्सुकता और उसका शमन जाहिर है कि इसका कथा-समीक्षा के धर्म्य विचार से कोई वास्ता नहीं

दरअसल पाठ प्रक्रिया अपनी प्रारम्भिक स्तर पर कुछ-कुछ 'प्रूफरीडिंग' जसी ही है वहाँ महज हर शब्द का ही महत्व नहीं होता, बरिज हर मात्रा भी महत्वपूर्ण होती है, यहाँ तक कि विराम चिह्न भी अपना अपना ही महत्व रखते हैं उनका नहीं

और अपनी सही जगह पर होता निता त प्रतिपाद्य होता है, जग-जस और जिननी बार और जितन ध्यान स 'प्रफूरीडिंग' की जाती है, वह मुग्ध में मून के उतने हो करीब होती चलती है कहानी से भी हम जगे और जितन ध्यान स धीरन्ने होकर पढ़ते हुए गुजरते हैं उसी अनुपात स कहानी सत्य व गिद भी होने चलते हैं हम कहानी की जितने धर्म से और जितन भंग स ठहरते हुए पढ़न है उनन ही भंग स न सिफ कहानी के उमडने हुए, भावार सने सत्य स बन्वि उगनी लखन प्रक्रिया स भी जुडत चलते हैं और तब चाहे कहानी स सत्य की मूल रचना प्रविधि से हूबहू हम साक्षात्कार न भी कर पाएँ लेकिन उगके बाड़ी करीब हम जरूर होने हैं, कहानी की दायित्वपूर्ण पाठ-विधि हम क्या के उग सत्य की उपलब्ध करन के लिए बराबर विद्यन करती रहती है, जिसे लेखन न अपन समूचे कलात्मक दाय पेचा और जान अनजान सिल्यगत सत्यन का सहारा लेकर चुपके स किसी पक्ति स दबा दिया है गोवि यह क्या सत्य समूचे क्या स भी सृष्टि के तीर पर अनुसूत हा सकता है

कहानी की पाठ प्रक्रिया की बात बहुत कुछ कहानी की रचना-प्रक्रिया की बात भी है, कहानी पाठ से गुजरते हुए हम तिहरी भूमिका निभाते हैं एक स्तर पर तो मजग पाठक की हैमियत स हम मून क्या सत्य की उमकी तमाम रूपगत बारीकिया के साथ उपलब्ध करन के प्रयत्न स होते हैं इस भूमिका की निभाते हुए एक दूसरे स्तर पर क्या की अपना अनुभव बनाते हुए लेखन धर्मा होकर उसके घटित होने के साक्षी होने रहते हैं और इन दोनों स्तरों के साथ ही एक तीसरा स्तर भी है जहाँ हम पाठक कम और रचना कम की संयुक्त भूमिका निभाते हैं, और इन दोनों के नतीजा हुए क्या सत्यन की रेखांकित कर पात है इसलिए कहानी की पाठ-प्रक्रिया सिफ पाठ की प्रक्रिया ही नहा है वह उल्टे दूसरे सिरे से रचना की प्रक्रिया भी है और इसीलिए प्रबुद्ध कहानी पाठक कहानी को सिफ पढता ही नहीं है वह किसी स्तर पर उसका दुबारा सृजन भी करता है यह अलग बात है कि दुबारा किया गया यह सृजन मूल सृजन का प्रामाणिक अनुकृति नहीं भी हो लेकिन वह मूल कृति के करीब करीब जरूर होता है और यही बजह है कि एक विशिष्ट अर्थ स पाठक कम सर्जक-कम से वही अधिक जटिल भी है इसलिए कि वह सिफ पाठक ही नहा है किन्हा अर्थों स सजक भी है

कहानी अपनी प्रकृति के अनुसार ही अपन लिए अलग पाठ की मांग करती है पाठ प्रक्रिया जिस कि पाठ अभ्यास भी कहा जा सकता है हर कहानी के लिए एक जसा नहीं होगा अनग अनग मिजाज की कहानिया स अलग अलग पाठ विधि से गुजरना पड़ेगा सत्यो की अपन परिवेग स सही प्रतिबन्धि और सही इजहार देन वाली कहानी पाठ-विधि की स्वय ही एक अनग दिशा स मोड देगी और उसी तरह आप से बार बार पढ़त हुए ठहरन और साचन के लिए तकाजा करगी, जस गमसार और मुक्ति

बोध की कविताएँ, सिर्फ इस अंतर के साथ कि कविताप्रा मे आप बिम्ब विचार की स्वतंत्र अन्वितियों को जोड़ते हुए भी समूची कविता से एक अलग स्तर पर भी सत्य का सवेत को उपलब्ध कर सकते हैं लेकिन कहानी एक ही अनुभव-सत्य की अन्विनि आपको अनेक सस्थितियों से पुष्ट कराकर उपलब्ध कराएंगी गो इशारे कहानो मे भी हो सकते हैं, लेकिन सिफ इशारे होकर समूची कविता से हट कर उसके बिम्ब-विचारा और बिम्ब स्थितियों से किसी समानांतर सत्य को रेखाङ्कित करने की तरह नहीं यानी एक ही कविता मे कई और समानांतर सम्पूर्ण स्वतंत्र कविताएँ हो सकती हैं लेकिन कहानी मे एक और या एकाधिक और कहानी के लिए अवकाश नहीं होता, इसलिए छोटी कविताओ की समीक्षा-विधि का उपयोग कहानी के लिए भी उपयोग मे लाया जाय, यह समीक्षा विचार की सही दिशा नहीं होगी लेकिन इस पर बहस अभी बाद मे

जिस तरह गम्भीर विचार और तीखे दृढ़ दृग्वाणी, अपनी सृष्टि मे सखिलुष्ट कहानी सजग पाठक को दायित्व पूरा पाठ विधि के लिए विवश करती हुई उकमाने है उनी तरह अपनी सजगतात्मकता मे घटिया और जीवन के किसी गम्भीर सत्य मे उखटी हुई, मात्र उसकी भर्त्सो का मतलब रखने वाली कहानी पाठ विधि मे पाठक को गर जुम्मेदार भी बनाती है लेकिन इसका यह मतलब बतई नहीं ढाना कि नव पाठ प्रक्रिया पर जोर देन की जरूरत क्यों हो जबकि हर कहानी अपने स्तर के अनुसार पाठ विधि म पाठक को गम्भीर या हल्का बना देती है इसके लिए यह समझ लेना जरूरी है कि जो कहानी पाठ प्रक्रिया के जिन आयामा मे बढने के लिए पाठक को उकसाती है, वह उसके लिए महज सवेत ही लिए हुए होती है और उनको समझने के लिए कहानी से कही ज यादा सहयाग और सतकता पाठक से अपेक्षित है और इम दृष्टि से पाठ-प्रक्रिया का अभ्यास ही उसको क्या समझ को विकसित करता है यह कहानी और कहानी पाठ विधि के बीच एक ऐसी आंतरिक उगी हुई समझ है, जिमे हर सजग पाठक समझ ले जाता है और उसका पाठ विधि का अभ्यास इस समझ को माँजता रहता है यह समझ अपनी गुरुआती (और विकसित होकर भी) हदो म ही परम्परा पालित कथा-समीक्षा के साक्षा को तोडने लगता है, जो क्या की औसत समझ के स्तर से भी गए गुजर हैं

अस्न म क्या की पाठ प्रक्रिया की माँग का यह सवाल, क्या-समीक्षा मे सवया बदल हुए कोण का सवाल है जो अपनी गुरुआत मे ही क्या के प्रति समीक्षा मिजाज को सवया नयी दिशा दे देता है और इससे गुरुआत पाकर जहाँ कहानी मनोरजन स्तर से हटकर विचार चिंतन का वयस्क माध्यम बनती है वही कहानी के हर नुक्तते और हर चिह्न के दूर तक अर्थ प्रभावो के दृष्टि स छूट जाने के खतरे से भी वह स्वय को बचा ल जाता है बल्कि यह कहना ज यादा सही हागा कि इम कहानी पाठ क चलते

धर्म प्रभावा के दृष्टि से छूट जान को सम्भावना करीब-करीब खत्म हो जाती है

पुरानी कथा समीक्षा कुछ बन-डले सतही तौर-तरीकों से कथा का ग्रथ टगो लनी बीरती रही थी (बल्कि लगातार ग्रथ बाँचन जसा गम्भीर भाव वहाँ था ही नहीं) और इस तरह कथा सत्य के नाम पर उसके हाथ नितांत बाह्य और सतही मतनब ही लग पाता था, जबकि कथा-समीक्षा में कथा की पाठ प्रक्रिया का ग्रहणित देन के कारण बदला हुआ यह समीक्षा योग्य, कथा में लेखक की रचना प्रक्रिया के करीब पहुँच कर कथा के हर अंग, हर पंक्ति और उसको समूची प्रवृत्ति को उचित दाय सौंपता हुआ कथा वस्तु के आलोचक में उसे रेखाङ्कित करता है, यह समीक्षा यात्रा उसकी उस बिन्दु तक की यात्रा है जहाँ कहानी अपना नगा-सरप लिए हुए है और जिने उपलब्ध करके और जिसके अरिष्ट वह कहानी के उन तमाम संकेत पाए हुए और संकेत पाते हुए तत्पश्चात् को कथा के महान समीक्षा बोध से विस्तारित करता है उन संकेतों को जो कथा-वस्तु के उसके विभिन्न सदमों में सम्पुष्टि दे रहे हैं व कहानी की समूची सदिशता में जहाँ वह बन रही है या भाँवर पा रही है रग देते हुए उसी वस्तु को ज्यादा गाढा बना रहे हैं

कथा को इस पाठ प्रक्रिया के सबब नयी कथा-समीक्षा कहानी को उसकी सदिशता में उपलब्ध करती है और इस सदिशता की समग्रता में उपलब्धि के लिए समीक्षक की दायित्व पूर्ण भूमिका के साथ साथ उसे (समीक्षा को) रचनाशील रग भी अस्त्यार करना पड़ता है इतना ही नहीं बल्कि इतना और भी कि वह स्वयं भी किसी स्तर पर सदिशता होने की प्रक्रिया से गुजरती है इसीलिए युग के बड़े आलोचक डा० नगेन्द्र भी जब समीक्षा को सजनात्मक मानते हैं (न सही मूल के बराबर) और समीक्षक को सजक कवि बिम्ब का निर्माण करता है और आलोचक बिम्ब व प्रतिबिम्ब का तब समीक्षा की इसी रचनाशीलता की बात कहते हैं और प्रकारांतर से रचनाधर्म समीक्षा को अनायास ही समीक्षा क्षेत्र में ऊँचा ओहदा दिये जाने की सिफारिश करते हैं इस रचनात्मक सदिशता समीक्षा की टोन के निर्धारण में कहानी की पाठ प्रक्रिया जिस स्तर पर कथा समीक्षा की मही पहचान को रेखाङ्कित करती है वही एक दो तीन चार के क्रम में विशपताए गिनान वाली तत्त्व परक कथा समीक्षा से स्वयं को अलग और आधुनिक बोध के समानांतर कर लेती है इसके नतीजे यह भी होने हैं कि नयी कहानी से पहले की कहानियों की रचनाशीलता को नए कोण से समझन की सम्भावना खुल जाती है

इस पाठ प्रक्रिया की आवश्यकता महज कहानी के सदम में ही नहीं है, बल्कि इसकी जरूरत उन तमाम साहित्य रूपा के लिए भी है जिन्हें या तो मनोरंजन का माध्यम मानकर उनके लिए गम्भीर समीक्षा रव और पठन विधि अब तक अपनाई नहीं गई थी या फिर उन साहित्य रूपा के लिए जिनको हल्के स्तर का समझ कर उनकी

उपेक्षा कर दी गई थी, गोकि कविता के लिए भी इस पाठ प्रक्रिया की जरूरत है पास कर उन समीक्षक-मित्रा के लिए जो आज भी कविता में अलग अलग व्यक्तित्वा को पहचानने में गड़बड़ा रहे हैं और जिनको सपाटे से काव्य समग्र और कविताएँ पढ़ने की सत के नतीज के तौर पर यह शिकायत करनी पड़ती है कि 'तमाम नई कविताएँ एक ही कवि की लिखी हुई लगती हैं'

दरअसल मनोरजन और हल्केपन की मार जिन साहित्य रूपा को भेलनी पड़ी उनमें खाम तौर पर (और आम तौर पर भी) कहानी हो रही और कमोवेश उपन्यास का भी इस विडम्बना से गुजरना पड़ा इसलिए कहानी के साथ-साथ उपन्यास के सदम में भी पाठ प्रक्रिया के अम्यास को गम्भीरता से लेने की जरूरत बनो हुई है, और यह पाठ प्रक्रिया का अम्यास छोटी कविताओं और महाकाव्या की पाठ-प्रक्रिया के समानांतर ही कमोवेश अपना विधा के मृताविज किसी स्तर पर होगा, जो यह बात जानो हुई है कि कुछ कविता परस्त भावुक समीक्षका को इस सुभाव से गहरा सदमा पहुँचेगा कि कहानी, उपन्यास कविता की तरह पठन विधि की भी दरकार रखते हैं और कि समझने धूमन के लिए कविता जसी अहमियत उहे भी देनी होगी उनकी दृष्टि में तो कहानी सुनने-सुनाने या अवकाश के क्षणों में (उपन्यास भी) पढ़ने की चीज है, ये कथा-रूप अब समझ की भी माग करने लगे ? कुछ आचार्य और पीठम्य ऋषि समीक्षक कहानी का सस्ता और मनोरजन का साहित्य समझ कर उसकी उपेक्षा कर देते हैं और उसे मनोरजन के लिए भी पढ़ना पसंद नहीं करते, क्योंकि मनोरजन के लिए उनके पास दूसरे जोते-जागते साधन मौजूद हैं जो खुद अपने में कई-कई दिनचस्प कहानियों व विषय हा सकते हैं इसलिए भीती-जागती कहानियों के सामने कितावा की लिखी पढ़ी कहानिया की क्या कीमत और कि क्या विसात ? ऐसे भावुक और मनोरजक समीक्षकों के लिए जो समीक्षा में अपनी भावुकता और मनोरजन के कारण ही बने हुए आप्रहो को समीक्षा माना के बतौर स्तेमाल करते हैं क्या कहा जाय ? ये मित्र भावुकता के चलते ही समीक्षक हुए हैं और 'भीगना इनकी समीक्षा का खास मिजाज है, इसलिए आज की कहानी, जो विचारों की वयस्कता और जिन्दगी की कठारता को रेखा चिह्न कर रही है इहे बयावर भिगो सकती है और बसे इहे अपनी अहमियत से परिचित करा सकती है ?

बहरहाल यह कहानी को पाठ प्रक्रिया का ही जोम है कि जिसके चलते समीक्षा विवेक में कहानी सत्य के साक्षात्कार में हम अधिक सक्षम होते हैं, कहानी से हम इतने सतक गुजरने हैं कि उसके किसी अक्ष या किमी पंक्ति में अन्वय का चमकीला तार ढूँढ जाता है जा खण्ड-खण्ड में बँटी निरर्थक विस्तृतिया से भरी जसी दिखती और अपने रचना-वध में बिखरी हुई लगती कहानी को साफ सिलसिला दे देता है और उसे एक समूची रचना इकाई में प्रतिष्ठित कर देता है तब इस चमकील तार की षोष में

कहानी की सही प्रवृत्ति और उसके रचनाबोध को जान पाना स्पष्टतम हो जाता है।

समीक्षा स्तर पर छोटी कहानी का यह दुर्भाग्य रहा है कि उस पढा तो गया है मनोरंजन और मन स्थितियों को हल्का बनाने की गरज से लेकिन उसकी समीक्षा उसको साहित्य रूप मानकर इस तरह की जाती रही है गोया उसे इतना ही गम्भीर होकर ज़ुम्मेदारी के साथ पढा भी गया हो लेकिन समीक्षा में यह कहानी के दुर्भाग्य की प्रतिम हद नहा है, इससे भी बड़े दुर्भाग्य से उसे गुजरना पडा है और किसी हद तक उसमें वह आज भी जुड़ी हुई है वह यह कि उसकी समीक्षा के लिए कविता जसी सतकता और ज़ुम्मेदारी महसूस नहीं की जाती रही है, मतलब समीक्षा करते समय कब बात का कतई ध्यान नहीं रखा जाता रहा है कि वह कब पढी गई है, और कि किस मन स्थिति में और जिस बात का ख्याल रखा जाता रहा है, वह सिर्फ इतना कि जैसे-तैसे कहानी की समीक्षा के नाम पर (और क्योंकि समीक्षा पढकर ही की जा सकती है इसलिए पढने के नाम पर भी) जो कुछ याददास्त में बच रहा है उसी को समीक्षा विचार के लिए धुरी बनाया जाय और कुछ गोन मटोन तर्कों के साथ समीक्षा का नाटक कर फतवा के लिए गु जाइश ढूँढी जाय और इस तरह दायित्वपूर्ण चिन्तन से उसे अलग रखा जाय, इसलिए कि कहानी को भी तब दायित्वपूर्ण होकर पढना पडेगा, जिस तरह कविता के सत्य को उपलब्ध करने के लिए उसे एकाधिक बार पढना जरूरी होता है और जरूरत महसूस करके अपने विकल्प और मत को सम्पुष्टि देने के लिए उसे पुन पढा जाता है कहानी सत्य को भी उपलब्ध करने के लिए उसी तरह का अध्ययन या पाठ विधि नहीं अपनाई जाती रही है। अपनी समीक्षा-बुद्धि पर यकीन करने वाला को तादाद इतनी ज्यादा है कि एक बार कहानी को पढकर उसके आद्यंत समझ लेने का विश्वास उठे अपनाया ही प्राप्त हो जाता है और जिन्दगी में अपनी याददास्त के खतरनाक स्यूत पाकर भी सबक लेकर वे कहानी को पुन पढना जरूरी नहीं समझते। कथा-समीक्षा में यह वर्ग जनता के उस वर्ग से भी गया गुजरा है जो अपने मनोरंजन की खातिर बल चित्रा को एकाधिक बार देख लेता है लेकिन हमारा यह समीक्षक वर्ग कहानी को गम्भीर मनोरंजन तक का स्तर देने को भी तयार नहीं गो याने वह जरूर कहानी को गम्भीरता से लेने जसो करना है, सचिन जो मित्र तब ही सीमित होती हैं नतीजा यह होता है कि तमाम समाशासक निष्कर्ष सही प्रतिक्रिया प्रभाव और गुलत जानकारी के भ्रममुट होकर रह जाते हैं और बनाम होन पर भी कथा की समीक्षा-बुद्धि इस तरह अशामाणिक होकर रह जाती है इसलिए कथा की समीक्षा को इस सस्ती लेकिन घातक विद्वम्बना में मुक्ति जिनान के लिए जरूरी है कि पाठ-प्रक्रिया की घमियत का समझा जाय और कथा-ममाशास या पाठ्य बनन की हीन में बीच-बीच में पृष्ठ छोड़ छोड़ कर कहानी-उपचार पढ़ने की घटिया और असाहित्यिक शत से मुक्ति पाई जाय

पाठ प्रक्रिया को ग्रहणियत न मिलने के कारण कथा-समीक्षा को जिन विडम्बना से गुजरना पडा और जो खतरा उसके सामन आया—जिसका कि मञ्जोरी प्रनिभा के समीक्षकों ने अपने हक मे उपयोग भी किया—वह यह कि सिफ समीक्षाएँ पढकर ही कहानी की समीक्षाएँ की जाती रहो और आज भी ऐसे मित्रा की तादाद कम नहीं है, जो बड़ी गम्भीरता से इस लटके को अपन यहाँ उपयोग मे ला रहे हैं, अब यह बात अलग ही है कि गम्भीर कथा विचार मे उनकी समीक्षाएँ चाहे शामिल नही ही की जायँ

बीते दशक और बीतते हुए दशक मे 'नई कहानी' का समीक्षा स्तर पर काफी जोर रहा (फिर सृजन मे तो वह रहा ही) यद्यपि पुस्तकाकार (नई कहानी सदम और प्रवृत्ति एक दुनिया ममाना'तर, नई कहानी दशा दिशा सम्भावना नयी कहानी की भूमिका) रूप मे उतना नही, जितना कि फुटकर निबन्धा, चर्चा-परिचर्चा व कथा समारोहा के तौर पर कुछ मित्रा ने फुटकर निबन्धा को पुस्तक-आकार भी दिया ही (कहानी नयी कहानी) लेकिन कुछेक पुस्तको (नयी कहानी की मूल संवेदना हिंदी कहानियाँ और फसान) और काफी कुछ फुटकर निबन्धा को पढकर ऐसा भी महसूस हुआ कि इनके लेखको को नयी कहानी का जितना कुछ समझने की जरूरत थी, उससे कहीं ज्यादा इहोने अपना वक्त समझाने मे गँवाया । यह तो निश्चय ही रहा कि अच्छा पका ने काफी कुछ लेखका और अनुभवहीन समीक्षकों के साथ इसमे अग्रुवाई की, सास कर नया की अपेक्षा पुराना ने इसमे या तो नयो के साथ-साथ लपटराइट करके अपनी हैसियत बनाए रखने का भाव रहा या फिर वे अन्तर से ज्यादा भोले थे बहरहाल यह महसूस टिण जाने से अब तक बराबर बचा जाता रहा कि 'नयी कहानी' को न सिफ उमम से गुजरकर उसे 'उपलब्ध करने की जरूरत है बल्कि उसमे स्थित होकर कहानी को अपने मे से गुजरने देते हुए महसूस करने की भी जरूरत है कथा समीक्षा की इस पद्धति का निर्वाह करने के लिए मसले समीक्षा लक्षित कहानी म मे ही उठाने की जरूरत थी, लेकिन जो किया गया वह खूब यह कि मित्र अपने 'मतवादी के कारबन ले आए और उन्ही के 'स्टेन्सिल्स को 'साइकोस्टाइन करा-करा कर पेस करते रहे, नतीजा यह हुआ कि काफी कुछ ऐसे मित्र जिनके किसी एक मुद्दे पर भी मत एक होने तक की सम्भावना नही थी, इस बात पर एक मत जरूर दिखाई दिए कि 'नयी कहानी' के अस्तित्व को मानने हुए भी, वे हर स्तर पर एक दूसरे से सिफ भिन्न हैं, यानी चि तन के किसी भी स्तर पर वे नई कहानी के स्वरूप और प्रवृत्ति को लेकर सिफ अलग अलग पहचान दे रहे हैं मतलब कि उनके अलग अलग पैमाने हैं, जिनकी समग्रता म कोई एक साथी लकीर नहीं खींची जा सकती, एक भीसत 'पहचान भी वहाँ रेखा ड़िन नही की जा सकती—वे सिफ एक-दूसरे को परस्पर काटते हैं और सिफ इसी माइने मे परस्पर बुडने हैं

प्रसाद आदि के यहाँ कहानी नाटक से गुरु होती थी और नाटकीय मोक्ष के साथ उसका अन्त भी बड़ ही नाटकीय ढंग से भटके के साथ होता था, गो कहानी में यह नाटक एक दशक पहले के कथाकारों के यहाँ भी रहा है और काफी कुछ कथाकारों के यहाँ आज भी बरकरार है, लेकिन आज का पाठक कहानियों में नाटक देखने-नेयन और भटके बर्दाश्त करते-करते उनका आदी हो चुका है उस भटकेदार अन्त वाली कहानियाँ में अब न तो कोई वीजुक रह गया है और न कहानियाँ में नाटक देखने के लिए किसी तरह की उत्सुकता गो कि मतलब इसका यह कतई नहीं है कि कहानी मात्र में पाठक की उत्सुकता खुब गई है या कि कहानी के सखिलप्ट सत्य को जिन कथा विधियाँ से प्रेरित किया जा रहा है उनमें उनका श्रौतमुक्क्य सत्य हो गया है मतलब सिर्फ इतना जरूर है कि वह अब सखिलप्ट सत्य की प्रतीति के लिए परीक्षित कथा सटका से चौकता नहीं और इस तरह के कथा बहने के बचकाने अन्दाजा में उस कथा कार की नीयत साफ नहीं लगती इसलिए उस ऐसी कहानियाँ में लखवीय प्रामू ला दृष्टि के प्रति खिन्नता ही उपजती है इसलिए भी कि वह नाटकीयता की प्रसलियत से परिचित हो चुका है क्वाकि जिन्दगी में वह उसी तरह होती ही नहीं जिन तरह कि उसका उपयोग इन कथाकारों ने बहुतायत से कहानियाँ में किया है और उसे हनीम लुफमान के पट्टे नुस्खे की तरह अक्षती सुविधा के लिए कथा कहने में बनौर मत के पाल लिया है और यह सत अब उनकी कथात्मक दामता की हूँ हो चुकी है जिसका अतिशयण अब उनके धूने से बाहर की चीज है

नाटकीयता से गुरु होने वाली हर कहानी को पाठक पाठ से गुरु होने वाली कहानी मानता है नाटकीय भांड मिवाय शल्पिन धोग के पाठक को कोई गहरा और बोध जान वाला आणय बोध नहीं देने इसलिए नाटकीयता में अन्त पान वाली कहानी उसके लिए धोये में अन्त होन वाली कहानी है क्वाकि वह कहानी में जिन्दगी का 'सच' चाहता है 'सच' के नाम पर धोना नहीं चाहता या कथा स्तर पर सच का अभिव्यक्ति इस तरह नहीं चाहता कि वह उसे धोय की प्रताति कराए गाकि वह कथा में उस धोय के सामात्कार से भा बनराना नहीं है, जिन वह जिन्दगी में अन्त रहा है लेकिन चाहता इतना जरूर है कि वह उसे उम उम वेप में कहानी में मिल जिन वेप में उस उमका साबका जिन्दगी में पटना है --

इसलिए वे तमाम कहानियाँ जो नाटकीयता में गुरु ही नहीं हनी नाटकीय मोक्ष और भटका में पाठक को भीचकता ही नहीं बनाता बल्कि नाटकीयता में अन्त भी पाती हैं पाठक के यहाँ कहानी के रूप में महत्व पाता है क्वाकि वह कहानी में इन पाठक का बरिन्मा-बचानक का घड उडा दन उम अपर में सटका देन उमप विविम्मा उमगुडा भर दन दा अम्माय का वाडावरानु निर्माण कर उमम धोय-मिबोना गवन के हुनर में बारी देग बुता है पहा बजट है कि कथाकार का गिर रिम्मागोई का

प्राजमाया हुआ जादू अब उनके निर चढ़कर नहा बोलना वह उम बच्चा को बहलान के स्तर का एक घटिया शगल और मामूली प्रदावायी लगता है क्योंकि अब वह अपनी वयस्कता का नतीजा होकर क्या स वहीं गहरे और कहा गहरे उतर जान जाने सत्य की उम्मीद करता है उसके पाठक की जगती वयस्कता कहानी से धोखे और साया मनोरजन की माँग नहीं करती इसलिए कि वह हल्के मनोरजन की भ्रूणभुनयों में अब तक कहानी से स्वयं को बराबर धोखा देता रहा था और अब वह समझ गया है कि कहानियों से क्या गया मनोरजन अपना ही धीमत् पर स्वयं से क्या गया मनोरजन है और कि खुद से खुद को ही अब तक छुना जा सकता है आखिर और वह इस विडम्बना स अब तक गुजरता रहेगा ? मत कविया द्वारा बनाया गया सनोप वाला रास्ता 'आप ठो मुख होय उस काफ़ी महंगा पडा है वह जानने लगा है कि चार आदमियों की जगह पत्ते बाँटकर खुद ही चारों की चान चलने में सिवाय अपन को लगातार मारने के प्रतिरिक्त और कुछ नहीं है, इसलिए 'नाटक करने वानो और पाठक के साथ 'धान चलने वानो तमाम कहानियाँ साजिश करके उसे अब तक मारती ही रही हैं और इस साजिश में लेखक महज अपन कहाना फामू लो की सुरक्षा के लिए यानी क्यात्मक सज ना के अभाव में अपने व्यवसाय को बचाए रखने के लिए (क्या की समीक्षात्मक प्रतिभा के अभाव में आलोचक भी यही भूमिका निभाता रहा है) इसमें बड़े कौरान स शामिल रहा है जबकि उससे उम्मीद की जाती थी कि सजनात्मकता में आछा पडने के कारण वह किसी या किन्हीं जीवन-सत्यो के तीव्र सकेत नहीं दे सकना तो कम अब कम अपनी इन कमजोरो के लिए पाठक के क्या विवक रो तो भाडा नहो बनाएगा ।

प्राज के पाठक की माँग है कि कहानी में जीवन का दस गहरा अथ या उसकी हैसियत रेखाङ्कित करन वाला कोई बेलग सवाल हा, मतलब उम कहानी सत्य जमी दिखनी नहा चाहिए बल्कि कहानी का सत्य पाठक का अपना सत्य होना चाहिए इसलिए फामू ला जीवी क्याकार अब उमे बचकानी हरकता वाले उन लोगा जैसे लगते हैं जो बच्चा की तरह समझदारों को मिठाई देकर फुमलाने की बात सोचते हैं लेकिन वे अपने हम दाव में प्राज के पाठक के सामने सफल नहीं हो पा रहे हैं और अपनी ही चान से स्वयं ही मात खा रहे हैं

दरअस्त फामू ला लेखक वही होना है जो नए नए जीवनानुभवा में चुकते हुए कही ठहर जाता है जो जीवन के सत्य की प्रामाणिक अभिव्यक्ति नहीं दे पाता और उसके लिए नए मुहाबरे की तलाश में पीछे छूट जाना है कहानियों में उसकी हालत उम अघेड महिला की तरह होनी है, जो बढती हुई उम्र में धवडा कर युवती दिखने के लिए श्रु गारिक प्रसाधना में एक अरसे के बाद हास्यास्पद होने लगती है (जनेद्र को उनकी नाम विज्ञान कहानियों के सदस में इस हादसे से गुजरते हुए देखा जा सकता है और भगवती चरण वर्मा की इस लिहाज से एकदम खस्ता हालत उनके उप्यास

रेखा' में है) स्वयं को नया के समानान्तर देखे जाने की हीस में ठहरे हुए जीव नानुभव के ये लेखक अपनी फामूला दृष्टि के चलते स्त्रा पुरुषों के सम्बन्ध की अभिव्यक्ति अपने 'चरित्रों में कितने सुगुप्तात्मक हो उठे हैं इसकी सहज प्रतीति इनके चरित्र के लेखन से हो सकती है

नयी कहानी में काम सम्बन्धों के सदम से स्त्री पुरुषों के बदलत हुए रिश्तों को आज के परिवेश का नतीजा होकर जिन स्तरों पर अन्वेषित करने की कागिणी थी, उसके साथ प्रामाणिक अनुभव को गति भी जुड़ी हुई थी पिछले खूबों के क्या कारों में सिर्फ काम-सम्बन्धों की अभिव्यक्ति से ही नए क्याकारों का साथ हो लन का मतलब निकाला और अनुभव की प्रामाणिकता की शर्तें अपनी लिखने की चौकी पर बैठकर कल्पना और फामूला दृष्टि की प्रसूति में निभाते रह नतीजा यह हुआ कि इन लेखकों का चरित्र का लेखन फामूला दृष्टि के कारण जहाँ सतही होकर रह गया वहाँ सही वास्तव से कट जाने के कारण जिन्दगी की प्रामाणिक तस्वीरों से भी वह निःशय हो गया गो कि वह प्रामाणिक अपने सर्वांग में अब से पहले भी नहीं था और चाहे भ्रूरे साक्षात्कारों का पूरा मतलब वह न भी रखता हो लेकिन फिर भी उसे जीवन के सही मदर्शों की अभिव्यक्ति में ओछा जरूर मटसूम किया गया और काफी कुछ सजग होकर गैर ईमानदार भी मही बजह है कि यंगपान ने 'पूनों का कुर्ता' और 'तुमने क्या कहा था कि मैं सुन्दर हूँ' में समाज के सच और स्त्रियों के सच को रेखांकित करने की कोशिश करते हुए भी पूरी तरह अपने समाज की उषदी हुई विडम्बना को गहरे न टोहकर उसकी सतही तपतोण ही दो जो उसके बाद की चौट्टी में घाती थी और उसके बाद के आलोचकों में लेखकीय कृतव्य के लिए काफी थी 'तुमने क्या कहा था कि मैं सुन्दर हूँ' में लेखक अपने की तुम वहाँ हो नारि वाली ऊर्जा से नारी यथार्थ को जोहने की काशिश करता तो है लेकिन जाने किस प्रज्ञान प्रेरणा से कहानी के अन्त तक पहुँचते ही अपनी पूरी सोची और मांसलना के बावजूद अपने के 'बाहु मेरे घेर कर तुमको रखे रहे' वाले निष्कर्ष पर टहर कर हाँफने लगता है नतीजा यह होता है कि तुमने क्या कहा था कि मैं सुन्दर हूँ कहानी एक महत्वपूर्ण कृति होते हो सही नाटक में बनल कर रह जाती है गोकि यह अपनी परम्परा में एक महत्वपूर्ण कृति जरूर है 'जनद्र, यंगपान और अपने तीनों ही लेखकों अपने अलग-अलग और तिन्ही स्तरों पर विरोधी रास्ते में सुजरत हुए निष्कर्ष रूप में मिलने एक ही बिन्दु पर हैं एक हरि प्रमन का रूप में यथाय से पलायन करता है, तो दूसरा डाक बैगल में डनान की आर दोड़ पड़ता है और तीसरे के बाहु घेर कर रखे रह जाते हैं नताना ही लेखकों का पान (त्याग पत्र की वृष्ठा को छोड़कर जो जीवन से जुड़ी हुई प्रामाणिक हानर आखिर तक मधन में टिकी रहती है) जिन्गी में कट कर (भाग कर या टहर कर) महज उपजीवी होकर रह जाते हैं वन्हीं सीमाप्रा के चलते अपने

के 'अपने अपने अजनबी का यथाथ मिफ बफ क अघेरे म ही कद होकर नहीं रह जाता, वह यथाथ से बटकर अप्रामाणिक भी हो जाता है और अन्ततोगत्वा अपनी अपोल मे मृत्यु पर सोचे गये सिद्धांत की टिप्पणी या बर्कियत भर होकर रह जाता है यंगपाल के "बारह घंटे चौबीस घंटे घासू बहाने मे ही गुजरते हैं और 'मुक्तिगोघ मे जनेत्र फिर हरि प्रमन्न हो जाते हैं' कहना यह है कि ये तमाम लेखक जिन्दगी मे दूर रह कर जिन्दगी के जिस यथाथ की अपन कथा साहित्य मे प्रस्तुत कर रहे हैं वह आज के जीवन्त सदमों मे प्रामाणिक नहीं है लेकिन मैं यह नहीं कहता कि वह इसी तरह प्रामाणिक अब से पहले भी था

कहानी मे फारमूला का उपयोग बूढ़े केगा मे विजाव लगान जसा है इसमे उनमे बनावटी म्याही तो आ सकती है और सतह मे देखन पर वे जीवन्त भी लग सकते हैं लेकिन वे जीवन्त होने नहीं बूढ़ी दबासा को आखिर टॉनिको के सहारे कब तक उलटने से बचाया जा सकता है

व्यतौत कथा-लेखक कुछ ऐसा लिखना चाहता था, जा पाठक को कुछ दर बहलाए-कुमलाए रख सके यदि वह इसमे सफल होता था तो अपनी कहानी को सायब मान लता था, वही कथा इस तरह उसकी कहानी को सायब कहने मे मनोरजन घमिया की एक पूरी भौड उसके साथ होनी थी

कहानी मे दिनचरसी रखने वाले अपने वक्त के (और उनकी निगाह मे आगे के भी) तमाम लेखक-पाठको की राय जाहिर करते हुए "यह तो सभी मानने हैं कि आख्यायिका वा प्रधान घम मनोरजन है पर साहित्यिक मनोरजन 'कहानी की 'ध्रुव की तान' का रूपक देने वाल प्रेमचन्द भी यह साफ-साफ मान ही चुके थे कि कहानी की खास जमीन और पहली शन-फिर आखिरी चाहे वह न भी हो उसका मनोरजन घर्मा होना ही है 'हम चाहते हैं कि थोडे से थोडे समय मे अधिक मनोरजन हा जाय कहानी के लिए पत्रह बीस मिनट ही काफी हैं" हम कहानी ऐसी चाहते हैं कि वह थोडे से शब्दा मे कही जाय 'उसका पहला ही वाक्य मन को आन-पित कर ले और अन्त तक उसे मुग्ध किए रहे और उसमे कुछ चटपटापन हो, कुछ ताजगी हो और इसके साथ ही कुछ तस्व भी हो वही कहानी सफल होनी है, जिसमे इन दोना मे से—मनोरजन और मानसिक तृप्ति मे से—एक अवश्य उपलब्ध हो।' गो कि तस्व की बात भी प्रेमचन्द ने कहानी मे उठाई, लेकिन मुख्य सवाल के तीर पर नहीं मुख्य सवाल के तहत दोषम दर्जे पर ही और बिना तस्व के-अकृत मनोरजन के निषय पर—भी कहानी की सफलता को उनके यहाँ स्वीकृति दी गई लेकिन सिर्फ तस्व की बिना मनोरजन के कहानी मे पग करने की बात नहीं कही गई अलबत्ता इस'

बात का गद्यांश जल्द रखा गया कि कहानी का मनोरंजन 'साहित्यिक मनोरंजन है' क्योंकि ध्रुपद की सात (कहानी) सम्पत्ति लोचन पुत्र और 'हरमोनियम गायकी में ऊँचे दर्जे की शीज है इसलिए कहानी कहने में, मतलब कहानी के गल्प गिल्फ के स्नेहात्मक नफासत की परबी की गई और जो प्रमचन्द 'वस्तु के कारण अपनी कहा किया में विगिप्त रहा। यही अपने मतलबों में बड़े ही बेमालूम ढंग से रूपधर्मा हो गया, रचनापत्र और भारतीय विचारों में यह परस्पर निम्नव्यप विरोध 'नोट करने लायक चीज है। प्रमचन्द के यहाँ एक काम खरूर हुआ कि दागी नानी के कठ व लोफ श्रुति में जीवित तमाम कथा और दृष्टान्तों को निम्न-पद्धत में ले आया गया। १९०७ (पत्रमोचन रत्न) से प्रारम्भ प्रमचन्द की यह कथा यात्रा १९३६ (कथन) से पहले तब हिन्दी कहानी को 'मनोरंजन' और तत्त्व (स्थापित नैतिकता और धार्मिक जिन धादा) के बीच में लेकर गुजरती रही जिसमें प्रेमचन्द की नया 'नतरज के विधाओं पूरा की रात और कथन (नाम तोर से पूरा की रात और 'कथन) को इस कथा-मुग की रचना में अपवाद रूप में हटा हुआ माना जा सकता है।

प्रमचन्द न कहानी में गल्प गिल्फ की नफासत की परबी की (गो अपनी तमाम २२६ कहानियाँ में इस 'नफासत में नफोस हो जाने का व सद्युत पेश न कर सके) मतलब गिल्फ प्रयोग के लोच से प्रेमचन्द अपने मुहावरों का अतिप्रमग न कर सके) तो तत्त्व की अहमियत को भी रस्ताच्छिन्न किया 'तत्त्व का सेंट ढाँचा या परिभाषा उनके यहाँ अतद्ग वा विषय नहीं रहा वह साफ था अपने पूरे 'गान और पूरे पटन में और फामूल के तीर और फोण व तीर पर कहानी में क्या चीज दी जाय और वह 'चीज यानी तत्त्व कहानी में जिस तरह पेश किया जाय यह भी प्रेमचन्द के यहाँ साफ साफ लिखा जा चुका था 'आदवादा कहता है, यथार्थ का यथार्थ रूप निखान में फायदा ही क्या वह तो हम अपनी भाँसों से देखने ही हैं कुछ देर के लिए तो हम 'न कृतिसत व्यवहारों से भ्रमण रहना चाहिए। भारत का प्राचीन साहित्य आदवादा ही का समर्थक है हमें भी आदवादा ही की मर्यादा का पालन करना चाहिए। हाँ यथार्थ का उसमें ऐसा सम्मिश्रण होना चाहिए कि सत्य में दूर न जान पड़े। 'गर्जक कहानी में प्रेमचन्द का समूचा मुग भारतीय साहित्य सम्बन्धित आत्मा याना तत्त्व का मना रजन के दस्त में बौधकर पाठकों तक बिना नागा पहुँचाता रहा और यथाय से उसका वास्ता सिफ इस बिना पर ही धाँका गया कि वह उससे जुड़ा हुआ सा प्रतीत हो चाह फिर जुड़ा हुआ न भी हो। यह 'तत्त्व मनोविज्ञान की मद में भी कहानी में चला— सबसे उत्तम कहानी वह होती है जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो साधु पिता का अपने कुव्यसनी पुत्र की दशा से दुखी होना मनोवैज्ञानिक सत्य है। (क्याल रहे कि यह यथाय भी आदवादा के लिए ही खडा किया गया है) और समाज सच के नाम पर भी

इस लपेट में हम श्री जयशंकर प्रसाद से लेकर यशपाल तक को देख जाते हैं यशपाल ने तो छंद लिखालिस तत्व चिंतन को कहानी में ऊँचा करते हुए 'मनोरजन' की भी परवाह नहीं की और साहित्य में कलात्मकता को एक बारगी नकारते हुए कथा को विचार यानी 'तत्व चिंतन के प्रचार का माध्यम मान लिया 'मेरी दृष्टि में विचार शून्यता और प्रचार शून्यता एक ही बात है।' अब यह अलग ही बात है कि यशपाल का 'विचार-प्रचार' वह नहीं था, जिसे शुरू के दौर में प्रेमचंद ने प्राचीन भारतीय साहित्य द्वारा समर्थित आदर्श कहा था जो आगे चलकर प्रेमचंद भी 'पूस की रात', 'कफन', 'गोदान' और इस में निचे गए अपने निबंध महाजनी सम्मता व अग्रधरे 'मंगल सूत्र' में इस आयोजित व्यापार से निजात पा लेते हैं 'प्रसाद' का रोमान कहानियों की कविता के दायरे में खींच लाता है, बाबजूद इसके उनकी कथन-विधि और झटकेदार अन्त कलात्मकता में प्रेमचंद के कथा मुहावरे का प्रतिफलण करते प्रतीत होते हैं, लेकिन वे खुद फामूले की एक ही मुद्रा में बंद होकर रह जाते हैं अपवादों की बान में नहीं करता क्योंकि वह स्वयं प्रसाद (मधुमा) में लेकर प्रेमचंद (पूस की रात), 'कफन' (शतरंज के खिलाड़ी) चंद्रधर शर्मा शुलेरी ('उसने कहा था) और यशपाल (मन्त्री 'तुमने क्या कहा था कि मैं सुंदर हूँ) तक में उपलब्ध हैं

मनोविज्ञान का आसरा लेकर कुछ मन बदल की कहानियाँ ('ताई' विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक') जरूर देखने में आती रही और इन रचना पर ५० ज्वालादत्त गर्मा सुदान, चतुरसेन शास्त्री आदि लेखक उस्ताह से काय करते रहे फ्राइड के मनोविश्लेषण को सुनिश्चित दशन के तौर पर अंगीकृत करते हुए इलाहद जोशी ने कथा में कलात्मकता का परिचय दिया लेकिन व्यक्ति के मनोविज्ञान को महीन नजर से कलात्मक सम्भावनाओं में कथा माध्यम से देख पाने की भरपूर कोशिश जैनद्र-अनेय में ही हुई जो अपनी कहानियों (राज 'हीलीबोन की बत्तखें अज्ञय, पत्नी पाजेव जनेद्र) में बदले हुए ससार और बदले हुए मिजाज से पाठका की कथा-रुचि को चुनौती दे रहे थे लेकिन यह चुनौती कलाकार की मुक्ति के नाथ अनेय के यहाँ नेपथ्य में चली गई और जनेद्र के यहाँ नान विज्ञान के साथ सजनात्मकता या रचनात्मक प्रामाणिकता से बटकर महज कहानी की तकनीक होकर रह गई इन बीच कुछ सशक्त मजहबों ग र मजहबों कलमें-भगवती चरण वर्मा अमृत लान नागर, नागाजु न उपेद्रनाथ अश्व, रंगिय राघव, अमृत राय—भी हिन्दी कथा साहित्य को अपने-अपने रंग से समृद्ध करती रही, लेकिन बाबजूद गदल (रंगिय राघव) और पलग (उपेद्र नाथ अश्व) के नागर और अमृतराय को छोड़कर ये तमाम लेखक सभावनाओं भरा कोई फनक कथा-साहित्य को न दे सके नागाजु न के यहाँ कुछ कोशिश जरूर हुई और निराना ने विल्लेमु र वरिहा व कुल्लीभाट में अनुभव की प्रामाणिकता को रेखांकित करते हुए कथा में बदने हुए मिजाज का उसी तरह इजहार किया जिस तरह

का पाठ्येय बेगन 'गर्मा' 'उग्र' न घब पत्रों धानी गृवर म लिया है 'नई कहानी की परम्परा को 'हिन्दी कहानी में तलाशो हुए 'युग की रात और 'वक्रान्त (प्रमच-)' 'मगुषा (प्रसा)' 'मन्त्री और तुमने क्या कहा था' में शुद्ध है ('पूना का बुना का बोल) (मगुषा) 'पाने और 'पत्नी (जन-)' 'रोज (मगु) पत्र (उग्र नाथ मन्त्र) जगो पट्टिया को जाह लेा के यावजूद 'नई कहानी के लिए बाह्य पूर्ण जमीन हम निराशा की कृति बुन्नी भाट म ही उपलब्ध होता है बावजूद धान दुर्म रोमानी पाठ्य व्यक्तित्व के निराशा ही एक ऐसा समर्थ सतन बवि है जिसके यहाँ अपने युग के समर्थ प्रतिनिधित्व के बाद भी नए साहित्य का महत्वपूर्ण सुष्पात का मादा है 1

इस समूचे युग म प्रेमचन्द और प्रगाद के बा- गय तमाम कथा सतन के ध- गता को भी स्वीकारत हुए जा समर्थ कथाकार व्यक्तित्व छामायाने धार कविता- प्रसा- पत्र, निराशा और महादेशी-ती तरह महत्वपूर्ण होकर आए व इनाव- जोगा और जन-द्र, मगुषा और मजप ही ये और ये धारा ही सतन धान उत्तरा- में अनुभव सवेदना की जगह कहानी म उगाह गए विचार का ही निराने लगे

जने-द्र की 'गान' 'विनाम या दूर-दूर लेतना को कुछ और कहानिया का प्रकाशन तिथि को मगर यहाँ तय की चर्चा म नजर-दाज लिया जा सके तो हि-ने कहानी का यह विस्तार मुलतः तोर पर हम इस सदी के पाँच दशक तक सा छोड़ना है और यही स व हलचलें शुरू होती हैं, जो नई कहानी के रचना उमेय और समीक्षा धाचार से जुड़ती हैं

इस बीच प्रेमचन्द अपनी निहायत सा- वस्तु को सादा तरीके से कहने रहे और मन-बदल की कहानियो म भावुकता और धरणा के गहरे रंगो स काम लिया जाता रहा मानवीय रिश्ता को बिल्कुल एजक- बनाकर ही पेश किया जाता रहा । जिस तरह कहानी का घादि, मध्य और धन निरिचन था उसी तरह मानवीय सम्ब-ध म भी निरिचतता ढूँढी गयी और 'कुम्भसनी पुत्र व साधु पिता या इमी तरह के सम्ब-ध विरोधो को खटा करके उनसे बराबर एक ही तरह के निष्प- निकाले जाते रहे धायो जित तत्किता और रामचरित मानस म स्थापित सम्ब-धो को धाय समाजो उत्साह के साथ पेश किया जाता रहा और कहानी के माध्यम से 'शिक्षा देन के लिए 'मनो रजन विधि को स्वीकार किया जाता रहा उसने कहा था' म 'अनुभव-सवेदन' का हल्की चमक- जरूर देखने को मिली, लकिन निष्प- उसमे भी बल बनाए ही दिए गए प्रमाद न असाधारणत्व के चमत्कार म अपनी मुद्रा तय कर ही रखी थी

कहानी के इस समूचे दौर म पहली बार सम्ब-धा और धारणाधा को लेकर

1 निराशा साहित्य नए साहित्य की एक महत्वपूर्ण सुष्पात व उसका धतमान समीक्षा-स्तर'-धी सुरे-द्र

मानवीय तौर पर सदेह और शकाएँ इनाबद जोगी, जनेद्र और अनेय के यहाँ देखने में आईं इस सदन में यशपाल की कहानियाँ म नकार ज़रूर उभरा लेकिन वह एन खास 'मजहब' के तहत होने की वजह से बेहद सपाट होकर ही सामने आया तब की गई आदमी-स्त्री की नियति और प्रतिष्ठित सामाजिक व्यवस्था पर उठने बड़े ही निमम ढंग में खण्डनात्मक रवैया अपनाते हुए आक्रमण तो किया, लेकिन उसे वे कहानी के आंतरिक रचाव से रमा बसा कर नहीं दे पाए, नतीजा यह हुआ कि उनके यहाँ कहा नियाँ में से विचार सत्य को उपलब्ध न किया जाकर 'उपलब्ध किए गए विचार-सत्य के लिए घटना चरित्रा का आयोजन किया गया इसलिए कहानी को कलात्मक दृष्टि इलाचन्द जोशी जनेद्र और अनेय के मुकाबले यशपाल के यहाँ बेहद कम मिल पाई और कहानी जीती जागती सृष्टि की अपेक्षा फारमूले में बंद होकर रह गई यानी कविता में समस्या पूर्ति की तरह इनके यहाँ किसी भी चुने गए विषय पर कहानी लिखने का मंजा हुआ खास तरह का अभ्यास कहानी के तथा कथित ढांचे में चलता रहा फिर भी प्रेमचन्द की अपेक्षा यशपाल में कलात्मकता कुछ अधिक ही रही कलात्मक दृष्टि प्रसाद में भी थी, लेकिन वह गद्य की अपनी आंतरिक बनावट और भाग और कथात्मक सत्य की प्रकृति में औचित्य नहीं ले पाती थी वे कहानी में या तो प्रचुर ड्रामा बंदक करने लगते थे या फिर कविता के चित्र उरेहने लगते थे उनके रोमांटिक बोध से समीक्षक को उतना ऐतराज नहीं है क्योंकि रोमान्टिक अनुभव की भी कहानियाँ आखिर होती ही हैं और दुनियाँ में बहुत लोग ऐसे होते हैं जिनकी जिद बुढ़ापे तक रोमान्टिक बनी रहती है

इस लिहाज से इलाचन्द्र, जनेद्र अनेय ने कहानी के लिए अनुभव की जमीन को नये सिरे से गोडा और तोडा था अवधारणात्मक प्रतिष्ठित सत्य चिन्तन से बटकर आदमी को आदमी के रिश्तों में ही पा सकने की मनोविज्ञान के तहत कौशिल्य इनके यहाँ हुई थी और इनकी कहानियों का ससार पाठका से बदले हुए मिजाज और बदली हुई रसगता की माँग कर रहा था। समीक्षा स्तर पर इसका नोटिस भी लिया गया था जिमसे कहानी के बारे में बदलते हुए समीक्षा रस का अन्दाज होने लगता है और प्रेमचन्द द्वारा 'सभी मानते हैं' के साथ अपनी भी सहमति प्रकट करते हुए कहानी का स्थापित मान मनोरंजन अब हिचकील लेने लगता है। यह तम्प १९३५ के विशाल भारत के जनवरी अंक में अज्ञेय द्वारा जनद्र के कहानी संग्रह दो चिट्ठियाँ पर की गई समीक्षात्मक टिप्पणी से अज्ञेय निया जा सकता है "जो लोग कहानी निफ वक्त बिताने के लिए हों नहीं पढ़ने, उन्हें यह मग्नह अवश्य पढ़ना चाहिए। लेकिन इस टिप्पणी से यह अनुमान कर से जाना कि कहानी को लेकर पाठक और आलोचक के नज रिए में एन बारगी कान्तिवारी बदलाव आगया होगा खुद को गलत नजरिए के हवाले कर देना होगा, क्योंकि इस टिप्पणी से कहानी के लिए जिग समझदारी की माँग की

गई थी वह बेलाग नहीं थी, इसलिए कि इस टिप्पणी में जो लोग कहानी सिर्फ वक्तूचिताने के लिए ही नहीं पढ़ते, म 'हो शब्द अभी भी मनोरजन धर्मियों को ग्रहणित देकर उबकाता चलता है। गो बड़े ही नम्र ढंग से यह गुजारिश जरूर की गई था कि कहानी पढ़ने में पाठक मनोरजन प्राप्त हुए भी कुछ गम्भीर रत्न अटपट्यार कर सके तो बेहतर हो यानी कहानी के बारे में इतना बदलाव जरूर आ रहा था कि वह अब महज मनोरजन की ही चीज नहीं है उसे गम्भीरता से लेने की भी अपेक्षा है। चूंकि बावजूद बदलें हुए अपने कथात्मक कोण के लेखक कहानी में 'मनोरजन की पूरी तरह चुनौती देने में आइवस्त नहीं हो पाया था इसलिए उसके यही मनोरजन के चलते समीक्षक और पाठक ही उसे क्याकर गम्भीरता से ले पाते हैं। 'कि' जनद्र आय की कहानियाँ प्रचलित कहानी ढांच का अतिश्रमण कर चुकी थी और खाम तोर पर जनद्र की कहा नियाँ तो उस समय की कहानी परिभाषा में नहीं आतीं और यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि तत्कालीन कहानी के शास्त्रीय स्वरूप से एकत्र लटा हुआ जनद्र का कहानियाँ की कहानी मानकर ही पढ़ा जाता रहा क्योंकि प्रसक्त-प्रमाद ने हिन्दी पाठक की कथा का जो स्टूचर दिया था जनद्र की कहानियाँ उससे एकदम भिन्न थीं।

सन् ५० के आस-पास से रचना स्तर पर कहानी का सरगमियाँ शुरू होनी है जिसका सबूत १९५४ में नितान्त कहानी की पत्रिका 'कहानी' के पुनर्प्रकाश में मिलता है और 'कहानी' के सम्पादक श्रीपत राय का यह कथन युद्धोत्तर हिन्दी कहानी में जो गतिराय उत्पन्न हुआ गया था वह अब जैसे टूट चला है और स्वस्थ प्रवृत्तियाँ बलशाली हो चली हैं। ' भी इस विचार की पुष्टि करता है और यह ५४-५५ का समय ही नई कहानी' के स्वरूप ग्रहण करने की शुरुआत का समय है। जिसने सृजन स्तर पर पुरानी कहानी से बदलाव के कारण, समीक्षा स्तर पर अपने अस्तित्व की पहचान के लिए माँग करता शुरू कर दिया था और १९५६ के 'कहानी' में नववर्षीय में श्रीपत को एक दूसरे ही आदाज में इस तथ्य की पुष्टि करनी पड़ी थी—' बीच-बीच में मुझे सदेह होना लगता है कि कहाँ में समय की गति से पीछे तो नहीं हूँ और इस कारण मुझे हिन्दी कहानी में वह उन्नति परिलक्षित नहीं हो रही है। जिसकी प्राप्ति चाहिए, यह स्वीकार करने में मुझे आपत्ति नहीं कि कहानी का स्वरूप बल रहा है और मैं क्षायद अपने पुराने सस्वारा के कारण कहानी से वह माँग कर रहा हूँ जो आज उसका सत्य नहीं है। ' कहानी में आया हुआ बलाव ५७-५८ तक समाप्ति स्तर पर पहचान जाने लगा था—कम घट कम उसकी पहचान के लिए समीक्षक उत्पन्न जरूर थे। लेकिन ६० से लेकर ६२ तक 'नयी कहानियाँ' के हाणिण पर नई कहानी की पहचान में जा निवचन मिले गए और उनमें जा समस्याएँ उठाई गईं। उनमें मनोरजन के बावजूद कहानी समीक्षा में गुणवत्ता तोर पर एक महत्वपूर्ण पृष्ठ जुड़ा और नयी कहानी के तोर पर ६२ से लेकर ६६ तक उत्तरेजनापूर्वक कहानी पर विचार होना रहा,



जिन्दगी के 'फूलों और दबावों को कलात्मकता के साथ क्या-स्तर पर अभिव्यक्ति दे रहे हैं और हैं अनेक लेखक—गंगाप्रसाद विमल, महोप सिंह, धामता नाथ गोपाल उपाध्याय, हूपीवेण—जो आधुनिक जिन्दगी और उनके नतीजों को कथात्मक अभिव्यक्ति बनाकर पेश कर रहे हैं

विद्व-विद्यालयों में कहानी-समीक्षा की हालत यह रही कि उसके लिए किसी स्वतंत्र समीक्षा तंत्र की ज़रूरत तक महसूस नहीं की गई बल्कि इसकी एवज में नाट्य शास्त्र की शास्त्रीयता को ही कहानी के लिए भी स्वीकार कर लिया गया—कथानक के उतार-चढ़ाव, प्रयत्न सघन चरम सीमा, अन्त या फनागम को साज कर ही उनसे समीक्षा स्तर पर कहानी सत्य को पाने का सतीप कर लिया गया कहानी और नाटक के प्रकृति भेद को खलाशित न करते हुए उनमें परस्पर समानता विभिन्नता को महज इस लिए पूछ लिया जाता रहा कि इतिफाज्ज के दोनों ही गद्य रूप हैं कहानी समीक्षा का अन्तः परीक्षाप्राप्त पूछ जान बाल प्रश्नों की इस विदग्धता से ही लगा लिया जा सकता है कि अमुक कहानी किस तरह नाटक बनाई जा सकती है और अमुक नाटक किस तरह कहानी इस समीक्षा पद्धति के नाटक की कहानी का यह मामूली सा मनो रजक पहलू है। जिस तरह द्रष्टा से इनके यहाँ सृष्टि उत्पन्न होती है, उसी तरह तमाम समीक्षा पद्धतियाँ (कुल मिलाकर एक ही) एक ही समीक्षा पद्धति यानी भरत मुनि के नाट्य शास्त्र का नतीजा हैं

कहानी समीक्षा का यही चौबटिया विवेक घटना प्रधान चरित्र प्रधान या प्रभाव प्रधान की जरीबा से कहानी का भूगोल पढ़ता-पढ़ाता रहा और इस तरह नितान्त विद्यार्थियोंचित्त लहजों में कहानी का समझना-समझाना चलता रहा

कहानी सुनने सुनाने से लेकर पढ़ने पढ़ाने तक तो जीवन से जुड़ी होन के कारण किसी तरह महत्व पा गई लेकिन कक्षाओं में उस पढ़ने-पढ़ाने और विद्यार्थियोंचित्त उसकी समीक्षा स्थिति को देखकर तो यही अन्दाज़ होता है कि उसमें गम्भीर विवेक क चुनाव के तहत, पाठ्यक्रमों में अपना स्थान नहीं बनाया उसे तो कदाचित्त यही सोचकर पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया जाता रहा, ताकि छोटा कक्षाओं में विद्यार्थियों का देना भक्ति और चरित्र निर्माण की शिक्षा दी जा सके और ऊँचा कक्षाओं में कविता भाषा विज्ञान या समीक्षा के मूल प्रकार टटोलने-टटोलने विद्यार्थियों को थकी हारी ऊनी तद्विषय की कुछ मनोरंजक सामग्री मिल सके हालांकि बिहारी पद्माकर के रचित प्रसंग गत दोहा और कविता से भी उनका कुछ कम मनोरंजन नहीं होता 'बहरहाल विद्व विद्यालय कक्षाओं में समूचे पाठ्यक्रम में से जिस पाठ्यक्रम को सर्वाधिक अग्रगणीयता से

पड़ा-पड़ाया गया, वह कहानी और उपवास ही है और उपवास से भी वहीं उपास कहानी

आज भी कहानी पढ़ने समझने के स्तर से उठकर अपने लिए साधने विचारने का स्तर चाहे समीक्षा क्षेत्र में पा गई हो, लेकिन विश्व विद्यालयों में अब भी उपवास स्थिति खास कुछ बेहतर नहीं है, इसकी वजहों यह है कि विद्यार्थी इन दिनों के उपवास को उठाकर देख लिया जाय उनमें सिवाय इस तथ्य के प्रतीति के कि 'उपवास' म सकलित समस्त कहानियों में से आप किस कहानी का सबसे अच्छा कहानी कोई दूसरा प्रश्न नहीं होगा, और यह ऐसा प्रश्न है जिसके उत्तर उपवास कहानियों में से विद्यार्थियों को कोई भी एक कहानी पढ़ने का उत्तर देना है और उसे का सबसे अच्छा सिद्ध कर दिया जाना है कहानी और उपवास पर नए नए रीति रीतों में यह है कि उनके चर्चा के स्थल जो परीक्षा में व्याख्या करते व तौर पर मन्नासित होते हैं कविता की तरह उनकी (लेकिन कविता के मुताबिक उपास चतुर्धा दुःख में) व्याख्या कर दी जाती है और कृति को उठाकर रख दिया जाता है, बतौर आशाचना के कुछेक प्रश्न बता दिए जाते हैं (गोया आशोचना कृति में से नहीं कृति में कुछ चर्चा होती है) जिनमें कथानक को याद रखना काफी कुछ जरूरी होना है, देखना पड़े है कि विश्व विद्यालयीय तर्ज की कहानी की यह पढाई और उप पर विचार करने तक चलती रहेगी और कि साहित्यिक समीक्षा में भी इसका सरुपण पूर्ण रूप से पाएगा या नहीं ? विद्यार्थियों की सुविधा के लिए समीक्षा के नाम पर उपवास प्रश्नोत्तरी कोटि का उपजीवी लेखन हिन्दी में विकसित रहा, और विद्यार्थियों को गास्त्रोय समीक्षा विधि से मदद मिलती रही, उसने साहित्यिक रूपों में उपवास में भी कहानी को सस्ता बना दिया और जिससे कहानी मात्र का उपवास ही रही और जिसका छात्रियोजा अध्यापका की नई पीढी को भुगतने के लिए विद्यार्थियों के लिए लिखी गई इस सरल और तत्वबोधक उपवास कहानी को जहाँ सस्ता और हास्यास्पद बनाया था वहाँ एक उपवास ही एक और अर्थ में सवधा मौलिक और ताजगी लिए हुए उपवास के उपवास के साध्य का मतलब रखते हुए कथा विचार के समीक्षा के लिए उपवास नितान्त बजर भूमि मिली जहाँ वह युग बोध के समानान्तर उपवास उपवास उपवास और वाटने के लिए अपने श्रम की साधकता महसूस कर सकता था कि आसपास की हवा में जा कर ही उपवास उपवास उपवास उनकी परवाह नहीं भी का जा सकती है

लीबिस ने सिर्फ पाठकों के बारे में ही लिखा है कि उपवास उपवास उपवास ऐसे हैं, जो किसी कृति को दुबारा नहीं पढ़ने, सज्जित उपवास उपवास उपवास के 'पाठ-सच' तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उपवास उपवास उपवास

जमाना तादाद वाले पाठकों के माजन के हैं, चाहे उनके बारे में यह तथ्य कविता की बाबत उतना सही न भी हो लेकिन उपयोग और वास्तव छोटी कहानी के बारे में व जमाना तादाद वाले पाठकों की ही भूमिका ग्रन्थ करते हैं कविता की समीक्षा करते समय इष्ट कविताओं को चाहे इन्हें तौर पर एक बार और देना सेना के पक्ष करते हैं, लेकिन कहानी की समीक्षा के लिए वे इन समीक्षा के नित्य दायित्व का हिस्सा नहीं मानते और मानने भी नहीं तो क्या समीक्षा में इसका स्थान पेश नहीं करते नतीजा होता है कि स्मृति के नाखून टोहने हुए यत्न-पत्रक पढे हुए कहानियाँ के पुँषन से क्या-समीक्षा के दायित्व का निर्वाह करने रहते हैं इस तरह उनकी समीक्षा जो दे पाती है वह कहानियाँ का मक्षेप और सतही खाना ही होता है

कहानी, समीक्षक के दायित्व में अग्रण लिए जिस पाठ प्रक्रिया या पाठ-विधि की माँग करती है, वह पाठ-विधि जमाना तादाद वाले पाठकों की 'पाठ-विधि' से भिन्न प्रवृत्ति की होगी, हालाँकि इस पुँषन को महसूस करते हुए कि 'कथा-समीक्षा' की 'पाठ-विधि' उसकी दृष्टि सामर्थ्य का ही नतीजा होगी इसलिए उसके अलग अलग स्तर हाने ही, लेकिन इस खान के साथ भी कि क्या को सही पाठ-विधि न केवल समीक्षक की दृष्टि सामर्थ्य का इजाहार और नतीजा ही होगी, बल्कि उसकी दृष्टि सामर्थ्य का वह इजाफा भी होगी

इसीलिए मने क्या की पाठ प्रवृत्ति की पहचान व उसके माध्यम से क्या-सत्य को 'उपलब्ध' करने पर जोर दिया है, यह इसलिए भी कि एक तो इस समीक्षा विधि के अन्तर्गत हम क्या-सत्य और सत्य को वारीकी से परख पाते हैं और उसकी संख्यीय मान्य के करीब-करीब समझने की पुँषन में रहते हैं दूसरे यह कि इस समीक्षा-विधि के अभाव में हम कहानी सत्य की वचानिक ढंग से परीक्षित कर पाने में लगभग असफल रहते हैं और तब हमारे भटक जाने व फलक देने अथवा क्या-सत्य को सर हदो पर ही खूभते रहने की ज्यादा आशा बनी रहती है तब हम अक्सर क्या विचार की सही ढंग से हटकर अपने अस्तित्व को प्रमाणित करने की कुछ ऐसी हठ-कम्प स्थिति में पड़ जाते हैं जमी कि वह पहलवान जिसका रिंग में अपने प्रति हठो पर बग नहीं चलता और विचार-सूक्ष्मता की स्थिति में वह 'रफो' स ही उनमें जाना है एक मौजू उदाहरण इस सभ में म प्रस्तुत करता है जो क्या-विचार स हटकर नितान्त व्यक्तिगत छोटीकामी का मतलब पेश करता है और जो साहित्य-विचार की चीज कम व्यक्तिगत दोस्ती दुश्मनी की चीज जमाना है "फिर भी अद्रुष्ट जो को यह पढ़कर कम सतोप न होगा कि जो चौटान जो उनके कभी प्रगसक नहीं रहे, उनके अनुमार भी वह अपने आप में एक मुखम्मल कहानी है उनकी आलोचना भी अपने आप में मुखम्मल रहती है—किसी भी प्रश्न के लिए एकदम अन्ध आज किसी के लिए भी 'अपने आप में एक मुखम्मल कहानी लिखना आसान ही गया है जिसे पत्र

'साधारणतया अच्छे कहानी' कहने में किसी को भी बठिनाई न हागी और चौहान जो जेमे अच्छे भयवा साधारणतया अच्छे आलोचका को सतोप भी हो सकता है इस उदाहरण में गौर करने लायक एक बात यह भी है कि कथा की बगानिक समीक्षा, कथा की पहचान से तो भटक कर रह ही जाती है उसका उद्देश्य भी या तो प्रशंसा करना रह जाता है, या फिर दुःसनी निभाना इस दोस्ती-दुःसनी का दोस्ती-दुःसनी को उतना सामियाजा नहीं भुगनना पडता, जितना कि स्वयं समीक्षा को और तब विवेक सम्मत प्रामाणिक आलोचना की अनुपस्थिति में प्रति साधारण रचना को श्रेष्ठतम होने का प्रमाण-पत्र दे दिया जाता है और थोड़ा रचना को प्रति साधारण होने का। काव्य-समीक्षा में भी पिछले दिना यह नाटक देखने में आया था, जब सतोप कानोडिया की 'श्री आकाशी' को उत्कृष्ट रचना ठहराया गया था और 'उवसी' को उसके मुवाबले स्तरहीन नतीजे के तौर पर आलोचक प्रशंसा और निन्दनों की बोटिया और खेमो में बँट गया है उससे विवेकशील समीक्षक होने की आशा करना बेमानी होता जा रहा है नई कहानी में अनुभव की प्रामाणिकता और रचना प्रक्रिया में निस्संगता की पैरवी जो समीक्षक करते हैं, क्या वे खुद भी अपने समीक्षा विवेक में प्रामाणिक और निस्संग हैं ? हिन्दी की नई कथा समीक्षा में इस प्रश्न के प्रति यदि विवेक पूर्ण रूप नहीं अपनाया गया तो कथा की समीक्षा को बदतर स्थिति में गुजरना पड सकता है

लेकिन इसका मतलब यह नहीं लिया जाना चाहिए कि सम्प्रति इस सदेम में स्थिति विशेष स्वस्थ ही है नई कहानी की समीक्षा में कथा-विवेक की नई गुरुप्राप्त करके, जहाँ तत्व परक कथा समीक्षा से स्वयं को मुक्त कर कथा-विचार के लिए नयी सम्भावनाओं और नए आयामों में उपलब्धियों के सकेन दिए थे वही से व्यक्तिगत सम्बन्धों के निर्वाह के खतरे में भी वह पड गई है और कौन कह सकता है कि यह नया खतरा पुरानी तत्व परक कथा-समीक्षा के खतरे के मुवाबले उ यादा खतरनाक साबित न होगा कुछ समीक्षकों ने तो राजनतिक दन-बदल वाला रवया अपनाकर नई कथा की समीक्षा को खासा प्रजातंत्र (?) बना दिया है, मतलब वे कल तक प्रशंसकों के जिस खे में से 'रमद पा रहे थे आज उनसे 'तोडा-टूटन कर ली है और पूरी सम्भावना है कि आने वाले कल में वे अपने पुराने खे में ही लौट जायें और आज जिनकी प्रशस्तियाँ लिख रहें हैं कल उन्हे के खिलाफ कलम का जे हाद भी छोड दें

कविता की समीक्षा के मुवाबल कथा-समीक्षा कम काफी कुछ मुस्विल है, इसलिए कि छोटी कविता के अर्थ-सम्भार और सवेदन विस्फार को समीक्षा बुद्धि की जिस लघु डग से विश्लेषण स्तर पर पाया जा सकता है उससे कथा को नहीं यानी छोटी कविता अपनी अर्थ प्रकृति और विशिष्ट रूप विश्लेषण के लिए जिस समीक्षा विवेक की मांग करती है, उसमें वह विस्तार और समग्रता चुकती है, जा कथा समीक्षा के लिए जरूरी है एक सीमित दूरी तक नजर गडा कर छोटी कविता के रचना सगठन को

महोन रेखा के साथ भी धुंझा जा सकता है, लेकिन क्या-समीक्षा में उस कौशल की दरकार है, जो हवा में उड़ती पाँच-सात गैंग को त्रम से घघर में ही रोने रगता है और माहोन में उनके समग्र प्रभाव को रेखाङ्कित करता उनका है, छोटी कविता और छोटी कहानी प्रवृत्त्या एक दूसरे से अपने रचना-मिजाज में भिन्न हैं उन दोनों का अन्तर अपने-अपने माध्यमों का अन्तर है दोनों ही साहित्य रूपों को अपने-अपने माध्यमों के अनुकूल अलग-अलग समीक्षा बुद्धि के अनुशासन की दरकार है

परम्परा से घती आ रही वाग्य-समीक्षा के चर-मुस्य छोटी कविता को समझने में किसी स्तर पर कारगर हो सके हैं होने भी हैं—किसी हद तक कविानुमा कहानियों के लिए भी—इसलिए कि कविता में अभी तक भी अपनी आदिम प्रवृत्ति में आमूल परिवर्तन नहीं किया है—गो कि कहानी ने किया है, ऐसा मेरा कहना नहीं है—लेकिन क्या-समीक्षा में इन फामूला का कोई बज्रूद नहीं रह गया है वह इसलिए भी कि बावजूद अपने परम्परागत कहानी नाम के उसने पाठक से अन्तिमारी प्रेषणाएँ कर स्वयं को बिल्कुल अलग और नए संदभ में प्रतिष्ठित कर लिया है इस की बावत में निख भी चुका हूँ इसलिए कविता की समीक्षा के पमान से (और चली जाती हुई कहानी समीक्षा के पमान से भी) कहानी समीक्षा का भी काम लन वाले मित्र एक औसत समीक्षा-पमान का गलत जगह स्तेमाल कर रहे हैं अनेक बज्रूदों में से एक बज्रूद यह भी थी कि ऐसे समीक्षकों के नहीं कविता समीक्षा-पद्धति से क्या-विश्लेषण का काम लिए जाने पर फतवों और भविष्य वाणिया के लिए काफी गुजाश्श रही और इस बज्रूद से यह भी रहा कि इन्हे क्या समीक्षा के तहत अतिविरोधी वक्तव्यों के लिए भी पर्याप्त मौका मिला बावजूद इसके कि मित्रों ने कविता समीक्षा-पद्धति की कहानी पर लागू करने के समयतन में अर्ध विदेशी लेखकों के उदाहरण भी एकत्र कर लिए, लेकिन इससे भी उनकी समीक्षा पद्धति गर जुम्मेदार ही रही

कविता की समीक्षा-पद्धति को बतौर क्या-समीक्षा पद्धति के स्तेमाल करने का साफ मतलब यह है कि आप क्या की सृष्टि को मौलिक होकर उपलब्ध कर पाने में कहीं मोझे पड़ रहे हैं कविता की अन्विति और काय को गह पाने के लिए समीक्षा बुद्धि के जिस छल-स्फुरण से काम चलाया जा सकता है, क्या सत्य को धुंझने में वह नितांत नाकाफी है

अगर किसी विदेशी समीक्षक ने किसी विदेशी कहानी पर छोटी कविता की समीक्षा-पद्धति की आजमाइश की है तो इसीलिए वह आपके यहाँ भी क्या की अन्तिम सही समीक्षा-पद्धति मान ली जाय ? मेरी निगाह में यह क्या-विचार की सही 'पहचान नहीं होगी और हो सकता है कि मैं गलत हूँ' छोटी कविता की विश्लेषण-पद्धति को छोटी कहानी के सत्य की पान में स्तेमाल करना एक प्रयोग तो हो सकता

है और प्रयोग के लिए साहित्य में पर्याप्त छूट भी है लेकिन यह कहीं जरूरी है कि हर प्रयोग सफल ही होता है लेकिन जो जरूरी है वह यह कि भ्रमकल प्रयोग से सबक तो लिया ही जा सकता है और छोटी कहानी की 'पहचान के लिए मित्रा ने जो सबक लिया है वह यह कि एक के यहाँ के असफल प्रयोग को अपने यहाँ न सिर्फ सफल साधक प्रयोग ही मान लिया है बल्कि हिमायन करते हुए उस समूची कथा-समीक्षा के लिए ही 'आदर्श' मान लेने के लिये कहा गया है

अगर कथा की समीक्षा-पद्धति को नयी धुर्रमान होनी ही चाहिए और वि उसमें आपसी विचार-क्षमता भी कहीं रेखाङ्कित हो, तब यह जरूरी है कि कविता की समीक्षा-पद्धति जिसकी कि दोष और सशक्त परम्परा है और जिससे किसी स्तर पर कहानी सत्य को 'टोहन' में पितामो ने भी काम लिया है मुख्य तौर पर कथा विचार में उससे निजात पा ली जाय, गो मदद उसमें ली जा सकती है और मदद सगीत और स्थापत्य कला से भी ली जा सकती है लेकिन वह मदद ही होगी और उस उतना ही मानना भी चाहिए प्रतीका विम्बा, लयकारी, भाषा की कवित्तमयता और रामानी अनुभूतिया पर रोम्पना और उहे अपने कथा विचार के लिए खास 'आयुष्य बनाना, कहानी से कविता की मांग करना है और ऐसे समीक्षका की तादाद काफी है जो न सिर्फ कहानी से बल्कि हर साहित्यिक-विधा से कवित्तानुमा हो जाने की मांग करते हैं, उपन्यास का महाकाव्य कहते हैं और कहानी की गीत से तुलना करते हैं गो पितामो के मुकाबले उन्होंने थोड़ा सस्कृत होने का सबूत जरूर दिया है, इसलिए कि पितामो ने तो उपन्यास को बल और कहानी का मेडक बताया था

दरअसल, इस नस्ल के समीक्षक कविता की समीक्षा-बुद्धि से इस कदर आक्रान्त हैं कि साहित्य के किसी भी दूसरे 'रूप को मौलिक' होकर पहचान ही नहीं पाते कथा के भाव-विचार को जोड़ने के लिए प्रतीक विम्ब, लयकारी और भाषा की कवित्तमयता से जा समीक्षक मुख्य काम लेते हैं, उनके हाथ कथा-सत्य के नाम पर कथा का बाहरी चौखटा ही लगता है मनोरंजन तो तब होता है जब खासे वस्तुवादी समीक्षका को इहाँ रूपवाणी नुस्ता से कथा-सत्य को टोहन हुए देखा जाता है और साथ ही रूपवाणी खतरा से आगाह करते हुए भी पाया जाता है

जो समीक्षक कविता और कहानी में दूर तक प्रभेद नहीं कर पाते, वे ही कविता की समीक्षा-पद्धति को कहानी के लिए भी स्टेमाल करने की सिफारिश करते हैं जबकि सत्य यह है कि बावजूद अपने पूरक सत्या के कविता और कहानी के माध्यमा की अपनी अलग-अलग मार्गें हैं और समीक्षा-विचार में पृथक्-पृथक् बोलो से बूझे जाने की उहे जरूरत है यहाँ तक कि उनकी समीक्षा की शब्दावली और मुहावरे भी दो छोरों की चीज हने ? इसलिए कि कहानी के भाव विचार को मतलब उसकी सदिलप्टता को विश्लेषित करने के लिए चली आती हुई कविता की समीक्षा शब्दावली

नावाफी है और वह नावाफी भय तो छुद कविता को विद्वेषित करने में भी होती जा रही है

नयी कथा की समीक्षा शुरूआत में कविता के समीक्षा मुहावरे से मदद ली जा सकती है, लेकिन यह मदद एक दरम्यानी इन्तजाम ही है वह भी तब तक, जब तक कि कहानी की प्रभाव पूर्ण समीक्षा-विधि विकसित नहीं हो जाती या उन ऐकेश्वर-वादियों को इस समीक्षा विचार से कोई फरक नहीं पड़ता जिनके यहाँ समूचा ब्रह्माण्ड एक ही घट में निवास करता है तब अगर साहित्य की तमाम विधाएँ कविता में ही आयात हो तो हो और कविता का ही समीक्षा-विचार कहानी को भी बूझ ले जाय तो वह क्यों न बूझ ले जाय ?

और जो मित्र पाश्चात्य समीक्षका की कहानी-विचार में दुहाई देते हैं उस सदर्थ में इतना ही समझ लेना काफी होगा कि हिंदी नई कहानी के पृथक् समीक्षा-विचार की तरह छोटी कहानी के लिए वहाँ कोई पृथक् समीक्षा-विचार ईजाद नहीं किया गया है, और न तो कहानी पर ही हिंदी नई कहानियों की तरह समीक्षा चर्चा जोश-खरोश के साथ हुई है वहाँ तो सिर्फ उपन्यास की समीक्षा-बुद्धि से ही मुख्यतः कहानी को समझने की कोशिश की गई है गो यह अलग बात है कि गद्य रूप उपन्यास और कहानी को प्रवृत्त्या एक दूसरे के जातीय होने की वजह से एक दूरी के बाद या कि एक दूरी के पहले दूर तक अलगया नही जा सकता, इसलिए यह आपत्ति उठाना तब सगत नहीं होगी कि ई०एम० फारस्टर ने जो विधि उपन्यास-विचार के तई अपनाई है उसको कथा की समीक्षा-बुद्धि के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता लकिन इतना तो जरूर कि उपन्यास के अन्तगठन पर विचार करने की अपेक्षा कहानी के अन्तर-संगठन को विश्लेषित करने के लिए कुछ ज्यादा महीन हान की जरूरत तो है ही क्या फरक पड़ता है, अगर जिस विधि से आपने छोटी कहानियों को विश्लेषित किया है उसी विधि में किसी दूसरे विदेशी समीक्षक ने भी लेकिन फर्क इससे जरूर पड़ता है कि एक विदेशी समीक्षक को अपनी राह चलता देख (या उम्मी की राह खुल चलते हुए) उसके नाम का समर्थन पाकर आत्म विश्वास में आप इतन गहरे उतर जायें कि कथा के भौतिक समीक्षा-विचार को ही नकार उठें शायद यह बात कम ही लोगों के जानने की नहीं है कि अपने समर्थन में बावजूद किसी विदेशी नाम के अगर आपकी 'बान नहीं बोलती तो फिर वह नही ही बोलती आप चाहे बराबर बोलते रहे और कभी-कभी तो समझाएँ चुप हो जान में ही होते हैं (लकिन समझाएँ से चुप होना भी कितना मुश्किल है ?)

कथरीन मन्सफील्ड की कहानी 'भक्ती की समीक्षा में यदि ए० डल्ल्यू० वेट सत व बी० साहेबिच ने छोटी कविता को विश्लेषण-विधि से काम लिया है तो उसकी प्रयोगात्मकता की सराहना की जानी चाहिए । लेकिन समूचे कथा साहित्य का विश्लेषित

हर पाने में उस पर इतना नही ही किया जा सकता प्रतीक विम्ब, लयकारी, रूपक, अयोक्ति और भाषा की कवितमयता कथा-समीक्षा में मानक नही हो सकते और प्रगट हो सकते हैं तो सिर्फ उसी तरह जिस तरह कथानक, चरित्र चित्रण, कथोपकथन आतावरण आदि और इसीलिए कथा को गाढी पहचान देने में भी वे सक्षम नही होंगे। यो ये नुकते ही क्या, सिर्फ भाषा के जगिए ही कहानी की अन्त सरचना से वाकिए होने की कोशिश की जा सकती है लेकिन कोई भी एक नुकता या कि कुछ नुकने समस्त कहानी सत्य की पाने में कारगर सावित नही हो सकते इसलिए जरूरी है कि कहानी की 'पाठ प्रक्रिया' के सहारे लेखनीय रचना प्रक्रिया से जुडते हुए समूचे सदन को परीक्षित करके, कथा को समझने में जा समीक्षा 'पहचान दी जायगी वही सही 'पहचान होगी

प्रतीक, विम्ब, रूपक, लयकारी और अयोक्तियों से कथा-सत्य को जोहना रचना के केन्द्रक भँवर में न उतरकर सरहदो पर ही ठिठक जाना है चाहे उस आइरिश लेखक की इस बात से आप नाइतिफाकी भले ही रखें कि कहानी सरहदो पर लडी जाने वाली गुरिल्ला लडाई है लेकिन इस बात से नाइतिफाकी कसे रख सकते हैं कि प्रतीक विम्ब, अयोक्तियों में कसी-वैधी समीक्षा बुद्धि कथा सत्य के केन्द्र में न पठकर सरहदो पर ही गुरिल्ला युद्ध करती रहती है ये नुकते छोटी कविता के सत्य को पाने में ता मदद कर जाने हैं वह इसलिए कि कथाकार की अपेक्षा की अपने सत्य पर सीधा आक्रमण नही करता, वह बडे शिष्टता और औपचारिक आडम्बर के साथ उसे अभिव्यक्ति देता है और कभी-कभी तो वह प्रतीक-विम्बो की ही पहेलिया बुझाता रहता है, सत्य को स्पष्ट ही नही करता कहानी में इसके लिए गु जाइसा ही कहाँ है ?

दरअसल, प्रतीक-विम्बा और लयकारी के सहारे रचना सत्य को बुझने वाली समीक्षा विधि सरल पडती है और जोखिम से कतराने वाले समीक्षक इस राह चल निरन्तर हैं, खासकर वे समीक्षक जो प्रेमचन्द के इस जुमले "मनुष्य जीवन की सबसे बडी लालसा यही है कि वह कहानी बन जाय और उसकी कति हर एक जवान पर हो से प्रेरणा पाकर कथा समीक्षा में बहुत जल्दी कहानी हो जाना चाहते हैं और कहानी समीक्षा की बेहद छोटी उम्र में वे अभी से ही कहानी हो भी गए हैं उनके परस्पर विरोधी वक्तव्यो और अक्सरवादी समीक्षाओं ने कथा पाठक के पहाँ उडू सापर को ये पक्तियाँ ताजी करदी हैं— कर रही है इस कदर मसहूर बदनामी मुझे 'जिहे वह इन समीक्षकों की समीक्षाओं का खयाल घाने ही गुनगुनाने लगता है

इन नुकता से कहानी पर सोचने में आप एक आघ 'मक्खी तो मार सकते हैं लेकिन क्या के सखिल्ट और समग्र सत्य को उपलब्ध नही कर सकते जिसे उपलब्ध करने के लिए बेहतर रास्ता पाठ-प्रक्रिया ही है अमरकान्त की कहानी दोपहर का भोजन' एक साधारण मध्य बित्त परिवार की गरीबी, बेकारी और भुखमरी से गुजरने

की कहानी है, शुरू में यह कहानी गरीबी और भ्रष्टमयी की उतनी नहीं लगती जितनी कि सिद्धेश्वरी के दुर्भाग्य की पाठ प्रक्रिया के सहारे कहानी से गुजरते हुए यही लगता है कि लक्षक पूरे परिवार जना के इलावा कुछ अनिश्चित संवेदना सिद्धेश्वरी के प्रति पाठक में सुरक्षित करना चाहता है उसका खाली पेट पानी पी लेना फिर बेहोश हो जाना, एक दूसरे से सारे परिवार को जोड़े रखना और झूठ बोलकर एक-दूसरे में दिल चस्पी जगाना और खुद का अंत में प्राची रोटी खाकर ही अंधभ्रष्ट चर्चों के लिए अमू कहाना लेकिन यह कहानी का ऊपरी ढाँचा ही है, सचें पाठ-प्रक्रिया से गुजरते हुए जिस बिन्दु पर आप रुकते हैं वह मु'गी चर्चिका प्रसाद का पूरा कहानी से कटा हुआ बड़ा आनन्दमय सा वाक्य है— 'गयागरण बाबू की लड़की की शादी तय हो गई । लड़का एम०ए० पास है ।' और लेखक की इस टिप्पणी के साथ कि 'सिद्धेश्वरी हठात् चुप हो गई आप भी चुप हो जाते हैं और सोचने लगते हैं और हठात् कहानी से कटा हुआ मु'शीजी का वह वाक्य क्या का अर्थ-ही हो जाता है और समूची कहानी को एक सूत्र में पिरोता हुआ उसे सबका अलग-अलग सार्थ में प्रतिष्ठित कर देता है और तब यह कहानी गरीबी, बेकारी और भ्रष्टमयी की कहानी न रहकर, जिसके लिए यह सब सहन करके भी आश्चर्य रहता जा रहा है, उस बाहरी प्रतिष्ठा को कहानी हो जाती है उसी बाहरी प्रतिष्ठा की जो प्रेमचंद के यहाँ 'शोदान' में हारी की मरजादा है "और सब न मानूस कहाँ से समझी (सिद्धेश्वरी की) आँखा से टप टप आँसू धून लगे का अर्थ ही बदल जाता है बेकारी, भ्रष्टमयी, गरीबी और प्रमोद को भीमारी सिद्धेश्वरी को महा कला पायी, लेकिन गयागरण की लड़की की शादी किसी दूसरी जगह तय हो जाने की सूचना उसे दिला देती है वह अपने बड़े लड़के रमेश के लिए जो एक झूठे अर्थ में सँतोष रहती है— कि भया की शहर में बड़ी इज्जत होती है पढ़ने वाला में बड़ा आदर होता है गयागरण का लड़की की किसी एम० ए० सटके के साथ शादी तय हो जान के कारणे आपात से दूट जाता है और मु'गी चर्चिका प्रसाद समस्त यह गरीबी, बेकारी और भ्रष्टमयी से जिस विवास को आधार बनारर मोर्चा से रही थी वह आधार ही छिन जाता है और सब यह कहानी बेचन मु'गी चर्चिका प्रसाद के परिवार की कहानी न रहकर समूचे मध्य वित्त-परिवारों को उस विराट् नियति से जुड़ जाती है जो अपनी सोखनी सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए ही सारे दुःख-बिधा का सहन करते बदन रहे हैं और इंगी की मुरसा का अन्ते जीवन का ध्येय बनाए हुए हैं

इंगी के बसने जीवन की लयाम विन्मनाओं में दूहन का अहसास लिए बगु र गुजर सते हैं और इंगी कारणे अपनी नजरों में सम्मानित होने का वहस बनाए रहते हैं और जिस दिन यह वयम टूटता है उस दिन व दूसरों की नजरों में बाढ़े न भी गिरते हैं लेकिन अपनी नजरों में बेहू गिर जाते हैं जीवन के सारे मोर्चों पर उर्ते हागागा और पराजय का अनुभव होता है उनसे हागना सामाजिक प्रतिष्ठा का दू जाता

या तो उहे मु शी चंद्रिका प्रसाद की तरह 'घात्रे मुँह होकर निश्चिन्ता के साथ साने रहने का और ले जाकर 'उद्यम से बेफिक्र कर देता है, या फिर सिद्धेश्वरी की तरह श्रीसू कहाने के लिए विवश लेकिन व परिवार म इस खोखली सामाजिक प्रतिष्ठा के शव को महसूस जरूर करने हैं जिस पर मक्खियाँ भिन्नभिन्नाती रहती हैं यह आरम्भिक नहीं है कि गगागरण बाबू की लडकी की शादी की मूचना देने से पहले मु शी चंद्रिका प्रसाद बड़े आरम्भिक ढंग से जिना किमी प्रसंग के निर्विकार स्वर में 'मक्खियाँ बहुत हो गई हैं का गिनापत करते हैं और कहानी के अंत में भी—'सारा घर मक्खिया से भन भन कर रहा था की लेखनीय टिप्पणी के साथ परिवार म इसी सामाजिक प्रतिष्ठा के शव की उपस्थिति का अहसास दिया जाता है यानी जो मध्य वित्त परिवार जिन्दगी के तमाम तूफाना को झेलते हुए टूटने और हताश होने का अहसास नहीं होने देना, बल्कि किसी स्तर पर सिद्धेश्वरी के यहाँ वहाँ कुछ हुआ क्या ? की आशावादिना से जुड़ा रहता है, टूट-गिरा जाता है

इसी तरह निमन वर्मा की 'पिक्चर पोस्टकार्ड कहानी है, जिसमें बात-चीत म एक प्रसंग बड़े ही आरम्भिक ढंग से आता है और उतने ही आरम्भिक ढंग से समाप्त भी हो जाता है निकी परेश से उसके कम्प्युनिस्ट होने के बारे म पूछना है और परेश उससे उमकी उम्र की बात पूछने लगता ह—' निकी अगर तुम्हारी बीती हुई उम्र के पिछले पाँच साल तुम्हें कोई लौटा दे तो तुम क्या करोगे ?

'म आर्मी म चला जाता' निकी कुछ देर विस्मित सा एक टक मुझे निहारता रहा 'परेश मुझे एक बात का हमेशा दुख रहेगा पिछली लड़ाई म म बहुत छोटा था वर्ना म जरूर जाता । और बात समाप्त हो जाती है 'कहानी फिर भी चलती रहती है लेकिन कहानी मे युवका की बेकारी भटकाव और अकेलेपन को दूर करने के लिए साथ पढी लडकिया का साथ एकदम पृष्ठ भूमि म चले जाते हैं और युग के बड़े सत्य फासिज म और कम्प्युनिज म से जुटकर एकदम नए सदभ म अथ खोलने लगते हैं । कहानी का समूचा बिछरा हुआ सा कव्य जो किसी स्तर पर अब तक सतही और रोमांटिक प्रतीति दे रहा था एक दारुणी अपनी हल्की कच्ची और अफेयर जसी जानकारी देन से ऊपर उठकर, युग के बड़े सवाल को समझने और हल करने का अग बा जाता है और कहानी की तमाम विस्तृतियाँ गम्भीर और साधक दिशा ले लेती हैं इसी तरह 'कोसी का घटवार मे शंकर जाशी का रिटायड नायक गुसाई सिंह नछमा से बातचीत के दौरान पतली सीक स माग कुरेदने लगता है तो कहानी गुसाई के अकेलेपन और निरुद्देश्यता से हटकर जिन्दगी की यादा मे जीने से जुड़ जाती है ये तमाम प्रसंग कहानिया मे नितात आरम्भिक ढंग से और सतह स दखने पर मूल क्या से विच्छिन्न और महत्वहीन होकर आए हुए लगते हैं लेकिन क्या की 'पाठ प्रकृति का गम्भीरता स परीक्षित करते हुए जब इन प्रसंगो, उडती हुई और भूल स आजान वाली बात चीत

से पाठ प्रक्रिया से न गुजरकर, काव्य शास्त्र के मानका से जो समीक्षक कथा की पहचान देने का हीसला करेंगे, उनकी कथा-समीक्षा की यही दुर्गति होगी और उनको यह चिन्ता कि उपमाएँ छुटाने-छुटाते कहीं कहानी ही न छुट जाय चाहे व्यर्थ साबित हो, लेकिन दूसरों की यह चिन्ता कि कथा में रूपवादी प्रवृत्तियाँ की सम्भावनाहीन बनाने हुए रूपवादी काव्य समीक्षा से कथा-सत्य को धूमने में कहीं उनकी समीक्षा-बुद्धि ही जवाब न दे जाय जरूर सही साबित होगी और ये समीक्षक बात तो कथा-सत्य को धूमने में छाँटी कविता की समीक्षा विधि की बरत हैं, लेकिन काम परम्परा प्राप्त मोट काव्य शास्त्रीय मानका से ही लेते हैं

कहना न होगा कि कविता और कहानी दो अलग अलग माध्यम हैं और दोनों के समीक्षा-नत्र उनके भ्रान्तरिक सगठनों के अनुसार ही अपना-अपना स्वरूप निर्मित करेंगे कथा की नितात कथा समीक्षा के रूप ग्रहण न करन तक जरूर कविता की विश्लेषण पद्धति से मदद ली जा सकती लेकिन यह विश्लेषण विधि भी रूपवादी न होगी क्योंकि उससे तो पूरे तौर पर कविता के सत्य को भी नहीं धुंका जा सकता

इसी तरह भावुकता अतिरजना और अविश्वसनीयता के इच्छोपे से कहानी का नाप लेना बड़ा गुजरा हुआ समीक्षा-विश्वास है क्या अतिरजित और अविश्वसनीय लगने वाली कहानियाँ किसी गहरे अर्थ बोध से हमारा साक्षात्कार नहीं करा सकती ? क्या हम जिन्दगी में बहुत कुछ अतिरजित होकर नहीं कहते सुनते ? और कभी-कभी जिन जोखिम के क्षणा से हम गुजर चुके होते हैं, वे ही हम पुन विचार करने और अनुभव में पुन जीने पर अविश्वसनीय नहीं लगते ? इसी तरह भावुकता से कहानी कहना और भावुक क्षणा की कहानी कहना दो अलग बातें हैं । भावुकता की मद में और आधुनिकता की री में जिन्दगी में उपस्थित 'भावुक क्षणा की स्थिति को ही नकारना कथा के समीक्षा विचार का जीवन-सत्य के उपादा करीब होता न होगा । दरअसल इस स्थिति से वे ही समीक्षक गुजरते हैं जो भावुकता से कहीं गई कहानी और 'भावुक क्षणा की कहानी में विवेक नहीं कर पाते

कथा-विचार में भावुकता अतिरजना और अविश्वसनीयता के नुकते भी रूपवादी और तत्त्व परक कथा समीक्षा के नस्ली नुकता की तरह ही हैं कथा विचार में इन नुकतों की बसाधियाँ लगाकर चलना खुद को अलजले में ही समीक्षा-विश्वास में पगु घोषित कर देना है कहीं तो हैं श्रोपन जैसे सम्पादक जो इ० एम० पोस्टर की तरह यह स्वीकार कर लेते हैं कि उनके सस्कार पुराने हैं और इन्हीं के चलने के कहानी से जो आगा करते हैं, वह गलत है और कहीं है हमारा विवेकशोल समीक्षक (?) कि अपन पुराने सस्कारों के चलते कविता की रूपवादी पहचान और अविश्वसनीयता-अतिरजना जसी फामूला दृष्टि को जिद पूचक कथा-समीक्षा की नई पहचान बताना चाहता है श्रोपन कथा के स्वरूप में बदलाव की बात कह कर भाव-बोध और

रूपगत समग्र यथारम्य सदिनष्टता का ग्रहसात करता है और हमारा समीक्षा है कि पुरानी समीक्षा की विभाजित बुद्धि का सिक्कार होकर वस्तु-शिल्प को न सिर्फ अलग अलग खाना म खातियाता ही है, बल्कि रूप परक फारमूला-दृष्टि से वस्तु को जोहन के उमाद म पडनर उसकी हिमायत भी करता है, या फिर इन्ही समाधाना म एक दूसरा यह वग है, जो खुद के सरल प्राण होने के कारण जिन्गी को दो और दो चार के गुणा की तरह एन्जेक्ट मानता है और कहानी से भी मधिलीकरण गुप्त की पविता हा जाने की माँग करता है और क्या म व्यवहृत चक्करदार शिल्प और क्या नथ म पडे मोड पेचो से अपनी समीक्षा-बुद्धि को आतुरित कर बठता है लेकिन इसके लिए उस दोषी क्या कर ठहराया जा सकता है क्योंकि यह उसकी सरलता और सज्ज नता का दखते हुए एषदम उपयुक्त ही है

'नई कहानी' के रूपवध पर अलग से चर्चा करना दरअसल परम्परागत आलोचना के उसी अदाज म बात करना है, जिसम बाजावदा कथ्य और शिल्प को पूरे तौर पर सिद्धान्तत विभाजित माना जाकर उनका जायजा लेना होता है।

जबकि इस सत्य को यहाँ रखने की गु जाइग नहो कि यह विभाजन आयोजित ही नही है बल्कि अग्रहीन भी है और समीक्षा बुद्धि का खासा मनोरजक उदाहरण भी शिल्प और कथ्य को अलग अलग खतियान का अर्थ दूध और पानी को अलग अलग करके (इस पुरान दृष्टात के लिए क्षमा किया जाऊँ) उनका जायजा लेना है हालाँकि उन हसा की उपस्थिति और उनकी सूक्ष्मपाही चोर्षों के बारे म मुझ पूरा पूरा धक है, जिनके लिये कहा जाता रहा है कि वे ऐसा कर पाने ये सन्नि यह एक अलग बात है और इस पर यहाँ क्या बहस ?

रूपवध को लेकर इसलिए भी अलग से बात नही खनाई जा सकती क्योंकि वह वस्तु बोध के आन्तरिक रचाव का अनिवाय प्रतिपन्न हो नही है, उसका पृक्त आकार भी है, जब अपने आन्तरिक रचाव का तनाव भेनती हुई क्या (या कोई भी रचना) एक खास मिजाज पकड लती है या पकडती होती है तब यह मिजाज उसकी नितात अपनी अनिवाय माँग होता है लेकिन उसस (क्या अनुभव के द्र से) पूरे तौर पर एक नही होता और अलग इसलिए नही होता क्योंकि वह वही नही है यानी उसका महज शिल्प होन स अर्थ नही बूझा जा सकता। चित्र का केन्द्रस्य एकाविति से चुत आकलन चित्र को काटू न बत हो पग कर सकता है (काटू न को काटू न के तौर पर नही क्योंकि वह तब बला हागी) सन्नि उसमे निहित या सम्भावित पहलुआ को नही उभार सकता इसलिए केन्द्रस्य अनुभव के वास्तव से हटकर शिल्प स्तर पर चर्चा उठाना

गलत बात को और गलत तरह प्रस्तुत करना है इसीलिए, हो सकता है कि यह चर्चा आपके लिए बेमानी हो (और मेरे लिए भी) लेकिन मैं अपने उन मित्रों के प्रति प्रतिबद्ध हूँ (गोविं यह हर एक के लिए जरूरी नहीं है) जो अपनी कथा-समीक्षा के लिए सुविधा चाहते हैं, हालाँकि सुविधा वाले रास्ते के अपने खतरे होते हैं जिन्हें जानते हुए भी लोग आखिर खतरे उठाने तो हैं ही बहरहाल, गुरु गुरु में छायावाद को शिल्पगत आन्दोलन या उपलब्धि मानने वाले ऋषि आचार्यों की तरह ही कुछ कथा-समीक्षकों के महा नई कहानी के लिए भी यही निराश पढ़कर सुनाया गया था ऐसे समीक्षक शिल्प के लिहाज से तो इसे नया मानते ही हैं, लेकिन जब इसकी वस्तु पर अलग से विचार करते हैं तो उसे भी जहाँ-तहाँ नया बताते हैं और जब दोनों पर एक साथ विचार करते हैं (गोविं ऐसा वे मजबूरी में ही करते हैं) तब बहुमत से वही ऋषि आचार्यों वाला निराश दुहरा देने है। 'नई कहानी' के सद्म में परम्परागत समीक्षा बुद्धि की यह रोचक मिसाल है साथ ही शिल्प और वस्तु को अलग अलग मानकर उन पर विचार करने में जो खतरे हैं उन्हें यहाँ समझा जा सकता है

पिछले कथाकारों के यहाँ किस्सागोई शिल्प का विकसिततम कथा-मान था उनकी कहानी इसी से शुरू हानी थी और खत्म भी यही होती थी लेकिन कहानी यहाँ खत्म होती नहीं है—क्योंकि तब वह आगे लिखी ही नहीं जाती खत्म होते हैं कहने के खास-आस डग और उनकी जगह कहने के और या और और डग आ जाते हैं यह कहने के डगों की यात्रा प्रेमचन्द के यहाँ शुरू हुई थी और तब से अब तक लगातार बदलती रही है (गोविं गुरु इसे दादी नानी की कहानियाँ या आदिम जमाने में कहने की इच्छा से माना जा सकता है, लेकिन तब इसकी क्रमिक इतिहास के तौर पर विविक्षा करनी होगी और उसके लिए न तो यहाँ गुंजाइश है और न तो आवश्यकता है। इस दिशा का बदलाव कथा के शिल्प इतिहास की अनिवार्य बात है, लेकिन इसमें काल षण्ड के लिहाज से कोई अनुपात हो यह जरूरी नहीं

व्यतीत कहानी में वस्तु और शिल्प दोनों में रोचकता और उत्सुकता बनाए रखना जरूरी था गोविं यह जरूरत आज भी बनी हुई है लेकिन एक अलग माइने में व्यतीत कथा में या तो किस्सागोई होती थी या अतिरिक्त नाटकीयता 'नई कहानी' में गायद अब किस्सागोई के विरोध में भी आवाज उठे क्योंकि यह अवधारणा पारम्परिक वस्तु के समानांतर तो उपयोगी हो सकती थी लेकिन नए वस्तु बोध के लिए इसका धर्म गुजर चुका है। पिछले कथाकार ऋषिदेव अत देकर भौचल पाठक को देखते थे और मुस्करा कर फिर एक ऋषिदेव अत लिखने में जुट जाते थे शिल्प बोध का यह डग आज के पाठक की एकदम बचकाना लगता है वह कहानी से गहरे और अन्दर तक टोहन वाले बोध की माँग करता है हालाँकि अब भी कुछ कथाकारों की चमत्कार वाली दृष्टि पाठक को चौंकाने और शास्त्र देने में तृप्ति पाती है लेकिन समझदार

कथाकारों के यहाँ यह शोक उत्पन्न हो रहा है वे कहानी में कुछ ही स्त्रोत्रस म अपनी बात कह जाने हैं शिल्प स्तर पर वे इन तरह के अतिरिक्त आयोजन को आवश्यकता महसूस ही नहीं करते ।

व्यतीत कहानी की गुम्फ्रात बतौर सजावट के प्रवृत्ति चित्रण से होनी थी या विवरण वणन से या फिर सामान्य परिचयात्मक ढंग से 'नई कहानी' में शिल्प की इन गुम्फ्रातों को छोड़ दिया गया है वह अपनी गुम्फ्रात में स्थितियों विम्बो प्रतीकों या संकेतों से करती है कहीं कहीं भाषा की ध्वनि और चित्रा के अर्थों से उसे सार्थक किया जाता है लेकिन इन या इन जैसे और शिल्प रूपों का प्रयोग किसी विडम्बना या परिवर्ण गत विरोध को सामने लाने के लिये ही होता है अथवा होना या परिभाषा के अनुसार होकर नहीं और न ही अलंकरण के तौर पर ।

कहानी की सही जमीन उसका 'कहानीपन' ही है शिल्प की साधकता इसी कहानीपन को उभारने में है हालांकि यह नामुमकिन है कि सही शिल्प के अभाव में 'कहानीपन' सार्थक हो पाए और वह भी नई कहानी में यदि शिल्प कथा को वाई आयाम नहीं दे पाता तब निश्चय ही वह कहानी को कमजोर बनाता है ।

शिल्प गत कथा समीक्षा में पिछले दिना तक कथानक का गठन, नाटकीयता वातावरण का सुष्ठु संयोजन संवादा की सक्षमता व सही जमीन और और सतही वातों का चलन या जिनसे कथा के औपत शिल्प को समझ पाना भी कठिन था यह समीक्षा विभाजन बुद्धि से जुड़ी होने के कारण अपने प्रारम्भ में ही खण्डित थी ।

नई कहानी में नए शिल्प का प्रयोग चेतित होकर उतना नहीं है, जितना वस्तु की आंतरिक विवशता का परिणाम होकर नए शिल्प में कथानक की वस्तु दृष्टि का लगातार योग रहता है तो वस्तु चयन में लक्ष्य का शिल्प कोण बराबर काम करता रहता है ।

शिल्पगत सपाटपा (प्लेटनस) कोई खास बात नहीं है लेकिन इसे कहानी में खास बना पाना या कहानी को इसके माध्यम से खास बनाना जटिल बड़ी कथानकरिता का सूत्र है । इस शिल्प बोध के अंतगत वस्तु बोध होकर शिल्प स्तर पर जिनकी सपाट होती है रूप भी वसा ही अनुकूल पकड़ती है, यहाँ जीवन का कोई नुकता, अर्थ या कोई स्थिति, बोध स्तर पर कथा में उभरती है अत्यंत साधारण होकर कहानी गुरु होती है (और अंत भा साधारण तौर पर ही होता है) वहाँ कि वाता का एक सिलसिला होता है जिसमें हर मोड़ और हर कोण पर आदमी की विम्बना आकार पाती चलती है और अंत में कहानी किसी विम्बना को पूरे परिदृश्य में आकार देकर लौट जाती है इस रंग की सबसे अधिक कहानियाँ भोष्म साहनी के यहाँ हैं प्रमबद की परम्परा का जब संवादा उठाया जाता है तो इस परम्परा में आगे निखी गई कथा नियाँ भोष्म साहनी की ही ठहरती हैं कमोवेश ऐसी ही सहजता प्रेम प्रकाश निमन

के यहाँ भी है लेकिन इसीलिए यह स्वीकार कर लिये जाने का कोई कारण नहीं कि सपाट शिल्प-वस्तु वाली कहानी ही जोरदार होती है। दरअसल हर लेखक को कहानी का अपना मिजाज होना है और यही मिजाज जितना उभरता है कहानी उतनी ही मजबूती है और लेखक को अपनी स्थिति भी।

विचली पीढी के क्या समीक्षा का न वातावरण के आधार पर भी नई कहानी की समीक्षा की है जबकि उनकी अप्रामाणिक कथा समीक्षा की आलोचना का केन्द्र दूसरे तत्वों के साथ वातावरण भी रहा है। मार्मिक और सजीव वातावरण के लिहाज से निमल वर्मा की कहानियाँ को याद किया गया है और उन्हें इस कोण से सर्वाधिक प्रभावशाली भी माना गया है। मार्मिक और सजीव वातावरण चित्रण के नाम पर निमल वर्मा की कहानियों का सजीव ठहराना 'नई कथा' के समीक्षालय में महज रोमान को वकानत करना ही नहीं है। अपनी रोमैटिक चर्च का इजहार करना भी है। विचली वातावरण चित्रण की बात तो समझने लायक है, लेकिन हर देशी वातावरण की विदेशीयता का आखिर क्या अर्थ है? निमल वर्मा के यहाँ यह सब उपन्यास है।

'रूपबंध' के सदम में सही वास्तव का सवान स्यान् विभाजक समीक्षा बुद्धि को पमद न हो (गो कि उनकी कोई पसंद भी है ? इस पर पूरी बहस के लिए अलग से गुंजाइश है) लेकिन इस पूरे सवाल का नई कहानी के शिल्प बोध से गहरा सम्बन्ध है, क्योंकि सही वास्तव का सवाल उस यथाथ का सवाल नहीं है जो शिल्प स्तर पर 'फोटोग्राफी' और वस्तु बोध के नाम पर मात्र 'विवरण' होता है। सही यथाथ का सवाल इस बात से एकमएक है कि हमारे जस-तस में (कुछ कहानीकारों ने मान उसे ही चित्र दिया है। हालाँकि इसे चित्र देना कोई लाजवाब बात नहीं है, इस चित्रण का कारण सतही यथाबोध और यथाथ को गलत समझना भी है) जो बुद्धि अनदेखा रह गया है या जिसके अनदेखा रह जाने की सम्भावना है (क्योंकि इनके बिना यथाथ की तस्वीर पूरी नहीं होती हो सकती है कि हम फिर भी पूरे अनदेखे को चित्र न देखें लेकिन जितना भर दे सकें वही फोटोग्राफी वाले शिल्प और विवरण वाले वस्तु बोध से महत्तर होगा) उसे कथा में तस्वीर दें क्योंकि हमारे यथाथ की पूरी तस्वीर व तस्वीर को पूरे के करीब करीब प्रत्यक्ष कराने के लिए इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है और चूँकि इसे स्थावर करने में मुहावरों हुई भाषा और प्रेषण के प्रचलित प्रकार अपर्याप्त होंगे इसीलिए यही से उने महोत्त वस्तुबोध के साथ प्रेषण के लिए नए शिल्प और आयामों में खुलती भाषा की नई तलाश-प्राप्ति भी करनी होगी। इसीलिए 'नई कहानी' अपने सही अर्थ में वस्तुबोध के नए के साथ-साथ भाषा बोध व प्रेषण के लिए लगातार शिल्प के नव-नूतन की तलाश भी है और इस अर्थ में वह एक समृद्ध प्रक्रिया भी है जो आगे चतकर चाहे एक अलग नाम की भाँग करे, लेकिन अपने प्रति-याथ में यही से गुंल मानी जायगी 'हर' नई कहानी (यदि वह वाकई नई है तब)

कथाकार के वस्तुबोध व निष्पबोध के लिए हर बार एक नई चुनौती होती है और हर चुनौती (धरत उगयी कथा शक्तता उसे स्वीकार कर पाती है ?) कथाकार से नए का योग कराती है यह धनग मान है कि नई कहानी ने चाहे न सही लेकिन नए कथाकार ने धरत इन् शर्तों को पूरा निभाया नहीं है, पर उसको नियति इमी को निभाने से जुड़ी हुई है यह मान जुदा नहीं है इसे यह चाहकर भी नकार नहीं सकता प्राधुनिकता को कथा-स्तर पर प्रत्यक्ष कराने का सवाल भी यथाय की इसी शक्ति से जुड़ा हुआ है। महानगरों में बहनी या ठहरती प्रत्यक्ष प्राधुनिकता को रूपायित करना बड़ी कलात्मक कौशल नहीं है बड़ी कलात्मक कौशल है इससे इतर प्राधुनिकता युक्त हुए असलक्ष्य क्रम-गुना को सदिष्ट अभिव्यक्ति दे पाना स्पष्ट है कि असलक्ष्य क्रम सूत्रा को प्रत्यक्ष करने वाला रूप प्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष कराने वाले रूपायितों से भिन्न कथा दृष्टि के मौलिक रचाव का धारणिक विवरण प्रतिपन्न होगा किसी भी तरह धोड़ा हुआ नहीं, और इसी कारण अधिन प्रत्यक्ष पूर्ण भी।

‘नई कहानी’ की साक्षेतिवता का स्पष्ट अंतर व्यतीत कथा की साक्षेतिवता से है, इस मादने में कि व्यतीत कथा में सकेत का उपयोग कथा के प्रसाधन में हुआ करता था नई कहानी में वह उसकी—सदिष्ट परिवेण और व्यस्त सकुल जीवन के कारण नितान्त स्वाभाविक और अनिवाय स्वीकृति है बल्कि किसी स्तर पर वह सकेत का उपयोग न कर स्वयं सकेत होती है ‘नई कहानी’ में सकेत का सविशेष होना इस कारण से भी चालित है कि नए कथाकार को ‘आदेण देण, लेखक की हैसियत से सीधे जान करने, कथा में अतिरिक्त नाटकीयता का आयोजन करण आदि जसी सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं पुराने कथाकार को यह सुविधाएँ प्राप्त थी असल में इन सुविधाओं का उपयोग ‘नया कहानीकार कथा में करना भी नहीं चाहता, इसलिए कि इन्हे वह नए कथा निष्पबोध के समानान्तर नहीं पाता और इसलिए भी कि प्राधुनिक वस्तुबोध के सम्प्रेषण माध्यम के रूप में यह अपना अर्थ खो चुकी है ‘नई कहानी पूरे तीर पर तो सकेत होती ही है, अलग अलग स्तरों पर भी वह सकेत होती है हाँकि ये सकेत स्वयं में अलग से महत्वपूर्ण होने और स्वतंत्र स्थिति रखन पर भी, होते कहानी के प्रभाव की पूरी अविधि वाले बहुतर सकेत के लिए ही हैं।

नई कहानी में सकेत प्रतीक सयोजन जहाँ कहानियों के रूपबध की एक हृद कायम करते हैं, वहाँ इनके अपने प्रयोग गत ज्वरदस्त स्तरों भी हैं और ये स्तरों महज हवाई न होकर कहानीकारों के यहाँ देखे भी जा सकते हैं सिद्धहस्त और सयमी कथाकारों के यहाँ भी ये जरा सी चूक से आकार लेने लगन हैं दरअसल सकेत प्रतीकों का प्रयोग तब अर्थहीन हो जाता है, जब इन्हे स्वयं में लक्ष्य मान लिया जाता है यह जानते हुए भी कि प्रतीक की अलग से अपनी कोई स्वतंत्र रियति और हैसियत नहीं होनी, स्वतंत्र होते हुए भी अन्ततः वह कथा की अविधि के साथ जुड़ी हुई होता है

कौसी को उभारा जाय वस प्रतीक की इतनी सी ही साधकता है हानि को तो युग की अदानीतम औप-यासिक कृति 'लेडी चटरलोज लवस युग की महानतम प्रतीक कृति हो सकनी है लेकिन सबाल यह है कि क्या ये प्रतीक कथा-स्तर पर 'रिवोल हो सके हैं ? प्रतीक की वस्तु बोध की अनकथ आन्तरिक रचना से सगति न बँटने के कारण कहानी एकदम हवाई भी हो सकती है यहाँ तक कि समीक्षक-समझ से तो वह ऊपर हो ही जाय लेखक को समझ भी उसे कोई अर्थ न दे सके, इसीलिए यह बात हमें याद रखने की जरूरत है कि प्रतीक संयोजन कहानी के लिए है, कहानी रचना प्रतीक के लिए नहीं कहानी स्वयं प्रतीक हो सकती है होती भी है (मं कह चुका हूँ) लेकिन एक ऐसा प्रतीक, जो कहानी के लिए उपन्यस किया गया हो और तब कहानी के होने हुए यह प्रतीक या प्रतीक के होते हुए यह कहानी हमारे जीवन की किसी क्रूर विडम्बना या किसी छोटी घटना को अर्थ देती हुई जीवन का अनदेखा सदम खोजता है या उसके विश्वास खोजी सकेत देनी है या फिर इसके द्वारा एक ही प्रतीक जीवन को (जीवन खण्ड को) उसकी अनुकूलता और प्रतिकूलता में अर्थकोणों से बेधकर (आपरेट कर) स्तर स्तर उसे उजालना है।

'नई कविता' में विम्ब आयोजन को शिल्प स्तर पर जितना बढपन मिला है उसना नई कहानी के शिल्प में नहीं, बल्कि कविता में तो विम्ब का सम्प्रेषण माध्यम की विरसित तम हृद भी मान लिया गया है यदि विम्ब प्रयोगों को 'नई कविता' तक ही सीमित न मान लिया जाय (गोकि कुछ समीक्षकों को निती तौर पर कथा के शिल्प स्तर पर विम्ब प्रयोगों से खासा परहेज है) तो 'नई कहानी' में हम इसके उपयोग से गम्भीर मदद मिल सकनी है और कुछ प्रबुद्ध कथाकारों ने वस्तु अर्थ का बारीकी से खोलने के लिए, इससे मदद ली भी है विम्ब प्रयोग 'नई कहानी' में प्रेषण क्षमता को नई शक्ति देने तो हैं लेकिन इनके अर्थ खनने भी हैं (इसीलिए रूपवय की किमी भी हृद का आशय देन के लिए धार पर चलन वाली पनी सजक नजर जरूरी है) क्योंकि कहानी के विम्ब वही नहीं होमे जा कविता के होंगे कविता के विम्ब कहानी के गद्य की ठेठ सामय्य के प्रति पाठक का विद्वानस गिराते हैं इसमें कहानी में अर्थ की पकड जहाँ कमजोर पडती है (भाषा में अनिश्चित छंद बढ़ाया या अविश्वसनीयता के कारण) वहाँ लेखक का बौद्धिक निस्तगता भी टूटनी है ठेठ कहानी के सदम में यह खतरा अपने समस्त नएपन के बावजूद निमल बर्मा के यहाँ ज्यादा है 'परिद' में पास के नीचे सोधी हुई भूरी मिट्टी पर तितली का नहा सा दिन भडकता है 'मिट्टी और घास के बीच हवा का घासला काँपना है काँपता है।' घाए हुए ये विम्ब या इन्हो जैसे दूसरी कहानिया में प्रयाग पाए हुए विम्ब कविता के विम्ब हैं गिन्यवादी प्रवृत्तियों के विरोधी गिन्य चमत्कार के कारण ही 'परिद' का नई कहानी (आयद पहली भी) मान बढे हैं जब कि वह बाने हुए के माह और छायावादी बेदना

की विवृति (प्रसन्नता का फनाव) से जुड़ी हुई क्या है और रोमान के विरोध में उसी रोमान को कहे जाने की विवृति से सम्बन्ध है यह अलग बात है कि इन स्थितियों से उबरने के उसमें बराबर सकेत मिलते हैं।

पता नहीं क्या समीक्षा का नई कहानी में कविता पंक्ति या के स्तरों से घुंरेज क्यों पदा हो गया है (लगता है इसका कारण कविता कहानी को एक दूसरे के विरोध में खड़ा करके वा विद्वेष है और एक से दूसरी विधा को श्रेष्ठ समझने का भ्रम) कविता पंक्तियों से सहायता ले लेना गिनायत की बात नहीं है गिनायत की बात तो कहानी की भाषा को कविता की भाषा बना देने से है क्योंकि इससे 'नई कहानी' की भाषा में जो गद्य को रूप और अर्थगत मँजावट दी है उसकी शक्ति और गति मरती है कहानी की भाषा मात्र शिल्प स्तर पर सम्प्रेषण का एक माध्यम ही नहीं है, उसका वस्तु बोध से गहरा और भीतरा सम्बन्ध है भाषा का बदलाव युग बोध बदलाव को सूचित करता है (मात्र भाषा से ही किसी भी कृतिकार के वस्तुगत सत्कार और दृष्टि बोध को विश्लेषित करने की कोशिश की जा सकती है) इसीलिए कविता कोमल भाषा 'प्रसन्नता के युग बोध की भाषा तो ही सकती है सम्प्रति युग बोध का सवहन उससे न होगा और इसीलिए उपाय अर्थात् अर्थात् है कि कहानी की भाषा से काव्य प्रभाव उत्पन्न कराने की अपेक्षा कविता पंक्तियों का ही उपयोग कर लिया जाय और जबकि काव्य भाषा गद्य भाषा के समीप आ रही है तब कहानी की भाषा को काव्य भाषा के समीप ले जाना, सही प्रश्न को गलत दिशा देना है जीवन समीप भाषा ही समीप जीवन बोध को सही प्रेषण दे सकती है 'नई कहानी की भाषा इसी दिशा की यात्रा है।

नई कहानी में भाषा प्रयोग वस्तु के समानांतर ही हुए हैं भाषा में नाटकीय लहजों सहित निष्ठ रूपों अधिक से अधिक विशेषणवत् वाक्यों का युग पीछे छूट गया है वस्तु के समानान्तर गाँव कस्बा व शहरी भाषा का स्वभाव अपनाना लहजों के साथ उसमें बेहिचक और प्रभूत प्रयोग पा रहा है इस स्वभाव में आरोपित क्षमनीयता कृत्रिमता और कलात्मक भाषा का बहिष्कार है यह वस्तु के युग बोधगत स्वभाव का नतीजा है जिन कथाकारों के यहाँ ऐसा नहीं है वहाँ कहानी वस्तु और भाषा दोनों से पिछने लगी है नई कहानी में भाषा का सजाव नहीं है, यहाँ सपाट और बिगोपणहीन सहज भाषा ही अभिप्रेत है इसी के चलते 'नई कहानी में भर्त्सना की बातों का कम होने जाना वस्तु और भाषा के बन्दे हुए आग्रहों का सकेत है 'नई कहानी में कम से कम गद्य में अभिप्राय का वह अन्त में गद्य रूप का सस्कार तो होता ही है सत्कीय सामर्थ्य का आस्वादन भी उसे माना जा सकता है निम्न वर्गों की भाषा की तात्पर्य काफ़ी की गई है बोध की सूक्ष्म प्रक्रिया और प्रति क्रियाओं को गह पाने में उनकी तारीफ़ की भी जानी चाहिए, लेकिन बिगोपणहीन

सनाप और 'उपमा रहित पदों' को उनकी भाषा की तारोफ का आधार बनाना या तो तथ्य को न समझ पाना है या फिर बूझ कर किहीं विवशताओं के चलते उन्हें झुठलाना है "फॉक के भीतर से ऊपर उठती हुई कच्ची सी गोलाइया में मीठी मीठी नी चुभती हुई सुइया ।' (मं नहीं जानता कि 'कच्ची सी गोलाइयो की यह मीठी-मीठी सी चुभन किस इन्द्रिय बोध में चखकर अलगआई गई है ?) यह भाषा या इसी जसी उनको कहानियां म अत्यन्त बरती गई भाषा 'नई कहानी की भाषा की किसी विकसित हृद को नहीं छूती, बल्कि छायावादी भाषाबोध जगाती है भाषा के नए-नए रखा और रंगों को गद्य की मंजावट में राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी कमलेश्वर, अमर-कान्त शिवप्रसाद सिंह और इधर श्रीकांत वर्मा, रवीन्द्र कालिया, ज्ञानरजन, दूधनाय-सिंह आदि के यहाँ देखा जा सकता है

निबन्ध स्वभाव की कहानियाँ इधर कुछ नए कथाकारों के यहाँ लिखी जा रही हैं, उनकी चाहे आन्तरिक प्रकृति निबन्धा जसी नहीं भी हो, लेकिन प्रावयव सगतता और भाषाबोध निबन्धों जैसा ही होना है अमृत का प्रयाग भी, इधर कथा में हुष्मा है श्रीकान्त वर्मा आदि के यहाँ इसके रूपाकारों को समझा जा सकता है ये अमृत प्रयोग प्रतीक और संकेता का माध्यम तो पाते ही हैं किसी किसी स्तर पर अमृत चित्रों का समीप भी इनमें होता है और इसी वजह से वस्तु आयोजन में पेच भी पाते हैं और विखरे आसनों में जिया गया कान, विरोधों में बँटा हुष्मा भी लग सकता है लेकिन सतही तौर पर, गहरे उतरने पर नहीं

नये कथाकारों ने बावजूद अपनी कमियाँ के शिल्प के संतुलन और समय का आदर्यजनक सवृत दिया है अलकृति और बुनावट कुछेक कथाकारों को शिल्प स्तर पर अभी भी पकड़े हुए हैं लेकिन बहुता के यहाँ इनकी रगारग पखें विस्तर चुकी हैं

कहानी में शिल्पहीन शिल्प का रचाव उतना ही दुष्पर है जितना कि 'सपा-टपा' की कहानी में खाम बना पाना, लेकिन इधर शिल्पहीन शिल्प वाली कुछ कहा-नियाँ लिखी गई हैं, कमलेश्वर की 'माँस का दरिया' ऐसे ही शिल्प की कहानी है ।

कथाकारों ने पुराने अप्रचलित गिरव प्रयोगों— तिहासन बत्तीसी विस्सा ताना बना—को भी नये कथा में अपनाते की कोशिश की है इन रूपबधा के तहत बुनावट पाई हुई कहानियाँ या तो महत्वहीन होकर रह गई हैं या फिर साधारण सा व्यंग्य होकर इनका कारण चाह तो युग बोध रहा हो, चाहे फिर लेखकों की अपनी निबन्ध की कथा-क्षमता दुहरे कथानक और लोक कथा के रूपबधा का नए वस्तु गिन्य-बोध के समानान्तर उपयोग 'नई कहानी' में हुष्मा है लेकिन इस मिजाज की चर्चा करने योग्य कहानी अपने पूरे महत्व में कमलेश्वर ही दे पाए हैं 'राजा निरबसिया' उनकी ऐसी ही कहानी है

नई कहानी में वस्तु सत्य में जहाँ एक स्तर पर एकरसता आई है, यहाँ

शिल्प इससे बचा हुआ है हर लेखक के यहाँ प्रेरण के अलग अलग ढंग हैं, चा-
फिर वे काफी हाउस सक्म, सिनीमा, होटल कफे, यात्राएँ जैसे एक रसता पदा कर-
वाले (करीब करीब हर लेखक के यहाँ यही कुछ है) वस्तु सत्या को ही क्यों न लें
एकरस स्थितियों के चित्रण म, आज के जीवन का ज्यादा इनसे जुड़ा हुआ होना भी
एक कारण है

नए कथाकारों के यहाँ असामान्य (एवंनामक) व्यक्तित्वों और असामान्य स्थि-
तियों का चित्रण हो रहा है लेकिन यह असामान्य व्यक्तित्व 'असाद' भाँति के यहाँ का
असाधारण व्यक्तित्व नहीं है जिसके कारण पुराने कथाकारों की वस्तु का सीमित हो
जाना अनिवाय था, बल्कि ये घटना और ये व्यक्तित्व जीवन की यात्रिवृत्ता और यात्रिव-
वचानिक युग के आदमी को बीना बना देने वाली भयानक स्थितियाँ, छाया भयों अग्रहीन
होते हुए रिश्तों मौत और अकेलेपन का जन्म है जाहिर है कि ऐसी वस्तु वाली कथा
नियों की शिल्प संरचना भिन्न और अलग स्तर की या सतह से देखने पर असम्बद्ध और
विरोधी सूत्रा वाली होगी इनके समानांतर ठंड (श्रीकान्त वर्मा) जसी कहानियाँ—
जिनमें अति परिचित वस्तु और व्यापार म अक्षर भाँल की पकड़ से अनदेखे ही छूट
जाने वाले जीवन के विडम्बना चित्र होने हैं—का सादा और सहज शिल्प अपनी हर
स्थिति और हर मोड़ में सामान्य होने हुए भी सहज सतत और प्रतीक हो उठता है

'नई कहानी' को कहानी के अब तक के प्रचलित अर्थ और परिभाषा की
धारणा में साफ-साफ कहानी नहीं कहा जा सकता, यह अन्तर वस्तु की सश्लिष्टता
के साथ शिल्प और दृष्टि के बदलन के कारण आया है, इन्हीं के चलते 'नई कहानी'
एक स्तर पर वैचारिक निबंध जसा होता है ता एक और स्तर पर महज बातों का
एक दितक्षप सिलसिला या फिर वह कुछ सकेता और प्रतीका म ही ध्रुव और घालीर
हो सकती है । कहीं वह पलश बक के जरिए अपना निविड और नाहा हुआ अर्थ
उजागर करती है तो कहीं वह पट्टेसी होकर कहानी हाती है कहीं वह पत्रा का
छोटा और सम्बा सिलसिला हो सकती है तो कहीं डायरी के लम्बे-लम्बे पृष्ठ उसके
लिए होते हैं गोकि इनमें से कुछ शिल्प कायदा की परीक्षा पुराने कथाकार भी कर
चुके हैं और नयी कहानी म भी ये शिल्प कायदे कोई महत्वपूर्ण उपनिधि नहीं दे
सके हैं

कामू लावद्ध शिल्प नई कहानी म समादृत नहीं हुआ, इसलिए निश्चिन्त भाँति
अत घरम सीमा व इन्हीं जैसे दूसरे नुकता का प्रयोग नए कथाकारों ने अपन यहाँ
नहीं किया, जब कि इन नुकता न व्यतीत कहानी के शिल्प का दूर तक निर्माण न्ये
ये युग की विडम्बना को सम्प्रेषण देने के लिए तन्वी और व्यंग्य का नई कहानी म
इनका सफन और प्रभूत प्रयोग हुआ है कि जिसके चलते उषम व्यंग्य भाषा का रूप
एक सात कोण से उभर सका है ।

शिल्प-गत सारी जागरूकता खास किम्म का मनरिज्म इधर 'नई कहानी' के शिल्प में विवसित हुआ है। इस खतरे से नए कहानीकारों का परिचित होना जरूरी है, गांकि कुछेक इससे परिचित भी हैं, क्योंकि कुछ नए उम्र कथाकारों ने इस दायरे को तोड़ने की कोशिश की है। लेकिन इसे दुभाग्य पूरा हो कहा जायगा कि हिन्दी का नया कथाकार चन्द कहानियों के बाद ही टाइप होता शुरू हो जाता है। उसकी वस्तु के पाश्च-परिदृश्या का सीमित होना उसके शिल्प को भी कुछ आजमाई हुई रेखाया तक ही सीमित कर देता है। इसका कारण उसका चुकता हुआ जीवनानुभव जहाँ है वही दायरों में जीना और अतिरिक्त खतरा भोल न लेने की साह्यहीनता भी है। उसकी खुली श्राव की दाद दी जा सकती है, लेकिन एक ही जगह या हर जगह में एक ही चुकते को तलाशने वाली उसकी खुली श्रांश कब तक प्रशसा पाती रहेगी? खतरा उसकी श्राव के खुनेपन से नहीं है (क्याकि वह तो 'नई कहानी' की पहली शत है या शर्माँ में कोई भी क्रम उसे आप दें) खुनेपन में बँध जाने से है। जबकि नई-कहानी के लेखक के लिए जरूरी है कि वह लगातार वस्तु और शिल्प के बने बनाए दायरा और श्रायामों को तोड़ता हुआ उनमें श्रागे लिख, क्याकि नई कहानी किसी सन् विशेष का सिक्का नहीं है वह लगातार प्रक्रिया में ढलता हुआ सिक्का है। मनरिज्म के चक्कर में कुछ ऐसा होता है कि एक स्तर पर वस्तु से शिल्प का ताल-मेल टूट जाता है। वस्तु की विवसित नोकें मर जाती हैं और वह जीवन को पकड़ में पीछे छूट जाती है। तब कहानी महज सतही हाकर रह जाती है या फिर कहने का ढब मान हाकर और यह ढब भी पहले ही कहा जा चुका होता है। इस ढब की चुनौती का जय तक नया कथाकार खुशी श्रांश स्वीकार नहीं करता, तब तक उसकी नियति-अपने पिताश्रा से किसी तरह बेन्तर नहीं हो सकती।

शिल्प-ढब की इस चुनौती को उसके तमाम खतरा में और-और नामा के साथ राजेद्र यादव और रमेश बक्षी ने स्वीकारा है। राजेद्र यादव कथा शिल्प प्रयोगों को लेकर प्रसिद्ध हैं तो इसलिए बदनाम भी हैं (कभी-कभी हम किसी की आलोचना इमी-लिए करते हैं कि वह प्रसिद्ध क्या है? और जिन बातों के लिए हम उसकी प्रशसा कर सकते हैं उन्हीं बातों को उसके विराध में स्तेमाल कर लेते हैं। उपलब्धि की श्रााराप के तौर पर प्रस्तुत करने की इस समीक्षा युद्धि के पीछे कितने व्याक्तिगत कारणों और ठहरी हुई शक्ति का होना है। इस पर अलग से बहम करने की जरूरत नहीं) बस इतना ही कहना है कि राजेद्र यादव ने अभी तक वस्तु बोध की नब्ब से अपनी उँगनी फिसलने नहीं दी है और यह भी कि शिल्प को नए-नए श्रायामा में खोलने का खतरा भरा उल्हाह अभी उनमें चुका नहीं है।

विचली पीढी के कथा समीक्षक उलभे शिल्प और फिर उलभी हुई वस्तु(शिला यत क्रम काविले गौर है) की शिल्पायत करने हुए पाए गए हैं। लेकिन असल बात की

गिनायत ये रही करते (या तो वहाँ तक उतरी पहुँच नहीं है या फिर जानकर वहाँ ये 'भनपहुँचा' रहता चाहते हैं) यानी आज के व्यस्त सतुल जीवन में गिनायत की बात उनको हुई जिन्दगी से हो जाती है जिसका भावश्यक परिणाम उनको हुई वस्तु और इसी के चलते उलझा हुआ शिल्प है वे इन भावश्यक परिणामों से बतराने हुए, इन तथ्यों को उनके वस्तु शिल्प के नाम पर नकारते हैं और सपाटपा (पलैटनस) की महिमयत की कहानी में 'बे-दर' देना चाहते हैं वहाँ ऐसा तो नहीं है कि चक्करदार वस्तु-शिल्प से भयभीत उनकी 'सपाट समीक्षा बुद्धि, अपने तर्क 'सपाटपा की सुविधा चाहती हो ? जो भी हो, (या जो न भी हो) ऐसा जरूर हो सकता है कि चक्करदार वस्तु-शिल्प आयोजन में लेखक से चूक हो जाय पर उनके खतरे उठाने वाले साहम और उपलब्धियों के प्रति अनजान बनते हुए महज उसकी 'चूक' की आलोचना करना या तो सतुलित समीक्षा-बुद्धि के अभाव का वायस हो सकता है या तो फिर कुछ निजी और सतही धारणा का नतीजा और इसीलिए इसे समीक्षा स्तर पर गम्भीरता से नहीं लिया जा सकता।

दुनियाँ के साहित्य में महत्वपूर्ण कृतियाँ केवल सपाट वस्तु-शिल्प का परिणाम ही नहीं हैं और फिर आज जिस वस्तु शिल्प को चक्करदार समझा जा रहा है वह आने वाली पीढ़ियों के यहाँ भी ऐसा ही समझा जायगा, इसके लिए साहित्य इतिहास से हम कोई विश्वसनीय निष्कर्ष प्राप्त नहीं है चक्करदार वस्तु-शिल्प की आलोचना तो की जा सकती है लेकिन उसकी साहित्यिकता को सदिग्ध नहीं ठहराया जा सकता, बल्कि क्या के बढते वस्तु-शिल्प आयामों के लिए किसी स्तर पर चक्करदार वस्तु शिल्प आयोजन महत्वपूर्ण भी हो सकता है बहरहाल।

किसी भी साहित्य-रूप की प्रचलित जमीन को नया शिल्प नहीं तोड़ता ताइन की हॉस में वह आरोपित जरूर होने लगता है, उस जमीन को तोड़ती है नयी वस्तु वस्तु को कहे जाने की विवशता से गुजरना ही रचनाकार का शिल्प दायरे में चले आना है और वस्तु को जिस कोण से वह उठाता है, वही उसका शिल्प कोण भी होता है गो यह ख्याल कर लेना जरूरी है कि वस्तु की नवीनता दरअसल लेखक की क्यात्मक दृष्टि की नवीनता है करना अपने सही माइने में कोई भी वस्तु नवीन नहीं होती अलबत्ता वह अजीवागरीब तो हो ही सकती है और अजीवागरीब हाना नवीनता का पर्याय तो नहीं ही होता।

यह क्यात्मक दृष्टि की नवीनता ही लेखक का शिल्प की नवीनता से जोड़ती है यानी वस्तु के प्रति नया दृष्टिकोण शिल्प के प्रति भी नया कोण होता है और जिस रचनाकार के यहाँ वस्तु के प्रति नया कोण नहीं होता वहाँ शिल्प भी पुराना ही

होना है इसलिए एक ही कहानी में वस्तु का पुरानापन बताते हुए जो समक्ष शिल्प की नवीनता का पता बताने हैं और उसे 'उपलब्ध कर लिए जान के दावे से भी गुजर लेने हैं दरअसल व शिल्प को गलत 'पहचान' से जुड़े हुए होते हैं और रूप और वस्तु की सायुज्य सखिलप्यता का मतलब उनके लिए कठिन होता है यानी यही मतलब वस्तु शिल्प का अग्रभेद प्रकट करता है कि वे (वस्तु और शिल्प) अपनी अन्त सरचना में एक दूसरे का अनिवाय अंग ही नहीं हैं बल्कि अनिवाय नतीजा भी हैं

विषय प्रतीक फलशयक जत कविता और नाटक की समीक्षा गद्दावली के नुकता में क्या-शिल्प की पहचान देना कहानी-शिल्प को समझने के सतही और विद्यार्थियोंचित विवेक से गुजरना है और इनसे सुविधा उगाहने का मतलब कहानी शिल्प को समझने के तहत इही की परिक्रमा करते रहने का मतलब बब है ? फिर इहे भी क्या वस्तु की अन्त सरचना के प्रतिपचन के तौर पर बूझा जाता है ? दरकार इस बात को कहन की है कि क्या-सरचना का सखिलप्य मुहावरा ही शिल्प की पहचान में सही समीक्षा-श्रीजार का मतलब रखता है और जो समीक्षक इस रविश से हटकर कविता-समीक्षा के मुहावरे में शिल्प की पहचान पाने का दावा करते हैं वे कहानी को कविता करके ही पहचानते हैं और उनकी क्या समीक्षाएँ भी वेहद कवितानुमा होती हैं मसलन क्या को पाठ प्रक्रिया की बाबत उनका यह कथन कि 'क्षितिज का एक चलता हुआ दायरा है ' गोया क्षितिज न हुआ बादल का टुकड़ा हो गया और वह बादल का टुकड़ा भी क्या जो क्षितिज पर ही चल, कमाल तो तब है जब वह कहानी में चले कहानी की पाठ प्रक्रिया के नाम पर चलता हुआ, यानी एक-दम अस्थिर अप्रतिबद्ध क्या आप बता सकते हैं कि क्षितिज का दायरा-अगर वह होता भी है—तब कसे चलता है और कि उसका अनुमान भी कि कसे चलता होगा ? क्या समीक्षा में इन जागनधर्मा सादा का क्या मतलब है ? और बावजूद अपने इस जागन के मामूमियत से यह भी पूछ लिया जाता है कि 'मुकम्मल कहानी' क्या होती है ? और उसके रूप-वस्तु की सखिलप्य सायुज्यता को नजरन्दाज कर-जा कि भीसत तौर पर एक मुकम्मल कहानी का उसकी सरचना में मतलब होता है—उसी सास में उसके—मुकम्मल साद के-जागन होने का निणय भी सुना दिया जाता है इन निणय-व्याकुल मित्रों को बाबत जो खुद पर निणय दिए जाने के भय से डरे हुए हैं और जल्दी में निणय दे बैठे हैं—और यह जल्दी मसले पर विचार करने की अपेक्षा निणय दे देन में खास होती है, काभू ने बेहतर लिखा है— हम निणय करने के लिए उनमें ही तत्पर रहते हैं जितना कि व्यभिचार करने के लिए अगर आपको कोई सदेह हो तो आज के नर पुगवों के लेखन का पाठ कर लीजिए लोग निणय देने के लिए उगावले इसीलिए रहते हैं कि वही उन्हें स्वय ही निणय न सुनना पड जाय

बहरहाल, कहानी में 'क्षितिज का चलता हुआ दायरा पहचानन और नापने

वानी कथा भी यह बाल धर्मा समीक्षा-बुद्धि बालों की ही तरह घुँघली बेशीन, टोंग और टुपडों में विभाजित है, जो जरूरत न होने पर तो निराला कवितात्मक अन्तर्गम रूप धरत जाती है और जरूरत होने पर अनावृष्टि में बाल जाती है यह कथा का समीक्षा-बुद्धि का चतता हुआ पादन धर्मा दायरा कथा समीक्षा में कितने दिन टहर पाएगा, इसकी वाचन महादेवी के यहाँ पूरा कहा गया है गो यह बात अलग है कि महादेवी न उमे फिर किसी दूसरे ही सम्भ में चाहे कहा हो—“परिचय इना इतिहाम यही, बल उमरी की मिट भाज चली’

किसी भी कहानी में काल्य की पहचान कहानी की वस्तु की भी पहचान है, लेकिन जब हम उसकी वस्तु में नवीनता की हिमायत करते हुए शिल्प की नवीनता पर प्रश्न बिह लगाते हैं तब हम अपनी ही समीक्षा बुद्धि के अन्तर विरोध से गुजरते हैं जिन समीक्षावा नें ‘नई कहानी’ के काल्य को नया बताया है और वस्तु को पुराना वे भी अपनी समीक्षा-बुद्धि में सावधान नहीं हैं और इसी अन्तर विरोध के गिकार हो रहे हैं

कथा का मुहावरा लेखकीय दृष्टि का मुहावरा है, वही काल्य की नवीनता को निश्चित करता है और वस्तु की नवीनता को रेखांकित भी, अलबत्ता इस बात को भी परीक्षित कर लिए जान को जरूरत तो होती ही है कि खिदगी में वन वन पर बोलने की तरह ही कहानी में भी बहने का ढग वही प्रायोजित तो नहीं है और अगर ऐसा है तब न केवल शिल्प बल्कि वस्तु भी प्रायोजित ही होता है मतलब वह लेखकीय रचना प्रक्रिया का अंग नहीं होती यानी उसमें अनुभव से गुजरने का सबूत नहीं होता, अलबत्ता उसके चौखट पर कहानी गढ़ने की मशकत वहाँ जरूर होती है और तब यह समझ लेजाना कुछ मुश्किल नहीं होता कि लेखक का कथात्मक ढग वस्तु काल्य की सायुज्य अन्विति का नतीजा है या कि उढाया हुआ और कि छोडा हुआ भी एक ही लखरु में वस्तु की नवीनता उसके काल्य की नवीनता का भी अंग बनाती है रावेश के यहाँ ‘मलके का मालिक’ और ‘जानवर और जानवर’ की वस्तु अपने स्वभाव में एक जसी ही है और वह ‘फौलाद का आकाश’ से कुछ भिन्न है इसीलिए दोना का काल्य भी अलग है सुहागिनें’ और ‘मिस पाल’ की वस्तु को रावेश किसी स्तर और किसी सदन में पीछे छोडकर जल्द में आगे बढ़ता है तो उसी अनुपात में उसने काल्य में भी नवीनता और प्राधुनिकता वाचा अन्तर आ जाता है, गो राकेग अपने कथात्मक मुहावरे में एक रास बनी बनाई रविग पर ही चलत हैं जो उनके वस्तु काल्य के स्वभाव को भी प्राय तय कर देती है

वस्तु की बजह से काल्य के स्वभाव बदलाव को समझने में इस तरह आसानी होगी कि निमल धर्मा की वस्तु गिब प्रसाद सिंह की कथा-वस्तु से भिन्न प्रवृत्ति की है और इसी अनुपात में दोना का काल्य भी अपनी कथात्मक दृष्टि के अनुरूप ही निमल

वर्मा लदन की एक रात और 'डेड इ च ऊपर' में गिल्ब की समानान्तर हुआ म ही रहते हैं क्योंकि दोनों कहानियों का स्वभाव एक ही है, जबकि यही स्वभाव 'परिन्द' के वस्तु-गिल्ब के मुहावरे से नितान्त नहीं तो पर्याप्त भिन्न तो है ही इसी तरह उपा प्रियम्बदा की कहानियों की वस्तु मन्नु भडारी की कहानिया की वस्तु से भिन्न स्तर का है, यानी दोनों के कथात्मक बोध और कोण में दूर तक अन्तर है और इन्हीं के चलते दोनों के गिल्ब के मुहावरे भी एक-दूसरे से अलग अलग हैं, जबकि अपनी वस्तु के एक जैसे मिजाज की वजह से शिव प्रसाद सिंह और माकण्डेय और शैलेश मटियानी और रेणु वाफ़ी करीब हैं इसी तरह अमरकान्त और भीष्म साहनी भी, लेकिन बावजूद कथा में नए शिल्प प्रयोगों में दिलचस्पी लेने के राजेश बक्षी अपनी अलग अलग स्वभाव वाली वस्तु के चलते ही शिल्प स्तर पर एक दूसरे से समानता नहीं रखते, यहाँ तक कि कुछ अघोरी कथाकार भी शिल्प स्तर पर दूसरे तमाम कथाकारों से इस लिए साफ-साफ अलग पहचाने जा सकते हैं क्योंकि उनकी कहानियों की वस्तु बदले हुए गिल्ब की गिनारूत देती है और कहानी में जहाँ भिन्न महज गिल्ब की नवीनता को ही, वस्तु को पुरानी बताने हुए चीढ़ पाने है वहाँ ऐसा महसूस होता है गोया शिल्प कहानी और कहानी की वस्तु से कोई नितान्त अलहदा विस्म की चीज है जिसे समझने के लिए और ज्यादा समझने के लिए कहानी का होना कोई जरूरी शत नहीं है मित्रा की समीक्षा-बुद्धि का जब यह आलम है तो उसकी बावत क्या कहा जा सकता है

'नई कहानी' की बावत यह कहना कि शिल्प-नात प्रयोग उसमें नहीं हुए है और न ही उनके लिए वहाँ गुंजाइश है प्रकारान्तर से 'नई कहानियों' की वस्तु की नवीनता को नकारना है, जबकि प्रमाण इस बात के हैं कि कहानी ने न सिर्फ सस्मरण, रक्षा चित्र रिपोर्टाज से ही अपने माध्यम के अनुकूल मदद ली है, जिसका सबूत नई कहानी से पहले हिंदी कथा में बेहद कम मिलता है—बल्कि स्थापत्य संगीत व चित्रकला से भी स्वयं की जरूरत भर समृद्ध किया है और यहाँ तक भी कि मनोविज्ञान की अनेक मरशियों को कथात्मक बोध में पहचानते हुए उनके जरिए शिल्प में नवीनता पदा की है ठेठ कविता के पटन पर कुछेक लेखकों ने कहानियाँ कहने की वाशिंग की है और ड्रामा तो कहानियों में भरसा हुआ तभी से किया जाता रहा है कुछ अघोरी कथा-कारों ने इस तरह कहानियाँ लिखी हैं कि वे कविता के बेहद करीब हैं और मुक्तिबोध जैसे कुछ कवियों ने चाहे अपनी कविताओं पर अलग अलग कहानियाँ न भी लिखी हों लेकिन उनकी कविताओं में एक एक कहानी जरूर मिल जायगी इधर का कुछेक कहानियों की बानगी को देखते हुए कथा-शिल्प के स्तर पर ऐसा महसूस होता है कि सम्भव है अरसे तक प्रतीक्षा करने से पहले ही शिल्प स्तर पर कहानी और कविता के माध्यमों का अंतर दुबला जाय, जिसका सबूत कुछ नवयुवक कवि कविताएँ कहानी माध्यम के समीप लिखकर पेश कर रहे हैं और कवि शमशेर तो अरसा पहले ही कह

चुके हैं कि कविता में आज जो तत्व हम खोजते हैं वह भवसर कहानी, स्वेच और उप-याम के भावुन और गहरे स्थलों में सहज ही मिल जाता है यानी इसने यह बात कम सिद्ध होती है कि कथा गिरत कविता के करीब पहुँच रहा है, बल्कि जो सिद्ध होता है वह यह कि कविता का ढाँचा—जो वाक्य-वस्तु को भ्रान्तरिक संरचना का अनिवाय प्रतिफलन है—अपनी छोटी बड़ी पक्तियों के वाक्य-वस्तु के वेहद करीब आता जा रहा है और यह भी कि दोनों माध्यमों की वस्तु भी परस्पर करीबी रिश्ता कायम कर रही है यो युग-बोध को जोहते हुए पहले भी वह एक दूसरे से दूर कम ही थी

नई कहानी का शिल्प शास्त्रीय तयारिया से एकत्र हट गया है, यानी कथा वस्तु के स्वभाव में भ्रान्तरिक परिवर्तन आने के कारण उगका आदि अन्त और मध्य उस तरह निश्चित नहीं होता, जिस तरह प्रेमचंद प्रसाद सुशान और उग्र के यहाँ वह होता था बल्कि यशपाल और जनेन्द्र के यहाँ भी उसने अपना फामूला इजाद कर लिया था और यशपाल की कहानियों का ढाँचा तो बेहद बेहद शास्त्रीय है जो जनेन्द्र ने उसे नया मुहावरा जरूर दिया था

वस्तु का बदलाव कथा शिल्प में भी बदलाव लाता है दूसरे माइने में वस्तु का बदलाव कथा शिल्प का बदलाव भी है इस तथ्य की पुष्टि बड़े ही अप्रतिबद्ध ढंग से एक कवि-कथाकार मित्र के यहाँ भी होती है—“यह कहना कि आज की कहानी पहले की भाँति फामूला पर नहीं चलती ठीक है पहले की भाँति आज हमारे जीवन-मूल्य या उसकी पद्धतियाँ वसी नहीं रह गई हैं फलतः वसे फामूले भी नहीं रह गए हैं, आज मूल्यों एवं पद्धतियों का बहुत कुछ आवश्यक एवं अनावश्यक मिश्रण हो रहा है ऐसी स्थिति में फारमूले ही ही बस सकते हैं । लेकिन जब यही मित्र यह मानते हुए भी कि आज की कहानी कही से भी आरम्भ होकर कही भी समाप्त हो सकती है क्योंकि वह कला के नियमों से निर्देशित न होकर, जीवन की अवाधता से प्रवाहित होती है पहले की कहानी एक विशेष ढंग से आरम्भ होकर विकसित होती थी और उसके बाद निष्पत्ति होती हुई समाप्त होती थी अतएव उसमें कला का वनावटीपन अधिक लगता था ।’ आजिजी से यह कहते हुए पाये जाने हैं कि इतना तो तय है कि आज की कहानी भी जब आरम्भ होती है तब उसे समाप्त भी होना ही पड़ता है (इस फिजसो फिक्ल अन्दाज पर गौर किया जाय गोया कोई धम शुरु शास्ता-मुद्रा में जीवन-जगत की नश्वरता क्या न कर रहा है (जीवन आरम्भ होता है तब उसे समाप्त होना ही पड़ता है आदमी जन्म लेता है तो उसे मरना भी पड़ता है)) लेकिन क्या आज की कहानी के आदि और अन्त का भी अपना एक प्रकार नहीं बन गया है ? माना कि बड़ा ही लचीला प्रकार है पर है तो तब उनका कथन ‘मनुष्य एवं सामाजिक प्राणी है । की विरोधरी का लगता है, अगर इतने ही मोट तौर पर दो चीजों में समानता ढूँढने की लत पाली जाएगी तब तो महज निचे जान के आधार पर ही

कविता और कहानी को एक मान लिया जा सकता है 'कहाँ तो जिन्दगी के प्रवाह का नतीजा होती हुई 'नई कहानी' और उसका शिल्प और कला के भविष्यसित नियमों की ममी में बन्द पुरानी कहानी' लेकिन जिन मित्रों ने साहित्य में जिन्दगी की परवाह करना छोड़ दिया है, वे कला के नियमों की मृत दुनियाँ में प्रेत बनकर घूमने के लिए इसी तरह विवश हैं जिन्दगी से उपजी कला और कला से उपजी जिन्दगी का अन्तर ग्रहण नहीं है ? 'नई कहानी' है कि जिन्दगी के ठेठ प्रवाह को कलात्मक ढंग में अभिव्यक्त करने में अपनी साधकता समझ रही है और उसका शिल्प भी इसी का परिणाम है और हमारे समीक्षक मित्र हैं कि कला के भरे-भराए नियमों से बनी हुई पुरानी कहानी के समान ही 'नई कहानी' के शिल्प को घोषित करने में लुटे हुए हैं "जिस तरह लक्षण ग्रन्थों के आधार पर लिखी गई नायिका भेदी कविता में काव्य का अभाव होता है क्या उसी तरह कहानी के लिए निर्दिष्ट किए गए कथा-नियमों के चौबटे में कथा-शिल्प की सम्भावना और जिन्दगी की पकड़ नहीं चुकती ? एक तरफ हैं पुरानी कहानी के रीतिकालीन नायिका भेदी शिल्प जैसे तय किए गए कथा नियम और दूसरी तरफ हैं आधुनिक जीवन की सगतियों-विसगतियों के साथ ठेठ जीवन के प्रवाह को शिल्प में उतारने की कोशिश से लूभता हुआ नयी कहानी का ससार इन दोनों में 'फारमूला' की समानता खोजना क्या आधुनिकता में रीतिकाल को खोजना नहीं है ? क्या के तय किए गए नियमों के निर्देशन में लिखी जाती हुई पुरानी कहानी बनावटी हो जाती थी, यह इसलिए भी कि उसकी वस्तु बनावटी यानी आयोजित आदानों की वस्तु होती थी, जबकि नयी कहानी जीवन प्रवाह से परिचालित होती हुई जिन्दगी की बनावट को प्रस्तुत करती है इन दोनों कहानियों का बनावटी जीवन और 'जीवन की बनावट' का अन्तर दो युग बोधों का अन्तर है और यह अन्तर ऐसा मामूली नहीं है कि जिसकी उपेक्षा करके दोनों में 'फारमूला' की समानता तलाशा जाय लेकिन जिन मित्रों की दृष्टि ही 'फारमूला' बढ हो गई है, उनसे इसके अलावा और क्या आगा की जा सकती है ?

लेकिन कथा-विचार में यह स्थिति क्या कम सतोपजनक है कि कम-अज-कम कथा शिल्प पर विचार के दौरान यहाँ कहानी के सदस्यों से और कहानी समीक्षा को तथा कथित परम्परा के हवाला से तो गुजरा गया है, वरना हमारे क्या समीक्षक हैं कि बिना कविता को बगलगीर किए कथा विचार में डग दो डग बढना भी अर्धधार्मिक समझते हैं कविता की 'भाव-बोध' जैसी समीक्षा शब्दावली को कथा-विचार की भाषा का मुकम्मल मुहावरा मानने वाले इन समीक्षकों के प्रयत्न से तो यही ग्रहण होता है कि अगर कहानी कविता नहीं है तो उनको कला से उनका समीक्षा विवेक उसे कविता करके ही लेगा और कविता करके ही समझाएगा 'कहानी अगर कविता नहीं हो पाई है तो वे उसे कविता बनाकर छोड़ेंगे कविता के सहारे कहानी में कविता के

विधि पेटर्न की तलाश ही उनके यहाँ कथा विचार के नए आयामों की तलाश होगी, यानी यहाँ तब भी कि कहानी में उसका शिल्प-विकास कविता की तरह ही और कविता के समानांतर ही होता चाहिए अगर यह प्रगति बसी नहीं है तो कहानी में न तो इसके लिए गुंजाइश है और इसीलिए न तो वह कविता के समान विवक्षित है, मतलब कि कहानी की धारत जो कुछ सोचा जाय वह कविता के साथ और कविता के साथ-साथ—‘एक और शिल्प की नवीनता (गोया रूप, शिल्प से कुछ प्रसहदा चीज होती है ?) सामान्यतः उसका (पाठक का) ध्यान सबसे पहले आकृष्ट करती है और कहानी में कविता की तरह रूप और शिल्प की नवीनता बहुत कम आई है कहानी के क्षेत्र में कविता की प्रेरणा रूपवादी प्रवृत्ति बहुत कम दिखाई पड़ती है, सामान्य इसलिए कि कहानी में शिल्प प्रयोग की गुंजाइश कम है इस कथन की ‘बलिडिटी कि कहानी में शिल्प-प्रयोग का गुंजाइश कम है—पर प्रश्न चिह्न के वाक्यजुद (क्योंकि तब उसमें वस्तु की नवीनता के लिए भी गुंजाइश कम माननी पड़ेगी और वस्तु की नवीनता यानी कथात्मक बीज की नवीनता के चलते शिल्प की नवीनता की गुंजाइश कसे कम हो सकती है ?) यह तो माना ही जा सकता है कि कविता के पटन पर प्रगति वहाँ नहीं है, (कविता के शिप जितना कहानी का शिल्प विवक्षित नहीं है—गद्य की हृदा को जोहते हुए—यह मैं नहीं कहता इसलिए कि तब इन्हीं समीक्षकों के दावे—कि आज की हिंदी कहानी विश्व-कहानी की उपलब्धियों की टक्कर में रखी जा सकती है—तोयते साबित हो जायेंगे और विश्व के कुछ प्रसिद्ध कथाकारों की रचनाओं को पढ़कर कम भ्रम-कम में इस नतीजे पर नहीं पहुँच सका हूँ कि कहानी युग बोध को प्रेषित कर पाने में आज भी किमी माइने में पिछड़ी हुई है गो मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहूँगा कि यह युग गद्य का युग है और कविता का मुहावरा उसके लिए छोड़ा पड़ता जा रहा है) यह इसलिए कि कथा शिल्प का विकास गद्य स्वभाव के अनुकूल है इसलिए उस कविता के सदा में रखकर या कि कविता के शिल्प की हृदा में रखकर सोचना गलत होगा इस नस्ल के समीक्षक जब पाठक को बीच में लाकर सबसे पहले रूप के लिए उसके आकर्षण की बात कहते हैं, तब सही माइने में वह अपने ही समीक्षा विवेक की बाबत कहते हैं जिसका मतलब होता है कि, इन्हीं पहले-पहल शिल्प की नवीनता ही आकर्षित करती है वस्तु का नहीं और चूँकि इस विभक्त (शिल्प और वस्तु में बँटी हुई) समीक्षा बुद्धि के कारण वस्तु में आई नवीनता को यह समीक्षक पहले नहीं पहचान पाते, इसलिए शिल्प में आई हुई महीन नवीनता इनकी दृष्टि से फिसल जाती है और तब इन्हीं आत्म विश्वास के साथ यह कहने में कोई संकोच नहीं होना कि कहानी में शिल्प प्रयोग के लिए गुंजाइश बहुत कम है। जेम्स ज्वाइस के मूत्रसिक्त के शिल्प प्रयोग को जब कहानी में उतारा जा रहा हो और चित्रबला का एक्टिवेशन (अमृतता) जब उसकी प्रवृत्ति बन रहा हो, ‘आँफमोन का प्रयोग और सगीन की स्यात्मकता कहानी

भाष्यम में गद्य का स्वभाव खोज रहे हों (और अब तो कथा के शिल्प-मुहावरे 'प्रॉप-सीन' का स्तेमाल कुछ अधोरो कविषा के यहाँ जिन्दगी की विपगतियों और निरयत्नता का अभिव्यक्त करने के लिए किया जाने लगा है) तब उसमें शिल्प प्रयोग के लिए गु जा-इंग कम होने की बात करना काफी दिलचस्प और मनारजक लगता है अलबता कविता के रूप-गत मोटे त्रु तो को, 'वस्तु की दुहाई देने वाले इन रूपवादी कथा समी-क्षा को, कहानी में न पाकर कहानी शिल्प को परीक्षित कर पाने में दिक्कत जरूर पेश आनी है और गद्य का स्वभाव इसके लिए उनकी कोई मदद नहीं कर सकता लेकिन यह बात कितनी दिलचस्प है कि जब इहें कहानी में काव्य-शिल्प के प्रयोग—उपमाएँ आदि—दिखाई पडते हैं तो इहे कहानी के छुट जाने का खतरा सताने लगता है दरअसल कथा-शिल्प न आँक पाने का यह सारा सबट कविता के समाना-तर कहानी को रखकर देखने की वजह से है और इस वजह से भी कि काव्य शास्त्र की उपल-घ सङ्कलितता को छोड देने स कहानी शिल्प को समझने में ज्यादा जद्दोजहद करनी पडगी और मूल में काव्य-समीक्षा सस्कारो के कारण यह जिद भी कि काव्य-समीक्षा को ही कुछ भागूली रहोबदल के बाद कहानी पर उडा दिया जाय और इस तरह कहानी समीक्षा के लिए छोटी कविता को समीक्षा विधि को आरोपित कर ले जाने का ग्रह भी बमूल लिया जाय ।

पुरानी कहानी स 'नयी कहानी की प्रवृत्ति इस अर्थ में भी भिन्न है कि वह वास्तव की—उस वास्तव की जो प्रामाणिक है और जिसे प्रामाणिकता के साथ भेला जा रहा है—मग्नेपण देने के आग्रह से जुडी हुई है प्रामाणिक वास्तव को कहन की दत इसलिए कहानी में उठी कपोकि उसे वास्तव के जगल में से खोजना भी था, यानी प्रामाणिक वास्तव का सवाल, सिफ़ वास्तव का ही सवाल नहीं था, बल्कि वास्तव में से उम वास्तव की खोज या चुनाव का सवाल भी था जो आदमी की अँवैरी नियति में जुडा हुआ है मतलब जहाँ आदमी की आधुनिक जिन्दगी के और आधुनिक जिन्दगी के कारण उठे हुए मसले समूचे युग सद्म में उसकी विडम्बित स्थिति का रेखाङ्कित करते हैं और जिनकी पहचान उहे भेनकर यानी प्रामाणिक होकर रचना स्तर पर कहे जाने से ही सम्भव है इतना और भी कि जिनके मध्य समूचे विघटन और अपने सकट की पहचानने वाला आधुनिक आदमी का बदला हुआ कोण भी के-द्र में है फिर मानवीय नियति का यह सकट और यह विघटन जानरजन के यहाँ निरन्तर अँवैले पडते जाने और अनुपस्थित होने जाने के असनदत्र श्रम की जोहते हुए काटती हुई ठडक में 'सोप होते हुए और सम्ब-घ में चाहे हो, चाहे दूधनाय सिंह के यहाँ आइस बग में अपनी

शिनाहल दे रहा हो वह फिर स्त्री पुरुष के बनलते हुए सम्बन्धों की साक्ष्य में राजेन्द्र यादव के यहाँ 'दूटना रावेश के यह एक और जिदगी मुहागिनें कृष्ण बल्देव वद के यहाँ मेरा दुश्मन, भारती के यहाँ सावित्री न० २, कमलेश्वर के यहाँ 'दुखा के रास्ते, मन्नु भडारी के यहाँ 'यही सच है और 'ऊँचाई, ममता कालिया के यहाँ अनिर्णय' और 'पत्नी, उपा प्रियम्बदा के यहाँ मछलियाँ, रवीन्द्र कालिया के यहाँ 'नौ साल छोटी पत्नी, महेन्द्र भल्ला के यहाँ एक पति के नोटस', निमल वर्मा के यहाँ 'अंधेरे में हो या फिर वह आदमी की विडम्बना को रेखाङ्कित करते हुए 'देवा और दूध (माकण्डेय) विन्दा महराज (शिव प्रसाद सिंह) 'खून का रिश्ता (भीष्म साहनी) 'घर (श्रीकान्त वर्मा) मिस पाल (रावेश) बदलू (शेखर जोशी) 'दो दुखा का एक सुख (शलेश मटियानी) में सामने आता हो या अलग अलग स्तरो पर लदन की एक रात (निर्मल वर्मा) ठंड (श्रीकान्त वर्मा) 'सेव (रघुवीर सहाय) फेंस के इधर और उधर' (नान रजन) किसका बेटा (नरेण मेहता) 'भोलाराम की आत्मा (हरिशंकर पारसाई) 'प्रजा सत्ता (रेणु) 'कुछ बच्चे कुछ माँए (रमेश बक्षी) कहानियों में वह चाहे साफ हो रहा हो, फिर एक बात सब कही सही है कि वास्तव के इन तमाम स्तरो पर देश के साथ (चाहे उसे ठंडा बनाकर कहा जा रहा हो या फाटते हुए तीखेपन में) टकराने की प्रवृत्ति इन तमाम कहानियों में है इससे बचन और बचकर निकल जाने का रास्ता अब कथा के लिए नहीं रहा है इसका सबूत प्रयाग मुक्ल हृषीकेश अबध नारायण, गिरिराज किंगोर, कामता नाथ गोपाल उपाध्याय सुरेंद्र विजय मोहन सिंह, गंगा प्रसाद विमल ओम प्रकाश निमल आदि की कहानियाँ में भी स्पष्ट है

इस तरह नयी कहानी के माध्यम से हमारे नए कथाकार ने जिस सत्य को कहना चाहा है वह ठेठ है यानी वह धारणा बद्ध चिन्तन से मुक्त है और उसमें असाधारण कथा गित्य के पारण्ड से खुद को बचाए जान की आगमक कोशिश है क्योंकि 'असाधारण को कहने के फेर में और असाधारण होकर कहने के फेर में पुरानी कहानी सिर्फ 'डमी होकर रह गई थी वह अपने वास्तव जनित युग बोध का नतीजा न होकर सिद्धान्तों की मुद्राएँ पैदा करती थी इसलिए 'नयी कहानी' सभी प्रकार के बौद्धिक वादों (नयी बौद्धिकता से नहीं जिसका मतलब अपने युग की जिन्दगी को भेलेने से विसंगतियों को जीने भोगने के अनुभव से उपजी बौद्धिक सजगता से होता है) से स्वयं को मुक्त रखती हुई अवधारणात्मक सत्य के विरुद्ध जहाँ खड़ी हुई तो हम बात को भी प्रमुख करती हुई कि वह कितनी सत्य से— मतवादा से— हटकर जीव नानुभवा जनित बौद्धिकता की कहानी है जो कितनी सत्य से भल तो था सकती है तबिन जहाँ मेल नहीं खानी वहाँ कितनी सत्य अप्रामाणिक होने हैं और कि अब उस बनाया (मनुकेकर) नहीं किया जायगा, वह घटित होगी और उसके पटित को साम्य होकर कहा जायगा। इसी के तहत नए कथाकार न उन तमाम जीव नानुभवा की

कहने की भी जरूरत महसूस की, जिन्हें कहने के लिए किसी कदर साहम की जरूरत थी उन्हें भी जिन्हें पुराने कहानीकार कहानी 'बनाने' के पतरो के चलते देख नहीं पाए थे या कथात्मक दृष्टि में आने पर भी आरोपित समाज सुधारक जिद और वायवीय नैतिकता से इन सत्यो के सदम में कहानी का संसर किए रहते थे नए कथाकार ने, खासकर सातवें दसक में आकर उही-उन्ही को भी कहा, गार्कि यह नई कविता में भी हुमा और इस तरह दोनों साहित्य-रूप उत्तर सदी के इस सातवें दशक में अनेक आक्षांशों पर समानान्तर होकर रचे गए

नयी कहानी ने मानवीय सत्ताओं को जिन आक्षांशों पर देखा है, वह हिन्दी कहानी के विकास-क्रम में परिवर्तन का मतलब नहीं रखता, वह क्रान्ति का मतलब रखता है, जिसमें जीवन-सत्यो को विकास में नहीं नए सिरे से जोड़ा जाना है पुरानी कहानी आदर्शों आकांक्षाओं और स्वप्ना की कहानी थी गार्कि विदेशी दासता से मुक्त होने के लिए किसी स्तर पर वह अपने युग-बोध के दबाव का मतलब भी दे रही थी लेकिन यह मतलब केन्द्र में न घँसकर सरहदों पर से ही बटोर लिया गया था पुरानी कहानी के लिए असाधारण और अतिरंजन को 'सचाई' जसा प्रस्तुत करने का अपने माध्यम में प्रयत्न था वह मानवीय संकट और साम्प्रतिक बतमान से मुक्ति के लिए सघप में नहीं थी बल्कि कुछ वक्त के लिए—कहानी पढ़ते वक्त और उसके प्रभाव की मददहोशी में—मानवीय संकट को भूलकर 'मुखी' हो लेने का नुस्खा भर आयोजित करती थी। वह यथाय को 'अंधेरी कोठरी' से निजात पाने के लिए आदर्श के फूलों भरे उद्यान में कुछ समय को टहल पाने के लिए सामान जुटा देती थी और अक्सर वह 'अंधेरी कोठरी' और 'उद्यान'—आदर्शोन्मुख यथायवाद—दोना का एक ही रचना में आयोजन भी कर लेती थी—बहरहाल 'अंधेरी कोठरी' में आलोक की उस रेखा को खोजने की दरकार तो वहाँ नहीं ही हुई जो 'कोठरी' के अंधेरे को उसी में से होकर उजाले के रास्तों से जोड़ सके बल्कि उसकी भी नहीं, जिसको पहचान के जरिए कम-अज-कम न सही उजाले के रास्ते को कोठरी के अंधेरे को ही पहचाना जा सके नयी कहानी ने सज्जता के लिए इस विचार मात्र से ही निजात पाली उसने गहराने मानवीय संकट को उसके समूचे आस और स्फोटक रूप के साथ अंगीकृत किया और उपदेशक समाज सुधारक और गुम गलत की एकवारगी लत छोड़कर इस संकट से कतराकर नहीं, बल्कि इसे भेलन हुए रसी की पहचान के माध्यम से मुक्ति के लिए आदर्शों की सामर्थ्य को घुमा इसलिए कि इस अंधेरे में मानवीय संकट की जानकारी के साथ ही उसके जीते जाने के रास्तों की तलाश का सवाल भी जुड़ा हुआ है नयी कहानी में वे स्वप्न नहीं लिए गए—इसलिए भा कि स्वातंत्र्योत्तर उनके सारे उच्छरण एक बारगी उलझ गए थे और इसलिए भी कि वे स्वप्न मानवीय संकट से जुड़ हुए होकर नहीं लिए गए थे, बल्कि उससे बेसवर होन के लिए गए थे—जो आदर्शों ने

कोई एक तीसरा संवेदन कहानी की सृष्टि करा ले जाता है और तब क्यानक का हवाला देकर कहानी सत्य को तलाशने वाला क्या का पुराना ऋषि समीक्षक करीब करीब बदहवास हो जाता है और बौखलाहट में 'नयी क्या' पर ऐसी-ऐसी तोहमतेँ लगाता है—मसलत नयी कहानी घिना सिर पर की कहानी है और कि जो समझ में न आए वही नई कहानी है या कि नयी कहानी, कहानीकार पाठक के लिए नहीं सिर्फ एक दूसरे के लिए लिखते हैं—कि छासे समझदार लोगो की तबियत पस्त हो जाती है ।

व्यतीत क्या में घटना को खास महत्व देना, वातावरण को या चरित्र को खास महत्व देना ही क्याकारो का वह कोण रहा है, जिसने व्यतीत क्या समीक्षक को तत्वपरक आलोचना के लिए उबसाया और उत्साहित किया था जिससे यह समीक्षा बुद्धि चरित्र प्रधान घटना प्रधान आदि शब्दावली की बणामाला में बँट गई थी और जिसके चलते क्या समीक्षा महज औपचारिकता का निर्वाह हो गई थी इसीलिए यह सवाल उत्तर की यह दिशा भी निर्धारित करता है कि क्या दृष्टि समीक्षा-बुद्धि को दूर तक प्रभावित भी करती है और कभी-कभी उसकी 'टोन' को भी निर्धारित करती है

वावजूद इन तमाम बातों के यह भी सही है कि व्यतीत क्या-समीक्षा बुद्धि से क्या की सजक दृष्टि बहुत आगे थी और इस क्या-सजक दृष्टि के साथ क्या समीक्षा बुद्धि के दूर तक सहयोगी न होने की वजह कविता और काव्यता समीक्षा की विगिष्ट स्थिति थी तत्वालीन समीक्षा-बुद्धि कविता के सृजन और आलोचन के आतक से गुजर रही थी इसलिए यह न तो कहानी को सही दर्जा ही दिला सकती थी और न ही उसके मौलिक रचाव को विश्लेषित करने का साहस ही कर सकती थी क्योंकि तब उस समय उन तमाम आसमों का सिर से उतखनन करना पड़ता जो बने-बनाए आलोचना तंत्र पर आघात कर सकते थे

छोटी घटनाओं को या घटनाओं को छोटा करके ही नहीं बल्कि नई कहानी में घटनाओं के जन्म-सम को ही उनके सही वास्तव में दे पाने की समझ पनपी है घटना के साथ अतिरिक्त जोड़ देना और उन्हें अतिरिक्त उच्छ्वास के साथ कहानी में लाना लेखकीय नाबुवता है और रचना-कर्म में पूर्व आग्रह से सयुक्त होना भी है साथ-साथ इष्ट को खोजने के लिए या वहाँ तक पहुँचने के लिए घटना को रचनात्मक दृष्टि का भ्रम बनाकर उठाने हुए उसके लिए अतिरिक्त तयारी की जरूरत नहीं है और न ही इष्ट को यानी किसी द्वन्द्व-रंग को विडम्बना को किसी सन्नान्ति को उठा लेने के बाद भी अतिरिक्त तौर पर प्रस्तुत करने की जरूरत है, उमे तो रचना प्रक्रिया के अन्तरंग रास्ते से गुजरने हुए पाना है और इस सब में रचना प्रक्रिया से गुजरते हुए निस्संग और सहज भी रहना है, एतना सहज कि धुँधले लगते रंगों तक नयी आँखों का सामने साफ़-साफ़ एजरेँ और घटना ही बोध लक्षण आयाजन हीन होकर उमे खोने

दे घटना में कुछ जोड़ना नहीं है और घटाना इसलिए नहीं है कि उसने घटना को जहाँ म लिया है वह उतनी ही है कि उसमें घटाने की गु जाइश ही नहीं है वह अपनी जिनासा में वनानिक है कथाकार के समूचे दायित्व के साथ

व्यतीत कहानी में जिन घटनाओं को कहा जाता था वे अक्सर जीवन से कटी हुई आरोपित सत्या और वक्तव्या से लस होकर वायव्य हाती थी सुनी होने की और सुखी हो लेने की आकांक्षा से जुड़ी हुई—इसमें मुखान्त और दुखान्त दोनों ही कोणा को सराय मिलती थी या फिर उन्हें सवेम्ना के स्तर पर गहरे नहीं जिया जाता था और यदि कल्प के चतुर दाव-पेच (प्रसाद और जनेद्र के यहाँ जिनकी मधुआ और 'पत्नी' कहानियाँ को अपवाद माना जा सकता है) में उनके लिए जाने की प्रामाणिक सतही प्रतीति कराई भी जाती थी तो गहरे जोहने पर वह सबदना ही झूठी पड जाता थी

व्यतीत कथाकार के सामने कहानी लिखने की विवशता कम थी उसे बनाने का ध्येय ही मुख्य था कुछ कहे गए मत्वो को ही उसकी कहानी कर्ती थी जो जिन्दगी में से होकर नहीं थे, आयोजित होकर ही थे इतना जरूर था कि उसमें भारतीय दशन भारतीय सस्कृति और राष्ट्रीय धर्म की सुभाषिता और बचन-मुद्राओं के तौर पर ता रक्षा हो जाती थी, लेकिन आदमी और कहानी वहाँ बराबर ओट हुई रहती थी

नई कहानी' रचना होकर भी खास तौर से पुरानी कहानी से भिन्न है नया कथाकार पहले उसे 'रचना' की समूची हैसियत देता है बल्कि इस तरह कहा जाय कि वह पहले रचना को हैसियत पा लेती है, फिर वह कहानी होती है जबकि व्यतीत कथाकार कहानियाँ बुनता बनाता ता रहा—जिसका आधार अक्षर कोई नीति वाक्य होता था कोई सद्गुण या कोई आधाजिन सत्य—लेकिन रचना होने से पहले ही वह उसे अत दे देता था या इस तरह कहना सत्य के ज्यादा करीब होगा कि कहानी में जो रचना निर्मित का कोण होता है व्यतीत कथाकार क महा वह नहा था इसलिए रचना होने से पहले ही पुरानी कहानी अत नहीं होती थी, वह रचना हान के लिए शुरू भी नहीं हाती थी। ज में 'रचना' शब्द का स्तेमाल करता हूँ तब उसमें मेरा मतलब सृजन की उस समूची इकाई से हाना है जो अपनी आन्तरिक संरचना में सम्पुष्ट है और रचना प्रक्रिया के भीतरी दश व कृतिकार के आत्म सधप को प्रामाणिक होकर भेलेती है साहित्य को एक ऐसा इकाई जा अपने अर्थ में नितान्त 'साहित्य' शब्द है जिसमें दवाआ के श्रुणा से लेकर खाद्य सामग्री की सूची तक का साहित्य के नाम पर अर्थ नहीं होया जाता प्रेम आदि पर लिखी गई पुरानी कहानियाँ अक्सर साधु-सता पर लिखी गई कहानियाँ लगती हैं जिनका जिन्दगी और उसके वास्तव से वास्ता बेहद कम होता है और बेहद वास्ता उनका किससे होता है, यह अभी तक तय नहा हो पाया

है प्रेमियों की हालत यह है कि वे शर कसम कराने के लिए मुजाहिदों में शामिल हो गए हैं और प्रेमियाएँ सिवाय प्रेम के बाकी सब कुछ कर सकती हैं हार' में ही वहाँ 'जीत' महसूस की जाती है और रास्ता बनने रागी के सम्बन्ध हो जाते हैं विधवा के सामने सिवाय 'ममता' और सवा के दूसरा रास्ता नहीं होना और गुण्ड सत्वर्ग के लिए उत्सर्ग हो जाते हैं, नाम बदल-बदल कर साग-ब्रह्म के एन ही किम्मे हैं और स्त्री या सतीत्व परिवेण में अन्वेष्टित न किया जाकर हवा में लगाई गई कर्म है तमाम पंडित पागे हैं, दुष्ट दुष्ट है और सज्जन सज्जन है गर्जनि सब कुछ निरिचत है, प्राप्ति अन्त और मध्य वहाँ कुछ भी सोचन समझन की जरूरत नहीं मानवीय सम्बन्धों के नाम समूचा क्या साहित्य 'रामचरित मानस' में प्राप्त है यद्यपि सत्त्व सेवर हिन्दू मुस्लिम एवता धर्म पागण्ड के भण्टा फोडव जामूनी अभियान से लकर नारी शील की कच्चे पाँच की गुरिया समझन की परिवर्तनता तब सब की गल के एव ही राग में रियाज किया गया अच्युत-पुरा नतिक अनतिक के नीति शास्त्रीय मानवीय की चरित्रा में घटना और वातावरण के माध्यम से कहानी बनाने का तरीका की भ्रदा से खड़ा किया गया और मनोरंजन कमिया स वाहवाही पाकर लक्षण कम पर प्रसन्न भी हो लिया गया इस धान की वहाँ दरकार ही नहीं हुई कि अच्छे-बुरे, नतिक अनतिक की भी गर्चे बूझता है ता मानवीय सबूत के परिप्रेक्ष्य में उसे बूझे जाने की कोशिश ही, जो कोशिश की गई वह यह कि इन गोल मगोल वाता की उनके अन्त सूया की बनगत और उनके दबावों की बिना बूझ अपरोक्षित होकर ही क्या माध्यम में प्रस्तुत किया जाता रहा समाज सुधारक जिद और नीति परिभाषाओं की आदत सत्य मानकर कहानी में कहा गया और आदमी स उनके रिश्ते की जिदगी की साक्ष्य देकर प्रस्तुत नहीं किया गया नतीजा यह हुआ कि न तो मानवीय जीवना नुभवों की परिवेश में अन्वेष्टित किया गया और न तो आदमी का हा उसके सही चहरे के साथ अहमियत दिलाई जा सकी और जन आदमी की ही प्रतिष्ठा नहीं हो सकी तो उसकी अनुपस्थिति में कहानी की ही प्रतिष्ठा किस बिना पर होती ?

व्यतीत क्या म कथाकार न जिदगी से नहीं कृतिया से जिदगी की निमित्त करना चाहा था, जबकि नए कथाकार न जिदगी से कृतिमा को रचा है उसने अब धारणात्मक सत्य को काटकर हर अनुभव की परीक्षण करके ही कहानिया म दिया है यही वजह है कि रेणु रावेण यादव स लकर ज्ञान रत्न विजय मोहन सिंह-मुरेय तक कहानिया की एव बड़ी संख्या है जो अपनी प्रामाणिकता में युग सत्य की साक्ष्य दे रही है

कुछ समाक्षका के यहाँ नए साहित्य स जुड़ने की हौम में सादगी स यह मान लिया गया कि नयी कहानी वह जो नए-यानी उम्र में नए—लिख रहे हैं और पुरानी कहानी ? जो कि अब से पहले तक लिखा गई है और इही समीक्षा में एक वग वट

भी जो नया या पुराना जसा भेद मानने के लिए तयार ही नहीं था मतलब साहित्य गान्धित है, उसमें नया-पुराना क्या ? गर्जों कि नए-पुराने के भेद को या तो मानने में ही माफ़ इन्कार कर दिया गया या फिर उसे उन्नत के खाना में बांट दिया गया ज्यादा से ज्यादा यह हुआ कि कहानियाँ में बढ़ने हुए दृश्य बधा की ही नया मानकर उन्हें नयी कहानी घोषित कर दिया गया और इस तरह ग्रामाचलो पर लिखी गईं तमाम कहानियों को नयी कहानी के विश्व विद्यालय में दाखिला दिला दिया गया

नए पुराने का विवेक दो युग बोधा की दो दृष्टियाँ का विवेक है एक मजिदगी से ऊपर होकर सब कुछ सोचा ममम्मा ही कहा गया है और दूसरे में जो कुछ सोचना समझना है वह जिन्दगी की राह गुजर कर है और इन दोनों ही का भेद-विवेक नई-पुरानी कहानी के दरम्यान किया गया समीक्षा-विवेक है खासे पापूलर समीक्षका तब न इस विवेक को नजरान्दाज कर मात्र बदले हुए दृश्यबोधों के फ़म में जड़ी हुई पुरानी कथारमक दृष्टि को ही नई कहानी का दर्जा दे डाला और इस तरह नए और पुराने का विश्लेषण काफ़ी हद तक नहीं किया जा सका क्या की इस 'पहचान' में एक ओर तो नई कहानियों में नया क्या है ? सब कुछ पुनः प्रस्तुतीकरण है प्रेमचन्द का कहा हुआ है—जैसे प्रश्न उठाए गए और दूसरी ओर जा कुछ पुनः प्रस्तुत था उसे ही नया कहा गया मतलब, ग्रामाचल की क्या-वस्तु वाली तमाम कहानियों का प्रेमचन्द से जोड़ना—उनकी परम्परा में आगे लिखी हुई मानकर—'नई कहानी' या 'आज की कहानी' का मतलब लगाया गया प्रेमचन्द को और उनकी परम्परा को स्वयं सिद्ध स्तर पर नया मान लिया गया जबकि प्रेमचन्द विस्वागोई के ज़रिए दान्ते नानो की कहानियाँ वाली वस्तु को मनोरञ्जक बनाकर प्रस्तुत करते रहे और अतन् आरोपित सत्या को लेकर अपने किस्मागो की ही अहमियत देते रहे—गो मेरा मतलब यह कतई नहीं है कि—विस्वा गो हाकर नई दृष्टि नहीं दी जा सकती—आधुनिक जिन्दगी के तनावों द्वारा अन्तर्विरोध व बदलावों से जा दृष्टि उपजो है, वह प्रेमचन्द की बहुत कम—पूँस की रात और कफ़न—कहानियों में साफ़ हो सकी मतलब यह कि प्रेमचन्द को ग्राम्य क्या की नई कहानी के लिए परम्परा मानकर 'नए' के जो हिज़े किए गए वह गलत हुआ और इसीलिए तमाम ग्राम्य क्याग्रा की नई कहानी के तहत शुमार कर लना और भी गलत हुआ ग्राम्य क्या नई कहानी की परम्परा नहीं है और न तो प्रेमचन्द से जुड़े रहने का माह ही अलवत्ता ग्राम्य क्या के माध्यम से भी नयी जीवन दृष्टि और नए जीवन को, आधुनिक जीवन के एक खाम पहनू को कहा जा सकता है और इस लिहाज़ से निव प्रसाद सिंह—नहो, विन्दा महाराज रेणु—रस प्रिया, तीमरा कमल पान की बेगम—माकडिय—गुनरा क वादा—गलर जोगी—बासी का घटदार—गलेग मटियाती आदि सामग्र्य के साथ क्या-मन उपस्था के माध्यम बन रहे हैं यद्यपि तब के इस पटन का जानते और नज़रते हुए

कि भारत कृषि प्रधान देश है इसलिए समस्त ग्राम्य कथा लेखन भा 'नयी कथा का प्रतिनिधि लेखन है

दरअसल 'वस्तु के निहाज से कथा लेखन वा जायजा लेना या नयी-पुरानी कहानी के परस्पर अंतर को समझना, नयी कथा समीक्षा का गलत कोण है और किसी स्तर पर तत्वपरक कथा-समीक्षा व संस्कार में धुंध को मुक्त न कर पाना भी जिस तरह नये लेखकों द्वारा शहरी जीवन पर लिखी जाने वाली तमाम कहानियाँ नयी नहीं हैं उसी तरह तमाम ग्राम्य कथा लेखन भी नयी कहानी का मतलब नहीं रखता

आधुनिक जीवन का विसर्गति और विडम्बना को टोह पान की गुंजाइश शहरा जीवन अगर उधादा है तो उसके सङ्क्रमण की गुंजाइश ग्राम्य जीवन में क्या कुछ कम है ? और फिर सवाल ग्राम्य जीवन और शहरी जीवन में जीवन के विभाजन का क्या है ? सवाल तो उस नयी कथात्मक दृष्टि क्षमता का है जो जीवन के बन्लावा और उसके सक्क की पहचान को पेश कर पाती है 'ग्राम्य कथा और शहरी कथा का विवाद उस समीक्षा-बुद्धि का नतीजा था जिसके पास इसके अतिरिक्त कथा सत्य को उगाहन के और कुछ बचा ही नहीं था और यह गुंभ हुआ कि इन विचार की अग्रनियत से जल्दी ही परिचित हो लिया गया किसी खास कहानाकार के नाम से अपनी कथा समीक्षा की इतिहास करना ही कुछ समीक्षों की गुंजारिश की इतिहास रही है, अब इसके लिए क्या किया जाय कि व लेखन अपनी कथा-उपलक्षियों में 'नए नहीं हैं' कथा-समीक्षा में 'शहरी कथा और 'ग्राम्य कथा' का सवाल बहुत कुछ इसी हस्तों के समीक्षकों ने उठाया था और अब हरा कुछ इस तरह बदला है कि 'गुंजारिश की इतिहास इसी में मानी जा रही है कि कुछ लेखकों का नाम बतई न लिया जाय 'समीक्षकों की इस विरादरी पर तरस रान के भलावा और क्या किया जा सकता है ?

नई कहानी और 'पुरानी कहानी का अन्तर उनमें उपयोग किए गए तनाव और सस्पेंस से भी समझा जा सकता है 'पुरानी कहानी में कथाकार 'सस्पेंस' का स्तेमाल कतोर फारमूला के करता था और अक्सर करता था जिसका मतलब होता था कि पाठकों को जीवन के गहरे और जटिल अनुभवों से परे रखने हुए उसे दुर्घवी उत्सुकता के दायरे में घसीट लाया जाय और कथा सगन के महत्त एक धार्मिक फार-मूला की खातिर उसको रुचि भ्रष्ट करदी जाय पुरान कथाकारों की इसी लन ने कथा का पाठ-प्रक्रिया का लम्बे अर्से तक गलत दिशा में लगाए रसा और इसी के चलते हिंदी-भाटक कथा को मनोरंजन का पर्याय समझना रहा' 'कथा-माध्यम से जीवन का समझन और जीवन मल्य का उपलक्ष्य करन में कहानी में करता गया सस्पेंस और उसकी चरम सीमा न पाठकों को उगे (कथा माध्यम) को गम्भीर विचार की अग्रनियत ही नहीं देन दो और इस तरह 'सस्पेंस' के चलते टिप्पण कहानी जागूगा स्तर पर हा पाठकों को लाती और पढ़वाने रही और उसमें रहस्य और उन्मुक्तता के गहन का धार

को सराय दतो रही नतीनों के तौर पर पुरानी कहानी ने मानवीय सफट को कभी भी पारिभाषित नहीं किया बल्कि इतना और भी कि इस सफट को ब्रूमन मे पाठक की पहल को भी उसने हतोत्साहित किया

नई कहानी म दर्शित होता हुआ 'तनाव , पुरानी कहानी के 'सस्पेन्स की तरह शिल्प का एक आरापित प्रकार नहीं है, बल्कि आधुनिक जिन्दगी के चलने कथ लेखन की रचना-प्रक्रिया का अनिवाय अंग है जो कहानी को जामूसी और मनोरंजन के स्तर स हटाकर उसे मानवीय सफट का केन्द्र सौपता है और पाठक को उसका ग्रह सास कराता है चूँकि कथा-गत यह तनाव आधुनिक जीवन की अग्रहीनता और विसंगतियों की उपज है, इसलिए वस्तु स्तर पर तो यह मानवीय सफट को रेखाङ्कित करता है और शिल्प स्तर पर आधुनिक जीवन के दबावों के प्रवाह का अनुसरण करता है और इसीलिए वस्तु शिल्प की सायुज्य सश्लिष्ट का नतीजा बनता है इस सदभ म इस नई कहानी की एक कथात्मक हृद और वस्तु-शिल्प का नया आयाम भी माना जा सकता है

कथा मे व्यवहृत सस्पेन्स और 'तनाव कथा के आदिम और अधुनातन मुहा-वरो का पाथक्य स्पष्ट करता है और वह दो युग की कथा-गत लेखकीय दृष्टि का भी पाथक्य प्रवर्तता है इस पक्ष के साथ कि पुरानी कहानी मे 'सस्पेन्स कहानी को 'बनान और दिलचस्प बनाए रखने मे एक अजीबगर मात्र था और करीब-करीब उसन कथा म कथोपकथन और चरित्र चित्रण जैसे कथा-तत्वा की तरह अपने लिए भी एक हैमियत प्राप्त करली थी लेकिन बोध-स्तर पर कथा के आंतरिक सगठन से उमका कोई वास्ता नहीं था, नई कहानी मे 'तनाव कथा के लिए अलग स किसी उपकरण का मतलब नहीं रखता, वह कथा मे आद्यत अनुस्यूत रहता है उसकी अनुपस्थिति को किसी भी कोण से कथा के किसी भी स्तर पर साबित नहीं किया जा सकता अगर वस्तु शिल्प के अलग अलग खानों म भी कथा को ब्रूमन को कोशिश से बाज न धाया जाय तब भी यह स्वीकार करते बनेगा कि वह जितना वस्तु स्तर पर है, उतना ही शिल्प स्तर भी कहना न होगा कि वस्तु-शिल्प को इस अपायक्य स्थिति ने नयी कहानी को एक 'जीविन इकाई सरचना की हैमियत दिला दा है करीब-करीब जिन्दगी के समानान्तर और जिन्दगी के पूरे तौर पर समानान्तर होना उसकी कलात्मक कोशिश और लक्ष्य है तनाव के जरिए वह मानवीय नियति के सफट को ब्रूमने मे मदद कर रही ह जबकि पुरानी कहानी कुतूहल के माध्यम से, मानवीय सफट स बेवबर हाने मे आदमी की मदद करती थी एक जिन्दगी के वास्तव से कतराती थी दूमरी उसके केन्द्र मे धँस कर उसे भ्रंते हुए उससे मुक्ति के लिए किसी बेहतर सूरत की कोशिश मे है

'सस्पेन्स की तरह ही पुरानी कहानी मे भायुक्ता एक आयाम थी जिमका उपयोग कथा लेखक निहायत सजगता से करता था, मतलब पाठक को दया करणा

और आधुनिकता के लिए वही तब विचार करता है और जिस तरह कथा के जान म बुद्धि-हीन ब्यापार बांध लेना है नई कहानी न इस हिप्नोटिज्म से निजात पाई है और पाठक को बात-बात पर रोने वाली स्थिति के दर्जे से उठाकर अप्रिय वयस्व विचार होने की स्थिति को है जिन्दगी के दबावा को सामान्य और महगूना करने में उगने बोद्धि स्तर पर विचार किया है और उसके विकसित होने में मदद की है यानी कहानी में भावुकता को बनौर 'फारमूला के उपयोग किए जान के वह विरुद्ध है और वह विरुद्ध कथा-गत हर फारमूल के है, हालांकि उसके फारमूला के बारे में प्रथम कुछ लेखकों के यहाँ गुंजायमान होने लगी है सजिन यह गुंजायमान व्यतीत कहानी के फारमूला जसी तो नहीं ही है भावुकता के विरुद्ध 'नई कहानी में व्यंग्य और तत्वी उभर कर आई है जो कथा लेखन की वयस्वता का सबूत है और पाठक को 'गल' स्थिति में उठाकर सोया बनाने के क्षेत्र में सारी इमदा है

नयी कथा में 'परिवेश की नवीनता को नया' मानकर धूमन से सवान को गलत उत्तर में नहीं बचाया जा सकता कथात्मक नवीन जीवन दृष्टि ही नई कहानी की पहचान का आधार है

आरोपित सत्या और विरोधा के आधार पर व्यतीत कहानी में चरित्रों के निर्माण का जो ध्येय था, नई कहानी में उसे महत्व नहीं मिला मानवम सक्क को रेखांकित करन पाल चरित्र ही नई कहानी के ससार में आए हैं और वे व्यतीत कहानी के चरित्रों की तरह महान और तुच्छ होकर नहीं, बल्कि मानवीय सदमों को उजागर करने हुए परिवेश में अक्षयित होकर दूसरे अर्थ में चरित्र की जगह वस्तु विचार की कथात्मक दृष्टि होकर

लम्बी कविताया की तरह लम्बी कहानियों (तीसरी कसम टूटना, मिस पाल एक और जिन्दगी एक पति के नास मछलियाँ मित्रो मरजानी, घारा के पार राजा निरवसिया आदि) का चलन इस बात का सबूत है कि आधुनिक जिन्दगी की पकड़ में हमारा कथा लेखन युग बोध के समानान्तर है बाबजूद अन्तर्विरोधा के जीवन का जो विडम्बनापूर्ण प्रवाह है, उसे इन लम्बी कहानिया में प्रामाणिक अनुभव की पुण्ड भूमि में बूमने की कोशिश है हालांकि ईसप के फुल जसो कहानिया नई कहानियों की अपना एक खास प्रकृति है***

नई कहानी ने गद्य की दूसरी विधाया को इस बदर धात्मसात किया है कि रेखाचित्र रिपोर्टाज सस्मरण यात्रा विवरण यहाँ तब कि निबंध भी उसके परिभाषा से इतना कम दूर रह गया है कि कहानी की प्रचलित समूची परिभाषा ही बल गई है नई कहानी न अपन माध्यम में विकसित होकर, अनेक साहित्यिक विधाया की कलात्मक विविधताओं को रचना प्रक्रिया का अंग बनाते हुए इस तरह शुभ म समो लिया है कि वह बदल हुए जीवनानुभवा को व्यतीत कहानी के मुकाबले, वह पान में बेह

सक्षम साविन हो रहो है

व्यतीत कहानी हम अनेक स्तरों पर वतमान से तोड़ती थी और एवज में अतीत और भविष्य से जोड़ती थी भविष्य का मुठठी में कसने के यत्न में समूचा व्यतीत क्या लेखन वतमान को फिसल जाने देता था और उन चिरागों की रोशनी की जड़ों में पलते हुए अंधरे पर हमारी दृष्टि नहीं जा पाती थी मतलब, हम वतमान से पूरे तौर पर कट हुए होते थे और यह कहानी का चिराग अतीत और भविष्य के धन्दीला में ही रगारग आलोक उनीचता रहना था गज्जे कि कहानी पढ़ने समय (और निखते समय भी) हम या तो अतीत में होने थे या भविष्य में या फिर एक सग अतीत और भविष्य दोनों में अगर वहाँ नहीं ही होते थे तो वह सिर्फ वतमान ही था और अब यह सोच सोच कर मनोरंजन के अलावा उनकी बेचारगी पर तरस भी आता है कि क्या में व्यतीत और भविष्य को गुनगुनाने के लिए अपने वतमान से बलात् कटने में कौसी तो माला में उन्हें गुंजरना पड़ा होगा और बिना वतमान को धुंभे कस तो वे अतीत और भविष्य को अदाज पाए होंगे ? दरअसल अपने वतमान पर साचते हुए का लहजा सा प्रस्तुत कर तात्कालिक विषयों और मानवीय सवट को भ्रंजन से इतरा जाने का छासा अन्धा नमूना व्यतीत कहानियाँ में उपलब्ध है इन कहानीकारों के यहाँ अपने वास्तव से जुक्त हुए आदमी को कहानी में एक हवादार नखलिस्तान तो उपलब्ध कर दिया जाता था ताकि वह छुनवर सास ले सके लेकिन कहानी पढ़ने के बाद उस फिर अपने दमपाट वास्तव में ही लौट आने की नियति मिली थी और इस नियति का सामना करने में न तो क्याकार की कोई हिस्सेदारी होती थी और न तो किसी तरह की कोई जवाबदेही ही इस नियति को नजरअंजब कर यदि कहानी नखलिस्तानों के निर्माण में कुछ हवाई 'अतीत और भविष्य' की अतिरिक्त रोमानी अन्त से गलदथु 'पहचान' दती रही तो इस वास्तव को बलने और बदलते हुए वास्तव को समझने वाला कोण तो विकसित हुआ ही नहीं, हुआ यह कि कहानी की इस तज ने उसे गभीर साहित्य रूप में देकर वास्तव की जवाबदेही से परे मनोरंजन का सुख वाला 'गल्प रूप दे दिया इसलिए कहानी गम गलत करने और पालतू वक्त काटने के लिए सुनने-पढ़ने को चीज तो हागई लेकिन समझदारी का तवाजा उमस नहीं किया गया ।

निमल चमा की कहानियाँ में वतमान बहुत कम होता है इस हद तक कि वह व्यतीत का हा प्रमार हो उठता है, यहाँ तक भी कि वह अक्षर वतमान को अतीत बनाकर हा पंग करने का आदी है यानी जो घट रहा है साक्ष्य उसनी ही वह देता है लेकिन घट हुए की नहीं बल्कि घट गए हुए के तौर पर इतना और भा कि भविष्य भी उसके यहाँ व्यतीत के लम्बे में ही पंग किया जाता है भरत हुए पत्ते उसने नहीं देखे हैं वह देखता तो है उन्हें लेकिन दूररे लिन—सधरे जब वे उड़कर रात का सडिया पर उतर गए हैं 'उव' 'पह साचना अच्छा लगता है कि कल रात ये पत्ते पुष्पाथ स उड

कर सोनिया पर आ ठहरे हंगे । उगयी कहानियाँ धक्कर यात्र की कहानियाँ हैं मतनब कहानियाँ म जो बुद्ध भी उभरता है और जो बुद्ध भी महत्त्वपूर्ण है वह यात्र म जो स्वप्न म भी हाती है और घीने हुए समय के माध्यम स भी यदि वतमान उसवे यहाँ व्यतीत म अलग नहीं होता, तो वह दूभर उमे अलग कर ले जाता है एक घुँघना सा याद का, मोन का, स्वप्न का सगोत का यात्रि दूगरी चंजरा का आवरण देकर

अने निमल का कहानियाँ म वनमान स कटन का जो सवान उठाया है वह इस माइन म नहीं कि निमल के यहाँ वतमान ससन की धुरी नहीं है जब प्रसाद जैसे लेखक व्यतात कथाओं म मौजूदा जिदगी के मसना से साक्षात्कार कर सकते थे तब निमल तो जिल्गी के वतमान अन्तर्विरोधा से परिचित होता हुआ एक निश्चित मजहबी भविष्य के तई प्रतिबद्ध है दरअस्त वनमान से कटने का अम पदा कर वतमान पर सोचते हुए उसकी कहानियाँ का अचना एक सास मुहावरा है और इस मुहावरे की गिरफ्त म हर लेखक अपनी अपनी दृष्टि के अनुकूल है ही

लकिन इधर 'नई कहानी' को व्यतीत जीवी कहानी करार देन म जो अथक अम हो रहा है वह खुत्र म काफी दिलचस्प है— नई कहानी का नायक अतीत म जीता है नई कहानी अपने वतमान के ही चलते व्यतीत कहानी और व्यतीत युगीन मूल्या व परम्पराओं के खिनाफ जो एक वारगी उठ खडो हुई है उसकी कसी आमक व्याख्या है कि वह अतीत जीवी है नई कहानी के गुरु दौर म बाबा, दादी माँ व पिता के जिन रिश्ता को पारिभाषित किया गया वह नई पीढी से उनके रिश्ता म बदलाव की वजह से अतीत की आँखों और अतीत की तुलना से वतमान आसने की दृष्टि से इन रिश्ता के मूल्याकन को अतीत जीवी होन की सना देना 'साहनपूर्ण' निष्कप होगा वतमान जीवन मे क्या व्यतीत रिश्त और पीढ़ियाँ नहीं हैं ? और अगर हैं तो क्या नए सदभों से उनकी बाबत सोचना अतीत जीवी हो जाना है क्या अतीत वतमान की पृष्ठभूमि बनकर नहीं आता और तब क्या वह वतमान के निमित्त प्रयुक्त नहीं होता ? फिर यह मतनब कैसे निकाला जा सकता है कि वतमान यदि नई कहानी मे आता है तो अतीत का जगाने का निमित्त बनकर ? नई कहानी का नायक जो अतीत म जीता है वह उसका लहजा है, लहजे और वस्तु म जा अतर है उसे समझन की दरकार है वस्तु और लहजे म एक होता है गाकि वस्तु का अपना लहजा होता है लकिन लहजा वस्तु जा नहीं होता, क्या यह कहे जाने की गु जाइश अब भी रखनी होगी कि लहजा कथन की मज्ज मुद्रा है कथ्य जा वह नहीं है फिर नयी कहानी का नायक जो अतीत म जीता है वह क्या अतीत होकर जीता है ? अतीत मे जीना और अतात होकर जीना दो अलग बातें हैं—वस्तु और लहजे के मानिन्द अगर दोना के अतर को नहीं समझा जाता तब नई कहानी को 'व्यतीत जीवी कहानी' कहना और उमका वतमान से कट होना जस निष्कर्ष निकालना बेहद आसान है आसान, लेकिन अहम नहीं बहरहाल ।

[२]

नई कहानी : पाठ

दोपहर का भोजन

सिद्धेश्वरी न खाना बनाने के बाद चूहे को बुझा दिया और दोनों घुटनों के बीच सिर रखकर शायद पर की उँगलियाँ या जमीन पर चलते चोटे चींटियों को देखने लगी। अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर से उसे प्यास लगी है। वह मतवाले की तरह उठी और गगरे से लोटा भर पानी लेकर गट गट चढा गई। खाली पानी उसके कलेजे में लग गया और वह 'हाय राम !' कहकर वहीं जमीन पर लेट गई।

लगभग आधे घंटे तक वही उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में जी आया। वह बठ गई, आँखों को मल-मलकर इधर उधर देखा और फिर उसकी दृष्टि ओमारे में जध टूटे खटोले पर सोये अपने छ वर्षीय लडके प्रमोद पर जम गई। लडका नग घडग पडा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ साफ दिखायी देती थी। उसके हाथ पर बासी ककडियों की तरह सूखे तथा बेजान पडे थे और उसका पेट हँडिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुँह खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियाँ उड रही थी।

वह उठी, बच्चे के मुँह पर अपना एक फटा गंदा ब्लाउज डाल दिया और एक-आध मिनट मुन्न खडी रहने के बाद बाहर दरवाजे पर जाकर किवाड की आड से गली निहारने लगी। वारह बज चुके थे। धूप अत्यन्त तेज थी और कभी कभी एक-दो व्यक्ति सिर पर तोलियाँ या गमछा रखे हुए या मजदूरी से छाटा ताने हुए फुर्ती के साथ लपकते हुए सामने से गुजर जाते।

दस पदह मिनट तक वह उसी तरह खडी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फल गई और उसने आसमान तथा कडी धूप की ओर चिंता से देखा। एक-दो क्षण बाद जब उसने सिर को किवाड में बाफी आग बढाकर गली के छोर की तरफ निहारा तो उरुका बडा लडका रामचंद्र धीरे धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसार की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जाकर खाने के स्थान को जल्दी-जल्दी पानी से लीपने-पोतने लगी। वहाँ पीड़ा रखकर उसने सिर को दरवाजे की ओर घुमाया ही था कि रामचंद्र न अंदर कदम रखा।

रामचन्द्र आकर पम-ना चौकी पर बठ गया और फिर वही बेजान-सा लट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था। उसके बाल अस्त-व्यस्त थे और उगम पटे पुराने जूता पर गर्जनी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसने पास जाय और वह वही स भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका घुमाकर बेटे का व्यग्रता स निहारती रही। किन्तु, लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात् भी जब रामचन्द्र नहीं उठा तो वह धवरा गई। पाग जाकर पुकारा— 'बडवू, बडवू।' लेकिन उसने कुछ उत्तर न देने पर डर गई और लटके की नाक के पास हाथ रख दिया। सास ठीक स चल रही थी। फिर गिर पर हाथ रखाकर देखा, बुरा नही था। हाथ के स्पन्द से रामचन्द्र ने आँखें सोली। पहले उसने माँ की आर मुस्त नजरा स देखा, फिर झट से उठ बठा। जूत निवालने और नीचे रख लोटके जल से हाथ-पर धोने के बाद वह यत्र की तरह चौकी पर आकर बठ गया।

सिद्धेश्वरी ने डरते डरते पूछा, 'दाना तयार ह यही लाऊँ क्या ?'

रामचन्द्र ने उठते हुए प्रश्न किया, "बाबूजी या चुके ?"

सिद्धेश्वरी ने चौंके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, "आते ही होंगे।"

रामचन्द्र पीढ़ पर बठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष थी। लंबा, दुबला-पतला, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें तथा होठा पर झुरियाँ। वह एक स्थानीय दैनिक समाचार-पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से प्रूफ रीडरों का काम सीखता था। पिछले साल ही उसने इण्टर पास किया था।

सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली लाकर सामने रख दी और पास ही बठकर पखा करन लगी। रामचन्द्र ने खाने की ओर दाशनिक की भाँति देखा। कुल दो रोटियाँ, भर कटोरा पनियाई दाल और घने की तली तरकारी।

रामचन्द्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा— 'मोहन कहाँ ह ? बड़ी कड़ी घूप हो रही ह।'

मोहन सिद्धेश्वरी का मजला लडका था। उसकी उम्र अठारह वर्ष थी और वह इस साल हाई स्कूल का प्राइवेट इम्तहान देने की तयारी कर रहा था। वह न मालूम कब से घर से गायब था और सिद्धेश्वरी का स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया ह।

किन्तु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और उसने झूठ-मूठ कहा— "किसी लडके के यहाँ पडने गया ह आता ही होगा। दिमाग उसका बडा तेज ह और उसकी तबीयत चौबीसो घंटे पडने में ही लगी रहती ह। हमेशा उसी की बात करता रहता ह।"

रामचन्द्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह में रखकर भरा गिलास पानी पी

गया, फिर खाने में लग गया। वह काफी छोटे छोटे टुकड़े तोड़कर उन्हें धीरे धीरे चबा रहा था।

सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटक निहार रही थी। कुछ क्षण बीतने के बाद डरते डरते उसने पूछा—“वहा कुछ हुआ क्या ?”

रामचंद्र ने अपनी बड़ी बड़ी भावहीन आंखा से अपनी माँ को देखा, फिर नीचा सिर करके कुछ रुखाई से बोला—“समय आने पर सब ठीक हो जायेगा।”

सिद्धेश्वरी चुप रही। धूप और तेज हो गई थी। छोटे आँगन के ऊपर आसमान में बादल के एक दो टुकड़े पाल की नावों की तरह तैर रहे थे। बाहर की गली से गुजरते हुए खडखडिया इक्के की आवाज आ रही थी और खटोले पर सोये बालक की सास का खर-खर शब्द सुनायी दे रहा था।

रामचंद्र ने अचानक चुप्पी को भंग करते हुए पूछा—“प्रमोद खा चुका ?”

सिद्धेश्वरी ने प्रमोद की ओर देखते हुए उदास स्वर में उत्तर दिया—“हाँ, खा चुका।”

“रोया तो नहीं था ?”

सिद्धेश्वरी फिर झूठ बोल गई—“आज तो सचमुच नहीं रोया। वह बड़ा ही होशियार हो गया है। कहता था, बड़का भया के यहाँ जाऊँगा। ऐसा लडका ”

पर वह आगे कुछ न बोल सकी, जैसे उसके गले में कुछ अटक गया। कल प्रमोद ने रेवडी खाने की जिद पकड़ ली थी और उसके लिए डेढ़ घंटे तक रोने के बाद सोया था।

रामचंद्र ने कुछ आश्चर्य के साथ अपनी माँ की आर देखा और फिर सिर नीचा करके कुछ तेजी से खाने लगा।

थाली में जब रोटी का केवल एक टुकड़ा शेष रह गया, तो सिद्धेश्वरी ने उठने का उपक्रम करते हुए प्रश्न किया—“एक रोटी और लाती हूँ ?”

रामचंद्र हाथ से मना करते हुए हड़बड़ाकर बोल पड़ा, “नहीं-नहीं, जरा भी नहीं। मेरा पेट पहले ही भर चुका है। मैं तो यह भी छोड़ने वाला हूँ। बस अब नहीं।”

सिद्धेश्वरी ने जिद की—“अच्छा, आधी ही सही।”

रामचंद्र बिगड़ उठा—“अधिक खिलाकर बीमार डालने की तबीयत है क्या ? तुम लोग जरा भी नहीं सोचते हो। बस, अपनी जिद ! भूख रहती तो क्या ले नहीं लेता ?”

सिद्धेश्वरी जहाँ-की-तहाँ बठी ही रह गई। रामचंद्र ने थाली में बचे टुकड़े से हाथ खींच लिया और लोटे की ओर दखते हुए कहा—“माँ, पानी लाओ।”

सिद्धेश्वरी लोटा लेकर पानी लेन चली गई। रामचंद्र ने बटोरे को उँगलियों

से बजाया, फिर हाथ को थाल में रस दिया। एक-दो क्षण बाद रोटी के टुकड़े को धीरे से हाथ से उठाकर आँस से निहारा और अन्त में इधर उधर देखने के बाद टुकड़े का मुँह में इतनी सरलता से रस लिया, जैसे वह भोजन का प्राप्त न होकर पान का बीड़ा हो।

मँझला लडका मोहन आते ही हाथ-पर धोकर पीठ पर बठ गया। वह कुछ साँवला था और उसकी आँखें छोटी थीं। उसके चेहरे पर चेचक के दाग थे। वह अपने भाई की तरह दुबला-पतला था, किंतु उतना लम्बा न था। वह उस की अपेक्षा वही अधिक गम्भीर और उदास दिखायी पड़ रहा था।

सिद्धेश्वरी ने उसके सामने थाली रखते हुए प्रश्न किया—“वहाँ रह गये थे बेटा? क्या पूछ रहा था।”

मोहन ने रोटी के एक बड़े प्राप्त का निगलने की कोशिश करते हुए अस्वाभाविक मोटे स्वर में जवाब दिया—“वही तो नहीं गया था। यही पर था।”

सिद्धेश्वरी वही धटकर पल्ला डुलाती हुई इस तरह बोली, जैसे स्वप्न में बड़ बड़ा रही हो—“बड़का तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रहा था। वह रहा था, मोहन बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीसों घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।—यह कहकर उसने अपने मँझले लडके की ओर इस तरह देखा, जैसे उसने कोई चोरी की हो।

मोहन अपनी माँ की ओर देखकर फीकी हसी हँस पड़ा और फिर खान में जुट गया। वह परोमी गई दो रोटियों में से एक रोटी, कटोर की तीन चौथाई दाल तथा अधिकांश तरकारी साफ कर चुका था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इन दोनों लडका से उसे बहुत डर लगता था। अचानक उसकी आँखें भर आईं। वह दूसरी ओर देखने लगी।

थोड़ी देर बाद उसने मोहन की ओर मुँह फेरा, तो लडका लगभग खाना समाप्त कर चुका था।

सिद्धेश्वरी ने चौकते हुए पूछा—“एक रोटी देती हूँ?”

मोहन ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा फिर मुस्त स्वर में बोला—“नहीं।”

सिद्धेश्वरी ने निडरिताते हुए कहा—“नहीं बेटा मेरी कसम शोड़ी ही ले लो। तुम्हारे भैया ने एक रोटी ली थी।”

मोहन ने अपनी माँ को गौर से देखा, फिर धीरे धीरे इस तरह उत्तर दिया जैसे कोई शिक्षक अपने शिष्य को समझाता है—“नहीं दे बस। अब्बल तो अब भूख नहीं। फिर रोटियाँ खूने ऐसी बनायी हैं कि खायी नहीं जाती। न मालूम कसी लग

रही हैं। खर, अगर तू चाहती ही है, तो बटोरे में थोड़ी दाल दे दे। दाल बड़ी अच्छी बनी है।”

सिद्धेश्वरी से कुछ कहते न बना और उसने कटारे का दाल से भर दिया।

मोहन बटोरे को मुँह से लगाकर सुड-सुड पी रहा था कि मुंशी चन्द्रिका प्रसाद जूता की खस-खस घसीटते हुए आये और राम का नाम लेकर चौकी पर बठ गये। सिद्धेश्वरी ने माथे पर साडी की कुछ नीचे खिसका लिया और मोहन दाल को एक सास में पीकर तथा पानी के लोटे की हाथ में लेकर तजी से बाहर चला गया।

दो राटियाँ, बटोरा भर दाल तथा चने की तली तरकारी। मुंशी चन्द्रिका प्रसाद पीठे पर पालथी मारकर बठे रोटी के एक एक ग्रास को इस तरह चुमला चबा रहे थे, जसे बूढ़ी गाय जुमाली करती है। उनकी उम्र पतालीस वर्ष के लगभग थी, किन्तु पचास-सषपन के लगते थे। शरीर का चमड़ा झूलने लगा था, गजी खोपडी आईने की भाँति चमक रही थी। गनी घोती के ऊपर अपेक्षाकृत कुछ साफ बनियान तार-तार लटक रही थी।

मुंशीजी ने बटोरे को हाथ में लेकर दाल को थोड़ा सुडक्ते हुए पूछा—
“बढका दिखायी नहीं दे रहा।”

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है—जस कुछ काट रहा हो। पख को जरा और जोर से पुमाती हुई बोली—“अमी अमी खाकर काम पर गया है। कह रहा था, कुछ दिनों में नौकरी लग जायेगी। हमेशा ‘बाबूजी-बाबूजी’ किये रहता है। बोला—‘बाबूजी देवता के समान हैं।’”

मुंशीजी के चेहरे पर कुछ चमक आयी। गरमाते हुए पूछा—“ऐं क्या कहता था कि बाबूजी देवता के समान हैं? बडा पागल है।”

सिद्धेश्वरी पर जसे नशा चढ गया था। उमाद की रोगिणी की भाँति बढ बडाने लगी—“पागल नहीं है बडा होशियार है। उस जमाने का कोई महात्मा है। मोहन ता उसकी बडा इज्जत करता है। आज कह रहा था कि नया बी शहर में बडी इज्जन होती है, पन्ने लिखने वालों में बडा आदर होता है और बढका ती छोटे भाण्यो पर जान देता है। दुनियाँ में वह सब-कुछ सह सकता है, पर यह नहीं देव सकता कि उसके प्रमोद को कुछ हाँ जाए।”

मुंशीजी दाल-रुगे हाथ को चाट रहे थे। उन्होंने सामने की ताक की ओर देखते हुए कुछ हँसकर कहा—“बढका का दिमाग तो खर काफी तेज है वस लडकपन में बडा नटखट भी था। हमेशा खेल-कूद में लगा रहता था, लेकिन यह भी बात थी कि जो सबक में उसे याद करने को देता था, उसे बराक रखता था। असल तो यह है कि तीनों लडके काफी हाशियार हैं। प्रमोद को कम समझती हो?”
—यह कहकर वह अचानक जोर से हँस पडे।

मु शीजी डेढ़ रोटी खा चुकने के बाद एक ग्रास से मुद्ध कर रहे थे। कुछ बठिनाई होने पर एक गिलास पानी चढ़ा गए। फिर तर-तर सांसकर खाने लगे।

फिर चुप्पी छा गई। दूर से किसी आटे की चक्की की पुव-पुक आवाज सुनायी दे रही थी और पास के नीम के पेड़ पर बठा कोई पड़क लगातार बोल रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह चाहती थी कि सभी चीजें ठीक से पूछ ले। सभी चीजें ठीक से जान ले और दुनिया की हर चीज पर पहले की तरह घडरले से बात करे। पर उसकी हिम्मत नहीं होती थी। उसके दिल में न जाने कसा भय समाया हुआ था।

अब मु शीजी इस तरह चुपचाप दुबके हुए खा रहे थे, जैसे पिछले दो दिनों से मौन-व्रत धारण कर रखा हो और उसको कहीं जाकर आज शाम को तोड़ने वाले हो।

सिद्धेश्वरी से जैसे नहीं रहा गया। बोली—“मालूम होता है, अब बारिग नहीं होगी।”

मु शीजी ने एक क्षण के लिए इधर-उधर देखा, फिर निर्विकार स्वर में राय दी—“भविष्यवां बहुत हो गई हैं।”

सिद्धेश्वरी ने उत्सुकता प्रकट की—“फूफाजी बीमार हैं, काई समाचार नहीं आया।”

मु शीजी ने चने के दानो की ओर इस दिलचस्पी से दृष्टिपात किया, जैसे उनसे बातचीत करने वाले हो। फिर सूचना दी—“गगासरण बाबू की लडकी की शादी तय हो गई। लडका एम० ए० पास है।”

सिद्धेश्वरी हठात् चुप हो गई। मु शीजी भी आगे कुछ नहीं बोले। उनका खाना समाप्त हो गया था और वे थाली में बचे-खुचे दानो को बदर की तरह बीन रहे थे।

सिद्धेश्वरी ने पूछा—“बडका की कसम एक रोटी देती हूँ। अभी बहुत-सी हैं।”

मु शीजी ने पत्नी की ओर अपराधी के समान तथा रसोई की ओर कनखी से देखा, तत्पश्चात् किसी घुटे उस्ताद की भाँति बोले—“रोटी रहने दो, पेट बाफ़ी भर चुका है। अब और नमकीन चीजा से तबीयत ऊब भी गई है। तुमने व्यय में कसम घरा दी। खर, कसम रखने के लिए ले रहा हूँ। गुड होगा क्या ?”

सिद्धेश्वरी ने बताया कि हँडिया में थोडा-सा गुड है।

मु शीजी ने उत्साह के साथ कहा—“तो थोड़े गुड का ठहा रस बनाओ, पीऊँगा। तुम्हारी कसम भी रह जाएगी, जायका भी बदल जायगा, साथ-ही-साथ हाजमा भी दुस्त होगा। हाँ, रोटी खाते-खाते नाक में दम आ गया है।”—यह कहकर व ठहाका मारकर हँस पड़े।

मु शीजी के निबटने के पश्चात् सिद्धेश्वरी उनकी जूठी घाली लेकर चौने की जमीन पर बठ गई। बटलोई की दाल को कटोरे में उँडेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं। छिपुली में थोड़ी-सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खीच लिया। रोटियों की घाली को भी उसने पाम खीच लिया, उसमें केवल एक रोटी बची थी। मोटी, भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी घाली में रखने जा ही रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोये प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लडके को कुछ देर तक एकटक देखा, फिर रोगी को दो बराबर टुकड़ा में विभाजित कर दिया। एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी घाली में रख लिया। तदुपरान्त एक लोटा पानी लेकर खाने बठ गई। उसने पहला घ्रास मुँह में रखा और तब न मालूम वहाँ से उसकी आंखों से टपटप आँसू चूने लगे।

सारा घर मन्त्रियता से भनभन कर रहा था। आँगन की अलगनी पर एक गन्दी साडी टँगी थी, जिसमें कई पबद लगे हुए थे। दोनो बड़े लडका का कहीं पता नहीं था। बाहर की कोठरी में मु शीजी आँधे मुँह होकर निश्चिन्ता के साथ सो रहे थे, जैसे डेढ़ महीने पूर्व मकान किराया नियंत्रण विभाग की क्लर्क से उनकी छँटनी न हुई हो और शाम को उनको काम की तलाश में कहीं जाना न हो।

वापसी

गजाघर बाबू ने कमरे में जमा सामान पर एक नजर डौड़ाई—दा बक्स डोलची, बालटी—“यह डिब्बा क्या है गनेशी ?” उन्होंने पूछा । गनेशी बिस्तर बाँधता हुआ, कुछ गब, कुछ दु ख, कुछ लज्जा-से बोला, ‘घरवाली ने साथ को कुछ बेसन के लड्डू रख दिये हैं । कहा बाबूजी को पसंद थे, अब कहाँ हम गरीब लोग आपकी कुछ खातिर कर पाएँगे ।’ घर जाने की खुशी में भी गजाघर बाबू ने एक विपदा का अनुभव किया, जैसे एक परिचित, स्नेह, आदरमय, सहज सत्कार से उनका नाता टूट रहा था ।

‘कभी-कभी हम लोगों की भी खबर लेते रहिएगा ।’ गनेशी बिस्तर में रस्ती बाधता हुआ बोला ।

‘कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना गनेशी । इस अगहन तक बिटिया की शादी कर दो ।’

गनेशी ने अँगोछे क छोर से आँखें पोछी ‘अब आप लोग सहारा न देंगे तो कौन देगा । आप यहाँ रहते तो गादी में कुछ हीसला रहता ।’

गजाघर बाबू चलने को तयार बैठे थे । रेलवे क्वार्टर का वह कमरा जिसमें उन्होंने कितना बप बिताये थे उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्न लग रहा था । आँगन में रोपे पौधे भी जान-पहचान के लाग ले गये थे, और जगह-जगह मिट्टी बिखरी हुई थी । पर पत्नी बाल-बच्चा के साथ रहने की कल्पना में यह बिछोह एक दुबल लहर की तरह उठकर विलीन हो गया ।

गजाघर बाबू खूना थे, बहुत खूना । पतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर होकर जा रहे थे । इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले रह कर काटा था । उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे । इसी आशा के सहारे वह अपने अभाव का बाँझ ढा रहे थे । सत्कार की दृष्टि में उनका जीवन सफल कहा जा सकता था । उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था बड़े लडके अमर और लडकी कान्ति की गान्तियाँ कर दी थी दो बच्चे ऊँची कक्षाओं में पढ़ रहे थे । गजाघर बाबू नौकरी के कारण प्रायः छोटे स्टेशन पर रह और उनके बच्चे और पत्नी शहर में जिसस पढ़ाई में बाधा न हो । गजाघर

बाबू स्वभाव से बहुत स्नही व्यक्ति थे और स्नह के आकांक्षी भी। जब परिवार साय था, ड्यूटी से लौटकर बच्चों से हँसते-बोलते, पत्नी से कुछ मनोविनोद करत—उन सबके चल जाने से उनके जीवन में गहन सूनापन मर उठा। खाली क्षणों में उनसे घर में टिका न जाता। दक्षिण प्रकृति के न होने पर भी, उधे पत्नी की स्नेहपूर्ण बात याद आती रहती। दोपहर में, गर्मी होने पर भी, दो बजे तक आग जलाये रहती और उनके स्टेशन से वापस आने पर गम गम रोटियाँ सकती—उनके खा चुकने और मना करने पर भी थोडा-सा कुछ और थाली में परोस देती और बड़े प्यार से आग्रह करती। जब वह थके हार बाहर से आते, तो उनकी आहट या वह रसोई के द्वार पर निकल आती, और उनकी सलज्ज आँखें मुस्करा उठती। गजाधर बाबू को तब, हर छोटी बात भी याद आती और वह उदास हो उठते। अब कितने वर्षों बाद यह अवसर आया था जब वह फिर उसी स्नह और आदर के मध्य रहने जा रहे थे।

टोपी उतार कर गजाधर बाबू ने चारपाई पर रख दी, जूते खोलकर नीचे किसका दिये, अदर से रह रह कर कहकहा की आवाज आ रही थी, इतवार का दिन था और उनके सब बच्चे दकठे होकर नाचता कर रहे थे। गजाधर बाबू के मूख चेहरे पर स्निग्ध मुस्मान आ गई। उसी तरह मुस्कराते हुए, वह बिना खाँसे अदर चले आये। उन्होंने देखा कि नरेद्र कमर पर हाथ रखे चायद गत रात्रि की फिल्म में देखे गये किमी नृत्य की नकल कर रहा था, और बसन्ती हँस हँसकर दुहरी हो रही थी। अमर की बहू को अपने तन-बदन, आँचल या घूँघट का कोई होश न था और वह उमुक्त रूप से हँस रही थी। गजाधर बाबू को देखते ही नरेद्र घप से बठ गया और चाय का प्याला उठाकर मुँह से लगा लिया। बहू को होश आया और उसने झट से माथा ढक लिया केवल बसन्ती का गरीर रह रहकर हँसी दवाने के प्रयत्न में हिलता रहा।

गजाधर बाबू ने मुस्कराते हुए उन लोगो को देखा। फिर कहा, 'क्यों नरेद्र, क्या नकल हो रही थी?' 'कुछ नहीं, बाबूजी।' नरेद्र ने सिटपिटाकर कहा। गजाधर बाबू ने चाहा था कि वह भी इस मनोविनोद में भाग लेते, पर उनके आत ही जैसे सब ही कुण्ठित हो चुप हो गये, उससे उनके मन में थोड़ी-सी खिन्नता उपज आई। बठते हुए बोल, 'बसन्ती चाय मुझे भी देना। तुम्हारी अम्मा की पूजा अभी चल रही है क्या?'

बसन्ती ने माँ की बोठरी की ओर देखा, 'अभी आती ही होगी', और प्याले में उनके लिये चाय छानने लगी। बहू चुपचाप पहले ही चली गई थी, अब नरेद्र भी चाय का आखिरी घूँट पीकर उठ खडा हुआ, केवल बसन्ती, पिता के लिहाज में, चौके में बँठी माँ की राह देखने लगी। गजाधर बाबू ने एक घूँट चाय पी, फिर कहा, 'त्रिट्टी-चाय तो फीकी है।'

“लाइये, चीनी और डाल दूँ।” बसन्ती बाली।

“रहने दो, तुम्हारी अम्मा जब आएंगी, सभी ची लूँगा।”

थोड़ी देर में उनकी पत्नी हाथ में अर्घ्य का लोटा लिये निरली और अगुड़ स्तुति करते हुए गुल्मी में डाल लिया। उन्हें देखते ही बसन्ती भी उठ गई। पत्नी ने आकर गजाधर बाबू को देगा और कहा, “अरे, आप अकेले बठ हैं—यह सब कहाँ गये?” गजाधर बाबू ने मन में पीस-पीस कर कहा, “अपन-अपन काम में लग गये हैं—आतिर बच्चे ही हैं।”

पत्नी आकर धीरे में बठ गई—उन्होंने नाक में घड़ाकर चारा और जूठे बरतना को देखा। फिर कहा, “सारे में जूठे बरतन पड़े हैं। इस घर में घरम-बरम कुछ नहीं। पूजा घर के सीप धोके में धुसो।” फिर उन्होंने नौपर को पुकारा, जब उतर न मिला तो एक बार और उच्च स्वर में, फिर पति की ओर देखाकर बोला, ‘बहू न भेजा होगा बाजार।’ और एक लम्बी साँस लेकर चुप हो रही।

गजाधर बाबू बठकर चाय और नास्ते का इन्तजाम करते रहे। उन्हें अचानक ही गनेगी की याद आ गई। रोज सुबह, पसैंजर आने से पहले वह गम गम पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठकर तयार होते, उनके लिए जलेबियाँ और चाय लाकर रख देता था। चाय भी बितनी बढ़िया, काँच के ग्लास में ऊपर तक भरी, स्वाल्ब, पूरे ढाई चम्मच चीनी, और गाढ़ी मलाई। पसैंजर मले ही रानीपुर लेट पहुँचे, गनेगी ने चाय पढ़वान में बसन्ती देर नहीं की। क्या मजाल कि बसन्ती उससे कुछ कहना पड़े।

पत्नी का शिवायत भरा स्वर सुन उनके विचारा में व्यापात पहुँचा। वह कह रही थी, सारा दिन इसी खिच खिच में निकल जाता है। इसी गृहस्थी का घघा पीटते-पीटते उमर बीत गई। कोई जरा हाथ भी नहीं बँटाता।

‘बहू क्या किया करती हैं?’ गजाधर बाबू ने पूछा।

‘पढी रहती हैं। बसन्ती को तो, फिर कहो कि कालेज जाना होता है।’

गजाधर बाबू ने जोश में आकर बसन्ती को आवाज दी। बसन्ती भाभी के कमरे से निकली तो गजाधर बाबू ने कहा, “बसन्ती, आज से शाम का खाना बनाने की जिम्मेवारी तुम पर है। सुबह का भोजन तुम्हारी भाभी बनायेंगी।

बसन्ती मुँह लटकाकर बोली “बाबूजी, पढना भी तो होता है।”

गजाधर बाबू ने बड़े प्यार से समझाया, ‘तुम सुबह पढ़ लिया करो। तुम्हारी माँ बूढ़ी हुईं उनके शरीर में अब वह शक्ति नहीं बची है। तुम हो, तुम्हारी भाभी हैं, दोनों को मिलकर काम में हाथ बँटाना चाहिए।’

बसन्ती चुप रह गई। उसके जाने के बाद उसकी माँ ने धीरे से कहा, “पढने का ता बहाना है। बसन्ती जी ही नहीं लगता, लगे कैसे? शीला से ही फुरसत नहीं

बड़े-बड़े लडके हैं उस घर में, हर वकन वहाँ घुसा रहना मुझे नहीं सुहाना । मना करूँ तो मुनती नहीं ।”

नास्ता कर, गजाघर बाबू बठक में चले गये । घर छोटा था और ऐसी व्यवस्था हो चुकी थी कि उसमें गजाघर बाबू के रहने के लिए कोई स्थान न बचा था । जैसे किसी मेहमान के लिए कुछ अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है, उसी प्रकार बठक में कुर्सियाँ को दीवार से सटाकर बीच में गजाघर बाबू के लिए पन्नी-सी चारपाई डाल दी गई थी—गजाघर बाबू उस कमरे में पड़े-पड़े, कमी कमी अनायास ही, इस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते । उह याद हो आती उन रत्नागडिया की, जो जाती और थोड़ी देर रुककर किसी और लक्ष्य की ओर चली जाती ।

उन्होंने, घर छोटा होने के कारण बठक में ही अब अपना प्रबंध किया था । उनकी पत्नी के पास अदर एक छोटा-सा कमरा अवश्य था, पर उगम एक ओर अचारों के मतदान, दाल, चावल के कन्स्टर और धीक डब्बा से घिरा था—दूसरी ओर पुरानी रजाकियाँ, दरिया में लिपटी और रस्सी से बँधी रखी थी, उसके पास एक बड़े-से टीन के बरतन में घर भर के गरम कपड़े थे । बीच में एक अलगनी बँधी हुई थी, जिस पर प्रायः वसन्ती के कपड़े ढापरवाही से पड़े रहते थे । वह भरमक उस कमरे में नहीं जाते थे । घर का दूसरा कमरा अमर और उमकी बहू के पास था, तीसरा कमरा, जो सामन की ओर था बठक था । गजाघर बाबू के आने से पहले उसमें अमर की ससुराल से आया बँत की तीन कुर्सियों का सेट पड़ा था, कुर्सियों पर नीली गहिरियाँ और बहू के हाथों के बड़े कुदान थे ।

जब कमी उनकी पत्नी को कोई लम्बी शिकायत करनी होती तो अपनी चटाई बठक में डाल पड़ जाती थी, तो वह एक दिन चटाई लेकर आ गई । गजाघर बाबू ने घर-गृहस्थी की बातें छोड़ी, वह घर का खयाल देख रहे थे । बहुत हल्के से उहोंने कहा कि अब हाथ में पँसा कम रहेगा कुछ खर्च कम होना चाहिए ।

“सभी खर्च तो वाजिब वाजिब हैं किसका पट काटूँ ? यही जोड़ गाँठ बरते करते बूढ़ी हो गई न मनका पहना, न ओढ़ा ।”

गजाघर बाबूने आहत, विस्मित दृष्टि से पत्नी को देखा । उनसे अपनी हैसियत छिपी न थी । उनकी पत्नी तमी का अनुभव कर उसका उल्लेख करती, यह स्वाभाविक था, लेकिन उनमें सहानुभूति का पूर्ण अभाव गजाघर बाबू का बहुत खटकता । उनसे यदि राय-वार्ता की जाती कि प्रबंध कैसे हो तो उह चिन्ता कम सन्तोष अधिक होता । लेकिन उनसे तो केवल शिकायत की जाती थी जैसे परिवार की सब परेशानियों के लिए वही जिम्मेदार थे ।

“तुम्हें किस बात की कमी है अमर की माँ—घर में बहू है लडके-बच्चे हैं सिर्फ रुपये से ही आदमी अमीर नहीं होता ।” गजाघर बाबू ने कहा और कहने के साथ ही अनुभव किया । यह उनकी आंतरिक अभिव्यक्ति थी ऐसी कि उनकी पत्नी नहीं

गमझ सपत्नी "ही, बड़ा सुग है न बड़ से। आज रगोई करने गयी है, देगो क्या होता है।" बहुर पत्नी ने आँगें मूँदी और सा गई। गजाधर बाबू बटे हुए पत्नी का देखत रह गये। यही थी क्या उनकी पत्नी, जिसके हाथ के बोजन म्पग, जिसकी मुस्वान की याद म उहाने म्पूर्ण जीवन बाट दिया था? उन्हें लगा कि वह एग व्यमयी युवती जीवत की राह मे वही सो गई और उगकी जगह आज जो स्त्री है वह उनके मन और प्राणा के लिए निनात अपरिचित है। गाड़ी नीद म डूयी उनकी पत्नी का भारी-सा शरीर बहुत बडोल और कुरूप लग रहा था, चेहरा श्रीहीन और खूबा था। गजाधर बाबू देर तक जिससग दृष्टि से पत्नी को देखते रह और फिर लेटकर छन की ओर तावन लगे।

अदर कुछ गिरा और उनकी पत्नी हठबडाकर उठ बठी, "लो, बिल्ली न कुछ गिरा दिया थायद," और वह अदर भागी थोडी दर म लौटकर आई तो उनका मुह फूला हुआ था, "देखा बड़ को चौका सुला छाड आई बिल्ली ने दाल की पतीली गिरा दी। सभी ता खाने को हैं, अब क्या खिगाऊँगी?" वह सास लेने को हकी और बाली, "एक तरकारी और चार पराठे बनाने म सारा छिन्वा थी उ डेलकर रख दिया। जरा सा दद नहीं है कमानेवाता हाड तोडे और यहाँ चौजे लुटें। मुझे तो मालूम था कि यह सब काम किसी के बस का नहीं है?"

गजाधर बाबू को लगा कि पत्नी कुछ और बोलेंगी तो उनके कान झनपना उठेंगे। ओंठ भीच, बरबट लकर उहाने पत्नी की ओर पीठ कर ली।

×

×

×

रात का भोजन बसती ने जानबूझकर एसा बनाया था कि कौर तक निगला न जा सके। गजाधर बाबू चुपचाप खाकर उठ गए पर नरेद्र धाली सरकाकर उठ खडा हुआ और बोला, "म एसा खाना नहीं खा सकता।"

बसती तुनककर बोली, "ता न खाओ कौन तुम्हारी खुशामद करता है।"

"तुमसे खाता बनाने को कहा किसने था?" नरेद्र चिल्लाया।

"बाबूजी ने।"

'बाबूजी को बँटे-बँटे यही सूझता है।'

बसती को उठाकर माँ ने नरेद्र को मनाया और अपने हाथ स कुछ बनाकर बिलाया। गजाधर बाबू ने बाद म पत्नी से कहा, "इतनी बडी लडकी हो गई है और उसे खाना बनाने तक का गऊर नहीं आया।" "अरे आता सब कुछ है, करना नहीं चाहती। पत्नी ने उत्तर दिया। अगली गाम माँ को रसोई मे देख बपडे बदल कर बसती बाहर आई तो बठके से गजाधर बाबू ने टोक दिया, "वहाँ जा रही हो?"

"पडोस म गीला ने घर बसती न कहा।"

'कोई जरूरत नहीं है अदर जाकर पडो।' गजाधर बाबू ने बडे स्वर म कहा।

कुछ देर अनिश्चित खड़े रहकर बसती अंदर चली गई। गजाधर बाबू शाम को रोज टहलन चले जाते थे, लौटकर आये तो पत्नी ने कहा, "क्या कह दिया बसती से। शाम से मुँह लपेटे पडी है। खाना भी नहीं खाया।"

गजाधर बाबू खिन्न हो आये। पत्नी की बात का उहाने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने मन में निश्चय कर लिया कि बसती की शादी जल्दी ही कर देनी है। उस दिन के बाद बसती पिता से बची बची रहने लगी। जाना होता तो पिछवाड़े से जाती। गजाधर बाबू ने दो एक बार पत्नी से पूछा तो उत्तर मिला, "रूठी हुई है।" गजाधर बाबू को और रोष हुआ। लडकी के इतने मिजाज, जाने को रोक दिया तो पिता से बोलेंगी नहीं। फिर उनकी पत्नी ने सूचना दी कि अमर अलग रहने की सोच रहा है।

क्यों ?" गजाधर बाबू ने चकित होकर पूछा।

पत्नी ने साफ-साफ उत्तर नहीं दिया। अमर और उसकी बहू की शिकायतें बहुत थीं। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेशा बठक में ही पड़े रहते हैं कोई आन-जान वाला हो तो वही बठाने की जगह नहीं। अमर को अब भी वह छोटा-सा समझते थे, और मौके-बेमौके टोक देते थे। बहू को काम करना पड़ता था और सास जब-तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थी। 'हमारे आने के पहले भी कभी ऐसी बात हुई थी ?" गजाधर बाबू ने पूछा। पत्नी ने सिर हिलाकर जताया कि नहीं। पहले अमर घर का मालिक बनकर रहता था—बहू का कोई रोक-टोक नहीं, अमर के दोस्तों का प्रायः यही अड्डा जमा रहता था और अंदर से नाश्ता चाय तयार होकर जाता रहता था। बसती को वही अच्छा लगता था।

गजाधर बाबू ने बहुत धीरे से कहा 'अमर से कहो, जल्दवाजी की कोई जरूरत नहीं है।'

अगले दिन वह सुबह घूमकर लौटे तो उन्होंने पाया कि बठक में उनकी चारपाई नहीं है। अंदर आकर पूछन वाले ही थे कि उनकी दृष्टि रसोई के अंदर बठी पत्नी पर पडी। उन्होंने यह कहने को मुँह खोला कि बहू कहाँ है, पर कुछ याद कर चुप हो गये। पत्नी की कोठरी में चाँका तो अचार, रजाइयो और कनस्टर के मध्य अपनी चारपाई लगी पायी। गजाधर बाबू ने कोट उतारा और वही टाँगने को दीवार पर नजर दौटाई। फिर उसे मोड़कर अलगनी के कुछ कपड़े खिसकाकर, एक किनारे टाँग दिया। कुछ साये बिना ही अपनी चारपाई पर लेट गये। कुछ भी हो तन आखिरकार बूढ़ा ही था। सुबह गाम कुछ दूर टहलन अवश्य चले जाते, पर आते-आते थक उठते थे। गजाधर बाबू को अपना बड़ा-सा, खुला हुआ क्वाटर याद आ गया। निश्चिन्त जीवन, सुबह पसजर ट्रेन आन पर स्टेशन की चहल-पहल चिरपरिचित चेहरे और पटरी पर रेल के पहियों की खट-खट जो उनके लिए मधुर संगीत की तरह था। तूफान और डाक गाडी के इञ्जना की चिघाड़ उनकी अकेली रातों की साथी थी। सेठ रामजीमल के

मिल के कुछ लोग बमी-बमी पास आ बैठते यही उनका दायरा था, यही उनके साथी यह जीवन अब उह एक सोई निधि-ता प्रतीत हुआ। उन्हें लगा कि वह जिन्दगी द्वारा ठगे गए हैं। उन्होंने जो कुछ चाहा, उसमें से उहे एक बूद भी न मिली।

छेते हुए वह घर के अन्दर से आते विविध स्वरो की सुनते रह। बहू और सास की छोटी सी झगप, बालटी पर खुले नल की आवाज, रसोई के बरतना की खटपट और उसी में दो गौरमा का बार्तालाप—और अचानक ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब घर की किन्नी बात में दखल न देंगे। यदि गृहस्वामी के लिए पूरे घर में एक चारपाई की जगह यहा है, तो यही पडे रहेंगे अगर वहा और डाल दी गई, तो वहाँ चले जायेंगे। यदि बच्चा के जीवन में उनके लिए वही स्थान नहीं, तो अपने ही घर में परासी की तरह पडे रहेंगे

और उस दिन के बाद सचमुच गजाघर बाबू कुछ नहीं बोले। नरेन्द्र माँगने आया तो बिना कारण पूछे उसे रुपये दे दिये—बसती काफी अघेरा हो जाने के बाद भी पडोस में रही तो भी उन्होंने कुछ नहीं कहा—पर उन्हें सबसे बडा गम यह था कि उनकी पत्नी ने भी उनमें कुछ परिवर्तन लक्ष्य नहीं किया। वह मन-ही-मन कितना मार डी रहे हैं इससे वह अनजान हा बनी रही। बल्कि उन्हें पति के घर के मामले में हस्तक्षेप न करने के कारण शांति ही थी। बमी-बमी कह भी उठती, 'ठीक ही है, आप बीच में न पडा कीजिए, बच्चा बडे हो गए हैं हमारा जो बतव्य था, कर रहे हैं। पडा रहे हैं शादी कर देंगे।'

गजाघर बाबू ने आहत दृष्टि से पत्नी को देखा। उन्होंने अनुभव किया कि वह पत्नी व बच्चों के लिए बेचल घनोपाजन के निमित्त मात्र हैं। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिद्धर डालने की अधिकारी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है। उसके सामने वह दो वक्त भोजन की थाली रख देने से सारे कतब्यों से छुट्टी पा जाती है। वह धी और चीनी क डिब्बा में इतनी रमी हुई हैं कि अब यही उनकी सम्पूर्ण दुनिया बन गई है। गजाघर बाबू उनके जीवन के केन्द्र नहीं हो सकते उहे तो अब उसकी शादी के लिए भी उत्साह बूझ गया। किसी बात में हस्तक्षेप न करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बठक में उनकी चारपाई थी। उनकी सारी खुशी एक गहरी उदासीनता में डूब गई।

×

×

×

इतने सब निश्चया के बावजूद भी गजाघर बाबू एक दिन बीच में दखल दे बैठे। पत्नी स्वभावानुसार नौकर की शिकायत कर रही थी 'कितना कामघोर है बाजार की हर चीज में पसा बनाता है, खाने बठता है, तो खाता ही चला जाता है।' गजाघर बाबू को बराबर यह महसूस होता रहता था कि उनके घर का रहन-सहन और खर्च उनकी हैसियत से बही ज्यादा है। पत्नी की बात सुनकर लगा कि नौकर का खर्च

बिल्कुल बेकार है। छाटा मोटा काम है, घर में तीन मद है, कोई-न-कोई कर ही देगा। उहाने उसी दिन नाकर का हिसाब कर दिया। अमर दफ्तर से आया तो नौकर को पुकारने लगा। अमर की बहू बोली, “बाबूजी ने नौकर छुड़ा दिया ?”

“क्या ?”

“कहते हैं खच बहुत है।”

यह वार्तालाप बहुत सीघा-सा था, पर जिस टोन में बहू बोली, गजाधर बाबू को खटक गया। उस दिन जी भागी ज्ञान के कारण गजाधर बाबू टहलने नहीं गये थे। आलस्य में उठकर बत्ती भी नहीं जलाई—इस बात से बेखबर नरेंद्र माँ से बहूने लगा, “अम्मा, तुम बाबूजी से कहती क्या नहीं? बठे बिठाये कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया। अगर बाबू जी यह समझें कि मैं माइकिल पर गेहूँ रखकर आटा पिसाने जाऊँगा तो मुझसे यह नहीं होगा।” “हा अम्मा” —बसती का स्वर था, ‘म कालेज भी जाऊँ और लौटकर घर में झाड़ू भी लगाऊँ, यह मेरे बस की बात नहीं है।’

“बूढ़ आदमी है” अमर मुनमुनाया ‘चुपचाप पड़े रह। हर चीज में दखल नये देते हैं।’ पत्नी न बड़े व्यग्र से कहा, और कुछ नहीं सूझा तो तुम्हारी बहू को ही चौके में भेज दिया। वह गई ता पन्द्रह दिन का राशन पाच दिन में बनाकर रख दिया।” बहू कुछ बहे, इससे पहले वह चौके में घूम गई। कुछ देर में अपनी काठरी में आई और विजली जलायी तो गजाधर बाबू को लेंटे देख बड़ी सितपिटाई। गजाधर बाबूकी मुखमुद्रा से वह उनके भावों का अनुमान न लगा सकी। वह चुप आखें बंद किये लेटे रह।

×

×

×

गजाधर बाबू चिटठी हाथ में लिये अंदर आये और पत्नी को पुकारा। वह भीने हाथ लिये निकली और आँचल से पाछती हुई पास आ खड़ी हुई। गजाधर बाबू ने बिना किसी भूमिका के कहा ‘मुझे सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी मिल गई है। खाली बठे रहने से तो चार पैसे घर में आयें वहीं अच्छा है। उन्होंने तो पढ़ ही कहा था, मन ही मना कर दिया था।’ फिर कुछ रुककर, जैसे बुझी हुई आग में एक चिनगारी चमक उठी। उहान घीम स्वर में कहा, मने भीचा था कि बरसा तुम सबसे अलग रहने के बाद अवकाश पाकर परिवार के साथ रहूँगा। खर, परमो जाना है। तुम भी चलोगी ?” म ?” पत्नी ने सवपका कर कहा ‘म चलूँगी तो यहाँ का क्या हागा ? इतनी बड़ी गहस्थी फिर सयानी लड़की—’

बात बीच में काट गजाधर बाबू ने थके, हताश स्वर में कहा, ठीक है तुम यही रहो। मने तो ऐसे ही कहा था” और गहरे मोन में डब गये।

×

×

×

नरेंद्र ने बड़ी मत्परता से विस्तर बाँधा और रिक्शा बुला लाया। गजाधर बाबू का दिन का बचस और पतला-सा विस्तर उस पर रख दिया गया। नाश्त के लिए लड्डू

ओर मठरी की डलिया हाथ में लिये गजाधर बाबू रिक्शे पर बैठ गये। एक दृष्टि उहान अपने परिवार पर डाली और फिर दूसरी ओर देखने लगे और रिक्शा चल पडा। उनके जाने के बाद सब अदर लौट आये, बहू ने अमर से पूछा, "सिनेमा ले चलिएगा न ?" बसन्ती ने उछलकर कहा "मइया हम भी !"

गजाधर बाबू की पत्नी सीधे चीने में चली गई। बची हुई मठरियों को बटोरदान में रखकर अपने कमरे में लाई और यनस्टरो के पास रख दिया, फिर बाहर आकर कहा, "अरे नरेन्द्र, बाबूजी की चारपाई कमरे से निवाल दे। उसमें चलने तक की जगह नहीं है।"

दस वष बाद

पूरे गाँव का एक चक्कर लगा आया हूँ। सब कुछ बदल गया है। जो भी मिले, सबसे मिल कर बातें करके आया हूँ। कई चेहरे नये दिखाई दिये। लेकिन वह दस साल पहले की आत्मीयता कहीं दिखाई न दी। लोगो ने अजीब-अजीब नजरों से देखा।

मन में रह रह कर एक प्रश्न घुमड़ता रहा, गाँव बदल गया। लोग बदल गये। पुराने साथी भी मिले, पर लगा, इन दस वर्षों में एक बड़ा व्यवधान आ गया है—सबके बीच। कुछ मास्टर हो गये हैं कुछ अपनी कदीमी दुकानों पर बैठते हैं, कुछ इधर उधर चले जाते, आ जाते हैं, कलकत्ता, बम्बई। एक ठो पान दना चौबमल जी। काँई रे बाबू, कद आयो, क्या गेलो भूल गयो ? कठे हो ? काँई करी हो ? आदि प्रश्न बड़ी बेरुखी के साथ पूछे गये। पता चला, यह साथी कलकत्ता से अभी थोड़े दिन हुए, लौट कर आया है। दो-तीन हजार रुपये जोड़ लिये हैं। एक-दो बड़े नेता बन गये हैं, तहसील पंचायत के सरपंच, जिला परिषद् के सदस्य। मिलने पर मेरी ओर ऐसे देखन लगे जैसे कह रहे हों—हमारी महानता की ऊँचाई की तुलना में तुम कितने बौने हो। अपने पुराने साथियों को उनके तलुबे चाटते देखा, उनके पीछे-पीछे चक्कर काटते देखा। मन घणा से मर उठा। क्या यही है मेरा गाँव मेरे दस वष के प्रवास में कभी स्मृतिपट से ओझल न होने वाली जन्म भूमि।

मामा ने सुना तो भागे आये। बुआ ने सुना तो मय बाल-बच्चों के चली आयी। मल्लू खवास आया। बोला—बाबू परदेस से आये हो, इस बार तो नया घाती-कुरता लूँगा। बड़ी देर तक समझा-बुझा कर फिर देन का वचन दे, विदा किया।

दो दिन और निकल गये। मामा पीछे पड़े हैं कि छोटे ने मट्टिक पास कर लिया है, यहाँ नौकरी मिलती नहीं सो इस धार उसे अपने साथ ले जाओ किसी भी तरह यह काम तो करना ही पड़ेगा। यहाँ तो राजनीतिक गुटबन्दी है। तुम्हारे गाँव का मोहन व्यास पंचायत का सरपंच है, अपने ही लोगों को नौकरी दिलवाता है। एम० एल० ए० उसी का खास बना हुआ है। उसके सिवा किसी की भी नहीं सुनता। बड़े घम-सकट में पड़ गया हूँ। मामा को कैसे समझाऊँ कि ये दस वष मने कैसे काटे हैं।

नीकरी की तलाश में कहीं-कहीं भटकता हूँ। क्या क्या सहा है। दस बप तक घर में दूर बच्चा से दूर क्या पडा रहा हूँ !

कई बातें सुनने को मिली। किस तरह दो गुटा में लडाई चली। कौन किस तरह जीता। कौन कैसे हारा। उसको नीकरी कैसे मिली। उसके चोरी किसने करवायी। आदि-आदि।

म और मामा घटा आपस में बातें करते रहते हैं। पत्नी मुँह फुलाये रहती है। दो दिनों में मैं चार बार दुहरा चुकी है—दस बरस परदे में रह कर लोग न जान क्या-क्या चीजें लाते हैं। महाँ तो डग ही यारे हैं। न जाने कौन राड पीछे पडी है बेटे के। सबसे माह डूट गया है। इस तो कोई भी अच्छा नहीं लगता, न बेटा बेटो न बहू। हँसी हँसी में यह कह कर कि ला कुछ रुपये तो दे, जो चना खाने की आदत नहीं रही होगी, थोड़े गेहूँ ही भेगा लूँ।

म खामोश रह जाता हूँ और फिर उसकी हिम्मत आगे कुछ कहने को नहीं होती। सक्की नजरें मेरे सूटक्स पर हैं जिस मने अभी तक नहीं खाला है। लगता है जैसे कई बार उठा-उठा कर हिला डुला कर उससे अदाज लगा लिया गया है। बुआ जो दो बार कह चुकी है—ले अब क्या कहेगा। अब तो दस बरस कमा कर आया है। सब को भूल गया रे ! जानकी के विवाह पर कितने तार चिट्ठियाँ दिये ! पर तू क्यों आने लगा। आता तो कुछ खच करना पड़ता। पर अब मैं पीछा छाड़ने वाली नहीं हूँ, जब नहीं तो अब सही। अबके तो सारी बसर निकाल कर जाऊँगी।

म जब गया तो बच्ची तीन साज की थी और बच्चा छह महीने का। लगता है जैसे मुझे ये नहीं जानते। कई बार पास बुला चुका हूँ पर गरमा कर माग जाते हैं। सोचता हूँ क्या ये मुझ कमी माद नहीं करते होंगे, कमी अपनी माँ से मेरे लिए नहीं पृष्ठते होंगे। लडकी बडी हो गयी है। गायद अगले बप ही विवाह करना पडे। और लडका पना नहीं पना भी है या नहीं। माँ बोल तो रही थी छुट्टियाँ चल रही हैं। अब तक पत्नी से बात तक नहीं हुई है। यही हाजत रही तो गायद हागी भी नहीं। यो ही लौट जाऊँगा। वह तो समझौता करन के लिए तयार नहीं दिखाई देती। गायद माँ की तरह वह भी समझ चुकी है कि म अब उसका नहीं रहा। यह तो नहीं कि पूछे, कैसे रहे कहीं-कहीं रहे, दुबले हो गये हो द्रतने लिन क्यों नहीं आयें। उलटे मरो बठी है, जस मने काई बुरा काम किया हा, धोता लिया हो।

नहीं, अब यह गाँव पहुँचे-सा नहीं रहा। सब कुछ बदल गया है।

बपा मिलने आयी है। बहुत बदल गयी है। एक्दम चुप शात। पत्रह बप पीछे लौट गया हूँ—बपा चुटकियाँ काट रही है मने उसका चाटा पत्रह लिया है। वह खोख रहती है अरे छोड अरे मरी रे, ओ माँ। विचित्र स्थिति में डूब उतरा रहा हूँ। वह मिलने आयी है और म अररायी-सा मौन बठा हूँ। क्या सोचेंगी यह।

यही कि म बदल गया हूँ, यही कि म सबको भूल गया हूँ यही कि म किसी और का हो गया हूँ ।

—कसी हो चपा !

—अच्छी हूँ, देख तो रहे हो । चलो, बोले तो सही । मैं तो समझी थी कि तुम्हारा मौन टूटेगा ही नहीं । गूंगे होकर आये हो !

म हँस मर देता हूँ । क्या उत्तर दूँ । चपा बचपन से ही बड़ी चुलबुली है, बड़ी बातूनी है । तभी तो एक बार पत्नी को भी हम दाना पर शक हो गया था और ये दोनो आपस में झगड भी पडी थी । गाव के लोग तो अब तक भी यही समझते होंगे और, शायद पत्नी भी ।

—क्या सोच रहे हो । तुम्हारी सास मिलने आयी है । जरा घर तक तो चलो ।

—कसे जाऊँ ! सास से तो मेरा झगडा हो गया था । भूली घटना याद आ जाती है । शादी वाले साल ही, जब म पहली बार ससुराल गया था, और पहले ही दिन भोजन की थाली फेंक कर घर भाग आया था । गाँव से आधी मील पर ही तो है मेरी ससुराल । और तब से अब तक एक बार भी ससुराल नहीं गया हूँ । सास रोया, गिडगिडायी, पर म नहीं गया । वे और भी नाराज हो गयीं । जब भी वे मिलने आती पत्नीसियो के घर या फिर चपा के यहा । मने पत्नी का मिलने से मना कर दिया था । पर इस चपा को क्या कहूँ । यह जिद करके ले जाती थी और इसकी हठ के सामन सदा ही झुकना पडता था । आज भी यह आयी है । और म नाही नहीं कर सकता । क्या है इस चपा में ऐसा जो । सोचता हूँ चलो ठीक ही है । पत्नी के खिचाव की रस्सी इस पुरानी गाँठ के खुलन से थोडी तो ढीली होगी ।

—क्या नहीं चलोगे !—चपा तुनक कर पूछ रही है ।

म सचेत हो जाता हूँ । चपा की ओर मुसकुरा कर देखता हूँ । चम्पा अभी भी वसी ही है हठी नटखट, वाचाल । दुर्भाग्य है यही कि अभी तक मा नहीं बन पायी है । दोनो का विवाह दो-दो दिन के अन्तर से ही तो हुआ था । म यदि दस वर्ष बाहर न रहता, तो कम से कम चार तो और भी हो जाते ।

—तू बाहे को हेठी करवा रही है । जा, कह दे नहीं मिलते । तू इतनी देर से बक-बक किये जा रही है । यहाँ कानो में तेल डाल रखा है ।—पत्नी का मौन टूटा ।

म चतुराई से काम लेता हूँ । इस समय चुप रहना ही श्रेयस्कर है । प्रतीक्षा में हूँ, कि चपा पर इसकी क्या प्रतिक्रिया होती है । बात ठीक सभावना के अनुसार ही होती है । चपा तुनक कर कहती है—म तेरी तरह गूंगी नहीं हूँ । मुझे खा नहीं जाएगा । इसको ठीक करने की रग मेरे हाथ में है । म तेरी तरह अदर ही अन्दर राने वालियो म नहीं हूँ । देख, अभी बताती हूँ, जाता है कि नहीं ।

कितना आत्मविश्वास है चपा म ! कितना अधिकार समझती है यह अपना मुँह पर कि मरी पत्नी तक को भी चुनौती दे सकती है । बचपन म एक बार चुम्मी माँगने पर इसने कितनी दयनीयता से कहा था—नहीं, ऐसा नहीं करत । कहते है कुँवारी लडकी ऐसा करती है तो ब्याह देर स होता है । गुलाब नहती थी ऐसा करने स मगवान् गुस्सा होत है ।—और म डर गया था । उसने वाद भने कभी उससे चुम्मी नहीं माँगी थी, हालाँकि समझदार होन पर एक बार वह पूण समपण को भी तयार हो गयी थी । पर अब क्या रगा है उन बीती बातो म । अब तो सब कुछ बदल गया है ।

वह लडक का तत्पर है । उसने मेरा हाथ पकड लिया है । म हँस कर उसकी ओर देखता हूँ और साथ ही अनुनय मरे स्वर म उसे मनान के ढग मे कहता हूँ—उनकी यही बुलाल तो कसा रहे ! हमारे घर न आने की उनकी कसम भी टूट जाएगी और जी भर कर बातें भी कर लेंगी । क्यों ठीक है न ?

वह पूण आश्चस्त हो जाती है । विजयान्लास क भाव उसक चहर पर बिम्बर जाते हैं । पत्नी की ओर देख कर वह व्यग्यपूरा ढग से मुसकुराती है और फिर बिना कुछ कहे यह गयी वह गयी । थोड़ी ही देर मे वह सास को साथ लिए आ गयी । मने उठ कर चरण छुए । सारा विपाद, सारी कटुता वह गयी । हृदय की अतर गहराई स मुँह स आगीग निबली और आँखो से स्नह जल । क्षण भर को म अपने दुर्भाग्य और सोभाग्य के बीच ठगा-सा रह गया ।

—माँ जी कहाँ गयी ?—उन्होंने चपा की ओर देख कर पूछा । चपा ने मरी ओर ओर मने पत्नी की ओर इंगारा किया ।

वह धीरे से फुसफुसायी—मामाजी के साथ गयी हैं । दो-तीन दिन म लौट आएगी ।

मन म प्रश्न उठा म तो घर मे ही या फिर मुँहसे कह कर क्यों नहीं गयी । मामा भी तो कई-कई कामन दिठा कर गये हैं । पर तभी समाधान भी मिल गया । शायद सोचा होगा, हम दोनो उनकी उपस्थिति स खुल नहीं रह हैं अत दो-तीन दिन के अरसे मे शायद खुल जाएँ । मन म धीमी-सी आवाज उठी, चलो जकडा ही हुआ । दो कोस पर हाँ ता मामा का घर है । है ही कितनी दूर !

ता आज भोजन बही करना है । पास-पडोस की सब जनी दखना चाहती हैं तुम्हे । रोज तान मारती थी । जबाइ एक चिटठी तक भी नहीं देता है । बडा नखरावा है ।—और व अपन छाट-स घू घट म मुसकुरान लगी । दरता हूँ उनके आगे के दाँत गिर गये हैं ।

चपा खिलखिला कर हस पडी—साँता है ही । इसम झूठ क्या कहती हैं । म असमजस मे पड गया । माँ तो यहाँ हैं नहीं । इसे अवला छोड कर कसे

रात भर बाहर रहूँ। पत्नी ने जैसे भाप लिया। धीरे से बोली—कह दो चपा घर पर तो भूआजी हैं। गुडडी और विजय भी हैं। घर की फिर न करें।—मने सुन लिया और हा भर दी।

चपा बोली—घर की फिर तो तुम कोई भी मत करो। घर मे तो म अकेली ही सो जाऊँगी।—और इतना कह कर वह हँस पड़ी।

तीसरे पहर ही मने दाढी बनायी। 'सूटकेस' खोल कर घुला हुआ कुरता पाजामा निकाला और पलंग पर रख दिया। नाडा एक ही था, इसलिए सोचा चलते समय इस पजामे का नाडा निकाल कर उसमें डाल लूँगा। मन मे कसा-कसा हो रहा था। कभी समुराल जाने का मौका नहीं मिला था। सत्र बटा अजीब-अजीब-सा लग रहा था। 'प्रयम' ग्रासे मक्षिका पात वाली दुघटना घट ही चुकी थी।

विजय को लेकर पत्नी न जाने कब चली गयी। देर तक मैं प्रतीक्षा करता रहा। गुडडी पोली की खिडकी मे से बार-बार बाक कर देख लेती थी और मुझे उसी तरह विचार मग्न देख कर न जाने क्या सोच कर फिर लौट जाती। बुआजी आयी और बोली—अब जा देर क्यो कर रहा है। गुडडी को भी साथ ले जाना। मेरे पास तो रात म चपा रह जाएगी। क्या रे, तू इतना बदल गया है। बच्चो से भी बात नहीं करता ?—उहोने शिकायत की। क्या उत्तर दूँ।

म उठ गया। उठ कर हाथ-मुँह धोया और पहने हुए पाजामे का नाडा निकालने लगा। गुडडी ने देखा तो बोली—आपके पाजामे म ता नाडा है माँ डाल गयी है।

कपडे बदल कर मने गुडडी से कहा—आ गुडडी, चल। तू जानती है नाना का घर ?—उसने सिर हिला कर स्वीकार किया।

दिन छिपने को हो रहा था। दोनो गाँवो के बीच एक टीला है, एक बडा सा खेत है। धीरे धीरे चलें तो तीस मिनट और तेजी से चलें तो बीस मिनट। कितनी कम दूरी पर है। पर इस गाव मे दो ही वार गया हूँ। एक बार शादी के वक्त और दूसरी वार का जिक्र तो कर ही चुका हूँ। गुडडी साथ दे रही है। उसके बदनो मे मुझसे भी तेजी है जो उसके युवा होने के लक्षण प्रकट करती है। मैंने तो कभी नहीं सोचा था कि म इतना शीघ्र समुर बनने वाला हूँ।

गुडडी कुछ देर तो प्रतीक्षा करती है कि म कुछ बोलूँगा पर मुझे बोलता न देख वह बात इस तरह शुरू करती है—माँ मुझे इसीलिए छोड गयी कि आप नाना का नया घर नहीं जानते। आप तो पुराने घर पर ही गये हुए हैं। नाना ने अब नया घर बनवा लिया है।

—तुम नाना के यहाँ जाती रहती हो ?—मने पूछा।

—पहले तो माँ और हम बोई नहीं जाते थे माँ कहती थी, आपका उनसे

झगडा हो गया है। आप मुझे तो नाराज हाने। लेकिन दो-तीन बरस से नानी के बहने पर दादी मिजवान लग गयी। हम ही जाते थे। माँ तो दो-तीन बार ही गयी है। एष बार मामा के ब्याह पर और दूगरी बार छापी मौसी के ब्याह पर।

—तुम मुझे जाननी हो। —अनायास मन गुडडी से पूछ ही लिया।

दृष्ट शरमा गयी। धीर से बोली—हाँ, कोई अपन बाप को भी झूलता है। मैं तो रोज आपकी याद बरके रोती थी और माँ भी। पर विजय बडा गतान है। वह बहता था, हम नहीं रोते। क्या पिताजी भी हम याद बरके रोते हाने।

भरा रोम रोम मिहर उठा। आह ! मैं क्या इतना निपटुर हूँ। क्या इतना स्वार्थी ! मैं सदा अपने व्यक्तिगत सुख का ही प्रमुखता दी। पत्नी, पुत्री पुत्र माँ कैसे मैं दस बय इनसे दूर रह सका। मरी आँखें छलक आयी। गुडडी न जो देगा तो बोली—अरे आप रो रहे हैं। जब रोते हैं तो छोड कर क्या गये थे ? अब फिर बनी मत जाना।

मैं उसके सिर पर हाथ रख देता हूँ। थोडी दूर इसी तरह चलता रहता हूँ।

—वह दिख गया नाना का घर !—वह एक नये बने मकान की ओर खुंगी मैं भर कर सकेत करती है।

दूर से देख रहा हूँ। काफी लोग जमा हैं। शायद देर से प्रतीक्षा कर रहे हाने। धका हुई, न जाने ये लोग क्या क्या प्रश्न पूछेंगे। उस दिन गाडी मैं गाँव के एक खानी से साल भर पहले पता चला था कि लोग उसके बारे में यहाँ कई बातें करते हैं। कोई कहता है बंगालिन रख ली है, कोई कहता है पजाबिन। दा लडक है, एक लडकी है। न जाने और क्या क्या।

ससुराल आ गयी है। कई बच्चे, गायद पाम-पडोस के, विजय को घेरे हैं। शायद पूछ रहे हाने यही है तेरा बाप, यही है ना ! वह स्वीकृति सूचक सिर हिला रहा है।

ससुर साहब के पाव छुए। वे बहुत दृष्ट दिखाई दे रहे हैं। बद्ध भी लगने लगे हैं। सब ही वे सोचते रहे हाने कि कैसे नालायक दामाद से पाला पडा है। किसी काम का नहीं। दस-दस बरस तक घर से बाल बच्चा मैं देखकर। बबूतर पर चारपाई पडी हुई है जिस पर सफेद चदर बिछी है। दो नयी खोलिया के तकिये रख हैं। मैं तयारी मेरे स्वागत में हुई है। मुझे उसी पर बठने को कहा गया।

एक आदमी हाथ में थाली ले कर मेरे पास आ कर धरती पर बठ गया। यह क्या ! यह तो मेरे पाँव पकड रहा है। मैं धबरा कर पाँव चारपाई पर रख लेता हूँ। मेरी इस हरकत पर सब बुरी तरह हस रहे हैं, दरवाजे में खडी औरतें भी, और बच्चे भी। बहुत रोकन पर भी मुझे श्राप आ जाता है। एक झटके के साथ मैं पाँव नीचे रख देता हूँ। वह मेरे पाँव की ऊँगलिया का हरी घास की पतिया से पानी मैं डुबो कर धा रहा है। यही समय मैं आया कि यह कोई रिवाज होगा। पाँव धुल गये पर

वह बठा ही है और मुह की जोर देव रहा है। म सोच म पड जाता हूँ, कौन है यह ! और मुझे क्या करना चाहिए। पान खडी गुडडी की ओर विवसता स देखता हूँ। वह कहती है—प से दो इसे।

—कितन हूँ ?

—यह तो मालूम नहीं—यह हँसती हुई भाग जाती है।

समुर उठ कर आते हैं और सवा रुपया अपन पान मे थाली में डाल देते हैं। चलो, अच्छा ही हुआ। मेरे पास तो एक ही रुपय का नोट है।

मुझे विल्कुल अच्छा नहीं लग रहा है। लाग जब तय मेरी जोर देख लेते हैं, जैसे किसी दूसरे लोक का प्राणी हूँ। कोई कुछ बोल नहीं रहा है। कोई कुछ पूछ नहीं रहा है। गुमसुम बठा म मन ही मन घुट रहा हूँ। गुडडी आकर खटी हो गयी है।

—क्यो, क्या बात है।—म उससे पूछता हूँ।

—चलो, खाना खा लो।

म उसके साथ खाना खाने चल पडता हूँ। मूँगो पर चावल छितरे हुए हैं। ऊपर खूब बूरा है, बूरे पर घी है जो चावल और मूँगो में से रिस कर थाली के खाली हिस्से मे इकट्ठा हो गया है, असली देशी घी। सारे भोजन म दही घी की खुशबू व्याप्त है। कतना कौन खाएगा। म ता चार दिन मे भी नहीं खा सकता। जा कर थाली के पास बिछे आसन पर बैठ गया हूँ। छोटी साली कहती है—हाय भी नहीं घोंगे जीजाजी !

—अर हाँ, हाय घाना तो मूल ही गया, लाओ धुला दो।—मोरी पर जा कर हाय घाता हूँ। बापम जाकर थाली के पास ठिठक कर खडा रह जाता हूँ। फिर साली की आर देख कर प्रश्न करता हूँ—इतना कौन खाएगा ?

—आपस जितना खाया जाए, खा लें। बाकी बच्चे खा लगे।—वह रास्ता सुझाती है।

पर क्या न बच्चे मेर ही साथ खाने बठ जाएँ। मेरी जूठन क्या खाएँ। म बच्चा को बुला लेता हूँ। वे नि सकोच आ कर बठ जाते हैं। उनके चेहरे पर एक अवणनीय आभा है। जीवन मे सायद पहली बार अपन पिता के साथ एक ही थाली म भोजन कर रहे हैं। कस सौभाग्यगाली हैं व लोग जिनके बच्चे भोजन करन के लिए पिता की प्रतीक्षा करते हैं। मुझे एक अमीम सुख की प्रतीति हो रही है, एक अवणनीय सुख।

सास आ कर खडी है—गुरु कीजिए।—म 'हा' कह कर एक कौर उठाता हूँ। लगता है, जैसे वे कुछ पूछना चाह रही हैं। म समझ गया हूँ कि व क्या पूछेंगी।

यह बही स्पल है जहाँ एक बार दुघटना घट चुकी है। उस वार भी म भोजन करन बठा था। आधा ही खा पाया था कि दामाद के आने पर गीत गाने वाली

माते रिपते की स्त्रिया म से विसी ने गाया था

शुतरी ए रायाँ व मूत

XXX वे मुह पर मूत

आँपण मत सवारे मूत

दोपहराँ दो वारी मूत ।

बौन सन्न परेगा ऐसी गाली । और वह भी भोजन करते समय । और म गुरूसे म मर पर धनपन-ननन से थाली फेंक कर चला गया था । और सब देखते रह गये थे । म सीधा घर चला आया था ।

शायद आन भी सास गीता के लिए पूछने वाली हैं । औरतें इकट्ठी हो गयी हैं । एब-दो एक दो बरखे और भी आती जा रही हैं । म आज अपने आप म बहुत उदार हो गया हूँ, अपने सिद्धान्ता को भूल गया हूँ ।

—आप कुछ कहना चाहती हैं ।—मने उनसे पूछा ।

—आप नाराज न हो तो औरतें गीत गाने को कहती हैं । वसे गीत नहीं गायेंगी । भोजन के बाद आपको यही बठना पड़ेगा । अच्छे-अच्छे गीत गायेंगी ।

मुझे कोई एतराज नहीं । लेकिन कुतिया मुँह पर मत मुतवाइए ! बाकी खूब गाइए ।— मेरे उत्तर से वे खुश हो गयी ।

भोजन बरखे म वहीं बठ गया । बाहर की खाली चारपाई अंदर डाल दी गयी । गुन्डी और विजय दोनो मरे पास ही बठ गये । औरतें गीत गाने लगी ।

—आप लैट जाइए । ये तो यो ही रात मर गाती रहगी । गुडडी ने रास्ता सुझाया । मने गुडडी की ओर देखा । बच्चा के सामने वस तरह गीत सुनना अच्छा नहीं रगा ।

—तुम दोनो कहाँ सोओगे ! जाओ जहाँ सोना है जाकर सो जाओ । रात मे इतनी देर तक नहीं जागते ।

दोनों बच्चे उठ कर कमरे मे चले गये । शायद अपनी माँ के पास । वे फिर नहीं आये । गीत गुरु हो गये । गीत की शुरुआत छोटी साली ने की

लुल जा रे हरिया पोदीना

भुक् जा रे बाल्या पोदीना

जीजी ने भावे गीहूँ-चणा

जीजाजी ने भावे पोदीना लुल जा रे

इसी तरह की अय पक्तियाँ थी पर रस इतना था कि जी चाह रहा था घटो बठा सुनता रहूँ । थोड़ी देर बाद गीत समाप्त हो गया । औरतें बीच म बठी एक नववधुवना को ढकेल कर आगे करन की कोँगिंग कर रही थी । मेरी समझ म कुछ नहीं आया । आखिर बडी गरमा गरमी के बाद वह बठी-बठी ही आगे की आर

खिसकी । बीच म अच्छी खासी जगह हो गई । वह बठी बठी ही गान लगी ।

ऐसी मारूँ लपट की

तू म्हारे बानी पाक म्हारा छोरा बानी पाक

ऐसी मारूँ लपट की ।

उसके एक पाव म वेंपे घूँघरू बडी बेतुकी आवाज कर रह थे । और गीत के साथ उठ कर पडत पाव स घमाघम्म घम्म की आवाज बडी बुरी लग रही थी । उस पर तुक यह कि वह बीच-बीच म एक घुटने पर खडी होकर मेरी आर घप्पड मारन के अभिनय मे इतनी जोर से हाथ फेंकती था कि मुझे नोच भी आ रहा था और हँसी भी । कभी कभी यह भी भ्रम हो जाता था कि कही सचमुच ही थप्पड न लग जाए म सोन का बहाना करन लगा । किसी ने कहा अर यह तो सो गये ।

—नही साया ता नही पर ऊव जरूर गया । मने तो सीचा था आप कोई सुदर-सा नाच दिखाएँगी कोई सुदर-सा गीत गाएगी ।

—नाच ही ता हो रहा है । यह और क्या है ? —किसी न कहा ।

—यह तो पमद नही आया । हाँ, यदि खडी होकर सचमुच कोई नाच दिखाये फिर तो कोई बात भी बने । मने नाचने वाली औरत पर क्या गुजरी होगी इसका खयाल किये बिना ही इतना सब कुछ कह दिया । एक सन्नाटा-सा व्याप्त हो गया वातावरण म । सब मुन्न । सब गान्त । कुछ देर की प्रतीक्षा के बाद उनम कानाफूसी शुरू हुई । नयी पीढी की औरतें मेरे प्रस्ताव से सहमत थी और पुरानी विरोध कर रही थी—ऐसा तो आज तक नही हुआ । इतनी उमर गुजर गयी न कभी पीढर मे ऐसा देखा न सासरे म ।

नयी कह रही थी—नही देखा तो अब देख लो । कोई अनहोनी बात तो है नही । बठे-बठे न सही खडे होकर सही ।

एक बडा कह रही थी—तेरी जवान बहुत चल गयी है । आज तू करके देख किमके घर में घुसेगी ?

बडा विवाद सडा हो गया । पर तभी सास की आवाज गुनाइ दी—तुम को मत गाओ । हमारी राधा नाचेगी । उठ राधा नाच बेटी । म गाऊँगा तेरे नाच के साथ गीत । देखूँगी इनके यहाँ कभी दामाद नही आएँगे क्या ?

राधा माँ की आज्ञा मिलते ही खडी हो गयी । सब गान्त, सब चुप । पत्नी कोठरी का आधा विवाड खाले बठी थी । छिपी छिपी नजर स कभी कभी जब उध देखता था तो दोना की आँखें मिल जाती थी । गाँठें ढीली हो रही थी । पत्नी म घूँघट डाल कर आयी और अपनी भाभियो के पास बठ गयी । राधा ने घूँघट निकाल और गीत शुरू किया । राजस्थान का मगहर गीत । जिस पर धूमर नृत्य बिन साज वाज के चलने लगा ।

नना रा लामा क्यूँ कर जाऊँ सा
 भोली बाई सा रा बीरा क्यूँ कर आऊँ सा
 हाँ हाँ जी म्हारी महल चढन्ता पायल बाज सा
 नना रा लामो

सौत झराये बठी याँवे सा
 माया रा लामो, क्यूँ कर आऊँ सा

पूरे वातावरण में श्रुति गार रस की लहरें व्याप्त हो गयीं। इस राधा की एक एक धिक्कन पर हजारों परिनिर्वाण वारी जा सकती हैं। एक सर्मा बध गया। राधा का मन पहले भी दया था।

सासू भी सा गया म्हारी सुसरा भी सो गया

ननद बीजली या जागे सा

नना रा लोमी

लेकिन इस राधा की म कल्पना भी नहा कर सकता था—

ननद बीजली या जागे सा

नना रा लोमी जोहो जी

भोली बाई सा रा बीरा ओहो जी

माया रा लामो क्यूँ कर जाऊँ सा।

उसकी भगिमा उसके हाव भाव जैसे कृष्ण की राधा उसमें आ बठी हो।

किस तरह वह सोते हुए ससुर को देख रही थी, किस तरह सास का और फिर किस तरह जागती हुई ननद का। और फिर किस तरह ननो के लोमी को अपनी विवशता बता रही थी, सब यह सब बहुत मनमोहक था।

संगीत और नृत्य शोनों समाप्त हो गये। बड़ी-बूटियाँ भी राधा की प्रशंसा कर रही थी।

एक महीने रह कर आज जा रहा हूँ। दस साल पहले भी गया था लेकिन आज जजीब खिचाव में हूँ। न आगे खीचता है न पीछे छूटता है। बूढ़ी माँ की निराशा पत्नी की बेवसी और गुडडी पर चढता पानी। अब दस साल मटकने की हिम्मत नहीं है। गुडडी के हाथ पील करने होंगे। गाडी में बठा हूँ, गाडी लिये जा रही है। किस्मत आजमाऊँगा। गायद इस बार गुडडी का किस्मत नाम कर जाए। भीड़ बहुत है। बठन का जगह नहीं मिल रही लेकिन मैं इससे निस्सह हूँ—चपा आती है, उसकी याद चिकोटी काटती है। राधा जान क्यों इस बार चपा के बाजू आ कर खडी हो गयी। ये दाना जस गुडडी की माँ को पीछ मकेल दे रही हैं। लेकिन वह अपनी जगह पर खडी है। वह भरी गुडडी की माँ है वह भेरे विजय की माँ है।

चलते चलते उमन कहा था—गुडडा का देव कर जा रहे हो। जल्दी करनी

चाहिए ।—और फिर हम जैसे खान्नी लोग । म सोचता हूँ इस बार बहुत दिन बाहर नहीं रह सकूँगा । गुड्डी की किस्मत जरूर काम आएगी और म सब कुछ वही से सहेज कर ले आऊँगा ।

खोई हुई दिशाएँ

सड़क के मोड़ पर लगी रेलिंग के सहारे चढ़र खड़ा था। सामने, दायें-बायें आदमियों का सलाब था। शाम हो रही थी और कनाटप्लस की बत्तियाँ जगमगाने लगी थी। यकान से उसके पर जवाब दे रहे थे। वही दूर आया गया भी नहीं फिर भी यकान सार शरीर में मरी हुई थी। दिल और दिमाग इतना यका हुआ था कि, लगता था, वही यकान धीरे धीरे उतरकर तन में फलती जा रही है।

पूरा दिन बरबाद हो गया। यही खड़ा सोच रहा था। घर लौटने को भी मन नहीं कर रहा था। जाती-जाती एक सी ओरता को देखकर मन और भी उबने लगता था।

भूख पता नहीं, लगी है या नहीं। उसने दिमाग पर जार डाला—सुबह आठ बजे घर से निकला था। एक प्याली काफी के अलावा तो कुछ पेट में गया नहीं। और तब उसे जहसास हुआ कि घाड़ी-थोड़ी भूख लग रही है। दिमाग और पेट का साथ ऐसा हो गया है कि भूख भी सोचने से लगती है।

निगाह दूर आसमान पर अटक गयी। चीलें उड़ रही हैं और मोड़ की गल्ल में बटा हुआ आसमान दिखाई दे रहा है। उसके माजे कुछ गप्पे हा रहे हैं और आसमान भी माजे की तली की तरह गदला पड़ता जा रहा है। हल्की बन्बू-सी उसे लगी और मन भारी हो गया। उस गदके आसमान के नीचे जामा मस्जिद का गुम्बद और मीनार दिखाई पड़ रही है। उनकी नाकें बड़ी अजीब सी लग रही हैं।

पोछेवाही दुकान के बाहर चालिया का विज्ञापन है। रीगल बम-स्पाँज व नीम के पडा स चीरे धीरे बत्तियाँ झड़ रही हैं। बमें जूँ-जूँ बरती आती हैं। एक क्षण ठिठकती हैं। एक भार से सवारिया को उगलती हैं और दूमरी आर में निगलकर आगे बढ़ जाती हैं। चोरी-छेपे बत्तियाँ लगी हैं।

बत्तियाँ की भाँसों लाल-पीली हो रही हैं।

आस-मास स सक्का लाग पुजरते हैं पर कोई उग नहा पहचानता। हर आत्मा या औरत लापरवाही से दूसरा को नकारना या झूठे दप में दबा हुआ पुजर जाता है।

और तब उस अपना वह गहर मान आया जहाँ में तान मान पड़ल बह घना आया था। गंगा के मुनमान विचार पर भी अगर कार्ने अनजान मिल जाता तो उगड़ी नदरा में पहचान की एक झलक उर आती थी।

और वह राजधानी ! यहाँ सब अपना है, अपन देग का है पर जसे कुछ भी अपना नहीं है, अपने देस का नहीं है ?

तमाम सडकें हैं जिनपर वह जा मवता है लेकिन वे सडकें वही नहीं पहुँचाती । इन सडका के तिनारे घर हैं, बस्तियाँ हैं, पर किसी भी घर म वह नहीं जा सकता । उन घरों के बाहर फाटक हैं, जिनपर बुत्ता से सावधाना रहने की चेतावनी है फूल तोडन की मनाही है और घण्टी बजाकर इन्तजार करने की मजबूरी है ।

घर पर निमला इन्तजार कर रही हागी वहाँ पहुँचकर भी पहले मेहमान की तरह कुरसी पर बँटना हागा, क्योंकि बिस्तर पर कमरे का पूरा सामान रटा होगा और वह हीटर पर खाना पका रही होगी । उम्बत हवा के झोंके की तरह वह कमर म घुस भी नहीं सकता और न उसे बाँहा म लेकर प्यार ही कर सकता है । क्याकि गुप्ताजी अभी मिल से लौटे नहीं होंगे और मिसेज गुप्ता बेकारी म बँठी गप्प लडा रही होगी या किसी स्वेटर की बुनाई सीव रही होंगी । अगर वह चला भी गया तो कमरे मे बहुत अदब से घुसेगा, फिर मिसेज गुप्ता से इधर-उधर की दो चार बातें करेगा । तब बीबी खाना खान की बात कहेगी । और खाने की बात सुनकर मिसेज गुप्ता अपने घर जाने के लिए उठेंगी ।

और फिर उसके बाद बडी खिडकी का पर्ण खिसकाता पड़ेगा किसी बहाने खुराना की तरफवाली खिडकी का बंद करना पड़ेगा । घूमकर मेज के पास पहुँचना होगा और तब पानी का एक गिलास माँगने के बहाने वह पत्नी का बुलाएगा और तब उसे बाँहा मे लेकर प्यार से यह कह सकने का मौका आएगा—बहुत थक गया हूँ ।

लेकिन ऐसा होगा नहीं । इतनी लम्बी प्रक्रिया से गुजरने के पहले ही उसका मन मुँसला उठेगा और वह यह कहन पर मजबूर हो जाएगा—अरे, भई, खाने मे कितनी देर है ? 'सारा प्यार और समूची पहचान न जाने वहाँ छुप चुकी होगी अजीब-सा बँगानापन होगा । बेकरीवाला के यहाँ भरीइ आवाज मे रेडियो गा रहा हागा और गुलाटी क थक कदमा की सापली आवाज जिन पर सुनाई पड़ेगी ।

गरी म कोई स्कूटर आकर खेगा और उसमे से कोई अपरिचित आदमी निकलगा किसी और के घर मे चला जाएगा ।

माटरा की मरभ्त करनेवाले गराज का मालिक सरदार चाबिया लेकर घर जान के इन्तजार म आधी रात तक बठा रहेगा । क्याकि उसे पन्द्रह साल पुराने मेकनिक पर भी शायद बिदवास नहीं है ।

और सामने रहनेवाले बिशान कपूर के आन की आहट भर मिलेगी—पिठल दो साल मे उसने सिफ उसके नाम की प्लेट देखी है—बिगन कपूर जनलिस्ट । और उसकी गल्ल के बारे म वह सिफ यह जानता है कि सामनेवाली खिडकी से जब

विजली की रोगनी छनन लगती है और सिगरेट का धुआँ सलाखों से लिपट लिपटकर बाहर के अँधेरे में झूट जाता है तो विगन कपूर नाम का एक आत्ममी मीनर होता है और गुबह जब उसकी निहडकी के नीचे अण्डे का छिलका डबल रोटी का रपर और जली हुई सिगरेटें तीलियाँ और राख मिसरी हुई होती हैं तो विगन कपूर नाम का आदमी जा चुका होता है ।

सोचते-सोचते उसे लगा कि मोर्जे की बदबू और भी तेज हानी जा रही है और अब रेलिंग के पास सड़ा रहना मुशकिल है । जब स डायरी निकाल कर उसने अगले दिन की मुलाकाता के बारे में जान लेना चाहा ।

अ ग्रैजी दनिक् म पहले फोन करना है फिर समय तय करके मिलना है । रेडियो में एक चक्कर लगाना है । पिछला चक् रिजव बक से कश कराना है और घर एक मनीआडर भेजना है । कल का पूरा वक्त भी इसी में निकल जाएगा । अख बार का सम्पादक परिचित नहीं ह जो फौरन बुला ले और खुलकर बात करले और कोई बात तय हो जाए । रेडियो म भी कोई बात दस मिनट म तय नहीं हो सकती और रिजव बक के काउण्टर पर इलाहाबाद वाला अमरनाथ नहीं है जो फौरन चेक लेकर रपया ला दे । डाकखान पर व्यापारियों के चपरासिया की भीड होगी जो दम त्स मनीआडर के फाम लिये लाइन में खडे होंगे और एक कागज पर पूरी रकम और मनीआडर-कमीशन का मीजान लगाने म मशगूल होंगे । उनमें से कोई भी उसे नहीं पहचानता होगा ।

एक क्षण की जान-बहुचान का सिलसिला सिफ फाउण्डेनपेन होगा, जो कोई-न कोई हर्फ लिखन के लिए मांगेगा और लिख चुकने के बाद अपना खत पढते हुए वह बायें हाथ से उसे कलम लौटाकर शायद धीरे से थक्यू कहेगा और टिकट वाले काउण्टर की ओर बढ़ जाएगा ।

और तब उसे भ्रूँशलाहट-सी हुई डायरी हाथ म थी और उसकी निगाहें फिर दूर की ऊँची इमारतों, पर अटक गयी थी जिन पर विजली के मुकुट जगमगा रहे थे । और उन नामा में से वह किसी को नहीं जानता था । इलाहाबाद में सबसे बड़े कपडे वाले के बारे में इतना तो मालूम था कि पहले वह बहुत गरीब था और कपडे पर कपडा रख कर फरी लगाना था और अब उसका लडका विदेश पठन गया हुआ है और वह खुद बहुत धार्मिक आदमी है जो अब माये पर छापा तिलक लगाकर मनमाना मुनाफा वसूल करता है और कारपोरेशन का चुनाव लडने की तयारियाँ कर रहा है । लेकिन यहाँ कुछ भी पता नहीं चलता किसी के बारे म कुछ भी मालूम नहीं पडता ।

कनाटप्लेस में खुले हुए लान हैं । तनहा पड हैं और उन दूर दूर खडे तनहा पेडों के नीचे नगर निगम की बच हैं, जिन पर थके हुए लोग बठे हैं और लान

मे एकाग्र बच्चे दौड़ रहे हैं। बच्चा की शकल और गारारतें तो बहुत पहचानी-सी लगती हैं पर गोलगप्पे खाती हुई उनकी मम्मो अजनबी है क्याकि उसकी आंखों में मासूमियत और गरिमा से भरा प्यार नहीं है उसके शरीर में मातृत्व का सौन्दर्य और दप भी नहीं है—उसमें सिर्फ एक खुमार है और एक बहुत बेमानी और पिटी हुई ललकार है, जिसे न तो नकारा जा सकता है और न स्वीकार किया जा सकता है—वह ललकार सब कानों में गूँजती है और सत्र बहरों की तरह गुंजर जाते हैं।

लॉन पर कुछ क्षण बठने को मन हुआ पर उसे लगा कि वहाँ भी कोई ठिकाना नहीं अभी बल ही तो चोर की तरह दबे पाँव घास में बहता हुआ पानी आया था और उसके कपड़े मींग गये थे।

तनहा खड़े पेड़ों और उनके नीचे सिमटते अपेरे में अजीब-सा खालीपन है तनहाई ही सही, पर उसमें अपनापन तो हो। वह तनहाई भी किसी की नहीं है क्याकि हर दस मिनट बाद पुलिस का आदमी उधर से धूमता हुआ निकल जाता है। झाड़ियाँ की सूखी टहनियों में आइसक्रीम के खाली कागज और चने की खाली पुडियाँ उलझी हुई हैं या कोई बेघर-वार का आदमी शराब की खाली बोतल फेंक कर चला गया है।

ढायरी पर फिर उसकी नजर जम गयी और शेर शराबों से भरे उस सलाब में वह बहुत अकेला-सा महसूस करने लगा और उसे लगा कि इन तीन सालों में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ जो उसका अपना हो जिसकी कचोट अभी तक हो, खुशी या दद अब भी मौजूद हो। यहाँ रेगिस्तान की तरह फली हुई तनहाई है अनजान सागर-तटों की खामोशी और सूनापन है पछाड़ खाती हुई लहरों का शोर है जिससे वह खामोशी और भी गहरी होती है।

मोज़े की गबल में बटा हुआ आकाश है और जामा मस्जिद के गुम्बद के ऊपर चक्कर काटती हुई चीलें हैं। औरतों का पीछा करते हुए फूल बेचने वाले हैं और यतीम बच्चों के हाथ में शाम की खबरा के अखबार हैं।

और तभी चन्दर को लगा कि एक अरसा हो गया, एक जमाना गुजर गया, वह खुद अपने से नहीं मिल पाया। अपने से बातें करने का वक्त ही नहीं मिला। यह भी नहीं पूछा कि आखिर उसका अपना हाल-चाल क्या है और उसे क्या चाहिए? हलकी-सी मुस्कराहट उमके होठों पर आयी और उसने आगे हर शुक्रवार के आगे नोट किया—खुद से मिलना है, शाम ७ बजे से ९ बजे तक। और आज शुक्रवार ही है। यह मुलाकात आज ही होनी चाहिए। घड़ी पर नजर जाती है—सात बजे हैं। पर मन का चोर हावी हो जाता है। क्या न टी-हाउस में एक प्याला चाय पी ली जाए? न जाने क्या, मन अपने से मिलने से घबराता है, रह रहकर

कतराता है ।

तभी उस पार से आता हुआ आनन्द दिखाई दिया। वह उससे भी नहीं मिलना चाहता। बड़ा बुरा मज है आनन्द को। वह उस छूत से बचा रहना चाहता है। आनन्द दुनिया में दोस्त खोजता है—एसे दास्त, जो जिन्दगी में गहरे न उत्तरों पर उसके साथ कुछ देर रह सकें और बात कर सकें। उसकी बातों में गाइडों की तरह खोललापन है

और उसे लगा कि वही खोललापन खुद उसमें भी कहीं-न-कहीं है

उसने भी उन खण्डहरों में समय बरबाद किया है जिनकी कथाएँ अघण्टे गाइडों की जवान पर रहती हैं और जो हर बार, उन मरी हुई कहानियों को हर दशक के सामने दुहराते जाते हैं—यह दीवाने खास है जरा नक्काशी देखिए। यहाँ हीरे-जवाहरात से जड़ा सिंहासन था यह जनाना हमाम है और यह वह जगह है जहाँ से बादशाह अपनी रिआया को दशन देते थे और यह महल सदिया का है यह बरसात का और यह हवादार महल गर्मिया का है और उधर आइए सभल के यह वह जगह है जहाँ फाँसी दी जाती थी।

चन्दर का लगा, जिन्दगी के पच्चीस साल वह उन गाइडों के साथ खण्डहरों में बिताकर आया है, जिनकी जीवत कथाओं को वह कमी नहीं जान पाया—सिफ दीवाने खान उम दिखाया गया, नक्काशी दिखाई गयी और जनाने हमाम में घुमाकर गाइड ने उसे फासीवाले अंधेरे और बदबूदार कमरे में छोड़ दिया, जहाँ चमगादड़ लटकते हुए बिलबिला रहे हैं और एक बहुत पुरानी ऐतिहासिक रस्सी लटक रही है, जिसका फंदा गरदन में बस जाता है और आदमी झूल जाता है।

और उसके बाद अंधे कुएँ में फँकी गयी वे लाशें समाज को दे दी जाती हैं उममें और उनमें कोई फरक नहीं है।

और आनन्द भी उनसे अलग नहीं। चन्दर कतरा जाना चाहता था, क्योंकि आनन्द आठे ही गाइडों की तरह से कहेगा—यार, तुम्हारे बाल बहुत खबसूरत हैं। त्रिलोचन लगाते हो? लडकियाँ तो तवाह हा जाती हंगी।

और तभी चन्दर को सामने पाकर आनन्द रक गया, "हलो! यहाँ से? कयो लडकियो पर जुल्म का रहे हो?"

गुनकर उस हँसी आ गयी।

'किधर से आ रहे हो?' डायरी जेब में रखते हुए उसने पूछा।

आज तो यूँ ही फँस गये। आओ, एक प्याला काफी हा जाए।' आनन्द ने कहा और फिर एक क्षण रुककर उसने दूसरी बात सुनायी, "या और कुछ?"

चन्दर ने उसका मतलब समझकर ना कर दी। उसने जोर दिया, 'बलो फिर आज तो हा ही जाए क्या रखा है इस जिन्दगी में?' कहते हुए वह झूठी

हँसी हँसा और धीरे से हाथ दबाकर पूछा, "इफ यू डाट मादड कुछ पसे हैं ? उसके कहन मे कोई हिचक नहीं थी और न उसे गरम ही पायी । बडी सीधी-सी बात है—पसे कम हैं ।

"अच्छा, पाटनर, में अभी इन्तजाम करके आया ।" उसने विदवास को गहराते हुए कहा, "यही रकना चले मत जाना ।"

और वह जाता है तो फिर नहीं आता, चदर यह अच्छी तरह से जानता है ।

कुछ देर बाद वह टी-हाउस मे घुम गया और मेजों के पास चक्कर काटता हुआ कोने वाले पण्डितजी के काउंटर से सिगरेट का पकेट लेकर एक मेज पर जम गया ।

हलो !" कोई एक अनजाना चेहरा वाला, 'बहुत दिनों बाद इधर आना हुआ ।' और वह भी वहीं बठ गया ।

दोनों के पास बात करन के लिए कुछ भी नहीं है ।

टी-हाउस मे बेपनाह घोर है । खोखली हँसी के ठहके है और दीवार पर एक घडी है जो हमेशा व क्षत से आगे चलती है । तीन रास्ते अदर आन और बाहर जाने के लिए हैं और चौथा रास्ता वायरूम म जाता है । वायरूम के पाटम मे फिनाइल की गालिया पडी रहती है और गँलरी म एक गीसा लगा हुआ है । हर वह आन्मी जा वायरूम जाता है, उस गीसे मे अपना मुह देखकर लौटता है ।

गैलाड मे डिनर-डास की तयारी हो रही है । कुरसियो की तीन कतारें बाहर निवालकर रख दी गयी हैं । उधर बोल्गा पर विदगियो की भीड बढ़ रही होगी ।

और तभी एक जोडा भीतर आया ।

महिला सजी-बजी है और उसके जूडे म फूल भी हैं । आदमी के चेहरे पर अजीब-सा गरूर है और वे दोनों फेमिलीवाली सीट पर आमने-सामने बठ जाते हैं । बठने से पहले उनमे जैसे कोई ताल्लुक नजर नहीं आ रहा था । लेकिन जब महिला बठने के लिए मुडी तो साथ वाले आदमी ने उसकी कमर पर हाथ रखकर सहाय दिया ।

उनके पास भी बात करने के लिए शायद कुछ नहीं है ।

महिला अपना जूडा ठीक करते हुए औरो को देख रही है और साथ वाला आदमी पानी के गिलास को देख रहा है । किसी के देखने मे कोई मतलब नहीं है । आँखें हैं इसलिए देखना पडता है । अगर न होती तो सवाल ही नहीं था । एक जगह देखते-देखते आँखा मे पानी आ जाता है इसलिए जरूरी है कि इधर-उधर भी देखा जाए ।

बरा उनकी मेज पर सामान रख जाता है और दोनों खाने म मशगूल हो जाते हैं । कोई बात नहीं करता । आदमी खाना खाकर दाँत कुरेदने लगता है और वह महिला रुमाल निवालकर अदाज से लिपस्टिक ठीक करती है ।

अन्त में बेरा आवर पसे लौगता है ता आदमी कुछ त्रिप छोड़ना है जिस महिला गौर से देखती है और दाना लापरवाही से उठ खड़े होते हैं। आन्मी जरा टिठक्कर सायवाली महिला को आगे निक्कलने का इगारा करता है और उसके पीछे-पीछ चला जाता है।

चन्दर का मन और भारी हो गया। अवेलेपन का नागपाश जमे और भी बस गया। अपने साथ बठे हुए अनजान दोस्त की तरफ उसने गहरी नजरों में देखा और सोचा कि अजनबी ही सही पर इसने उसे पहचाना तो, कतनी पहचान भी बड़ा महारा देती है।

अपनी ओर चन्दर को देखते हुए पावर सायवाला दास्त कुछ कहने को हुआ पर जस उसे कुछ याद नहीं आया। फिर अपन का सैनालकर उसने चन्दर से पूछा 'आप आप तो गायद कामस मिनिस्ट्री में हैं। मुझ याद पडता है कि' कहते हुए वह रुक गया।

चन्दर का पूरा शरीर झनझना उठा। एक घूंट में बची हुई काफी पीकर उसने बड़े सयत स्वर में जवाब दिया, 'नहीं मैं कामस मिनिस्ट्री में कभी नहीं था।'

उस आदमी ने आगे अटक्लें मिडान की बोशिंग नहीं की। सीधे-साद उस अनजान सम्बन्ध का मजबूत बनाते हुए कहा, "आल राइन्, पाटनर फिर कभी मुलाकात होगी। और काफी के पने देपर मिगरट मुल्गाना हुआ उठ गया।

चन्दर बाहर निक्कल कर बस-स्टॉप की ओर बढ़ा। मद्रास होटल के पीछे बस स्टॉप पर चार पाँच लोग खड़े थे और पुलिसवाला स्टॉप की छतरी के नीचे बठा मिगरट पी रहा था।

चन्दर वहीं जाकर खड़ा हो गया। पड के अँधेरे में वह चुपचाप खड़ा था। नीचे पीले पत्ते पड़े थे, जो उसके परो से दबकर चुरमुराने लगते थे और पीले पत्तों की वह आवाज उसे वहाँ पीछ खींच ले गयी। इस आवाज में एक बहुत गहरी पहचान थी 'उसे बडी राहत-सी मिली।

ऐसे ही पीले पत्ते पड़े हुए थे। उस रात पर बहुत साल पहले इन्द्रा के साथ एक दिन वह चला जा रहा था तब कुछ भी नहीं था उसके सामने वह खण्डहरो में अपनी जिन्दगी खराब कर रहा था और तब इन्द्रा ने ही उससे कहा था, "चन्दर! तुम क्या नहीं कर सकते?"

और इन्द्रा की उन प्यार भरी आँखों में झाँकते हुए उसने कहा था, 'मेरे पास है ही क्या? समझ में नहीं आता कि जिन्दगी कहाँ ले जाएंगी इन्द्रा। इसीलिए मैं यह नहीं चाहता कि तुम अपनी जिन्दगी मेरी खातिर बिगाड़ लो। पता नहीं, मैं किस किनारे लूँ, भ्रूखा मरूँ या पागल हो जाऊँ' "

इन्द्रा की आँखों में प्यार के बादल और गहरे हो आये थे और उसने कहा था

‘ऐसी बातें क्यों करते हो, चन्दर ? मैं तुम्हारे साथ हर हाल में सुखी रहूँगी।’

चन्दर ने उसे बहुत गौर से देखा था। इन्द्रा की आँखों में नमी आ गयी थी। उसकी कंटीली बरौनियों से विश्वासभरी मासूमियत छलक रही थी। माथे पर आयी हुई लट छूने को उसका मन ही आया था पर वह क्षिप्तककर रह गया था। इन्द्रा के कानों में पड़े हुए कुण्डल पानी में तरती मछलियाँ की तरह झलक जाते थे। उसने कहा था, “आओ, उधर पेड़ के नीचे बैठोगे।”

सरस के पेड़ के नीचे एक सीमेंट की बेंच बनी थी। जमीन पर पीली पतियाँ बिखरी हुई थी। उसके कुचलने से कसी प्यारी आवाज आ रही थी।

दोनों बेंच पर बैठ गये थे और चन्दर धीरे से उसकी कलाई पर अँगुली से लकीरें खींचने लगा था। दोनों खामोश बैठे थे। बातें बहुत-सी थी जो वे कह नहीं पा रहे थे। कुछ क्षणों बाद इन्द्रा ने आँखें चुराते हुए उसे देखा था और शरमा गयी थी और फिर उसी बात पर आ गयी थी, जैसे उसी एक बात में सारी बातें छिपी हो ‘तुम ऐसा क्या सोचते हो चन्दर ? मुझ पर मरौसा नहीं ?’

तब चन्दर ने कहा था, “मरौसा तो बहुत है इन्द्रा। पर मैं खानाबदोश की तरह जिदगी भर मटकता रहूँगा। उन परेशानियों में तुम्हें खींचने की बात सोचता हूँ तो बरदाश्त नहीं कर पाता। तुम बहुत अच्छी और सुविधाओं से भरी जिदगी जी सकती हो। मैंने तो सिर पर कफन बाधा है मेरा क्या ठिकाना ?”

“तुम चाहो जो कुछ बनो, चन्दर, अच्छे या बुरे, मेरे लिए एक-से रहोगे। कितना इतजार करती हूँ तुम्हारा, पर तुम्हें कभी वक्त ही नहीं मिलता।” फिर कुछ देर मौन रहकर उसने पूछा था, “इधर कुछ लिखा ?”

‘हाँ’ धीरे से चन्दर ने कहा था।

‘दिखाओ’ इन्द्रा ने मांगा था।

और तब चन्दर ने पसीजे हुए हाथों से डायरी बढा दी थी। इन्द्रा ने फौरन डायरी अपनी किताबों में रख ली थी और बोली थी, “अब यह कल मिलेगी इस बहाने तो आओगे।”

“नहीं-नहीं ! मैं डायरी अपने साथ ले आऊँगा मुझे वापस दो !” चन्दर ने कहा था तो इन्द्रा शकाने से मुस्कराती रही थी और उसकी आँखों में प्यार की गहराइयाँ जोर बढ गयी थी।

हारकर चन्दर वापस चला आया था और दूसरे दिन अपनी डायरी लेने पहुँचा था ता इन्द्रा ने कहा था, “इसमें कुछ मैंने भी लिखा है, पढ़कर फाड़ देना जरूर से ?”

‘मैं नहीं फाड़ूँगा !’

‘तो छुट्टी हो जाएगी !’ इन्द्रा ने बच्चों की तरह बड़ी मासूमियत से कहा

था और उस यत उमर मुह से वह बेहद बचपने की बात भी बड़ी प्यारी लगी और एक दिन

एक दिन इद्रा पर आयी थी। इधर-उधर स धूम धामकर वह चदर क बमर म पहुँच गयी थी और तब चदर नपहली बार उस मिलतुल अपन पास महसूस किया था और उसके गोरे माथे पर रंग से बिंदी बना दी थी और कई क्षणा तक मुग्ध-सा देसता रह गया था और अनजाने ही उसने अपन होठ इद्रा के माथे पर रस दिये थे। इद्रा की पलक झपक गयी थी और रोम रोम स एक मुगध फूट उठी थी। उसकी अँगुलियाँ चदर की बाँहा पर धरधराने लगी थी और माथे पर आया पसीना उसके हाठा ने सोख लिया था। रेगमी रोम पसीने से बिपक गये थे और उन उमाद के क्षणो म दोनो ने ही प्रतिज्ञा की थी—वह प्रतिज्ञा जिसम शब्द नहीं थ जो हाठा तक भी नहीं आयी थी।

तब से उसे वे गल्ल हमेशा याद रहते हैं—तुम क्या नहा कर सकते ?

एक बस आयी और ठिठककर चली गयी। तब चदर को अहसास हुआ कि वह बस-स्टॉप पर सटा है।

वह गहरी पहचान कही कोई तो है और वह बहुत दूर भी तो नहीं।

इद्रा भी यही है दिल्ली मे

दा महीन पहले ही तो वह मिला था। तब भी इद्रा की आँखा म चार बरस पहले की पहचान थी और उसन अपने पति से किसी बात पर कहा था, 'अरे चदर की आदतें मैं खूब जानती हूँ।'

और इद्रा के पति ने बड़े खुले दिल से कहा था, तो फिर, नई इनकी खातिर-बातिर करो।'

और इद्रा ने मुस्कराने हुए चार बरस पहले की ही तरह चिढ़ाने के अणज म बयान किया था।

चदर को दूध से चिड है और काफी इह धुआँ पीन की तरह लगती है चाय मे अगन दो चम्मच चीनी डाल दी गयी ता इनका गला खराब हा जाएगा कहकर वह खिलखिलाकर हँस दी थी और इस बात से उसने पिछली बातो की याद ताजी कर दी थी सचमुच चदर दो चम्मच चीनी नहीं पी सकता।

बस आने का नाम नहीं ले रही।

खडे-खडे चदर को लगा कि इस अवजानी और अपरिचित नगरी म एक इद्रा है जो उस इतन सालो के बाद भी पहचानती है अब तक जानती है। उसका मन अपने-आप इद्रा से मिलने के लिए छटपटाने लगा। यह अजनबीयत किसी तरह दूटे तो कुछ क्षणा के लिए भी।

तभी एक फटपटवाला आवाज लपाता हुआ आ गया— गुरद्वारा रोड !

त्रोल बाग गुब्बारा रोड ।

चन्दर एक कदम आगे बढ़ा और वह सरदार उसे देखते ही जैसे एकदम पहचान गया, "आए, बाबूजी, त्रोलबाग, गुब्बारा रोड ।"

उसकी आंखों में पहचान की झलक देख चंदर का मन हलका हो गया । आखिर एक ने तो पहचाना । चंदर सरदार को पहचानता था, बहुत बार वह इसी सरदार के फटफट में बंठकर कनाट प्लेस आया था ।

आंखों में पहचान देखते ही चंदर लपककर फटफट पर बैठ गया । तीन सवारियाँ और आ गयीं और दस मिनट बाद ही गुब्बारा रोड के चौराहे पर फटफट रक गया । चंदर ने एक खवती निकालकर सरदार की हथेली पर रख दी और एक पहचान भरी नजर में उसे देख आगे बढ़ गया ।

पीछे में आवाज आयी, "ए बाबूजी ! कितना पसा लिया है ?" चंदर ने मुड़कर देखा, तो सरदार उसकी तरफ आता हुआ बढ़ रहा था, "दो आने और दोजिए साहब ।"

"हमेशा चार ही आने तो लगते हैं, सरदारजी" चंदर पहचान जताता हुआ बोला, पर सरदारजी की आंखों में पहचान की परछाई तक नहीं थी । वह फिर बोला, "सरदारजी, आपके फटफट पर ही बीसो बार चार आन देकर आया हूँ ।"

"किन्हे होर ने लये होणगे चार आने । असी ते छ आन तो घट नहीं लेदे, बादशाहो ।" सरदार बोला और उसकी हथेली फली हुई थी ।

बात दो आने की नहीं थी । चंदर ने बाकी पैसे उसकी हथेली पर रख दिये और इद्रा के घर की तरफ मुड़ गया ।

और इद्रा उसे वैसे ही मिली । वह अपने पति का इन्तजार कर रही थी । बड़ी अच्छी तरह उसने चंदर को बंठाया और बोली, "इधर कसे भूल पड़े आज ?" उसकी आंखों में वही पहचान की परछाई तैर रही थी । कुछ क्षणों बाद इद्रा ने कहा था, "अब ता नौ बज गये । आठ ही बजे पबट्टी बंद करके लौट आते हैं पता नहीं आज क्यों देर हो गयी । अच्छा चाय ता पिओगे ?"

चाय तो नकार नहीं की जा सकती ।" चंदर न बड़े उत्साह से कहा था और कुर्सी पर आराम से टांगें फलाकर बंठ गया था । उसकी सारी यकान जैसे उतर गयी थी और मन का अकेलापन वहीं डूब गया था ।

नौकरानी आकर चाय रख गयी । इद्रा प्याले सौधे करके चाय बनाने लगी । वह उसकी बांहों, चेहरे और हाथों को देखता रहा सबकुछ वही था वैसे ही था चिर परिचित

तभी इद्रा न पूछा, 'चीनी कितनी दू ?'

और एक झटके से जैसे सबकुछ विस्तर गया । चंदर का गला सूखने-सा लगा

और गरीर फिर थकान से भारी हो गया। माथे पर पसीना आ गया। फिर भी उसने पहचान का गिदता जोड़ने की एक कोशिश की और बोला, 'दो चम्मच।' और उसे लगा कि अभी इद्रा को सब-कुछ याद आ जाएगा और वह पूछेगी कि क्या दो चम्मच चीनी से अब गला खराब नहीं होगा ?

पर इद्रा न दो चम्मच चीनी डाल दी और प्याला उसकी ओर बढ़ा दिया। जहर के घूटा की तरह वह चाय पीता रहा। इद्रा इधर-उधर की बातें करती रही जिनसे मेहमाननवाजी की बू आ रही थी और चंदर का मन कर रहा था कि वह चीखता हुआ मर्हाँ से भाग जाए और किसी दीवार से अपना मिर टकरा दे।

जस-तसे उसने चाय पी और पसीना पाछता हुआ बाहर निकल आया। इद्रा न क्या-क्या बातें की थी उसे बिल्कुल याद नहीं रही।

सड़क पर निकलकर उसने एक गहरी सांस ली और कुछ क्षणों के लिए खड़ा रह गया। उसका गला बुरी तरह सूख रहा था और मुँह का स्वाद बेहद बिगड़ा हुआ था।

चौराहे पर कुछ टक्सी डाइवर नए नए गालियाँ बक रहे थे और एक कुत्ता दूर सड़क पर भागा चला जा रहा था। मछलियाँ तलने की गंध यहाँ तक आ रही थी और पानवाले की दूकान पर कुछ जवान लोग बोकाबोला की बोतलें मुँह में लगाय खड़े थे। स्कूटरों में कुछ लोग भागे जा रहे थे। और शहर से दूर जानेवाले लोग बस-स्टॉप पर खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे।

कारें, टक्सियाँ, बसें और स्कूटर आ-जा रहे थे।

चौराहे पर लगी बत्तियाँ की आँखें अब भी लाल-पीली हो रही थी।

चंदर थका-सा अपने घर की ओर लौट रहा था। अँगुलियो पर जूता काट रहा था और मोजे की बदबू और भी तेज हो गयी थी।

आखिर वह थका-हारा घर पहुँचा और एक मेहमान की तरह कुर्सी पर बैठ गया। यह कोई नई बात नहीं थी। निमला उस देखकर मुस्करायी और धीरे से बाँहा पर हाथ रखकर पूछा, 'बहुत थक गये ?'

'हां,' चंदर ने कहा और उसे बहुत ध्यान से देखा। उसका मन भीतर में उमड़ आया था। उस किराये के मकान में भी उस क्षण उसे राहत मिली और उस लगा कि वह उसी का है।

निमला खाना लगाते हुए बोली, 'हाथ मुँह धो लो।'

'अभी खाने का मन नहीं है चंदर न कहा।'

बहुत ध्यान से देखते हुए निमला न पूछा, 'क्यों क्या बात है ? सुबह भी तो खाके नहीं गये थे। दोपहर में कुछ खाया था ?'

'हां, उसने कहा और निमला को देखने लगा।

निमला कुछ अचकचायी और थकी-थकी उसके पास बैठ गयी।

चंदर कुछ देर खाई-खोई नज़रो से कमरे की हर चीज़ देखता रहा। बीच-बीच में बड़ी गहरी नज़रा से निमला को ताक लेता। निमला कोई किताब खोल कर पढ़ने लगी थी।

पीछे से पड़ती हुई रोशनी में निमला के बाल रेशम की तरह चमक रहे थे। उसकी बरोनिया मुलायम काटा की तरह लग रही थी और कनपटों के पास रेशमी बालों के सिरे अपने-आप घूम गये थे। पलका के नीचे पड़ती हुई परछाई बहुत पहचानी-सी लग रही थी। उसने कड़ा आधी कलाई तक सरका लिया था।

चंदर की निगाह उममें पुरानी पहचानें खोज रही थी—उमके नाखून अँगुलियाँ कानों की गुदारी लवें

फिर उठकर उसने पदें खींच लिये और आराम से लेट गया। उसे लगा कि वह अकेला नहीं है, अजनबी और तनहा नहीं है। सामनेवाला मुल्दस्ता उसका अपा है। पड़े हुए कपड़े उसके अपने हैं। उनकी गंध वह पहचानता है। इन सभी चीज़ों में एक गहरी पहचान है। घोर अँधेरी रात में भी वह उह टटोलकर पहचान सकता है। किसी भी दरवाज़े से त्रिना टकराय हुए निकल सकता है।

तभी ज़ीन पर गुलाटी के थके कदमों की खोलखली आहट सुनाई पड़ी और उसे धबराहट-सी हो आयी। उसने धीरे से निमला का अपने पास बुला लिया और उसे लिटाकर उसकी छाती पर अपना हाथ रख दिया।

कई क्षणों तक वह अपने हाथ से उमकी उठनी-बठती छाता को महसूस करता रहा। फिर अचानक उसकी इच्छा हुई कि निमला का शरीर और मन उसे पहचान की साक्षी दे, आत्मियता और निबन्ध एकता का अहसास दे।

अँधेरे ही में उसने उसके नाखूनों को टटोला, उसके पलकों को छुआ, उमकी गदन में मुँह ठुपाकर सो जाना चाहा। घुने हुए बालों की चिर-परिचित मुगंध उमके रध रध में रिसने लगी और उमके हाथ पहचान के लिए पोर-पोर पर थरथराते हुए सरकने लगे। निमला की साँस भारी होती आ रही थी।

उसने उसकी मांसल बाँहों का सहलाया और गोल गुदारे कंधों को दब धपाया। निमला का शरीर एक अनूठे अनुराग से पास आता जा रहा था।

उसका रोम रोम उस पहचान रहा था जोड़-जोड़ कसाव से पूरित था तन के भीतर गरम रक्त के ज्वार उठ रहे थे और हर साँस पास खींचती जा रही थी। अग प्रत्येक में, पोर-पोर में एक गहरी पहचान

उसका मन उस परिचित गंध परिचित सानो और पहचाने स्पर्शों में डूबता गया। उसे और कुछ भी नहीं चाहिए परिचय की एक माँग उम अँधेरे में वह साँसों से, गंध से, तन के टुकड़े टुकड़े से पहचान चाहता है प्रतीति चाहता है।

चारा तरफ सभटा छा गया।

और उस गामांगी में यह आदरस्त हो गया ।

निमला ने करवट बत्ती और एक गहरी साँस लेकर डीली-सी पड़ गयी । और जरा देर में ही वह गहरा नींद में डूब गयी ।

और अलसापा हुआ चंद्र फिर अपने को बहद अकल्प महसूस करने लगा । उसने निमला के कंधे पर हाथ रक्ता और चाहा कि उसे अपनी आँसू भर से, पर उसकी अँगुलियों में जैसे जान ही न हो । आँसू उसने हताश होकर आँसू मूँद ली और पता नहीं क्या उसकी पलकों झपक गयी ।

याने वह घड़ियाल ने दो के घंटे बजाये, तो चंद्र की नींद उखल गयी । नींद के सुमार में ही वह चौक-सा पड़ा जैसे कमरे की गामांगी और मूनपन से वह डर गया हो । अँधेरे में ही उसने निमला का टटोला । तबिये पर बिलखे उसके गालों पर उसका हाथ पड़ा और उन बालों की बिजनाई उसने महसूस की और सिर झुकाकर वह उन्हें मूँधन लगा ।

निमला अब भी करवट लिये पड़ी थी । वह धीरे से नींद में कुनमुनायी । चंद्र का दिल अचानक धक्के से रह गया—वही निमला जाग न जाए, अनजाने ही इस स्पर्श से अजनबिया की तरह चौक न जाए ।

निमला नींद में ही कुछ बड़बड़ायी और फिर जैसे डरकर रोने लगी । चंद्र चौक-सा गया—क्या वह उसके स्पर्श को नहीं पहचानती ?

उसने निमला को झकझोरकर उठाया, ' निमला ! निमला ! वह बड़बड़ासी में पुकारता गया ।

निमला चौककर उठी और आँसू मलते हुए प्रकृतिस्थ होने की कोशिश करने लगी ।

बिजली जलाकर निमला को दोनों कंधों से पकड़कर उसने अपना मुँह उसके सामने करके डरी हुई आवाज में पूछा ' मुझे पहचानती हो ? मुझे पहचानती हो न निमला ? '

निमला आँसू फाड़कर देखने लगी और जाँच्य भरे स्वर में बोली, ' क्या हुआ ? '

वह निमला का ताकता रहा । उसकी आँसू उसके चेहरे पर कुछ छाजती रहीं उसका मुँह से कोई बात न निकली ।

मेरा दुश्मन

वह इस समय दूमरे कमरे में बेहोश पड़ा है। आज मैं उसकी शराब में कोई चीज मिला दी थी कि खाली शराब वह शरबत की तरह गट-गट पी जाता है और उस पर कोई खास असर नहीं होता। आखा में लाल डोरे-से भूलने लगते हैं, माथे की पिनो पसीन में भीगकर दमक उठती हैं, हाठों का जहर और उजागर हो जाता है, और बस—होशोहवास बदस्तूर कायम रहत हैं।

हैरान हूँ कि यह तरीक़ीब मुझे पहले कभी क्या नहीं सूझी। गायद सूती भी हो, और मैंने कुछ सोचकर इसे दबा दिया हो। मैं हमेशा कुछ-न-कुछ सोचकर कई बातों को दबा जाता हूँ। आज भी मुझे अदेगा तो या कि वह पहल ही घूँट में जायका पहचान कर मेरी चोरी पकड़ लेगा। लेकिन गिलास खत्म होने-होने उसकी आँखें बुझने लगी थी और मेरा हाँसला बढ गया था। जी में आया था कि उसी क्षण उसकी गरदन मराड दूँ, लेकिन फिर नतीजो की कल्पना से दिल दहलकर रह गया था। मैं समझता हूँ कि हर बुजदिल आदमी की कल्पना बहुत तेज होती है हमेशा उसे हर खतरे से बचा ले जाती है। फिर भी हिम्मत बाधकर मैंने एक बार सीधे उसकी ओर देखा जरूर था। इतना भी क्या कम है कि साधारण हालत में मेरी निगाहें सहमी हुई-सी उसके सामने इधर-उधर फड़फड़ाती रहती हैं। साधारण हालात में मेरी स्थिति उसके सामने बहुत असाधारण रहती है।

अब उसकी आँखें बन्द हो चुकी थी और सिर झूल रहा था। एक ओर सुदक-कर गिर जान से पहले उसकी बाँहें दो लदी हुई डीली टहनियाँ की सुस्त-भी उठान के साथ मेरी ओर उठ आई थी। उसे इस तरह लाचार देखकर भ्रम हुआ था कि वह दम तोड रहा है।

लेकिन मैं जानता हूँ कि वह भूजी किमी भी क्षण उछलकर सदा हो सकता है। होश सँभालन पर वह कुछ कहगा नहीं। उसकी ताकत उसकी सामोरी में है। बाँहें वह उस जमाने में भी बहुत कम बिया करता था, लेकिन अब ता जैसे बिल्कुल शूँगा हो गया है।

उसकी शूँगी अबहलना की कल्पना-मात्र से मुझे दहशत हा रही है। कहा न कि मैं एक बुजदिल इन्सान हूँ।

मैं न जाने कबसे गमझ बठा था कि इतने असें की अल्हदगी के बाद अब मैं उसके आतक से पूरी तरह आजाद हो चुका हूँ। इसी खुशफहमी में शायद उस रोज उसे मैं अपने साथ ले आया था। शायद मन में कहीं उस पर रीढ़ गौठन, उसे नीचा दिखाने की दुरागा भी रही हो। हो सकता है कि मैंने सोचा हो कि वह मेरी जीती-जागती खूबसूरत बीबी, चहकते मटकते तदुरस्त बच्चों, और आरास्ता परास्ता आलीगान कौठी को दगकर खुद ही मदान छोड़कर भाग जायेगा और हमें के लिए मुझे उससे नजात मिल जायेगी। शायद मैं उस पर यह साबित कर दिखाना चाहता था कि उससे पीछा छुड़ा लेने के बाद किस तदुगवार हृद तक मैंने अपनी जिन्दगी को संभाल-संभाल लिया है।

लेकिन ये सब लेंगे बहाने हैं। हकीकत शायद यह है कि उस रोज मैं उसे अपने साथ नहीं लाया था, बल्कि वह खुद ही मेरे साथ चला आया था, जैसे मैं उसे नहीं बल्कि वह मुझे नीचा दिखाना चाहता हो। जाहिर है कि उस समय यह बारीक बात मेरी समझ में नहीं आयी होगी। मौके पर ठीक बात मैं कभी नहीं सोच पाता। यही तो मुसीबत है। वैसे मुसीबतें और भी बहुत हैं लेकिन उन सबका जिक्र यहाँ बेकार होगा।

माला के सामने उस रोज मैंने इसी किरम की कोई लेंगड़ी सफाई पेश करने की कोशिश की थी और उस पर कोई असर नहीं हुआ था। वह उसे देखते ही विफर उठी थी। सबसे पहले अपनी बैकूफी और सारी स्थिति का अहसास शायद मुझे उसी क्षण हुआ था। मुझे उस कमबख्त से वही घर से दूर, उस सबक के किनारे किसी-न किसी तरह निबट लेना चाहिए था। अगर अपनी उस सहमी हुई खामोशी को तोड़कर मैंने अपनी समस्त मजदूरियाँ उसके सामने रख दी होती, माला का एक खाका-सा लोच दिया होता, साफ-साफ उससे कह दिया होता—देखो गुरु मुझ पर दया करा और मेरा पीछा छोड़ दो—तो शायद वही हम किसी समझौते पर पहुँच जाते। और नहीं तो वह मुझे कुछ मोहलत तो दे ही देता। छूटते ही दो मोर्चों को एक साथ संभालने की दिक्कत तो पेश न आती। कुछ भी हाँ, मुझे उसे अपने घर नहीं लाना चाहिए था। लेकिन अब यह सारी समझदारी बेकार थी। माला और वह एक दूसरे को घूँ घूर रहे थे जैसे दो पुराने और जानी दुस्मन हो। एक क्षण के लिए मैं यह सोचकर आश्चर्य हुआ था कि माला सारी स्थिति खुद संभाल लेगी और फिर दूसरे ही क्षण मैं माला की लानत मलामत की कल्पना कर सहम गया था। बात को मजाक में घाल देना की कोशिश मैंने एक खास गिलगिले लहजे में—जो मेरे पास ऐसे नाजूक मौके के लिए सुरक्षित रहता है—बहा था डालियाँ। जरा रास्ता तो छोड़ो कि हम बहुत लम्बी सर से लौटे हैं जरा बठ जामे तो जो सजा जी में आये, दे देना।

वह रास्ते से तो हट गई थी, लेकिन उसके तनाव में कोई कमी नहीं हुई थी, और न ही उसने मुझे बठने दिया था। साथ ही उस मुरदार ने मेरी तरफ यूँ देखा था जैसे वह रहा हो—तो तुम वाकई बस औरत के गुलाम बनकर रह गए हो। और खुद में उन दोनों की तरफ यूँ देख रहा था जैसे एक ही नजर बचाकर दूसरे से कोई साजिगी सम्बन्ध पदा कर लेने की स्वाहिन हो।

फिर माला ने मौका पाते ही मुझे अलग ले जाकर डाटना-डपटना शुरू कर दिया था—म पूछती हूँ कि यह तुम किस आवागम को पकड़कर साथ ले आए हो? जरूर कोई तुम्हारा पुराना दोस्त होगा? है न? इत्ते बरस गादी को हो चले, लेकिन तुम अभी तक बसे-बसे ही रहे। मेरे बच्चे उसे देखकर क्या कहेंगे? पडोसी क्या सोचेंगे? अब कुछ बोलोगे भी?

म हैरान था कि क्या बोलूँ। माला के सामने मैं बोलता कम हूँ, ज्यादा समय तोलने में ही बीत जाता है, और उसका मिजाज और बिगड़ जाता है। बसे उसका गुम्मा बजा था। उसका गुस्सा हमेशा बजा होता है। हमारी कामयाब शादी की बुनियाद भी इसी पर कायम है—उसकी हर बात हमेशा सही होती है और मैं अपनी हर गलती को चुपचाप और फौरन कबूल कर लेता हूँ। ऊपर से वह कुछ भी क्यों न कह उसे मेरी फरमावरलारी पर पूरा भरोसा है। बीच-बीच में महज मुझे खुश कर देने के खयाल से वह इस किस्म की गिकायतें जरूर कर दिया करती है—तुम्हें न जाने हर मामूली सं-मामूली बात पर मेरे खिलाफ डट जाने में क्या मजा आता है? मानती हूँ कि तुम मुझसे बही ज्यादा समझदार हो, लेकिन कभी-कभी मेरी बात रखने के लिए ही सही बग रा-बग रा।

मुझे उसके ये मूठे उलाहने बहुत पसंद हैं गो मैं उनसे ज्यादा सुश नहीं हो पाता। फिर भी वह समझती है कि इनसे मेरा भ्रम बना रहता है, और मैं जानता हूँ कि वागडोर उसी के हाथ में रहती है। और यह ठीक ही है।

तो माला दाँत पीसकर कह रही थी—अब कुछ बोलोगे भी। मेरे बच्चे पाक से लौटकर इस मनहूम आदमी को बठक में बठा देंगे, तो क्या कहेंगे? उन पर क्या असर होगा? उफ, इतना गंदा आदमी। मारा घर महक रहा है। बनाआ न, मैं अपने बच्चा से क्या कहूँगी?

अब जाहिर है कि मैं माला को कुछ भी नहीं बता सकता था। सो, मैं सिर मुकाये खड़ा रहा, और वह मुँह उठाये बहुत देर तक चरमती रही।

बसे यहाँ यह साफ कर दूँ कि वे बच्चे माला अपने साथ नहीं लायी थी। वे मेरे भी उतने ही हैं जितने कि उसके लेकिन ऐसे मौकों पर वह हमेशा मेरे बच्चे कहकर मुझसे उहे यूँ अलग कर लिया करती है, जैसे कोई कीचड़ से लाल निकाल रहा हो। कभी-कभी मुझे इस बात पर बहुत दुःख भी हाता है, लेकिन फिर ठंडे दिल

से सोचने पर महसूस होता है कि शारीरिक सचाई कुछ भी हो, स्थानी तौर पर हमारे सभी बच्च माला के ही हैं। उनके रग-रंग में मेरा हिस्सा बहुत कम है। और यह ठीक ही है, क्योंकि अगर वे मुझ पर जाते तो उन्हें भी मरी तरफ़ सीधा होना पड़ेगा न जाने कितनी दूर लग जाती। मैं खुश हूँ कि उनका भविष्य खूब रोशन है और उस रोशनी में मेरा हाथ बस इतना ही है कि मैं उनका बालूनी, और शायद किसी-किसी बाप हूँ, उनके लिए पस बमाता हूँ, और जिलोजान से उनकी माँ की सेवा में दिन रात जुटा रहता हूँ।

घर ! कुछ देर यूँ ही सिर नीचा किये सड़ रहने के बाद आखिर मैं निहायत आजिजाना आवाज में कहना शुरू किया था—अरे भई, मैं तो उस कमबख्त को ठीक तरह से पहचानता भी नहीं उससे गैस्ती का तो सवाल ही पदा नहीं होता। अब अगर रास्ते में कोई आदमी मिल जाए तो ।

न जान मेरे फिकरे का अन्त क्याकर होता ! शायद होता भी कि नहीं, लेकिन माला न बीच में ही पाव पटककर कह दिया—झूठ, सरासर झूठ !

यह कहकर वह अदर चली गई, और मैं कुछ देर तक और वही सिर नीचा किये खड़ा रहने के बाद वापस उस कमरे में लौट आया, जहाँ बठा वह बीड़ी पी रहा था और मुमकरा रहा था, जैसे सब जानता हो कि मैं किस मरहले से गुजर कर आ रहा हूँ।

अब हुआ दरअसल यह था कि उस दाम माता से कुछ दूर अकेला घूम आने की इजाजत माँगकर मैं यूँही—बिना मतलब घर से बाहर निकल गया था। आम तौर पर वह ऐसी इजाजतें आसानी से नहीं देती और न ही मैं माँगने की हिम्मत कर पाता हूँ। बिना मतलब घूमना उसे बहुत बुरा लगता है। वही भी जाना हो किसी से भी मिलना हो कुछ भी करना या न करना हा, मतलब का साफ़ और सही फंसला वह पहले से ही कर लेती है। ठीक ही करती है। मैं उसकी ममतादारी की दाद दता हूँ। बसे घर से दूर अकेला मैं किसी मतलब से भी नहीं जा पाता। माला की साहबत की कुछ ऐसी आत-सी पड़ गई है कि उसके बग़र सब सूना सूना-सा लगता है। जब वह साथ रहती है तो किसी किसम का कोई ऊँ-जलूट विचार मन में उठ ही नहीं पाता, हर चीज ठीक और बामतलब दिगई देती है। अदर की हालत ऐसी रहती है जमे माला के हाथा सजाया हुआ कोई कमरा हो। जिसमें हर चीज करीन से पड़ी हो बेकामदगी की भाँई गु जायग न हा। और अब वह साथ नहीं होती तो वही होता है जो उस दाम हुआ या फिर उसी किसम का कोई और हादसा क्योंकि उससे पहले बगी बात कभी नहीं हुई थी।

तो उस दाम न जान किस धुन में मैं घर से बहुत दूर निकल गया था। आम तौर पर घर से दूर रहने पर भी मैं घर ही के बार में सोचता रहता हूँ।

इसलिए नहीं कि घर में किसी किम्ब की कोई परेशानी है। गाड़ी न सिर्फ चल रही है, बल्कि खूब चल रही है। बागडोर जब माला जसी औरत के हाथ हो तो चलेगी नहीं तो और करेगी भी क्या? नहीं, घर में कोई परेशानी नहीं—अच्छी तनखाह, अच्छी बीबी, अच्छे बच्चे, अच्छे बा रसूल दोस्त, उनकी बीबियाँ भी मूब हटटी-कटटी और अच्छी अच्छा सरकारी मजान, अच्छा पुगनुमा लॉन, पास-पड़ोस भी अच्छा, महँगाई के बावजूद दोनों बक्त अच्छा खाना, अच्छा बिस्तर, और अच्छी विस्तरों जिनकी। मैं पूछता हूँ, इन सबके अलावा और चाहिए भी क्या एक अच्छे इंसान को? फिर भी अकेला होने पर धरेलू मामला का बार-बार उलट-पलट कर देखने से बसा ही इत्मीनान मिलता है, जसा किसी भी सेहतमद आदमी को बार-बार आईने में अपनी मूरत देखकर मिलता होगा। मेरा मतलब है कि बक्त अच्छी तरह से कट जाता है ऊब नहीं होती। यह भी माला के ही मुप्रभाव का फल है, नहीं तो एक जमाना था कि मैं हरदम ऊब का शिकार रहा करता था।

हो सकता है कि उस शाम दिमाग कुछ देर के लिए उमी गुजरे हुए जमाने की ओर भटक गया हो। कुछ भी हो, मैं घर से बहुत दूर निकल गया था और फिर अचानक वह मेरे सामने आ खड़ा हुआ था।

महसूस हुआ था जस मुझे अकेला देखकर घात में बैठे हुये किसी खतरनाक अजनबी ने ही रास्ता रोक लेना चाहा हो। मैं ठिठककर रुक गया था। उसकी सुती हुई आखा से फिमलकर मेरी निगाह उसकी मुमकराहट पर जा टिकी थी, जहाँ अब मुझे उसके साथ चिताये हुए उस सारे गदआलूद जमान की एक टिमटिमाती हुई सी झलक दिखाई दे रही थी। महसूस हो रहा था कि बरसों तक रूपाश रहने के बाद फिर मुझे पकड़ कर किसी के सामने पेश कर दिया गया हो। मेरा सिर इस पंगी के खयाल से दबकर झुक गया था।

कुछ, या शायद कितनी ही, देर हम सबके उस नगे और आवारा अंधेरे में एक-दूसरे के स्वरू खड़े रहे थे। अगर कोई तीसरा उस समय देखा जाता, तो शायद समझता कि हम किसी लास के सिरहाने खड़े कोई प्राथना कर रहे हैं या एक-दूसरे पर झपट पड़ने से पहले किसी मात्र का जाप।

बसे यह सच है कि उसे पहचानते ही मैं माला को याद करना शुरू कर दिया था कि हर सकट में मैं हमेशा उसी का नाम लेता हूँ। साथ ही वहाँ से दुर दबाकर माग उठान की स्वाहिश भी मन में उठती रही थी। एक उठती हुई-सी तमना यह भी हुई थी कि वापस घर लौटने के बजाय चुपचाप उस कमबस्त के साथ हो लूँ जहाँ वह ले जाना चाहे चला जाऊँ, और माला को खबर तक न हो। इस विचार पर तब भी बहुत चौंका था, और अभी तक हैरान हूँ, क्योंकि आखिर उसी से पीछा छुड़ाने के लिए ही तो मैं माला की गोद में पनाह ली थी। अगर

भात्र स कुछ बगम परम मीने उमने गिनाइ बगावत न की होती ता । मरिग उग भागने का बगावत का नाम दवर म भयो आरको धागा द रटा हूँ, मने गाथा था, और मरा मुह दम क मारे जल उठा था । मरा मुह मभगर इस भाग म जलता रहता है ।

उग हरामना ने जकर मरी गारी परेगानी को भाप लिया हागा । उगम मरी काई कमदोरी टिरी गरी और उगम भाग कर माला की गोम म पनाह सेन की एक बटी बजह यही था । उगका हमी म मुझे गुग पता की हैबतनाब राहताहाहट गुनायी द रही थी, और उस राहताहाहट म उगम साये म गुजार हुए जमान की बगुमार या आपत म टकरा रहा थी । बड़ी मुत्किल से आंग उठाकर उसकी ओर दगा था । उगका हाप मरी तरप बड़ा हुआ था ; म बिचकर दा कम्म पीछे हट गया था, और उसकी हमी ओर ऊँचा हा गई थी । कस हुए दाता स मने उसकी आंगा का गामना रिमा था । अपना हाप उसक गुरदरे हाप म दउ हुए और उगकी सांगा की मदबुदार हरास्त अपन पेहरे पर भेलत हुए महगूस रिया था जस इतनी मुहन आजाद रह लेने के बाद फिर अपने-आपको उसने हवाल कर दिया हो । अजीब बात है, इस अहगाग से जितनी तकलीफ मुझे होनी चाहिए थी, उतनी हुई नहीं थी । चायद हर भगाहा मुजरिम लिल स यही चाहता है कि कोई जमे पकट ले ।

पर पहुँचने तक कोई बात नहीं हुई थी । अपनी अपनी सामोनी म लिपटे हुए हम धीमे धीमे चल रहे थे, जमे कथा पर काई लग उठाये हुए हा ।

जब माला की डाँट गन गुन लेने के बाद, मुँह बनाये मैं बापस बठक म लौटा ता वह बदजात मजे म बठा बीठी पी रहा था । एक क्षण क लिए भ्रम हुआ, जस वह कमरा, उसी का हो । फिर कुछ समलकर, उसत नजर मिलाय बगर मैं कमरे की सारी सिडकियाँ तोल दी, पले को और तेज कर दिया एक मुँहलाई हुई ठोकर स उसने जूतो को साँके क नीचे धकेल दिया रडिया चलाना ही चाहता था कि फटी हुई हमी गुनायी दी, और मैं बेबस हो, उससे दूर हटकर चुपचाप बठ गया ।

जी मे आया कि हाप बाँधकर उसक सामने खडा हो जाऊँ सारी हकीकत गुनाकर कह दूँ—देखो दोस्त, अब मरे हाल पर रहम करा और माला के आन स पहने चुपचाप यहाँ से चने जाआ करना नतीजा बहुत बुरा होगा ।

सबिन मैंने कुछ कहा नहा । कहा मी हाता ती सिवाय एक और जहरीली हमी के उसने मेरी अपील का कोई जबाब न दिया होता । वह बहुत जालिम है हर बात की तह तक पहुँचने का कामल, और भावुकता से उसे सस्त नफरत है ।

उस कमरे का जायजा लेते दख मने दबी निगाह से उसकी ओर देखना शुरू कर दिया । टाँगें समटै वह सोफे पर बठा हुआ एक जानवर-सा दिखायी लिया ।

उमकी हालत बहुत खस्ता दिखायी दी, लेकिन उसकी शक्ल अब भी मुझसे कुछ-कुछ मिलती थी। इस विचार से मुझे कोप भी हुई, और एक अजीब किस्म की खुशी भी महसूस हुई। एक जमाना था जब वही एकमात्र मेरा आश्रय हुआ करता था जब हम दोनों घटा एक साथ घूमा करते थे, जब हमने बार-बार कई नौकरियां से एक साथ इस्तीफा दिये थे, कुछ एक से एक साथ निकाले गए थे, जब हम अपने-आपको उन तमाम लोगों से बेहतर और ऊंचा समझते थे जो पिटी पिटाई लकीरा पर चलते हुए अपनी जिन्दगी एक बदनुमा और रिझायती घरोंदे की तामीर में बरबाद कर देते हैं जिनके दिमाग हमारा उस घरोंदे की चहारदीवारी में कद रहते हैं जिनके दिल सिर्फ अपने वच्चा की किल्कारिया पर झूमते हैं, जिनकी बक्कूफ बीकियां दिन रात उंह तिगनी का नाच नचाती हैं, और जिन्हें अपनी सफद पासी के अलावा और किसी बात का कोई गम नहीं हाता। कुछ देर में उस जमान की याद में डूबा रहा। महसूस हुआ, जैसे वह फिर उसी दुनिया से एक पगाम लाया हो, फिर मुझे उन्ही रोमानी बीराना में भटका देने की कोशिश करना चाहता था जिनसे मागकर मैंने अपने लिए एक फूलों की गज बेवार ली है जिस पर माला करीब हर रात मुझसे मेरी फरमावरदारी का सबत तलब किया करती है और जहाँ मैं बहुत खुशी हूँ।

वह मुस्करा रहा था जैसे उसने मेरे अन्दर झाँक लिया था। उसे इस तरह आसानी से अपने ऊपर काबिज होते देख, मैंने बात के लिए कहा—कितने रोज यहाँ ठहरीगे ?

उसकी हँसी से एक बार फिर हमारे घर की गजी-सेवरी फिजा दहल गई और मुझे खतरा हुआ कि माला उसी दम वहाँ पहुँचकर उसका मुँह नीच गेगी। लेकिन यह खतरा इस बात का गवाह है कि इतने बरसों की दासता के बावजूद मैं अभी तक माला को पहचान नहीं पाया। थोड़ी ही देर में वह एक बहुत खूबसूरत साड़ी पहने, मुसकराती इटलाती हमारे सामने आ खड़ी हुई। हाथ जोड़कर बड़े दिलफरेब अदाज में नमस्कार करती हुई बोली—आप बहुत थके हुए दिखाई देते हैं, मैंने गरम पानी रखवा दिया है आप बात कर लें तो कुछ पीकर ताजा-दम हो जायें, खाना तो हम लोग देर से ही खायेंगे।

मैं बहुत खुश हुआ। अब मामला माला ने अपने हाथ में ल लिया था और मैं या ही परेशान हो रहा था। मन हुआ कि उठकर माला को चूम लूँ। मैंने कनखिया से उन हरामजदे की तरफ देखा। वह बाकई महमा हुआ-सा दिखायी दिया। मैंने सोचा, अब अगर वह खुद-ब-खुद ही न भाग उठा तो मैं समझूँगा कि माँग की सारी समझ-सोच और रूप रंग बेवार है। कितना लुत्फ आये अगर वह कमबस्त भी भाग खड़ा होने के बजाय माला के दाँव में फँस जाये, और फिर मैं उमने सूँझे—

अब बता साले, अब मात समाप्त म आयी ? मन आँसु बंद कर ला और उम माला के इर्द गिर्द नाचते हुए, उम पर पिटा हाते हुए, उमके साथ लेटे हुए देता । एब अजीब राहत का अहसास हुआ । आँसु सौली ता बह गुमलसान म जा चुका था, और माला झुकी सोपे को ठीक कर रही थी । मने उसकी आँसु म आँसु डालकर मुस्कराने की कोशिश की, लेकिन फिर उसकी तनी हुई मूरत स घमरा कर नजरें मुका ला । जाहिर था कि उसने अभी मुझे माफ नहीं किया था ।

नहावर वह बाहर निकला, तो मेरे बपड़े पहने हुए था । इस बीच माला ने बीयर निकाल ली थी और उमका गिलास भरने हुए पूछ रही थी—आप खाने म प्रिय कम लेते हैं या ज्यादा ? मैंने बहुत मुश्किल से हँसी पर काबू किया—उस साले को खाना ही क्या मित्रता होगा मैं माच रहा था, और माला की होशियारी पर खुश हो रहा था ।

कुछ देर हम बठ पीते रहे, माला उससे घुल-मिलकर बातें करती रही, उससे छोट-छोट सवाल पूछती रही—आपका यह शहर क्या लगा ? बीयर ठंडी तो है न ? आप अपना सामान यहाँ छोड़ आये ?—और वह बगलें झाँकता रहा । हमारे बच्चों न आकर अपने 'अकल' को घीट किया, बारी-बारी उसके घुटना पर बठकर अपना नाम बग रा बताया, एक दो गान गायें और फिर 'गुड नाइट' कहकर अपने कमरे म चले गये । माला की मीठी बातों से यो लग रहा था जैसे हमारे अपने ही हल्के का कोई बेंतबल्लुफ दोस्त कुछ दिना के लिए हमारे पास आ ठहरा हो, और उसकी बढी-सी गाड़ी हमारे दरवाजे के सामने खड़ी हो ।

मैं बहुत खुश था और जब माला खाना लगवाने के लिए बाहर गयी तो उस शाम पहली बार मैंने बेघडक उस कमीने की तरफ देखा । वह तीन चार गिलास बीयर के पी चुका था और चेहरे की जर्दी कुछ कम हो चुकी थी, लेकिन मुस्कराहट से माला के बाहर जाते ही फिर जहर और चेलेंज आ गया था और मुझे महसूस हुआ जैसे वह कह रहा हो—बीवी तुम्हारी मुझे पसंद है, लेकिन बेंटे ! उसे खबरदार कर दो मैं इतना पिलपिला नहीं जितना वह समझती है ।

एक क्षण के लिए फिर मेरा जोंग कुछ ढीला पड गया । लगा जैसे बात इतनी आसानी से सुलझने वाली नहीं । याद आया कि बूबगुरुर और शोय औरन उस जमान म भी उस बहुत पसंद थी लेकिन उनका जादू ज्यादा देर तक नहीं चलता था । फिर भी मैंने सोचा, बात अब मेरे हाथ से निकल गई है, और सिवा इन्तजार के मैं और कुछ नहीं कर सकता था ।

खाना उम रोज बहुत उम्दा बना था और खाने के बाद माला खुद उसे उसके कमरे तक छोड़ने गयी थी । लेकिन उस रात मेरे साथ माला ने कोई बात नहीं की । मैंने, कई मजाक किये कहा—नहा धोकर वह काफी अच्छा लग रहा था, क्यों ? बहुत

छेड़ छाड़ की, कई कोणियों की कि सुलहनामा हो जाए, लेकिन उसने मुझे अपन पास पटकने नहीं दिया। नींद उस रात मुझे नहीं आयी, फिर भी अदर से मुझे इत्मीनान था कि किसी-न किसी तरह माला दूसरे रोज उसे भगा सकन में जम्हर कामयाब हो जायगी।

लेकिन मेरा अदाजा गलत निकल। माना कि माला बहुत चालाक है, बहुत समझदार है बहुत मनमोहिनी है, लेकिन उस हरामजादे की ढिंढाई का भी कोई मुकाबला नहीं। तीन दिन तक माला उसकी खातिर-तवाजुह करती रही। मेरे कपड़ा में वह अब विलकुल मुझ जसा हो गया था, और नजर यो आता था जैसे माला के दो पति हो। मैं तो सुबह-सवेरे गाड़ी लेकर दफ्तर को निकल जाता था, पीछे उन दोनों म न जाने क्या बातें होती थी। लेकिन जब कभी उसे मौका मिलता, वह मुझे अदर से जाकर डाँटने लगती—अब वह मुरदार यहा से निकलेगा भी कि नहीं? जब तक यह घर में है, हम किसी का न तो बुला सकते हैं, न किसा के यहा जा सकने हैं। मेरे बच्चे कहते हैं कि इसे बात करने तक की तमीज नहीं। आखिर यह चाहता क्या है?

मैं उसे क्या बताता कि वह क्या चाहता है! कभी कहना—थोड़ा सब्र और करो अब जाने की साब ही रहा होगा। कभी कहता क्या बताऊँ, मैं तो खुद गर्मिदा हूँ। कभी कहता—तुमने खुद ही तो उसे गिर पर चढ़ा लिया है। अगर तुम्हारा बरताव ख़ला होता तो ।

माला न अपना बरताव तो नहीं बदला, लेकिन चौथ रोज अपने बच्चा सहित घर छोड़कर अपन भाइ के यहा चली गई। मैंने बहुतरा रोका, लेकिन वह नहीं मानी। उस रोज वह कमबख्त बहुत हँसा था जोर-जोर से, बार-बार।

आज माला को गय पाँच रोज हो गये है। मैंने दफ्तर जाना छोड़ दिया है। वह फिर अपने असली रंग में आ गया है। मेरे कपड़े उतारकर उसन फिर अपना वह मला-मा कुर्ता-गामजामा पहन लिया है। कहता कुछ नहीं, लेकिन मैं जानता हूँ कि वह क्या चाहता है—यह मौका फिर हाथ नहीं आयेगा। वह चली गई है बेशक यही है कि उसके लौटने से पहले तुम भी यहाँ से भाग चलो। उसकी चिन्ता मत करो वह अपना इन्तजाम खुद कर लेगी।

और आज आखिर मैं उस थोड़ी देर के लिए बेहोश कर देने में कामयाब हो गया हूँ। अब मेरे सामने दो ही रास्त हैं। एक यह कि होश आन से पहले मैं उसे जान से मार डालूँ। और दूसरा यह कि अपना जरूरी सामान बाँधकर तयार हो जाऊँ और ज्या ही उसे होग आये, हम दोनों फिर उसी रास्ते पर चल दें, जिसस भागकर कुछ बरस पहल मैंने माला की गोद में पनाह ली थी। अगर माला इस समय यहाँ होती तो वह कोई तीसरा रास्ता भी निकाल लेती। लेकिन वह नहा है, और मैं नहीं जानता कि मैं क्या करूँ!

आइसबर्ग

मीन गुनवर ही विपय की नजर बाहर खी गई। घुम का वहीं नामोनिगान तक नहीं था। सामने का भगान कोठे से घुम था। उमने टांगमीन पर नजर डाली। गाड़े भाट बन्न रहे थे। तो जन्नर बन्नी है। तमी कोठरा छे नहीं रहा। मोर में जब दगा (गिनामट) को लाने ररेगन गया था तब ता वहीं कुछ पगा नहीं था बल्कि कोहरे से घुमे भागमात क गफेट मीकेपत म गिगारे निगर भाय थे और नवाय मूगुय रोड की बगिया का बय दूर-दूर तक गगाये म भागे शिपतिपा रहा था। फिर घन घण्टो म ही घटाणोय। उमका मन अजीब तरह मे उदाग हो आया। अगर वहीं बारिग घुम हो गई ता ? सारा मत्रा बिरबिरा हा जापगा।

एक तरह म यन पिछनी शारी राय जागता रहा था। जगत (धपाजान बडा मार) और गुवाय (मगा छोटा मार) बालका से भाय थे। गिल्ली-स्टेगन पर ही दोना की भेठ हो गई थी। यकी (बडी वजन) 'अपर इगिदया से और गदा सुफान' म। जब भी शपकी आती, यन उठ बटना। इस डर से कि कही किमी की गाडी न मित कर जाए। मयम पहल जगत और गुवाय आये थे। एक बार तो वह नवत हा गया था। गारी गाडी देग डाली वे लोग नही मिले। निरान होकर उसने सोचा कि पाटव क पाम जाकर नरटा हो जाए और गारे मुसाफिरा को देस जाए। इसी हडबडी में वह दीडता हुआ पाटव की ओर जा रहा था कि जगत ने उते खोर से पुबारा, "बिन्नु!"

नाम गुनवर उम एकाणव विश्वास नहीं हो सका था। जगत की आवाज किती फनी-फटी-सी लग रही थी।

'तुम उपर कहीं जा रह थे ?

'पाटव के पाम। मैंन सोचा मित न कर जाऊँ।' उसने सुबोध पर नजर डाली। वह कुलियां को सामान सहेजवा रहा था। बन्ने सभी मीद की खुमारी मे थे। उसने एक बार उनकी तरफ दगा और मुक्कराया। फिर कोई कुछ नहीं बोला। वह एक रिक्का झलन तय करके बठ गया और आगे-आगे चलने को कह दिया।

बंगले पर आकर सभी डाइग रूम म बठ गये—कुछ इस भाव से कि अब आगे का प्रोग्राम क्या है। नीवर से उमने सभी क बिस्तर लगाने को कह दिया और खुद भी आकर वही बठ गया। जैसे वार्ड किमी से बात न करना चाहता हो। बन्ने फिर

ऊँधने लगे थे। जगत उठकर त्रायस्त्रम पूछता हुआ बाहर निकल गया। थोड़ी देर चुप रहकर जैसे उसने साहस बटोरकर छाटे भाई से खाने के बारे में पूछा।

“खाना तयार है ?” सुबोध ने पूछा।

“अभी तो शायद न हुआ होगा। मैंने सोचा था, तुम लोगो से पूछ लूँगा।”

“पूछना क्या था ?”

‘विचित्र में तो एक नेपाली छोकरा बठी है।’ यह सुबोध की बीबी थी। उसके कहने का ढग कुछ अजीब-सा था। विनय ने उसकी ओर देखा तो वह बाहर दखती हुई मुस्कराने लगी।

“नौकरानी है।” उसने या कहा जैसे किसी अपराध के प्रायश्चित्तस्वरूप ‘कपेस’ कर रहा हो।

। - इस पर कोई कुछ नहीं बोला। सुबोध ने कहा कि उन लोगो (उसका मतलब अपने बीबी बच्चा से था) को भूख लगी है। अतः वह कहीं होटल से पका हुआ खाना लाना बेहतर समझता है। विनय की हिचकिचाहट पर उसने कहा कि “इसमें तबल्लुफ की क्या बात है। बल्कि इसी में जन्दी हो जायेगी।” फिर वह मना करने के बावजूद खाना खाने चला गया था।

जगत अपने कमरे में टाग-पर-टांग चढाये बठा छत ताक रहा था। उसकी बीबी अपने छोटे भाई को सुला रही थी। उनके चेहर से लगता था, जैसे वे अभी किसी बात पर लड चुके हैं। क्या इसीलिए उसने खत डाल-डालकर सभी को बुलाया था ? विनय के मन में फिर बसी ही निराशा ने घर कर लिया। उसे लगा कि सभी अपने आने का अहसान जता रहे हैं और असुविधा महसूस कर रहे हैं। यह विचार मन में आते ही उमक दिल् का अदर-ही-अदर वही बहुत गहरी ठेस सी लगी। क्या सच में अब यह सब-कुछ लौट नहीं सकता ? उसे क्षमा नहीं किया जा सकता ? क्या सच में उसने अपराध किया है ? क्या मात्र उसका अकेला मन ही उसका अपना है ?

“तुम्हारे लिए ता खाना बाहर से मँगवाने की जरूरत नहीं भाई माहव ?” उसने जगत से पूछा।

क्यों ?”

‘हाँ-हाँ, मँगवा लीजिये न ?’ उसकी बीबी की वीच ही में बोल पडी।

“नौकर ने खाना तयार नहीं किया था। सुबोध को भूख लगी थी। वह नौकर को लेकर स्टेशन से खाना लाने चला गया है।”

गुड गॉड ? भूख तो हम भी लगी है। हमारे लिए भी मँगवा लेते ?” जगत ने कहा।

अच्छा, कहकर वह बाहर जाने लगा।

मुनो विन्नु ।’

“हाँ।”

‘यहाँ नजदीक कोई बार’ होगा?’

“सिविल लाइस की तरफ है ?

‘ताँ ऐसा करते हैं कि हम बाहर जाकर खा आते हैं। अब यह खाने लिवाने की झझट कौन करे ? क्या डियर?’ उसने अपनी बीबी की तरफ देखत हुए कहा “तब तक तुम हमारे नहे सहजादे साहब को समालो। ‘जगत मुसकराया तो उसकी बीबी भी मुसकरायी।

विनय के चेहरे पर एक वृत्तज्ञता भरी मुसकान खेल गई। उसने कहा, “लाआ भामी। और हाथ बढ़ाकर बच्चे को ले लिया। बच्चा एक क्षण को कुनमुनाया, फिर उसका मुँह देखने लगा।

“लग करे तो नौकर को धमा देना। कहता हुआ जगत बाहर निकल गया।

इस बीच नौकरानी आकर खाने को पूछ गई थी। उसने कह दिया— साहब लोगो को झूझ लगी थी। इतनी देर इन्तजार करना मुश्किल था। बाहर खाना खान गये हैं हमारे लिए अभी बाद में। फिर उसने बच्चे को नौकरानी के हाथा में धमा दिया और साहब लोग लौट आय तो उनका खयाल रखना यह कह वह स्टेशन खाना हो गया।

डिब्बे से उतरते ही बबी (बड़ी बहन) मुसकरायी थी। दोनो बच्चे सो गये थे। गाडी लेट होने की वजह से साढ़ें ग्यारह बजे आयी थी। सुवेश को जगाया गया तो उसने अल्साये हुए भामी को नमस्ते की थी और फिर उसकी पलकें नीचे झपकने लगी थी। बँगले पर उतरे तो नौकर न बताया, ‘ए शाजब खाना खाकर सो गया है। दूसरा वाला अभी तक नहीं लौटा। उसका छोटा बाबा रो रहा है। मानता ही नहीं है। अभी लाता हूँ।

“यह क्या बक रहा है ? बबी को हँसी आ गई।

“जगत और उसकी बीबी बाहर खाना खान गये हैं, अभी न लौटें होंगे।’

तभी नौकर बच्चे को ले आया—“अब चुप है शाजब। अब सा जायेगा।’ उसने बच्चे को इस तरह देखा जस वह कोई बेजान—सी चीज था।

‘तुम्हारे लिए उधर का कमरा है बेंबी।’ उसने कहा और नौकर से होल्डान उधर ले जाने को कह दिया।

‘नमा मेम शाजब भी खाना बाहर खायेगा शाजब?’

बेंबी को नौकर की इस बात पर हसी आ गई, लेकिन फिर तुरन्त जस उसने मारी स्थिति भाँप ला। वाली, ‘तुमन खा लिया बिन्नू?’

उसने सिर हिला दिया, नहा।”

‘अच्छा, तुम सुवेग-पप्पू को ले जाकर मुला दो। मैं देखती हूँ।’

विश्व में बँट बह बाग-बाग बाट्टा जहाँ जो बँट्टे से रहा था। बीच-बीच में बेबी की बातों के जवाब में 'हन्ट' कर देता। किसी भी बात का निमित्त हाथ पर वह कहता—'अच्छा तो बेबी उनके इस जन्मानादिक चीजन पर उसे एक-एक देखती रह जाऊँ। बात क्या बँट्टन की थी? बँट्टन की बातों में एक निमित्त-नदरे दुख का भाव छुट जाता—'अने' 'अ' नाट के लिए। वह मुँह फरक प्रकृति में बन लगती या नौकरानी को आवाज देता। छाकरी अब जाती तो निमन की ओर देकर आवस्य हो लेती कि बेबी की ओर देखती जाती और मुनकराती जाती।

“अच्छा, बच्चतरों का जोग पाठ रखा है।” बेबी ने हँसते हुए कहा।

नौकर बचत बदतमीत्र है इसे बचत पीदना है।

‘अच्छा ! छात्रा तो नहीं।’

“तुम लग नदे जाय हा न।”

“तुम उसे हँट क्यों नहीं देते ? यह बेचारी तो अच्छी-मली है।

‘दरअसल वह नये में हम पर हाथ दशाता है।’

“या निकट क्यों नहीं देखे ? उसे बदतमीत्र को रजम से क्या फायदा !

“कई बार वह मुका ... नहीं जाती। आकर दरानद में बठी रह जाती है सारी रात।”

“अच्छा !”

इस पर विनय टाका टाका हैनने लगा। बहिन को एक पटकाना लगा। वह फिर उसके चेहरे का पकड़ लेने लगी। क्यों कोई बात तबदीली नहीं जानी थी। उसके छुँघराते बाट लगी तब एक बार ललाट पर मुँहे हुए थे। बेहतर उठना ही चिकना और गौर था। अब उनका एक नौ घन्टा उन पर नहीं लगा था। हाँ उसने मुँहें खर दटी-बटी रजम की थीं। पहले वह 'गैव' जाता था। फरक बस इतना ही आया था। यह पर मौसम नहीं बना था। यों जाता था जैसे उन सारे बीते हुए सालों में वह बँट्टे गँगाद्वार रहा था, उठा रहा हो और फिर एकाएक मानने प्रकट हो गया था कि “जो दशा, पञ्चाना मुन्द।” बेबी का लगा कि यह कोई भी बात करना नया चाहता। या ही बँटा है। तो क्या उसे इस आदत में इतना लगाव हो गया है ? निष्ठगी बार—बगीच बाग भाग पहने—अब वह बनारस आया हुआ था अब और अब के विश्व में क्या कोई फरक आया है ? तब भी कुछ भी पूछन पर वही जवाब आता। क्या साधारण विनय ? — कुछ भी था लीं। ‘कहाँ क्यों विनय ?’

‘बड़ा भी बला। ‘कौन-सी विनय दमी जाय विनय ? — कोई-नी भी देतो।’

—मुदग के पाता इस पर अब हँसत। एक घोल जमात हुआ बहुत ‘मार’ मुझी अच्छे हा। एक मुझगी बनि माजिदा है उनके सो नकन हो नये विनय !

‘मा ता है ही। बहतर व हँसन लगता और फिर लफ-पर बाद उमी लरह

अपना म हो रहता। बहिन को रलाई आन लगती और यह हाठ काटती दूसरी ओर दगन लगती। फिर यातावरण उसी तरह मारी मारी-सा हो जाता।

तो इन सबको बुलाने का अर्थ ? बहिन के मन में जरा कुछ बोध गया। क्या यह भी या ही है ? इम सम्बन्ध में उस भेजी गई चिट्ठी का एक वाक्य रह रहकर उसके दिमाग में घूँजा लगा—'बबी, मैं चाहता हूँ कि मुझे भी लगे कि मैं आदमिया के बीच हूँ। मेरे भी चारा तरफ लोण हैं, जो मुझे पहचानत हैं। मैं भी जिन्नी से सम्बन्धित हूँ। मैं तुम सब के बीच में अपने को महगूण करता चाहता हूँ। बबी मुझे बार-बार लगता है कि जीवन मरी मुट्ठिमा स पानी की तरह फिसल गया है।

तो क्या सच में ऐसा ही है। उसे वह पत्र भी याद आया, जो विनय ने अपनी पत्नी चित्रा को छोड़ते हुए लिखा था। जगत घर का सबसे बड़ा लडका था, लेकिन वह छादी के लिए तयार नहा हा रहा था। विनय से पूछा गया तो उसने हामी भर ली। दहा न उसी के द्वारा तो पुछवाया था। इम हामी भरने का भी जगत और उसके साथिया न कम मजाक नहीं बनाया था। लेकिन उन सारी बातों का तब भी उसके चहरे पर कोई भास असर नहीं दिखता था। बबी को अब लगता है, विनय ने स्वीकृति इसलिए दे दी थी कि उससे स्वीकृति माँगी गई थी। लेकिन यही हम वहाँ मालूम था, कि इस तरह हमें का के लिए हम नरक में धकेल दिया जायगा, उसने लिखा था 'बबी' यह अकारण नहीं है कि इस तरह के जीवन से मैं सदा के लिए विदा ले रहा हूँ। इस सम्बन्ध में थोड़ी भी बहस बेकार है। यही समझ लो कि यदि हमारे भीतर आत्मा-जसी कोई वस्तु है (शरीर की ता बात ही क्या) और यदि हमारे सम्बन्ध में हमारे अनाचार उस आत्मा पर भी खराब लगा सकते हैं तो मेरी उस आत्मा में धाव हो गया है। बबी, मुझे लगता है कि मैं लगातार एक खूँतार और भयावने चेहरे से बनी छुटकारा नहीं पा सकूँगा।

बाहर पोटिको में बच्चों की मिली जुली आवाजें आ रही थी। 'वी विल्ली विकी रस धूँद टाउन उसने उठकर दरवाजा खोल दिया। रंग बिरंगे सूट में बच्चों के सफेद मखन-जैसे चेहरो पर बड़ी-बड़ी काली आँखें तस्वीर की तरह चमक रही थी। उसने देखा बच्चों के दो दल बन गये हैं। सुबोध के तीनों बच्चे एक कतार में खड़े हैं और जगत के तीनों बच्चे दूसरी कतार में। सुवेश और पप्पू उनमें नहीं थे। स्लीपिंग गाउन बसता हुआ वह बाहर निकल आया। वी विल्ली विकी रस धूँद टाउन। अप-स्टेयस एण्ड डाउन-स्टेयस इन हर नाइट गाउन। पीपिंग धूँद विण्डो नाइट ग धूँद लाक। आर आल द चिल्ड्रेन इन देयर बेलइस ? इट्स पास्ट नाइन ओ क्लॉक।

यह सुबोध की छोटी बच्ची गुड़िया थी। 'वी विल्ली विकी' उसने फिर वही 'राम इतरानी चाही तो उसके बड़े भाई साहब ने शट का बालर पकड़ कर उसे

चुप करा दिया। वह हाँफती हुई-सी भाई का मुँह ताकने लगी।

“यस, बिगिन,” भाई साहब ने दूसरी पार्टी को चुनौती दी।

अब जगत के बच्चा की बारी थी। उसके बड़े लड़के पिकू ने एक बार अपनी छोटी बहिन को इगारा किया तो वह रुआँसी हो आई। इस पर पिकू साहब न गुस्से में अपनी मुट्ठियाँ बसी, होठ काटे और शुरू कर दिया—

“ दिस पिग वेण्ट द द मार्केट
दिस पिग स्टेड ऐट होम,
दिस पिग हैड ए बिट आफ मीट
एण्ड दिस पिग हैड नन।
दिम पिग सेड बी बी बी।
बाइ वाट फाइ ड भाई वे होम। ”

“यू आर एब्यूजिंग अस,” सुबोध के लड़के ने कहा।

इस पर अँगूठा दिखलाते हुए पिकू ने फिर वही ‘राइम’ दुहरानी शुरू कर दी—
‘दिस पिग वेण्ट द द मार्केट’ ”

विनय को हँसी आ गई। पिकू उसी तरह सुबोध के बच्चा को इगारे से “दिस पिग दिस पिग” गिनाता जा रहा था। उसने पास जाकर पिकू को गोदी में उठा लिया और अपनी ओर इगारा करत हुए पूछा ‘हाँ-हाँ, बताओ दिस पिग ? ब्यूयर डिड ही गो ?’

एकाएक सभी बच्चे जैसे सकते में आ गये। पिकू गोदी से उतरने के लिए छटपटाने लगा। उसे हँसता हुआ देखकर सभी बच्चे सशक नत्रो में देखते हुए प्रतियागिता से भागन की तयारी करने लगे। उसने गुडिया के गालों पर एक टुनकी जमाई और उसे भी उठाना चाहा, तो वह रोने लगी। डाइ ग रूम के दरवाजे पर उसकी ममी खड़ी-खड़ी इधर ही देख रही थी। देखते ही तीनों बच्चे भागकर माँ के पाम चले गये। पिकू जिद में आकर उसे मोचन लगा, तो उसने गोदी से उतार दिया। उसकी छोटी बहिन भी रोने लगी थी। पिकू गुस्से में आकर उसे घसीटने लगा। उसने नौकर को आवाज दी कि वह बच्ची को उठा ले जाये।

बाहर फिर सनाटा छा गया। ठण्डी हवा का सरसराता दशाव जैसे और अधिक बढ़ गया हो। उसे अजीब-सी ग्लानि महसूस हुई। फिर जैसे सारी देह शनझना उठी। सारे बदन पर रागटे सठे हो गये। सामने किचिन स कुछ सटर-मटर की आवाज आरही थी। बेबी शायद सभी के लिए नास्ता तयार करने में लगी हो। बन्नी-बन्नी पूरे वातावरण में नौकरों की आवाजें गूँजती हुई उठतीं और दूर-दूर लगने लगतीं। वह अपने कमरे में लौट आया। बाहर बोहरा धीरे धीरे छँट रहा था लेकिन आसमान गाढ़े-गाढ़े बादल से जम-जा गया था। हवा का एक तेज सरसराता हुआ झोंका आया तो

सिडकी सटाव से बन्द हो गई। दूर बादलो की गभीर गडगडाहट सुन पड रही थी।

बादलो की बात सोचकर मन फिर उदास हो गया। जगत बोर होगा। सुबोध भी। शायद बेबी भी धूमने फिरने की बात मन में लेकर आयी हो। खुला गिन होता तो कितना अच्छा होता। न भी हाता, य बदली ही होती, अगर वह अकेला होता अगर इत्ते सार लोगो का युलाया न होता। कितना इन्तजार था। किस तरह उमग की एक लहर आयी थी और अब जैसे उस लहर के पीछे आन वाली सारी लहरें बही फिर शान्त हो गई थी। कितनी बल्पनाएँ सँजो रखी थी उसन। उन सबक आने की। कितने प्रोग्राम मन-ही मन बना रख थे। सगम रामबाग, कितना जमुना में वोटिंग प्रोपदी घाट मक फसा। लेकिन क्या यह सब है कि अकेला आदमी हमेशा अतिरिक्त आग मा अतिरिक्त निराशा से काम करता है ?" और जगत ? तब के बाहमियन' और आज के जगत में कोई साम्य है ? अब उसके तीन बच्च का बँट में पड रहे हैं। इसके साथ ही कितनी तस्वीरें एक साथ उमर आती है। जगत की सुबोध की, बेबी की और उनके लर सारे बच्चो की। जगत के बाल कॉलेज के जमाने में ही सफाई होने लगे थे। और सुबोध ? उसके बाल बहुत टूटते। सुबह जब नीकर कमरे में झाडू देता आता तो बाल ही-बाल। पिछले आठ मालो में उसने केवल एक बार ही भेंट हुई थी। जब उसन मिलिट्री कप उतारी थी, तो वह देखता रह गया था। कितना बुजुग लगता था वह गजा हो जाने की वजह से। जिस साल जगत न घर से अलग होकर गादी कर ली थी उसी साल सुबाध की भी शादी कर दी गई थी। उस अवसर पर भी वह पट्टु च नही सका था। बघाई का तार ददा के हाथो में पडा था। बेबी ने लिखा था 'ददा ने तार चायकर फेंक दिया। और फेंक न दत ता क्या करते। एक ही वजह से सभी पराये थोडे हो जाते हैं। एक तुम हो, जिसे कुछ भी समझाया नही जा सकता। ददा कभी-कभी पागल से हो उठत हैं तुम्हारे लिए। एतना परायापन क्या दिखानते हो बिनू ?

आज भी बेबी का खत उस याद है। जवाब उसन नही दिया था। लेकिन बेबी लिखती रही। इन सारे वर्षों में वही एक लगातार लिखती रही। उसके पत्र जस किसी हम उम दुनिया की सङ्गन मरी धीमी आवाजों थी। जो कुछ उसके बाहर घट रहा था, होता चल रहा था उसकी सूचना देते में बबी क पत्र। उन सूचनाओं के बारे में उसे एकाएक पहले विश्वास नही हाता था। अरे यह हो गया। अब यह भी हो गया। कितना मायके बालो में भी झगडकर चली गई। उसन इस्तीफा दे दिया। वह कलकत्ते में नीकरी कर रही है जगत के उडके की सालगिरह है। लेकिन कुछ गिना के बाद वह हर नई सूचना से आश्चर्य हो आता ठीक है, यह भी हो गया। चला मा भी चल बसी। दादी का गठिया से छुटकारा तो मिला। इसी तरह जब बेबी ने जीजाजी के एकमीडेंट वाली बात लिगी तो भी वह खत रखकर गुमल के लिए चला

गया था। बनारस पहुँचने पर भी उसके मुँह से सात्वना का एक शब्द नहीं निकला था। रात को केवल उसने इतना ही कहा था, "बेबी, तुम्हें 'रामकृष्ण-वचनानामत से कुछ सुनाऊँ ?' लेता आया हूँ।" वहन इम रामकृष्ण-वचनानामत के लेते आने पर आश्चर्य से उसका मुँह ताकती रह गई थी।

सभी बिखर गये थे। पूरी उनकी एक दुनिया थी, जो न जान कहा छिटकर खो गई थी। केवल उन सबको बटोरकर रख देते थे बेबी के सत। धीरे-धीरे उसे यह भी महसूस होने लगा कि बेबी के सत न आने पर वह अपने को बेचन और असुरक्षित-भा पाता है। तो क्या उस खोयी हुई दुनिया के प्रति मन में वही इतना गहरा लगाव था। इस बात से उसे हल्की-सी राहत भी महसूस होती। उसके एक कुलीग के बारे में आफिस में यह मशहूर था कि दुनिया में उसका अपना-पराया (उसमें यह शब्द भी जोड़ दिया जाता) कोई नहीं है। उसका वह 'कुलीग' इस बात से जरा भी दुखी न होता। वह अपने को कमयोगी कहता और बच्चा की तरह हँसने लगता। दूसरों का यह भी खयाल था कि वह पागलखान जाने की तयारी में है और वही अपने कमयोग का जादू दिखावायेगा। आफिस के इस मजाक पर वह चुपचाप नीचे उतर आता। पोस्टकार्ड लेता और बड़े-बड़े लिखकर बबी को डाल देता। फिर वह अदाज लगाता कि कितने दिना में उसका जवाब आ जायेगा। जैसे इस भयावन अंधकार में उसके चारों तरफ एक घटाटोप था, जगत का, मुबोध का, बेबी का दहा का। न महसूस करते हुए भी इस घटाटोप के छिन्न भिन्न हो जान और तीखी, वीरान रोगीनी में अपने को चौंधियाते हुए पाने की कल्पना से ही वह सिहर उठता

लेकिन क्या इस आंतरिक वधन को कोई भी समझता है? दूसरे तो दूसरे, खुद बेबी ने एक बार उसे स्वार्थी, निंदयी, आत्मरत आदि पदवी दे डाली थी। लेकिन उसके बावजूद भी क्या यह सम्भव था कि वह जो नहीं था उस तरह अमिनय करना? वह दूसरा पर नासमझी थोपने के बजाय चुप रह जाता। 'कालेज के जमान में भी वह इसी तरह चुप्पा प्रसिद्ध था। मुबोध उससे साल भर छोटा होने हुए भी बड़ा लगता। दोना एक-दूसरे का नाम लेकर पुकारते थे। उसकी छाती, परा और बाहा पर घने काले बाल बी० ए० में ही उग आये थे। दाढ़ी-मूँछें भी आने लगी थी, जिम्के लिए अक्सर वह कच्ची इस्तेमाल करता था। मुबोध डडी पर पड़ा था। डडी की घुँघली-सी याद उसके चेहर में इतनी साफ झलकती कि 'वही बड़ा है यह अहसास और भी घर कर जाता। और मुबोध इस तरह 'एकट' भी करता था। डाईनिंग हॉल की टेबल पर हमेशा आस्तीनें चढाकर खाना खान बठता और बड़े भाई को रोब से घूरकर देखता। हमेशा टिपटाय रहता और उसे जबसब तक के लिए पसा देता। यह सब उसे कभी भी बुरा नहीं लगा था। और छो और क्या जगत का व्यवहार उसे कभी खलता था? बेबी घूमने जाते वक्त, बहुधा जगत के व्यवहार से रास्ते भर चिड़नी

रहती। जब असह्य हो जाता तो आखिर बोल ही पड़ती 'जगत, प्लीज हैव डीनेन्सी। क्या कहेंगे लोग रास्ते में 'च्चा च्चा चा चा' और राक राँक' देखकर।'

जगत इस पर जोर का ठहाका लगाकर हँस पड़ता, "डोण्ट यू नो बबी! आई रियली इन्हेरिट द डिसन्सी आफ योर ग्रेट ग्रांडफादर ड काड श्री राय बहादुर।"

बिनय को जगत के इस जवाब देने और हसने की मुद्रा से बहुत डर लगता। वही ये सब शगड न पड़े। जगत ऐसे मौकों पर खूँसार लगता। वह धीरे से बहिन से कहता, "लेट हिम टाक लाइव दट बेबी, लेट अम एज्वाय।'

'यू यू यू पुअर ओल्ड चप यू बन एन्ज्वाय? एमेजिंग हा हा हा' जगत उसकी ओर घूरकर देखता तो वह सिटपिटाकर कातर आँखा में बहिन को देखने लगता।

बेबी को इस पर गुस्ता आ जाता। वह सुबोध से कहती, "म और बिन्नु जा रहे हैं।"

लेकिन जगत पर इसका कोई भी असर न होता। उन्हें दूसरी ओर जाते देख कर वह कहता, "टा टा भाई डिपर, ओल्ड सिस्टर। यू नो भाई हाट नेवर एक्स' आई नेवर 'फील डाउजी नो तम्बनेस। हा हा'" वह बिनय की ओर उँगली उठाकर कहता "टा टा यू बेजिटेरियन सटन।"

पिछले पाँच दिना से लगातार झड़ी लगी हुई थी। कभी हल्की पुहार कभी रिमझिम और कभी तज धाराधार बर्फानी बारिश। पिछले पाँच दिना में आसमान नहीं दिखा था। पेड़ और मदान और आसपास के सभी बेंगले जैसे ठिठुरकर सुन पड़ गये थे। रह रह कर तूफानी हवा का दौर शुरू हो जाता। ऐसी तेज हवा में बारिश सफेद धुएँ की तरह उड़ती हुई लगती। फिर रात में धनयोर अ धकार में आँसू की घुमड़न और अचानक तड़पती हुई बिजली के चौंधियाते आलाक में बर्षा का स्वर शार्प-शार्प शम्प-शम्प शार्प-शार्प एक लगानार बदलती हुई बौपनी हुई धर धराती हुई रम्य कभी टूट-टूट जाती फिर तेज-तज गिरने लगती।

सभी धुप में। बच्चे ठिठुरते हुए कभी नस कमर से उम कमरे की आर दोस्त हुए नजर आते। नीकर सिक्कड़ा हुआ साहब लोगों की आवाज पर इधर उधर भागा फिर रहा था। तबरीबन सभी कमरों की सीलिंग के कपड़े में पानी के भरे दाग उमर लाये थे। डाँग कम में दो-तीन जगह बरतन रस स्थि गये थे त्रिफस टपकता हुआ पानी फँसे नहीं। बेबी स्नि में तीन-तीन चार चार बार सभी कमरों में धूप बलियाँ जलाती। फिर भी सीलन और टण्ड की अजीब-सी बूँदें जगह बना हुई थी। डाँग कम में एक दहकती हुई अ गीठी हर समय रमी रहती। सुबाब, जगत और ददा माना साने के बाँव बहा बठ-बठ बातें करत रहत। बेबी भी शामिल हो जाती। बहुधा जगत की ही आवाज सुनाई देती। वह ददा की पेंशन से लहर अगना बन

विभाग की नौकरी और तत्कालीन राजनीति तक के बारे में समान रूप से बातें करता। नेताओं को निक्कमा करार देता और जनता को कायर। 'इस देश में कमी कोई कान्ति नहीं हो सकती। धर्म को उखाड़ फेंको, सबको बेकार कर दो, लोगों के मुँह से उनकी रोटियाँ छीन लो, उन्हें कोड़े लगाओ, इज्जत लूट लो चाहे कुछ भी करो, यहाँ के लोग इतने ठण्डे और स्वार्थी हैं कि ईश्वर और भाग्य की दुहाई देकर फिर भी सताप कर लेंगे। यहाँ किसी को किसी से मतलब नहीं है। न यह देश समूह में विश्वास करता है न व्यक्ति में। इसीलिए यहाँ सब कुछ आसान है। दहा जी इस मुल्क में कोई भी आदमी जो थोड़ा चालू हो, अपने को दूसरों से भिन्न समझता हो और दून की हाकने में माहिर हो—नेता बन सकता है। फिर सुबाघ और जगत में बहस का यह दौर घटा चलता। और चलते चलते एकाएक रक जाता। फिर पता नहीं, कसे और क्यों, धीमे धीमे बातें होने लगती। दहा के हुक्के की गुडगुडाहट में कभी-कभी कुछ शब्द तरते हुए सुनायी पड़ते। 'बिन्नु ना आज तक एक पसा भी नहीं' यह दहा होते। 'बेचारा? क्या आप लोग' यह बेबी होती। 'महात्मा विनयकुमार' और फिर हँसी का एक ठहाका। यह जगत होता। बहस के दौरान जब कभी भी वह ड्राइंग रूम में प्रवेश करता, सभी सक्ते में आ जाता। जगत सिगार मुँह में दबाये उठ जाता। सुबोध आराम कुर्सी में ढीला हो रहता। बेबी अँगोठी देखने लगती और दहा तेजी से अपनी गुडगुडी खींचने लगते। सभी बात का कोई सिलसिला खोजते हुए उस ओर से विमुख हो जाते।

इसी तरह साँझ आ जाती। बेबी किचन में रहनी। सुबोध और दहा भाग के पास बड़े घर-परिवार के बारे में बातें करते। बच्चे कमी कमी उसके कमरे की खिड़की से झाँकते और फिर हँसते। वह उठकर बठ जाता और पुकारते हुए उन्हें बुलाने लगता। उसकी चुपकार सुनते ही बच्चे भाग खड़ होते। ऐसे ही में एक दिन सुबोध के लडके ने पूछा था, "ममी क्या बड़े चाचाजी डाकू हैं?"

"क्यों?"

"उनकी कितनी बड़ी-बड़ी मूँछें हैं।"

इस पर उसकी ममी हँसने लगी थी। लेकिन सुबोध ने लडके को एक तमाचा जड़ दिया था। इस घटना के बाद बच्चों ने एक तरह से उसकी खिड़की पर जाना भी छोड़ दिया था।

जगत ओवरकोट के ऊपर बरसाती चगाता। छाता लेता और साँझ होते ही बाहर निकल जाता। फिर वह दस के बाद नशे में धुत लौटता। रिक्शा से उतरकर बहुधा वह कोई हल्की-सी फिल्म की ट्यून् गुनगुनाता या पश्चिमी रिक्शाओं की सड़क पर सीटी बजाता हुआ पोटिको की सीढ़ियाँ चढ़ता। फिर उसकी आवाज सुनायी देती मरी जान, दरवाजा खोलो!" और दरवाजा खुलते ही फिर एक बार वही वाक्य—

मेरी जासन लेकिन विलकुल दूसरे ही लहजे में। उसकी बीबी चीख कर दो कदम पीछे हट जाती और फिर दरवाजा बंद होने की तेज आवाज सुन पड़ती—
खटाक् !

सिवा बबी के इन पिछले पाँच दिना में कोई भी उसके कमरे में नहीं जाया था। सुबह दहा और सुबोध बरामदे में चहलकदमी करत, ता उसे लगता कि उनमें से कोई न कोई जरूर दरवाजा राटलटायेगा। ऐसे में उससे कुछ भी पढ़ा नहीं जाता। कितनाब खाल वह घडवते दिल से कदमों की आहट मापता रहता। बेबी कभी कमर दोपहर में, या नहीं तो रात को दूध पहुँचाने आती तो बंद मिनटों के लिए पलंग की पाटी पर बठ जाती 'कुछ' स तरह जस उस अभी किसी जरूरी काम से उठकर चले जाना हो। वह कुर्सी की ओर इगारा करता तो वह मुस्करा देती—'ठीक हूँ।'

'क्या कर रही थी ?' वह पूछता।

किंचिन मैं थी।

सब लोगों न ठीक से खाना-पी लिया ?'

'हाँ।'

ठीक से बँठो न !'

'पप्पू को सुलाना है ।'

तो यही ले आओ उसे।'

इस पर वह भाई का मुँह ताकती। फिर नौकर को आवाज देती।

पप्पू सा जाता तो वह कहता 'यही लिटा दो, हाथ दुब्ल रहे हीये।

'विस्तर खराब कर देगा।'

'तो क्या हुआ। लाओ। फिर वह जिद करने बच्चे को विस्तर पर लिटा लेता और उसे देमकर भुसकराता रहता। बहिन चुपचाप उसे देखती रहती। फिर एक सघाटा छाया रहता।

बेबी सुबोध कसा है ? वह उसी तरह बच्चे की ओर गमना हुआ पूछता।

क्या तुमसे बात नहीं हुई, वह पूछना चाहती, लेकिन फिर चुप रह जाती।

ठीक है, अगले साल तक मजूर हो जान की उम्मीद करता है।

उसे दम के पापा की याद आती है। वह फिर भुनाये हुए करता 'आती

न ?

बहिन हाठ काटती चुप रहती।

बेबी मुँह भर लगता है कि

बहिन उसका बहर पर आँसों गहा दती।

पापा की तरह कहा उसके साथ भी कोई दुष्टना

बहिन उठकर चली जाती।

और यह छठा दिन था। बाहर बारिश का स्वर सुनायी पड़ रहा था। लम्प पोस्ट पर बूंदों की झालर-सी बून् रही थी। जगत अभी लौटा नहीं था। लिहाफ में पडा हुआ वह बेबी के आन का इन्तजार कर रहा था। दरवाजा खटका तो उसने कह दिया, "आ जाओ।"

"दूध ले लीजिये।" यह सुवाघ की बेबी थी।

वह उठकर बठ गया। आप? आपन क्यो तकलीफ की? बेबी कहा है?"

"पप्पू को सुला रही हैं।"

"अच्छा, वहाँ तिपाई पर रख दीजिये।"

फिर वह लेट गया। एकाएक उसे चित्रा की याद हो आयी। इधर सालो से किसी ने उसका जिक्र तक नहीं चलाया था। सब लोग उसकी जिन्दगी से परिचित हो गये थे। पहले कोई पूछता, 'पत्नी कहाँ है?' तो वह एकदम ठण्डा पड़ जाता। पत्नी कौन चित्रा? वह चुपचाप टाल जाता। घात बदल देता। लेकिन इस तरह बहुधा मर्गिन की तरह उसका दिमाग काम करने लगता। इधर अक्सर उसकी याद आ जाती। इस याद से उसके अन्दर एक अजीब-सी गर्मी का संचार होने लगता। उसके अ-ग-अ-ग फड़कन लगते आर देह बरबस कुछ मागने लगती। उसे लगता कि देह की यह माँग पूरी हो जाये तो उसके तुरत बाद ही उसे चित्रा की इस याद से भी ग्लानि और नफरत हो जायेगी। लेकिन फिर भी उसकी याद की यह गर-माहट उसके मन में एक तूफान की तरह उठकर उसे बेचन कर लेती। कहाँ हागी चित्रा? उसके दिमाग को एक झटका-सा लगा। क्या इनमें से किसी को भी नहीं माझूम? क्या बेबी को भी नहीं माझूम? क्या वह पूछे? उसे क्या हक है? क्या इन नौ-दस वर्षों में उसकी खबर ली थी? अ-दाजा-मा रहा कि वह पटने या कलकत्ते में कहीं है। क्या वह इतना भी जानन से कतराता नहीं था? फिर? उसने स्मृति में चित्रा की एक छाया लाने की कोशिश की तो उसके दिमाग में सड़क पर लचककर चलती हुई एक काल्पनिक स्त्री की तस्वीर-सी आयी। वह स्त्री कोई भी हो सकती थी। चित्रा का चेहरा उसकी याददास्त में इतना घुँघला पड़ गया था। उस चेहरों की कल्पना भी अमम्भव-सी लगी। लेकिन उसके अ-गो की सुदौल रेखाओं की परछाई का हू-ब-हू आभास तुरत हो जाता। क्या तो क्या उस आकृति का आभास भी मुवोच की बीबी से मिला था

उसने उठकर अलमारी से 'रामकृष्ण-वचनानामृत' निकाल लिया और उलटन पुलटन लगा। शायद बेबी आये। उमन दरवाजा खोल दिया। बारिश कुछ थम-सी चली थी और तीखी, बदन चीरती हुई हवा में ताड़ के पत्तें लडखटा रहे थे।

"बहिये योगिराज, कौन-सी साधना चल रही है?" जगन न कमरे में एकाएक प्रवेश किया।

उसने इस तरह अचानक घने आन पर वह धींदा-सा अक्वचा गया। फिर बात उसकी समझ में आ गई। वह जगत को चुपचाप देखता रहा।

जगत ने बरसाती उतारकर कोने में डाल दी। छोटा फस पर टिटा दिया। फिर वह बठकर बूटा के तस्म खोलन लगा। "मैंने देखा, अभी आप जगे हैं। सोचा, दगन करता चलो। उसने मुसकराते हुए कहा।

" "

किस पुस्तक का पाठ चल रहा है ?' उसने ओवरकोट की जेब से 'ब्लू नाइट' की निप निकालकर मेज पर रख दी। 'आचमनी तो आपके पास होगी ही उसकी नजरें इधर-उधर गिलास ढूँढ रही थी। हाँवा के कोना में सफेद शाय इक्टठी हो गई थी। धुल्लधुले गाल लटक आये थे। चु धी-चु धी आँसू रोशनी में डब डबा रही थी और गरदन ढीली हो रही थी।

इसमें क्या है ?' उसने उठकर तिपाई से गिलास उठा लिया 'साडा ? क्या करोगे ?' उसने लवडे-लवडे दूध दगवाजे के बाहर फेंक लिया। फिर इतमीनात से कुर्सी पर बठकर गिलास में शराब डालने लगा।

अजीब-सी पसोपास में पड गया वह। क्या करे ? गायद वहिन आ जाय या वह जगत में चले जान को वह या खुद बाहर निकल जाय ?

कहिसे, कसी चल रही है ?' जगत ने पूछा। वह घंटा भरता और फिर होठों पर जीभ फिराने लगता।

ठीक हूँ।'

यह ठीक-बीक क्या होता है जी ?'

इस पर वह कोई जवाब न देकर मुनकरामा।

'चलभी।' जगत ने गिलास की ओर आगारा किया।

मैं नहीं लेता। वह समझ रहा था कि ज्यादा कुछ भी कठना फिजूल है।

'बाहर क्या दख रह हो ? बाई आन वाली है क्या ?' उसने बाहर झाँका

'ओह उधर से' उसने नीकरा के कवाटर की तरफ आगारा किया- वह छोकरी काबिले-सारीफ है।'

भाई साहब !' उसके चेहर पर हल्का-सा आवेग उभरा।

भाई साहब भाई साहब क्या ? क्या मैं झूठ बोल रहा हूँ ? बीवी भी

नहीं गराब भी नहीं फिर भाई साहब क्या ? और नहा क्या हूँ यूँ काहकिट बिद पारमल्फ ? बोलो ? नहीं तो ? मैं झूठ नहा बोलता। सब सच कहता हूँ। नहीं कहता ? बाली ? मैं झूठा ?' उसने घूरकर देखा 'बोलो ?'

" "

'तुम झूठे हो' उसने मेज पर जोर से मुक्का मारा। 'तुमने अपने दादा

जान से क्या सीखा ? उनके कितन नाजायज बच्चे हुए जवानी में ? तुम्हें पता है ? वह उठकर खड़ा हो गया, "आज आराम से पेंशन उड़ा रहें हैं और हुक्का गुड़गुड़ा रहें हैं। और साल, हमें उपदेश देते हैं।" वह बाहर की ओर देखते हुए फिर गिलास भरने लगा।

"आई लव यू 'रीयली क्या तुम्हें यकीन नहीं आता ?" वह अपना चेहरा एकदम पास ले आया, "बट यू हैव इनहेरिटेड नॉथिंग फ्रॉम योर फॉर फादर । मैंने कम-से-कम पांच, 'उसने पाँचा उँगलियाँ खोलकर दिखायी, नहीं पांच दजन पहाड़ी छोकरीयों को फारेस्ट डिपाटमेंट में यही तो आराम है । बट पिटी फार यू , यू हैव इनहेरिटेड नॉथिंग तुम क्या तुम दोगले नहीं हो ?" वह फिर उठकर खड़ा हो गया "हो हा हो हजार बार हो यू आर ए बास्टड यू हैव इनहेरिटेड नॉथिंग आई से ।" उसने शराब की बातल जोर से मेज पर दे मारी। बोतल टूट गई और मेज पर बहती हुई शराब फर्श पर पल गई।

शोर सुनकर बेबी आ गई और यह सब देखकर रग रह गई। जगत उसी तरह चिल्लाये जा रहा था, "तुम इस दुनिया में रहने के काबिल नहीं हो। चित्रा ने तुम्हें गाली क्यों नहीं मार दी दोगले बास्टड साले रामकृष्णवचनामृत का पाठ कर रहे हैं" बेबी उस पकड़कर कमरे के बाहर ले गई। आवाज से उसकी बीबी बाहर निकल आई थी।

"इह सँभालो भाभी !" बेबी ने कहा।

प्लेटफॉर्म के बाहर तेज वर्षा और तूफानी हवा का दौर फिर शुरू हो गया था। टिन की शोड पर बूंदों की आवाज इतनी तेज होती कि कुछ भी सुनायी नहीं पड़ता। इक्के-दुक्के मुसाफिर कपाटमेंट में बड़े शीशे के पीछे से मूर्तियों की तरह लगते। सारी गाड़ी एकदम मुर्दा-सी लगती। बाहर दूसरे प्लेटफॉर्म के पार टनेल में मालगाड़ी के दो-तीन डिब्बे अनवरत भीग रहे थे और ओवर ब्रिज के लौहकाल पर बौछार का तेज-तेज स्वर सुनायी पड़ रहा था। काले काले लबादे पहने दो एक टिकट चेकर और गाड़ गाड़ी खुलने का इन्तजार कर रहे थे।

उस रात वाली घटना के दूसरे ही दिन सुबह जगत चला गया था। बेबी और सुबोध उसे छोड़ने गये थे। जाने के पहले उससे कोई बात नहीं हो पाई। विनय के मन में एक धार आया कि वह चलकर वह दे 'माई साहब, रात नशे में कही हुई बातों को मन में न लाइयेगा।' लेकिन यह तो जगत को कहना चाहिए था। क्या हुआ वह उम्र में बड़ा है तो। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। जाते वक्त उसके बच्चे सगाव आँखा से बँगले की ओर ताक रहे थे। वह कमरे में जड़ बना बठा रहा। फिर उसके दूसरे दिन सुबोध न भी जाने का प्रोग्राम चुपके-चुपके बना लिया। सामान पक करने के बाद उसने बेबी से कहलवाया था। न कहने पर भी वह छोटे माई को

छोड़ने स्टेपान चला गया था। स्टेपान पर मुबोध ने उससे हाथ म बिना कुछ बहे एक लिफाफा पकड़ा लिया था। उगने बीबी-बच्चा बिलकुल दूगरे गिरे पर बठ हुए म और दूगरी ओर स प्लेटफॉर्म को देग रहे थे। मुबोध रिठकी म पास बठा हुआ चुपचाप प्लेटफॉर्म की भीड़ तार रहा था। यिनय कभी छोटे भाई को देगता और कभी उससे दिये हुए लिफाफे को। गाड़ी चल पडी तो मुबोध 7 उस एक भावहीन नमस्ते की थी। उस ओर से उसनी बीबी के जुड़े हुए हाथ गिस रह थे। फिर उससे बड़े लडक की आवाज मुन पडी पाचाजी टा टा 'टा टा टा टा !' फिर बच्चा जसे अपने कतख्य म मुगि पापर फौरन दूगरी धार स छुटते हुए प्लेटफॉर्म को दखने लगा था। लौटते पा फिर भी यह राहन महगूस कर रहा था। लिफाफे म जरर मुबोध का कोई सलाह मरा गत हागा। क्या लिता हागा उसने। क्या जगत म शगड क बारे म। या सभी लोगा द्वारा लिये गये किसी निणय की सूचा होगी ? अथवा चित्रा के बारे म ?

रिफने स उतरकर मह सीधे बबी के कमरे म गया था। लिफाफा पकडान हुए उसन कहा मुबोध ने दिया है। तुम खोलकर देखो, मैं अभी आया।'

क्या है ? लौटकर उसने पूछा।

'बदतमीज कही का। बहिन के मुँह स निकला और उसने लिफाफा पकडा दिया।

उसन निकालकर दखा। अन्तर १२५ रुपये का एक ब्रेमरर चक था, उसके नाम।

'तुमन उससे मुँह पर क्या नहीं दे मारा ?

मैंन समझा था कोई खत होगा।'

और आज जब बहिन न भी जाने की इच्छा ब्यक्त की तो वह सन्न रह गया। उसका सयाल था, बहिन एकाध महीन रहेगी। लकिन उसने कुछ नहीं कहा। सामान बँध गया ता उसन कहा क्या आज ही जाना जरूरी है बेबी कितनी खराब बात है ! बाहर साय-साय हवा चल रही थी।

'सुवेश की पढाई का हज हो रहा है। आज एक हफते से ऊपर हो गया उसकी ग रहाजिरी की।

इस पर वह कुछ नहीं बोला था।

और घर पर भी तो कोई नहीं है। नौकरो के भरोसे कब तक छोड रखू ? बहिन ने जस फिर सफाई की।

बहिन म हाथ बिडकी स बाहर लटके हुए थे। उसके भी हाथो पर उसी तरह मोटी-मोटी नसें निकल आईं था—उसन लक्ष्य किया। उसके चेहरे के अ दर एक गहरी उदासी थी जा सहसा खाली वक्त म धुलकर सामन आ जाती था। अथवा वह हमशा अपने को मुलाये रखती।

“इतनी बारिश म कमे लौटोगे तुम ?” उसने कहा ।

‘ चला जाऊंगा । दो बज तक घर पहुँच जाऊंगा ।’ उसने घड़ी देखी—एक-पतीस ।

गाड़ी खुलन म दस मिनट बाकी थे । बेबी पप्पू का सुलान लगी तो वह प्लेट-फॉम पर टहलता हुआ थोड़ी दूर निकल गया । हवा से बारिश की बौछार अदर तक चली आती । दीवारों और खम्भों पर लगे हुए पोस्टरो के चेहरे और इमारतें भी जैसे ठिठुर रही थी । एक पोस्टर या ठिठुर रहा था—“नियोजित परिवार ? सुन का आधार ।” फिर विजिट इडिया’ के नाम पर साची का स्तूप, खजुराहो की यक्षिणिया, शिमले की बर्फीली चोटियाँ, पुरी का समुद्र-तट और केरल के खजूरा के झुरमुट ठिठुर रहे थे । सदर फाटक के ऊपर एक बहुत बड़ा ज्योतिपी और हस्तरेखाविद् इन शब्दों को मुटिठया म जकड़ हुए बाप रहा था “श्री सिंह । भारतवप के महान हस्तरेखा के जानकार । अपने भूत वतमान और भविष्य का कच्चा चिट्ठा खुलवाइये ।”

‘बिन्नु !’ वहिन ने जार से आवाज लगायी ।

गाड़ लगातार हरी रोगनी पीछे की ओर हिला रहा था ।

वह खिडकी के पास आकर खड़ा हो गया ।

तुमसे एक बात कहनी थी । वहिन ने अगल-बगल रहस्यात्मक ढग से देखा । वह सिफ उपचाप वहिन के चेहरे को देखता रहा ।

‘चित्रा अब,’ वह फफक पड़ी ।

गाड़ी छूटन वाली थी । वहिन ने जल्दी से आसू पाछ लिये । वह वम ही खड़ा था ।

‘कहते तो यही हैं कि आत्महत्या की थी लेकिन ’

ऊपर से नीचे तक उसका सारा बदन सुन्न पड़ गया । गाड़ी हल्के-हल्के सरक रही थी । वहिन ने खिडकी पर से उसका हाथ परे ठेल दिया । वह उसे देखती हुई रोती जा रही थी और वह अपनी जगह पर खड़ा उसे देख रहा था । फिर जैसे वह हीन म आया कि वहिन का विदा देनी चाहिए । उसके हाथ ऊपर उठे ता वहिन के चेहरे पर एक हैसी की रेखा झिलमिला आई, फिर उसने हाथ उठा दिये । क्षण भर म ही ट्रेन बारिश की सफ़द क्षाग म गुम हो गई ।

तूफानी हवा सड़क के पड़ा को मरोड़ रही थी । बारिश म कही कुछ भी साफ नजर नहीं आ रहा था । चेहरे पर तेज बौछार छोटी-छोटी ककड़ियों की तरह चुमती हुई किसी भी तरह बचाव करना मुश्किल था । सामने तागा-स्टड के शोड मे चार पाँच पिल्ले एक-दूसरे मे गुँथे हुए मीग रहे थे और किकिया रहे थे । कही कोई सवारी नहीं दीग रही थी । सड़क पर सिंधियों के होटल बन्द हो गये थे । बरसाती के बावजूद भी गले स पानी अदर की ओर रिस रहा था जैसे कटार की तेज धार धीरे धीरे अदर सरग रही हो । सड़क पर पानी की धार बह रही थी और नालिया मे गल-गल करता

हुआ वर्षा जल सारी आवाजा को समेटे ले रहा था।

आँखा के सामने वही सुडौल-सी परछाई उमर आद और फिर एक क्लिब रिलाहट गूँजी, जिमके स्वर के अनुसृत स्वर बटुचा उस जड कर देता।

पति-पत्नी को एक दूसरे की सारी सच्चाइयाँ जान लेनी चाहिए। चित्रा ने पहली ही रात को कहा था।

"अच्छा, बड़ा समझदार हो तुम।"

'मैं सच कह रही हूँ।' उसने अपनी बात जोर देकर दुहरायी थी।

लेकिन उसने पास ऐसी फिज़ूल की बातों का लिए धय नहीं था। बाँहों में भर कर उसने उसे पास खींच लिया था। बोला, 'माई, मेरी सच्चाई यही है कि यूनिवर्सिटी की परीक्षा पास की। फिर नौकरी कर ली और अब तुम्हारे पास सेटा हूँ।'

'हुँट, जाइये।' चित्रा ने कहा था, 'मैं यह नहीं मानती। हर आदमी और हर औरत के जीवन में कोई-न-कोई आता ही है।'

"जल्द जैसे कि हम-तुम एक दूसरे के जीवन में आये हैं।"

"मेरा मतलब है—विवाहित जीवन के पहले।"

'कोई जरूरी नहीं है।'

"क्या? क्या सम्भव नहीं है?"

'हाण।'

'नहा,' चित्रा ने उसका चेहरा दोनों हाथों से ढँक लिया— "पहले बनाविये, तब।"

'मैंने वह लिया न, मेरे साथ ऐसा कुछ नटा हुआ।' वह चिड़-ना गया था।

'लेकिन मेरे साथ' वह क्षण भर को रुकी फिर मुसकरायी— 'मेरे साथ तो हुआ है।'

उस पर उसने घूरकर पत्नी को देखा जस वह मजाक उम पर सारी पट रहा हो।

हाँ सच। 'उसने मौन प्रश्न को शाहक हुए चित्रा ने जैसे जवाब दिया। थोटी दर तक वह धुप पडा रहा। फिर उठकर बठ गया। फिर प्रश्नों की एक झड़ी-नी लग गई— 'तो क्या तुम? तो क्या तुम्हारे साथ? तो क्या तुमने?' और उमर हर प्रश्न पर चित्रा स्वीकारात्मक फिर हिलाती जा रही थी।

अब? अन्त में चित्रा ने पूछा था।

वह उठकर बाहर चला गया था। वह रात ऐसी नहीं थी। उस रात शूब चाँदनी सिला थी।

उमने बिल्लाकर बहिन में पूछना चाहा था "आत्महत्या 'कब? कहां? कते?' सक्ति सभी गारहा उस भयावनी, अ भेरी रात में हुए हो गई थी।

वर्षों में कई-कई स्वर सुनाई पट रहे थे। कभी एक-दूसरे में धुंभे हुए, फिर

कमी एकदम अलग साफ-भाफ । "बी विल्ली वीकी रस थू द टाउन । अप स्टेयस ए ड डाउन स्टेयस इन द नाइट गाउन ।" और फिर जैसे बारिश की लय बार-बार उठनी और गिरती । फिर एक विराम । फिर दिस पिग सेड, बी बी बी, आई वाट फाइ ड माई वे होम ।" फिर "तुम दोगले हो । यू हैव इनहेरिटेड नथिंग उसने तुम्हें गोली क्या नहीं मार दी । फिर एक तेज चीखती हुई आवाज—'विन्नु'—माँ की, पापा की, सुबोध जगत, दहा या बहिन की । कितनी बेमानी ! और फिर तेज वर्षा के साथ सनसनाती चौछार-भरी हवा

गुलकी बन्नो

'एँ भर बलमुँहें !' अक्स्मात् घेघा बुआ ने बूडा फकन के लिए दरवाजा खाला और चातर पर बँठ मिरवा को गाते हुए दरावर कहा, 'तोर पट स फानागिराफ उलिमान बा का, जौन भिनमार गवा कि तान तोड ह्याग ? राम जान, रात क कसन एकरा दीदा लागल है ।' मार डर के कि कही घघा बुआ नाग बूडा उमी के सिर पर न फेंक दें, मिरवा थोड़ा खिसक गया और जमाही घेघा बुआ अदर गई कि फिर चौतरे की सीढी पर बठ पर झुलाते हुए मिरवा ने उलटा-मुलटा गाना शुरू किया 'तुम बछ घाद बलते अम, छनम तेली फछम ।' मिरवा की आवाज सुनकर जाने कहीं स शबरी कुतिया भी कान-पू छ झटकारते आ गई और नीचे सड़क पर बठकर मिरवा का गाना विलबुल उसी अवाज में सुनने लगी जस हिज मास्टस वायस के रिवाड़े पर तस्वीर बनी होती है ।

अभी सारी गली में सन्नाटा था । सबसे पहले मिरवा (असली नाम मिहिरलाल) जागता था और जाख मलते मलते घघा बुआ के चौतरे पर आ बठता था । उसके बाद शबरी कुतिया फिर मिरवा की छोटी बहन मटकी आर उमक बाद एक एक कर गली के तमाम बच्चे—बाबेवाली का लडका मवा, डाइवर साहब की लडकी निमल, मनीजर साहब के मुता बाबू—ममी आ जटत थे । जब स गुलकी ने घघा बुआ के चौतर पर तरवारिया की दुकान खखी थी तब स यह जमावडा बहाँ होने लगा था । उमक पहल बच्चे हकीमजी के चौतरे पर खलत थे । धूप निकलत निकलत गुलकी सट्टी से तरवारियाँ खरीदकर अपनी कुवडी पीठ पर लादे डडा टेकती भाती और अपनी दुकान फला देती । मूली, नीबू, कद्दू, लोकी घियाबण्डा कभी-कभी सस्ते फल । मिरवा और मटकी जानकी उस्ताद के बच्चे थे जो एक मयकर रोग में गल-गलकर मरे थे और दोनों बच्चे भी विकलांग विक्षिप्त आर रोगग्रस्त पदा हुए थे । सिवा शबरी कुतिया के और कोई उनके पास नहीं बठता था और सिवा गुलकी के कोई उहे अपनी दहरी या द्दान पर चढ़ने नहीं देता था ।

आज भी गुलकी को आत देखकर सबसे पहले मिरवा गाना छोड़कर बोला, छलाम गुलका । और मटकी अपन बडी हुई तिल्लीवाले पेट पर से खिसकता हुआ—'घिया सनालत हुए बाली एक ठा मूली द दव । ए गुलकी ।' गुलकी पता नहीं

किस बात से खीझी हुई थी कि उमन मटकी को पिडक दिया और अपनी दूकान लगाने लगी। शबरी भी पागु गई कि गुल्की न डडा उठाया। दूकान लगाकर गुल्की अपनी कुबडी पीठ दुहराकर बठ गई और जाने किसे बुडबुडाकर गालियाँ देने लगी। मटकी एक क्षण चुपचाप खड़ी रही फिर उसने रट लगाना शुरू किया— 'एक मूरी ! ए गुल्की ! एक ' गुल्की ने फिर झिडका ता चुप हो गई और जलग हटकर लोलुप नत्रो से सफ़द घुली हुई मूलिया को देखने लगी। इस वार वह बोली नहीं। चुपचाप उन मूलिया की ओर हाथ बढ़ाया ही था कि गुल्की चीखी ' हाथ हटाओ ! शूना मत। कादिन वही की ! वही खान-पीने को चीज देखी कि जोक की तरह चिपक गई चल उधर !' मटकी पहले तो पीछ हटी पर फिर उसकी तप्ला ऐसी अदम्य हा गई कि उसने हाथ बढ़ाकर एक मूली खीची। गुल्की का मुँह तमतमा उठा और उसने बास की खपच्ची उठाकर उसके हाथ पर चट से मारी। मूली नीचे जा गिरी और हाथ ! हाथ ! हाथ ! कर दाना हाथ झटकते हुए मटकी पाँव पटक-पटककर रोने लगी। 'जावो अपन घर रोओ ! हमारी दूकान पर मरने को गली भर के बच्चे हैं !' गुल्की चीखी— ' दूकान लके हम बिपता मोल ल लिया। छन मर पूजा भजन म भी कचरघाँव मची रहती है ! अदर से घेघा बुआ न स्वर म मिलया। ब्यासा हगामा मघ गथा कि इतने म शबरी भी खडी हा गई और लगी उदात्त स्वर म भूँकने लेपट राइट ! लपट राइट ! ' चौराह पर तीन चार बच्चा का जुलूस चला आ रहा था। आगे-आगे दर्जा व म पढने वाले मुन्ना बाबू नीम की सटी का झण्डे की तरह थामे जुलूस का नेतत्व कर रहे थे, पीछे थे मेवा और निमल। जुलूस आकर दूकान के सामने रुक गया। गुल्की सतक हो गई। दुश्मन की ताकत बन गई थी।

मटकी मिमवते सिसकते बोली हमके गुल्की मारिस है। हाथ ! हाथ ! हमने नरिया मे डबेल दिहिस। अरे बाप र !' निमल, मेवा मुन्ना मर पास आकर उसकी चार देखने लगे। फिर मुन्ना न घकेलकर सबको पीछे हटा लिया और सटी लेकर तन कर खडे हो गए, 'किसन मारा है इमे !'

हम मारा है ! कुबडी गुल्की ने बडे कष्ट से खडे होकर कहा का करोगे ? हम मारीने ? मारते क्यों नहीं ? मुन्ना बाबू न अकडकर कहा। गुल्की इसका जवाब दनी कि बच्चे पास धिर आए। मटकी ने जीम निकालकर मुँह बिराया मेवा न पीछे जाकर कहा, ' ए कुबडी ए कुबडी अपना बूडड लिखाआ ! और एक मुट्ठी धूल उसकी पीठ पर छोडकर भागा। गुल्की का मुँह तमतमा आया और रुँधे गले स बराहते हुए उसने पता नहीं, क्या कहा। किन्तु उसके चेहर पर भय की छाया बहुत गहरी हो गई थी। बच्चे सब एक एक मुट्ठी धूल लेकर शार मचाते हुए दौडे कि अबस्मात् घेघा बुआ का स्वर मुनायी पडा, ' ए मुन्ना बाबू जात ही कि अबहिन बहिनजी का बुलवाय के दुइ चार वनठी दिलबाई !' ' जाते ता है ! मुन्ना न अकडते हुए कहा ए मिरवा,

बिगुल बजाआ।" मिरया ने दोना हाथ मुँह पर रखकर कहा—धुतु धुतु पू। जुलूस चल पडा और कप्तान ने नारा लगाया—

अपन देस म अपना राज ।

गुलकी की दुकान वाईकाट ।

नारा लगाता हुआ जुलूस गली म मुड गया। बुबडी ने आँसू पाछे तरकारी पर से घूल झाडी और साग पर पानी के छोट देन लगी।

गुलकी की उम्र ज्यादा नहीं थी यही हृद स-हृद पच्चीस छब्बीस। पर चेहरे पर भुरियाँ आन लगी थी और बमर के पास वह इम तरह दोहरी हा गई थी जस अस्सी बप की बुढिया हो। वच्चो ने जब पहली बार उसे मुहल्ले म देखा तो उहे ताज्जुब भी हुआ और थोडा भय भी। वहाँ से आयी? कसे आ गई? पहले वहाँ थी? इसका उहे कुछ अनुमान नहीं था। निमल ने जरूर अपनी माँ का उसके पिता डाइबर से रात को कहते हुए सुना, यह मुसीबत और खडी हो गई। मरद ने निवाल दिया तो हम थोडे ही यह ढोल गले बाँधेंगे। बाप अलग हम लोगो का रुपया खा गया। सुना चल बसा तो वही मकान हम लोग न दखल कर लें तो मरद को छोडकर चली आई। खबरदार, जो चामी दी तुमने।"

'क्या छोटेपन की बात करती हो। रुपया उसके बाप ने ले लिया तो क्या हम उसका मकान मार लेंगे? चामी हमन दे दी है। दस-पाँच दिन का नाज-पानी भेज दो उसके यहाँ।

'हाँ-हाँ सारा घर उठा के भेज देव। सुन रही हो घघा बुआ ?

'तो का भवा बहू, अरे निमल के बाबू से तो एकरे बाप की दाँत काटी रही। घघा बुआ की आवाज आयी— बेचारी बाप की अकेली सन्तान रही। ऐही के बियाह म मटियामेट हुइ गया। पर एसे कसाई के हाथ मे दिहिस कि पाँच बरस माँ बूबड निकर आवा।'

"साला यहाँ जावे ता हटर से खबर लू मैं। डाइबर साहब बोले—'पाँच बरस बाद बाल-बच्चा हुआ। अब मरा हुआ बच्चा पदा हुआ तो उसमे इसका क्या कसूर। साले ने सीढी से धकेल दिया। जिंदागी मर के लिए हडडी खराब हा गई न। अब कसे गुजारा हो इसका ?'

'बेटवा, एको दुकान खुलवाय देव। हमरा चौतरा खाली पडा है। यही रुपया दुइ रुपया किरावा द देवा कर दिन भर अपना सौदा लगाय ल। हम का मना करित है। एत्ता बडा चौतरा मुहल्लेवालन के काम न आई ती का हम छाती पर ध ल जाव। पर हाँ, मुला रुपया द देवा कर।'

दूसरे दिन यह सनसनीखज खबर बच्चो म फल गई। वसे तो हकीमजी का चबूतरा बडा था, पर वह बच्चा था, उस पर छाजन नहीं थी। बुआ का चौतरा लम्बा

था, उस पर पत्थर जड़े थे। लकड़ी के लम्बे थे। उस पर टीन छापी थी। कई खेलो की सुविधा थी। लम्बो के पीछे किलकिल-काँटी की लकीरें खींची जा सकती थी। एक टाग से उचक-उचककर बच्चे चिविडडी खेल सकते थे। पत्थर पर लकड़ी का पीड़ा रखकर नीचे से मुड़ा हुआ तार घुमाकर रेलगाडी चला सकते थे। जब गुलकी ने अपनी दूकान के लिए बचतरे के खम्भो में बाँस बांधे तो बच्चा को लगा कि उनके साम्राज्य में किसी अनात शत्रु ने आकर किलेबंदी कर ली है। वे सहमे हुए दूर से कुबडी गुलकी को देखा करते थे। निमल ही उसकी एकमात्र सवादादाता थी और निमल का एकमात्र विश्वस्त मूत्र थी उसकी मा। उससे जो सुना था उसके जाघार पर निमल ने सबको बताया था कि वह चोर है। इसका बाप सौ रुपया चुराकर भाग गया। यह भी उसने घर का सारा रुपया चुराने आयी है। “रुपया चुरायेगी तो यह भी मर जायेगी।” मुन्ना ने कहा, “भगवान सबको दण्ड देता है।” निमल बोली, “समुराल में भी रुपया चुराये होगी।” मेवा बाला, ‘जरे कूबड थोड़े है, ओही रुपया धाँधे है पीठ पर। मनसेधू का रुपया है।’ “सचमुच ?” निमल ने अविश्वास से कहा। “और नहीं क्या ! कूबड थोड़े है, है तो दिखाव !” मुन्ना द्वारा उत्साहित होकर मेवा पूछने ही जा रहा था कि देखा साबुन वाली सत्ती खडी बात कर रही है गुलकी से—कह रही थी “अच्छा किया तुमने ! मेहनत से दूकान करो। अब कभी धूकने भी न जाना उसके महाँ। हरामजादा दूसरी औरत कर ले, चाहे दम और कर ले। सबका खून उसी के मत्थे चढेगा। यहाँ कभी आव तो बहलाना मुझसे। इसी चाकू से दोनो आँखें निकाल लूँगी।”

बच्चे डरकर पीछे हट गए। चलते चलते सत्ती बोली—“कभी रुपये-पैसे की जहरत हो तो बताना बहिना।”

कुछ दिन बच्चे डरे रहे। पर अकस्मान् उह यह सूझा कि सत्ती को यह कुबडी डराने के लिए बुलाती है। इसने उनके गुप्से में घी का काम किया। पर कर क्या सकते थे। अन्त में उन्होंने एक तरीका ईजाद किया। वे एक बुढिया का खेल खेलते थे। उसको उन्होंने सशोधित किया। मटकी को लमजूत देने का लालच देकर कुबडी बनाया गया। वह उसी तरह पीठ दोहरी करके चलने लगी। बच्चा ने सवाल-जवाब शुरू किये—

‘कुबडी-कुबडी का हेराना ?’

“सुई हिरानी।”

“सुई ल के का करव ?”

“क्या सीब !”

“क्या सी के का करव ?”

‘लवडी लाव !’

“लवडी लाव के का करव ?”

“भात पकइव !”

“भात पनाय के का करव ?

“भात खाव !

“भात के बन्ले लात गाव ?”

और इसके पहले कि कुबडी बनी हुई मटकी कुछ कह सके, वे उस जार स
लात मारते और मटकी मुँह के बल गिर पड़ती। उसकी कोहनिया और घुटने छिल
जाते। आँखों में आँसू आ जाते और हाठ दबाकर वह रत्गाई राकती। बच्चे पुनी से
चिल्लाते, “मार डाला कुबडी को मार डाला कुबडी का !” गुलवा यह सब देखती
और मुँह फेर जाती।

एक दिन जब इसी पवार मटका को कुबडी बनाकर गुलकी की दुकान के सामने
ले गए तो उसने पहले मटकी जबाब दे, उहान अनचित्ते में उसे इतनी जोर से धक्का
दिया कि वह कुहनी भी न टक सकी और सीधे मुँह के बल गिरी। नाक, हाठ और
भौह खून में लथपथ हो गए। वह हाय ! हाय ! कर इस बुरी तरह चीखी कि लडके
'कुबडी मर गई !' चिल्लाते हुए भी सहम गए और हतप्रभ हो गए। अक्स्मात् उहान
देखा कि गुलकी उठी। व जान छाडकर भागे। पर गुलका उठकर आयी, मटकी का
गोद में लेकर पानी से उसका मुँह धोने लगी और घानी से मुँह पाछने लगी। बच्चे
न पता नहीं क्या समझा कि वह मटकी को मार रही है या क्या कर रही है कि वे
अक्स्मात् उस पर टूट पड़े। गुलकी की चीख सुनकर मुहल्ले के लोग आये तो उन्हान
देखा कि गुलकी के बाल बिखरे हैं नाँव से खून बह रहा है, अघउपारी चन्नूरे के नीचे
पडी है, और सारी तरकारी सडक पर बिखरा है। घधा बुआ ने उस उठाया घाता
ठीक की। और बिगड कर बोली ओकात रती मर न, और तहा पीवा मर ! आपन
बखत दख के चुप न रहा जात। काहे लडकन के मुँह लगत ही ? लोगा ने पूछा ता
कुछ नहीं बोली। जैसे उस पाला मार गया हो। उसने चुपचाप अपनी दुकान ठीक की
और दाँत से खून पाछा, कुल्ला किया और बठ गई।

उसके बाद अपन उस वृत्त्य से बच्चे जैसे पद सहम गए थे। बहुत दिन तक व
गान्त रहे। आज जब मेवा न उसकी पीठ पर घूँट फेंकी तो जम उस खून चला गया
पर फिर न जान वह क्या सोचकर चुप रहे गई और जब नारा लगाता हुआ जुलूम
गली में मुड गया ता उसने आँसू पछि पीठ पर से घूँट झाडी और साग पर पानी
छिडकन लगी। लडक का हैं गल्ली के राछन हैं।” मेधा बुआ बानी। ‘अरे उन्हें
काहे कहे बुआ। हमारा भाग ही खोटा है। गुलकी न गहरी साँस खरक का।

२

जब बार जा झाडी लगा ता पाँच दिन तक लगातार सूरज के दधान नहीं हुए।
बच्च सब घर में बंधे और गुलकी नमी दुकान लगाती थी, कभी नहीं। राम राम
करके छठवें दिन तीसरे पहर पाडी बन्द हुई। बच्चे हकीमजी के चौतर पर जमा हो गए।

मेवा बिलबोटी बीन लाया था और निमल ने टपकी हुई निमकीडिया बीन कर एक दूकान लगा ली थी और गुलकी की तरह आवाज लगा रही थी—“ले खीरा, जालू मूरी घिया ण्डा ।” थोड़ी देर में काफी गिनु ग्राहक दूकान पर जुट गए । अक्स्मान् गारगुल की चीरता हुआ बुआ के चौतरे से गीत का स्वर उठा । बच्चों ने घूमकर दवा-मिरवा और मटकी गुलकी की दूकान पर बठे हैं । मटकी खीरा खा रही है और मिरवा चवरी का मिर अपनी गोद में रखते बिलकुल उसकी आखा में आँखें डालकर गा रहा है ।

तुरत मेवा गया और पना लगा कर लाया कि गुलकी ने दोनों को एक एक अघना दिया है और दोनों मिलकर चवरी कुतिया के कीड़े निकाल रहे हैं । चौतर पर हलचल मच गई और मुना ने कहा, “निमल ! मिरवा मटकी को एक भी निमकीडी मत देना । रहे उसी कुबडी के पास ।” “हा जी !” निमल ने आव चमका कर गोल मुँह करक कहा, ‘हमार अम्मा कहत रही उह छुयी न । न साथ खायी, न खेली । उह बडी बुरी बीमारी है ।’ “आक धू !” मुना ने उनकी ओर देखकर उबकाइ जसा मुँह बनाकर धूक दिया ।

गुलकी बठी-बठी मव समझ रही थी और जमे इस निरथक घणा में उसे कुछ रस आने लगा था । उसने मिरवा से कहा, ‘तुम दोनों मिल के गाओ ता एक अघना और दें । खूब जोर से !’ दोनों भाई-बहन ने गाना गुरू किया—

“माल कताली मल जाना, पल अकिया किछी से ।”

अक्स्मात् फटाक से दरवाजा खुला और एक लोटा पानी दोनों के ऊपर फेंकती हुई घेघा बुआ गरजी— दुर कलमुँह ! अबहिन वित्तो भर के नाही ना और पतुरियन के गाना गाव लगे । न बहिन का खयाल न विटिया का । और ए कुबडी, हम तुहूँ स कह देइत हैं कि हम चकलाखाना खोल के बरे अपना चौतरा नहीं दिया रहा । हुँह ! चली हुँआ से मुजरा कराव ।’

गुलकी ने पानी उघर छिटकाते हुए कहा— ‘बुआ, बच्चे हैं । गा रह हैं । कौन कसूर हो गया !’

‘ए हाँ ! बच्चे हैं । तुहूँ तो दूध पियत बच्ची हौ । कह दिया कि जवान न लडायो हम से, हाँ ! हम बटुने बुरी हैं । एक तो पाच महीने से किरावा नाही दिया और हियाँ दुनिया भर के अ धे कोणी बटुरे रहत हैं । चली उठावौ अपनी दूकान हियाँ से । कल से न देखी हियाँ तुम्हें । राम ! राम ! सब अघरम की सन्तान राच्छस पना भये हैं मुहल्ले में । घरतीयो नाही फाटत कि मर विलाय जायें ।’

गुलकी सन्न रह गई । उसने किराया सचमुच पाँच महीने से नहीं दिया था । वित्री ही नहीं थी । मुहल्ले में कोई उससे कुछ लेता ही नहीं था पर इसके लिए बुआ उसे निवाल दगी— ऐसी उसे आगा नहीं थी । बसे ही महीने में बीस गिन वह सूखी मोती थी । धाती में दस दस पबन्द थे । मवान गिर चुका था । एक दलान

म थोड़ी-सी जगह में वह सा जानी थी। पर दूकान तो वहाँ रखी नहीं जा सकती। उगने चाहा कि यह बुआ के पर पकड़ ले, मित्रत बन ले। पर बुआ ने जितनी जोर में दरवाजा रोता था उतनी ही जोर से बग्न कर दिया। जब स चौमामा आया था पुरवाई बही थी उमकी पीठ में भयानक पीडा उठती थी। उसके पाँव बाँपते थे। सट्टी में उस पर उपार बुरी तरह चढ़ गया था। पर अब होगा क्या 'वह मारे पास क रोने लगी।

इतने में कुछ गटपट हुई और उसने घुटना से मुह उठाकर देखा कि मौवा पावर मटकी में एक ताजा फूट निकाल लिया है और मरभूखी की तरह उसे ह्वर ह्वर खाती जा रही है। एक क्षण वह उसके फूलने पकवते पेट को देखती रही, फिर ब्याल भाते ही कि फूट पूरे दम पस का है, वह उबल पड़ी और सडासड तीन-चार खपच्ची मारते हुए बोली, 'चोट्टी ! बुत्तिपा ! तोरे बदन में कीडा पड !' मटकी के हाथ स पूरा गिर पडा पर वह गाली में से फूट क टुकड उठाते हुए भागी। न रोई, न चीखी क्याकि मूँह में भी फूट भरा था। मिरवा हक्का-बक्का इस घटना को देख रहा था कि गुलकी उसी पर बरस पड़ी। सड-सड उसने मिरवा को मारना शुरू किया—“भाग महाँ से हरामजादे ! मिरवा दद स तिलमिला उठा—“हमला पडछा देव तो जाई। देहत है पसा, टहर तो ! सड ! सड ! रोता हुआ मिरवा चीतरे की ओर भागा।

निमल की दूकान पर सनाटा छाया था। सब चुप उसी ओर देख रहे थे। मिरवा न आकर कुवडी की शिकायत मुना से की। मुन्ना चुप रहा। फिर मेवा की धार घूमकर बोला, 'मेवा बता दो इसे। मेवा पहले हिचकिचाया, फिर बड़ी मूलायमियत से बोला मिरवा, तुम्ह बीमारी हुई है न ! तो हम लोग अब तुम्ह नहीं छुएंगे। साथ नही खिलायगे। तुम उधर बठ जाओ।

“हम बिमाल हैं मुन्ना ?”

‘मुन्ना कुछ पिथला—हाँ 'हम छुआ मत। निमकौडी खरीदना ही सा उधर बठ जाओ हम दूर से पक देंगे समझे !’ मिरवा ममझ गया, सिर हिलाया और अलग जाकर बठ गया। मेवा ने निमकौडी उसके पास रख दी और बग्न चान मूल कर पकी निमकौडी का बीजा निकालकर छीलने लगा।

इतने में ऊपर से घघा बुआ की आवाज आयी 'ए मुन्ना ! सनी तू लोग परे हो जाओ ! अबहिन पानी गिरी ऊपर मे !' बच्चा ने ऊपर देखा। तिछते पर घघा बुआ कडाटा मार पानी में छप छप करती घूम रही थी। कूडे से तिछत की नाली बंद थी और पानी मरा था। जिधर बुआ खडी थी उसके ठीक नीचे गुलकी का सोदा था। बच्चे वहाँ से दूर थे पर गुलकी का मुनाने क लिए बात बच्चा से कहीं गई थी। गुलकी कराहती हुई उठी। कूवड की बजह स वह तनकर तिछते की आग दस भी नहा सकती

थी। उसन घरती की जोर देखकर ऊपर बूआ से कहा, "इधर की नाली काहे खाल रही हो ? उधर की खोलो न !"

"काहे उधर की खोली ! उधर हमार चौका है कि न !"

"इधर हमारा सौदा लगा है।"

"ए है ?" बूआ हाथ चमकाकर बोली "सौदा लगा है रानी साहब का ! किरावा देय के दाई हियाव फाटत है और टराय के दाई नटई मे मामा पहिलवान का जोर तो देखी ! सौदा लगा है तो हम का करी ! नारी तो इहै खुली ?"

'खाली तो दखें !' अकरमात् गुलकी ने तडपकर कहा, आज तक किसी न उसका वह स्वर नहीं सुना था—"पाच महीने का दस रुपया नहीं दिया बेसक, पर हमारे घर की घती निकाल के बसन्तू के हाथ किसने बचा ? तुमने ! पच्छिम ओर का दरवाजा चिरवा के किसन जलवाया ? तुमने ! हम गरीब है ! हमारा बाप नहीं है ! सारा मुहल्ला हमे मिलकर मार डाले !"

"हमे चारी लगाती है। अरे कल की पदा हुई !' बूआ मार गुस्से के बडी बोली बोलने लगी थी।

बच्चे चुप खडे थे। वे कुछ-कुछ सहमे हुए थे। कुबडी का यह रूप उन्हान कभी न देखा था, न सोचा था।

'हां ! हां ! हां ! तुमन, डाइवर चाचा ने, चाची न, सबन मिलके हमारा मकान उजाडा है। अब हमारी दूकान बहाय देव। देखेंगे हम भी। निरबल के भी भगवान् है !'

"ले ! ले ! ले ! भगवान् है तो ले !" और बूआ न पागलो की तरह दौडकर नाली मे जमा बूडा लकडी से ठेल दिया। छ इ च माटी गदे पानी की धार घड घड करती हुई उसकी दूकान पर गिरन लगी। तरोइयां पहले नाली मे गिरी, फिर मूली, खीरे साग अदरक उछल-उछलकर दूर जा गिरे। गुलकी आँसु फाडे पागल-सी देखती रही और फिर दीवार पर सिर पटककर हृदयविदारक स्वर म डकराकर रा पडी अरे मार बाबू—हमे कहां छोड गए—अर मोरी माई ! पदा हाते ही हमे क्यों नहीं मार डाला ! अरे घरती मया हमे काहे नहीं लील लती !'

सिर खोले बाल दिखेरे, छाती कूट-कूटकर वह रो रही थी और तिछत्ते का पिछले नौ दिन का जमा पानी घड घड घड घड गिर रहा था।

बच्चे चुप खडे थे। अब तक तो जो हो रहा था उनकी समझ मे आ रहा था। पर आज यह क्या हो गया, मट उनकी समझ मे नहीं आ सका। पर व कुछ बाले नहीं। सिफ मटकी उधर गई और नाली मे बहता हुआ एक मोटा हरा खीरा निकालन लगी कि मुश्रा ने डाँटा, "खबरदार ! जो कुछ सुराया !" मटकी पीछ हट गई। व सब किसी अप्रत्याशित भय, संवेदना या आशका से जुट-बटुरकर खड हो गए। सिफ मिरवा अलग

मिर बुकाये सडा था । झीसी फिर पढने लगी थी जोर व एक एक कर अपने घर चले गए ।

दूकान दिन बारा राती था । दूकान का बास उगडवाकर बुआ ने नांद म गाडकर उस पर तुरद की लतर चला दी थी । उम दिन बच्चे आए पर उनकी हिम्मत उस चौतर पर जान की नहीं हुई । जस वहाँ कोई मर गया हो । बिलकुल मुनसान चौतरा था और फिर तो ऐसी झडी लगी कि बच्चा का निकलना बन्द । चौथे या पाचवें दिन रात का मयानक वर्षा तो हो ही रही थी पर बादल भी ऐस गरज रहे थे कि मुन्ना अपनी घाट से उठकर अपनी माँ के पास घुस गया । बिजली चमकते ही जस कमरा रोशनी स नाच नाच उठता था । छत पर बूँदा की पटर-पटर कुठ धीमी हुई थोडी हवा भी चली और पडा का हरहर मुनाई पडा कि इतने म घड घड घचाम की मयानक आवाज हुई । माँ भी चौंक पडी । पर उठी नहीं । मुन्ना जाँवें खाले जेधेरे म ताकन लगा । सहसा लगा मुहल्ले म कुछ लोग बातचीत कर रह हैं । घेघा बुआ की जावाज मुनाई पडी— 'फिसका मकान गिरा है रे !' 'गुल्की का ?'—'किसी का दूरागत उत्तर आया । "अरे बाप रे ! दब गई क्या ? नहीं जाज तो मेवा की मा के यहाँ सोयी है !' मुन्ना लेटा था और उसके ऊपर अ धेर म यह सवाल जवाब इधर स उधर जोर उधर स इधर आ जा रहे थे । वह फिर काँप उठा मा के पास घुस गया और सोते-सोते उसन साफ मुना—'कुबडी फिर उसी तरह रा रही है गला फाड कर रो रही है ! कौन जान मुन्ना क ही आंगन म बठकर रो रही हो । नांद म वह स्वर कभो दूर कभी पास आता हुआ ए सा लग रहा है जसे कुबडी मुहल्ले के दर आंगन मे जाकर रो रही हो पर कोई सुन नहीं रहा सिवा मुन्ना के ।

३

बच्चा के मन म कोई बात तना गहरी लकीर नहीं बनाती कि उधर स उनका ध्यान हटे ही नहीं । सामने गुल्की थी तो वह एक समस्या थी पर उसकी दूकान इट गई फिर वह जाकर साबुन वाली सती के गलियारे म मोने लगी और नो बार घर से माँग-जाँचकर रान लगी, उस गली मे दिखती ही नहीं थी । बच्चे भी दूसरे कामा म व्यस्त हो गए । अब जाड आ रहे थे ता उनका जमावडा सुवह न हाकर तीसर पहर होना था । जमा होने के बाद जलूस निकलता था और जिम जोशील नार स गली मूज उठती थी वह था—'घेघा बुआ का वाट दो ! पिछल दिना म्युनिसपलिटी का चुनाव हुआ था जोर उसी म बच्चा न यह नारा सीसा था । वस कभी-कभी बच्चा म दा पाटिया भी हाती थी पर दाना का घघा बुआ स अच्छा उम्मीदवार कोई नहीं मिलता था अब दोना ही गला फाड फाडकर उनके ही लिए वाट माँगती था ।

उम दिन जब घघा बुआ व घम का बाँध टूट गया ओर नई-नई गालियों स विभूषित अपनी पयम एल्कान-स्पीच देने ज्या ही चौतरे पर अवतरित हुई कि उह

डाकिया आना हुआ दिखायी पड़ा। वह अचक्काकर खर गई। डाकिये के हाथ में एक पोस्टवाड था और गुलकी का दूँढ़ रहा था। बुआ न लपककर पोस्टवाड लिया, एक सांस में पड़ गई। उनकी जाँहें मारे अचरज के फल गईं, जोर डाकिये का यह बताकर कि गुलकी सती साबुन वाली के आमार में रहती है, वे झट में दौड़ी-दौड़ी निमल की माँ डाइवर की पत्नी के यहाँ गयी बड़ी देर तक दोना में सलाह मगवरा होता रहा और अन्त में बुआ आइ और उहान मवा का भेजा— 'जा गुलकी को बुलाय ला।'

पर जब मेवा लौटा ता उसके साथ गुलकी नहीं बरख मती साबुन वाली थी और सदा की भाँति इस समय भी उसकी कमर से वह काले बट का चाकू लटक रहा था, जिससे वह साबुन की टिकरी काटकर दूकानदारा का दती थी। उसन आते ही भौह मिवाडकर बुआ का दवा और बडे स्वर में बोली— 'क्या बुलाया है गुलकी का ? तुम्हारा दस ४० किराया बाजी था तुमन १५ का मौदा उजाड लिया। अब क्या काम है ? अरे। राम। राम। क्या किराया बेटा। अदर जाओ, अदर आओ। बुआ के स्वर में असाधारण मुलामियन थी। सती के अदर जाते ही बुआ न फटाक से किवाड बंद कर लिये। बच्चा का कौतूहल बहुत बढ़ गया था। बुआ के चौके में एक सपरी थी। सब बच्चे वहाँ पहुँच और आँख लगाकर कनपटिया पर दोनों ह्येलियाँ रखकर घण्टी वाला वाइसकोप देखन की मुद्रा में खडे हो गए।

अदर सती गरज रही थी— 'बुलाया है तो बुलान दो। क्यों जाये गुलकी ? जब बडा ब्याल आया है। इसलिए कि उसकी रखल को बच्चा हुआ है ता जाके गुलकी पाडू-बुनाह कर, खाना बनाव, बच्चा खिलाव, जोर वह मरद का बच्चा गुलकी की आँख के जागे रखल के साथ गुलछरें उडाव।''

निमल की माँ बोली— 'अरे विटिया। पर गुजर तो अपने आदमी के साथ करगी न। जब उसकी पत्नी जायी है ता गुलकी का जाना चाहिए। और मग्द ता मरद। एक रखल छाड दुः दुद रखल रख ल ता औरत उस छोड देगी। राम। राम।

'नहीं छोड देगी ता जाय के लात खायेगी ?' सती वाली।

'अरे बेटा।' बुआ वाली— भगवान रह न। तीन मथुरापुरी में कुब्जा दासी के लात मारिन तो ओकर कबा सीधा हुइ गवा। पनी ता भगवान है पिटिया। ओका जाय देव।

'हाँ-हाँ, बडी हितू न बनिय। उसके आदमी से जाय लाग मुफ्त में गुलकी का मवान पटकना चाहती हैं। मैं सब समझती हूँ।'

निमल की माँ का चेहरा जद पड गया। पर बुआ ने ऐसी कच्ची गाली नहीं खली थी। व डपटकर बोली— सवरदार, जा कच्ची जवान निकाल्यो। तुम्हारा चलिन्तर बौन न जानवा। ओही छोकरा मानिक।''

'जवान खीच लेंगी।' सती गला फाडकर चीखी 'जा आगे एक हम्फ

बहा।" और उसका हाथ अपने घावू पर गया—

'अरे ! अरे ! अरे !' बुआ सहमकर दग बंदम पीछे हट गई— 'तो का खुः करवो का ? कतल करवो का ?' —सती जगे आयी थी बते ही घली गई ।

मीमरे दिन बच्चा ने तय किया कि हारी बाबू व बुआ पर चलकर बरें पकड़ी जायें । उन त्तिना उनका जहर घात रहना है । बच्चे उन्हें पकड़कर उनका छोटा-सा बाला डब निवाल लेते और फिर डोरी म बांधकर उन्हें उठाते हुए घूमते । मेवा निमल और मुद्रा एक एक बर उठाने हुए जब गली म पढ़ेंगे तो वहाँ दगा बुआ के चॉतरे पर टीन की कुर्मी डाले कोई आत्मी बठा है । उसकी अजब गल थी । कान पर चडे-चडे बाल मिचमिची आँतें, मोछा और तेल स चुचुआते हुए बाल । कमीज और घाती पर पुराना बदरग बूट । मटकी हाथ पलाये वह रही है— 'एक डबल द देव । ए द देव ना ।' मुद्रा को देखकर मटकी ताली बजा-बजाकर कहने लगी—“गुलकी का मनसेपू आवा है । ए मुद्रा बाबू ! ई कुबडी का मनसेपू है ।” फिर उधर मुड़कर—“एक डबल द देव ।” तीना बच्चे बौतूहू से रक गए । इनने म निमल की माँ एक गिलास म धाय भर कर लाइ । गीर उसे दते-दते निमल के हाथ म बरें देखकर उसे डाँटने लगी । बरें छुटाकर निमल को पास बुलाया और बोली— 'बेटा, इ हमारी निमला है । ए निमल जीजाजी हैं हाथ जोडो । बेटा गुलकी हमरी जात बिरादरी की नहीं है तो का हुआ, हमरे लिए जसे निमल वसे गुलकी । अरे निमल के बाबू और गुलकी व बाप की दौत-काटी रही । एक मवान बचा है उनकी बिहारी और का ।’ एक गहरी साँस लेकर निमल की माँ ने बहा ।

अरे, ता का उह कोई इकार है । बुआ आ गई थी, “अरे १०० तुम दब निये रहो चलो ३०० और द देव । अपने नाम कराम लेव ।’

'५०० से कम नहीं होगा । उम आदमी का मुँह खुला एक वाक्य निक्ला और मुँह फिर बंद हो गया ।

'भवा ! भवा ! ए बेटा दामाद हो, ५०० कहवो तो का निमल की माँ को इन्कार है ।’

अकस्मान वह आदमी उठकर खडा हो गया । आगे-आगे सती चली आ रही थी पीछे-पीछे गुलकी । सती चॉतरे के नीचे खड़ी हा गई । बच्चे दूर हट गए । गुलकी ने फिर उठाकर देखा और अचभचाकर सिर पर पल्ला डालकर माथे तक खींच लिया । सती दो एक क्षण उसकी ओर एकटक देखती रही और फिर गरज कर बोली—' यही कसाई है । गुलकी आगे बढ़कर मार दो चपेटा इसके मुँह पर । खबरदार, जो कोई बोला ।’ बुआ चट से देहरी के अंदर हो गई निमल की माँ की जसे धिगधी बँध गई और वह आदमी हडबला कर पीछे हटने लगा ।

'बढ़ती क्या नहीं गुलकी ! बडा आमा वहाँ से विदा कराने ।’

गुलकी आगे बढ़ी, सब सन्न थे। सीढ़ी चढ़ी, उस आदमी के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी। गुलकी चढ़ते चढ़ते रुकी, सत्ती की ओर देखा, ठिठकी, अकस्मान् लपकी और फिर उस आदमी के पाव पर गिर के पफक पफक कर रोने लगी—“हाय, हमे काहे को छोड़ दियो ! तुम्हारे सिवा हमरा लोक-परलोक और कौन है ? अरे, हमारे मर पर कौन चुल्लू मर पानी चलाई ”

सत्ती का चेहरा स्याह पड़ गया। उसने बड़ी हिकारत से गुलकी की ओर देखा और गुस्से में थूक निगलते हुए कहा, “बुटिया !” और तेजी से चली गई। निमल की माँ और बुआ गुलकी के सिर पर हाथ फेर-फेर कर कह रही थी—“मत रो बिटिया ! मत रो ! सीता मइया भी तो बनवास भोगिन रहा। उठो गुलकी बेटा ! धोती बदल लेव, कधी चोटी करो। पति के सामने ऐसे आना असंगुन होता है ! चली !”

गुलकी आसू पाछती-पाछती निमल की माँ के घर चली। बच्चे पीछे पीछे चले तो बुआ ने डाँटा—“ए चलो एहर, हूँवा लड्डू बट रहा है का !”

दूसरे दिन निमल के बाबू (डाइवर साहब) गुलकी और जीजा दिन भर कच हरी में रहे। गम को लौटे तो निमल की मा ने पूछा, “पक्का कागज लिख गया ?” “हा-हा रे, हाकिम के सामने लिख गया”, फिर जरा निकट आकर फुमफुमाकर बोले, “मट्टी के मोल मकान मिला है। अब कल दोनों को बिदा करो !”

“अरे, पहले १०० लाओ ! बुआ का हिस्सा भी ता देना है !” निमल की माँ उदास स्वर में बोली, ‘बड़ी चट है। बुढिया गाड गाड के रख रही है मर के साँप होयगी।’

४

सुबह निमल की मा के यहा मकान खरीदने की कथा थी। शख, घटा घडियाली केले का पत्ता, पजीरी पचामत का आयोजन देख कर मुत्ता के अलावा सब बच्चे इकट्ठे थे। निमल की मा और निमल के बाबू पीढे पर बठे थे, गुलकी एक पीली धोती पहने, माथे तक घू घट काढे सुपारी काट हरी थी और बच्चे झाक कर देख रहे थे। मेवा ने पास पहुँचकर कहा “ए गुलकी, ए गुलकी जीजाजी के साथ जाओगी क्या ?” कुबडी ने झंपकर कहा, “घत रे ! ठिठोली करता है !” और लज्जा भरी जो मुस्कान किसी भी तरुणी के चेहरे पर मनमोहक लाली बनकर फल जाती, वह उमके मुखियोदार, बडोल, नीरस चेहरे पर बिचित्र रूप से धीमत्स लगन लगी। उसके काले पपडीदार हाठ सिकुड गए, आँखा के कोने मिचमिच उठे और अत्यन्त कुरुचिपूर्ण ढंग से उसने पल्ले से सिर रोक लिया और पीठ सीधी कर जैसे कूवड छिपाने का प्रयास करने लगी। मेवा पास ही बठ गया। कुबडी ने पहले इधर उधर देखा, फिर फुसफुसाकर मेवा से कहा, ‘क्यों रे ! जीजाजी बसे लगे तुम्हे ?’ मेवा न असमजस में या सकोच में पढकर कोई जवाब नहीं दिया तो जैसे अपने को समझाने हुए गुलकी बोली, ‘कुछ भी होय। है तो अपना

आदमी ! हारे-गाए कोई और काम आवेगा ? औरत को दवाम बं रखना ही चाहिए ।” फिर थोड़ी देर चुप रहकर बोली, “मेवा भइया, सती हमसे नाराज है । अपनी सगी बहिन क्या करेगी जो सती न किया हमारे लिए । ये चाची और बुआ तो सब मतलब के साथी है, हम क्या जानत नही ? पर भइया अब जो बहो कि हम सती के कहने से अपन भरद को छोड़ दें सो नही हो सकता ।” इतन में किसी का छोटा-सा बच्चा घुटना के बल चलते चलते मेवा के पास आकर बैठ गया । गुलकी क्षण भर उसे देखती रही फिर बोली ‘पति से हमने अपराध किया तो भगवान् ने बच्चा छिना लिया, अब भगवान् हमें छिमा कर देगे । फिर कुछ क्षण के लिए चुप हो गई, ‘छमा करेगे तो दूसरी सत्तान दगे । क्या नही दगे ? तुम्हारे जीजाजी को भगवान् बनाये रखे । खोट तो हमी में है । फिर सन्तान होगी तब तो सौत का राज नही चलेगा ।’

इतन में गुलकी न देखा कि दरवाजे पर उसका आदमी खड़ा बुआ से कुछ बातें कर रहा है । गुलकी ने तुरन्त पल्ले से सिर ढँका और लजा कर उधर पीठ कर ली । बोली, “राम ! राम ! कितने दुवरा गए हैं । हमारे बिना छाने-पीने का कौन ध्यान रखता ! अरे सौत तो अपने मतलब की होगी । ले भइया मेवा जा, दो बीडा पान दे आ जीजा को ! फिर उसके मुह पर वही लाज की धीमत्त मुद्रा आयी “तुझे बसम है बताना मत किसन किया है ।

मेवा पान लेकर गया पर वहाँ किसी न उस पर ध्यान ही नहीं किया । वह आदमी बुआ से कह रहा था, ‘इसे ले तो जा रहे हैं पर इतना बहे देते हैं, आप भी समझा दें उसे—कि रहना हो ता दासी बनकर रहे । न दूध की, न पूत की हमारे कौन काम की पर ही औरतिया की सेवा करे, उमवा बच्चा गिलावे शादू-बुहारू करे तो दो रोटी छाय पढी रह । पर कभी उसस जवान लडाई तो सर नही । हमारा हाथ बड़ा जालिम है । एक बार बूबड निकला अगली बार परान ही निकलेगा ।

क्या नहीं बेटा ! क्या नहीं ! बुआ बोली और उहाने मेवा के हाथ से पान लेकर अपन मुँह में दवा लिये ।

करीब ३ बजे कच्चा लान के लिए निमल की माँ ने मेवा का भजा । क्या की भीड़माड से उसका ‘मूड पिरान लगा था अत अकेली गुलकी सारी तयारी कर रही थी । मटकी बोलने में मरही थी । मिटवा और सवरी बाहर गुमगुम बठे थे । निमल का माँ ने बुआ को बुलवाकर पूछा कि बिना बिगाई में क्या करना होगा, तो बुआ मुँहट बिगाडकर बोली अरे कोई बात विराटरी की है का ? एक लाटा में पानी भरके इबन्नी-दुअन्नी उनार बं परजा-परजा को द दियी बस ! और फिर बुआ पान की बियारी में लग गई ।

कच्चा आठे ही जस सवरी पागल-सी इधर-उधर दौडन लगी । उस जान बने मामाम हो गया कि सुनकी जा रही है सान बं लिए । मेवा न अपन छोटे-छाटे हाथा

से बड़ी-बड़ी गठरियाँ रखी, मटकी और मिरवा चुपचाप आकर इक्के के पास खड़े हो गए। सिर झुकाये पत्थर-सी चुप गुलकी निकली। आगे आगे हाथ में पानी का भरा छोटा लिये निमल थी। वह आदमी जाकर इक्के पर बैठ गया। 'अब जल्दी करो। उसने भारी गले से कहा। गुलकी आगे बढ़ी, फिर रुकी और उसन टेंट से दो अघने निकाले, 'ले मिरवा, ले मटकी।' मटकी, जो हमेशा हाथ फलाये रहती थी, इस समय जाने कसा सकोच उसे आ गया कि वह हाथ नीचे कर दीवार से सटकर खड़ी हो गई और सिर हिलाकर बोली, 'नहीं।', 'नहीं बेटा। ले लो।' गुलकी ने पुनः पुनः कर कहा। मिरवा ने उसे ले लिये और मिरवा बोला, "छलाम गुलकी। ए आदमी छलाम।"

"अब क्या गाड़ी छोडनी है।" वह फिर भारी गले से बोला।

'ठहरो बेटा कही ऐसे दामाद की विदाई होती है।' सहसा एक बिलकुल अजनबी किन्तु अत्यन्त मोटा स्वर सुनाई पडा। वच्चो न अचरज से दखा, मुन्ना की माँ चली आ रही है। "हम तो मुन्ना का आसरा देख रहे थे कि स्कूल से आ जाए, उसे नाता करा लें तो आये, पर इक्का आ गया तो हमने समझा अब तू चली। अरे! निमल की माँ, कही ऐसे बेटे की विदा होती है। आआ जरा रोली घोलो जल्दी स, चावल लाओ, और सेंदुर भी ले आता निमल बेटा। तुम बग उतर आओ इक्के से।"

निमल की माँ का चेहरा स्याह पड गया था। बोली—'जितना हमम बन पडा किया। किसी को दौलत का घमण्ड थोडे ही दिखाना था।' 'नहीं बहन! तुमने तो किया, पर मुहल्ले की विटिया तो सारे मुहल्ले की विटिया होती है। हमारा तो फज था। अरे, मा-बाप नहीं हैं तो मुहल्ला तो है। आओ बेटा।' और उहाने टीका करके बाँचल के नीचे छिपाये हुए कुछ कपडे और नारियल उसकी गोद में डालकर उसे चिपका लिया। गुलकी जो अभी तक पत्थर-सी चुप थी, सहसा फूट पडी। उसे पहली बार लगा जैसे वह मामके से आ रही है। मायके से अपनी मा को छोडकर छोटे-छोटे भाई-बहनों को छोडकर और वह अपने कवचा फटे हुए गले से विचित्र स्वर से रो पडी।

"ले! अब चुप हो जा? तरा भाई भी आ गया।' व बोली। मुन्ना बस्ता लटकाये स्कूल से चला आ रहा था। कुबडी को अपनी माँ के कंधे पर सिर रखकर राते देखकर वह बिलकुल हतप्रभ-ना खडा हो गया—'आओ बेटा! गुलकी जा रही है न आज? दीदी है न? बडी बहन है। चल, पाँव छू ले? आ इधर?' माँ ने फिर कहा। मुन्ना और कुबडी के पाँव छुए? क्या? क्या? पर माँ की बात। एक क्षण में उसके मन में जैसे एक पूरा पहिया घूम गया और वह गुलकी की ओर बढ़ा। गुलकी ने दौडकर उसे चिपका लिया और फूट पडी—'हाथ मरे भइया! अब हम जा रहे हैं। अब किससे लडोगे मुन्ना भइया? अरे भेरे बीरन, अब किससे लगेगे?' मुन्ना

को लगा जैसे उसकी छोटी छोटी पसलियां में एक बहुत बड़ा-सा आंसू जमा हो गया जो अब छल्वन ही वाला है। इतने में उस आदमी ने फिर आवाज दी और गुलकी कराह कर मुन्ना की माँ का सहारा लेकर इक्के पर बैठ गई। इक्का खड़-खड़ कर चल पड़ा। मुन्ना की माँ मुड़ी कि बुआ ने क्या किया— 'एक आध गाना भी बिदाई का गाये जाओ बहन ! गुलकी बन्नो समुराऊ जा रही है ?' मुन्ना की माँ ने कुछ जवाब नहीं दिया मुन्ना स बोली— 'जल्दी घर आना देटा। नास्ता रखा है !'

पर पागल मिरबा ने, जो बम्ब पर पाव लटकाये बठा था जान क्या सोचा कि वह सचमच गला फाड़कर गाने लगा— "बन्नो डाले दुपट्टे का पल्ला, मुहल्ले से चली गई राम !" यह उस मुहल्ले में हर लडकी की बिदा पर गाया जाता था। बुआ ने घुड़का तब भी वह चुप नहीं हुआ, उलटें मटकी बोली— "काहे न गावें गुलकी ने पैसा लिया है !' और उसने भी सुर मिलाया— 'बन्नो तली गई लाम ! बन्नो तली गई लाम !'

मुन्ना चुपचाप सड़ा रहा। मटकी डरते-डरते आयी— 'मुन्ना बाबू ! कुबडी ने अधन्ना दिया है, ले तें ?'

'ले ल ! बडी मुन्विल से मुन्ना ने कहा और उसकी आँसू में दो बड़े-बड़े आंसू डबडबा आये। उँहा आँसुआ की झिलमिली में कोसिंग करके मुन्ना ने जाते हुए इक्के की आर देखा। गुलकी आँसू पाछते हुए, पर्दा उठाकर, मुड मुडकर देख रही थी। मोड पर एक घबके से इक्का मुडा और फिर अदृश्य हो गया।

सिफ क्षयरी सडक तक इक्के के साथ गयी और फिर लौट आयी।

लन्दन की एक रात

मैं दूसरी बार वहाँ गया था। पहली रात देर से पहुँचा था। जाने से पहले ही सारा काम बँट चुका था। मैं फिर भी अनिश्चित-सा गेट के बाहर खड़ा था। सोच रहा था, शायद आखिरी क्षण उन्हें किसी आदमी की ज़रूरत पड़ेगी और वे मुझे बुला लेंगे। देर तक घड़घड़ाती मशीनों के भीतर माड़े की बोटला का स्वर सुनाई दे रहा था। हमसे जिन काम मिल गया था, वे जल्दी-जल्दी अपने सूट उतारकर काम के कपड़े पहन रहे थे।

बाहर दालान में बोटलें थीं—फ़ीकी चाँदनी में चमकती हुई, एक के ऊपर दूसरी—मिलसिल्वार फ़वट्टी की दीवार से सटी हुई। दूर से देखने पर लगता था जैसे काँच के किसी लम्बे टील पर बहुत-सी बिल्लियाँ एक-दूसरे का गला पकड़े बठी हो।

मैं खड़ा रहा। फिर कुछ देर बाद एक ऑफ़ीस सज्जन मेरे पास आये—तुम अभी तक खड़े हो? मैंने कहा न, आज कुछ भी नहीं है।—उसने अपना हाथ मेरे कंधे पर रख दिया।

—नहीं, मैं सिर्फ देख रहा था—मैंने धीरे से उसका हाथ अपने कंधे से अलग कर दिया।

—कल पंद्रह मिनट पहले आ जाना। अगर कुछ लाग बल नहीं आये, तो तुम्हें ले लिया जाएगा। गुड नाइट।—और वह चला गया।

यह दूसरी रात थी। ट्यूब-स्टेशन की सौंदर्याँ चढ़कर ऊपर आया तो देखा बल की चाँदनी आज पूरी तरह निखरकर फली है। दूर मिल की चिमनिया के बीच लन्दन का घूमिल आवाग सिसट आया था।

मुझे दुबारा रास्ता टटोलना पड़ा। मैं उन सड़का पर दुबारा चलने लगा, जिन पर बल चला था, जो अब परिचित थी, किन्तु चाँदनी में अजीब-सी अज्ञानी दिखाई दे रही थी।

किन्तु नाथ एकटन से जरा आगे चलकर मेरे पाँव खुद-ब-मुद ठिठक गए। सोचा था, आज मैं जल्दी आ गया हूँ और गेट पर मेरे अलावा कोई दूसरा नहीं होगा। किन्तु मेरा अनुमान सही न था। वहाँ पहले से ही बीम-पन्चीस बेरोज़गार युवकों की भीड़ जमा थी। ऑफ़ीस लड़के, कुछ छात्र, जो देखने में बर्माँ जान पड़ते थे, दक्षिणी

अफीका और वेस्ट इण्डोज के मीधो—सब अलग-अलग दुष्टा म गइ थे । मवरी मीधों गेट पर टिकी थीं । कुछ के धहन जाने-बहघाणे लगत थे । उहू तापन बल रात लेगा था । उन सबकी आँसों मग पर उठ आई, सामोण और तनी हुई । मुझे लगा जस उग सामोणी म एन अजीब गा मय उमर आया है, मरे प्रति उगा नही जिना उग अज्ञात नियति क प्रति जिनका निगय अगले पन् लमहा म होने वाला था ।

मैं भी उनके गग एव कौने म गहा रहा—उनग दरता हुआ फिर भी उग बेघा हुआ ।

पाने नी के करीब मनेजर हमार पास आये । मुझे तनिक निरागा हुई । वह बल माल राजन नही थे, जिहा मरे कपे पर हाथ रमा था । उनके हाथ म बागड का एक पुरजा था । हम सब उनक पास गिगर आये—विद्ययापर के उन मूक, निरीह जन्तुओ की भाँति, जा कुछ भी पाने क लालच स मत्र चान्ति गति म सांगचा क पास धिमटते आते हैं । एक दाण क लिए उन्हाने हम दगा । हमारे मुल, नगे, भावनान घेहर उहू अजीब-स मयाबहू सगे हागे बचारे उरान अपनी आँसों जल्दी ही बागड पर झुका ली और तेजो स एक क बाद एक नाम पड़ने लगे ।

वे सब लोण छाँट लिए गए, जिहाने पिछली रात काम किया था । उनके अलावा सिफ तीन और लडका का चुना गया—दो लावारिस-स दीगने वाले अश्रेष्ठ युवक और एक दक्षिणी अफीका का विद्यार्थी जा सबसे आगे राहा था और बार-बार मुकबर मनेजर के बाना म कुछ फुसफुगा दता था ।

—आज कतना ही—उन्हाने सहानुभूतिपूर्ण भाव स हमारी आर देखा—आप लोग बल आइय दायद कुछ आदमिया की जरूरत पड़गी ।

मीठ म से तीन चार युवको न आगे बढ़कर उनसे बहस करने की कोशिश की किन्तु उहाने बहुत असहाय भाव से अपने हाथ हिला दिए और मुस्कराती आँसों से हमारी आर दगते हुए भीतर चल गये ।

हमारी प्रतीक्षा का अन्त आ पड़ चा है इसे जानते हुए भी हमम से कोई उस पर विश्वास नही कर सका । मनजर के जान क बाद भी हम म से कोई अपनी जगह से नहा हिला । लगता था, जस पिछल तीन मिनटा मे जा-कुछ भी घटा-बढ़ा है, वह अभी अपूर्ण है एक ऐसा अवास्तविक तथ्य जिसका गायद हमसे कोई वास्ता नहा अभी कुछ ऐसा है, जो बाकी है जो प्रतीक्षा के बाद भी अपने दरवाजे मुले रखता है हमम से बहुत स ऐस थ जा ट्यूब म तीन या चार गिलिंग का टिकट लेकर लानन क मुदुर बाना म यहाँ आये थे । हम सबक हाथा म एक एक धला था, जिसम हमने रात की ड्यूटी के कपडे और खाने का सामान बाँध रखा था । हममे से किसी के लिए भी यह विश्वास करना कठिन था कि हमे अगली ट्यूब से वापस लौट जाना होगा । पाइप से निकलता गुनगुना पानी चाँदनी म झिलमिलाते बीचड के गढ़ यहाँ

हील डीन अंधेरे में किसी भी अजनबी को काफी भयावह लग सकता था।

हम धीरे धीरे कदम बढ़ाते हुए नाथ एक्टन के पुल पार आ गए थे। लन्दन की डबल डेकर बस हमारे पास में गुजर गई। अगस्त महीने के पीले-बरारे पत्ता का रैला देर तक बस में पीछे भागता रहा।

तीसरा व्यक्ति, नीग्रो युवक, अब भी काफी उदास था और चुपचाप सड़क पर आगे मुकाए चल रहा था।

—लन्दन में सब से हो ?—दानीवाले युवक ने (बाद में जिसने अपना नाम बिली बताया था) नीग्रो के कंधे पर हाथ रखकर पूछा।

वह चुप रहा।

—वहाँ से आये हो ?

—दक्षिणी अफ्रीका से यहाँ पढ़ता हूँ।

वह गायब बात को यही सतम करना चाहता था। उसने जेब से सिगरेट का पकेट निकाला और हम दाना के आगे बर दिया। हमने धन्यवाद देकर आँसुं मोड़ ली। यह उसकी आखिरी सिगरेट थी और अपनी भूखी लालसा के भावजूद हममें इतनी गिप्टता बाकी थी कि उस लेन से इन्कार कर दें। किन्तु यह गिप्टाधार अधिक देर तक न चल सका। कुछ देर बाद हम तीना उस सिगरेट को बारी-बारी से पी रहे थे।

सामन लन्दन का रात थी—बोझिल गेंदली सात। वह शहर का एक उजाड़ कोना था और सड़क खाली थी। खाली सेबिन बीरान नहीं। पत्ता की गरमगहट पुराने मकानों की बगली गंध—लगता था, जगें बीच में हम अनेक निष्प्राण चीजा का ठसते हुए आगे बढ़ रहे हैं—हालांकि बीच में हवा और लम्प-सॉस्ट के दायरा के अलावा कुछ भी न था।

—तुम कहाँ जाओगे ?

—बारेन स्ट्रीट—उसने कहा—पिछले दाँवियाँ से आ रहा हूँ। अब तक पाँच पाँच गिप आने-जाने में मग्न हो गए। इतने पत्ता से तो मैं टैरिय मरुत जा सकता था।

उस समय टैरिय मरुतने का चर्चा बारी विचित्र जान पड़ी—उमने चेहरे से भ्रम हाना था कि पिछले कई दिना में उस मर-मर माने को भी नहीं मिला है।

—मरे दामन का नाम मिल गया है—नीया छात्र ने तनिक उम्मागूबक कहा—हम दाता गांध रहने है। बस गांध बट मुझे कुछ गिप्टिंग उपहार दे सकता।

—इस हिम—एक ही इज्जत !—बिना में अजब मोझे स्वर में कहा—मैं तो बस बिना हाथ में नहीं आऊँगा। प्यार कम टयारा ! मनेकर का नफल उगा रण हुए उमने मु ह मिबाइ लिया—तुमारा वि इग्ड ! तुम बस आओगे ?—उमने पट्टी बार बरी बार उमने हाथ पुछा।

—गांध आऊँगा—मैंने जान-बूझकर उम कुछ अर्पक सिमाने के लिए कहा।

उसके इस समय 'कल' की बात करने से मुझे काफी अफसोस हुआ था ।

—साले कितना त्त हैं ?

—ढाई पाउण्ड—नीग्रो छात्र ने कहा ।

—हर सुबह ?

—हाँ, हर सुबह । आधी रात के समय चाय और सेण्डविचेज भी देते हैं—मेरा दोस्त बतता रहा था । कल मैं और वह सग आये थे, उसे ले लिया गया, मैं रह गया ।

—नीग्रो था ?

—नहीं, वह बर्मी है ।

—और आप ?—विली ने सदिग्ध भाव से मेरी ओर देखा, जैसे अपनी नजरों से मुझे तौल रहा हो—आप क्या जापानी हैं ?

मैंन सिर हिला दिया । इतनी-सी बात पर उसका प्रतिवाद करना मुझे निरर्थक जान पड़ा ।

कुछ देर तक हम चुपचाप ट्यूब स्टेशन की ओर चलते रहे । जब कमी गरम हवा का झोका आता, हम सिहर जाते । तब हमारी भूख अपने सब पबंद तोड़कर उघड़ जाती । लगता, जैसे हवा लम्प-बोस्ट के पीले, मद्धिम आलोक को तोड़ जाती हो, तोड़कर अपने सग बहा ले जाती हो

—गरमी काफी है पिछले पाँच साल से ऐसी गरमी नहीं देखी ।

—पिछले पाच साल से रुन्दन में हो ?

—शायद ज्यादा तब से कई काम कर चुका हूँ । अब ज्यादा नहीं रहेंगा ।

—क्या वापस घर जाओगे ?—विली ने पूछा ।

—घर ?—नीग्रो छात्र, जाज के स्वर में एक सूना-सा खोबलापन उभर आया मानो घर' शब्द बहुत विचित्र हो, जैसे उसने पहली बार उसे मुना हो मैं चाहता था यही रहूँ । लेकिन वे हम चाहते नहीं ।

—वे बाह !—विली ने कहा ।

वे अनायास हमन चारों ओर देखा । कोई भी न था हालाँकि वे हर जगह हर समय हमारे सग थे । हमारे बाहर उतने ही, जितने भीतर

—तुम यही थे, जब आरिंग हिल में फसाद हुआ !—विली के सफेद दाँत धमक उठे ।

—नहीं, तब मैं रुन्दन नहीं आया था ।

—मैं वही रहता हूँ । तीन दिन तक एक अंग्रेज लडकी के घर छिपा रहा । जब वे एक-एक नीग्रो की चुनकर लिच कर रहे थे, मैं उस सफेद 'ह्वोर' के सग मोता रहा । उसने सोचा था, मैं उसे चाहता हूँ लेकिन मैंने उस उसके बाद देखा तक नहीं । उसे नहीं मालूम, मैं बदला ले रहा था उसकी सफेद चमड़ी के सग और उसने हाथ

से इशारा किया—अश्लील उतना नहीं जितना जुगुप्सामय ।

दूर कारखानों के धुएँ के पर ट्यूब-स्टेशन की बत्तियाँ चमक रही थीं । लगता था, जैसे धरती का कोई टुकड़ा अचानक बीच में से फट गया हो और उसके नीचे स हीरा की चमचमाती झालर ऊपर निकल आई हो ।

—तुम यहाँ पन्ते हो ?

—हाँ लेकिन गरमिया की छुट्टिया में काम करता हूँ । पहने ढास क लिए जाता था ।—जाज ने कहा । उसका स्वर भी काफी उदास था, जैसे काम न मिलने का दुःख अभी पूरी तरह न मिटा हो ।

—काटीनण्ट म क्या नहा जाते, यार ?—विली ने कहा—मेरा एक दास्त जमनी गया है, वहा नौकरियों की कमी नहीं है । सुना है, वहा लडकियाँ काले रंग के पीछे भागती हैं—सिफ इशारा करने की दर है ।

—शायद पिछली लडाई की वजह से—जाज ने कहा—कुछ साल पहले मर पादर वहाँ गये थे । कहते थे वही आदमी नजर नहीं आता । हर तरफ औरतें

—ओह, हाऊ आई विंग फार एनदर वार' एनदर एण्ड देन एनदर !—विली ने कहा ।

जाज ने आश्चर्य से विली की ओर देखा, फिर मेरी ओर । वह शायद कुछ कहना चाहता था, किन्तु फिर कुछ सोचकर उसने सिफ सिर हिला दिया । कहा कुछ भी नहीं ।

और शायद यह ठीक माँ था । लन्दन की उस खामोश गरम रात में 'वार बन्त दूर की चीज लगती थी—अपहीन और हास्यास्पद । उस पर बहस करना बार्दी भी मानी नहा रखता था । हुआ भी यही । हम बहुत जल्द विली की बात को भूल गए । उसके बाद हम देर तक अलग-अलग देगा की लडकियाँ क बारे में बातें करते रहे । लगता था, जैसे पुरानी भूल के भीतर से एकाएक नई भूल जाग गई हो ।

मैं स्पेन जाना चाहता था । उधर की लडकियाँ 'आह ! पगन ! लेकिन साला ने बीमा नहा लिया । अपने देग की बुँवारिया की बजिनियों का उह बहुत मयाल है । स्पेन विमी ने जस कुछ बन्त पुरानी रात कुरद गी हा ।

—तुम गय हा ?

—मैं जाना चाहता था—बन्त पहले ।

—सिबिल वार म ?

—तब मैं बहुत छाग था ।

—सिबिल वार हमार देग म शायद और जाज अचानक बुप हा गया । उसक धु धराय बाला पर पसीन की बूँदें चमक रहा मा ।

—आई डाण्ट लाइव सिबिल वार—विली ने कहा ।

हमारी बात फिर वही आ अटकी थी—बगटेल की उस गाली की तरह जो चारा ओर घूम फिरकर एक ही छेद में आ फँसती है। हमारा उससे कोई वास्ता नहीं था। वह लन्दन की बहुत खामोश और गरम रात थी और बार बहुत दूर की चीज लगती थी।

रास्त के दाईं ओर एक पुरानी टब से हँसी और सगीत का मिग्जुला स्वर बह आता था। टब के पीछे गली गली के अँधेरे कोने में दो छायाएँ—एक दूसरे से लिपटी हुई—बार-बार हिल उठती थी। ऊपर उठी हुई स्वट के नीचे एक सुडौल नगी टाग रह रहकर काँप जाती थी और फिर टटोलते हुए बिहल हाथों के नीचे मिच जाती थी।

—चलो, कुछ बियर पी जाए। बिना कुछ पिये मैं ठीक स सा नहीं सकता—
विली ने कहा।

मुझे हल्की-सी दुबिधा हुई। मेरी जेब में आखिरी दो शिलिंग पड़े थे, जो मैंने ट्यूब के लिए बचा रखे थे। जाज का हाल ज्यादा बेहतर नहीं दिखाई दिया। विली के प्रस्ताव को सुना अनसुना किए वह अँधेरे में सीटी बजा रहा था।

विली शायद समझ गया। जाज के काँचे पर हाथ रखकर उसने कहा—फिर की कोई बात नहा। यहाँ के लोग मुझे जानते हैं—एक जमाने में मैं यहाँ अक्सर आता था।

जाज का उपेक्षा भाव जचानक मिट गया, एक अजीब बचकानी-सी खुशी चेहरे पर फल गई।

—मैं थोड़ी-सी जिन लूंगा। आगा है, कल मेरा मित्र कुछ शिलिंग उधार दे सकेगा।

हमारे पाँच पब की ओर मुड़ गए।

दरवाजा खोलते ही आवाजों के एक गरम उफनते रेले में हम अपने में समेट लिया—घुएँ में घुँसती, उलझती, एक-दूसरी को छीलती आवाजें, जो कहीं निस्तार में पाकर गँदले, उबलते पानी की तरह एक ही गड्ढे में इकट्ठा होती गई थी। रोगानी थी, मद्धिम, घुएँ के घेरे में घिरी, जिसमें किसी एक चेहरे को पहचानना, उसे दूसरे से अलग कर पाना असम्भव था।

नीचे ब्रेसमेट था, कुछ सीढ़ियाँ उतरकर। कमी-कमार नाचते हुए जोड़ों की छायाएँ जीने पर गिर जाती थी। कमी बेंडोल और लम्बी, कमी इतनी छोटी बिलगता जैसे पारदर्शी जल-तले मछलियाँ ऊपर उठती हो और दूसरे क्षण ही डूब जाती हों।

हम कोने की मेज के इद गिद बैठ गए। विली कुछ देर बाद बियर की तीन बोतलें और गिलास ले आया। हम पीने लगे।

—पहले मैं यहाँ काम करता था। कुछ महीने रहा, फिर मन उब गया। इस पब का मालिक इटालियन है। बुरा नहीं है, लेकिन करता बहुत है। इस तरफ आम तो तुमसे मिलवाऊँगा—विली ने कहा।

—काफी टिप मिलता होगा ?

अॅश्लेज ज्यादा नहीं दत । बहुत हुआ तो एक छ पेनी । लेकिन काण्टीनेण्ट से जा टूरिस्ट आते हैं, उनकी बात दूसरी है । दिल उनका खुला होता है, लेकिन बेवकूफ व भी हाते हैं ।

—मुझे अब कोई भी काम मिल जाए मैं कर लूँगा—जाज ने कहा ।

भीतर की गाठा-बीच बियर न रास्ता बनाया है—जहाँ पहले बन्द सीक्वा था, अब वहाँ फड़फड़ाते पत्त हैं—उड़ने को आतुर ।

मैं अब ज्यादा दिन यहाँ नहीं रहूँगा—विली ने कहा—मेरा दोस्त जमनी मे है । हा सका तो एक दिन नहीं जाऊँगा—विली ने गिजास खत्म कर दिया । फिर उसे मेज़ पर उलटा कर दिया, एक भी बू द नहीं गिरी । बियर की साग गढ़ी पर छितर आई थी, जैसे रेत में कण हा—गोले और सफेद ।

मैं जमनी को नहीं सहन कर सकता—जाज ने फिर कहा ।

—देयर इज, रियल लाइफ ! हर बाने पर जवान लडकियाँ खड़ी रहती हैं ?

—विली ने कहा

—मैं जमनी को सहन नहीं कर सकता—जाज ने कहा ।

मैं हसने लगा ।

जाज न मरी आर रेखा । उसकी आँखें बहुत निरीह-सी हो आई थी ।

—सब लोग एक जस ही हैं—विली ने कहा ।

—लेकिन वे लोग जाज न इगारा किया—बाहर का ओर दरवाजे के बाहर, जहाँ महज अ धेरा था ।

—व लोग भी तुम सिफ डरते हो—विली ने कहा ।

एक पल के लिए जाज का हाथ, जो गिलास पर टिका था मिहर गया ।

—यू आर ए राटर—जाज न कहा ।

उसके स्वर में कुछ रहा होगा कि विली का चेहरा अचानक पीला पड़ गया ।

—गवा, मैं काफी बुरा आदमी हूँ । इस स्पष्ट को दुबारा मुह पर कभी न लाना ।

—आह ! सचमुच ?—जाज की आवाज काँप रही थी, जस बट हवा में लटकी रस्सी पर चल रही हो ओर नीच गड़डा हो, जहाँ बट कभी भी पिमल सक्ती है—ग्रेस यू आर ए राटर !

विली गिलास सेकर अचानक सटा हो गया जस यह कोई मल हो और नियम क अनुमार उस सटा होना ही हो ।

—एक बार फिर कहा—उसका गिलास जाज क सिर क पास सरक आया था । काँच पर बिजकी बियर का फेन रागना में चमक रहा था ।

जाज की अधमुँदी आँखें उस पर उठ आई—यस, यू आर ए राटर जाल राइट । गिलास-तले उसका मिर हिल रहा था । आदमी का सिर पूरे घड से अलग होकर बेचल अपनी धुरी पर इस तरह काप सकता है, यह मुझे काफी हास्यान्वद-सा लगा ।

विली ने गहरे विस्मय से उसकी ओर देखा और फिर हँसने लगा—शायद तुम ठीक हो मे बि, आई एम—वह फिर अपनी कुरमी पर बठ गया ।

हमन ज्यादा नहीं पी थी—सिफ किसी ने हमारे इद गिद एक भयावह-सा फदा डाल दिया था, जिसे छूते ही खून बहन लगता था ।

कुछ देर बाद पब का मालिक हमारी मेज के पास आकर खडा हो गया । गोल मटोल देह, किन्तु काफी सुगठित, रंग काफी पीला । छोटे-से माथे पर तेल से भीगे, स्याह धुँधराने बाल झुक आए थे ।

—और चाहिए ?—उसने मुस्कराते हुए विली की ओर देखा ।

—अभी है बाद मे—विली ने कहा । उसके स्वर मे पहले सा तनाव नहीं था, हालाकि तिरस्कार का स्पश हमसे छिपा नहीं रह सका—ये मेरे दोस्त हैं ।

इटालियन ने हमारी ओर देखा, कि तु उसकी भाखी मे कोई उत्सुकता नहीं जगी ।

—विली हमारे यहाँ काम करता था—उसने गब से विली की ओर देखा, माना उस हम लोग विली की तुलना में काफी तुच्छ जान पड रहे थे ।

—काफी देर से हो ?—उसने पूछा ।

जाज चुप रहा (ईश्वर भला करे, उसका सिर अब नहीं काँप रहा था) । मैं खाली गिलास से खेल रहा था, मेर हाथ रुक गए ।

—सिफ कुछ दिन मैंन कहा ।

—इज्जिट फाइन ?

—इट इज फाइन—मैंन कहा ।

—कोई काम ?—वह मेरे कमीज के कालर को देख रहा था । न जान कितने देशों की धूः उस पर जमा थी ।

—अभी कुछ नहीं

—विली को काम मिल सकता है, लेकिन यह एक जगह टिकता नहीं—उसने विली की ओर देखा, कुछ प्यार से, कुछ उलाहने से ।

—मैं तुम्हारे यहाँ रह सकता था । सिफ तुम विली ने कहा ।

इटालियन का चेहरा अचानक धुन्ध-सा हो आया—तुम जानते हो उसने कहा ।

—आह—विली न कहा—तुम सब लोग एक जैसे ही हो ।

—बहुत गरमी है—जाज न कहा ।

—तुम जानते हो इटालियन ने बहुत आग्रह से कहा ।

—न मैं कुछ भी नहीं जानता। मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि मैं अभी काम करूँगा—विली ने अपनी कुरमी पीछे ठेल दी और उठ गया हुआ।

किंतु इटालियन ने शपटकर उस कंधा से पकड़ लिया। उसकी आँखें सहमा थाप्राण-भी हो उठी। विली की लम्बी पतली देह के सम्मुख उसका ठिगना गेंदनुमा शरीर गवाणव बहुत दयनीय-सा दीगने लगा।

—बियो! तुम जानते हो महाँ पर

विली ने धक्का देकर हाटके स अपना कंधा छुड़ा लिया। उसकी पीठ हमारी मेज के सहारे टिक गई। जाज ने बियर की बोतल को हाथा से पकड़ लिया। एक क्षण के लिए लगा, जैसे हम किसी जहाज के डगमगाते ढक पर बठे हा।

आरकेस्ट्रा घुसू होते ही पव के अलग-अलग गेना व लडके-लडकियों के जोड़े बेसमष्ट की सीड़ियों पर उतरने लगे थे।

इटालियन न पीछे मुडनर भी नहीं देखा। वह सिर्फ हवा म ताव रहा था।

विली कही भी नहीं था।

उसका साली गिलास हमारी मेज पर रखा था। जाज न बातल स हाथ उठा लिया। उसकी ट्पेली के पसीने की पूरी छाप काँच पर एक सफेद धव की तरहूँ अ वित हा गई थी।

इटालियन ने हमारी ओर दया। लगा, जैसे वह हमें पहचान न पा रहा हो। फिर अवाग भाव से दोनों हाथ फला लिए थे।

—पागल है है नहीं?

हम चुप रहे। उस समय वहाँ कुछ था जिसका हमसे कुछ सम्बन्ध नहीं था जिसकी भ्लान छाया चुपचाप हमारे बीच आ सिमटी थी। वह भारी धके कदमों से काउण्टर की ओर मुड गया।

बहुत गरमी है—जाज ने कहा—तुम्हारे पास कितने पैसे हैं?

—क्यों?—मुझे अचानक खीझ-सी हो आई सब पर।

—डड गिलिंग मेरे पास है। इसम लागर आ सकती है?—उसने पूछा।

मैं विली के खाली गिलास को देख रहा था कहाँ हो सकता है?

भडिम रोशनी के नीचे जूतो और सडिलो की सटखटाहट, इद गिद टूटती, बे शकल आवाजो का सलाब फल गया था, जिसके एक छोर पर हम थे—एक मेज जाज, लागर के दो गिलास। सब-कुछ बसा ही था जसा हमने पहले-पहल देखा था।

सिफ अब एक कुरमी खाली थी।

—पायद वह नाराज था मैं अपने को रोक नहीं सका—जाज ने कहा।

—तुमने उसे कुछ भी नहीं कहा?

—मैं अपने को रोक नहीं सकता—उसने मेज पर पडा मेरा हाथ जोर से पकड़

लिया। मरी अँगुलिया उसकी हथेलियाँ-तले चिपचिपाने लगी।

—तुम्हें नहीं मालूम मुझे बाक्सिंग का बहुत शौक है। जब मैं पहले पहल रुदन आया था और बेकार नहीं था तो मैं हर रोज बाक्सिंग के लिए जाता था। लेकिन मैं आज तक एक बार भी नहीं जीत सका हूँ। सुनते हो, एक बार भी नहीं। मुझमें एक अजीब तनाव-सा फलने लगा है। मैं प्रतीक्षा करता हूँ कुछ लम्हा तक, कि दूसरा आदमी मुझे हिट करे और जब वह नहीं करता तो मेरा खून खौलने लगता है। मैं आने वाले खतर का मुँह नहीं जोह सकता। ठीक मौका आन से पहले ही मैं अघाघुघ द्रष्ट पडता हूँ हालांकि मैं जानता हूँ, यह गलत है कि रुटना इस तरह नहीं हाता। और इसीलिए मैं घर से भागकर यहाँ आ गया हूँ—मैं अपन पिता की तरह प्रतीक्षा नहीं कर सकता।

—और वह तुम्हारे पिता किसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ?

—मुझे नहीं मालूम मुझे राजनीति में कोई दिलचस्पी नहीं है। उसका माथा लागर के गिलास के पीछे छिप गया।

मैंने अपना हाथ घीरे से छड़ा लिया वह पसीन में भीगा था। मैं उसे अपन पास ले आया, जैसे वह कोई पालतू चीज हो—अँगुलियों से गुँथा हुआ एक सफ़ेद मांस का लोथ, उसके ऊपर भूर बाल, बहुत-से बाल, जो उसके स्पस से अभी तक दबे थे। और मैंने सोचा, हम सचमुच कितनी कम बार अपने हाथा का इस तरह देपत हैं, जैसे वे हैं, जैसे वे असल में हैं और तब भ्रम हाता है कि जो चीज उनकी पकड़ में आएगी वह हमारी नहीं हो सकती।

—जानते हो, मैंने विली का राटर क्या कहा ?

—इट इज रॉथिंग—मैं उसके चेहरे को सीधी आँखों से नहीं देख पा रहा था।

—क्याकि असल में मैं खुद एक हूँ। मैं अभी तुमसे कहा था कि मैं अपन पिता की बहुत प्रद्र करता हूँ (हालांकि यह उसने मुझे कभी नहीं कहा था) तुम उन्हें नहीं जानते। वह जीवित भी हैं या नहीं मुझे नहीं मालूम। वे उनक पीछे थे।

—व कौन ?

—वे एक बहुत ही ठंडा बातक साप की कुण्डली-सा उसकी आखा में बठ गया था।

तुमने कभी नहीं देखा—उसने मेर हाथ को अपनी हथलियों में बहुत ही सख्ती से जकड़ लिया। उसके काले चट्टे पर सिफ सफ़ेद दाँत नजर आ रहे थे—एक कान से दूसरे कान तक खिंचे हुए—और मैं समझ नहीं सका कि वह हँस रहा है या सिफ एक भूले क्षण में उसके दाँत खुद-ब-खुद खुले रह गए हैं।

—मैं यहाँ सुरक्षित हूँ एण्ड फॉर दट आई दट हिम, आई दट हिम लाइक हेल।

हम चुपचाप पीते रहे। भरे आगे घड़ी की डायल थी जिस मैंने पहली बार देखा था। मैं सोचता हूँ मुझ एक सिगरेट पीना चाहिए मुझे लगता है मैंने लम्बी मुद्दत स सिगरेट नहीं पी।

—तुम क्या सोचते हो?—उसने स्वर में बच्चा का सा आग्रह था।

—कुछ भी तो नहीं।

—यदि तुम मेरी जगह होते, तो क्या करते?

—तुम्हारी जगह पर?—मैं हँसन लगा। मुझे आज तक यह भी नहीं मालूम कि मुझे अपनी जगह पर क्या करना चाहिए।

—लेकिन तुमने अवश्य निराप्य कर लिया होगा अपना देग छोड़ने से पहले?

—शायद बचने के लिए।

—किससे बचने के लिए?

—अपने देश के लोगो से शायद और चीजा से भी जो अब मुझे याद नहीं।

और तब उस क्षण मुझे लगा की ज्यादा पीना शायद सम्भव नहीं होगा। मुद्दह से कुछ भी नहीं खाया था। खाली अतडिया को लागर भिगो गई थी। एक नीली-हरी सी धुंध वही भीतर रास्ता टटोलती हुई हर उस खिडकी के आगे जमा हो गई थी जहाँ से मैं बाहर देख सकता था। वहाँ घड़ी की डायल थी " बहुत सफेद हवा में डोलते एक बहुत पुराने मुरदे की भाँति, जो न जाने कब से मेरे सग घिसट रहा था

तुम हँस क्यों रहे हो?

मुझे यह जानकर काफी आश्चर्य हुआ कि मैं हँस रहा हूँ और जब मैंने जान लिया कि मैं हँस रहा हूँ तो फिर अपने को राकना बेमानी-सा लगा।

—क्या बात है?

—कुछ नहीं, कुछ याद आ गया था—मैंने टालते हुए कहा। याद मुझे कुछ भी नहीं आया था।

—क्या याद आ गया था?—वह मुझ पर झुन आया जैसे अभी गले पर लटक जाणगा—बताओ क्या याद आ गया था?

—जानते हो तीन दिन पहले मैं जेल जाने वाला था। मैं बाल-बाल बच गया।

असह्य दबाव तले कोई भी चीज याद की जा सकती है और मुझे सबमुच तीन दिन पहल की एक अजीब घटना याद हो आई।

हाँ सबमुच मैं बाल-बाल बच गया (मुझे इस तरह के मुहावरे बहुत पसंद हैं, और मैं उन्हें मोच-बेमोचो दुहराता रहता हूँ)।

—जानते हो लन्दन में मैं अपन एक दोस्त के घर ठहरा हूँ। पिछल कुछ दिना स उसकी गल फ़ोटो फ़िनलड स उसका सग रहन आई थी। कमरा एक ही था, इसलिए

मैं बाहर रहता था। मैं दिन भर म्यूजियम की लाइब्रेरी में रहता और रात को सान के लिए यूस्टेण्ड स्टेशन चला जाता था। हर रोज नियत समय पर मेरा मित्र मुझे कुछ शिफिंग दे जाता था। उस शाम किसी कारणवश वह मेरे पास नहीं जा सका। मेरे पास सिर्फ दस पेनी बचे थे। दिन भर म्यूजियम में बठे मूख का कुछ पता नहीं चला लेकिन रात होते-होते मैं अपन को नहीं रोक सका। उस समय तक किंग्स थ्रस के सस्ते रेस्तरा बन्द हो चुके थे और वस म बैठ कर शहर के 'सेण्टर' में जाने की सामर्थ्य नहीं थी। मैं काफी देर तक वारेन स्ट्रीट स्टेशन के इद गिद बढहवास-सा घूमता रहा। आखिर में एक ग्रीक रेस्तराँ दिखाई दिया, जो ऊपर से काफी सस्ता दिखाई देता था। आलू के चिप्स और टोस्ट का आडर देकर मैं भीतर बठ गया। तुम जानते हो ये चीजें सबसे सस्ती होती हैं—ज यादा से-ज यादा आठ पेनी। मैं काफी निश्चित था। कुछ दर बाद अनायास मेरी निगाह सामने दीवार पर जा पडी प्राइम लिस्ट पर जिसे शुरू में घवराहट के कारण मैं नहीं देख सका था। टोस्ट और चिप्स के दाम डेढ शिफिंग थे और मेरे पास दस पेनी से आधी पेनी भी ज यादा नहीं। फिर जानते हो, मैंने क्या किया? मैं एकदम खडा हो गया (इस तरह और मैं जाज के सम्मुख खडा हो गया) और जोर से चिल्लाया, गुड ईवनिंग? अरे, बाहर कसे खडे हो? (जोर में सचमुच चिल्ला रहा था—जाज के मुँह पर) होटल का मालिक उत्सुकता से मेरी ओर देख रहा था। मेरे एक दोस्त बाहर खडे हैं उनसे मिलकर अमी जाता हूँ। टोस्ट और चिप्स की प्लेट मेज पर छोडकर मैं आगे बढ़ा, दरवाजे की तरफ बिल्कुल सधे कदमों से इस तरह (और मैं सचमुच चल रहा था—मेजा के बीच) और दरवाजा पार करते ही तुम जानते हो, मैंने फिर मुडकर नहीं देखा (मैं फिर मुडकर जाज के पास आ गया था लागर का एक लम्बा घूँट पीकर मैं बठ गया था) मैं बहुत देर तक भागता रहा था।

—और वह तुम्हारे पीछे था?

—नहीं? हँसी की बात तो यही है कि वह मर पीछे नहीं था और फिर भी मैं एक अँधेरी गली से दूसरी अँधेरी गली में भागता रहा था और देखो मरी जब म दस पेनी बच गए थे, हालांकि मेरी भूख बिल्कुल मिट गई थी।

—तुम भी खूब हो!—जाज ने हँसते हुए कहा।

मुझे काफी खुशी हुई कि वह हँस रहा है। मेरा मित्र और उसकी प्रेमिका भी इसी तरह हँसने लगे थे, जब दूसरे दिन मैंने उहे यह घटना मुनाई थी। हालांकि मुझे हमेशा आश्चर्य होता है कि लोग, विशेषकर वे लोग जिन पर ऐसी घटनाएँ बीतती हैं बाद में किस तरह आसानी से उन्हें हल्का-सा रग दे देते हैं। क्याकि देखो, उम घडी म, बिल्कुल उस घडी म, जब घटना सचमुच घट रही होती है आदमी कितना बढ हवास-सा हो जाता है, बगलों से ठडा पसीना टपकता हुआ कमीज से चिपक जाता है और भीतर बिह्वल-सी कातरता भर आती है बावजूद हमारी उम्र के बावजूद हमारा

अनुभव थे। मैं तो जानता हूँ कि उस रात जब मैं दस पेनी जेब में दबाकर अघेरी राइव पर भाग रहा था, तो बाई बार-बार मुझसे कह रहा था—यू फकिंग फूल, यू ईडिपट यू

—तुम भी कमाल हो!—आज ने कहा। जब उसने तीसरी बार यही बात कही, तो मुझसे नहीं बठा गया। आँखा के आगे घड़ी का डायल फिर घूमने लगा और मैं टायलेंट की तरफ बढ़ गया। टायलेंट नीचे बेगमेण्ट में था। मैं जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ उतरने लगा। मुझे डर था, वही सीढ़ियाँ पर कुछ न हो जाए। मैं मुँह पर हाथ रख लिया और बहुत रहस्यमय ढंग से मुस्कराने लगा।

हुआ कुछ भी नहीं—न सीढ़ियों पर, न बाग बसिन में, जिस पर मैं देर तक मुका रहा था—इस इन्तज़ार में कि कुछ बाहर आयेगा। और अब घड़ी की मफेद डायल नहीं घूम रही थी। मैंने पम्प गाल दिया था ताकि मैं निश्चिन्त होकर एक एक चीज़ याद कर सकूँ और अपनी आवाज़ न सुन सकूँ (रात को इस घड़ी में यहाँ क्या कर रहा हूँ? नहीं ऐसा नहीं चल्गा, मुझे सिलसिल से ब्योरेवार हर चीज़ याद करनी चाहिये—जब यह बहुत महत्वपूर्ण हो, जैसे बाई बड़ा 'सत्य' इस पर निर्भर हो)। 'ब्योरेवार यह शब्द मुझे जँच गया था और मैं बार-बार इस जवान पर फेर रहा था क्याकि मैं कितनी देर तक चीज़ों को याद करने में बजाय यही दुहराया रहा कि मुझे हर चीज़ 'बारबार याद करनी चाहिए।

टायलेंट से बाहर आया, तो पाँव ठिठके-से रह गये। नाचते हुए जोड़ों के भँवर में घिर गया था। लोग धक्का देकर जागे निपल जात थे और मैं कभी दायें कभी बायें एक कठपुतली की तरह घूम जाता था। जब कभी अपने पाँव जमान का यत्न करता तो डॉसिंग प्लोर परी-सले सिक्कड़ने लगता और लगता जैसे मैं एक बहुत तबड़ी से घमने लट्टू पर खड़ा हूँ। तभी मुझे अपने कंधों पर एक अजीब-सा बोझ मालूम हुआ।

—तुम यहाँ हो?—विली की दाढ़ी मेरे माथे को छू रही थी—और आज?

—वही है—मैं ऊपर की आर इशारा किया।

जिस लडकी के सग वह नाच रहा था उसका चेहरा उसके सीन तले छिप गया था—सिर्फ उसके ब्लेण्ड बाल दिखाई दे जाते थे।

—तुम आओगे नहीं? तुम्हारी लागर मैंन कहा।

—आऊँगा। तुम नाचाग नहीं?

इस बार लडकी ने चहरा ऊपर उठाया। उसके नंगे कंधों पर पाउडर में हल्क निशान थे और उसने सस्ली छोट की समर-स्वट पहन रखी थी। हाँठा पर पमीन की बूँदें थी जो शायद देर तक नाचने के कारण लिपस्टिक के ऊपर छितरा आई थी।

भीड़ में खड़े रहना असम्भव था। वे मेरे नजदीक ही बहुत धीमे चदमा से नाचने लगे थे—एक बहुत तग घेरे के भीतर—कभी विली का सिर मेरे पास सरक आता,

कमी लडकी के ब्लाण्ड बाल ।

—कमी है ?—विली न धीरे से उसके बाला को झिझोड दिया । वह हँस रही थी ।

—यह बहुत खराब है है न ?—उसने हँसते हुए कहा और पहली बार मुझे लगा, जैसे उसकी आँखें साती-जागती गुडिया-सी हैं, जो सिर पीछे होते ही मुँद जाएँगी और सीधा होते ही खुल जाएँगी ।

—नाचोगे ? मे वि विद हर !—विली न कहा ।

वे दोना घूम रहे थे बहुत ही हलके स्टेप्स के सग । जब जिसका चेहरा मेरे पास आता, वह मेरे बाना म कुछ कह देता ।

—रसक हमजोली वहाँ बँठे हैं मर जाएँगे मुझे इसके सग देखकर ।—विली ने कहा ।

—तुम नाचोगे नहीं ? मे वि विद मी—लडकी न कहा ।

—वह इटालियन मना करता था—मैंने विली से कहा ।

—मरने दो उस—विली ने कहा ।

आरवेस्ट्रा की उस घिसी पिटी धुन में जाने कसे मौत्साट के 'लिटलनाइट्र म्यूजिक की हल्की-सी आहट ऊपर तिर जाती थी—महज आधे मिनट के लिए—और तब मुझे लगता था, जैसे किमी ने मेरी सास को धागे की तरह अँगुली में लपेटकर खींच लिया ही ।

—जिन पिओगे ? पसे यह दगी—विली ने धीमे स्वर म फुसफुसाते हुए कहा ।

—मे वि विद मी ।—लडकी न वसे ही उदासीन स्वर म कहा ।

इससे पहले कि मैं कुछ कह पाता, नाचते हुए जोडा की भीड उह मुझसे बहुत दूर घसीट ले गई । वे अचानक आँखा से ओझल हो गये ।

मेरा सिर अब भी घूम रहा था, कि तु यह चकराहट बँसी नहीं थी, जमी टायलट जान से पहले । अब इस चकराहट में एक विचित्र-सा हलकापन था, जैसे घुघ की जगह वहाँ सिफ छितरे, बरसे हुये बादल हो और असीम खुलापन हो ।

भीड के भीतर रास्ता टटोलना मुमम नहीं था । बेंसमेण्ट की सीढ़ियों के पास आकर मैं रुक गया । एक अदम्य इच्छा हुई वही सीढ़िया पर लेट जाने की, सो जाने की ।

—हलो !—मेरे हाथ को किसी ने जकड लिया था । पीछे मुडकर देखा, पब वा मालिक इटालियन सडा था । शायद वह दूर से भागकर मेरे पास आया था । हाथों पर कमीज की मुडी हुई बाँह लटक आई थी । वह हाफ रहा था, जैसे आस-पास की हवा उसके साँस लेने के लिए बिल्कुल नाकाफी हो ।

—सुनो वह तुम्हारा दोस्त है ?

मैंने कंधे सिकोड लिये ।

—क्या तुम उसे यहाँ से नहीं ले जा सकत—मेरा मतलब है, इस जगह से ?

हमारे चारा और नाचत हुए लोगों का दायरा अभी बहुत तंग हा जाता था एकदम फल जाता था। बड़ ब' आगे कोई व्यक्ति लाउडस्पीकर को दोनो हाथा से पक कर गाने लगा था।

हम दोना के बीच हमारी निगाहो के अलावा बाई और नही था।

—तुम क्यों नही बह देते ?—मैंने कहा।

—मैं उससे कुछ भी नहा बह सक्ता बह मेरी बात अभी नही मानेगा।

—लेकिन क्यों बह यहाँ क्या नही रह सकता ?

—यह जगह उसके लिए ठीक नही है—एक अवस-गी वातरत्ता उसके म्बर उमर आई—मैं उसे पहले भी कई बार मना कर चुका हूँ।

मेर मन म फिर इच्छा हुई—वही सीढ़ियो पर लेट जाने की।

—देरिये—मैं कुछ भी नही कर सकता। हमारी मुलाकात कुछ घटे पहले हुई थी आप विश्वास नही करते ?—एक क्षण के लिये मुझे उसके दयनीय चेहरे से घृणा हुआ जैसे मैं किसी गिलगिली-सी चाब था छु लिया हो—मैं उसे ठीक से भी नही जाना यह भी नही जानता, उसका पूरा नाम क्या है—मैंने कुछ इस तरह कहा, जैसे जिन्द में पूरा नाम जानना बहुत महत्वपूर्ण हो, जैसे उसके बिना कुछ भी नही हो सकता।

एकाएक उसने मेरे दोनो हाथ पकड लिये। वह बिलकुल मेरे पास सरक आ

—तुम तुम यही रहोगे ?

—हाँ—मैंने सिर हिलाया—जब तक तुम बाहर न फेंक दो।

उसकी पकड ढीली हा गई। कि-तु उसकी आँखें अब भी मुझे टटाल रहा थी मैं सीढ़ियाँ चढ़न लगा। मुझे बराबर यह लगता रहा कि अब भी उसने मुझे पीछे पकड रखा है ह ईश्वर मैं एक सिगरेट पी सकता हूँ। लगता है, मैंने एक मुद्दत सिगरेट नही पी।

जब मैं घकके खाता और अपनी सामग्य के अनुसार दूसरो को घकके देता हूँ अपनी मेज के पास पहुँचा, तो आज सब के प्रति तटस्थ होकर सो रहा था। उस सिर मेज के किनारे पर टिका था, उसकी देह कुरसी पर सिकुड गई थी, अधमुँदी आँक बीच सफेद पुतलियाँ मली रुई के फाहा-सी उमर आई थी। पहले मुझे भ्रम हुआ वह मुझे देख रहा है, जो सच नही था। उसके होठो के कोरा पर धूक बह आया था चाक की महीन रेखा-सा, सूखा और सफेद, जो मैंन रुमाल से सबकी आँख बचाव पाछ दिया।

उस रात पहली बार मुझे लगा कि वह उम्र में बहुत छोटा है—हास्यास्पद से छोटा और अनजान।

मेरा गिलास ताली था। मैंने थोड़ी-सी लागर उसके गिलास से अपने गिर म उ डेल ली। एक क्षण के लिए लगा, जैसे वह अधमुँदी आँखो से मुझे देखता।

मुस्करा रहा है और उसमें हलका-सा व्यंग्य छिपा है। शायद बन रहा है, मैंने सोचा, सो नहीं रहा और मुझे देख रहा है। लेकिन शायद यह भी मेरा भ्रम हो, मैंने सोचा और पीन लगा। फिर मुझे कुछ अवेला-सा लगा। सोचा, अपने मित्र को टेलीफोन कर दूँ हो सकता है, उसकी गल फ्रॉड अब तक चली गई हो और मैं उसके कमरे में सो सकता हूँ। लेकिन यदि वह हुई, तो उसे बुरा लगेगा। इसे उठा दूँ, यह कब तक ऐसे सोता रहेगा, मैंने सोचा। इतनी उम्र में घर से भाग आया है और अब—अब सो रहा है। मुझे एक बहुत पुरानी बात याद हो आई। यूरोप आने से पहले वह घर में आखिरी रात थी। माँ बार-बार उठती थी और पानी पीने के बहाने मुझे देखती थी। अपने घर की छत पर मेरी आखिरी रात थी—वह जुलाई की रात थी और मुझे दूसरे दिन चले जाना था और बाबू मेरे बिस्तर के पास खड़े रहे थे, सोचा था, मैं सा रहा हूँ मैं सब-कुछ दख सकता था वैसे भी हमारे शहर में जुलाई की रातें बहुत उजली होती थी—आखें मूँद भी लो, तो भी सब-कुछ दीखता था। फिर सहसा दृष्टि हुई कि मैं बाहर चला जाऊँ यह बहुत आसान था। पहले मैं अपनी कुरसी से उठ खड़ा हूँगा, फिर दरवाजा खोलूँगा और बाहर चला आऊँगा जस्ट टु कम आउट यह बची बात है मैंने सोचा उनके मुँह पर धूक फिर बह आया था, हाँसे से बहता हुआ ठुडकी तक, जहाँ नीले काटो से बाल उग आए थे मैं रुमाल से फिर उसका मुँह पोछ देता हूँ।

आवाजें एक बदहवास-सी चीखें।

वेसमेण्ट की दीवार पर छायाएँ डोलती जाती हैं—एक भयंकर दुःस्वप्न-सी। कुरसिया को खींचने की आवाज, अटपटी-सी हँसी लेकिन है कुछ नहीं। मैं उठता नहीं गिलास में अब भी लागर बची है और मैं उठ नहीं सकता और सब अचानक उस क्षण मुझे अपने में एक अजीब-सी शान्ति महसूस होती है घनी, चिलचिलाती, गरम रेत के अन्तहीन फलाव-सी और मैं उसे पकड़े रहता हूँ।

जस्ट टु कम आउट, जस्ट टु

मैं पूरी शक्ति से जाज को झिझोड़ने लगता हूँ।

वह एकदम हड़बड़ाकर उठ बठा और विमूढ़ भाव से मुझे देखने लगा—कुछ कुछ उस ट्रॉट जानवर की तरह, जो ऐन मौके पर अपना 'पाठ' मूलकर आस-पास खड़े तमाशबीनों को देखने लगता है। फिर सहसा उसकी आँखें अजीब-सी आतक-प्रस्त हो आईं।

—बात क्या है ?

—चलो यहाँ से चलना होगा।

—लेकिन क्या अभी ?

वह कुछ भी नहीं जानता। मैं जल्दी में निश्चय नहीं कर पा रहा था कि क्या

उस कुछ भी बताना उचित होगा।

—क्या मैं सा गया था?—उसने पूछा। न जाने मेरे चेहरे पर क्या था कि वह एकाएक शक्ति-सा हो उठा।

—यह शोर कसा है?

उसका चेहरा बिलकुल बसा हा गया, जब हम सोडा फव्वारी के बाहर अंधेरे में खड़े थे। अब वह घड़ी कितनी दूर लगती है और कितनी अप्रामाणिक?

—हम चलना होगा बाहर।

बाहर लदन की रात है हमारी प्रतीक्षा करती हुई—हम निगल जाने के लिए आतुर।

—विली कहाँ है? हम उसके बिना नहीं जा सकते।

—वह बह आ नहीं सकता।

पब का दरवाजा खुलता है कुछ लोग हडबडावर भीतर घुसते हैं।

दे आर देयर द डमड एक बहुत ही भद्दी गाली और आवाजों मक्खिया की मिनमिनाहट की मानिन्द अधीन।

—मैं उसका हाथ पकड़ घसीटता हूँ।

—मैं जाऊँगा नहीं

—तुम पागल तो नहीं हो?

—वे कहाँ हैं

—वे—मैं तुम्हें म उसे उठा देता हूँ। वह बिलकुल मेरे सामने खड़ा है—बताओ, वे कौन?—मैं उसके कंधे हिलाता हूँ और वह

—बोका, वे कौन?

—यू आर ड क ! उसने कहा और एक झटके से अपने को छुड़ा लिया।

गायक यह सच है मैं सोचा गायक मैंने बहुत पा ली है। इस सवाल से मुझे बहुत सात्वना मिलती है।

—तुम यही रहोगे?

—मैं वहीं भी रहूँ—उगन कहा।

—मुनो—मैं बीच की कुरमी हटान की चेष्टा करता हूँ।

—यू आर ड क !—वह पाछ हट गया।

मैं जाने लगा। वह भी सचिन मुझसे अलग। लगा उस यह कोई खेल है, जिसमें दा व्यक्ति आत्मा पर पट्टी बाँधकर चलते हैं और वे समझते हैं कि वे एक-दूसरे से दूर जा रहे हैं सचिन दरअसल वे एक-दूसरे से निश्चित तरह से आते हैं।

दरवाजे की तरफ पहुँचे मड आली है अपजली सिगरेटों के टाँ, गाली गिलास और बातों कुरसिया पर रख शाम के भसवार, पग के एक जाने से गिरी हुई

लिपस्टिक की डिब्बी, जिसे हड़बड़ाहट में कोई स्त्री उठाना भूल गई थी और मुझे लगा, जैसे कोई घटना अचानक हुई होगी, बिल्कुल अप्रत्याशित रूप से, और सब लोग बिना किसी तयारी के भागती भीड़ के भँवर में फँस गए हंगे।

विली कहाँ है ?

और यह इटालियन

आगे सोचना नहीं हुआ। दरवाजा झपाटे में खुला था और मुझे लगा, जैसे एक झटके से जाज मुझसे अलग हो गया है— आखिरी लमहे में (या सबसे गुरु के लमहे में)। मैंने कोणिस की कि उसे अपने से जकड़े रखूँ जैसे यह अपन में एक महत्वपूर्ण चीज है, किन्तु मेरा सिर सनसनाता हुआ नीचे की तरफ घूम गया। जो हाथ मैंने जाज को पकड़ने के लिए फलाया था वह मुड़ता गया। छत, न यह छत नहीं है सिर्फ राशनी है— एक अजीब दग से झूलता हुआ बल्ब और मेरी बांह मुड़ती गई, (डोप्ट लट देम एस्केप—एक पूतवारती-सी आवाज फिर वह भी नहीं) और वह एक तख्ते की तरह कांप रही थी और उसे मैं देख सकता था कांपत हुए जैसे वह मेरी बांह न हो। कोई बसता जा रहा है आखिरी बिंदु तक और वहाँ पहुँचने से पहले ही टूट जाती है समूची देह में न, यह पीडा नहीं है पीडा की एक भीमा हाती है और उसके परे उसकी पहचान खत्म हो जाती है

आई से लीव हिम एलोन यह क्या इटालियन की आवाज है ? मुझे हलका सा आश्चय होता है। मेर ऊपर मुझे हुए चेहरे एक-एक करक उठ रहे हैं, लेकिन मैं उन्हें देख नहीं सकता सिवाय उनकी गरम सामा के, जो गन् को बार-बार छू जाती हैं—फिर वह भी नहीं।

—तुम उठ सकते हो ?

मैं अपनी बांह को देखता हूँ वह अब फग पर पडी है—आश्चय है, वह अब तक मुझसे जुडी है।

मैं बठ गया हूँ। फिर अनायास मेरे हाथ गाला पर चले जाते हैं। व गीले हैं व आसू हा सकते हैं इस पर मैं विरवास नहीं कर मवा—वे बेहूदा दग से खुद-ब-मुद निकल आये थे और मुझे पता नहीं चला था कुछ उम व्यक्ति की तरह जो सुबह अपने विस्तर को भीला पाता है और विरवास नहीं कर पाता कि उसने ही

—कुछ पिओ !—इटालियन मेर इद गिद मँडरा रहा है।

—विली कहाँ है ?—मैंने पूछा।

वे उसे मार डालेंगे मैंन तुममे क्या कहा था ?—उसका गला अजीब दग से रूँध गया है।

—क्या कहा था ?—मुझे अब कुछ भी याद नहीं आता।

—तुम्हें भात्रूम है। तुम अगर उम अपन सग ले जाते तो कुछ भी नहीं होता।

—कुछ भी नहीं होता लेकिन जो हुआ है, इसे कोई रोक सक्ता, यह कोई भी नहीं जानता ।

—अब मैं जाऊँगा—मैंने कहा ।

—वहाँ ?—इटालियन दरवाजे के सामने खड़ा था ।

—कहीं भी बाहर—चारों ओर देखा, आज वही भी नहीं था । मुझ हल्की सी खुशी होती है ।

—बाहर ?—इटालियन को शायद विश्वास नहीं हुआ, वह शायद निश्चय नहीं कर पा रहा था कि किस सीमा तक मैं पी चुका हूँ । किस सीमा तक वह मुझे गम्भीरता से ले सकता है ।

—इस समय नहीं वे बाहर खड़े हैं ।

—मुझे—मैंने बहुत सहज भाव से कहा—मैं कुछ भी नहीं करूँगा । मैं सीधा घर चला जाऊँगा ।

—वसी बात करते हो—इस बार वह एकदम ममक-सा उठा—वे जानते हैं तुम विली के सग आये हो तुम उनसे बचकर नहीं जा सकते ।

बहस करना व्यर्थ था, वह मानेगा नहीं ।

बाहर एकाएक कालाहल बढ़ गया है एक क्षण के लिए टेढ़ी सी उमठन मेरी पीठ पर सरकन लगती है—बर्फ के डले की तरह । इस मैं पहचानता हूँ । यह डर है बहुत शुरू का डर अपने म बिलकुल नगा—बिलकुल नीरव ।

मुझे लगा, जैसे मैं मुस्करा रहा हूँ ।

—तो तुम मुझे एक छोटी द्विस्वी दे सकते हो ?

वह कुछ देर तक मुझ घूरता रहा । मैं आगे घिसट आया था । हम दोनों के चेहरे इतने पास थे कि बाहर के शोर के बावजूद मैं उसकी माँसा की मुन मकना था ।

—तुम जाओगे नहीं—सदह और अनिश्चय स उमका स्वर एक तनाव म बिच आया था ।

—मैं पागल नहीं हूँ ।

वह कुछ देर तक घुपचाप मुझे घूरता रहा ।

—तुम्हें यहाँ छोड़कर मैं नहीं जा सकता—उसने कहा ।

एकबारगी जो म आया कि मैं उसका पमीने म लपपय गाँ माल, गदराण चन्दे का अलग-अलग हिस्सा म तोड़ हूँ बिल्कु मैं बस ही मुस्कराता रहा ।

—मैं यही रहूँगा तुम्हारे लिए नया ता द्विस्वी के लिए । तुम मरा पना मो विश्वास नहा करत ?

इस बार उसका हाठ एक अत्यन्त गिन हँसा म पल गया । उस हँसी म एक बिचग निरीहता छिपी थी, मानो वह हँस कर मुझ अपन का विश्वास दिला रहा हा कि उमन

मुझ पर विश्वास कर लिया है ।

वह काउण्टर की ओर बढ़ा, जहाँ विभिन्न शराबों और बियर की बोतलें रखी थी । वह बार-बार पीछे मुड़कर मेरी ओर देख लेता था ।

मैं सदा रहा ।

स्कॉच की बोतल उसन काउण्टर पर रख दी । फिर मेरी ओर देखा जैसे हम दोनों के बीच कोई रहस्यमय समझौता हो ।

हमारा मौन जैसे इन आवाजों से बढ़ा था, जो लहरों की मानिंद उठती थी—एक-दूसरे से उलझी हुई उठती थी, दरवाजे से टकराती थी और फिर अन्तहीन अचकार में बिखर जाती थी ।

वह गिलास घों रहा था । पम्प से बहता पानी और चमकीले गिलास पर फिसलती हुई उसकी एक-एक बूँद—म उन बूँदों को देखता रहा और मुझे बराबर महसूस होता रहा कि मैं उलटी करूँगा । मैं नगे काँच पर बहते पानी को नहीं देख सकता मेरे भीतर एक अजीब-सी झुरझुरी फलने लगती है मैं आगे बढ़ता हूँ, दरवाजे की तरफ । उसकी पीठ अब भी मेरी तरफ थी पम्प से बहते पानी की आवाज मेरे दिल की घड़कन को ढकती रही और तब उस लम्हे अचानक मुझे लगा जैसे अब मैं चाहूँ तो भी नहीं मुड़ सकता, जैसे खुद मेरा अपनी टाँग पर, अपने पर, कोई नियंत्रण नहीं रहा था जैसे मैं खुद अपने से मुक्त हूँ ।

और दरवाजा खुल गया दूसरे क्षण मैं बाहर था ।

बाहर अँधेरे में ।

जस्ट टु आउट' मैंने अपने से कहा ।

वह गर्मियों की एक खुली और नरम रात थी एक विराट, बनले जंतु की तरह खामोश जो दिन भर की थकान के बाद अपनी माद में समूची देह फलाकर सो गया हो ।

पत्तीना सूख रहा था । मैंने भरपूर साँस ली एक बार 'दो बार' हल्का-सा पछतावा होता है 'म हिल्ली छोड़कर चला आया था इस समय यदि वह मेरी देह के भीतर होता मैं फिर साँस खींचता हूँ काश, मैं एक सिगरेट पी सकता । मैं बड़ी सड़क छाड़कर एक सँकरी लेन में चला आया हूँ । 'अक्सर गलियों के नुक्कड़ पर सिगरेटों की ऑटोमॉर्गिनें लगी रहती हैं

—'हियर ही इज' द सन ऑफ ए विच ।

म रुक जाता हूँ न, यह डर नहीं है । मैं बहुत शान्त हूँ सिर्फ एक ठण्डी सी चीज मेरी रीढ़ की हड्डी पर फिसल रही है— एक गिलगिली छिपकली की तरह तटस्थ ।

वे वहाँ थे दीवार से सटी छायाएँ आगे भरकती हैं ।

—होल्ड हिम !—एक पत्नी-सी चीख और मैं अचानक पीछे मुड़ गया हूँ
एक सरसराती-सी हवा मरी बगलों के बीच से निकल जाती है ।

गॉडैम्ब निगर

बेट, जस्ट बट

वह पीछे से आया था—मुझे पता भी नहीं चला कि मेरा सिर पीछे की ओर
मुड़ता गया है एक क्षण और और मैं दो हिस्सा में बट जाऊँगा

काश मैं उसके चेहरे को देख पाता !

हाथ है, जो नम है 'म अपनी बदनपट्टियाँ मैं सरसराता सून सुन सबता था ।
म थोड़ा-सा हिलता हूँ और कुछ आगे की तरफ घिसट आता हूँ । वह भी मेरे सग
घिसट आता है—यह कोई अच्य व्यक्ति है, इससे सिर मेरे हाथ जकड़ रहे थे ।

एक क्षण के लिए मुझे गहरा आश्चर्य होता है—यह क्या मेरी देह है, जो इस
तरह धरधरा रही है ?

—यू सिटिंग स्वाइन !

मैं एक झटके से अपने को सीधता हूँ लेकिन मेरे बाल मेरे बाल उसके
हाथों में फँस गए हैं—उसकी नगी बाँह मेरे मुँह के सामने हिलती है और अनायास
म अपने गाल उसमें गड़ा देता हूँ 'आह, लीव इट बगर ! एक टूटती-सी साँस
बह मुझे हिलाता है एक बार दो बार—और हर बार मैं शराबी मा उसकी बाँह पर झूल
जाता हूँ ।

—लीव हिम एलोन, यू सन ऑव ए ह्वार्ट ह्वोर !

क्या वह विली की जाबाब है ? मैं पूरी शक्ति से चीखने की चेष्टा करता हूँ
किंतु सिवाय एक भधावह धुर धुर के मेरे मुँह से कोई भी स्वर नहीं निकल पाता ।

और तब सहसा मुझ लगा, उसकी पकड़ ढीली पड़ गई है मैं अपने को उठा
सकता हूँ । मेरी आँख खुलती है । अँधेरे का एक नीला दरिया मेरे सामने से गुजर
जाता है और उसके परे लाल, हरे, गुलाबी धब्बे तिरते जाते हैं—मैंने उन्हें कभी देखा
है मुझ पर पहले कभी दया है, जैसे यह कोई पहचाना-सा दुस्वप्न है जिसे मैं दुहरा रहा
हूँ गुरु से अन्त तक ।

मुझमें दा गज के फासले पर वह खड़ा था—गली की दीवार से मटा हुआ ।
एक क्षण के लिए विश्वास नहीं हो सका कि वह विली है, वही व्यक्ति जिसके सग कुछ
देर पहले मैं लागर पो रहा था

किन्तु क्या वह मुझे पहचान सकता है ?

और वह ब्लॉड लडकी और जाज क्या व स्मृति के देर से बाहर वही रात में
इब गए हैं हम यहाँ छोड़कर जो इस क्षण खुद अपने का नहीं पहचान पाते ?

सिफ दा गज और बीच का अँधेरा ।

मीड, आधा चेहरा और एक लम्बा युवक जो विली पर झुका है विली की कमोज का कालर हाथ में पकड़कर वह उसे दीवार के पाम घसीट जाता है—खटाक खटाक

वह स्काफ फूल जाता है स्काफ जो उस लम्बे व्यक्ति ने गले में बांध रखा है रगीन—उस पर गुलाब के फूल छपे हैं

गुलाब के फूल जीर खूा, जा विली के होठों से फिमलता हुआ उसकी 'गोटी' तक बढ़ आया है

एक क्षण के झलमले में सब कुछ उभर आया है आवाजें, पीना लेन की खट्टी-सी गंध और हँसी

और तब वह आया था एक ठिगना-सा व्यक्ति, जो अभी तक मीड के अँधेरे में छिपा था। उसकी घनी भौंहा के बीच छोटी अस्थिर आँखें चमक रही थीं मीड के बाल इतने लम्बे और घने होकर उसकी आँखों पर झुक आये थे कि लगता था जैसे उसने अपने चेहरे पर किसी कुत्ते का माँस्क पहन रखा हो

वह बहुत ही धीमे बंदमों से विली की ओर बढ़ रहा था

—कहाँ गई तुम्हारी डालिंग?—उसने घटके से विली की ठुडकी को ऊपर उठा दिया।

—बोलो? कहाँ गई?

हर बार 'कहाँ गई' कहते समय वह विली के मिर को दीवार पर घकेल दता था हर बार विली की देह एक शराबी की तरह झूम जाती थी।

और वे हँस रहे थे

—बँस हिम देयर!—दूसरे ने जपन की ओर इशारा किया। खट-खट सिर के दीवार से टकराने की आवाज। खट-खट मर दिल की पगली ज्वर-ग्रस्त घडकन। पसीने और मून से लियड़ी विली की कमोज और एक अनवरत कभी न खत्म हाने-वाली खट-खट और एक मुतली-सी हसी

—बोलो, कहाँ गई? स्पीक! स्पीक! स्पीक! यू फिल्टी हा-हा-हा खट-खट-खट

स्काँफ में झूलते हुए रगीन गुलाब के फूल

मुझे अब कुछ भी याद नहीं सच पूछो, तो मुझे यही नहीं मालूम कि मैं स्वयं चिल्लाया था या कोई बाहर की चीख सहसा मुझे झिपौड गई थी (नहीं आज भी मैं विश्वास नहीं कर पाता कि वह मयावह चीख मेरे गले से निकली होगी)। मुझे सिर्फ इतना भर लगा था कि मेरी सास एक अंधे चिमगादड़ की तरह मेरी छाती की दीवार से टकराती हुई बेतहाशा फडफडाने लगी थी और मन एक घबके से उन दानों हाथों को अपनी गदन से छुड़ा लिया, जिन्होंने अब तक मुझे राक रखा था

सिफ दो गज और बीच का अंधेरा।

मैं किसी की तरफ बढ़ा था। मैं जगमग कुछ कहना चाहता हूँ। उसे घुना चाहता हूँ। मुझे लगता है यह बहुत मारदारूण है।

बीच का अंधेरा—और वे टगड हाथ और तब यह भीगा

मेरा तिर उस अदृश्य स्थिति की टुट्टी से टकराया था, त्रिगो मुझे बीच में पकड़ लिया था। दूसरे हाथ से जगो मेरा धेड़रा भीष लिया मरा मुझे जगरी बमोज पर घिसावता गया। आई किन टीस यू हाउ टूरा बाग्टड ग जाने क्या, मैं अपनी टांगा का बेंतहंगा, गिरनी से मरीच की तरफ हवा में घुमाने लगा—बुछ नहीं होगा मैंने सोचा यह मुझे छोड़ेगा नहीं और तब मुझे लगा, जते अब मैं सांग नहीं स सऊंगा। किन्तु यह गलत था हर दूसरी सांग पहली सांग की गिरण से बचने को सुझावर ऊपर आती थी और फिर मुझ से पिपक जाती थी और मैं सोचता था, यह आगिरी है, सकिता तीसरी सांग फिर छटपटाता हूँ अपने को दूसरी सांग से पिपरे से छुटा लेती थी और मुझे आश्चर्य हुआ कि कोई भी सांग पीछे रह कर आगिरी नहीं बनना चाहती और तब एक मयबर-गो गुनी ने मुझे अपने में लपट लिया, जते मैं अब तब सिफ इस समझे के लिए जी रहा था और अब यह आ गया है और आने वाली घटिया में बाई भी ऐसी घीज नहीं होगी, जिसके मानी वही हाने, जो पहले थे, कोई भी डर पहले जसा डर नहीं होगा मैं भूल गया था कि मैं अकेला हूँ मैं सिफ यह जानता था कि ये मुझे अकेला तही छोड़ेंगे और मैं बच नहीं सक्ता और जग राउ मुझे पहली बार लगा कि अकेला हाना ही काफी नहीं है काफी नहीं है क्योंकि व हर जगह है और यह मैं जानता था सिफ यह नहीं जानता था कि एक दिन वे मुझ पकड़लेंगे अब यह पहले जसा आवाहीन नहीं था—वह डर। अब यह ठोस था और गीमित था—जतना ही बडा जितना मैं हूँ—सुम दोनों अंधेरे में बहती जानवरो की तरह सांस ले रहे थे और मुझे लगा, जस मैं आतिर तब अपनी टांगो का इसी हवा में घुमाता रहूंगा—आह डियर, हाऊ फनी इट इज हाऊ फनी। कोई हँस रहा है—(क्या यह मैं हूँ?) हँसी जिसकी कोई आवाज नहा। पूसे गालियाँ और फिर वही हसी।

वे मुझे घसीटते ले गए हैं—गली के कान तक।

मैं उठने की कोशिस करता हूँ और बैठ जाता हूँ। फिर इच्छा होती है सेट जान की। वही सडक पर। लेकिन आँसू बंद करते ही लगता है जस बाई बीच एक ज्वार की तरह ऊपर उठती है—मेरी टांगा में, छाती में बाहा के जोडो में—उठती है और बह जाती है क्या यह पीडा है? और मुझ हत्का सा आश्चर्य होता है कि मैंने जिन्दगी के खतने बरस बिना डाले और फनी इसे नहीं जाना! लगता है मेरी बेतना ने इस पीडा का एक छोट पकड़ लिया है और घिसटती जा रही है कभी सिफ बेतना

रह जाती है पीडा से अलग । तब लगता है जैसे मन कुछ खो दिया है । बारिश की शाम है और मैं दुबारा अपने शहर की सड़क पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक भाग रहा हूँ एक छोटा-सा खोखल मेरे सामने खुल गया है और एक उत्कट मयकर-सी आकाशात्मन में जगती है उसमें छिप जाने की जैसे उसमें छिप जाने से ही सब-कुछ सुलझ जाएगा, सब-कुछ बहुत सहज हो जाएगा लेकिन यह खोखल नहीं है । यह पीडा है, जो बराबर-बराबर से बँट गई है, मेरी देह के विभिन्न अंगों में—द्विकुल नये किस्म का दद, जो अपने में सम्पूर्ण है और जिस आज तक मैंने नहीं पहचाना (हाऊ फनी इट इज हाऊ वण्डरफुल फनी ।) बीच-बीच में चेतना का परदा खुल जाता है और मुझे आश्चर्य होता है कि यह मैं हूँ और मुझे सहसा विश्वास नहीं होता कि मैं बाहर आ गया हूँ अपने से बाहर जहाँ मुझे कोई नहीं बचा सकता ।

अंधेरे से बाहर—जहाँ वे हैं ।

वह शुरू अगस्त की एक रात थी । वे मुझे गली के एक गँदले, खामोश कोने में छोड़ गए थे । कितनी देर तक मैं वहाँ पड़ा रहा, मुझे कुछ भी याद नहीं । बीच-बीच में मेरी आँखें खुल जाती थी, एक पतली और पारदर्शी धुँध के पीछे लदन का आकाश घिर आता था । फिर आँखें मुँद जाती थी और मुझे लगता था, जैसे मैं एक धुँध को छोड़कर दूसरी धुँध में सिमट आया हूँ ।

कितनी देर ऐसे ही रहा । फिर मैं सतक हो गया । परो की आहट मेरे पास चली आई थी । बहुत मन्द गति से । मैं ऊँघने लगा था । शायद यह सपना हो । देर तक मालूम नहीं हो सका कि कोई बराबर मेरे कंधों को हिला रहा था

—क्या उँघना चोट आई है ?

—नहीं उँघना नहीं आँखें खुल गईं । मेरे ऊपर आज का चेहरा भुका था । लागर की हलकी-सी गंध मुझे छू गई । मैंने जाना क्या, उस गंध के सग एक दूसरी स्मृति उभर आई मोसाट के सेरेनाड की एक बहुत पुरानी ट्यून—ट्यून भी नहीं, महज एक टूटी टहनी-सी धिरकन, जिसे कुछ घड़िया पहले पर्व में अचानक पहचाना था

—तुम यहाँ हो ?

—मुझे मालूम था वे तुम्हें यहाँ लाए हैं । मैं देख रहा था—उसन कहाँ

—विली कहाँ है ?

—लेट हिम गो टु हेल् अगर वह नहीं होता तो कुछ भी नहीं होता ।

—क्या कुछ नहीं होता ?

अचानक बड़ी सड़क से एक कार गुजर गई । हमारी आँखें चूँधिया गईं । मेरा ध्यान पहली बार अपनी ओर खिंच आया—कमीज का काऊर ऊपर से फट गया था । फट पर गद, घूल और वियर के घब्वे थे और मुझे लग रहा था कि बदन के पसीने चिपकी मेरी बनियान से एक बाक्षिल, नीली-नीली-सी भाप निकल रही हो ।

—तुम चापस क्यों आये ?

—मैं भीतर आता चाहता था—तुम लोग के पास भविष्य तुम जानते हो

—इट इज आल राइट, जान—मैंने उस बीच में ही रोना लिया। मेरे मुँह का स्वाद एकदम बसला-सा हो आया, जस मैं एक खम्बे बुझार के बाद उठा हुआ। पास ही एम्प्लायमेंट का पीला दायरा था। मैंने उसमें बीस-बीस पूरा लिया—बिलकुल खाल जसे पान की पीन हो। यह शून्य है। मुझे बहुत अजीब-सा लगा। मैंने एक बार फिर पूरा इस बार अपने शून्य का दुबारा देगने का लोभ सवरण न कर साता।

—तुम्हें उ यादा घोट ता नहीं आई ?—जान न बहा। उगरे स्वर में एक बधी बंधी-सी कुण्ठा थी। मुझे यह कुछ अजीब-सी लगी।

मैं चुप रहा और फिर सड़ा हो गया। एक घण्टा तक गली की दीवार से मेरा सिर टिका रहा।

राट-राट-राट

अब भी वह आवाज मरी मरी के बीच पटकटा रही थी।

हम छुपचाप ट्यूब स्टेशन की ओर चलने लगे। मरी जेब में अब भी दो गिलिंग पड़े थे। अनायास मरी कापती अ गुलियाँ उह सहला देती थी।

बाहर सड़क पर अगस्त के पत्ते प लन्दन का धुआँ रात के परे गिरता जा रहा था।

—तुम मरा विस्वास नहीं करते तुम समझते हो। जान ने अबरदस्ती मरा कथा पकड़ लिया।

इट इज आल राइट—मैंने उमका हाथ कंधे से अलग कर दिया। काग, वह इस समय मरे मग न होता !

हम ट्यूब स्टेशन की सीढ़ियाँ उतरने लगे।

प्लेटफार्म उजाड़ पड़ा था। बेंचों पर इक्के दुक्के आदमी बठ ऊँच रहे थे। हमारे बिलकुल पास खम्बे की आड़ में एक जोड़ा दीवार से सटा था। लडकी अपने बाला पर बार-बार हाथ फेरती थी। उसके सामने खडा युवक कुछ दबे स्वर में फुसफुसा रहा था। लडकी बार-बार हँसने लगती थी और फिर चौंकर दोनों आर देख लती थी।

टिकट खरीदकर हम पास की खाली बेंच पर बठ गए।

—तुम लन्दन में ही रहोगे ?

वह चुप रहा। उसकी आँखें बस्तिया के परे अण्डर पाउण्ड की मुरग पर धिर थी—अँपेरी सीली। लगता था, मुरग का अंधेरा ऊपर शहर के अंधेरे से बट गया हो। जस गँदले पानी का ठहरा चहबूँचा हो।

—न जान विली कहीं चला गया ?

—विली मैंने उस देखा नहीं—उसने कहा।

—लेकिन तुम बाहर खड़े थे, तुमने अभी कहा था ?

—मैंन कुछ भी नहीं देखा ।

हम फिर चुप हो गए । किंतु उस चुप्पी में एक बोधिल-सा तनाव था, जैसे कोई चीज बार-बार हमारे बीच आ जाती हो, और हम बार-बार उसे अलग ठेल देते हैं ।

—तुम समझते हैं मैं झूठ बोल रहा हूँ ?—उसने कहा ।

मैं दूसरी ओर देखने लगा ।

—तुम कुछ भी समझा, मुझे इसकी कतई परवाह नहीं—उसने कहा ।

—डोण्ट बि सिली—मैंने कहा ।

—तुम मेरा विदवास नहीं करते—दस बार उसने मेरी ओर देखा—तुम साचते हो मैं भाग गया था उसके होठ काप रहे थे ।

—डैम इट आई से डम इट ।

—उन्होंने मुझे पकड़ रखा था और मैं तुम्हारे पास

—इट इज आल् राय्ट, जाज ।

—ओ नो इट इज नाट ऑल राय्ट !—वह जैसे चीख रहा था ।

पाम की बेंच पर ऊँघता हुआ जादमी उठ बैठा और हमारी ओर देखने लगा ।

—जाज, मुनो—मैंने उसके कंधे पर हाथ रख दिया । बेंच के हत्ये पर उसका चेहरा दोना हाथों के बीच दबा था और बार-बार हिल उठता था ।

—आई वाज अफ ड, टेरिब्ली अफ ड ।

हम दोनों काँप रहे थे ।

—अफ ड

मैं सामने देखता रहा अण्डर ग्राउण्ड का अँराजस घीरे घीरे हिल रहा हो—एक परदे के मानिंद जो अभी उठ जाएगा । मैं उस क्षण जाज से डरने लगा खुद अपने से डरने लगा । मुझे लगा, जैसे मैं अब कभी उसकी ओर नहीं देख सकूँगा । उस क्षण मैं कोई भयकर चीज कर सकता था—मैं उसमें बहुत-कुछ कहना चाहता था, कुछ भी किंतु अब हम दोनों एक सग होते हुए भी जवानक अकेले पड़ गए थे और वह रो रहा था और मैं कुछ भी नहीं कर सकता था । गायद इससे भयकर और कोई चीज नहीं, जब दो व्यक्ति एक सग होत हुए भी यह अनुभव कर लें कि उनमें से कोई भी एक-दूसरे को नहीं बचा सकता, जब यह अनुभव कर लें कि बीती घडियाँ की एक भी स्मृति एक भी क्षण उनके मौजूदा इस गुजरते हुए क्षण के निकट अकेलेपन में हाथ नहीं बँटा सकता साक्षी नहीं हो सकता ।

तब हम चौंक गए । दूमरे प्लेटफाम पर वॉरिन स्ट्रीट जानवाली टयूब आ रही थी । जाज को इसी में जाना था । हमारे आस-पाम की बेंचों पर ऊँघते हुए लोग सहसा उठ खड़े हुए । टयूब की तज हेडलाइट में यू एक्टन की अगली सुरग का अँधेरा जरा

पीछे तिसका गया। गीदिया से कुछ लाग भागते हुए नीचे प्लटफ़ॉर्म पर उतर रहे थे, ताकि वॉरेन स्ट्रीट जान वाली आगिरी ट्यूब को पकड़ सकें।

जाज सड़ा हा गया। उमने एब बार भी मुँह नहीं देखा और दूसरे दाण भीड़ के सग घट भी ट्यूब की तरफ भागन लगा। ट्यूब के ऑटोमेटिक दरवाजे दाण मर के लिए गुल और भीड़ को अपन भीतर निगल कर दूसरे दाण ही बन्द हो गए।

पहिरो की भरभडाती आवाज धीरे धीरे मन्द पडती गई और फिर सब पूबवत् क्षान्त हा गया। गुरग के जिस अ धेरे को ट्यूब की हेडलाइट ने पीछे तिसका दिया था, वह फिर वापस लोट आया।

सिफ प्लटफ़ॉर्म की खुली छत के पर डू एक्शन की रौशनियाँ अँधेरे में छुपचाप झिलझिलती रही।

सम्भे की आड में युवक न कहा—अगली गाड़ी से—और उसे घूम लिया। लडकी की आँखें मुँद गईं।

उसन देखा भी नहा

और मुँके लगा जैसे मैंने मुहत्त से सिगरेट नहा थी।

तीन विदियाँ

गीताली दास अपने को मुरजीवी कहती है। नाट-सुर-ताल आदि के सहारे ही वह इस मजिल तक पहुँच सकी है। सभी कहते हैं, उसकी साधना सफल हुई है। कितन मोले और बेचारे होने हैं लोग ! साधना के सफल-असफल होने की घापणा करन वाला से वह पूछना चाहती है सफल साधना का कोई मीघा-सा अर्थ। यह ठीक है कि अनेक अ-सागीतिक वातावरणा का गीताली न अपन मुनहले सुर और सुगम गीतो मे सगीतमय कर दिया है, कि किसी भी सगीत-समारोह या सांस्कृतिक प्रतिष्ठान के सयोजक आज भी गीताली के नाम पर गीत प्रेमियो को बटोर लेते हैं। किन्तु और कितन दिन ? गीताली 'दी की सफल साधना का क्या हुआ ? गीताली न अपनी बनी दीनी गीताली की गलतिया से लाम उठाया है।

विगुद्ध (?) ठुमरी गायिका गीताली की सफल जिदगी के महज चौबीस महीना के सामने अपने सुर-जीवन के 'राल' किए हुए—परिपाटी से मुड़े हुए—अ ग का खोलती है घीरे घीरे। नौ वष ? एक सौ आठ महीन कम नहीं।

गीताली आजकल अक्सर अपन मन मे उत्पन्न होने वाले सहायक नाद का विन्-लेपण करती है। सहायक नाद ! जिसको ओवरटोन कहत हैं। नाट कभी अकेला उत्पन्न नहीं होता। उसके साथ-साथ अर्थ नादो का भी जन्म होता है। उस स्वर का हम मुन पाएँ अथवा नहीं मूल नाद से उत्पन्न होने वाले द्रन नादा का सहायक नाट कहा जाता है। स्वय ही जन्म लेने के कारण इह स्वयभू स्वर भी कहते हैं। गीताली न इन्ही स्वरों की सहायता से मिद्धि और प्रसिद्धि प्राप्त की है। प्रायना के सुर मे हट दम बजती हुई जिदगी के सुर-ताल की सीमा से कभी बाहर नहीं गई। सीमा का विस्तृत अवश्य किया उसने। लेकिन इधर कुछ दिनों मे उसका भय हान लगा है। गीत गान समय, मूत होते हुए राग एकाध बार अस्पष्टतर भी हुए हैं।

हूँ-हूँ-हूँ-हूँ-हूँ जीवन हुआ है एक प्रायना ग-गीत की तर-ह।

इस जिदगी के कुछ अ ग को काट लेती है गीताली, टुकड़-टुकड़े करती है, मसा डालती है। फिर चूण विचूण क्षणा की सुर-बगिचाओं को सहायक नाद की सहायना से परखती है। डॉट-डॉट-डॉट ! गीताली इन नन्ही-नन्ही तीन विदिया को आँधो के सामने गूँथ म उभरने वाली छोटी छोटी तारिकाआ को, अब अच्छी निगाह से देखनी

है, पहचानती है इस घुम चित्त को !

गीताली गुरजीवी है, किन्तु साहित्य-जगत की साधना और प्रगति का भी माहा शान रचती है। उसने जीजाजी (जमाय बाबू !) अपन को अवसर की ताव म बठा हुआ, किसी भी दिन प्रतिबद्ध ह। जान थाला, प्रच्छन्न आशोचक मानते हैं। टाइम-बोमा ! टाइम-बोमा ता आबू-बामा ! गरम-गरम आबू चोप प्लेट मे सनर जीजाजी के कमरे मे गई थी वह। सुदगना-अदगना भी साध थी। दुष्टता भरी हँसी को जब्द करके गम्भीर होने की चेष्टा करती हुई गीताली ने कहा था—दगिए जमाय बाबू, यह आबू का बोमा यानी बम है ! आबू के घुने के शल म हरे घने के दाने बट्ट हैं। विपुद्ध थी म मन्त्रित इस अविस्फोटक बम के फटने का गही, जुठाने का अवसर उपस्थित हो रहा है। अब तक, यह भी आबू के रूप म ताव लगाकर बठा था।

घातान मुदगना मुँह बनाकर वाली थी—न-न आबू मत कहा। जमाय बाबू तो अवसर पाते ही द्रुटने वाले हिंस प्राणी हो सक्ते हैं। गिबार सामने आया कि हो-हो हो ! जमाय बाबू भी हसे थे। किन्तु दौदी घुरा मान गई थी। जो भी हो जमाय बाबू की किताब सरीरने की विचित्र आदत से गीताली और उसकी सक्तियाँ मुदगना-अदशना भी खूब लगामन्त्रित हुई था। कथा-साहित्य की अच्छी घुरी पोषियाँ पढ़ने को मिल जाती थी।

आधुनिक कथा साहित्य म एक बम डाटवादियो का भी है। डाट डाट डाट ! अब तक उठा नेही है, किन्तु प्रश्न किसी भी दिन उठ सक्ता है कि ऐसी डाटमयी रचनाआ के रचयिताआ के दिमाग म सिफ डाट हो डाट तो नही ! दिमाग की जगह मछली के असक्ष्य अ डा की थली तो नही ! साधारण पाठक अधिकाँग ऐसी बिदो घूटदार रचनाआ का भली नजर से नही दखत। सारी किताब म, हर पृष्ठ और पक्ति मे यत्र तत्र सरसा के दाने की तरह बिखरी हुई बिदियो के बाहुत्य स पाठको की आँख किर किराने लगती हैं ।

गीताली इन बिदिया को अलख मुखर जगत की खिडकी समझती है, तीन गोल गाल लाल बाँचवाली। अदर प्रकाश होता है। अलख-मुखर जगत का व्यापार शुरू हुआ।

तीन बिदिया के सहारे अप्रासंगिक प्रसंगो और असलग्न मुहूर्तो को रूपायित करने वाले किसी अन्य जगत की हल्की छवि दिखाने-वाले, प्याज के छिलके उतारनेवाले ऐसे किसी शब्द शिल्पी से कमी मँट हो ता गीताली कहेंगी—मानो या ना मानो, हँ ये सहायक नाद क चिह्न ! पूछेगी, इस ओवरटोन या सहायक नादो की सष्टि स्वय ही नही होती क्या ? मन की अनगिन खिडकियो से झाँकने वाले चेहरे खुद नही बोझते क्या ? बात बोलेगी, म नही। राज खोलेगी बात ही। किसी गिल्पी का जबाब गीताली के मन-बन मे कौन पाखी रट रहा है !

गीताली को हठात् मिस्त्री हाराधन यत्रकार की याद आई। कई मुखड़ा के उमरने और विलाने के बाद डाट डाट डाट ! फिर मिस्त्री हाराधन यत्रकार का एक तलचित्र लटक गया उसके मन की दीवार पर। न जाने यत्रकारजी कहा हैं। गीताली अपने दोनो हाथा को जोड़कर शूय मे एक नमस्कार करती है।

जिन्दगी के इद गिद झड़त होन वाले सहायक नादो से प्रथम साक्षान् परिचय मिस्त्री हाराधन यत्रकार ने ही करवा दिया था। मिस्त्री नहीं गुरु मानती है हाराधन यत्रकार को। यत्रकारजी के मात्र-बल से ही गीत-पागल हुई। जानती है खुकी सफल शिकारी होने के लिए आदमी को सभी किस्म के शिकारिया से दीक्षा लेनी हाती है, शेर मानू के शिकारिया से लेकर व्याध लुब्धक और सपेरो की भी सगति करनी होती है। यत्रकार कहो मिस्त्री कहो या कारीगर, तुम मेरी नातिन की उम्र की हो। नाना की बात मुनोगी ? यत्र के सहारे हा सहायक नादो की पांच हजार आन्दोलन-युक्त ध्वनियो की बारीबिया का उपमोष कर सकोगी। सदा ध्वनित होने वाले जाने-अनजान सुर मे तुम्हारे जीवन का प्रत्येक क्षण मुखरित हो उठेगा।

अल्प मुखर जगत म दस वष पूव की बात मुखरित हो रही हैं।

सुर मंदिर के मनेजर को बटुवचन कहने को बाध्य हो गई थी गीताली।

शहर की सबसे पुरानी और निमर-याग्य बाजे की दुकान की यह हालत ! एक ही सप्ताह मे तीन बार तानपूरा ठीक करवाकर ले गई, फिर जैसे का तसा ! गीत के बीच मे ही साथ छोड देता है। रोग क्या है यह बताने वाला कोई विशेषज्ञ नहीं आपके पास ? तो सुर मंदिर कहूँ या असुर-मंदिर ! मनजर का मुँह बेजान माइक की तरह गोल खुला रहा। गीताली तानपूरा लेकर सुर मंदिर की सीढिया मे उतर गई था, फिर कभी न लौटने की प्रतिज्ञा करती हुई। एक दो-तीन !

—ओ दीदी, सुनेन, सुनेन।—कुछ दूर चलने के बाद, पीछे से पुकार सुनकर गीताली मुडी एक नाटा भूटा, गोल मटोल लडका लुडकता हुआ आ रहा है फुटपाथ पर। बीन है यह, किमाकार छोकरा ? लडके ने निकट आकर नमस्कार किया—आप गीताली 'दी हैं ? हैं न ! हैं हे ह हे, तानपूरा क्या सुर मंदिर मे सभी बाजा का गला इसी तरह घाटा जाता है। जब से मिस्त्री हाराधन यत्रकार सुर-मंदिर को सगम करके निकल गया है, सभी असुर ही रह गए हैं। आपने ठीक ही कहा है गीताली 'दी।

गीताली न देखा, लडका अकाल-परिपक्व नहा, किसी ग्रथि विकार का गिकार है। बीना नहीं, नाटा और बग र भूँछावाला घुघलू ! उसने अपना नाम बताया—घुघलू।

आसाम की ओर कहो जम हुआ। मिस्त्री हाराधन यत्रकार के माय गत पंद्रह-बीग वर्षों से है। कलकत्ते म सात-आठ साल, दो-तीन वष इधर-उधर और यहाँ भी करीब पाँच सात साल हुए।

घुघलू ने बताया मिस्त्री हाराधन यत्रकार अब किसीकी दूकान म काम नहा

करता, अपनी गली से बाहर कहीं आता-जाता नहीं। गली में क्या अपने कमरे से बाहर निकलने की छट्टी नहीं। घुघरू ने कई नये पुराने यंत्रवादकों के नाम गिनाये जिन्हें जरूरत हाती है मिस्त्री हाराधन यंत्रकार को खोजकर पहुँचते हैं बलबन्ने में लखनऊ से काशी से।

गीताली तुरत राजी हो गई। घुघरू ने रिक्कावाले को आवाज दी—ए रिक्कावाला, मुहल्ला दूधकूप चलेगा ?

मुहल्ला दूधकूप की एक गली में कुछ दूर जाने के बाद घुघरू एक तपरले के घर के पास रुका। बाद किवाड़ी के एक छेद में आँख लगाकर अंदर के वातावरण का अंदाज़ लगा लिया। फिर साँकिल हिलाने लगा। अंदर में किमी जम-तुप्टामा की खनखनाती हुई आवाज बाद किवाड़ों के छेदों से सुनाई पड़ी। अंदर में व्यक्ति को बहुत-से प्रश्नों के उत्तर देकर कुछ सतुप्ट किया घुघरू ने। तब जाकर दरवाजा खुला। लगा, अंदर के किसी व्यक्ति ने अपने कमरे से ही रस्सी खींचकर चटखनी खोल दी। घुघरू अंदर गया। एक कक्कड़ सिडकी सुनाई पड़ी—फिर किसको जुटा लाए कहीं से ?

घुघरू की दबी आवाज से स्पष्ट था कि वह अनुनय के स्वर में कुछ कह रहा है—मास्टर, ना बलबन्ना ना।—उसके सब किए-कराए पर पानी फिर जाणगा।

बाहर खड़ी गीताली को घुघरू की यह धियियाहट अच्छी नहीं लगी। लेकिन बेसुरे बाजे को लेकर क्या रियाज कर सकेगी ? वह चुप रही। एक कुट्टी आत्मा और विवृत चेहरे-वाल जपेट में दरवाजे से झाँककर पूछा—क्या हुआ ? मुर मंदिरवाला न तेरह ठो बजाम दिया है वाजा का ? छोड़ जाओ, तीन दिन बाद आना। वाह ! हमका गाल तो खूब बहारदार है। यंत्र का मल भी लेती है या ?

गीताली चमत्कृत हुई थी हाराधन यंत्रकार की बातचीत सुनकर। सधे हुए स्वर में बकार कोई जनक कवगता की सप्टि कर रही है। वह चुप ही रही। यंत्रकार न थोड़ी देर तक गीताली की मुद्रा को पढ़ने की चेष्टा की। फिर कहा—क्या बितु-परतु साच रही है खुकी ? यंत्रकार का मुर कोमल हुआ—दस मिनट का काम नहीं बेसुर को मुरवान बनाना। आआ अंदर आआ !

हाराधन के कमरे में प्रवेश करके गीताली प्रमत्त हुई थी। दीवारा पर ग्रामाफोन खड़ा कम्पनी द्वारा प्रचारित भारत प्रतिष्ठ कलाविद्या की तस्वीरें लटक रही थी। एकाग्र प्रणामा पत्र अथवा सर्टीफिकेट की तरह की चीजें। पत्र पर विभिन्न वाद्य-यंत्र गितर हुए थे। रेडियो पर वाद्य-मंगीन के वाद्यक्रम में सराणवादन हो रहा था। अकराम ! उनीयमान सराणवाक अकराम स्वरचित गते अचना के बाल प्रस्तुत कर रहा था। यह रहकर सराद के तारा मंगम और घटाघरनि प्रतिष्कनित हाता था। हाराधन यंत्रकार ने अपने छोटे पुराने रेडियो मट की आर उगला। जाकर कहा—सुन रही हो ? मात साच हुए अकराम के म सराण का। अभी तक जम का तम है। यंत्र का यंत्र

माने यत्र की पूजा ।

हाराधन न सितार सरोद मुखहार, दिलरवा, वीणा आदि के प्रसिद्ध वादका के नाम लिए । गीताली स्वीकार करती है कि पाच मिनट के परिचय म यत्रकार की बाना पर विश्वास नही जमा सकी थी । यत्रकार न भाप लिया । अपनी अटची से कई नई-पुरानी चिट्ठियाँ निकालकर गीताली के सामने रखते हुए बोला—पदो तो ।

कलकत्ता से भारत प्रसिद्ध (स्वर्गीय) सितारवाल्क उस्ताद कादिर हुसन का आत्मीयता से भरपूर एक खत पाच साल पहले का भाई हाराधन तुम तो सचमुच हाराधन हो गए हमारे लिए । मेरे यत्र को कुछ हो गया है, फिर जिस तिस के हाथ म देन का साहस नही करता । जानता हूँ, तुम कल्कत्ते नही आओगे । मैं ही आ रहा हूँ तुम्हारे पास ।

रेडियो पर, तब, यागेद्र सूरी का वायलिन हमत क राग विस्तार की तयारी कर रहा था । कौन कहता है कि साज बेजान होते है ।

गीताली मुग्ध होती गई । छोट-बड़े सुरशिल्पिया और उस्तादो के प्यार प्यारे पत्रो ने, अकराम के अचना के बोल न योगेद्र सूरी की वायलिन ने, धुघलू की गुरुभक्ति न सभी ने मिलकर गीताली के सामन मिस्त्री हाराधन यत्रकार की आत्मा की सच्ची तस्वीर उपस्थित कर दी ।

धुघलू स्टोव जलाकर चाय की तयारी मे व्यस्त था । बीच-बीच मे अपने उस्ताद की बाता मे टीप क बन्द की तरह अपनी राय टाक देता—महादवलालजी तबलिया हीरा है, आदमी नही । खा माहब तो दाता पीर ही थे पाकेट से मुट्ठी भर नाट निकाल कर परबी' दते थे । मुन्नूजी सरगिया मुझसे बहुत नाराज है उस गिन से ।

धुघलू चाय दे गया । चाय की पहली चुस्की लन क बाद हाराधन यत्रकार ने कहा—यत्रकार कहो या कारीगर । बेसुरा नहा कह सकना कोइ ।—यह तो अपने किए का फल भोग रहा हूँ सुकी । बजान लवडी तार तथा मूखे चमडे पर सुर चगाकर जीवन बिताने के सिवा और क्या चारा है जब ? शायित जीवन बिता रहा हूँ । तुम मेरी नातिन की उन्न की ह । विश्वास करोगी, म कभी गाना था ? मेरी आवाज गुनकर हिरणा के मुण्ड दीडे आन थे ।

यत्रकार न फिर अपनी अटची के ढक्कन का उठाया । कुछ हूँडता हुआ बोला—म जानता हूँ तुम विश्वास नही कर रही हो । खालकर कहना होगा । जीवदपुर स्टेट के राजा जीवत्स नारायण दबज्यू का नाम सुना है ? गिकार के अनुभव पर एक मोटी और मगहूर किताब लिख गए हैं अंग्रेजी म । उसम लखना पब्लिक लायब्रेरी मे है वह किताब देखना, पृष्ठ बारह, बाईस चालीस और पचपन म भरा अित्र है । ग्रुप तस्वीर म मुभे देखकर नही पहचान सकता कोई अत्र । राजा साहब गिकार के अलावा मगीत की भी चर्चा करते थ । उनकी गिकार पार्टी म जेफरी कॅडॉइड ३, ३ बोग रायफल के साथ

सितार की भी आवश्यकता होती। तीन-चार बंद उस्ताद और दजना शिष्य उनकी ब्याड़ी में पलते थे। मेरे गुरुजी पंडित गिबवाल्व झा उम्मी दरबार के गायन थे।

गीताली न अपनी पड़ी देखी। धुगलू इस बार एक गिलास में चाय बनाकर ले आया। बोला इस कथा का सुनाते समय मरे उस्ताद शमसिल चाय पीते हैं।

जब से एक गदा रुमाल निवाल कर गिलाम में लपेटते हुए यत्रवार ने गीताली की आर दखा—सुकी तुमको देर हो जाएगी। फिर किसी दिन सुना दूंगा कि कस हिरणा के झुंड दौड़न आए थे।

गीताली हँसा थी—आधी कहानी सुनन से आधे गिर में दद हाता है।

—सुनन से या सुनाने से? जो भी हो मैं निश्चित हूँ। गिर-दर से डरें गिर वाले। हम पेट बाल हैं।

गीताली फिर हँसी। जब-जब गीताली हँसती, यत्रवार की दाहिनी बगल में बने पास की चमड़ी नाचने लगती। भुर्रीदार बिकृत चेहरे पर एक चमचपाहट छा जाती।

—तो सुनो।

उस बार गुरु ने कृपा की दृष्टि हाराघन पर भी फरा। गिहार पार्टी में साथ चलन का आदेश दिया। अब, जगल में मगल मनाने की कितनी कहानियाँ सुनावे हाराघन। लिखन से एक माटी जिताब तयार हो सकती है। राजा साहब अमली गिहारी थे।

गपाल की तराई के मधुमार जगल में बिरात-सरदार न चीतला का शिकार करके दिखाया था। तराई के जगलों के बीच पाड़ी-सी खुली जगह, जिसको ग्लेड कहते हैं अंग्रेजी में। चाँदनी जहाँ लम्बे लम्बे गालबूक्षी की फुनगियों पर टेंगी नहीं रहती, श्यामल मसण घास पर बिछ जाता है। पास ही बहती हुई पहाड़ी नदी जो बल बल-बुलबुल नहीं करती। हवा फुसफुसाकर बात करती है। चाँदनी चत की प्रकाश में एक ठूँठ विस्मित-सा खड़ा है। छाया में वाइ इशारे से कुछ कहता है और सारी तराई में, तराई के जगल में एक दद मरी पुकार मबराने लगी। कामातुरा हिरणी की पुकार। नदी के शीतल जल से प्यास बुझाते हुए चीतलो के मन प्राण में एक-दूसरी प्यास जल उठती है दपदपाकर। हिरणी रह रहकर पुकार उठती है। चाँदनी में नर चीतला के झुंड दिखाई पड़े। हर चीतल की देह के चकत्त स्पष्टतर हो जाते हैं। प्रकाश में खड़ा ठूँठ विस्मय अथवा आवेश से हिलता डुलता है। छाया में फिर कोई इशारा करता है—सिस सिस। फिर चाँदनी में तीरा की चमक खच्च-खच्च।

इसके बाद, मृत प्रेमिया की लागा से अपना-अपना तीर खींचकर बिराता के दल नाचन लगे—हा हिरा-हा हिरा-हा हिर र र र।।।

एक मादा चीतल को बचपन से पालकर नकली पुकार पुकारन की बाबान्ता गिहा दी जाती है। उस्ताद गले के नीचे उँगलियाँ से फुरहरी लगाता रहता है और हिरणी समय-असमय पुकार उठती है।

इस शिकार को देखने के बाद राजा साहब अस्वस्थ हो गये थे। पता नहीं, उन्होंने इस पद्धति से फिर कभी शिकार किया या नहीं, हाराधन के सिर पर इस शिकार का भूत सवार हो गया था, किन्तु कामाध चीतल की चीख, कराह, छटपटाहट और दम तोड़ना दग्वर उसके अन्दर का किरात आनन्द से किलकिला उठा था। संगीत-साधना छोड़कर हाराधन किरात-सरदार के साथ भाग गया।

हर साल चत की चाँदनी रातों में तीन चार बार यह शिकार होता है। शिक्षिता मादा चीतल के साथ उसके शिक्षक की भी पूजा करते हैं किरातगण। ऐसी हिरणी बहुत कीमती और अलम्य सम्पत्ति समझी जाती है। साल भर तक हिरण के मांस का सुखीता आग में भूनकर खात समय हर किरात ही हिरा कहकर उसको स्मरण करता है। उस बार तीनों चारा शिकारा में हाराधन किरातों के साथ रहा। साल भर किरातों के साथ रहकर भी वह मादा चीतल को शिक्षा देने का भेद न सीख सका। एक नम्बर पहाड़ के जितने भी पहाड़ी गाव थे उन सभी गावाँ के बीच बस एक ही मादा चीतल थी और उसका मालिक ही एक मात्र गुणी। मूलधन हिरणी ।

किन्तु हाराधन ने इस मूलधन को सत्ना कर दिया अपनी साधना से। मादा चीतल की क्या आवश्यकता? हाराधन कामातुरा मादा चीतल की तरह पुकार सकता है। किरात-सरदार ने परीक्षा के लिए शिकार का आयोजन किया। चत की चाँदनी ही क्यों जब चाहा तब शिकार करो। बारह महीने ।

चाँदनी रात । रात का अन्तिम पहर ब्राह्मवेला में हाराधन ने पहली पुकार दी थी—अक्कल नक्कल । चनरागही के पास, बोसी के किनारे की सफेद-हरी भूमि पर दजना चीतल दीड़े आए थे। खच्च-खच्च ।

हाराधन की पूजा होत लगी, एक नम्बर पहाड़ में। इलाके की सबसे अधिक मुदरी उसकी सेवा में तनात हुईं। किरात-सरदार उसकी जान का दुश्मन हो गया। उस बार भीषण भूकम्प हुआ था—१९३४ जनवरी। भूकम्प के तीसरे दिन सभी किरातों ने स्वीकार कर लिया यह दबी कोष हाराधन के कारण ही हुआ है।

मगवती की वृषा ! नारी की वृषा से उमकी जान बची। मृगचम बगल में दबाए गुरु की सेवा में उपस्थित हुआ। गुरु के सामने राजा साहब के बाग में अपन कठ की कला प्रस्तुत करके एक नई विपदा की सृष्टि कर दी उसने। उस बार चीतल का शिकार देखकर राजा साहब किसी मानसिक रोग के शिकार हो गए थे। बहुत दिनों तक इलाज होने के बाद कुछ स्वस्थ हुए थे कि हाराधन की पुकार मुनाई पड़ी। राजा साहब फिर अस्वस्थ हो गए। पुराने शिकारी थे ! आवाज सुनते ही चीख पड़े—वही वही मादा चीतल, छिन्नी हिरणी, डायन, स्पॉटेड डिपर, चिन्ना । एक्सप्रेस ५०० रायफल हाथ में लेकर शब्द भेदी निगाना लेकर फायर किया। हाराधन अपनी पुकार के सम पर आ ही रहा था उसके गुरु पंडित शिवबालक के कलेजे में एक सापट नोजड

एकसपट्टिम बुलेट आकर घुस गया। हाराधन के गुरु गिष्य द्वारा समर्पित मृगचम पर बठे थे। चीतल के घमड़े पर आज भी सून के दाग हैं। हाराधन भागा। जहाँ जाता, ऐसा ही अपटव घटनाए घटने लगी।

बान पर हाथ रखकर हाराधन ने आँखें मूँद ली। बोला—तब स, तमी स, गल म एक बयन घातक खनक पदा हो गई। मैंने बाणी को बलवित जो बिया या ! गुर बाँधन का काम करने लगा। लबिन लेबिन !

धुधलू एक पुराना मृगचम ले आया अदर से। यत्रकार न कहा—मह उस चचल युवा नर चीतल की खाल है जो चार चार तीर मीने पर साकर भी मरे पास पहुँच गया था ! मरे सामन इगन टीमें फेंक फक कर जान दी थी। गुरुजी इसी पर बठे थे, क्षण भर !

हाराधन यत्रकार ने मृगचम को उठाकर श्रद्धापूर्वक सिर से छुवाया। फिर गीताली के सामन रखकर बाला—उस स्वण मृग का क्या नाम था, मारीच ? और मीताजी को उस मृगचम पर बठने की वासना या खालमा ही क्यों हुई ? रामायण म कही है लिखा हुआ कुछ ? कोई साधना करने के लिए ही, सम्भवत !

हाराधन यत्रकार ने नेपाल तराई की श्यामल बय भूमि वहाँ की हरी मरी माया की डोरी से अपनी क्या का बाँधत हुए कहा था—बुकी ! नातिन ही बहू गा अब नाना मानती हो तो ! अच्छा अच्छा ! बल मी आओगी ? बहुत अच्छा !

दूसरे दिन भी गई, गीताली। यत्रकार न मिलते ही गीताली की हथेली देखने की इच्छा प्रकट की। गीताली ने अपने दांता हाथा की तलहथी फला दी। हू—ऊँ तुम्हारी दीदी मीताली जा कुछ नहीं कर सकी वह तुम्हारे द्वारा सम्भव होगा। निश्चय ! गीताली ने देखा यत्रकार उसकी दीदी के संगीत जीवन की छोटी-बड़ी बातों के अलावा जीवन की छोटी-बड़ी घटनाओं स भी बाकिफ है। यत्रकार न कहा था—नातिन, बुरा मत मानना। तुम्हारी दीदी न उस टमाटर जैसे आदमी से ब्याह करके सब कुछ नष्ट कर दिया। ऐसे खटमल को देना है, जो खून चूसकर लाल-गोल बूँद जसा हो जाता है ? खटमल ही है वह ब्यक्ति ! तुम्हारी दीदी का सब कुछ चूस लिया। क्या ? साहित्यिक है ? वह क्या बला है ?

बातचीत के बीच म कमा-कभी यत्रकार ऐसी ही उलझी-उलझी बातें करन लगते हैं। अपने जमाय बाबू की टमाटर और खटमल स तुलना सुनकर उस खरा भी दुःख नहीं हुआ। उसने सहमति म अपनी गरदन हिलाई—ठीक कहते हैं जाप ! बला ही है। दीदी भोग रही हैं। तिल तिलकर मर रही हैं।

मगीत-जगत् से दिलचस्पी रखन वाले असमय म विस्तृत हुई मीताली की प्रतिभा के लिए विभिन्न जनों को दोषी मानते हैं। कोई उसके गुरु का दोष बताता है कोई उसके अकाल-मातृत्व की दुहाई देता है, किन्तु मीताली के पति की आर कोई उँगली तब

नहीं उठाता जबकि दीदी की जिंदगी में घुन इसी व्यक्ति ने लगाया। 'शुचिबाय', पवित्रता का वहम ! जमाय बाबू को 'विशुद्ध' बोलने का मुद्रादोष है। अशुद्ध ? विशुद्ध सन्तुचित मुख मुद्राएँ ! दीदी अब वायसूम में ही गाती है। हाथ की उँगलियों की ओर तलहथी की चमड़ी हमेशा पानी में रहने के कारण सिकुड़ी रहती है। दिन भर कपड़े धोती है।

घुषलू भी पहचानता है मीताली 'दी' को। बात में फोडन देते हुए बोला—जिस आसर (महिफल) में मीताली 'दी' का प्रोग्राम होता था, उसमें एकाध बार लाठी ज़रूर चलती थी भीड़ पर। क्या हो गया ?

होगा क्या ! उनके पतिदेव सगीत सुनकर ही मुग्ध हुए थे। सगीत में भी ठुमरी ! मीताली 'दी' की ठुमरी में कुछ ऐसी विशेषताएँ थी, जिनके कारण, उन दिना मीताली—ठुमरी नाम की एक नई धारा ही प्रचलित हो गई थी। विवाह के बाद सबकला ममज्ञ पतिदेव ने प्यार से समझाया—मीताली रानी, ठुमरी ही गाती हो तो विशुद्ध ठुमरी गाओ। पतिदेव की इच्छा ! फिर क्या, दीदी धीरे धीरे एक राग विशेष के आश्रय में रियाज करने लगी। लखनऊ और बनारस की ठुमरी बिना किसी मिलावट के सुनान लगी। गुरुजी ने विरोध किया था। उन्होंने मीताली दी के पति को समझाने की चेष्टा की थी—ठुमरी को आचलिक सगीत के प्रभाव न ही अब तक पुष्ट किया है। खयाल की अनुमामिनी मात्र नहीं है। देहाती सुर से समन्वित ठुमरी, उस्ताद बड़े।

—बड़े-बड़े उस्तादों की बड़ी-बड़ी बोलियाँ मत सुनाइए पंडितजी ! मैं ठुमरी का इतिहास जानता हूँ। सबाल है विशुद्धता का !— ठुमरी के नाम पर बरासकर चीजें सिखाने वाला को मैं मगीतज्ञ नहीं मानता !

मीताली 'दी' खड़ी गुरु की फजीहत देखती रही। कुछ बोली नहीं !

अब तक मीताली 'दी' अपनी काफी या खम्माच की ठुमरी में कभी कीतन, कभी मठियाली और कभी पूर्वी का स्पश लगा देती थी। उसकी प्रसिद्धि का एवमात्र रहस्य यही था। मूल राग से आँख मिचौली खेलती हुई छोटी-छोटी, आचलिक रागनियाँ अजाने ही थोताओ को मोह लेती। मीताली 'दी' न निदयतापूर्वक उनका परित्याग किया। क्या सुबह-सुबह वाजूबद खुलि खुलि जाए, खुलि-खुलि जाए मीताली रानी ! बद करो भगवान् के लिए। ठुमरी 'बहुरूपी' ! जिस बेसट हाल में उसकी प्रतिभा का उदय हुआ था, उसी मंच पर अस्त भी हुआ। गीताली कसे भूल सकती है उस रात को ! उस दिन गीताली के घर मातम छाया हुआ था। गुरुजी फूट फूटकर रो रहे थे। गर्-दोस्तव सगीत-समारोह में मीताली दी अलाप के अग को पूरा भी नहीं बर पाई थी कि हाल में कुत्ते बिल्ली की बोलियाँ प्रतिध्वनित होने लगी। तरह-तरह की फन्तियाँ—मटेरनिटी सटर में भेजो ? कण्डेन्ड माल बडल !

तीन दिन के मूले-प्यासे-हारे गुरुजी के सामने गीताली ने प्रतिज्ञा की थी। उसी

दिन गीत-प्रत लिया था गीताली ने । सरल-मुगम-सहज-सगीत की स्वतंत्र मर्यादा दिलावेगी ! गीताली 'दी' की परित्यक्ता रागिनियों को उदारतापूर्वक आश्रय दिया उसने ।

रेडियो से समाचार प्रसारित होने लगा तो गीताली का समय का जान हुआ । वह चुपचाप बठवार यत्रवार की बाम करते देख रही थी । यत्रवार जैसे मूँदवार बठ गया । समाचार सुनते समय वह इसी तरह आसन लगाकर बठता । विशाल चिन्म यत्र को स्पष्ट करने का सुख अनुभव करता हूँ, समाचार सुनते समय समझी नातिन ।

इसके बाद चुपलू ने रेडियो बन्द कर दिया । गीताली के तानपूरे की गोद म लेकर यत्रवार ने कहा— देखती है, इसम सिफ चार ही तार हैं । किंतु इही चार तारों से सात स्वर उत्पन्न होने हैं । तुम्हारी दीदी ने सहायक नाद की उपेक्षा की । तुम ऐसा न करना । सीमाग्य से यत्र तुम्हारा उत्तम है ।

इसके बाद यत्रवार गीताली के तानपूरे से उत्पन्न गया । 'प' स्वर में बँपे हुए तार से 'प नि रे' ही सहायक नाद के रूप में शकृत होगा । 'सा रे ग प क्यों ? और इसीक साथ तुम अखिल भारतीय सुर-सगम-समारोह में भाग लेने जा रही थीं' रापे रापे !

गीताली को रापेश्याम की याद आई 'रापे गिटारिस्ट ! जो प्रतिभा विकसित होने के पहले ही शेष हो जाए, उसके लिए किसका दुख नही होगा ? पचरगा जकट और तलवार-बट भूँछें ! उन दिनों गीताली के घर बहुत आता-जाता था । गीताली के कई गीतों के साथ उसने संगत भी की थी । उस दिन यत्रवार के यहाँ से लौटी ता रापेश्याम प्रतीक्षा में बठा हुआ था, न जाने कब से । माँ रामकृष्ण आश्रम में कीतन सुनन गई थी । रापेश्याम ! रापेश्याम के चेहर को उसने गौर से देखा था ।

यत्रवार के कथनानुसार हर बलाकर के मुख मडल के इद गिद सुर-लहरी कापती रहती है । सिम्पनी कन्सट के कण्डक्टर मिस्टर रकिन को पहली बार देखते ही हाराधन यत्रवार ने उसके चेहर के आस पास लहराती हुई सुर-लहरी का देखा था । सी' यात्र नर से 'ई' पलट पियानो, हँन ओबो क्लारिनेट ।

रापेश्याम के मूत्र मडल के पास अमुर लहरियाँ लहरा रही थी । वह पीकरधुत था । गीताली की चुप्पी का गलत अर्थ लगाकर उसने लडखडाती हुई आवाज में कहा था— डा लि ! डि ड् डि डि डि-डा डि-डा डि डा-आ-आ ! गी-टा-ली माई गिटा आ ! अकराम के अचना क बाल गत-घटाध्वनि, धूप-गध—रापेश्याम की गिट-पिटार्ई बोली और शराब की गध ! गीताली के सबसे छोट भाइ की उम्र का यह रापेश्याम ।

इतनी हिम्मत इसकी ! गीताली चुपचाप अत्र चली गई थी ।

रापेश्याम से पीछा हटाया, ता जमाय बाबू के एक मित्र का आविर्भाव हुआ ।

गीतकार था। जीजाजी के शिष्य थे। उन्होंने गीताली की ज़िन्दगी के सभी गीतों का ठेका लेन की बात चलाई। कहे तो दिन में पांच मधुर गीतों की रचना करके दिखा दें। "तुम गीत गीत की पक्ति-पक्ति में तीन विदियों-सी बिलखी हो, मजनी ई सजनी-ई, तुम ।"

राधेश्याम एकाध फिल्मी धुन को लेकर जी रहा है। जमाय बाबू के गीतकार शिष्य को कोई सजनी मिल गई होगी !

अकेली गीताली ! गीत गूँथती, सुर देती, गाती। दस वय से गा रही है। यत्रकार ने एक और बात बताई थी गद्य ! गीता से गद्य का परिवेशन कर सको, ऐसी साधना करो !

तीसरे दिन यत्रकार का मूड बदला हुआ था। धुधलू बाहर था। गीताली चुपचाप कमरे के काने में बठ गई। अखिल भारतीय सुर सगम समारोह की अंतिम तिथिया की घोषणा हो चुकी थी। गीताली ने यत्रकार से कहा नाना, आशीर्वाद दीजिए ! निमंत्रण मिला है।

धुधलू एक दोन में धुधनी और कचरी ले आया। देखते ही यत्रकार का मूड सुधर गया। अन्दर से गीताली का तानपूरा ले आया धुधलू। बहारदार खोत्र से निकालकर गीताली की ओर बढ़ा दिया यत्रकार ने ला ! सुधर गया है। सबको सुधार देगा ! इसकी पूजा नहीं तो इज्जत जरूर करना !

गीताली ने उँगलियों से तारों को स्पश किया। हाराधन यत्रकार ने इधर-उधर देखकर कहा मेरी एक बात भानोगी ? अपनी उँगलिया छूने दोगी ? हा हाँ नातिन को अचरज हो रहा है कि बूढ़े की यह क्या आदत कमी तलहथी देखना चाहता है, कभी उँगलियाँ छूना चाहता है। हो-हो गीताली की उँगलिया को उसने अपने सिर से छुलाते हुए कहा—मुझे भय था, तुम्हारे नाखून वाटने का डग गलत तो नहीं ? उँगलियाँ पकड़ ही हँसकर पूछा था की नातनी ? मने की बाजट्टे ? क्यों ? क्या बज रहा है मन में ? क्या कहता है मन ? किस सुर में ?

उस दिन गीताली ने हँसकर जवाब दिया था कहीं, कोई अजानी रागिनी तो नहा बजती ! किन्तु आज ? आज वह सुन्ती है स्पष्ट एक ऐसी रागिनी जिसका वह बाँध नहीं पाती। उसका यत्र नहीं हारता, वह हाग्ने लगती है। कहीं हैं यत्रकार ' हैं या ?

उस बार अखिल भारतीय सुर सगम-समारोह में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने के बाद ही नाना हाराधन यत्रकार को प्रणाम करन गई थी। मुनकर आवाक हो गई, धुधलू सहित हाराधन यत्रकार फरार है। सुरमंदिरवालों ने औजार-पाती तथा बहुत-सी चीजों की धोरी का इलजाम लगाकर रपट की है। इसके बाद, दस वय हो रहे हैं। नाना, मैं तुमको नानाधन बड़ोंगी। नानाधन ! तुम अपना मृगचम

नई कहानी प्रकृति और पाठ

मुझे दो। मैं इस पर बठकर साधना करूंगी। बरोगी ? बरोगी ? डरती नहीं ? इस अशुभ मृगचम से तुम्हारा कोई अशुभ न हो जाए ! मृगचम को सिर से छुआकर, गीताली ने एक ओर रख दिया। इस पर बठकर उसने साधना की है। चीतल, चित्रा चदन के चकत्त खून के घब्बे डाट-डाट-डाट ! दस वय बाद, आज नाना हाराधन यत्रकार को स्मरण करते समय मन इमन क पद वियासो का व्यवहार कर रहा है। गीताली अब स्वयं को एक यत्र समझती है। किसी अनचीन्हे की उँगलियाँ उसे छूट जाती हैं बार-बार। अलख-मुखर-जगत् के व्यापार म बाया पडी। तीनों जलती हुई बिदिया बुझ गई। दरवाजे पर डाकिया पुकारकर चिट्ठियाँ दे गया। कुमारी गीताली दास 'गीत महल'।

हे देव ! हे देवी यह क्या ? यह सपना तो नहीं ? क्या यह सच है ? भारत प्रसिद्ध सितारवादक अकराम का प्रणय निवेदन-भरा पत्र है यह तो ! शख घण्टाघरनि घूप-गध ! जचना के बोल ! ललित मे ! विलम्बित द्रुत ! यह कसे सम्भव हुआ ? दस वय से छिपी हुई बात फल कसे गई ! माँ ! अकराम के सत म स्वर है ! इसकी पक्तियाँ सनक रही हैं। शख और घण्टा ध्वनि के बीच अकराम का कण्ठ-स्वर सुनती है गीताली ! चिरसगी तानपुरे का सहारा लेती है वह। दोनों हाथों स जकडकर पकडती है। चारो तारों से अकराम का कण्ठ स्वर प्रसारित होता है ! गीताली ! गीताली मैं हूँ अकराम। पिछले आठ साल से सुन रहा हूँ, सुन रहा हूँ क्यों उपमोग कर रहा हूँ तुम्हारे गीतों की गध। धान कूटती हुई चक्की चलाती हुई, ढोर चराती हुई मुदरिया की देह की नमकीन गध धान क सतों की पोखर और घाट पर पानी भरती हुई मुदरियों के आँचल की गध सुगध किसी वनफूल की मुरमिमय गीता की गायिका न मेरी प्राण गक्ति तेज कर दी है। मैं गीत-गधा और गीताली गगा नामक दो गगा की रचना की है। उस दिन किंतु तुमने कजूमी की है या ? एसा न करो। मैं तुम्हारे कण्ठ से अभी तक अनगाए गीता का अवतरण कराऊँगा। गीत-गधा ! मैं अपना सौभाग्य गम भूँगा तुम्हारा साथ

और यह दूसरी चिट्ठी भी बोल्ता है सनकवाली आवाज ! साण हूए नाना धन हाराधन ! ओ-ओ नातिन ! गिव प्रमान हूए है। आँसू साला। पिछल सप्ताह तुमको सुनने क बाण ही मरे घर दौडा आया मास्टर ! तुम्हारी नातिन का तिल छाटा हो रहा है या तिल चुरा रहीं है ? सतिन तुम्हारी पीत्र की गरमी उमरी रगो म उनरी हुई थी। नडबडान लगा मास्टर। आज तुम्हारी नातिन कचनार क पेड क नोक घडा भर मपु सकर बटी या गीत की किताब भी थी किंतु किंतु अनेक किंतु बाल गया कृत्तण 'यट छटपटा रहा है नातिन ! क्यों मन में क्या बज रहा है बहार बगत ? स्वयंभू नाम का कृपा है मज ! जाति विचार ? गिन्ती का जाति ?

ग्राम जाति-वादी-सवादी जादि राग को परखने के समय ।

तीसरा खत गूँगा है ! पीछले तीन साल से शुभ अवसरो पर कलापूरुण काड आँककर भेज रहा है । कलाकार । रामकृष्ण आश्रम के वापिकोत्सव मे मडप और वेदी आदि की रचना करके मनहर राय न समी वा मन मोह लिया था । गीताली वेदी के पास घण्टा चुपचाप खडी रह गई थी । क्षमा करना मनहर, गीताली चिर ऋणी रहेगी तुम्हारी । तुम चाहते ता गीताली अपना सारा रग लुटा सकती थी । तुमने उन क्षणो का दुरूपयोग नही किया । तीन वष । तीन शून्य शुभशुभ रहे तुम, सब दिन । कलाकार ! गीताली सुरजीवी है । दस वष पूव ही वह किसी के सुर मे बँध चुकी थी । फिर भी, तुम कुछ बोलते आज भी तुम्हारा खत कुछ नही बोलता ।

अकराम अलखध्वनि कर रहा है । प्यार मनहर ! अकराम ! प्यारे अकराम ! तुम ~~अ~~ने बडे शुणी हो ! तुमन कसे जान लिया सब कुछ ! गध ? महाराज, ये ~~उ~~हारी ही कृपा के फल हैं । अचना के बोल सुनत समय मुभ जा धूप की गध लगी थी ! तुम्हीने यह गध परिवेशन किया है प्रथम बार ! तुम्हारी ही चीज, तुम्ही को । लो, मैं यत्र हूँ ! तुम्हारी हूँ ! मुझे बजाआ, धय करो ।

गीताली ने पास पडे तानपूरे के तारा को छूकर शकृत कर दिया । मूल नाद से नौग्रुत ऊँचाई पर सहायक नाद उत्पन्न हुए ।

तुमने सुना होगा अकराम नानाधन घुघलू बड पार्टी मे हान बजाता है तुम समी न सुना ! गीताली अकराम के गले मे गीतमाला डाल चुकी ! 'ग' माइनर का तीव्र सुर 'एफ' मेजर का आन-दाल्लाम !

गीताली न परमहंस देव की नमस्कार किया । परमहंस देव क कथामृत से ध्वनि निकली—मानुपेर मन जेन सरपेर पुटली । आदमी वा मन माना सरसो की पोटली !

गीताली की आँखा से आँसू झर पड । कण्ठ स एक अजानी रागिनी फूट कर निकल पडी ।

अलख मुसर-जगत् मे अकराम की पगध्वनि सुन रही है गीताली ।

खून का रिश्ता

साट की पाटी पर बटा पाचा मगलसन हाथ म बिलम घाम सपने दस रहा था । उसने देसा कि यह समधिया क घर बटा है और वीरजी की सगाई हो रही है । उसकी पगड़ी पर बेगर के छींटे हैं और हाथ म दूध का गिलास है जिसे वह पूँट पूँट करने पो रहा है । दूध पीते हुए सभी बादाम की गिरी मुँह म आ जाती है कभी रिस्ते की । बाबूजी पास राठ समधिया स उतना परिचय करा रह है यह मरा चचाजाद छोटा भाई है, मगलसेन । समधी मगलसेन के घारा आर घूम रहे हैं । उनम स एव भुवकर बडे आग्रह से पूछता है, और दूध लाऊँ, चाचाजी ? पाडा-सा और ? अच्छा, स आओ, आधा गिलास, मगलसेन कहता है और तजनी से गिलास के तल म से धावर निकाल निकालकर चाटन लगता है

मगलसेन ने जीभ का घटसारा लिया और सिर हिलाया । तम्बाकू की बडवा हट से भरे मुँह म भी मिठास आ गई, मगर स्वप्न भग हो गया । हल्की-सी झुरझुरी मगलसेन के मारे बदन म दौड गई और मन सगाई पर जाने के लिए ललक उठा । यह स्वप्नो की बात नहीं थी, आज सचमुच मतीजे की सगाई का दिन था । बस थोड़ी देर बाद ही सगे-सम्बन्धी घर आने लगने, बाजा बजगा, फिर आगे-आगे बाबूजी, पीछे-पीछे मगलसेन और घर के अन्य सम्बन्धी, सभी गडक पर चलते हुए, ममधियो के घर जाएगे ।

मगलसेन के लिए साट पर बठना असम्भव हो गया । बदन म खून तो छटाँक भर था, मगर ऐसा उछलन लगा था कि बठने नहीं देता था ।

ऐन उसी वक्त कोठरी मे सतू आ पहुँचा और साट पर बठकर मगलसेन के हाथ म से बिलम लेते हुए बोला, तुम्हे सगाई पर नहीं ले जाएगे, चाचा ।

चाचा मगलसेन के बदन म सिर से पाँव तक लरजिश हुई । पर यह साचकर कि सतू खिलवाड कर रहा है, बोला, 'बडो के साथ मजाक नहीं किया करते, वई बाग कहा है । मुझ नहीं ले जाएँगे तो क्या तुम्ह ले जाएगे ?'

किसी को भी नहीं ले जाएँगे । वीरजी कहते है सगाई डलवाने सिफ बाबूजी जाएगे, और कोई नहीं जाएगा ।

वीरजी आये हैं ?' चाचा मगलसेन के बदन मे फिर लरजिश हुई और तिल धक धक करन लगा । सतू घर का पुराना नौकर था, क्या मालूम ठीक ही कहता हो ।

“ऊपर चलो, सब लोग खाना खा रहे हैं।” सतू ने चिलम के दो बग लगाए फिर चिलम को तान पर रखा और बाहर जाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर उसने फिर एक बार घूमकर हँसते हुए कहा। “तुम्हें नहीं से जाएँगे चाचा, लगा लो शत दो-दो रुपये की शत लगती है?”

“बस, बक-बक नहीं कर जा अपना काम देख।”

ऊपर रसोईघर में सचमुच बहस चल रही थी। सतू न गलत नहीं कहा था। रसोईघर में एक तरफ, दीवार के साथ पीठ लगाए बाबूजी बड़े खाना खा रहे थे। चौके के ऐन बीच में वीरजी और मनोरमा, भाई-बहन एक साथ, एक ही थाली में खाना खा रहे थे। माँजी बूल्हे के सामने बठी पराठे सेंक रही थी। माँ बेटे को समझा रही थी, “यही माँके खुशी के होते हैं, बेग। कोई पसे का भूखा नहीं होता। अकेले तुम्हारे पिताजी सगाई डलवाने जाएँगे तो समझी भी इसे अपना अपमान समझगे।”

“मैंने कह दिया माँ, मेरी सगाई सवा रुपये में होगी और केवल बाबूजी सगाई डलवाने जाएँगे। जो मजूर नहीं हो तो अभी से

“बस-बस, आगे कुछ मत कहना।” माँ ने झट टोकते हुए कहा। फिर धुब्ध होकर बोली, “जो तुम्हारे मन में आए करा। आजकल कौन किसी की सुनता है। छोटा-सा परिवार और इसमें भी कमी कोई काम ढग से नहीं हुआ। मुझे तो पहले ही मात्रम था, तुम अपनी करोगे।”

“अपनी क्यों करेगा, मैं कान खींचकर इसे मनवा लूँगा।” बाबूजी न बेटे की ओर देखते हुए बड़े दुलार से कहा।

पर वीरजी खीझ उठे, “क्या आप खुद नहीं कहा करते थे कि ब्याह शादिया पर पसे बर्बाद नहीं करना चाहिए। अब अपने बेटे की सगाई का बचत आया तो सिद्धान्त तानक पर रख दिए। बस, आप अकेले जाइए और सवा रुपया लेकर सगाई डलवा लाइए।

“बाहू जी, मैं क्यों न जाऊँ? आजकल बहनों भी जाती हैं।” मनोरमा सिर झटककर बोली, “वीरजी, तुम इस मामले में चुप रहो।”

‘सुनो बेटा, न तुम्हारी बात, न मरी,’ बाबूजी बोले ‘केवल पाँच या सात सम्बन्धी लेकर जाएँगे। कहोगे ता बाजा भी नहीं हागा। वहाँ उनस कुछ माँगेंगे भी नहीं। जो समझी ठीक समय द दें, हम कुछ नहीं बोलेंगे।’

इस पर वीरजी तुनककर कुछ कहत जा ही रहे थे, जब सीढिया पर मगलसेन के चढ़मा की आवाज आई।

“अच्छा, अभी मगलसेन स कोई बात नहीं करना। खाना खा लो, फिर बातें होती रहगी।’ माँजी न कहा।

पचास बरस की उम्र के मगलसेन के बदन के सभी चूल ढीले पड़ गए थे। जब चलता तो उचक उचककर हिचकोले खाता हुआ और जब सीढियाँ चढ़ता तो पाँव

धमीटकर, बार-बार छोटी टकारता हुआ। जब भी वह सड़क पर जा रहा होता, मोड़ पर वा साइबिल वाला दूकानदार हमेशा मगलसेन से मजाक करने रहता, आओ, मगलसेनजी, पेच क्या है ?" और जवाब में मगलसेन हमेशा उसे छोड़ी दिम्बाकर कहता, अपने से बड़ो के साथ मजाक नहीं किया करते। तू अपनी हैसियत तो देख !"

मगलसेन को अपनी हैसियत पर बड़ा नाज था। किसी जमाने में फौज में रह चुका था, इस कारण अब भी सिर पर खाकी पगड़ी पहनता था। खाकी रंग सरकारी रंग है, पटवारी से लेकर बड़े-बड़े इंस्पेक्टर तक सभी खाकी पगड़ी पहनते हैं। इस पर ऊँचा खानदान और गहर के धनीमानी भाई के घर में रहना, गँठता नहीं तो क्या करता ?

दहलीज पर पहुँचकर मगलसेन ने अदर झाँका। खिचड़ी मूँछें सस्ता तम्बाकू पीत रहने के कारण पीली हो रही थी। धनी भाँहो के नीचे दाईं आँख कुछ ज्यादा धुली हुई और बाईं आँख कुछ ज्यादा सिन्ड्री हुई थी। मामन के तीन दाँत गायब थे।

"मौजाईजी, आप रोटियाँ सँक रही हैं ? नौकरा के होते हुए"

"आओ मगलसेनजी आओ जरा देखा तो यहाँ कौन बँठा है !"

"नमस्ते, चाचाजी !" वीरजी ने धठे धठे कहा।

'उठकर चाचाजी को पालागन करो, बटा, तुम्ह इतनी भी अक्ल नहीं है !' बाबूजी ने बेटे को सिढककर कहा।

वीरजी उठ खड़े हुए और मुक्कर चाचाजी को पालागन किया। चाचाजी झँप गए।

कोने में बठा सतू जो नल के पास बरतन मलने लगा था, कंधे के पाँख मुह छिपाए हँसने लगा।

'जीते रहो, बड़ी उम्र हो !' मगलसेन ने कहा और वीरजी के मिर पर इस गम्भीरता से हाथ फेरा कि वीरजी के बाल खिखर गए।

मनोरमा खिलखिलाकर हँसने लगी।

सगाई वाले दिन वीरजी खुद भा गए हैं। बाह-बाह !"

"बठ जा, बठ जा, मगलसेन, बहुत बातें नहीं करते," बाबूजी बोले।

आप भेरी जगह पर बठ जाइए चाचाजी, मैं दूसरी चटाई ले लूँगा।

वीरजी ने कहा।

'दो मिनट रुडा रहेगा तो मगलसेन का टाँगें नहीं टूट जाएँगी !' बाबूजी बोले, 'यह खुद भी चटाई पकड़ सकता है। जाओ मगलसेन जरा टाँगें हिलाओ और अपने लिए चटाई उठा लाओ।

भाँजी ने दाँत तल हाठ दबाया और धूर धूरकर बाबूजी की ओर देखने लगी, नौकरों के सामने तो मगलसेन के साथ इस तरह हसाई से नहीं बालना चाहिए। बाँधर तो खून का रिश्ता है, कुछ लिहाज करना चाहिए।'

मगलसेन छज्ज पर से चटाई उठाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर, नौकर

की पीठ के पीछे से गुजरने लगा, तो सतू न हँसकर कहा, "वहा नहीं है, चाचाजी मैं देता हूँ, ठहरो। एक ही बरतन रह गया है, मलकर उठता हूँ।"

सतू निश्चित बठा, बाँधों के बीच मिर भुकाए बरतन मलता रहा।

मनारमा घुटनों के ऊपर अपनी टुडडी रखे, दोनों हाथा से अपने परो की उँगलिया मलती हुई, कोई वार्ता सुनाने लगी, 'दूकानदारा की टागें कितनी छोटी होती है, मया, क्या तुमने कभी देखा है?' अपन भाई की ओर बनगियो से देखकर हँसती हुई बोली 'जितनी देर वे गद्दी पर बठे रहें, ठीक लगते हैं, पर जब उठें ता सहसा छोटे हो जाते हैं, इतनी छोटी-छोटी टागें। आज मैं एक दूकान पर सूटकेस लेने गई।"

"उठो सतू, चटाई ला दो। हर बरत का मजाक अच्छा नहीं होता।" चाचा मगलसेन सतू से आप्रह्न करने लगा।

वहा खडे क्या कर रहे हो, मगलसेन? चलो इधर आओ। उठ सतू चटाई ले आ, सुनता नहीं तू? इसे कोई बात बहो तो वान मे दवा जाता है।" मा बोली।

सतू की पीठ पर चाबुक पडी। उसी वक्त उठा और जाकर चटाई ले आया। मांजी ने चूल्हे के पास दीवार के साथ रखी दो थालियो म से एक थाली उठाकर मगलसेन के सामन रख दी। मले रूमाल से हाथ पाछते हुए मगलसेन चटाई पर बठ गया। थाली मे आज तीन भाजिया रखी थी चपातिया खूब गरम-गरम थी।

सहसा बाबूजी ने मगलसेन से पूछा, "आज रामदास के पास गये थे? किराया दिया उसने या नहीं?"

मगलसेन खुशी मे था। उसी तरह चहककर बोला, "बाबूजी, वह अफीमची कभी घर पर मिलता है कभी नहा। आज घर पर था ही नहीं।"

"एक थप्पड मैं तेरे मुँह पर लगाऊँगा, तुमने क्या मुझे बच्चा समझ रखा है?"

रसोईघर मे सहसा सनाटा छा गया। मा न होठ नीच लिए। मगलसेन की पुलकन सिहरन म बदल गई। उसका दायाँ गाल हिलने-सा लगा जस चपत पडने पर सचमुच लिलने लगता है।

"छ महीने का किराया उस पर चढ गया है, तू करता क्या रहता है?"

थुक्कड मे बठे सतू के भी हाथ बरतनो को मलते मलत खूब गए। भाई बहिन पक्ष की आर देखने लगे। हाथ बेचारा, मनोरमा न मन-ही मन कहा और अपने परो की उँगलिया की ओर देखने लगी। वीरजी का खून खौल उठा। चाचाजी गरीब हैं न, इमीलिए इन्हें इतना दुत्कारा जाता है।

"और पराठा डालूँ, मगलसेनजी?" माँ ने पूछा। मगलसेन का कौर अभी गले म ही अटका हुआ था। दोनों हाथा से थाली का ढँकते हुए हडबडाकर बोला, 'नहीं भोजाईजी, बस जी!'

"जब मेरे यह रहते यह हाल है तो जब मैं कभी बाहर जाऊँगा तो क्या हाल

हागा ? मैं चाहता हूँ, तू कुछ सीग जाए और किराण का सारा काम सँभाल ले । मगर छ महीने तुझे मही आए हो गए, तूने कुछ नहीं सीखा ।”

इस पाकम को मुनकर मगलसन के सद लहू म बाड़ी-नी हरारत आई ।

“मैं आज ही किराया ले आऊंगा, बाबूजी ! न देगा तो जाएगा वहाँ ? मेरा भी नाम मगलसन है !”

“मुझे कभी बाहर जाना पड़ा तो तुम्हीं का काम सँभालना है । नौकर कभी किसी को कमाकर नहा गिलाते । जमीन जायदाद का काम करना हो तो मुस्ती स काम नहीं चलता । कुछ हिम्मत से काम लिया करो ।”

मगलसेन के बदन म झुरझुरी हुई । दिल म ऐसा डूलास उठा कि जी चाहा पगड़ी उतारकर बाबूजी के बदनमा पर रख दे । हुमककर बोला, “चिन्ता न करो जी, मेरे होते यहाँ चिन्ती फडक जाए तो कहना ? डर किस बात का ? मैं न लाम देती है बाबूजी ! बसरे की लडाई म कप्तान रस्किन था हमारा । कहने लगा दया मगलसन, हमारी शराब की बोतल लारी म रह गई है । वह हमे चाहिए । उधर मनीनगन चल रही थी । मैंने कहा अभी लो साहब ! और अकेले मैं वहाँ से बोतल निकाल लाया । ऐसी क्या बात है”

मगलसेन फिर चहकने लगा । मनोरमा मुसकराई और वनखियो से अपने माई की आर देखकर धीमे से बोली, चाचाजी को दुम फिर हिलने लगी !”

मगलसेन खाना खा चुका था । उठते हुए हँसकर बोला, “तो चार बज चलने न सगाई डलवाने ?”

“तू जा अपना काम देग जा जरूरत हुई तो तुम्हें बुला लेंगे । बाबूजी वाले । चाचा मगलसेन का िल धक्-से रह गया । सतू शायद ठीक ही कहता था मुझे नहीं ले चलगे । उसे हलाई-सी आ गई, मगर फिर चुपचाप उठ खडा हुआ बाहर जाकर जूते पहने, छडी उठाई और झूलता हुआ सीढ़िया की ओर जाने लगा ।

बीरजी का चेहरा श्रेष और लज्जा से तमतमा उठा । मनोरमा को डर लगा कि बाल और बिगडेगी बीरजी कहीं बाबूजी स न उलझ बठें । माजी को भी बुरा लगा । धीमे से कहने लगी, ‘ देखो जी, नौकरा के सामन मगलसेन की इज्जत-आबरू का कुछ तो सयाल रखा करो । भाखिर तो खून का रिश्ता है । कुछ तो मुट मुलाहिजा रखना चाहिए । दिन भर आपका काम करता है ।’

‘ मैंने उसे क्या कहा है’, बाबूजी ने हरान हाकर पूछा ।

‘या स्याई के साथ नहीं बोलते । वह क्या सोचना होगा ? इस तरह बेजाबरूई किसी की नहा करनी चाहिए ।’

क्या बक रही हो ? मैंने उसे क्या कहा है ?’ बाबूजी वाले । फिर सहसा बीरजी को ओर घुमकर कहने लगे, ‘ अब तू बोल, माई, क्या कहता है ? कोई भी काम

ढग से करने देगा या नहीं ?”

“मैंने कह दिया, पिताजी, आप जकेले जाइए और मवा रुपया लेकर सगाई बलवा लाइए।”

रसोईघर म चुप्पी छा गई। इस समस्या का कोई हल नजर नहीं आ रहा था। वीरजी टस-स-मस नहीं हो रहे थे।

सहसा बाबूजी न मिर पर से पगडी उतारी और सिर आगे की मुकावर बोले, ‘बुछ तो इन सफेद बालो का खयाल कर। क्या हमे रुमवा करता है ?”

वीरजी गुस्से मे थे। चाचा मगलसेन गरीब है इसीलिए उसके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया जाता है। यह बात उसे खल रही थी। मगर जब बाबूजी न पगडी उतार कर अपन सफेद बालो की दुहाई दी तो सहम गया। फिर भी माहस बरके वाला, “यदि आप अकले नहीं जाना चाहते तो चाचाजी को साथ ल जाइए। बस दो जन चले जाएँ।”

“कौन-से चाचा को ?” माजी ने पूछा।

“चाचा मगलसेन को।”

कोन मे बठे सतू ने भी हुरान होकर सिंग उठाय। मा पट से बोली “हाय हाय बेटा, गुम-गुम बोलो। अपने रईम माइयो को छाडकर इस मरदूद को साथ ले जाएँ ? सारा शहर यू-यू करेगा।”

माजी, अभी तो आप कह रही थी, खून का रिश्ता है। किघर गया खून का रिश्ता ? चाचाजी गरीब हैं इसीलिए ?”

‘मैं कब कहती हूँ, यह न जाए। यह भी जाए, लेकिन और सम्बन्धी भी तो जाएँ। अपन घनी-भानी सम्बन्धियो को छोड दें और इस बहुरूपिए का साथ ल जायें, क्या यह अच्छा लगेगा ?’

“तो फिर बाबूजी अकेले जाएँ।” वीरजी परेगान हो उठे। ‘मैंन जो कहना था वह दिया। अब जो तुम्हार मन मे आये करो, मेरा इससे कोई वास्ता नहीं।’ और उठकर रसोईघर से बाहर चले गए।

बेटे के यो उठ जान से रसोईघर म चुप्पी छा गई। माँ और बाप दोनो का मन खिन्न हो उठा। ऐसा गुम दिन हो बेटा घर पर आये और यो तकरार होन लगे। माँ का दिल टूक-टूक हान लगा। उघर बाबूजी का शोध बड़ रहा था। उनका जी चाहता था वह दें, जा फिर मैं भी नहीं जाऊँगा। भेज दे जिसको भेजना चाहता है। मगर यह बवत शगडे को लम्बा करने का न था।

सबसे पहल माँ ने हार मानी, “क्या बुरा कहता है। आजबल के लडके माँ-बाप के हजारो रुपये लुटा देने हैं। इसके विचार तो कितने ऊँचे हैं। यह तो सवा रुपये में सगाई करना चाहता है। तुम मगलसेन को ही अपन साथ ल जाओ। अकेले जाने से ता अच्छा है।”

बाबूजी बड़बड़ाये, बहुत बाल मगर आखिर चुप हो गये । बच्चों के आगे किस माँ-बाप की चलती है ? और चुपचाप उठ कर अपने कमर में जाने लगे ।

“जा सतू भगलसेन को कह, तयार हो जाए ।” माँजी न कहा ।

मनोरमा चहक उठी और भागी हुई वीरजी का बताने चली गई कि बाबूजी मान गये हैं ।

भगलसेन को जब मालूम हुआ कि अकेला वही बाबूजी के साथ जायेगा तो कितनी ही देर तक वह कोठरी में उचकता और चक्कर लगाता रहा । बदन का छटाक भर छून फिर उछलने लगा । जो चाहता कि सतू से उसी वक्त गत के दो रुपये रतवा ले । क्या न हो आखिर मुझसे बड़ा सम्बन्धी है भी वीर, मुझे नहीं ले जाए मे तो जिसे ले जाएँगे । मैं और बाबूजी ही उस घर में कत्ता घर्ता हैं और वीर है ? जितना ही अधिक वह इस बात पर साबुता, उतना ही अधिक उस अपने बड़प्पन पर विश्वास होने लगता । आखिर उसने वीर में रत्ता टू का का खाला और बपड बदलने लगा ।

घटा भर बाद जब भगलसेन तयार होकर आँगन में आया, तो माँजा का दिल बठ गया—यह मूग्न लेकर समधिया के घर जाएगा ? भगलसेन के सिर पर छाकी पगड़ी नीचे मली कमोज के ऊपर खाकी फौजी कोट, जिसके धागे निकल रहे थे और नीचे धारीदार पाजामा और मोटे मोटे काने बूट । माँ को नडाई आ गई । पर यह अब सर रोने का नहीं था । अपनी रलाई को दबानी हुई वह आगे बढ़ आई ।

मनोरमा जा माँ की अलमारी में से एक घला पाजामा निकाल ला । फिर बाबूजी के कमर की आर मुह करव बोली सुनते हो जो अपनी एक पगडा इधर भेज देना । भगलसेन के पास ढग की पगड़ी नहीं है ।

भगलसेन का कायाकल्प होन लगा । मनोरमा पाजामा ले आई । सतू दूत पालिंग करन लगा । आँगन के ऐन बीचोबीच एक कुरसी पर भगलसेन का पिठा किया गया और परिवार के लोग उसके आसपास माग-दौड करन लगे । क्या म मनोरमा की दा सहारियाँ भी आ पहुँची था । भगलसेन पहले से भी छाया लग रहा था । नगा सिर, दाना हाथ घुग्ता के बीच जाड़े के आगे की आर भुक्कर बठा था । बार-बार उत रामाव हो रहा था ।

भगलसेन का स्वप्न सचमुच साकार हो उठा । समधिया के घर में उसका वह आकमगन हुई कि दग्ने बनता था । भगलसेन जोराम कुरसी पर बठा था और पान् एक आन्धी सग्य पगडा हल रहा था । समधा आगे-पीछे हाथ बाँधे घूम रहे थे । एक आन्धी न सचमुच मुक्कर बड़ आपट्ट में क्या और दूध लाऊ चाचाना ? चाहा-गा और ?

और जवाब में भगलसेन न क्या नै आधा गिलास ल आया ।

समधिया के घर की ठेका मत्र पत्र था कि भगलसेन दग रह गया और ठपका सिर हवा में तरन लगा । आवाज ऊँची करव बाता करकी कुछ पड़ी लिंगा था है

या नहीं ? हमारा बेटा तो एम० ए० पास है ।”

“जी, आपकी दया स लडकी ने इसी साल बी० ए० पास किया है ।

मगलसेन ने छडी से फश को ठकोरा, फिर सिर हिलाकर बोला, ‘ घर का काम-घरघा भी कुछ जानती है या सारा वक्त किताबों ही पढ़ती रहती है ?’

“जी, थोडा-बहुत जानती है ।”

‘ थोडा-बहुत क्या ?’

आखिर सगाई डलवान का वक्त आया । समधी बादामा स भर कितन ही थाल लाकर बाबूजी और मगलसेन के सामन रखने लगे । बाबूजी ने हाथ बाध दिए ‘ मैं तो केवल एक रुपया और चार आने लू गा । मरा इन चीजो मे विश्वास नहीं है । हमे अब पुानी रस्मा को बदलना चाहिए । आप सलामत रह, आपका सवा रुपया भी मेरे लिए सवा रास के बराबर है ।

‘ आपको किस चीज की कमी है, लालाजी । पर हमारा दिल रखन के लिए ही कुछ स्वीकार कर लीजिए ।’

बाबूजी मुसकराए, ‘नहीं महाराज, आप मुझ मजबूर न कर । यह उसूल की बात है । मैं तो सवा ही रुपया लेकर जाऊंगा । आपका मिताग बलुद रह । आपकी बेटी हमारे घर आएगी तो साक्षात् लक्ष्मी विराजगी ।

मगलसेन के लिए चुप रहना असम्भव हो रहा था हुमककर वाला, एक बार कह जो दिया जी कि हम सवा रुपया ही लेंगे । आप बार बार क्या करते है ?

बेटी के पिता हंस दिए और पास खडे जपन किमी सम्बन्धी के कान म बोले, “लडके के चाचा हैं दूर के । घर म टिक हुए है । लालाजी न आसरा द रखा है ।

आखिर समधी अदर से एक थाल ले आए जिम पर लाल रंग का रंगी क्माल बिछा था और बाबूजी के सामने रख दिया । बाबूजी न क्माल उठाया, तो नीच चाँदी के थाल म चाँदी की तीन चमचम करती बटोरियाँ रखी थी, एक म नमर, दूसरी मे राँगला घागा, तीसरी मे एक चमकता चाँदी का रुपया और चमकती चवनी । इसके अलावा तीन बटोरिया म तीन छोटे छोट चाँदी के चम्मच रखे थे ।

आपन आखिर अपनी ही बात की ’ बाबूजी न हँसकर कहा ‘ मैं तो केवल सवा रुपया लेने आया था ’ मगर थाल स्वीकार कर लिया और मन-ही-मन बटोरियो, थाल और चम्मचा का मूल्य आँकने लगे ।

माोरमा और उसकी महलियाँ छज्जे पर सडी थी जब दोना भाई सडक पर आते दिखलाई दिए । मगलसेन व कपे पर थाल था लाल रंग क क्माल म देका हुआ जोर आगे-आगे बाबूजी चले आ रहे थे ।

वीरजी अब भी अपन कमरे म थ और पन्न पर उर किमी नावल के पन्ना म अपन मन को लगाने का विफल प्रयास कर रहे थे । उनका माया धवा हुआ था मगर

हृदय धूमिल भावनाओं में उद्बलित होने लगा था। क्या प्रमा मरे लिए भी कोई सदा भेजेगी? सवा रुपये में सगाई डलवान के बारे में वह क्या सोचती होगी? मन-ही मन तो जरूर मेरे आदर्शों को सराहती होगी। मैंने एक गरीब आदमी को अपनी सगाई डलवान के लिए भजा। इससे अधिक प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे आदर्शों का क्या हो सकता है?

लाख लाख बचाइयाँ, मौजआईजी! घर में कदम रखते ही मगलसेन न आवाज लगाई।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ भागती हुई जंगले पर आ गईं। बाबूजी गम्भीर मुद्रा बनाए, आँगन में आए और छड़ी बान में रखकर अपने कमरे में चले गए।

मनोरमा भागती हुई नीचे गई और झपटकर थाल चाचा मगलसेन के हाथ में छीन लिया।

कसी पगली है! दो मिनट इंतजार नहीं कर सकती।

'बाहू जी, बाहू!' मनोरमा ने हसकर कहा, 'बाबूजी की पगड़ी पहन ली तो बाबूजी ही बन बैठे हैं! लाइए मुझे दीजिए। आपका काम पूरा हो गया।'

माँजी की दोनों बहनें जो बस बीच आ गई थी, माँजी से गले मिल मिलकर बघाई देने लगीं। आवाज सुनकर बीरजी भी जंगले पर आ खड़े हुए और नीचे आँगन का दृश्य देखने लगे। थाल पर रखे लाल रुमाल को देखते ही उनका रोम रोम पुलकित हो उठा। सहसा ही वह ससुराल की चीजों से गहरा लगाव महसूस करने लगे। इस रुमाल को जरूर प्रमा ने अपने हाथ में छुआ होगा। उनका जो चाहा कि रुमाल की हाथ में लेकर चूम लें। इस भेंट को देखकर उनका मन प्रमा से मिलने के लिए बेताब होने लगा।

माँजी ने थाल पर से रुमाल उठाया। चमकती बटोरियाँ, चमकता थाल बीच में रखे चम्मच। बीरजी को महसूस हुआ जैसे प्रमा ने अपना गोरे-गोरे हाथों से इन चीजों को करीने से सजाकर रखा होगा।

'पानी दिलाओ सातू, चाचा मगलसेन ने आँगन में कुर्सी पर बैठते हुए टॉप के ऊपर टॉप रखकर, सातू को आवाज लगाई।

इतने में माँजी की आवाज आई 'तीन बटोरियाँ और दो चम्मच? यह क्या हिमाचल हुआ? क्या तीन चम्मच नहीं निया समझिया न?' फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोली 'अजी मुनत हो! तुम भी कम हो आज क दिन माँ कोई आदर जा बट्टा है?

क्या है?' बाबूजी ने अन्तर में ही पूछा।

कुछ बताओ तो सही, समझिया न क्या कुछ दिया है?

बस, थाल में जो कुछ है वही निया तर बटे में मना जा कर निया था।'

“क्या तीन कटोरिया थी और दो चम्मच थे ?”

“नहीं तो, चम्मच भी तीन थे।”

‘चम्मच तो यहाँ सिर्फ दो रखे हैं।’

“नहीं-नहीं, घ्यान से देखो जरूर तीन होंगे। मगलसेन से पूछो, वही थाल उठाकर लाया था।”

मगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहा है ?”

मगलसेन सतू को सगाई का ब्योरा दे रहा था—समधी हमारे सामने हाथ बाधे यो खडे थे, जैसे नौकर हो। लटकी बड़ी सुशील है, बड़ी सलीके वाली बी० ए० पास है, सीना पिरोना भी जानती है ”

‘मगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है ?

‘कौन-सा चम्मच ? वही थाल में होगा।’ मगलसेन न लापरवाही से जवाब दिया।

“थाल में तो नहीं है।”

‘तो उन्होंने दो ही चम्मच दिए होंगे। बाबूजी न थाल लिया था।’

“हमें बेवकूफ बना रहे हो मगलसेनजी, तुम्हारे भाई कह रहे हैं, तीन चम्मच थे।”

इतने में बाबूजी की गरज सुनाई दी, ‘इसीलिए मेरे साथ गये थे कि चम्मच गवां आओगे ? कुछ नहीं तो पाँच-पाँच रुपए का एक एक चम्मच हागा।’

मगलसेन ने उसी लापरवाही से कुरसी पर से उठकर कहा, ‘मैं अभी जाकर पूछ आता हूँ। इसमें क्या है ? हो सकता है, उन्होंने दो ही चम्मच रखे हैं।’

“वहाँ वहाँ जाओगे ? बताओ चम्मच कहाँ है ? मारा बकन तां थाल पर कमाल रखा रहा।”

‘बाबूजी, थाल तो आपने लिया था, आपने चम्मच गिन नहीं थे ?’

‘मेरे साथ चालाकी करता है ? बदजात ? बता तीसरा चम्मच कहाँ है ?”

माजी चम्मच खा जान पर विचलित हो उठी थी। बहना की ओर धूमकर वाली “गिनी-बुनी तो समझियो न चीजें दी हैं, उनमें से भी अगर कुछ खो जाए ता बुरा तो आखिर लगता ही है।”

“कसा छीठ आदमी है, मुन रहा है और कुछ बालना नहीं।” बाबूजी न गरज कर कहा।

चम्मच खो जाने पर अचानक वीरजी को बेहद गुस्मा आ गया। प्रभा न चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँचा ही नहीं। प्रभा के प्रेम की पहली निगानी ही खा गई। वीरजी सहसा आवेग में आ गए। वीरजी ने आव देखा न ताव मगलसेन के पास जाकर उमे दानो कंधो से पकड़कर मित्राड दिया।

"आपको इमीलिए भेजा था कि आप चीजें गँवा जाएँ ?"

सामी चुप हो गये। सबता-सा छा गया। वीरजी गिन्न-से महगूस करने लगे कि मुझमें यह क्या भूल हो गई और झोंपर वापस जाने लगे।

'तुम बीच में मत पडा, बेटा ! अगर चम्मच खो गया है तो तुम्हारी बला से ! सबका घम अपने-अपन साथ है। एक चम्मच से कोई अमीर नहीं बन जाएगा !'

जेब ता दरा इसकी ! ' बाबूजी न गरजकर कहा।

मोसियाँ झोंप गईं और पीछे हट गईं। पर मनोरमा से न रहा गया। झट आगे बढ़कर वह जेब देताने लगी। रसोईघर की दहलीज पर सतू हाथ में पानी का गिलास उठाए खड़ा गया और मगलसेन की ओर देखने लगा। चाचा मगलसेन खड़ा कभी एक का मुँह दल रहा था वभी दूसरे का। वह कुछ बहना चाहता था, मगर मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था।

एक जेब में से मला-सा रुमाल निकला, फिर बीडिया की गड्डी माचिस, छोटा सा पतिल का टुकड़ा।

"इस जेब में तो नहीं है।" मनोरमा बोली और दूसरी जब देखने लगी। मनोरमा एक एक चीज निकालती और अपनी सहलिया की दिखा दिखाने पर हसती।

दाई जेब में कुछ खनका। मनोरमा बिल्ला उठी 'कुछ खनका है, इसी जेब में है, चोर पकड़ा गया। तुमने सुना मालती ?"

जेब में टूटा हुआ चाकू रखा था, जो चाबिया के गुच्छे से लगकर खनका था।

"छोड़ दो, मनोरमा ! जाने दो सबका घम अपने-अपने साथ है। आपसे चम्मच अच्छा नहीं है मगलसेनजी, लेकिन यह सगाई की चीज थी।

मगलसेन की साम फूलन लगी और टाँगें काँपने लगी, लेकिन मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था।

'दाना बान खोकर सुन ले, मगलसेन ! बाबूजी ने गरजकर कहा, 'मैं तेरे से पाँच रुपये चम्मच के ले लूँगा, इसमें मैं कोई लिहाज नहीं करूँगा।'

मगलसेन खड़े खड़े गिर पडा।

बघाइ, बहनजी ! ' नीचे आँगन में से तीन चार स्त्रिया की आवाज एक साथ आ गई।

मगलसेन गिरा भी अजीब ढंग से। घम्म से जमीन पर जो पडा तो उकड़ू हो गया और पगड़ी उतर कर गले में आ गई। मनोरमा अपनी हँसी रोके न रोक सकी।

'देखो जो कुछ तो खयाल करा। गली मुहल्ला सुनता होगा। इतना रखाइ से भी कोई बोलता है !' माँजी न कहा फिर धबराकर सतू से बहन लगी, "इधर माओ मन्तू और इह छज्जे पर लिटा आओ।

वीरजी फिर खिन्न-सा अनुभव करते हुए अपने कमर में चले गए। मैं जल्द

बाजी की मुझे बीच में नहीं पड़ना चाहिए था। इतना चम्मच वहाँ चुराया होगा, जहर वही गिर गया होगा।

बाजू नीचे अपने कमरे में चले गए। शीघ्र ही घर में लालक बजने की आवाज़ आने लगी। मनोरमा और उसकी सहेलियाँ आगन में कालीन बिछवाकर बैठ गईं। ढोलक की आवाज़ सुनकर पड़ोसियों घर में दवाई देने आने लगीं।

एन उसी वक्त गलीवाले दरवाज़े के पास एक लड़का आ खड़ा हुआ। मकोच वश वह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि ज़रूर जाए या वहीं खड़ा रहे। मनोरमा ने देखते ही पहचान लिया कि प्रभा का भाई, वीरजी का साला है। भागी हुई उसके पास जा पड़ोसी जोर शरारत से उसके सिर पर हाथ फेरने लगीं।

आजा, बेटाजी अन्दर आओ, तुम यहाँ पड़ास में रहते हो न ?

“नहीं, मैं प्रभा का भाई हूँ।”

“मिठाई खाओगे ? मनोरमा ने फिर शरारत से कहा और हँसने लगी।

लड़का सकुचा गया।

‘नहीं, मैं तो यह दान आया हूँ’ उसने कहा और जैकेट की जेब में से एक चम्मच, सफ़ेद चम्मच निकाला और मनोरमा के हाथ में देकर उही कदमों वापस लौट गया।

‘हाथ, चम्मच मिल गया। भाजी चम्मच मिल गया।’

पर भाजी सम्बन्धितों से घिरी खड़ी थी। मनोरमा रुक गई और माँ से नज़र मिलाने की कोशिश करते हुए, हाथ ऊँचा करके चम्मच हिलाने लगी। चम्मच को कभी नाक पर रखनी, कभी हवा में हिलानी, कभी ऊँचा फेंककर हाथ में पकड़ती, मगर भाजी कुछ समझ ही नहीं रही थी।

छज्जे पर सतू के मगलसन को खाट पर लिटाया और मुँह पर पानी का छीटा देत हुए बोला, ‘तुम शत जीत गए। बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपये नकद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा।’

एक और ज़िदगी

और उम एक क्षण के लिए प्रवाण व हृदय की घटवन जैसे रही रही । कितना विचित्र था यह क्षण—आवाज से टूटकर गिरे हुए नशा जसा । कोहरे के बस में एक लकीर-सी सींचकर यह क्षण सटसा व्यतीत हो गया ।

कोहरे में से गुजरकर जाती हुई आकृतियों को उसने एक बार फिर ध्यान से देखा । क्या यह सम्भव था कि व्यक्ति की आँखें म हृद तक उसे धासा दें ? तो जो कुछ वह देख रहा था, वह यथाथ ही नहीं था ?

कुछ ही क्षण पहले जब वह कमरे से निकलकर बालकनी पर आया था, तो क्या उसने कल्पना में भी यह साँचा था कि आवाज के ओर-छार तक फले हुए कोहरे में गहरे पानी की निचली सतह पर तरती हुई मछलियों जसी जो आकृतियाँ नजर आ रही हैं उनमें कहीं व दा आकृतियाँ भी हानगी ? मंदिर वाली सड़क स आत हुए दो कुहरीले रंगों पर जब उसकी नजर पड़ी थी तब भी क्या उसके मन में कहा ऐसा अनुमान जागा था ? फिर भी न जान क्या उस लग रहा था जस बहुत समय से, बल्कि कई दिनों से वह उनके बहाँ से गुजरने की प्रतीक्षा कर रहा हो जैसे कि उन्हें देखने के लिए ही वह कमरे से निकलकर बालकनी पर आया हो और उहाँ को ढूँढती हुई उसकी आँखें मन्दिर वाली सड़क की तरफ मुड़ी हो ।—यहाँ तक कि उस धानी आँबल और नीली नेकर के रंग भी जैसे उसके पहचाने हुए हो और कोहरे के विस्तार में वह उन दो रंगों को ही खोज रहा हो । बस उन आकृतियों के बालकनी के नीचे पहुँचने तक उसने उन्हें पहचाना नहीं था । परन्तु एक क्षण में सहसा वे आकृतियाँ इस तरह उसके सामने स्पष्ट हो उठी थी जैसे जड़ता क क्षण में अवचेतन की गहराई में डूबा हुआ कोई विचार एकाएक चेतना की सतह पर कौंध गया हो ।

नीली नेकर वाली आकृति धूमकर पीछे की तरफ देख रही थी । क्या उस भी कोहर में किसी की खोज थी ? और किसकी ? प्रकाश का मन हुआ कि उस आवाज दे दे, मगर उसका गले से शब्द नहीं निकले । कोहरे का समुद्र अपनी गभीरता में खामोश था मगर जैसे उसकी अपनी खामोशी एक ऐसी तूफान की तरह लग रही थी जहाँ हवा न मिलने से अपने अंदर ही घुमडकर रह गया हा । नहीं तो क्या वह इतना ही असमय था कि उसके गले से एक शब्द भी न निकल सक ?

वह बालकनी से हटकर कमरे में आ गया। वहाँ आते ही अपने अस्त-व्यस्त सामान पर नज़र पड़ी, तो शरीर में निराशा की एक सिहरन दौड़ गई। क्या यही वह ज़िंदगी थी जिसके लिए उसने ? परन्तु उस लगा कि उसके पास कुछ भी साधन के लिए समय नहीं है। उसने जल्दी-जल्दी कुछ चीज़ों को उठाया और रख दिया जस कि कोई चीज़ ढूँढ रहा हो जो उसे मिल न रही हो। अचानक खूँटी पर लटकती हुई पतलून पर नज़र पड़ी, तो उसने पाजामा उतारकर जल्दी से उसे पहन लिया। फिर पल भर खोया-सा खड़ा रहा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या चाहता है। क्या वह उन दोनों के पीछे जाना चाहता था ? या बालकनी पर खड़ा होकर पहले की तरह उन्हें देखते रहना ही चाहता था ?

अचानक उसका हाथ भेड़ पर रखे हुए ताने पर पड़ गया, तो उसने उसे उठा लिया। जल्दी से दरवाज़ा बन्द करके वह जीने से उतरने लगा। जीने पर आकर पता चला कि जूता नहीं पहना। वह पल भर के लिए ठिठककर खड़ा रहा मगर लौटकर नहीं गया। नीचे सड़क पर पहुँचते ही पाव कीचड़ में लयपय हो गए। दूर देखा—वे दोनों आकृतियाँ घोड़ों के अड्ड के पास पहुँच चुकी थी। वह जल्दी-जल्दी चलने लगा। पास से गुज़रते हुए एक घोड़े वाले से उसने कहा कि वह आगे जाकर नीली नेकर वाले बच्चे को रोक ले—उससे कहे कि कोई उससे मिलने के लिए पीछे आ रहा है। घोड़े वाला घोड़ा दौड़ाता हुआ गया मगर उन दोनों के पास न रुककर उनसे आगे निकल गया। वहाँ जाकर उसने न जाने किसे उसका सधना दे दिया।

जल्दी-जल्दी चलते हुए भी प्रकाश का लग रहा था जैसे वह बहुत आहिस्ता चल रहा हो, जैसे उसके धुटने जकड़ गए हों और रास्ता बहुत बहुत लम्बा हो गया हो। उसका मन इस आशा से बेचन था कि उसके पास पहुँचने तक वे लोग घोड़ों पर सवार होकर वहाँ से चल न दें और जिस दूरी को वह नापना चाहता था, वह ज्या की ल्यो न बनी रहे। मगर ज्या-ज्या फासला कम हो रहा था, उसका कम होना भी उसे अवर रहा था। क्या वह जान-बूझकर अपने को एक ऐसी स्थिति की ओर नहीं ले जा रहा था जिससे उसे अपने को बचाना चाहिए था ?

उन लोगों ने घोड़े नहीं लिए थे। जब वह उनसे तीन-चार गज दूर रह गया, तो सहसा उसके कदम रुक गए। तो क्या सचमुच अब उसे उस स्थिति का सामना करना ही था ?

'पागी !' इससे पहले कि वह निश्चय कर पाता अनायास उसके मुँह से निकल गया।

बच्चे की बड़ी-बड़ी आँखें अचानक उसकी तरफ़ धूम गई—साथ ही उसकी माँ की आँखें भी। मोहरे में अचानक कई-कई बिजलियाँ कौंध गईं। प्रकाश तो-एक कदम और आगे बढ़ गया। बच्चा विस्मित आँखों से उसकी तरफ़ देखता हुआ अपनी माँ के

साथ सट गया ।

'पलाग, इधर जा मर पाग', प्रकाश ने हाथ से घुटनी बजाया हुआ कहा, जैसे कि यह हर रोज की एक साधारण घटना हो और बच्चा अभी कुछ मिनट पहले ही उमके पाग में अपनी माँ के पास गया हो ।

बच्चा ने माँ की तरफ देगा । यह अपनी आँसू इगावर दूसरी तरफ देग रही थी । बच्चा और भी उससे साथ सट गया और उसकी आँसू विरमय के साथ-साथ एक गरारत से घमन उठी ।

प्रकाश का यही गड-गड उल्लान हो रही थी । उस लग रहा था कि मुझे बच कर उस दूरों में नापने के सिवा उमके पास कोई चारा नहीं है । यह लम्ब-लम्ब डग भरकर बच्चे के पास पहुँचा और उस उमने बाँहा से उठा लिया । बच्चे ने एक बार किल-कारकर उमके हाथा से छूने की चष्टा की, परन्तु दूसरे ही क्षण अपनी छोटी-छोटी बाँह उमके गले में डालकर वह उससे लिपट गया । प्रकाश उस लिए हुए थोड़ा एक तरफ का हट आया ।

'तूने पापा का पहचाना नहीं था क्या ?'

पताना ता", बच्चा बाँह उमके गले में डालकर भूलने लगा ।

'तो तू सट स पापा के पास आया क्या नहीं ?'

'नहीं आया, कहकर बच्चे ने उसे चूम लिया ।

तू आज ही यहाँ आया है ?'

नहीं, तल आया ता ।'

'रहेगा या आज ही लौट जाएगा ?'

अबो तीन चाठ दिन लहूँदा ।'

ता पापा के पास मितन आएगा न ?'

'आऊँदा ।'

प्रकाश ने एक बार उसे अच्छी तरह अपने साथ सटाकर चूम लिया तो बच्चा चिल्लाकर उसके माथे आखों और गालों को जगह जगह चूमने लगा ।

'कसा बच्चा है !' पास खडे एक कश्मीरी मजदूर ने सिर हिलाते हुए कहा ।

'तुम तहा लहते हो ?' बच्चा बाँह उमकी गरदन में डाले हुए जैसे उसे अच्छी तरह देखने के लिए थोड़ा पीछे का हट गया ।

वहाँ !' प्रकाश ने दूर अपने कमरे की बालकनी की तरफ इशास किया । 'तू कब तक यहाँ आएगा ?'

अभी ऊपल जाकल दूद पिऊँदा, उलक बाद तुमाले पाछ आऊँदा ।' बच्चे ने एक बार अपनी माँ की तरफ देखा और उसकी बाहों से निकलने के लिए मचलन लगा ।

'मैं वहा बालकनी में कुरसी डालकर बठा रहूँगा और तेरा इ सजारा करूँगा

बच्चा बाहा से उतरकर अपनी मा की तरफ भाग गया ता प्रकाश न पीछे से कहा । क्षण भर के लिए उसकी आँखें बच्चे की मा से मिल गईं परंतु दूसरे ही क्षण दोनों दूसरी-दूसरी तरफ देखने लगे । बच्चा जाकर मा की टांगों से लिपट गया तो वह कोहरे के पार देवदारा की घुँघली रेखाओं को देखती हुई उससे बोली, “तुझे दूध पीकर आज खिलनमग नहा चलना है क्या ?”

‘नहीं’ बच्चे ने उसकी टांगों के सहारे उछलते हुए सपाट जवाब दिया, “मैं दूध पीतल पापा से पाछ जाऊँदा ।”

तीन दिन तीन रातों से आकाश घिरा हुआ था । कोहरा धीरे धीरे जतना घना हो गया था कि बालकनी से आगे कोई रूप, कोई रंग नजर नहीं आता था—आकाश की पारदर्शिता पर जैसे गाढ़ा सफेदा पात दिया गया था । ज्या-ज्यो समय बीत रहा था कोहरा और घना होता जा रहा था । कुरसी पर बठे हुए किसी किसी क्षण महसूस होने लगता था जैसे वह बालकनी पहाड़िया से घिरे हुए खुले विस्तार में न होकर अन्तरिक्ष के किसी रहस्यमय प्रदेश में बनी हो—नीचे और ऊपर केवल आकाश ही आकाश है जिसके अतल में बालकनी की सत्ता एक अपन-आपमें पूर्ण और स्वतंत्र लोक की तरह हो ।

उसकी आँखें इस तरह एकटक सामने की तरफ देख रही थीं—जैसे आकाश में और कोहर में उसे कोई अर्थ ढूँढना हो—अपनी बालकनी के बहा होने के रहस्य को जानना हो ।

हवा से कोहर के बादल कई-कई रूप लेकर इधर-से-उधर भटक रहे थे—अपनी गहराई में फलत और सिमटत हुए वे अपनी याह नहीं पा रहे थे । बीच में कहीं कहीं देवदारों की फुनगियाँ एक हरी लकीर की तरह निकली हुई थीं—कोहरे के आकाश पर लिखी गई एक अस्त-व्यस्त लिपि जसी । देखते-देखते वह लकीर भी गुप्त हो जाती थी—कोहरे का हाथ उसे रहने देना नहीं चाहता था । लकीर को मिटत दबकर स्नायुओं में एक तनाव-सा आ रहा था—जस किसी भी तरह वह उस लकीर का मिटन से बचा लेना चाहता हो । परंतु जब एक बार लकीर मिटकर बाहर नहीं निकली तो उमन सिर पीछे को डाल लिया और खुद भी कोहरे में कोहल होकर पड़ रहा ।

अतीत के कोहरे में कहीं वह एक दिन भी था जो चार वरस बीत जाने पर भी आज तक बीत नहीं सका था ।

बच्चे की पहली बपगाँठ थी उमर दिन—वही उनके जीवन की सबसे बड़ी गाँठ बन गई थी ।

विवाह के कुछ महीने बाद स ही पति-पत्नी अलग-अलग रहने लगे थे । विवाह के साथ जो सूत्र जुड़ना चाहिये था, वह जुट नहीं सका था । दोनों अलग-अलग जगह काम करते थे और अपना-अपना स्वतंत्र तानाबाना बुनकर जी रहे थे । गवाचार के

नाते साल छ महीने मे बन्नी एक बार मिल लिया करते थे । वह लोकाचार ही इस बच्चे को ससार म ले आया था ।

बीना समझती थी कि इस तरह जान बूझकर उसे फँसा दिया गया है । प्रकाश सोचता था कि अनजान म ही उससे एक अपराध हो गया है । परंतु जन्म के पाँचवें या छठे रोज बच्चे की हालत सहसा बहुत खराब हो गई, तो वह अपने कमरे म अकेला बठा हवा मे बच्चे के आकार को देखता हुआ बहता रहा था, ' देख, तुझे जीना है । तू इस तरह नहीं जा सकता । मुन रहा है ? तुझे जीना है । हर हालत म जीना है । मैं तुझे जाने नहीं दूँगा । समझा ?'

साल भर से बच्चा माँ के पास ही रह रहा था । बीच मे बच्चे की दादी छ सात महीने उसके पास रह आई थी ।

पहली बपगाँठ पर बीना न लिखा था कि वह बच्चे का लेकर अपने पिता क यहाँ लखनऊ जा रही है । वही पर बच्चे के जन्मदिन की पार्टी करेगी ।

प्रकाश ने उसे तार दिया था कि यह भी उस दिन लखनऊ आएगा । अपने एक मित्र के यहाँ हजरतगज म ठहरेगा । अच्छा होगा कि पार्टी वही पर की जाए । लखनऊ के कुछ मित्रो को भी उसने सूचित कर दिया था कि उसके बच्चे की बर्णगाँठ के अवसर पर वे उसके साथ चाय पीने के लिए आएँ ।

उसने सोचा था कि बीना उसे स्टेशन पर मिल जाएगी, परंतु वह नहीं मिली । हजरतगज पहुँचकर नहा धो चुकने के बाद उसने बीना के पास सदेश भेजा कि वह वहाँ पहुँच गया है, कुछ लोग साढ़े चार-पाच बजे चाय पर आएँगे इसलिए वह उस समय तक बच्चे को लेकर अवश्य वहाँ पहुँच जाए । परंतु पाच बजे, छ बजे सात बजे गए बीना बच्चे को लेकर नहीं आई । दूसरी बार सन्देश भेजने पर पता चला कि वहाँ उन लोगो की पार्टी चल रही है । बीना न कहला भेजा कि बच्चा आठ बजे तक खाली नहीं होगा, इसलिए वह उस समय उसे लेकर नहीं आ सकती । प्रकाश ने अपने मित्रो को चाय पिलाकर विदा कर दिया । बच्चे के लिए खरीदे हुए उपहार बीना के पिता के यहाँ भेज दिए । साथ म यह सन्देश भी भेजा कि बच्चा जब भी खाली हो, उसे थोड़ी देर के लिए उसके पास भेज दिया जाए ।

परंतु आठ के बाद नौ बजे, दस बजे बारह बजे पर बीना न तो बच्चे को लेकर ही आई और न ही उसने उसे किसी और के साथ भेजा ।

प्रकाश रात भर सोया नहीं । उसके दिमाग को जस कोई छनी से छीलता रहा ।

सुबह उसने फिर बीना के पास सन्देश भेजा । इस बार बीना बच्चे को लेकर आ गई । उसने बताया कि रात का पार्टी दर तक चलती रही, इसलिए उसका आना सम्भव नहीं था—अगर वास्तव म उस बच्चे से प्यार था, तो उसका कतव्य था कि वह अपने उपहार लेकर मुद् उनके यहाँ पार्टी में आ जाता ।

उस दिन सुबह से आरम्भ हुई बात आधी रात तक चलती रही। प्रकाश बार बार कहता रहा, "बीना, मैं इस बच्चे का पिता हूँ। पिता होने के नाते मुझे यह अधिकार तो है ही कि मैं बच्चे को अपने पास बुला सकूँ।"

परन्तु बीना का उत्तर था "आपके पास पिता का िल होता, तो क्या आप पार्टी में न आते? आप मुझसे पूछें, तो मैं तो कहूँगी कि यह एक आकस्मिक घटना ही है कि आप इसके पिता हैं।"

"बीना!" वह फटी फटी आँखों से उसके चेहरे की तरफ़ देखता रह गया।
"तुम बताओ, तुम चाहती क्या हा?"

"कुछ भी नहीं। मैं आपसे क्या चाहूँगी?"

"तुमने सोचा है कि इस बच्चे के भविष्य का क्या होगा?"

"जब हम अपने ही भविष्य के बारे में नहीं सोच सकते तो इसके भविष्य के बारे में क्या सोचेंगे?"

"क्या तुम यह पसन्द करोगी कि बच्चे को मुझे सौंप दा और खुद स्वतंत्र हो जाओ?"

"बच्चे को आपको सौंप दूँ?" बीना के स्वर में वितुष्णा गहरी हो गई। "इतनी मूल्य मैं नहीं हूँ।"

"तो क्या तुम यही चाहती हो कि इसका निर्णय करने के लिये अदालत में जाया जाए?"

"आप अदालत में जाना चाहें तो मुझे उसमें भी एतराज नहीं है। ज़रूरत होने पर मैं सुप्रीमकोर्ट तक लड़ूँगी। आपका बच्चे पर कोई अधिकार नहीं है।"

"बच्चे को पिता से ज्यादा माँ की ज़रूरत होती है," कई दिन कई सप्ताह वह मन ही मन सघष करता रहा। 'जहाँ उसे दानो न मिल सकते हैं वहाँ उसे माँ तो मिलनी चाहिए ही। अच्छा है तुम बच्चे की बात मूल जाओ और नये सिरे से अपनी जिंदगी बनाने की कोशिश करो।

"भगर ।"

'फिज़ूल की हज़्जत में कुछ नहीं रखा है। बच्चे अच्चे ता होते ही रहते हैं। तुम सम्बन्ध विच्छेद करके फिर से ब्याह कर लो, ता घर में बच्चे ही बच्चे ही जाएँगे। समझ लेना कि इस एक बच्चे के साथ कोई दुघटना हो गई थी ।'

सोचन सोचन में दिन, सप्ताह और महीने निबलत गए। क्या सचमुच इमान पहले की जिंदगी को मिटाकर नये सिरे में जिंदगी आरम्भ कर सकता है? क्या सच मुच जिंदगी के कुछ वर्षों को एक दुःस्वप्न की तरह भूलन का प्रयत्न किया जा सकता है? बहुत-से इंसान हैं जिनकी जिंदगी वहीं न कही किसी न किसी दोराहे से गलत दिशा की ओर भटक जाती है। क्या यही उचित नहीं कि इन्सान उम रास्ते को बदल

कर अपनी गलती सुधार ले ? आखिर इंसान को जीने के लिए एक ही जीवन ता मिलता है—वही प्रयोग के लिए और वही जीने के लिये। तो क्या इन्सान एक प्रयोग की असफलता को जीवन की असफलता मान ले ?

कोट में बागज पर हस्ताक्षर करते समय छत के पखे से टक्कराकर एक चिड़िया का बच्चा नीचे आ गिरा।

“हाय-हाय चिड़िया मर गई”, किसी ने कहा।

‘मरी नहीं अभी जिंदा है’, कोई और बोला।

‘चिड़िया नहीं है, चिड़िया का बच्चा है’, किसी तीसरे ने कहा।

“नहीं, चिड़िया है।”

‘नहीं, चिड़िया का बच्चा है।’

“इसे उठाकर बाहर हवा में छोड़ दो।”

“नहीं, यही पडा रहने दो। बाहर इसे कोई बिल्ली खा जायगी।”

“यह यहाँ आया किस तरह ?”

“जाने किस तरह ? रोशनदान के रास्ते आ गया होगा।

‘बेचारा कस सड़प रहा है।’

“शुक्र है पक्ष ने इसे काट ही नहीं दिया।

“काट दिया होता तो बल्कि अच्छा था। अब इस तरह बेचारा क्या जाएगा ?”

तब तक पति-पत्नी दोनों ने बागज पर हस्ताक्षर कर दिए थे। बच्चा उस समय कोट के जहाते में कबीरा के पीछे भागता हुआ बिलकारियाँ मार रहा था। वहाँ धूल उड़ रही थी और चारों तरफ मटियाली-सी धूप फली थी।

फिर वही दिन, सप्ताह और महीने ।

अढ़ाई साल गुजर जान पर भी प्रकाश फिर से जिन्दगी आरम्भ करने का निश्चय नहीं कर पाया था। उस अरस में बच्चा तीन बार उससे मिलन के लिए आया था। वह नौकर के साथ आता था और जिन मर रहकर अंधेरा हान पर लोट जाता था। पहली बार वह उससे गरमाठा रहा था मगर बाद में उससे हिल मिल गया था। प्रकाश बच्चे को लेकर घूमने जाता था उसे आइसक्रीम खिलाता था, पिलौने रो देता था। बच्चा जाने के समय हट करता था अबी नहा जाऊँदा। दूद पीनल जाऊँदा। थाना पातल जाऊँदा।”

जब बच्चा इस तरह की बात कहता था, तो उसने अन्तर सहमा कोई चीज मुलम उठनी थी। उसका मन होता था कि, नौकर को सिद्धकर वापस भेज दे और बच्चे को हमसा-हमेगा के लिए अपना पास रख ले। जब नौकर बच्च से कहता था, “बाबा, खलो अब दर हो रही है”, तो प्रकाश का गरीर एक हताग आवेग से काँपने लगता और बहुत बटिनता से वह अपने को संभाल पाता। आखिरी बार बच्चा रात के

नौ बजे तक खा रहा गया, तो एक अपरिचित व्यक्ति उसे लेन के लिए बग़ा आया था।

बच्चा उस समय उसकी गोदी में बटा खाना खा रहा था।

“देखिए, अब बच्चे को भेज दीजिए, इसे बहुत दर् हो गई है” अजनबी ने आकर कहा।

— “आप देख रहे हैं बच्चा खाना खा रहा है”, उसका मन हुआ कि मुक्का मार कर उस आदमी के दात तोड़ दे।

“हा, हा, आप खाना खिला दीजिए”, अजनबी ने उदारता के साथ कहा, “मैं नीचे इन्तज़ार कर रहा हूँ।”

गुस्से के मारे प्रकाश के हाथ इस तरह कापन लगे कि उसके लिए बच्चे को खाना खिलाना असम्भव हो गया।

जब नौकर बच्चे को लेकर चला गया, तो उसने देखा कि बच्चे की टोपी वही पर रह गई है। वह टापी लिए हुए भागकर नीचे पहुँचा, तो देखा कि नौकर और अजनबी के अलावा बच्चे के साथ बाई और भी है—उसकी माँ। वे लोग चालीस-पचास गज़ आगे पहुँच गए थे। उसने नौकर का आवाज़ दी, तो चारों ने मुड़कर एकसाथ उसकी तरफ देखा। नौकर टापी लेने के लिए लौट आया और शेष तीनों आगे चलते रहे।

उस रात वह एक दोस्त की छाती पर सिर रखकर देर तक रोता रहा।

नये सिर से फिर वही सबाल मन में उठाने लगा। क्यों वह अपने को इस अतीत से पूरी तरह मुक्त नहीं कर लेता? यदि बसा हुआ परिवार हो, तो अपन आसपास बच्चा की चहल-पहल में वह इस दुःख को मूल नहीं जाएगा? उसने अपन को बच्चे से इसीलिए तो अलग किया था कि अपन जीवन को एक नया मोड़ दे सके—फिर वह इस तरह अकेली जिंदगी की यात्रा किसलिए सह रहा था?

परन्तु नये सिर से जीवन आरम्भ करने की कल्पना में सदा एक आशंका मिली रहती थी। वह उस आशंका से जितना ही लड़ता था, वह उतनी ही और प्रबल हो उठती थी। जब एक प्रयोग सफल नहीं हुआ तो यह कसे कहा जा सकता था कि दूसरा प्रयोग सफल होगा ही?

वह पहले की भूल को दोहराना नहीं चाहता था, इसलिए उसकी आशंका ने उसे बहुत सतक कर दिया था। वह जिस किसी लड़की का अपनी भावी पत्नी के रूप में देखता, उसीके चेहरे में उसे अपने पहले जीवन की छाया नज़र आने लगती। हालाँकि वह स्पष्ट रूप से इस विषय में कुछ भी सोच नहीं पाता था फिर भी उसे लगता था कि वह एक ऐसी ही लड़की के साथ जीवन बिता सकता है, जो हर दृष्टि से बीना के विपरीत हो। बीना में बहुत अहं था, वह उसके बराबर पत्नी लिखी थी, उससे ज्यादा कमाती थी। उसे अपनी स्वतंत्रता का बहुत मान था और वह समझती थी कि किसी भी परिस्थिति का वह अकेली रहकर मुकाबिला कर सकती है। शारीरिक दृष्टि से भी

धीन धापी लम्बी ऊंची थी। और उसपर भारी पटती थी। बातचीत भी वह मुले मरदाना ढग से करती थी। वह अब एक ऐसी लडकी गहता था जा हर तरह से उस पर निभर करे, जिसकी कमजोरियाँ एक पुरुष के आश्रय की अपेक्षा रखती ह।

और कुछ ऐसी ही लडकी थी निमला—उसके एक घनिष्ठ मित्र वृष्ण जुनेजा की बहन। उसने दो एक बार उस लडकी को देखा था। बहुत सीबी-सादी मामूम-सी लडकी थी। बात करते हुए उसकी आँखें नीच को झुक जाती थी। साधारण पढ़ी लिखी थी और बहुत साधारण ढग से ही रहती थी। उसे देखकर अनायास मन में सहानुभूति उमड़ आती थी। छव्तीस-सत्ताईस बरस की होकर भी देगन में वह अठारह-उन्नीस से ज्यादा की नहीं लगती थी। वह जुनजा के घर की कठिनाइयाँ को जानता था। उन कठिनाइयों के कारण ही गायब इतनी उम्र तक उस लडकी का विवाह नहीं हो सका था। उसके साथ निमला के विवाह की बात चलाई गई तो उसके मन के किसी कोने में सोया हुआ पुलक सहसा जाग उठा। उसे सचमुच लगा जैसे उसका खोया हुआ जीवन उसे वापस मिल रहा हो, जैसे आदर की एक टूटी हुई कल्पना फिर से आकार ग्रहण कर रही हो। हवा जीर जाकाश में उसे एक ओर ही आकर्षण लगने लगा रास्ते में बिचती हुई पूत्रों की बेनिया पहले से बड़ी सुगन्धित प्रतीत होने लगी। निमला ब्याह कर उसके घर में जाई भी नहीं थी कि वह शाम को लौटते हुए उसके लिए बनिर्पा खरीदकर घर लाने लगा। अपना पहले का घर उसे छोटा लगने लगा, इसलिए उसने एक बड़ा घर ले लिया और उसे सजान के लिए नया-नया सामान खरीद लाया। पास में ज्यादा पैसे नहीं थे इसलिए कुछ ल लेकर भी उसने निमला के लिए न जाने क्या कुछ बनवा डाला ।

निमला हँसती हुई उसके घर में आई—और हसती ही रही ।

पहले तो कुछ दिन वह नहीं समझ सका कि वह हसी क्या है। निमला जब कभी बिना बात के हँसना शुरू कर देती और देर तक हसती रहती। वह अवाक होकर उसे देखता रहता। तीन-तीन घण्टे चार चार साल के बच्चे भी उस तरह आकस्मिक ढग से नहीं हस सकते जैसे वह हँसती थी। कोई व्यक्ति उससे सामने गिर जाता या कोई चीज किसी के हाथ से गिरकर टूट जाती तो उसके लिए अपनी हँसी रोकना अमम्भव हो जाता। लगातार दस दस मिनट तक वह हसी से बेहाल हो रहती। वह उसे समझाने की बेप्टा करता कि ऐसी बातों पर नहीं हसा जाता तो निमला को ओर भी हँसी छटती। वह उस डाट देता, ता वह उसी तरह आकस्मिक ढग से विस्तर पर लटकर गाय-भर पटकती हुई रान लगती चिल्ला चिल्लाकर अपनी मरी हुई माँ को पुकारने लगती और अंत में बाल बिखर कर और देवी का रूप धारण करके घर भर को क्षाप दन लगती। कभी अपने कपड़े फाड़कर इधर-उधर छिपा देती और गहन जूतों के अदर मभाल देती। कभी अपनी बाँह पर फाड़े की कल्पना करके वह दो-दो दिन उसका द

से कराहती रहती और फिर सहसा स्वस्थ होकर बपड़े घोने लगती और सुबह से शाम तक बपड़े ही घोंती रहती ।

जब मन शान्त होता, तो मुँह गोल किये वह अँगूठा चूसने लगती ।

उठते-बठते, खाते-पीते प्रकाश के सामन निमला के तरह तरह के रूप आते रहत और उसका मन एक अंग्रे कुएँ में गिरने लगता । रास्ते पर चलते हुए उसके चारों तरफ एक गूँथ-सा घिर आता और वह कई बार भौंचक्का-सा मडक के किनारे खड़ा होकर सोचने लगता कि वह घर से क्यों आया है और कहा जा रहा है । उसका किसी स भी मिलन और कहीं भी आने जाने को मन न होता । उसका मन जिस गूँथ में भटकता रहता उसमें कई बार उसे एक दच्चे की किलकारिया सुनाई देने लगनी और वह बिलकुल जड़ हीवर देर-देर तक एक ही जगह पर खड़ा या बठा रहता । एक बार चलते चलते खम्भे से टकराकर वह नाली में गिर गया । एक बार बस पर चढ़ने की कोशिश में नीचे गिर जाने से उसके बपड़े पीछे से फट गये और वह इससे बखवर दूसरी बस में चढ़कर जागे चल दिया । उसे पता तब चला जब किसीन रास्ते में उससे कहा, 'जेंटलमन, तुम्हें क्या घर जाकर बपड़े बदल नहीं लेने चाहिए ?'

उसे लगता था जैसे वह जी न रहा हो, सिर्फ अदर ही अदर घुट रहा हो । क्या यही वह जिदगी थी जिसे पाने के लिये उसने बपों तक अपन आप से सघप किया था ?

उसे त्रोध आता कि जुनेजा न उसके साथ इस तरह का विदवासघात क्यों किया ? उस लड़की को किसी मानसिक चिकित्सालय में भेजने की जगह उसका ब्याह क्या कर दिया ? उसने जुनेजा को पस सम्बन्ध में पत्र लिखे, परन्तु उसकी ओर से उसे कोई उत्तर नहीं मिला । उसने जुनेजा को बुला भेजा, तो वह आया भी नहीं । वह स्वयं जुनेजा से मिलन के लिये गया, तो उसे जवाब मिला कि निमला अब उसकी परनी है—निमला के मायके के लोगा का उस मामले में अब कोई दखल नहीं है ।

और निमला घर में उसी तरह हँसती और रोती रही ।

'तुम मेरे भाई से क्या पूछन के लिये गये थे ?' वह बाल बिलेर कर 'देवी' का रूप धारण किये हुये कहती 'तुम बीना की तरह मुझे भी तलाक देना चाहते हो ? किसी तीसरी को घर में खाना चाहते हो ? मगर मैं बीना नहीं हूँ । वह सती नारी नहीं थी । मैं सती नारी हूँ । तुम मुझे छोड़ने की बात भी मन में लाओगे, तो मैं इस घर को जलाकर भस्म कर दूँगी—सारे शहर में भूचाल से आऊँगी । लाऊँ भूचाल ?' और धाँहें फलाकर वह कहने लगती, 'आ भूचाल आ आ ! मैं सती नारी हूँ, तो इस घर की ईंट से ईंट बजा दे । 'आ, आ, आ !'

वह उसे गात करन की चेष्टा करता तो वह कहती, "तुम मुझसे दूर रहो । मेरे शरीर को हाथ मत लगाओ । मैं नहीं हूँ । देवी हूँ । साधवी हूँ । तुम मेरा सतीत्व

नष्ट करना चाहते हो ? मुझ सराव करना चाहते हो ? मेरा तुमसे क्या बंधन हुआ है ? मैं तो अभी तक कबारी हूँ । छोटी-सी मासूम बच्ची हूँ । ससार का कोई भी पुरुष मुझे नहीं छू सकता । मैं आध्यात्मिक जीवन जीती हूँ । मुझे कोई छूकर दबे तो सही ।”

और बाल बिलखे हुए इसी तरह बालती हुई कभी वह घर की छत पर पहुँच जाती और कभी बाहर निकलकर घर के आसपास चक्कर काटने लगती । प्रकाश ने दो एक बार छोटी पर हाथ रखकर उसका मुँह बंद कर देना चाहा तो वह और भी जोर से चिल्ला उठी, “तुम मेरा मुँह बंद करना चाहते हो ? मेरा गला फोटना चाहते हो ? मुझे मारना चाहते हो ? तुम्हें पता है मैं साक्षात् दबी हूँ ? मेरे चारा भाई मेरे चार धर है ! वे तुम्हें नोच-नोचकर खा जाएंगे । उन्हें पता है—उनकी बहन दबी का स्वरूप है । कोई मेरा बुरा चाहेगा तो वे उस उठाकर ल जाएंगे और बाल-बोठरी में बंद कर देंगे । मेरे बड़े भाई ने अभी-अभी नई कार ली है । मैं उसे चिट्ठी लिख हूँ, तो वह अभी कार लेकर आ जाएगा और हाथ पर बाँधकर तुम्हें कार में डालकर ले जाएगा । छ महीने बंद रखगा, फिर छोड़ेगा । तुम्हें पता नहीं वेचारा के चारों धर कितने जालिम हैं ? वे राक्षस हैं राक्षस । आदमी की बोटी-बोटी काट दे और किसी को पता भी न चले । मगर मैं उन्हें नहीं बुलाऊँगी । मैं सती नारी हूँ इसलिए अपने सत्य से ही अपनी रक्षा करूँगी ।”

सब प्रयत्न से हार कर प्रकाश धका हुआ अपने पढ़ने के कमरे में बंद होकर पढ़ जाता, तो आधी रात तक वह साथ के कमरे में उसी तरह बोलती रहती । फिर बोलते-बोलते अचानक चुप कर जाती और थोड़ी देर के बाद उसका दरवाजा खट खटाने लगती ।

‘क्या बात है ?’ वह कहता ।

‘इस कमरे में मेरी साँस रुक रही है’ निमला उत्तर देता । ‘दरवाजा खोलो, मुझे अस्पताल जाना है ।’

‘इस समय सा जाओ, वह कहता, ‘सुबह तुम जहाँ बहोगी वहाँ लक्ष्मण । मैं कहती हूँ दरवाजा खोलो, मुझे अस्पताल जाना है ।’ और वह ज़ोर-जोर से धक्के देकर दरवाजा ताड़ने लगती ।

प्रकाश दरवाजा खोल देता, तो वह हसती हुई उसका सामने आ जाती । तुम्हें हँसी किस बात की आ रही है ? प्रकाश कहता ।

‘तुम्हें लगता है मैं हस रहा हूँ ? वह आर भी ज़ोर से हसन लगती ।’ यह

हसी नहीं राना है राना ।

‘तुम अस्पताल चलना चाहती हो ? क्या ?’

“अभी तुम कह रही थी ।”

“मैं अस्पताल चलने के लिए वहाँ बह रही थी ? म तो कह रही थी कि मुझे कमरे म डर लगता है, म यहाँ तुम्हारे पास सोऊँगी ।”

“देखो निमला, इस समय मेरा मन ठीक नहीं है । तुम थोड़ी देर मे चाहे मेरे आ जाना, मगर इस समय थोड़ी देर के लिए ।”

“म कहती हूँ, म अकेली उस कमरे मे नहीं सो सकती । मेरे जसी मासूम बच्ची अभी अकेली सो सकती है ।”

“तुम मासूम बच्ची नहीं हो, निमला ।”

“तो तुम्हे म बड़ी नजर आती हूँ ? एक छोटी सी बच्ची को बड़ी कहते तुम्हारे को कुछ नहीं होता ? इसलिए कि तुम मुझे अपने पास सुलाना नहीं चाहते ? म यहा से नहीं जाऊँगी । तुम्हे मुझे अपने साथ सुलाना पड़ेगा । म विधवा हूँ अकेली सोऊँगी ? म सुहागिन नारी हूँ । कोई सुहागिन क्या कभी अकेली सोती म माँवरें लेकर तुम्हारे घर मे आई हूँ, ऐसे ही उठाकर नहीं लाई गई । देखती हूँ कसे मुझे उस कमरे मे भेजते हो ?” और वह प्रकाश के पास लटककर उससे लिपट गी ।

कुछ देर मे जब उसके स्नायु शांत हो चुफते, तो वह लगातार उसे चूमती हुई ह्ती, “मेरा सुहाग ! मेरा चाँद ! मेरा राजा ! म तुम्हें कभी अपने से अलग रख ती हूँ ? तुम मेरे साथ एक सौ छत्तीस बरस की उम्र तक जिओगे । मुझे वह बर ला हुआ ह कि म एक सौ छत्तीस बरस की उम्र तक सुहागिन रहूँगी । जिसकी भी से शादी होती, वह एक सौ छत्तीस बरस की उम्र तक जीता । तुम देख लेना मेरी त सच्ची निकलती ह या नहीं । म सती नारी हूँ और सती नारी के मुँह से निकली बात कभी झूठी नहीं हो सकती ।”

“तुम सुबह मेरे साथ अस्पताल चलोगी ?” प्रकाश कहता ।

“क्या, मुझे क्या हुआ है जो मैं अस्पताल जाऊँगी ? मुझे तो आज तक सिर-द मी नहीं हुआ । मैं अस्पताल क्यों जाऊँ ?”

एक दिन प्रकाश उसके लिए कई एक कित्तावें खरीद लाया । उसने सोचा था म शायद पढ़ने से निमला के मन को एक दिशा मिल जाए और वह धीरे-धीरे अपने न के अँधेरे से बाहर निकलने लगे । मगर निमला ने उन कित्तावा को देखा, तो मुँह बचकाकर एक तरफ हटा दिया ।

“ये कित्तावें मैं तुम्हारे पढ़ने के लिए लाया हूँ”, प्रकाश ने कहा ।

“मेरे पढ़ने के लिए ?” निमला आश्चय के साथ बोली । “मैं इन कित्तावा को टकर क्या कहूँगी ? मैं तो माक्सवाद, मनोविज्ञान और सभी कुछ चौदह साल की उम्र मे पढ़ लिया था । अब इतनी बड़ी होकर मैं ये कित्तावें पढ़ने लपूँगा ?

और उसके पास से उठकर अँगूठा चूसती हुई वह कमरे से बाहर चली गई ।
'पापा !'

कोहरे के बादलों में भटका हुआ मन सहसा बालकनी पर लौट आया । क्लिन्न मग को जाने वाली सड़क पर बहुत-से लोग घोड़े दौड़ाते जा रहे थे—एक धुँधले चित्र की बुझी-बुझी आकृतियों जैसे । वसी ही बुझी-बुझी आकृतियाँ कल्प से बाजार की तरफ आ रही थी । बाईं ओर बफ से ढकी हुई पहाड़ी की एक चोटी कोहरे में बाहर निकल आई थी और जाने किधर से आती हुई सूर्य की किरण ने उसे दीप्त कर दिया था । कोहरे में भटके हुए कुछ पक्षी उड़ते हुए उस चाटी के सामने आ गए, तो सहसा उनके पक्ष सुनहरे ही उठ—मगर अगले ही क्षण वे फिर धुँधलके में ली गए ।

प्रकाश कुरसी से उठ खड़ा हुआ झाँककर नीचे सड़क की तरफ देखने लगा । क्या वह आवाज़ पलाश की नहीं थी ? परन्तु सड़क पर दूर दूर तक ऐसी कोई आकृति दिखाई नहीं दे रही थी जिसे उसकी आँख उस बच्चे के रूप में पहचान सके । जाँब्या-ही-आखा ट्रिस्ट होटल के गेट तक जाकर वह लौट आया और गले पर हाथ रखकर जैसे निराशा की चुमन को रोके हुए फिर कुरसी पर बैठ गया । दस व बाद ग्यारह, बारह और फिर एक भी बज गया था और बच्चा नहीं आया था । क्या बच्चे के पहले जन्मदिन की घटना आज फिर दोहराई जानी थी ? मुट्ठियाँ बंद किए उन पर माथा रखकर वह बालकनी पर झुक गया ।

“पापा !”

उसने चौंकर सिर उठाया । वही कोहरा और वही धुँधली सुनसान सड़क । दूर घोड़ा की टाप और धीमी चाल से उस तरफ की आता हुआ एक कश्मीरी मजदूर ! क्या वह आवाज़ उसे अपने कानों के पर्दों के अंदर से ही सुनाई दे रही थी ?

तभी उन पर्दों के अंदर दो नहे परो की आवाज़ भी गूँज गई और उसकी बाहों के बहुत पास ही बच्चे का स्वर क्लिन्न उठा 'पापा !' साथ ही दो नही-नही बाहें उसके गले से लिपट गईं और बच्चे के झड़ले माल उसके हाँथों से छू गए ।

प्रकाश ने एक बार बच्चे के शरीर को सिर से पर तक छूँकर देख लिया कि यह आकाश भी उसकी कल्पना का स्वप्न तो नहीं है । विश्वास हो जाने पर कि बच्चा सब कुछ उसकी गोदी में है, उसने उसका माथे और आँखा को बसकर चुम लिया ।

ता मैं जाऊँ पलाश ? एक भूली हुई मगर परिचित आवाज़ ने प्रकाश का सिर चौंका दिया । उसने घूमकर पीछे देखा । कमरे के दरवाज़े के बाहर बीना दाईं ओर न जाने किस चीज़ पर आँखें गड़ाए खड़ी थी ।

'आप ? आ आई आप !' कहता हुआ बच्चे का बाँहा में लिए प्रकाश अस्त व्यस्त-सा कुरसी से उठ खड़ा हुआ ।

नहीं मैं जा रही हूँ, बीना ने फिर भी उसकी तरफ नहीं देखा । “मुझे इतना

बता दीजिए कि बच्चा कब तक लौटकर आएगा ?'

“आप जब वहाँ तमी भेज दूँगा।’ प्रकाश बालकनी की दहलीज लांघकर कमरे में आ गया।

“चार बजे इसे दूध पीना होता है।”

“तो चार बजे तक मैं इसे वहाँ पहुँचा दूँगा।”

‘इसने हल्का ना स्वेटर ही पहन रखा है। दूमरे पुलोवर की जरूरत तो नहीं पड़ेगी ?”

“आप दे दीजिए। जरूरत पड़ेगी तो मैं इसे पहना दूँगा।’

बीना ने दहलीज के उस तरफ से ही पुलावर उसकी तरफ बढ़ा दिया। उसने पुलोवर लेकर उसे शाल की तरह बच्चे को ओढ़ा दिया। “आप ” उसने बीना से कहना चाहा कि वह अंदर आ जाए, मगर उससे कहा नहीं गया। बीना चुपचाप जीने की तरफ चल दी। प्रकाश कमरे से निकल आया। जीन में बीना ने फिर कहा, “देखिए इसे आइसक्रीम मत खिलाइएगा। इसका गला बहुत जल्द खराब हो जाता है।”

“अच्छा।”

बीना पल भर रकी रही। शायद उसे और भी कुछ कहना था। मगर फिर बिना कुछ कहे वह नीचे उतर गई। बच्चा प्रकाश की गादी में उछलता हुआ हाथ हिलाता रहा, “ममी, टा टा। टा टा।” प्रकाश उसे लिए बालकनी पर लौट आया, तो वह उसके गले में बाह डालकर बोला, ‘पापा मैं आइसक्रीम जत्रूल खाऊँदा।’

‘हा, हा, बेटे।’ प्रकाश उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। “जो तेरे मन में आए, सो खाना। हा ?”

और कुछ देर के लिए वह अपने को, बालकनी को और यहाँ तक कि बच्चे को भी भूला हुआ आकाश को देखता रहा।

कोहर का पदा धीरे धीरे उठन लगा तो मीना में फले हुए हरियाली के रंग मच की घुँघली रेखाएँ सहमा स्पष्ट हो उठीं।

वे दोनों माल्फ ग्राउंड पार करके क्लब की तरफ जा रहे थे। चलते हुए बच्चे ने पूछा, ‘पापा, आदमी के दो टाँगें क्या होती हैं ? चार क्यों नहीं होती ?”

प्रकाश ने चौंकर उसकी तरफ देखा और कहा अरे !’

“क्या पापा,” बच्चा बोला ‘तुमने अरे क्या कहा है ?’

‘तू इतना साफ बाल सबता है, तो अब तक तुतलाकर क्यों बोल रहा था ?” प्रकाश ने उसे बाहों में उठाकर एक अभियुक्त की तरह अपने सामने कर लिया। बच्चा खिलखिलाकर हँस पड़ा। प्रकाश को लगा कि यह वसी ही हँसी है जसी कभी वह स्वयं हसा करता था। बच्चे के चेहरे की रेखाया से भी उस अपने बचपन के चेहरा की याद आने लगी। उसे लगा जैसे एकाएक उसका तीस बरस पहल का चेहरा उसके सामने

आ गया हो और वह स्वयं उस चेहरे के सामने एक अभिमुक्त की तरह खड़ा हो ।

“ममी तो ऐंछे ही अच्छा लदता है,” बच्चे ने कहा ।

‘क्यो ?’

‘मेले तो नहीं पता । तुम ममी छे पूछ लेना ।’

‘तेरी ममी तेरे को जोर से हसने से नी मना करती है ?’ प्रकाश को वे दिन याद आ रहे थे जब उसके खिलखिलाकर हँसने पर बीना बाना पर हाथ रख लिया करती थी ।

बच्चे की बाँहें उसकी गरदन के पास बस गई । “हाँ”, वह बोला । “ममी तहती है अच्छे बच्चे जोल छे नहा हँछते ।”

प्रकाश न उस बाँहा स उतार दिया । बच्चा उसकी उँगली पकड़े हुए घास पर चलन लगा । ‘त्या पापा’, उसन पूछा । “अच्छे बच्चे जोल छे त्यो नही हँछते ?”

‘हसते हैं बटे ।’ प्रकाश ने उसके सिर को सहलात हुए कहा । सब अच्छे बच्चे जोर स हसते हैं ।’

‘तो ममी मेले तो त्यो लोतती है ?’

‘नही रोकती बटे । अब वह तुम्ह नही रोकेगी । और तू तुतलावर नहा, ठीक से बोला कर । तेरी ममी तुम्हें इसने लिए भी मना नही करेगी । मैं उससे कह दूँगा ।’

‘तो तुमने पहले ममी छे त्यो नही तहा ।’

“ऐसे नही, बट कि तुमने पहले ममी से क्यो नहा कहा ।’

बच्चा फिर हँस दिया । ‘तो तुमने पहले ममी से क्यो नही कहा ?’

पहल मुझे याद नही रहा । अब याद से कह दूँगा ।

कुछ देर दोनो चुप चलते रहे । फिर बच्चे ने पूछा, पापा, तुम मेरे जनम दिन की पार्टी में क्यो नही आए ? ममी कहती थी तुम विलायत गए हुए थे ।’

“हाँ बटे, मैं विलायत गया हुआ था ।’

तो पापा अब तुम फिर स विलायत नही जाना ।’

“क्यो ?”

“मरे को अच्छा नही लगता । विलायत जाकर तुम्हारी गबल और हा त की हो गई है ।’

प्रकाश एक स्त्री-सी हँसी हँसा और बोला ‘कसी हो गई है गबल ?’

पता नहा कसी हो गई है । पहले दूसरी तरह की थी, अब दूसरी तरह की है ।

“दूसरी तरह की कसे ?”

‘पता नही पहले तुम्हारे बाल बाले-बाले थे । अब सफ़ेद-सफ़ेद हो गए हैं ।’

‘तू इतने दिन मेरे पास नहीं आया इसीलिए मरे बाल सफ़ेद हो गए हैं ।’

बच्चा इतने जोर से हँसा कि उसने कम्म लडखड़ा गए । “अरे पापा, तुम

विलायत गए हुए थे', उसने कहा। 'मैं तुम्हारे पास कैसे आता? मैं क्या अक्ल विलायत जा सकता हूँ?'"

'क्या नहीं जा सकता? तू इतना बड़ा तो है।'

"मैं सचमुच बड़ा हूँ न पापा?' बच्चा ताली उजाना हुआ बोला। "तुम यह बात भी ममी से कह देना। वह कहती है मैं अभी बहुत छोटा हूँ। मैं छोटा नहीं हूँ न पापा?'

'नहीं, तू छोटा कहा है? कहकर प्रकाश मदान में दौड़ने लगा। तू भागकर मुझे पकड़।'

बच्चा अपनी छोटी-छोटी टाँगें पटकता हुआ दौड़ने लगा। प्रकाश को फिर अपने बचपन की एक घात याद हो आई। तब उस दौड़ते देखकर एक बार किसी ने कहा था, अरे, यह बच्चा कस टाँगें पटक-पटककर दौड़ता है। इसे ठीक स चलना नहीं आता है क्या?

बच्चे की उँगली पकड़े हुए प्रकाश कलब के वारूम में दाखिल हुआ तो वारमन अब्दुल्ला उसे देखने ही दूर से मुस्कराया। "साहब के लिए नो वातल वियर उमन पास खड़े बरे में कहा। साहब आज अपने एक महमान के साथ आया है।'

"बच्चे के लिए एष गिलाम पानी दे दा" प्रकाश ने काउंटर के पास पहुँचकर कहा। 'इसे प्याम लगी है।'

"खाली पानी?' अब्दुल्ला बच्चे के गालों को प्यार से सहलाने लगा। और सब दोस्ता को ता साहब वियर पिलाता है और इस बेंचारे को खाली पानी?' और ठंडे पानी की बोतल खोलकर वह गिलास में पानी डालने लगा। जब वह गिलास बच्चे के मुँह के पास ले गया, तो बच्चे ने वह उसके हाथों से ले लिया। "मैं अपने-आप पिऊँगा" उसने कहा। "मैं छोटा थोड़े ही हूँ? मैं तो बड़ा हूँ।

बच्चा तू बड़ा है?" अब्दुल्ला हँसा। 'तब तो तुम्हें पानी देकर मैं न गलती की। बड़े लोगो को ता मैं वियर पिलाता हूँ।'

"वियर क्या होता है? बच्चे ने मुँह से गिलास हटाकर पूछा।

'वियर होता नहीं, होती है।' अब्दुल्ला ने मुँहकर उसे चूम लिया। तुम्हें पिलाऊँ क्या?"

नहीं' कहकर बच्चे ने अपनी बाँहें प्रकाश की तरफ फला दा। प्रकाश उस लेकर डयोगी की तरफ चला, तो अब्दुल्ला भी उन दोनों के साथ-साथ बाहर चला गया। किमका बच्चा है, साहब?' उसने धीमे स्वर में पूछा।

मेरा लडका है', कहकर प्रकाश बच्चे को साड़ी से उतारने लगा।

अबुल्ला हँस दिया। 'साहब बहुत खुशाल आदमी है' उसने कहा।

"क्यों?"

अन्दुल्ला हँसता हुआ फिर हिलागे लगा। 'आपका भी जवाब नहीं है।'

प्रवाण गुरती में कुछ कहने को हुआ मगर अपने को रोक्कर बच्चे को लिए हुए भागे चल दिया। अन्दुल्ला डबाड़ी में गया हुआ पीछे से फिर हिलाता रहा। बराबर मुहम्मद अदर से निकलकर आया, तो यह फिर गिलगिलाकर हँस दिया।

"क्या बात है? अनेला राटा गढा क्यों हँस रहा है? शेर मुहम्मद ने पूछा।

"साहब का भी जवाब नहीं है", अन्दुल्ला किसी तरह हसी पर बाधू पाकर बोला

"किस साहब का जवाब नहीं है?"

"उस साहब का", अन्दुल्ला ने प्रवाण की तरफ इशारा किया। 'उस दिन बोलता था कि इसने अभी इसी गाल घादी को है और आज बोलता है कि यह पाँच साल का बाबा इसका लडका है। जब आया था, तो अनेला था और आज इससे लडका भी हो गया।' प्रवाण ने एक बार घूमकर तीसरी नजर से उसकी तरफ देर लिया। अन्दुल्ला एक बार फिर गिलगिला उठा। 'ऐसा खुदगिला आदमी मैंने आज तक नहीं देखा।'

"पापा, घास हरी क्या होती है? छाल क्या नहीं होती?" बच्चे से निकलकर प्रवाण ने बच्चे को एक घास बिराये पर ले दिया था। तिनैनमग को जानेवाली पग ढही पर यह खुद उमने साथ-साथ पदल चल रहा था। घास के रेसामी विस्तार पर बोहरे का आकाश इस तरह भुजा हुआ था जैसे वासना का उमाद उस फिर से फिर आन के लिए प्रेरित कर रहा हो। बच्चा उलुन आँसो से आसपास की पटाडिया को और बीच में बहकर जाती हुई पानी की पतली धार को देख रहा था। कभी कुछ क्षणों के लिए वह अपने को भूना रहता, फिर किसी अज्ञात भाव से प्रेरित होकर बाठा पर उछलने लगता।

"हर चीज का अपना रंग होता है", प्रवाण ने बच्चे की एक जाँघ को हाथ से दबाए हुए कहा और कुछ देर के लिए स्वयं भी हरियाली के विस्तार में खोया रहा।

'हर चीज का अपना रंग क्यों होता है?'

'यह कुदरत की बात है बेटे, कुदरत ने हर चीज का अपना रंग बना दिया है।'

"कुदरत क्या जानती है?"

प्रवाण ने झुककर उसकी जाँघ का चूम लिया। "कुदरत यह होती है", उमने हँसकर कहा। जाँघ पर गुदगुदी होने से बच्चा भी हँसने लगा।

"तुम झूठ बालते हो", उसने कहा।

क्यों?

तुमको इसका पता ही नहीं है।"

"अच्छा, मुझे पता नहीं है तो तू बता घास का रंग हरा क्या होता है?"

"घास मिट्टी के अदर से पदा होती है, इसलिए इसका रंग हरा होता है।"

“अच्छा ? तुम्हें इसका क्या पता चल गया ?”

बच्चा उछलता हुआ लगाम को झटकने लगा। “मेरे को ममीन बताया था।”

प्रकाश के होठों पर एक विवृत-सी मुस्कराहट आ गई, जिसे उसने किसी तरह दबा लिया। उसे लगा जैसे आज भी उसके और बीना के बीच म एव दृढ़ चल रहा है और बीना उस दृढ़ में उसपर भारी पड़ने की चेष्टा कर रही हो। “तेरी ममी ने तुम्हें और क्या क्या बताया है ?” वह बच्चे को थपथपाकर बोला, “यह भी बताया है कि आदमी के दो टांगें क्यों होती हैं और चार क्यों नहीं ?”

‘हां। ममी कहती थी कि आदमी के दो टांगें इसलिए होती हैं कि वह आधा जमीन पर चलता है और आधा आसमान में।’

अच्छा !” प्रकाश के होठों पर हँसी और मन में उदासी की रेखा फल गई।

“तुम्हें इसका नहीं पता था”, उसने कहा।

“तुमको तो कुछ भी पता नहीं है, पापा !” बच्चा बोला। “इतने बड़े होकर भी पता नहीं है !”

घास बर्फ और आकाश के रंग दिन में कई-कई बार बदल जाते थे। बदलते हुए रंगों के साथ मन भी और से और होन लगता था। सुबह उठते ही प्रकाश बच्चे के आने की प्रतीक्षा करने लगता। बार-बार वह बालकनी पर चला जाता और ट्रिस्ट होटल की तरफ आखें किए देर-देर तक खड़ा रहता। नाश्ता करने या खाना खाने के लिए भी वह वहाँ से नहीं हटना चाहता था। उसे डर लगता था कि बच्चा इस बीच आकर लौट न जाए। तीन दिन में उसे साथ लिए हुए वह कितनी ही बार धूमने के लिए गया था, उसके घोड़े के पीछे-पीछे दौड़ा था और उसके साथ घास पर लोटता रहा था। कभी एक दोस्त की तरह वह उसके साथ खिलखिलाकर हँसता, कभी एक नौकर की तरह उसके हर आदेश का पालन करता। बच्चा जान बूझकर रास्ते के कीचड़ में अपने पाँव लथपथ कर लेता और फिर होंठ विसारकर कहता, ‘पापा, पाव धो दो !’ वह उसे उठाए हुए इधर उधर पानी डूँढ़ता फिरता। बच्चे को वह जिस कोण से भी देखता, उसी कोण से उसकी तस्वीर ले लेना चाहता। जब बच्चा थक जाता और लौटकर अपनी ममी के पास जाने का हठ करने लगता तो वह उसे तरह-तरह के प्रलोभन देकर अपने पास रोव रखना चाहता। एक बार उसने बच्चे को अपनी माँ के माथे दूर से आते देखा था और उसे साथ लाने के लिए उतरकर नीचे चला गया था। जब वह पास पहुँचा, तो बच्चा दौड़कर उसकी तरफ आने की बजाय माँ के साथ फोटोग्राफर की दूकान के अंदर चला गया। वह कुछ देर सड़क पर रुका रहा, फिर यह सोचकर ऊपर चला आया कि फोटोग्राफर की दूकान से खाली होकर बच्चा अपने-आप ऊपर आ जाएगा। मगर बालकनी पर खड़े-खड़े उसने देखा कि बच्चा दूकान से निकलकर उस तरफ आने की बजाय हठ के साथ अपनी माँ का हाथ गीचता हुआ उसे वापस ट्रिस्ट होटल की तरफ ले

चला। उसका मन हुआ कि दौड़कर जाए और बच्चे का अपने साथ ले जाए, मगर बाई चीज उससे परी को जकड़े रही और वह चुपचाप वहाँ टपटा उगे देगता रहा। तब तक वह न जाने कितनी बार बाल्बनी पर आया और कितनी कितनी देर तक राधा रहा। आखिर उससे नहीं रहा गया, तो उसन नीचे जाकर कुछ चरी मरीदी और वन को देन के बहान ट्रिस्ट हाटल की तरफ चल लिया। अभी वह ट्रिस्ट हाटल में कुछ दूर ही था कि बच्चा अपनी माँ के साथ बाहर जाता दिखई दिया। मगर उस पर नजर पडते ही वह वापस हाटल की गलरी में भाग गया।

प्रकाश जहाँ था, वही पडा रहा। उस समय पहली बार उसकी आँखें बीना से मिली। उस महसूस हुआ कि बीना का चेहरा पहले से कहीं साँवला हो गया है और उसकी आँखा के नीचे स्याह दापरे-से उमर आए हैं। वह पहले से काफी दुबली भी लग रही थी। कुछ क्षण रुके रहने के बाद प्रकाश आगे चला गया और बेरीवाला लिफाफा बीना की तरफ बढ़ाकर उसन खुदक गले से कहा 'मैंने बच्चे के लिए लाया था।'

बीना न लिफाफा ल लिया मगर साथ ही उसकी आँखें दूसरी तरफ हट गई। पलास। 'उसन कुछ अस्थिर आवाज में बच्चे को पुकारकर कहा। 'यह ले तेरे पापा तेरे लिए चेरी लाए हैं।'

'मैं नहीं लेता, बच्चे न गलरी से कहा और भागकर और भी दूर चला गया।

बीना ने एक असहाम दृष्टि बच्चे पर डाली और फिर प्रकाश की तरफ देखकर बोली 'कहता है मैं पापा से नहीं बोडूँगा। वे मुबह रुके क्या नहीं चले क्या गए थे।

प्रकाश बीना का उत्तर न देकर गलरी में चला गया और कुछ दूर तक बच्चे का पीछा करके उसे बाही में उठा लाया। 'मैं तुमसे नहीं बोडूँगा, कभी नहीं बोडूँगा' बच्चा अपन को छुडान की चेष्टा करता हुआ कहता रहा।

'क्यों, ऐसी क्या बात है?' प्रकाश उसे पुचकारने की चेष्टा करने लगा।

'पापा से भी उस तरह नाराज होते हैं क्या?'

'तुमने मेरी तस्वीरें क्या नहीं देखी?'

'कहाँ था तेरी तस्वीरें? मुझे तो पता ही नहीं था।'

पता क्यों नहीं था? तुम डूकाल के बाहर से ही क्यों चले गए थे?'

'अच्छा ला, पहले तेरी तस्वीरें देख, फिर धूमन चलेंगे।'

यह मुबह आपकी दिखान के लिए ही तस्वीरें लेने गया था', बीना के साथ खड़ी नवयुवती ने कहा। प्रकाश इस बात का भूल ही गया था कि उन दोनों के साथ कोई और भी है।

'तस्वीरें भरे पास थोडे हो हैं? उसी के पास है।

'मुबह फोटोग्राफर ने नगेदिव ही दिखाए थे पाञ्चदिव वह अब इस समय देगा उस नवयुवती न फिर कहा।

“तो चल, पहले दूकान पर चलकर तेरी तस्वीरें ले लें। हा, देखें ता सही कमी तस्वीरें हैं।” कहकर प्रकाश फोटोग्राफर की दूकान की तरफ चलने लगा।

‘मैं ममी को साथ लेकर जाऊँगा’ बच्चे ने उमकी बाहों में मचलते हुए कहा।

हाँ, हा, तेरी ममी भी साथ जा रही है, प्रकाश ने एक बार निरुपाय सी दृष्टि से पीछे की तरफ देख लिया और उस किसी अदृश्य व्यक्ति से कहा ‘देखिए आप भी साथ आ जाइए नहीं तो यह रोने लगेगा।’

बीना हाठ दाँतो में दबाए हुए कुछ क्षण आँख झपकती रही फिर चुपचाप साथ चल दी।

फोटोग्राफर की दूकान में दाखिल होते ही बच्चा प्रकाश की बाँहा से उतर गया और आदेश के स्वर में फोटोग्राफर से बोला “मरे पापा को मेरी तस्वीरें दिखाओ।” उसके स्वर से कुछ ऐसा भी लगता था जैसे वह अपन पर लगाए गए किसी अभियाग का उत्तर दे रहा हो। फोटोग्राफर ने तस्वीरें निकालकर मेज पर फला दी तो बच्चा उनमें से एक एक तस्वीर चुनकर प्रकाश को दिखाने लगा। “देखो पापा, यह वही की तस्वीर है न जहाँ से तुमने कहा था कि सारा कश्मीर नज़र आता है ? और यह तस्वीर भी देखो पापा, जो तुमने मेरी घोड़े पर उतारी थी।”

‘दो दिन से बिलकुल साफ बालने लगा है’, बीना की सहली ने धीरे से कहा।

“कहता है पापा ने कहा कि तू बड़ा हो गया है, इसलिए अब तुनला कर न बाला कर।

प्रकाश कुछ न कहकर तस्वीरें देखता रहा। फिर जैसे कुछ याद हो आन से उसने दस रुपये का एक नोट निकालकर फोटोग्राफर को देते हुए कहा, “इसमें से आप अपने पैसे काट लीजिए।”

फोटोग्राफर पल भर असमजस में उस देखता रहा। फिर बाला, ‘देखिए पस तो अभी आपही के मेरी तरफ निकलते हैं। मैं साहब ने जा बीस रुपये परसा दिए थे उनमें से दो एक रुपये अभी बचते होंगे। कहे, तो हिसाब कर दूँ।’

“नहीं रहने दीजिए, हिसाब फिर हो जाएगा” कहकर प्रकाश ने नाट वापस जेब में रख लिया और बच्चे की उँगली पकड़े हुए दूकान से बाहर निकल आया। कुछ कदम चलन पर उसे पीछे से बीना का स्वर सुनाई दिया, “यह आपके साथ घूमन जा रहा है क्या ?”

‘हाँ!’ प्रकाश ने चौंकर पीछे देख लिया। ‘मैं अभी थोड़ी दूर में इसे वापस छोड़ जाऊँगा।’

‘देखिए, आप से एक बात कहनी थी।’

‘कहिए।’

बीना पल भर सोचती हुई चुप रही। फिर बोली, “इसे ऐसी कोई बात न बनाइएगा जिससे यह।”

प्रकाश को लगा जैसे कोई चीज उसके स्नायुओं को चीरती चली गई है।

उसकी आँखें भुक् गईं और उसने पीरे से कहा, "नहीं, मैं ऐसी कोई बात इससे नहीं कहूँगा।" उसे खद हाने लगा कि एक दिन पहले जब बच्चा हठ करने कह रहा था कि 'पापा' और 'पिताजी' एक ही व्यक्ति को नहीं कहते—'पापा' पापा को कहते हैं और 'पिताजी' ममी के पापा को कहते हैं—तो वह क्यों उसकी गलतफहमी दूर करने का प्रयत्न करता रहा था ?

वह बच्चे के साथ अकेला बल्ब की सड़क पर चलने लगा तो कुछ दूर जाकर बच्चा सहसा रुक गया। 'हम कहाँ जा रहे हैं, पापा ?' उसने पूछा।

'पहले बल्ब चल रहे हैं', प्रकाश ने कहा। 'वहाँ से थोड़ा लेकर आगे घूमन जाएँगे।'

नहीं, मैं वहाँ उस आदमी के पास नहीं जाऊँगा।' कहकर बच्चा सहसा पीछे की तरफ घल दिया।

"किस आदमी के पास ?"

'वह जो वहाँ पर बल्ब में था। मैं उसके हाथ से पानी भी नहीं पिऊँगा।'

"क्यों ?"

"मुझे वह आदमी अच्छा नहीं लगता।"

प्रकाश पल भर बच्चे के चेहरे को देखता रहा, फिर वह भी वापस चल दिया।

"हा, हम उस आदमी के पास नहीं चलेंगे", उसने कहा। 'मुझे भी वह आदमी अच्छा नहीं लगता।'

बहुत दिनों के बाद उस रात प्रकाश को गहरी नींद आई थी। एक ऐसी विस्मृति सी नींद जिसमें स्वप्न—दु स्वप्न कुछ न हो उसके लिए लगभग भूली हुई चीज हो चुकी थी। फिर भी जागने पर उसे अपने में एक ताजगी का अनुभव नहीं हुआ—अनुभव हुआ एक खालीपन का ही। जस कि कोई चीज उसके अंदर उफनती रही हो जो गहरी नींद से लेने से चुक गई हो। रोज की तरह उठकर वह बालकनी पर गया। देखा आकाश साफ है। रात को सोया था तो वर्षा हो रही थी। परन्तु इस घुले निखरे हुए आकाश को देखकर आभास तक नहीं होता था कि कभी वहाँ बादलों का अस्तित्व भी था। सामन की पहाड़ियाँ सुबह की धूप में नहाकर बहुत उजली हो उठी थी।

प्रकाश कुछ देर वहाँ खड़ा रहा—थान्तिरहित और विचारहीन। फिर सहसा दूर के छार में उठते हुए बादल की तरह उसे कोई चीज अपन में उमड़ती हुई प्रतीत हुई और उसका मन एक अज्ञात आशका से सिहर गया। तो क्या ?

वह बालकनी से हट आया। पिछली गाम को बच्चे ने बताया था कि उसकी ममी कह रही है कि दिन साफ हुआ, तो सुबह के लोग वहाँ से चले जाएँगे। रात को जिस तरह वर्षा हो रही थी, उससे सुबह तक आकाश के साफ होने की कोई सम्भावना नहीं लगती थी। इसलिए सोन के समय उमका मन इस ओर से लगभग निश्चिन्त था।

परन्तु रात रात मे आकाश का दृश्यपट बिल्कुल बदल गया था। तो क्या सचमुच आज ही उन लोगो की वहाँ से चूठे जाना था ?

उसन कमरे के बिखरे हुए सामान को देखा—दो चार इनी गिनी चीजों ही थी। चाहा कि उह सहेज दे। मगर किसी चीज को रखन-उठाने को मन नही हुआ। बिस्तर को देखा जिसम रोज से बहुत कम सल्वटों पड़ी थी। लगा जैसे रात की गहरी नींद के लिए वह बिस्तर ही दोपी हो और गहरी नींद ही—बरसते हुए आकाश के साफ हो जाने के लिए ! उसने बिस्तर की चादर को हिला दिया कि उसमे और सल्वटें पड जाएँ मगर उससे चादर मे जो दा एक सल्वटें था, वे भी निकल गई। वह फिर से एक नींद लेने के इरादे से बिस्तर पर लेट गया।

शरीर म थकान बिल्कुल नही थी, इसलिए नींद नही आई। कुछ देर करवट लेने के बाद वह नहाने घोने के लिए उठ गया। लडखडाते कदमा से सुबह दोपहर की तरफ बढ़ने लगी, तो उसके मन को कुछ सहारा मिलन लगा। वह चाहने लगा कि इसी तरह शाम हो जाए और फिर रात—और बच्चा उससे बिदा लेने के लिए न आए। परन्तु इसी तरह जब दोपहर भी ढलन को आ गई और बच्चा नही आया, तो उसके मन मे धीरे धीरे एक ओर ही आशका सिर उठान लयी। वह सोचने लगा कि दिन साफ होने से उसकी ममी कही सुबह-सुबह ही तो उसे लेकर वहाँ से नही चली गई ?

वह बार-बार बालकनी पर जाता—एक घडकती हुई आशा और आशका लिए हुए। बार-बार ट्रिस्ट होटल की तरफ जाने वाले रास्त पर नजर डालता और एक अनिश्चित-सी अनुभूति लिए हुए कमरे मे लौट आता। उसकी घमनियो मे लड़ू का हर कण, मस्तिष्क मे चेतना का हर बिन्दु उरकठा से व्याकुल था। उसन कुछ खाया नही था, इसलिए भूख भी उसे परेशान कर रही थी। कुछ देर के बाद कमरा बंद करके वह खाना खान चला गया। माटे-मोटे कौर निगलकर उसने किसी तरह दो रोटियाँ गले से उतारी और तुरन्त वापस चल पडा। कुछ क्षणा के लिए भी कमरे से बाहर और बालकनी से दूर रहना उसे एक अपराध की तरह लग रहा था। लौटते हुए उसने सोचा कि उसे खुद ट्रिस्ट होटल मे जाकर पता कर लेना चाहिए कि वे लोग वही हैं या चले गए हैं। मगर सडक की चढाई चढ़ते हुए उसन दूर से ही देखा—धीना बच्चे के साथ उसकी बालकनी के नीचे खडी थी। वह हाँफता हुआ तेज-तेज चलने लगा।

वह पास जा पहुँचा, तो भी बच्चे ने उसकी तरफ नही देखा। वह अपनी माँ का हाथ खींचता हुआ किसी बात के लिए हठ कर रहा था। प्रकाश ने उसकी बाँह को हाथ मे ले लिया, तो वह उससे बाँह छुडान का प्रयत्न करने लगा। "मैं तुम्हारे घर नही जाऊँगा", उसने लगभग चीखकर कहा। प्रकाश अचकचा गया और मूढ़-सा उमकी तरफ देखता रहा।

"क्यों, तू मुझ से नाराज है क्या ?" उसने पूछा।

'ममी मेरे साथ क्या नहा चल्ती?' बच्चा फिर उसी तरह विलम्बाया।

प्रकाश और बीना की आँखें एक दूसरे की तरफ उठत की हुईं मगर पूरी तरह नहीं उठ पाईं। प्रकाश ने बच्चे की बाँह फिर घाम ली और बीना से कहा, "आप भी साथ आ जाइए न।"

"इस आज जान क्या हुआ है?" बीना भुँझलाहट के साथ बोली। सुबह से ही तग कर रहा है।"

इस वक्त यह आपके बिना ऊपर नहीं जायगा', प्रकाश ने कहा। आप साथ आ क्या नहीं जाती?"

"चल मैं तुम्हें जीने तक पहुँचा देती हूँ", बीना उसे उतार न देकर बच्चे से बोली। ऊपर से जल्दी ही लौट आना। घोड़े वाले कितनी देर से तयार सजे हैं।"

प्रकाश को अपने अन्दर एक नरतर-सा चुमता महसूस हुआ। मगर जल्द ही उसने अपने को सभल लिया। आप लोग आज ही जा रहे हैं क्या? वह किसी तरह कठिनाई से पूछ सका।

"जी हाँ", बीना दूसरी तरफ देखती रही। "जाना तो सुबह-सुबह ही था मगर इसके हठ की वजह से इतनी देर हो गई है। अब भी यह।" और वह बान बोच म ही छोड़कर उसने बच्चे से फिर कहा 'तो चल तुम्हें जीने तक पहुँचा दूँ।'

बच्चा प्रकाश के हाथ से बाह छुड़ाकर कुछ दूर भाग गया। मैं नहीं जाऊँगा उसने कहा।

अच्छा आ जा बीना बोली। मैं तुम्हें जीने के ऊपर तक छोड़ जाऊँगी— उस दिन की तरह।

मैं नहीं जाऊँगा', और बच्चा कुछ कदम और भी दूर चला गया।

आप साथ आ क्यों नहा जाता? यह इस तरह अपना हठ नहीं छोड़ेगा प्रकाश ने कहा। बीना ने आँखों के लिए उसकी तरफ देखा। उस दृष्टि में आशंका का अतिरिक्त न जान क्या-क्या भाव था। परन्तु आँखों में ही वह भाव धुल गया और बीना ने अपने को सहज लिया। उसके चेहरे पर एक तरह की हृदयता आ गई और उसने बच्चे के पास जाकर उन उठ लिया। 'तो चल मैं तेरे साथ चलती हूँ' उसने कहा।

बच्चे का आँसू भाव एक क्षण में ही बदल गया और उसने हसत हुए अपनी माँ के गले में बाँह डाल दी। प्रकाश ने धीरे से कहा आइए और उन दोनों के आगे-आगे चलन लगा।

ऊपर कमरे में पहुँचकर बीना ने बच्चे का नीचे उतार दिया और कहा 'अब मैं जा रही हूँ।'

'नहा' बच्चे ने उसका हाथ पकड़ लिया। तुम भी यहाँ बठी।

'बठिए', प्रकाश ने कुरसी पर पडी हुई दो-एक चीजें जल्दी से उठा दी और कुरसी बीना की तरफ बढ़ा दी। बीना कुरसी पर न बठकर चारपाई के कोने पर बठ गई। बच्चे का ध्यान सहसा न जान किस चीज ने खींच लिया। वह उन दोगो को छोड़कर बालकनी में भाग गया और वहां से उचककर सड़क की तरफ दौबन लगा।

प्रकाश कुरसी की पीठ पर हाथ रखे जस खड़ा था, वसे ही खड़ा रहा। बीना चारपाई के कोने पर और भी सिमटकर दीवार की तरफ देखने लगी। सहसा अभावधानी के एक क्षण में उनकी आंखें मिल गईं, तो बीना ने उसे पूरी गति मचय करके कहा 'बल इसकी जेब में कुछ रुपये मिले थे। आपने रखे थे?'

प्रकाश सहसा ऐसे हो गया जैसे किसी ने उसे पकड़ कर झक्यार दिया है। 'हां', उसने लडखडाते हुए स्वर में कहा। 'मोचा था कि उनसे यह कोई चीज कोई चीज बनवा लेगा।'

बीना पल भर चुप रही। फिर बोली 'व्या चीज बनवानी होगी?'

"कोई भी चीज बनवा दीजिएगा। कोई अच्छा-मा ओवरकोट या।"

कुछ देर फिर चुपी रही। फिर बीना बोली, "क्या काट बनवाना होगा?"

"कैसा भी बनवा दीजिएगा। जसा इमे अच्छा लगे या या जसा आप ठीक समझें।"

'कोई खास कपडा लेना है, तो बता दीजिए।'

"नहीं खास कोई नहीं। कसा भी ले लीजिएगा।"

"कोई खास रंग?"

'नहीं हां अगर नीले रंग का हो तो ज्यादा अच्छा रहेगा।'

बच्चा उछलता हुआ बालकनी से लौट आया और बीना का हाथ पकड़ कर बोला 'अब चलो।'

'पापा मैं तूने प्यार तो किया ही नहीं और आत ही चल भी जिया?' प्रकाश ने उस बाहा में ले लिया। बच्चा ने उसके होठों से होठ मिलाकर एक बार अच्छी तरह उमने चूम लिया और फिर थट से उसकी बाहा से उतरकर मां से बोला, अब चलो।

बीना चारपाई से उठ खड़ी हुई। बच्चा उसका हाथ पकड़कर उमने बाहर की तरफ खींचने लगा। 'तला न ममी दल हो लही है वह फिर तुतलाने लगा और बीना का माथ लिए हुए दहलीज पार कर गया।

तू जाकर पापा को चिटठी लिखेगा न?" प्रकाश ने पीछे में पूछा।

'लिखूँदा।' मगर उसने पीछे मुड़कर नहीं देखा। पीछे मुड़कर देखा एक बार बीना न, और जल्दी से आंखें हटा ली। उसकी आंखा के कोरा में अटके हुए आंसू उमके साला पर बह आये थे। "तूने पापा को टा-टा नहीं किया उमने बच्चे के कंधे पर हाथ रखे हुए कहा। आंखा की तरह उसका स्वर भी भीगा हुआ था।

टा-टा पापा !' बच्चे ने बिना पीछे की तरफ देख हाथ हिला लिया और नीचे स उतरने लगा । आधे जिन स फिर उसकी आवाज सुनाई दी, "पापा का घल अच्छा नहा है ममी, हमाल वाला घल अच्छा है । पापा के घल म तो कुछ भी छामान ही नहीं है !"

तू तुप करगा कि नहा ? बीना न उस झिडक दिया । ' जो मुह म आता है बालता जाता है । '

' नहीं तुप करूँगा नहीं करूँगा तुप " बच्चे का स्वर फिर रखासा हा गया और वह तेज-तेज कदमों से नीचे उतरन लगा । पापा का घल गंदा ! पापा का घल पू ! '

रात होते-होते आकाश फिर घिर आया । प्रकाश कल्य के बारम्ब मे बठा एक के बाद एक बियर की बोतलें टाली करता रहा । बारमन अटुल्ला लोगो के लिए रम और ब्रिस्की के पेग डालता हुआ बार-बार कनसिया से उसकी तरफ देख लेता था । इतन दिनों म पहली बार वह प्रकाश को इस तरह पीते देख रहा था । ' आज लगता है इस साहब न कही स बहुत माल मारा है उसन एक बार धीम स्वर म शर मुहम्मद स कहा । ' आगे कभी एक बोतल स ज्यादा नहीं पीता और आज चार चार बोतल पीकर भी बस करने का नाम नहीं ल रहा । '

शर मुहम्मद न सिफ मुँहें बिचका दिया और अपने काम म लगा रहा । प्रकाश की आख अटुल्ला स मिली ता अटुल्ला मुस्करा दिया । प्रकाश कुछ क्षण इस तरह उसे देखता रहा जैसे वह इसान न होकर एक धुँधला-सा साया हो और अपन सामने का गिलास परे सरकाकर उठ खडा हुआ । काउ टर के पास जाकर उसन दस-दस के दा नोट निकालकर अटुल्ला क सामन रख लिए । अटुल्ला बाकी पसे गिनता हुआ खुशामदी स्वर म बोला आज साहब बहुत खुग नजर आता है ।

अच्छा ? ' प्रकाश इस तरह उस देखता रहा जैसे उसके देखते देखते वह साया धुँधला हाकर बादला म गुम होता जा रहा हो । जब वह चलन को हुआ तो अटुल्ला न पट्टे सलाम किया और फिर पूछ लिया क्या साहब वह कौन था उस दिन आपक साथ ? किसका लडका था वह ?

प्रकाश को लगा जस वह साया अब बिल्कुल गुम हो गया हो और उसक सामन सिफ बादल ही बादल घिरा रह गया हा । उसन जैसे दूर बादल क गम म दलन की चप्टा करते हुए कहा कौन लडका ?

अटुल्ला पल भर क लिए भौंचक्का सा हो रहा फिर सहसा खिलखिलाकर हँस पडा । तब तो मैंने गेर मुहम्मद स ठीक ही कहा था वह वाला ।

क्या कहा था ?

कि हमारा साहब तबायत का वादसाह है । जब चाह जिसक लडक का अपना

लडका बना ले और जब चाहे 'यहाँ गुल्मग मे ता यह सब चलता है ! आप जसा ही हमारा एक और साहब है "

प्रकाश को लगा कि बादल बीच स फट गया है और चीलो की कई-एक पत्तिया उस दर्रे मे से हाकर दूर दूर उडी जा रही हैं—वह चाह रहा है कि दर्रा किसी तरह भर जाए, जिसमे वे पत्तियाँ आखो से ओझल हा जाएँ, मगर दर्रे का मुहाना और-और बडा होता जा रहा है । उसके गले से एक अस्पष्ट-सी आवाज निकल पडी और वह अब्दुल्ला की तरफ से आखें हटाकर चुपचाप वहा स चल दिया ।

"बस एक बाजी और !" अपनी आवाज की शूँज प्रकाश का स्वय बहुत अस्वामाविक लगी । उसके साथियो ने हल्का-सा विरोध किया मगर पत्ते एक बार फिर बँटने लगे ।

बाइ-रूम तब तक लगभग खाली हा चुका था । कुछ देर पहले तक वहा काफी चहल-पहल थी—नाजुक हायो से पत्तो की नाजुक चालें चल रही थी और नीसे के नाजुक गिलास रखे और उठाये जा रहे थे । मगर अब आमपास चार चार खाली कुसियो स घिरी हुई चौकीर मेजों बहुत अकेली और उदास लग रही थी । पालिश की चमक के बावजूद उनमे एक वीरानगी आ गई थी । सामने की तीवार मे बुखारी की आग भी कब की ठण्डी पड चुकी थी । जाली के उस तरफ कुछ बुझे-अधबुझे अगारे ही रह गय थे—मर्दों से ठिठुरकर स्याह पडते और राख म गुम होते हुए ।

उसने पत्ते उठा लिए । हर बार की तरह इस बार भी सब बमेल पत्ते थे—ऐसी बाजी कि आदमी फेंककर अलग हा जाए । मगर उसी के अनुरोध से पत्ते बँटे थे इसलिए वह उहे फेंक नहीं सकता था । उसन नीचे से पत्ता उठाया तो वह और भी बमेल था । हाथ से कोई भी पत्ता चलकर वह उन पत्ता का मेल बठान का प्रयत्न करन लगा ।

बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही थी—पिछली रात जसी वषा हुई थी उसमे भी तेज । खिडकी के शीशा से टकराती हुई बूँद बार-बार एक चुनौती लिए हुए आती थी परतु सहसा बेवस होकर नीच को दुल्ब जाती थी । उन बहती हुई धारा को दखकर लगता था जैसे कई एक चेहर खिडकी के साथ सटकर अंदर झाँक रहे हा और लगातार रो रहे हो । किसी क्षण हवा से किवाड हिल जात थ तो वे चेहर जैसे हिचकियाँ लन लगते थे । हिचकियाँ बढ होन पर वे गुस्मे से धूरन लगते । उन चेहरा के पीछे अंधेरा छटपटाता हुआ दम तोड रहा था ।

"डिबलेयर !" प्रकाश चौंक गया । उमक हाथ म पत्ते अभी अभी तरह थे—इस बार भी उसे फुल हैंड ही दना था । पत्ते फेंककर उसन पीछे टक लगा ली और फिर खिडकी से सटे हुए चेहरो का देखन लगा ।

तुम बहुत ही श्रुंगविस्मत हो प्रकाश, सचमुच हम मे सबसे श्रुंगविस्मन आदमी तुम्ही

दूध और दवा

बात बहुत छोटी सी है, नाबुक और लचीली, पर मौका पाते ही सिर तान लेती है। कोई काम शुरू करने साने या पल भर को आराम में पहले लगता है कुछ देर इस प्यारी बात के साथ रहना कितना अच्छा है ! वैसे मुझे काम करना, करते रहना और करत करत उसी में खा जाना प्रिय है। "सी की बात भी मैं लोग से करता हूँ और दूसरो से यही चाहता भी हूँ पर यह सब तभी होता है, जब मेरे चारो ओर लोग होते हैं। ऐसा नहीं कि लोगो में मेरे बीबी बच्चे शामिल नहीं हैं। कभी कभी मुझे ऐसा लगता है, जैसे मैं किसी भीड़ में खड़ा हूँ और असाह्य ध्वनियाँ मेरे कानो के परदे को छूदने लगती हैं। मैं मागकर अपने कमरे में घुस जाना चाहता हूँ, पर उसकी बड़ी बड़ी, आंसुओं में डूबी हुई आँखें मैं क्या करूँ इनका ? देखते ही, अब मुझे भी दूध के लिये ज़िद करती है ! ऐसा नहीं कि बात मेरे मन में गहरे तक नहीं उतरती, मैं तो मुन्नी को स्कूल जाने के लिये एक छोटी मोटर खरीदना चाहता हूँ। हल्के गुलाबी रंग के फ्राक में लड खड़ाती दौड़ती मुन्नी को देखने की मेरी कसी विविध लालसा है, जो कभी पूरी होती ही नहीं दिखायी देती !

सुबह सुबह विस्तर से उठते ही वह जोर जोर से चीखने लगती है जब उसकी माँ से सूजी आँख और भी सूजी हाँती हैं। कई बार मन में डाक्टर की बात उठती है, डर लगता है वही मुन्नी की माँ की पतली लम्बी किशती-सी आँखा का पुराना छेद फिर न खुल जाये और सवेरे-सवेरे डूबने उतराने की मर्मांतक पीडा में मुझे लिखना-पढ़ना छोड़कर सड़क का चक्कर काटना पड़े ! मैं रुपचाप एक निश्चय करके कमरे में चला जाता हूँ पहले डाक्टर का इन्तजाम करके ही उससे चचा करूँगा। पर फिर वही नन्ही-सी बात ! तुम्हें खाने लगता हूँ तुम जा "स कड़ी उमीन की घुमन से पलभर को उठाकर मुझे एक सुनहल मिलमिलात लोके में खीच ले जाती हो तुम्हारे मीन के बीच मुलायम उजड़ देह माग में मुह डालकर पलभर को साँस लेना कितना अच्छा लगता है मुझे ! "गपद तुम्हें याद हागा बात मकड़ी के जाले की तरह तनने लगती है लेकिन घटा और घटो जाँच बन्द रखने पर भी गिजार काई नहा फसता और मैं बीबिया और मजदूरो के बारे में सोचने लगता हूँ आखिर इन दोनों को हरदम गिजायते क्या रहती हैं ? क्या इन दाना के मीन में खार पाना का इतना विगाल समुद्र

फफाया रहता है मृत्यु की आखिरी कराह की तरह इस समुद्र की लहरें चीखती हैं, पर किसी खोखले थ्राप की तरह मिथ्या बनकर बिखर जाती हैं। मैं इन विनाशकारी लहरों को दुनिया को निगल जाते देखने के लिये व्याकुल हो उठता हूँ, पर हलकी-सी मुस्क राइट या वह भी नहीं ता बस मुलायम कलाइयों की पकड़ और उस समय कुछ भी और न सुनने की बात जान भी दा ! कमर के नीचे नगी, खुली मैं इस असा मयिक मृत्यु से बचना चाहता हूँ, पर कोई चारा नहीं। मुन्नी की माँ के जीने का यही सहारा है और मेरे पास उन मृत्यु की घाटियों के सूनेपन को दूर करने का यही उपाय। वह विश्वास नहीं करती, पर मैं सच कहता हूँ कि मुझे इतना बहुत अच्छा लगता है ! इसलिए मैं समझ नहीं पाता कि स्त्रिया और मजदूर मालिका को क्यों ओढ़े हुये हैं, महज इतनी-सी बात क लिये, या मुन्नी की आँखों के माडे की दवा या उसके दूध के लिये !

ये प्रश्न उसके साथ नहीं उठते, क्या आखिर ? क्या उसे बच्चे नहीं हो सकते या वे दूध पीने वाले बच्चे नहीं होंगे ? धीरे धीरे यह 'क्यों' घुँघलाता है, पानी सिर्फ एक बूँद, स्याही, जाने कसी फलकर एक झील, भूरी आँखों की तरह, वह भी सतही उपली अछूता, कच्चा, नुकीला फूल, आसमान में उड़नवाली लरजती पतंग की लम्बी पूँछ किसी बँगले के फटे, पुराने परदे मुल्क में बदअमनी और भूख के मित्र जिहे नौकरी के लिय पत्र लिखे हैं, जो चाहे तो मैं भी उही की तरह का लपूँ, बेएतबार और ऊँचे दरजे की नौकरी देनेवाला मुलाजिम लेकिन वह नौकरी से चिढती है—तुम नौकरी करोगे ? फिर तो माटर बगले और मुख की अनेक कोटिया हैं। मेरे लिये जगह कहा होगी ? मैं गरीब बाप की बेंटी हूँ।—अजीब बात है, तुम भूख में जी सकती हो, लेकिन वह तो कहती है कि उसके सीने में एक भयकर ज्वालामुखी दवा पडा है, जो कभी भी नहीं भडकेगा, मुन्नी की माँ यह भी जानती है। पर क्यों नहीं भडकेगा क्या उसके लावा से मेरा घर-आँगन नहीं पट जाएगा ? इसलिए न कि मैं लिखूँगा और लिखने से पस मिलेंगे और पस उसे ठंडा करते रहेंगे। वह यही तो कहती है कि पसा दिल को ठंडा और गरीब का गरम रखने की अद्भुत दवा है—गरीब दुनिया का सबसे अच्छा इन्सान है, गरीब लडकी की मुहब्बत दुनिया की सबसे पवित्र निधि !—कभी कभी वह स्कूल-बीचर की तरह बोलती है ! आखिर यह सब और है ही क्या ?

मुन्नी जब जमी थी ता उसके लिये मैंने एक झूला खरीदा था, बहुत-सारे पकड़ बन थे और उस दूध में ब्लूकोज और शहद दी जाती थी फ्रँच सीबेगी मेरी बेंटी, मैं चाहता हूँ वह पेन्टर बन सिर्फ तीस रुपये तो लगते हैं उसके दूध के। तीस में ऐसा क्या रखा है ? साल ही मर बाद रनू आया तो कितना उत्साह था ! कोई बात नहीं, दोना के लिये एक गाड़ी होगी, दाना का बेंट जाएँगे लेकिन यह क्या पिजूल की बातें हैं, बेओर-छोर की। मैं झटके से उठ बढता हूँ और लिखने की कापी के मसौदे

कई बार जलट पुलटकर देखने लगता हूँ। कई अच्छी चीजें लिख बिना पत्नी गृह गयी हैं। पर वही समय उन्हें उठाया तो नहीं जा सकता। मामूली स्तर पर बान बनाने से मुझे चिढ़ है लेकिन सहसा मुझे मकड़ी के नहे तार की स्मृति फिर हो आती है और मैं विस्तर छोड़कर उठ पड़ा होता हूँ वहीं जाता फिर न तनने लगे 'मुन्नी की माँ ऐसे ही समय आ जाती है, 'कहीं बाहर जा रहे हो क्या?' एक तब क्षणक दिमाग म बज उठती है, पर मैं उस पर तुरत हाथ रख देता हूँ। कोई कड़वी चीज निगलता हूँ, हाँ कोई काम है क्या ?'

'नहीं तो, ऐस ही पूछ लिया। अभी तो धूप बहुत तेज है कुछ रुककर जाते !'

और वह वह ही क्या सकती है ? धकी भी तो है, बहद। मन्जू ने माग दोपहरा परेशान किया है। चौका-बरतन सामान की समाल-सहेज, बपडो की सफ़ाई, अभी तो उसे पिलाकर मुलापा है। 'लाउज के बटन खुले ही हैं।

'मुन्नी भी सो रही है क्या ?'

"नहीं, सब जग रहे हैं।" वह उाती हुई हँसी को दबाती है चेहरे पर मून की पत्नी सी छलक हाती है और फिर क्षण ही मर म मृतक धीरे धीरे गाड़ी हान लगती है। वह दरवाजा छोड़कर कमरे में आती है आज मुन्नी की आँखों म बहत दद है। चेहरा मुस हो गया है। अभी-अभी तो सिर में तेल डालकर बहुत देर तक सहलाती रही हूँ तब जाकर सायी है।

वह चारपाई पर बठ जाती है। मैं पास आकर कहता हूँ ग्लाउज के बटन तो ठीक कर लो तुम्हें अब ठीक ढग से बाँडी पहनना चाहिए।

वह बटन बंद करत करते बोलने लगती है अब इसक मुख की कल्पना मरे पास नहीं है न ही तुम्हारे मन में है और अगर है, तो नहीं होनी चाहिए।' उसका बदन गम होने लगता है मेर सीने में एक बंद ज्वालामुखी है, जो कभी नहीं भडकेगा यह मैं जानती हूँ ऐसी ही बातचीत के घरातल पर बन् ज्वालामुखी तब पहुँचती है। और मुझ ऐसी ही मत्र भी बातचीत से डर लगता है। मैं ई धन नहीं डालता और वह उठ पडा होती है। कहा जस कोई दद रँग गया हा। मैं चाहता हूँ जाते जान उसमे कुछ कहकर जाऊँ पर ऐसे समय कुछ कहने का मतलब है कुछ सुनने का सम्भावना।

गायद जिस तरह उस मात्रुम है कि मैं बट्टी जाता हूँ उसी तरह मुझे भी मात्रुम है कि मैं बट्टी नहीं जा रहा हूँ पर जा रहा हूँ, यन् ठीक है।

मेर घर के सामन एक चौडा नाला है जोर उसके पर कंटीली शाडी का एक बढा-मा गुम्बद। मैंने कभी उसम एक सरगोग क जाडे का घुमते देखा था। बस मैं पल-मर की पिछली बात को भूल जाता हूँ पर उसे आज भी नहा मूला। घर म निबलता हूँ, तो पल मर रुबकर उधर उधर दम लता हूँ। स्कूल स लडकिया की

है, मौलसरी की पत्तियाँ दम सापे हैं, मुकलिट्टन की लम्बी सागें मर गयी हैं और बच्चों के पाक की घेपास की उजली जमीन पिसी हुई, निर्जीव हृष्टी की तरह चमक रही है। मैं चाहता हूँ, हवा फिर गोल-गोल पाकर साकर ऊपर उठे और फिर वही साल भर पुराना सम-गुच्छ आज घट जाये मौलसरी की पत्तियाँ मुकलिट्टन की डाला, पाक की जमीन और भरे साम

मैं पक्कर दूब-दूब हो रहा हूँ। पलमर वही बठना चाहता हूँ और कुछ नर सब बाहर का ही दसाना चाहता हूँ जत कोई मकान का दरवाजा लगाकर बरामत मे आ जाये। लेकिन अब बहुत देर हो गयी है, लोत्ने म काफी समय लगेगा लगता है, वह घर स तिलल गही पायी क्या नहीं निकल पायी? उस निकलना चाहिये था। उरो लोहे की जूनियाँ पहनकर बाँटो को चुचलते हुए आना चाहिए था, लेकिन वह कहती है, "मैं खून स लम्पथ हाना चाहती हूँ मैं उन सार दागा को अपने शरीर पर मुसर रखना चाहती हूँ मैं सारे धाया की मवाद घोर गदगी को लोगो को दिसाना चाहती हूँ! देखो, सत्य यह है, तुम्हारी सच्चाइया की तस्वीर यह है! तुमने घर को इसलिये स्वयं बना रखा है कि तुम्हारी बीबी तुम्हारी बमाई साती है और एक सरीदे हुये दास से भी बदतर ढग से तुम्हारी सेवा करती है। तुम्हें अगर यह पता लग जाये कि वह तुम्हें नहीं किसी ओर को चाहती है तो तुम हवा म नजर आते हो, क्योंकि तुम्हें अपने से ज्यादा अपने पसा पर भरोसा है। यही एक पुरानी टकौरी है तुम्हारे पाम!"

एक नन्हा सा आबमीजन बलून हवा म उडता चला जाता है उसमे तुम बठी हा गरदन दद करने लगती है देखते-देखते, लेकिन तुम किमी मापाकिनी की तरह पीछ से हँसती हुई गाद म बठ जाती हो "मुझे प्यार करो मेरे जान का समय हो गया मैं चाहती हूँ इसकी याद बनी रह जाय!" पर मुन्नी का बलून तो मेरे कमरे की निचली ही छत म अटका रह जाता है। वह पर पटकन लगती है "पापा! उतालो इधे! देखा यह छत चला लही है मेला गुब्बाला तुम्हो ने छिपाया है।

'मैं कैसे पहुँचूँ इतनी ऊँचाई तक?'

"अच्छा मुझ कपे पल उठाओ।

'फिर भी तो नहीं पहुँचोगी।'

'कुलछी पल मले हो जाओ।'

उसकी माँ बिगडती हुई आती है, यह क्या तभासा है! कमी लो आँख ही पई है अब हाथ-पाँव भी तोडकर बठागी?"

मैं चुपचाप खडा हूँ और वह मुन्नी क उतरन का इन्तजार करती है। लेकिन यह ता आबमीजन ही निकल गयी गुब्बार से। 'मुन्नी! मुन्नी!'

'अब उसे जाने भी दा! और हाँ कल रात कुछ लिख रहे थे, वे बागज कहाँ गये?'

मुनी की दवा और दूध बुपके से मन म कुछ कापता है—मैं ऐसी ही नही-नहा बातो को लेकर पेरशान हाता हूँ ।

० ०

उसका स्वर काना मे बज उठता है "आखिर इसम क्या ऐसा रखा है, जा तुम्ह विचलित कर देता है ? मैं रकी नही, कुछ कहा नही, तो क्या आसमान फट पडा ? मैं पूछती हूँ कि मुनी के दूध और दवाइयो का क्या हुआ ? तुम कुछ लिखकर मुझ देनेवाल पन ?"

और इतने ही समय म यह कुछ धीमी-सी हो गयी है । मैं चुप जो रह गया ।

क्या सोच रहे हो ? मैंने तो समझा कोई कहानी लिख रहे थे । आज बिभी का देकर कुछ रुपये लाते तो अच्छा था । कल दो रुपये का सामान मँगाया था, आज भर और चलगा ।"

इस नन्हू-से अवसर से सम्भल गया हूँ, इसलिए बात बनने मे दर नहा लगती, "वह तो पत्र था । तुम्हे गोदावरी न लिखा था न कि कितारें भिजवा दो, यहा प्रकाशक को लिखा कि उसे भेज दें । अरे रकी, दखो, वह क्या है ?"

"कहाँ ?

"रको ता ! अरे, यह तो वहा तिल है !' अँगुलिया काप जाती हैं । चेहरे पर चुनबुनाहट की तरह कुछ बहुत नन्हा-नहा उग आता है, एक अजीब-मी खुशी की लहर—

"हटा भी, खिडकी खुली है !"

मेरे सीने म एक ज्वालामुखी है, जो कभी नही भडकेगा, यह मैं जानती हू ।

मैं समझ नहा पाता कि स्त्रिया और भजदूर मालिका को कयो जोड़ हुए हैं, महज इतनी-सी बात के लिये या मुनी की आँवो के माँडे की दवा या उसके दूध क लिए !

तीसरा आदमी

पाजामे को माँटकर उसमें किल्प लगाते हुये सतीश बोला 'तुमने तो सारा कमरा ही अस्त-व्यस्त कर रखा है, वही बठने तक वीता जगह नहीं है। तुम ठीक-ठाक करो, तब तक मैं जरा बाहर ही घूम आता हूँ।'

हाथ में झाड़ू लिये लिये ही शकुन ने उसे भरपूर नज़रो से देखा 'देख रही हूँ तुम्हें आलोकजी का आना अच्छा नहीं लग रहा है।' आवाज़ में हल्की-सी तल्लीमी जिसे मौहो पर पड़े बल ने और भी स्पष्ट कर दिया था।

"मुझे ? मैंने तो ऐसा कुछ नहीं कहा।" और उसने या ही स्टण्ड के सहारे खड़ी साइकिल के पहिल पर पार से पर मारा, ता पीछे का पहिया जोर से घन्ना उठा।

सब-कुछ कहा नहीं जाता है कुछ 'बात होती है, जो शब्दों के बिना भी शब्दों से उयादा स्पष्ट होती है। फिर मैं कोई बच्ची नहीं, तुम्हारी हर बात को खूब समझती हूँ।' और वह जोर जोर से झाड़ू मार-मारकर दरी की धूल झाड़न लगी।

एक क्षण का सतीश की समझ में ही नहीं आया कि वह क्या कहे, क्या करे ? बड़ी कातर सी नज़र से उसने शकुन को देखा और फिर साइकिल ठेलता हुआ सीन्धियाँ उतर कर सड़क पर आ गया।

बाहर आकर एकाएक उसे लगने लगा जैसे आलोक का आना उसे सचमुच ही अच्छा नहीं लग रहा है। दो दिन से मन पर आ हल्की सी खिन्नता छापी हुई है, वह वही अच्छा न लगना ही तो है। वह शायद इस भावना को नाम नहीं दे पा रहा था शकुन न दे दिया।

शकुन के मन में बड़ा उत्साह है। कल से ही लगी हुई है सारा घर ठीक करन में। और कल से उस बड़ा अपसास भी हो रहा है कि क्यों नहीं उसने बड़ा घर लन की बात मान ली ? अब इस एक कमरे की ही बड़ा बनाने के चक्कर में उसने न जान कितना फालतू सामान हटा दिया है। अपन घर को बिल्कुल नया रूप नया जीवन देने पर तुली हुई है जैसे।

नया रूप, नया जीवन ? कमरे के लिये य शब्द कितने बेतुके हैं ! उस इन शब्दों का खयाल ही क्या आया ? उस खुद लगने लगा कि बहुत भीतर वहाँ कुछ हो

रहा है, जो उसे एबनॉमल बनाता जा रहा है। तभी तो उसने कुछ नहीं कहा फिर भी शकुन माप गयी।

उसने देखा, वह गुक्ला के घर के सामने आ गया है। चलते समय उसने कुछ भी नहीं सोचा था कि वह कहाँ जायेगा। बस घर में बैठने की जगह नहीं थी सो चल पड़ा था। कुछ देर गुक्ला के यहीं बैठ ले। उसन पर जमीन पर टिका दिये पर दो मिनट तक वह तय नहीं कर पाया कि वह गुक्ला के यहाँ जाये या आगे बढ़ जाये। नहीं, उसे वही नहीं बठना है। वह इस समय एकान्त में बैठकर अपने मन में ही झाँकेगा जो कुछ भी अनुचित अस्वाभाविक वहाँ है उसे जाने समझेगा। शायद इससे उसकी मानसिक स्थिति कुछ सुधरेगी। धरना यदि वह कल भी इसी तरह ऊटपटांग व्यवहार करने लगा, तो कितनी भद्दी बात होगी। फिर यह आनेवाला व्यक्ति लेखक ठहरा जरूर बड़ी पनी नजर होगी उसकी।

उसने साइकिल आनासागर की ओर माड़ दी। बजरग-गढ़ पर चढ़ती भीड़ को देख कर उसे खयाल आया, आज जरूर मंगलवार ही हाना चाहिये। होना क्या चाहिये, है ही। तो वह क्या भूलने भी लगा है? क्या होता जा रहा है उसे?

सारी बारहदरी पार करके वह उसके अंतिम मिरे पर आ गया। साइकिल में उसने ताला डाला और तालाब की ओर मुँह करके बैठ गया। सामने पानी में छोटी छोटी लहर उठ बिखर रही थी। एक लहर उठकर आगे बढ़ती, पर किनारे तक आने से पहले ही दूसरी लहर घक्के से उसे बिखेर देती। वह कुछ देर लहरों का यह खेल ही देखता रहा।

कल आलोकजी जा रहे हैं। आलोकजी—जिन्हें वह जानता नहीं, जिन्हें उसने कभी देखा नहीं। वह शकुन के परिचित हैं और उसी के निमंत्रण पर आ भी रहे हैं। शकुन ने उसे भी पत्र लिखन के लिये कहा था, दो दिन तक वह तय ही नहीं कर पाया था कि लिखे या नहीं। फिर शकुन एकाएक विगड़ पड़ी थी, तो उसन उमी समय एक पोस्टकार्ड लिख दिया था, और अब वह आ रहे हैं। यो देखो ता बड़ी साधारण-सी बात है, फिर भी उस लगता है कि वही कुछ है जवश्य।

आलोकजी बड़े लेखक हैं। शकुन से ही उसन उनके बड़प्पन की बात सुनी है। बड़ आदमी हैं तो व्यस्त भी जरूर रहते होंगे फिर आना स्वीकार कैसे कर लिया? शकुन से भी तो कोई विनोय परिचय नहीं। चार महीने पहले वह दो दिन के लिये जयपुर गयी थी अपने भाई साहब के पास, वही शायद मिली थी कुछ समय के लिये। उसके बाद पत्र आते-जाते हैं। कभी-कभी कित्तौ के पासल भी। शकुन की मज पर आलोक की कई पुस्तकें जम गयी हैं, जिन्हें वह हमेशा पढ़ती-सराहती रहती है।

पर शकुन कुछ ज्यादा ही उत्साहित है। उत्साह क्या, आवेग में आयी हुई है। शायद इसीलिये कि वही उन्हें जानती भी है और कोई बड़ा आदमी आना है तो थोड़ा

उगाह-आवग आ ही जाता है ।

उग याद आया शकुन को इस घर में तीसरे आन्धी की उपस्थिति असाध्य हो जाती थी । कमरा एन ही था और जब कोई भी आ जाता, तो उनका जाने के लिए अलग जगह नहीं रह जाना और मान समय शकुन से अलगाव नहीं सहता जाता । जिस साल शकुन बी० ए० की तयारी कर रही थी, तो उसने गाँव से माँ का बुल्वा लिया था । पर माँ समाल लेंगी, तुम पढ़ने में लगी रहो, परना यह दूसरी महनत तुम्हें मार दगी ! कितना काम तुमका करना पड़ता है, सच में तुम्हारे लिये पर शकुन रोता रहती थी क्या बेकार पौ बान करत हा ? तुम मुझसे चौगुना काम करवा लो, पर रात को तुम्हारी बीह नहा छोड सकती । वही आत ही सारी घरान मिट जाती है, अगल दिन के त्रिय ताजगी आ जाती है । और सतीग ने बड ढग से माँ को वापस गाँव भेज दिया था ।

एक बार उसका एक बडा पुराना मित्र आकर टिक् गया था । शकुन गिष्टता की सीपा लाँघकर उसका गांध पंग आयी । सतीग को उस बार तो गुस्ता भी आ गया था, पर शकुन की यह दुबलता भीतर-ही भीतर उसे बहा पुलकित भी करती रहती ।

मैं बी० टी० करके नौकरी कर लूँ तब तुम दो कमरे का भकान ल बनाओ और जिसका चाहो बुनाना । या भी अब तो किसी तीसरे आदमी को बुलायेंगे ही आखिर कब तक टालेंगे ! और वह लजा पड़ी थी ।

जिस दिन बी० टी० का रिजल्ट निकला था, वह और शकुन बेहद प्रसन्न थे और उस दिन पहली बार वे किसी तीसरे आन्धी को लान के लिए मनुहार करते रहे थे । तीन साल अपने का जन्म किया अब और नहीं अब और नहीं ।

वे प्रतीक्षा करते और फिर नये सिरे से निराग हो जाते । जुलाई में शकुन को हायर सेकेण्डरी स्कूल में नौकरी मिल गई । दो-तीन महीने अपन नये काम के बीच वह कुछ मूली रहो । पर मनाश न देगा कि धीरे धीरे यह निराशा उसके भीतर ही भीतर कुछ ताडती मरोडती चउ रहती है ।

‘अरे भाई खान पर आओ न, मैं बठा हूँ ।’

तुम का लो मुझ आज खाना नहीं है ।’

क्या बात है सबीयत तो ठीक है न ?’ सतीश न भीतर लेटी शकुन को दुलारने हुए पूछा ।

हाँ हाँ ठीक है । मैंने व्रत रखा है ।

व्रत ! सतीश जोर में हस पडा । यह व्रत तुम कब से रखने लगी हा ?

अब से मंगल का रखा करूँगी । हनुमानजी का व्रत रखना चाहिए । तुम चाहे मजाक उडा लो मैं तो मानती हूँ ।

सतीश एकाएक खिन्न हो आया था । वह अकेला ही खाने बठा ता उससे खाना

नहीं गया। उस रात उसकी छाती पर सिर रखकर गकुन बहुत-बहुत रोयी थी 'मेरा मन नहीं लगता, मुझे बड़ा अकेला-अकेला लगता है।'

सतीश इस बात से दुःखी नहीं, शकुन के दुःख से जरूर दुःखी था, पर कुछ भी उसकी समझ में नहीं जाता कि वह क्या करे? और एक दिन गकुन ने कहा "मुनो आज मैं डाक्टर के पास गयी थी।"

"क्या?" बड़े आश्चर्य से उसने पूछा।

"इधर कुछ दिनों में मुझे अपनी तबीयत ठीक नहीं लग रही थी, साचा दिक्का हूँ।"

'मुझे तो तुमने अपनी तबीयत के बारे में कुछ नहीं बताया?' कुछ अविश्वास से उसने पूछा। शकुन या अकेली डाक्टर के पास चली जाय कुछ नयी बात थी।

'बताने जसा कुछ होता तो बता देती, बस या ही खरा भारीपन-सा लगता था।'

'क्या बताया डाक्टर ने?' डाक्टर की बात सुनते ही उसका मन जान बूझा-कसा होन लगा था, पर अब आश की एक हल्की-सी लहर दौड़ गयी। क्या गकुन कोई स्वर गुनान वाली है?

'कोई खास बात नहीं।' बड़ा उदास स्वर था शकुन का। नहीं, खुश हान जसी कोई बात नहीं है।

'उसने तुम्हें बुलाया है।' शकुन फिर बोली।

'क्यों?' और वह गौर से शकुन को देखने लगा। गकुन भी शायद उसकी नज़रों का सामना करना नहीं चाहती थी मुँह किनाब में ही गड़ाये रखी।

"क्या हज़ है, एक बार चले जाओ तो। हिम्मत बटोरकर शकुन ने कहा।

सतीश को लगा शकुन चा या अकेल डाक्टर के पास जाना, उसे भी जान के लिए कहना जस भीतर-ही भीतर कुछ घुनता जा रहा है। उनका मन हूआ, कोई तीखी-सी बात कह दे, पर कही न गयी। कहा केवल इतना ही 'मुझे क्या हुआ है जो डाक्टर के पास जाऊँगा, मुझ नहीं जाना है।' और वह प्रतीक्षा करन लगा कि शकुन विरोध करे या जिद करे, तो फिर वह कुछ सुनाये। शकुन ने कुछ नहीं कहा। कहती क्यों नहीं है साफ-साफ।

"तो शकुन, उसे भीतर-ही भीतर उसके कुछ सुलगन लगा। सामन लेटी शकुन उसे बड़ी अपरिचित और परायी-सी लगन लगी। यही वह गकुन है जिसे उसने अपने प्राणा से भी ज्यादा प्यार किया है जिसे उसकी बाह्य का सहारा लिए बिना नीद नहीं आती। वही शकुन उस पर सदाह करती है। उसे वह बिना कुछ बोले बाहर चला गया था। उसे सारी बात पर कभी गुस्ता आता, तो कभी दुःख होता पर भीतर-ही भीतर एक हल्का-सा भय भी अनजान ही उसका मन में समाता जा रहा था।

और उस दिन के बाद उसे घर की छत के नीचे बिना बाल बिना कहे बहुत

कुछ घट गया था। शकुन के भीतर कहीं कुछ मर गया था। जिस रात की प्रतीक्षा में पहले वह सारा दिन काटता था, बिना थक पाइलो से जूमता रहता था उसी रात अब वह डरने लगा।

उसके बाद जब भी दो कमरे का घर लने की बात आती, बड़े बुझे-से स्वर में शकुन कहती 'क्या करना है बड़े घर का? दो जनों के लिए यह कमरा ही काफी है।' हाँ लकड़ी का पार्टींगन अवश्य लग गया था और मावापण सोने और बठने के दो कमरे बना दिये गये थे। शकुन बहुत कजूस हो चली थी। जब-तब कहती 'कौन लम्बी चौड़ी आमदनी है! इसी में स एच करना है वरना यहाँ कौन "ओर सतीश का मन बढ़ाये मैं चार पस हांगे तो यही सहारा दोगे वरना यहाँ कौन "ओर सतीश का मन होता था कि एस व सिर-पर की बकवास करने के लिए वह शकुन की जीम टीच ल पर भीतर ही भीतर दिन प्रति दिन बदन वाला वह भय उस कुछ भी नहीं कहने देता। क्या बहे बह?

और सबसे बड़ा परिवर्तन हुआ था कि सारा शरीर सतीश की बाँहों में छोड़कर भी शकुन वहीं और रहती थी। चाड़ी दर बाद ही वह उसकी बाँहों में स झूठकर करवट लेकर सो जाती मुझ नींद आ रही है।' और अपमानित-आहत सतीश करवटें लेता रहता और निश्चय करता कि वह शकुन को बिना बताये कल ही डाक्टर के पास जायेगा और अपने को दिला आयेगा। यह झूठा लीछन वह क्या अपने ऊपर ले? पर सवेरा आता तो पता नहीं उसे क्या होता कि डाक्टर क यहाँ जाने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ती। मन के किसी कौन में छिपा हुआ वह भय फलता जाता और उसके सारे निश्चय डिग जात। वह साइकिल मोड़ लेता और सीधा आफिस ही पहुँच जाता।

सशय और ड्रड स अस्त शकुन के दु ख से दु खी और एक अजान आशका से अस्त सतीश बस एक ही बात महसूस करता कि शकुन उससे दूर होती जा रही है— उसके शरीर में भी आर मन में भी। कोई तीसरा प्राणी उनके बीच आ जाता तो ब कितन पास आ जाते। उसके अभाव में उनकी अनुपस्थिति में दिनों दिन वे दूर दूर ही होते जा रहे हैं।

पर कोई तीसरा प्राणी नहीं आया। हाँ खाना बनाने के लिए एक बुद्धिया माजी को सतीश ने जिक करके रख लिया। तब तक उस बड़े अभाव की पूर्ति नहीं हो जाती वह शकुन के लिए सामर्थ्य मर दूसरी सुख-सुविधाएँ जुटा देना चाहता था। एकाएक घण्टा की आवाज के बीच वज्रग गड़ की आरती का स्वर चारों ओर फल गया। सतीश भी स्वर में स्वर मिलाकर गाने लगा। वह कई बार मगल को शकुन के साथ वज्रग गड़ आया है उस पूरी आरती याद है। शकुन ने कमरा ठीक कर लिया होगा अब चलना चाहिए। उस एकाएक एक

पछतावा हान लगा कि वह यहाँ क्या आया ? उसे भी शकुन के साथ कमरा ठीक करवाना चाहिए था । वह भी उतने ही उत्साह से काम करता, तो शकुन कितनी प्रसन्न होती ! वह क्या वहीं भी, कभी भी शकुन को प्रसन्न नहा रख सकेगा ?

पर वह क्या करे ? उसे आज सचमुच कुछ अच्छा नहीं लग रहा है । आज क्या, उसे पिछले तीन चार महीना से कुछ भी तो अच्छा नहा लग रहा । हा, शकुन जरूर कुछ प्रसन्न रहने लगी है । लगता है जैसे उसने इस स्थिति को अपनी नियति मान लिया है । पर क्या ? दो बप का सपप कोई ऐसी अवधि तो नहीं है कि आदमी या हताश हा जाये । उसके पास ऐसे लोग की एक लम्बी लिस्ट है जिनके विवाह के पाँच पाच सात सान साल बाद बच्चे हुए । पर शकुन तो जैसे कुछ भी सुनन मानने को तयार ही नहा है । उसकी इस जिद के लिए क्या किया जाय ?

जिद ! क्या सचमुच यह जिद बिल्कुल ही आधारहीन है ? और यदि है ही तो क्यों नहीं वही उसे प्रमाणित करके उस इस त्रास से मुक्ति दे देता ? पर क्या हुआ है उसे जो वह डाक्टर के पाम जाये ? वह बिल्कुल नामल आदमी है । ऐसा कुछ भी होता तो क्या उसे पता नहीं लगता क्या तीन साल तक शकुन का पता नहा लगता ? उसने कभी कुछ महसूस नहा किया, ता फिर यह शका उसके मन मे आयी ही क्यों ?

पर वह एक बार चला ही क्या नहीं जाता ? नहीं, वह शकुन की इस भूठी और बतुकी जिद के सामा अपने को या अपमानित नहा होने देगा, पर हर बार ही वही बहुत भीतर से एक प्रश्न-मा उठता—क्या वह सचमुच शकुन की जिद के कारण ही जिद किये बठा है, और वही कुछ नहीं है ? किसी जाशका ने तो उसे नहीं रोक रखा है और यही आशका धीरे धीरे मन मे गाठ बनाती चल रही थी । उसका खुद अपने पर से जैसे विश्वास उठने लगा था । उसे स्वय शकुन का सदेह कभी-कभी सच लगने लगता था । एक अपराध भावना मन मे घर करन लगी थी ।

और तब उसन सोचा था कि शकुन को प्रसन्न करन के लिए वह सब कुछ करगा । किसी भी कीमत पर वह उस प्रसन्न रखेगा पर बिना कुछ किये ही वह प्रसन्न रहने लगी तो उमे लगन लगा कि वह कीमत उससे चुकायी नहीं जा रही है बहुत भारी पड रही है ।

उसने स्वय आलोक के पत्र पने हैं । उनमे उमे वही कुछ ऐसा नहीं लगा, जिनस वह आहत अनुभव करे पर हमेशा उम लगता है कि लिखे हुए शब्दो से परे भी कुछ है अरु बरना इन शब्दो मे आन्विर ऐसा है ही क्या जो शकुन या प्रसन्न रहती है ?

घर लौटन की बात फिर उसके मन मे आयी । आठ-दस आवारा से लागा को छाडकर मल आदमिया की भीड जा चुकी थी । हवा मे ठण्डक बढ़ती जा रही थी । सतीश ने सडे होकर बड अल्साये भाव से एक जोर की अँगड़ाई ली । मामने पानी के फल विस्तार मे अभी छोटी छोटी लहरें उठ बिखर रही थी । तीन तरफ पहाटिया से घिरा

यह तालाब ओर उठती गिरती ये लहरें ।

सादो के घाद अस्मर घट शकुन को सखर यहाँ आया करता था । शकुन तब प्ण्टर पास थी । ये घटकर आगे की याजना बनाया करत थ और एक सौ दस रुपये म पूरा महीना काटने का बजट भी । उसे यात्र आया, यही शकुन न उसे अपने पहले प्रेम प्रसंग भी बात भी सुनायी थी और बताया था कि वह कसे केवल उमकी पलकों को ही चूमा करता था और उस जिन पर लीटते मगध वह राफ़ भर यही गोचता रहा था कि वह अब कभी शकुन की पलक चूम या नहीं ? नहीं वह कभी उसकी पलक नहीं चूमेगा करना उस अव्यय ही अपन उस प्रेमी की यात्र आयेगी और वह नहीं चाहता, चाहता क्या शायद बर्दास्त नहीं कर सकता कि शकुन उगके सिवा किसी और की जान सोचे । पर जाकर उसन पूछा भी था 'अब भी तुम्ह कभी अपन उस प्रेमी की याद आती है ?'

शकुन हसी थी 'दला औरत यति किसी स प्रेम करती है, ता उसकी बात जवान पर भी नहीं लाती । बात जवान पर आ गयी तो समझ लो प्यार मर गया । वे सब तो निरे बचपने की बातें थी ।' और उमने सतीश के सीन पर सिर रखकर आँसू सूँद ली थी ।

एकाएक सतीश का याद आया- आलोक का पत्र आया था । शकुन पत्र पढ़ती जा रही थी और एक प्यारी-सी मुस्कान उसके चेहरे पर खिलती जा रही थी ।

'ऐसा क्या लिख भेजा है लेखकजी ने बड़ी मुस्कराहट फूट रही है ?'

कुछ नहीं यो ही ।'

रात को फिर उसन जालाक का प्रसंग छेडा था तो शकुन एक तरह से झल्ला सी उठी थी 'क्या बात है देखती हूँ आलोकजी स परिचय मेरा है पर छाये के आप पर रहते है । यह उत्तर उस मातर तक चौर गया था ।

तो ? सतीश को लगा जस कोहरे से चारा ओर का वातावरण बडा वासिल बोझिल हो चला है । सामने का पानी एकाएक यो स्थिर हो गया भागो उसम कोई भेतना ही न रह गयी हो ।

अब यहाँ से चल ही दना चाहिये । साइकिल पर बठते ही ठण्डी हवा का एह सास तो हुआ, पर लगा वह हल्का या अधिक सहज स्वभाविक होकर नहीं लौट रहा है । घर का सचमुच नया रूप मिल चुका था ।

०

'मैं बहुत थक गयी हूँ । कहकर शकुन बरबट लेकर सो गयी । पता नहीं सा गयी थी या सोने का बहाना करके पडी थी । नहीं सा ही गयी है शायद । उसने शकुन के चहर की ओर भुक्कर जरा गौर स दला । थकान के लक्षण दिखायी द रह था । शकुन का यो सोता देखकर ढर-सा लाड उसक मन म उमड आया । भीतर-ही भीतर

उमडती एंठती अपराध भावना और ज्यादा गहरा गयी। मन वा भय विश्वास का रूप लेकर गहरे उतरने लगा। सचमुच ही उसके भीतर वही कुछ है अवश्य। शकुन व साथ अयाय ही हो रहा है। उसे कोई अधिकार नहीं शकुन पर इस तरह सदेह करने का या आरोप लगाने का।

भीरत की यह कितनी स्वाभाविक इच्छा हाती है कि वह माँ बने। मान ला, यह बात प्रमाणित हो जाये कि वह कभी शकुन का माँ नहीं बना सकता है तो? जान क्या विचार उसके मन में आया कि वह भीतर तक सिहर गया। फिर वह अपने को जैसे तोलने लगा। क्या वह शकुन की इस इच्छा को पूरी करने में सहायक हो सकता है? क्या वह अपना इस दुबङ्गता के मामने घुटने टक्कर ऐसी तटस्थ उदात्ता ला सकता है कि वह जस भी हो अपनी इच्छा पूरी कर ले? मान ला कभी ऐसा कुछ हो जाय, तो क्या वह उस बच्चे का स्वीकार कर सकेगा? नहीं गायद शकुन की पलका की तरह वह उस बच्चे का भी कभी नहीं छू सकेगा। जहाँ पर दूसरे की छाप है उसे स्वीकार करना उमक लिए अमम्भव है। किसी का बच्चा

उसने झपटकर टविल लम्प का स्विच दबा दिया। कमरे में एक क्षण का धुप अँधेरा छा गया, यहाँ तक कि पास लटी शकुन की आकृति भी अँधेरे में डूब कर रह गयी।

धीरे धीरे फिर सब चौङ्गे अपना रूप लेने लगा। क्षण भर को जा सब-कुछ डूब गया था फिर निखायी देने लगा स्पष्ट, और अधिक स्पष्ट। सतीश को बड़ी तसल्ली मिली। वह अपने कमरे में ही है और अँधेरे में भी सब कुछ देख सकता है पहचान सकता है। वही कुछ नहीं बदला है वह भी कभी आधारहीन और निरर्थक बातों को बना चढ़ाकर व्यथ हो भयभीत होता रहता है।

बाँह फलाकर उसने शकुन को अपने पास खींचकर जार से भाचना चाहा। शकुन ने हल्का-सा विरोध किया "छोडो बड़ी गरमी लग रही है।"

फरवरी का महीना बीत ही गया था। सर्दी चाहे न हो, पर गर्मी का ता नाम भी नहीं था। जम्बल ओटकर ही साने थे। उसे जून की वह बात याद आयी। एक दिन ऐसे ही मयकर गर्मी से चिपचिपाते हुए शकुन को उसने अलग कर दिया था, ता दूसरे ही दिन अपनी बचत के सारे पस सामने रखकर उमने कहा था "आज ही एक टविल फन खरीदकर लाओ। तुम तो जानते ही हो कि मुझे और वह बड़ी तिरछी नजरा से देखकर हँस पडी थी।

उनके घर टविल फन ऐसे ही आया था।

०

ताँगा चला तो सतीश का मन गहरे अवसाद में डूबने लगा। स्टेशन आते समय मन में विनाप उत्साह और प्रसन्नता चाहे न रही हो, पर ऐसी खिन्नता भी नहीं थी

यह तालाब और उठती बिगरती ये लहरें !

शादी के बाद अगसर यह शकुन को सफर यहाँ आया करता था । शकुन तब प्ण्टर पास थी । ये बटवर आगे की योजना बनाया करते थे और एक सौ दस रुपये में पूरा मशीना बाटने का बजट भी । उसे मान आया, यही शकुन ने उस अपने पहले प्रेम प्रसंग की बात भी सुनायी थी और बताया था कि यह कसे बचल उमकी पल्लवी को ही चूमा करता था और उस दिन घर लौटते समय वह रास्त भर यही सोचता रहा था कि वह अब कभी शकुन की पल्लवी चूम या नहीं ? नहीं, वह कभी उमकी पल्लवी नहीं चूमगा, वरना उसे अवश्य ही अपने उस प्रेमी की याद आयेगी और वह नहीं चाँता, चाहता क्या गायद दर्दगन नहीं कर सकता कि शकुन उमके मित्रा किसी और की बान सोचे । घर आकर उसने पूछा भी था 'अब भी तुम्हें कभी अपने उस प्रेमी की याद आती है ?'

शकुन हसी थी 'दरसे औरत मत्रि किसी से प्रेम करती है तो उसकी बान जबान पर भी नहीं लाती । बात जबान पर आ गयी तो समझ लो प्यार मर गया । वे सब तो निरे बचपने की बानें थी ।' और उसने सतीश के सामने पर सिर रखकर आँसू भूँद ली थी ।

एकाएक सतीश का याद आया - आलोक का पत्र आया था । शकुन पत्र पत्ती जा रही थी और एक प्यारी-सी मुस्वान उसके चेहरे पर तिलती जा रही थी ।

ऐसा क्या लिख भेजा है लेखकजी ने बड़ी मुम्कराहट फूट रही है ?'

'कृछ नहीं यो ही ।

रात को फिर उसने आलोक का प्रसंग छुड़ा था तो शकुन एक तरह से झल्ला सी उठी थी 'क्या बात है देखती हूँ आलोकजी से परिचय मेरा है पर छाये वे आप पर रहते हैं ।' यह उत्तर उसे भीतर तक घीर गया था ।

तो ? सतीश को लगा उस कोहर से चारा ओर का बातावरण बड़ा बोझिल बोझिल हो चला है । सामने का पानी एकाएक यो स्थिर हो गया मानो उसमें कोई चेतना हीन रह गयी हो ।

अब यहाँ से चल ही दना चाहिये । साइकिल पर बठते ही टण्डी हवा का एह सास ता हुआ, पर लगा वह हल्का या अधिक सहज-स्वाभाविक होकर नहीं लौट रहा है ।

घर को सचमुच नया रूप मिल चुका था ।

o

'मैं बहुत थक गयी हूँ । बहकर शकुन बरबट लेकर मो गयी । पता नहीं सा गया थी या सोन का बहाना करके पडी थी । नहीं सो ही गयी है गायद । उसने शकुन के चहरे की ओर झुककर जरा गीर से दखा । यबान के लक्षण दिखायी दे रहे थे ।

कुन का यो सोता दखकर दर-सा लाट उमक मन में उमड आया । भीतर-ही भीतर

उमड़ती एंठती अपराध भावना और ज्यादा गहरा गयी। मन का भय विद्वान का रूप लेकर गहरे उतरने लगा। सचमुच ही उसके भीतर बड़ा कुछ है अवश्य। शकुन के साथ अचाय ही हो रहा है। उसे कोई अधिकार नहीं, शकुन पर इस तरह सट्टे करने का या आरोप लगाने का।

औरत की यह बितनी स्वाभाविक चूँटा हाँसी है कि वह माँ बने ! मान ला यह बात प्रमाणित हो जाये कि वह कभी शकुन का माँ नहीं बना सकता है, तो ? जान कसा विचार उसके मन में आया कि वह भीतर तक सिहर गया। फिर वह अपने को जस तोलने लगा। क्या वह शकुन की इस इच्छा का पूरी करने में सहायक हो सकता है ? क्या वह अपना इस दुर्लभा के सामने घुटने टककर ऐसी तटस्थ उदात्ता ला सकता है कि वह जस भी हो अपनी चूँटा पूरी कर ले ? मान ला कभी ऐसा कुछ हो जाय, तो क्या वह उस बच्चे का स्वीकार कर सकेगा ? नहीं शायद शकुन की पत्नी की तरह वह उस बच्चे का भी कभी नहीं छू सकेगा। जहाँ पर दूसरे की छाप है उसे स्वीकार करना उसके लिए अमम्भव है। किसी का बच्चा

उसने सपटकर टविल लम्प का स्विच दबा दिया। कमरे में एक क्षण का धुप अंधेरा छा गया यहाँ तक कि पास लटी शकुन की आकृति भी अंधेरे में डूब कर रह गयी।

धीरे धीरे फिर सब चीजें अपना रूप लने लगीं। क्षण भर का जा सब कुछ डूब गया था फिर दिखायी देने लगा स्पष्ट, और अधिक स्पष्ट ! सतीश को बड़ी तसल्ली मिली। वह अपने कमरे में ही है और अंधेरे में भी सब कुछ देख सकता है, पहचान सकता है। कहीं कुछ नहीं बदला है वह भी कभी आधारहीन और निरर्थक बाता का बला चढ़ाकर व्यर्थ हो भयभीत होता रहता है !

बाह फलाकर उसने शकुन का अपने पास खींचकर जाकर स भावना चाहा। शकुन ने हल्का-सा विरोध किया "छोड़ो, बड़ी गरमी लग रही है।"

फरवरी का महीना बीत ही गया था। सर्दी चाहे न हो पर गर्मी का ता नाम भी नहीं था। कम्बल ओढ़कर ही साते थे। उम जून की वह बात याद आयी। एक दिन ऐसे ही मयकर गमी से चिपचिपाते हुए शकुन का उमने अलग कर दिया था, तो दूसरे ही दिन अपनी सचत के सारे पस सामने रखकर उमने कहा था 'आज ही एक टविल पन खरीदकर लाओ। तुम तो जानते ही हो कि मुझे' और वह बच्ची तिरछी नज़रा से देखकर हँस पड़ी थी।

उनके घर टविल पन ऐसे ही आया था।

०

तांगा चला ता सतीश का मन गहरे अवसाद में डूबने लगा। स्टेशन आते समय मन में विशेष उत्साह और प्रसन्नता चाहे नहीं हो पर ऐसी निश्चिन्ता भी नहीं थी,

दूबने दूबने का यह अहसास भी नहीं था। पर अब ? अब उसकी नजर पास बड़े आलोक के सीने की चौड़ाई में ही बँधकर रह गयी और मां वही गहरे दूबन लगा।

‘कसा सट्टर है अजमेर ?’

‘आप खुद ही देस लीजिये, दो चार दिन तो टहरियेगा ही ?’

‘अरे नहीं साहब, आज रात को ही वापस लौट जाना है। शत्रुनजी का इतना आप्रह था, फिर आपका थोड़ा मिला तो लगा आना ही पड़गा।’

एक भोग-नाश हुआ। ऐसा गुल व्यवहार का जन्म कितनी रहस्य से तो हा ही नहीं सकता। यह व्यथ ही बठा बठा कुड़ रहा है। यह उगवा अपना हा हीन भाव है और कुछ नहीं।

पर इसकी ये स्वस्थ भुजाएँ उनपर उमरी मछलियाँ रसका तो सभी कुछ बहुत स्वस्थ होगा।

सवेर पता नहीं क्या एकाएक शत्रुन ने अपना इरादा ही बदल दिया था ‘मैं स्टेशन नहीं जाऊँगी, तुम्हीं जाकर ले आओ !’

कहीं थोड़ा आस्वस्त और सन्तुष्ट सा होते हुए भी उसने कहा था ‘अरे बाह ! यह भी कोई बात हुई मला ? इतना आप्रह करके बुनाया है और अब लेन नहीं जाओगी ? शिष्टता भी तो कोई चीज होती है आखिर !’

‘तुम तो पहुँच ही जाओगी। घर से कोई भा जाये, क्या फक पडता है ?’ सतीश न गौर से शत्रुन को देखा। क्या सचमुच शत्रुन उसे और अपने का एक ही समझती है ? कितने सहज भाव से उसने वह दिया कि कोई भी चला जाये, क्या फक पडता है, और एक वह है कि दो दिन से पता नहीं क्या-क्या सोच रहा है। उसने मन का तनाव एकाएक ही ढीला हो गया फिर भी उसने कहा था ‘मता पहचानता भी नहीं, चलना तुमको भी चाहिए।’

‘तस्वीर तो तुमने भी देखी है पहचान ही लोगे।’

‘खर पहचान तो लूँगा ही।’ और उसे लगा वह तस्वीर न भी देखता, तो भी पहचान लेता, और स्टेशन क्या हज़ारा की भीड़ में भी वह आलोक को पहचान सकता है।

शत्रुन मुस्करायी थी। उस समय तो सतीश नहा भाँप सका, पर अब उस लगने लगा कि शत्रुन की उस मुस्कराहट में कहीं बड़ा तीखा व्यंग्य लिपटा हुआ था।

‘विचित्र सयाग है पहली बार आया था तो शत्रुनजी से मुलाकात हुई थी, इस बार आया तो उनके घर आना पडा।’ आलोक हसा।

यह सारी बात इतने सहज ढंग से कैसे कर लेता है ? इस क्या नहीं मालूम कि शत्रुन क निमंत्रण पर या चले जान से मैं, शत्रुन का पति, कुछ गलत अर्थ भी तो लगा सकता हूँ ? पर एसी बात का बोध तभी होता है जब आदमी के अपने मन में पाप

हो। नहा नहीं, यह सब मेरा भ्रम है। वही भी तो कुछ नहीं है। आलोक से कर आते ही शकुन न भी तो सब कुछ बता दिया था। सब कुछ तो ठीक है। कहीं कुछ है तो उसके अपन भीतर ही है। छि मन के सशय न उसकी आत्मा कितना दुबल बना दिया है।

आलोक शकुन का ही नहीं, उसका भी मेहमान है। शकुन कोई उससे जल है नहीं, वह जबरदस्ती हा इम जलगाव का पदा कर रहा है जोर व्यय ही कष्ट प है। कुछ होना तो शकुन उसे या अकेले स्टगन भेजती ?

घर आत ही उसन आलोक की जटची स्वय उठा ली। आलोक न हल विरोध भी किया, पर वह नहीं माना। आखिर आगेक उन जो ॥ का मेहमान है। बरामदे मे ही शकुन प्रतीक्षा म गडी थी उह देखकर दोनो सीढ़ियाँ उतर कर पर आ गयी।

“देखो सही जादमी का ही लाया हूँ न ?” तीना हँस पड और उसन अब वह ऐसे ही व्यवहार करेगा। बहुत ही सट्ज और स्वाभाविक ढग स। मन एक ही हल्का हा आया।

तीनो भीतर घुसे, तो सजा हुआ कमरा उसे स्वय बडा अच्छा लगा। व इस घर का मालिक तो वही है। शकुन कुछ औपचारिक-भी बातें कर पूछ रही थ वह मन-ही मन साच रहा था ‘ आज वह सबका मूव हँसायेगा। ऐसे ऐमे चुटकुल मु कि बस। लेखक वह चाहे न हो पर मूड म आ जाये, तो लागो को ऐसी बरिया ब सक्ता है कि एक बार मिलने के बाद लोग उसे आसानी से भूल नहीं सकत। गृ वह आलोक के सामने कतई महमूस नहीं होने देगा कि उसका पति मात्र एक बलब बूदम और डल ! कितन दिन हो गय हैं उसे हस और हँसाये !

आलोक दीवार पर लगी उन लोगा की तस्वीर को देख रहा है, जो विवाह के बाद ही खिचवायी थी।

‘ यह क्या बहुत पुरानी है इसम तो बडे थग और स्माट लग रह हैं, लोग !’ सतीग को लगा, यह रिमाक उसन केवल शकुन के लिए दिया है, उसे। यो ही औपचारिकता के नाते शामिल कर लिया है। और एकाएक उसने शकुन ब देखा तो पहली बार इम बात पर ध्यान गया कि बडे यल से उसने अपने उन स को पूरी तरह उमारा है, जहाँ-जहाँ स वह मुदर लगती है। पर इमने क्या बहुत ही स्वाभाविक है ! उमे ऐभो छाती छोटी बाती का ध्यान भी क्या आता

“शकुन, अब तुम गरम चाय पिलाओ तो आलोकजी की यकान भी उत पाडी साजगी और गरमाहट भी आये।’ अपने स्वर की स्वाभाविकता उस स्व अच्छी लगी।

“मैं सिगरेट पी नूँ ?” हाठो म सिगरट दबाते हुए आलोक न अनुमति

'मुझे तो अभी भी जमे विस्मय ही नहीं हो रहा है कि आप कभी हमारे घर आयेंगे भी, कि आप आ गये हैं।' यह गम्भीरतोलन में शकुन बोला।

'ला कमल कर लिया। तारीर सामने बटवर भी यदि विस्मय न दिला गूँ तब तो मामला बड़ा मुश्किल है। आलाक जोर से हसा।

मैं गचमुग गितनी गुग हूँ कि आपने मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।'

मैं तो इस बात में गुग हूँ कि तुमने किसी को निमन्त्रण किया तो। आलोचक आपका सायद विस्वासा नहीं होगा। आप पहले आत्मी हैं जिन्हें आने पर शकुन या गुग हा रही है। करना शकुन को इस पर म तीमरे आत्मी की उपस्थिति तक बरगान नहीं हानी।'

'चलिए बेकार घन्नाम मत मोजिए। ठुनकर शकुन बोली।' दलित आलोचकजी घर के नाम पर कुछ यह एक यमरा है हम लोग के पास। यह पार्टीगत भा डड-साल म लगा है। पहल तो यह भी नहीं था। काई भी जा जाता तो समय म ही नहीं आता कि नहीं हम सोरें-बठें वहाँ उसे मुलाए विठाए। फिर मुभ एकात और प्राइवसी पया है अब चाहे काई कुछ भी कह ल।'

एकात। प्राइवसी। क्या आलोक इन गग व अथ नहीं समझगा ?

"तब तो मेरे आने से भी आपको कष्ट हुआ होगा। वैसे मैं तो आज रात को ही चला जाऊँगा।"

घनू। 'धीच म ही बात काटते हुए शकुन बोली। कसी बातें करते हैं आप भी। आपको आने से कष्ट। यह तो हमारा सौभाग्य है। हाँ आपका ज्वर कुछ कष्ट है मरना है। पर हमारी खातिर वस भी सहिये।' फिर एकाएक पूछा 'क्या आप आज ही चले जायेंगे ?'

बिल्कुल। हर हालत में। बल मवर मभ चला ही जाना है।

बुद्धिया नीकरानी चाय ल आयी। सतीग ने देखा ट्रे बडे करीन स सजाया गयी है। गकन सायद पहले ही सब-कुछ कर आयी थी। शकुन के मुह से बार-बार हम-हम गद मुनकर सतीग का आत्म विश्वास जस बढ़ सा रहा था। शकुन ने और ठहरने के लिए एक बार भी नहीं कहा। आलोक भी ठहरने को व्यग्र नहीं। सभी कुछ तो बड़ा नामल है। नहीं तुच्छता स जम गारे म गेहा को बह पाछ देगा।

चाय चलती रही। शकुन बडी आत्मीयता मरी मनुहार स आलाक को खिला रही है। आज उस अपना घर बलक के घर से छाटे अफमर के घर के रूप में बदला हुआ लग रहा है। एक नामी लखक उसके घर में बठा हुआ है उसकी पत्नी सजी सवरी, बल्प की साडा पहन सबका सब कर रही है। जोर इस घर और वस स्त्री का स्वामी वह है, केवल वस। इधर उधर की गपराप चलती रही। आलोक गुग मिजाज हसमुख और खुले स्वभाव का ब्यक्ति है। अभिमान या बडप्पन का बोध तक नहीं। शकुन साम नहीं।

बाल रही केवल सुन रही है। वसे बोलना उसे ही सबसे ज़्यादा चाहिए। जो भी हो, जातिर वह है तो उसी का मेहमान।

“तुम ज़रा तरकारी ले आओ।”

“पहले नहा लूँ।”

“नहीं, नहाना बाद में, पहले तरकारी ले आओ।” अधिकार मरे स्वर में आदेश देती-सी शकुन बोली। और सतीश का जगा जम अब वह थोड़ा एकांत चाहती है प्राइवेट।

हवा उल्टी थी या पना नहीं क्यो साइकिल बड़ी भारी चल रही थी और सतीश को पूरा जोर लगाकर पडिल मारने पड रहे थे।

वह लौटा तो शकन और जालोक आमने सामने बठे बात कर रहे थे। दाना के बीच सिगरेट का हल्का-सा धुआँ छाया हुआ था। उस देखत ही शकुन न अपना बात अचूरी छाड दी। न मात्रूम सा खिंचाव भी उसे शकुन के चहरे पर दिखायी दिया।

ले आये ?” ज्या-के त्या बठे बठे ही उमन पूछा। उठकर उसन थला तक नहीं लिया।

“अब तुम नहा ला। तरकारी उधर माजी को ही दे देना।

हा हाँ देखिए आप लोग अपन हटीन में किमी तरह की गडबड न करियेगा। आप आफिम कितने बजे जाते हैं ?”

‘दस पर पहुँचना होता है, साते नाक बाद निकल जाता हूँ।’ मतीश ने किमी तरह शदा को टेलकर जवाब दिया।

और तुम ?”

पन्द्रह मिनट में ही स्थिति तुम पर आ गयी ? नहा शायद बहुत पहले में ही यह स्थिति चल रही थी।

मैंने तो आज छुट्टी ले ली है। एक प्लिन के लिए आप आये है, मारा दिन स्कूल में गुज़ार दूँगी तो आपसे बात करूँ ?

करेंगे। तो क्या शकुन मुझसे भी म्ट्री लेन के लिए कहेगी ? यदि कहा तो क्या वह ले लेगा ? लेनी चाहिए उसे ?

नहीं बहू-बचन का प्रयोग तो वह अपन लिए भी कई बार करती है। चाय के समय चुप क्या बठी थी ? करती न उस समय बात। और जालोक अर म्नीन गडबड करन की बात क्यो नहीं करना ? कुछ दर पहले तक तो छुट्टी की कोई बात भी नहा थी। और उसे लगा कि फिर मत्र कुउ गन्बडा गया है बाहर भी जीए उसके अपन भीतर भी।

वह नहाकर लौटा और पार्गेशन के इधर नि शब्द तयार हान लगा। वान उसके उधर ही लगे हुए थे।

हमारा विशेष परिचय भी नहीं होता, फिर भी कहानी निकालन के लिए हमें लगाव बढ़ाना पड़ता है। यो समझिये, एक्टिंग करनी पड़ती है। बड़ा खतरनाक गल होता है यह। कमी-कमी तो एक कहानी का दस गुनी कीमत भी अदा करनी पड़ती है।

तमी शकुन आ गयी और सतीश के दिमाग में कुछ कौंधते कौंधते रह गया।

“आलोकजी आप भी नहा लीजिये। असली थकान तो नहाने से ही जायेगी। मैं गरम पानी रख जायी हूँ।”

“नहा लेंगे, जल्दी क्या पड़ी है। मैं कोई ब्राह्मण तो हूँ नहीं कि नहाकर ही मुँह जूठा करूँगा।”

शकुन हँसी। सतीश को हटका मा अफमोस हुआ कि वह हँस क्या नहीं सका।

‘नहीं, नहा डालिये।’ आलोक की अटची उठाकर सामने टबिल पर रखती हुई शकुन बोली।

यह अपनत्व भरा अधिकार कहाँ से आ गया? और फिर उसे लगने लगा, कहीं कुछ है जा उसे मालूम नहीं है। जो कुछ जिम रूप में सामने है, मान वही नहीं है इससे परे कहाँ कुछ और भी है है

आलोक के जाते ही शकुन ने कहा “कमीज तो नयी पहन लेते, बितनी मुम रही है यह!”

‘क्या? ठीक है यह! मैं हमेशा ही कमीज तीन दिन पहनता हूँ आज ही एसी कौन-सी खास बात है?’ वह शकुन का जता देना चाहता है कि आलोक उसके लिए कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता।

शकुन चुपचाप सतीश का खाना लेने चली गयी। रोज की तरह वह उसे बिला रही है पर सतीश को लग रहा है कि शकुन ने हर काम की योजना बना रखी है। सतीश के सामने तो समय बबाद ही होता, सो वह समय नहाने में लगवा दिया। इधर सतीश जायेगा जार उधर आलोक तयार!

शकुन ने एक बार भी उससे तो लट्टी लन के लिए नहीं कहा, बल्कि शायद वह मन-ही-मन मना रही है कि जल्दी से-जल्दी सतीश वहाँ से चला जाये। इतनी साफ बात है और वह समझ नहीं रहा है।

श्रीम रंग के अण्डी के कुरते में जैचा-जैचाया आलोक घुसा तो सतीश को अपनी मुसी हुई कमीज अखर गयी। आज उसे कमीज बदल ही लनी चाहिये थी, शकुन ने ठीक ही कहा था। उसे लगा कर्की करते करते सचमुच ही वह डल हो गया है शायद। समय पर उसे कोई बात सूझती ही नहीं, बाद में बेबूफो की तरह अफसास करता रहता है।

“तो आप तो चले?”

“हाँ मैं तो अब चला। शकुन है आपके पास। और उसने देखा शकुन मुग्ध भाव से आलोक को देख रही है।

"लौटियेगा क्या ?"

"अब तो साढ़े पाँच पर ही मुलाकात होगी। गाम को बाहर चलेंगे, और कुछ नहीं तो यहाँ का दौलतबाग और आनासागर ही दग लीजिए। शकुन को तो वह जगह बड़ी प्रिय है। शादी के बाद की कुछ गामे तो हमारी बही योनी। वहाँ जाते ही शकुन को बस हनीमून का-सा मूड आ जाता है आज भी। और सतीग हस पडा। उसने सोचा बड़ी मार्के की बात यह कहता जा रहा है। आलाव जान ले कि उन दोनों के बड़े मधुर सम्बन्ध हैं, उसके मन में कोई ऐसी-वसी बात हो भी तो निराल दे। अच्छा साहब चले।' और वह बाहर आ गया। राज की तरह शकुन भी बाहर आयी उसे विदा करने। पर सतीग को इस समय भी शकुन के चहरे पर बही मुग्ध भाव दिखायी दिया जो आलोक को दगते समय उमर आया था। उसे लगा, वह देख अवश्य उसे रही है पर मन में वही आलोक को ही दस रही है।

एक बजे तक वह जैसे-तैसे अपने को फाटलो में डुबीये रखने का प्रयत्न करता रहा। फिर एकाएक उसे लगा, अब नहीं ठहरा जायेगा। उसने उसी समय एक स्लिप लिखकर बॉस के कमरे में भेज दी कि उसकी तबीयत ठीक नहीं है सो वह घर आ रहा है और निवल आया।

पर लौटना ठीक होगा ? दोनों वही तो समझेंगे कि मुझे उन लोग पर सद्दह है। अगर ऐसी कोई बात नहीं हुई तो कितना ओछा समझेंगे वे लोग ? आत्मालाभि से उसका मन भर आया। पाँच साल के विवाहित जीवन में उसे ऐसी कोई बात याद नहीं जो शकुन के प्रति उसे शकालु बना दे। पिछले दो साल से वह खिन अवश्य रहती, कुछ दूर-दूर भी रहती है उसका कारण तो वह स्वयं जानता है। कितना स्वाभाविक है उसका यो खिन्न रहना ! फिर खिन्नता तो दो साल से चल रही है जब कि आलोक से परिचय कुल चार महीन का है। दोनों बातों को एक साथ जोड़ने की कोई तुब ही नहीं है।

सचमुच यह उसका अपना कामप्लेबम ही है, जिसे उसने इतना शकालु ओछा और कुछ हद तक कमीना भी बना दिया। अपनी ऐसी हरकत से तो कभी-कभी उस स्वयं भी विश्वास होने लगता है कि उसका मन वही सच ही है। वरना वह सब क्या हो ?

उसे रोज की तरह आफिम में काम करना चाहिए था पर अब ? अब कुछ नहीं। सीधा घर जायेगा और साफ कहेगा कि वह भी छट्टी लेकर आ गया है। आलोक जी आगिर रोज रोज तो हमारे घर आने से रह। फिर वह उनका धुमाने ले जायेगा। पहले वह उन्हें सोनीजी का मन्दिर दिखा देगा, फिर वे लोग आनासागर पर जाकर बठ जायेंगे। वही वह अपने लतीफे गुनायेगा। वे सब तो अभी रह ही गये। वह चुन चुनकर लतीफे याद करने लगा। कौन-कौन से लतीफे उसके नाम से प्रसिद्ध हो गये थे।

गाडी ता रात को दम बजे जाती है। आनासागर से ताँगा लेकर वह उसे कॉफी हाउस ले जायेगा। बड़े गहरा के मुकाबल में तो यहाँ का कॉफी-हाउस कुछ भी नहीं

फिर भी कम-से-कम यह तो दिखा ही देगा कि वह सिर्फ बल्क ही नहीं, इस ज़िन्दगी से भी परिचित है। लेखक लोग तो काफी-हाजस म ही बठे रहते हैं। कुछ रुपये ही तो खर्च हगि पर शकुन कितनी प्रसन्न होगी। वह उसके इस आरोप को गलत सिद्ध कर देगा कि उसे आलोक का आना अच्छा नहीं लगा। उसमें अच्छा न लगने की बात ही क्या है भला ?

पर घर आया तो पता नहीं क्यों उसन साइकिल घर से दस कदम दूर ही रख दी। दबे-पाँव सीढ़िया चढ़ा। उसका दिल धवरान लगा था मानो वह किसी दूसर के घर में चोरी स घुस रहा हो। कुछ क्षण बरामदे में खडे रहकर वह आहट लता रहा—शायद कुछ बातचीत की आवाज ही आ रही हो। पर वही कुछ नहीं था। दरवाजा बन्द था, फिर भी उसन हल्के से धक्का दिया, शायद खुल ही जाये। नहीं दरवाजा भीतर से बन्द था। अब ? फिर उसन दरवाजे से कान लगाया। बाहर के कमरे में बठकर बात कर रह होते, तब तो बाहर साफ-साफ आवाज आती। इसका मतलब है, सोनवाले हिस्से में बठे हैं। पर उधर तो शकुन किसी को आने नहीं देती। आलोक शायद 'किसी' की श्रेणी में नहीं आता। तब ?

और एकाएक मन हुआ कि लात मारकर वह दरवाजा तोड़ दे और भीतर दोना को रगे हाथो पकड ल। शकुन को बात करनी थी इसलिए तो छुट्टी ली थी। पर बात का तो कोई सिलसिला ही नजर नहीं आता। भीतर क्या हो रहा है आखिर ? कसे जाने, कहाँ से जाने ?

इस समय घर का दरवाजा रोज ही बन्द रहता है पर रोज शकुन घर पर नहीं रहती है इसलिए। आज इसका भीतर से बन्द होना कोई विशेष अर्थ नहीं रखता ? क्या वह लौट जाये ? नहा, वह लौटकर नहीं जायेगा। वह दरवाजा खटखटायेगा और देखगा कि खुलने में कितनी देर लगती है। वह चेहरा देखकर ही भाँप लेगा कि भीतर क्या हो रहा था।

वह फिर एक कदम आगे बढ़ा, दरवाजा खटखटान के लिये हाथ भी उठाया, पर बस, दरवाजे को धीरे से छूकर रह गया। नहीं, उसे उस तरह अधीर नहीं होना चाहिए। मान लो, कुछ नहीं हुआ तो वह उनकी नजरों में तो गिरेगा-सो गिरेगा अपनी नजरो में कितना गिर जायेगा। एकदम उसे खिडकी का खयाल आया। खिडकी भी भीतर से बन्द थी। अच्छा, खिडकी बन्द करने की क्या जरूरत थी ? ऐसी मर्दी तो अब रह नहीं गयी। कमरे में हवा आने के लिए यह खिडकी और दरवाजा तो है ही बस, दोना ही बन्द हैं। ता ? उसन सारी खिडकी पर नजर दौड़ायी वही कोर्स छेद ही हो जहाँ स वह भीतर झाँक सके पर वही एक छोटा-सा मूराम्ब तब भी नहीं मिला। फिर उसन दरवाजे को टटोला। वहीँ कुछ नहा। उसे पहले इस बात का खयाल क्यों नहीं आया ? एक मूराम्ब ही करके रख दता।

पर वह क्या हम तरह अपराधी महसूस कर रहा है ? यह उसका अपना घर है । इसमें वह जब भी चाहे आ-जा सकता है । आगिर वह अपने घर में ही तो आया है । अपने घर में आना न चोरी है न गुनाह । उसे क्या होता जा रहा है कि वह अपना ही घरने लगता है ? जैसे ही गजुन दरवाजा खोलेगी, वह देगा कि वह भी आये तब की छट्टी लेकर जाया है ।

तभी उसने सामने गजुन का चेहरा घम गया । आंगा में मिक्कार और भत्सना भरे । माता लो, वह यही वह दे—आगिर आ गये न ? तुम इसके सिवाय और कर ही क्या सकते हो ?

हाथ फिर निर्जीव हो गया ।

कोई तो आवाज आये किसी तरह की । खोलते मन को यह निश्चय तो बँधे कि भीतर की वास्तविक स्थिति क्या है ?

और उस लगने लगा कि जिस तरह उसने शकुन की पलक चूमना छाड़ दिया था, वस ही अब उसे बाँहों में लेना भी छोड़ देना पड़ेगा । गायद धीरे धीरे करके उसे पूरी की पूरी शकुन को ही छोड़ देना पड़ेगा ।

वह सगम में क्या पडा हुआ है ? उस जसा अक्लूफ आदमी शायद ही दुनिया में है । सब-कुछ आँखा से देखकर ही जाना जाना है ? क्या वह कुछ भी अनुमान करने का माहा नहीं रखता ? गजुन आजकल जिस मन स्थिति में है उसे वह क्या नहीं जानता ? तो क्या गजुन

वह नगरा गुलाब-बाड़ी, आदम नगर—जाने कहीं कहीं साइकिल लिये घूमता रहा । उसे बराबर लग रहा था कि कनी बहुत बड़ा धोखा उसके साथ किया जा रहा है । उसका मन हो रहा था कि वह सब पर धूकता चले ? क्या कर अब वह ? कहीं जाय ? उसका कोई घर नहीं, कोई अपना नहीं । जिस शकुन को पिछले पाँच साल से वह अपने शरीर के अमिल्ल अंग की तरह प्यार करता आ रहा है वह इस समय किसी और की बाँहा में पड़ी मस्ती मार रही होगी और वह है जो बँधे घरबार होकर या दर दर मटक रहा है ।

और या ही निरुद्दश्य भटकते भटकते जब वह पूरी तरह लुप्त हो गया तो फिर आनासागर की बागहदरी के उमी कोने पर आकर बरु गया । उसे लगा, आज उसमें और उन आवाजा बँधे घरबार लोगो में कोई फक नहीं रह गया है जा रात दिन यहाँ पड़े रहते हैं । वह भी अब यहाँ पडा रहगा । उस कोई नौकरी नहीं करनी है, कोई काम नहीं करना है । कौन है उसका जिसक लिए खून-पसीना एक करे ?

उस सबसे नफरत होने लगी ।

और उसे लगा, वह सचमुच ही पौरुष हीन है । कोई मद-बन्धा होता ता दो लालत मारता दरवाजे के और झाटा पकडकर बाहर कर देता गजुन को और दो झाप

मारना उस लफंगे के। उसके सारे अस्तित्व को पूरी तरह मथता हुआ आज यह कि पूरी तरह उसके मन में जम गया कि वह पुरुष नहीं है और उसे लगा यह वा वह बहुत पहले से ही जान गया था तभी तो कभी उसकी हिम्मत नहीं हुई कि डॉक्टर को दिखा आये। आज के व्यवहार न तो पूरी तरह मिट कर दिया। है उस पर। थू ! उसने सामन पानी में थूक दिया। कोई असली मद बच्चा हो उसे अपने आप से नफरत होने लगी। ठीक ही तो किया शकुन ने। कौन जोर नामद की पानी होकर रहना पसन्द करेगी !

और फिर वह निडाल हाकर लेट गया। उसकी आंखों के कोनों से आसू लगे। वह मन ही मन गालिया देने लगा। साला गोहूदा कही का, कहानी लेने है ! शकुन ने उसे जरूर बता दिया होगा। शकुन किम जन्म का घर तुमने मु निकाला है ! उस आदमी के सामने मुझे नगा किया, जिमके सामने मुझे वस्त्रा की ज्यादा आवश्यकता थी !

बजरगगट की आरती फिर गूँज उठी। ता सात बज गये ? वे जरूर भले अ बने उसकी राह देख रहे होंगे। अब वह यदि घर चला जाये, तो दोनों क्या करेगे। शकुन लड़ेगी कि इसकी दर क्या कर दी ? दो घण्टे से इतजार में बठा है। सारा प्रोग्राम गटबड कर देत हैं। मन-ही मन चाह खुश हो रहे होंगे साने, मा मार रहे होंगे !

जालोक न तो बहा ही था कि जहाँ हम इनवाल्ड नहीं होते, वहाँ भी कभी अभिनय करना पड़ता है। पर शकुन ? वह यह अभिनय कहाँ से सीख ग उमी ने सिखा दिया होगा, अपना लल्लू सीधा करन के लिए। यह अभिनय तो स्तरा पर चल रहा है, और गायद गुरु स ही चल रहा है। वही यक्कूफ है, जं समना नहीं। तभी शकुन चार महीन में प्रसन्न रहन लगी थी। वरना बाकी ! तो ज्या-की-रया है। यह प्रेम ता चार महीन में पक्क रहा है वरना दो चार घ कोई बियाहित स्त्री एक अजनबी के साथ या कमरा बंद करके बठ सकती है ? क्या क्या हुआ होगा आज ? शकुन न आखिर क्या सोच रखा है क्या है वह ?

और जान कस कम हृद्य उसकी आंखा के सामने घूमन लगे। आज घ लौटेगा ही नहा। आज सालों को जश ही मनान दा, मेर अपन घर में मेरा ही करने दा। मैं यही पठा रहूँगा। किमका घर और किमकी बीबी ?

उसन हमाल से अपना चहुरा ढँक लिया। यह मुँह किसी का भी दिगान नहीं है।

धीरे धीरे आरती का स्वर गूँज में डूब गया। केवल आरती के घण्ट रहे—टू टू टू।

धाड़ी दर बाद सतीस उठा और साइकिल पर बटवर चल पड़ा। उसे लग रहा था कि वह धक्कर चूर चूर हो गया है और भीतर-ही भीतर से इस तरह टूट गया है कि उसका सब-कुछ एकदम जड़ और गुदर हो गया है। कुछ भी सोचने समझने की शक्ति उसमें नहीं रह गयी, यही तब कि उस मह भी नहीं मालूम कि वह कहाँ जा रहा है। पर धोड़ी दर बाद वह अपने घर के सामने ही था।

ठीक है वह घर ही जायेगा। यह घर उसका है। जाना ही है तो शकुन जाये जिस अब उस घर में अच्छा नहीं लगता वह क्या या मुँह छिपाय छिपाये फिरता रहे ?

उसे देरते ही शकुन ने माँह चढ़ाकर कहा 'कमाल कर दिया तुमने तो, अब आ रहे हो ?' उसके स्वर में गिवायत थी।

'हम लोग तो पाँच बज से जापकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आलोक का स्वर था। दाना सारे कपड़े बदल कर जूते जचाकर बड़े हैं। बड़ी तीली सौ नजरों से उसने उन्हे देखा मानो वह रहा हो—क्यों मुझे बेवकूफ बना रहे हो ?'

'कुछ जरूरी काम आ गया था। अपराधियों की तरह सतीस के स्वर में धमाका याचना का पुट क्या आ गया है ? असली अपराधी तो वे हैं।'

"जिस दिन घर में कुछ होगा उस दिन जरूर तुम्हारे आफिस में भी काम आयेगा। छोड़ आते बल के लिए। वह तेरे मैं आज नहीं ठहर सकता।'

तिरिया चरितर ? कोई कह सकता है इस शकुन को देखकर कि पति के जाते ही यह औरत । 'चाय दो जरा। किसी तरह शब्दों का ठेलकर उसने कहा। पहल उसने मोचा था वह किसी से कुछ बोलेंगी नहीं चाय भी नहीं माँगेगा पर फिर लगा क्या नहीं माँगेगा ? जब तक शकुन इस घर में रहेगी उसे पत्नी की तरह उसके हर आदेश का पालन करना पड़ेगा। दरें कर ता दे मना चाय को—अभी दिखा देता है वह भी ।'

हाथ मुँह धाने के लिए वह अन्दर गया तो उसने शकुन को कहते सुना 'बहुत धक ज्ञान है आफिस के काम में। गायद सतीस की रखाई की सफाई दे रही है आलोक का।'

हाँ, वह धक जाता है। वह बहुत कमजोर है दुबल बिलकुल दुबल नामद । वह दे सारी दुनिया में डिबोरा पीट दे। वह है जसा है।

उसका मन फिर मुलाने लगा। सर्वो ही चली थी फिर भी वह तीलिया लेकर नहाने धुन गया। गुसलखाने बाहर से उसे शकुन का स्वर सुनाई दिया यह क्या, तुम उस समय नहीं रह हो ठण्ड पानी से ? बीमार पडोगे क्या ? सुनो तो 'उसने पूरा नल खाल दिया तो पानी का आवाज में शकुन का स्वर दूब गया। बकन दा कम्बल का ।

एक बार पानी की ठण्डक ने उसे भीतर तक कंपा दिया फिर भी उस नहाने अच्छा लग रहा था। जहन जस ठण्डी जाती जा रही थी।

काफी देर तक पानी के नीचे रहने के बाद उसने नल बंद कर लिया। अपना शरीर पोछकर कुछ देर तक वह यो ही खड़ा रहा फिर खड़ा-खड़ा अपने ही अंगों से बनी बदलील-सी हरकतें करता रहा। पता नहीं, एक विचित्र-सा सन्ताप मिल रहा था उसे यह सब करने में। खोया आत्म विश्वास जमे लौट रहा था कौन कह सकता है साला कि वह ?

फिर एकाएक उसका अपना ही मन ग्लानि और वितृष्णा में भर उठा। यह सब क्या होता जा रहा है उस ? इन लोगों के साथ-साथ वह क्यों अपना निम्नाग खराब करता जा रहा है ? नहीं जैसे भी होगा वह अपने को सयत करेगा।

उसने माँचा वह बड़े स्वामाविक ढंग से चाय पियेगा और उसमें भी अधिक स्वामाविक स्वर में बहेगा— देखिये, मुझे सब कुछ मालूम है। बंद दरवाजे ऐसी बातों को छिपाकर नहीं रख सकते। आप लोग ऐक्टिंग करने में बहुत माहिर होंगे पर मरी ओखें भी कम तेज नहीं। शकुन चाहे तो आपके माँव ही जा सकती है। मुझमें इनकी उत्तरता है कि मैं अपनी पत्नी की राह में बाधा बनकर खड़ा न हाऊँ, उसकी इच्छा पूरी करने में सहायक बनूँ।

ये लोग उसके ही घर में नाटक कर रहे हैं कलाइभवस वह कर दे।

वह बाल बनाता जा रहा था और पलग को देखता जा रहा था। कैसे सोयेगा अब वह इस पलग पर ?

पर वह बाहर निकला तो उससे कुछ भी नहीं कहा गया। शकुन चाय बनाने लगी तो आलोक ने कहा “हम लोग तो बसे चाय पी चुके हैं पर आपका साथ देने के लिए एक राउण्ड जोर सही।”

‘हाँ-हा गटर ! शाम का सारा प्रोग्राम तो इन्होंने गडबड कर दिया, अब चाय पी-पीकर ही समय काटो।’ शकुन के स्वर में हल्का सा आक्रांश था। चाय पी चुके है यह तो बता दिया और क्या-क्या कर चुके है यह क्यों नहीं बताते ? बताने जसी बात हो तब न ! फिर उसे लगा वही क्या नहीं पूछ लेता कि कष्टिण दिन भर क्या किया ? बड़ा स्वामाविक प्रश्न है पर मारी स्थिति स्वामाविक नहीं है इसलिए इन्हें यही लगेगा कि मैं शक कर रहा हूँ। और मान लो इस प्रश्न का एकाएक दोनों का कोई जवाब ही नहीं सूझे और खिसियाये-से दोनों एक दूसरे का मुँह ही दगने रह जायें, तब वह क्या करेगा ?

तभी शकुन उठी और भीतर से स्वेटर लाकर देनी हुई बोली लो, अब कम से-कम यह तो पहन लो। रात का ठण्ड पानी से नहाये हो अपनी जिद के आगे तुम किसी की बात सुनते भी हो कभी ?

न चाहते हुए भी उसने स्वेटर पहन लिया। चांचले दिग्धा रही है।

आठ तो बजने वाल हैं, चलने चलाने का तो यहाँ कोई सिलसिला ही नजर

गही जा रहा। दिन भर में जरूर ही प्रोग्राम बदल गया होगा। बाँहा म भर भरकर शत्रु ने एक दिन और ठहरने के लिए ता तयार कर ही लिया होगा। बल फिर उस आकृति में दिया जायगा और अभी उसे मातृम पड जायगा कि आलोक आज ठहर रहा है, और वह बुद्धता रहेगा। दिसाने के लिए भी वह गायन पुन नहीं हो सकेगा। क्या दिसाया कर वह ? कौन साली उस कहानी लिखती है !

‘अब तुम जरा बटा मैं खाना दस आऊ ।’

हाँ, मरे साथ बठने म क्या रखा है ?

शत्रुनजी तो काफी एण्टिजिष्ट है ।

हाँ वहयाआ बच्चू ! मुझे खूब कहवाओ ! या क्या नहीं कहत कि शत्रुनजी काफी बबनूप समन रता है उस ।

बता रही थी कि शादी होकर आइ तो बस या ही थी आपन ही बह रवि भी पदा की और सुविधाएँ भी दी ।’

‘सुनिए शत्रुन उधर से बुला रही है। सतीग उठकर चला गया ।

‘देखो अब आलोकजी को स्टेशन छोडन तुम ही चले जाना। मुझ घर ठीक करना है, और कापिया देखनी हैं। दो दिन से इस चक्कर म कुछ किया नहीं कल मारे नम्बर दन है ।’

सतीश ऐस दसने लगा जस कुछ समयन की बघटा कर रहा हो ।

आलोकजी आज जा रह हैं क्या ?’

कमाऊ करते हो तुम भी ! सवरे ही बात हो गयी थी ।’

नहीं मैंने सोचा गायद तुमने आग्रह करके रोक लिया होगा। कुछ आश्वस्त होते हुए उसने कहा ।

अरे बाबा आ गय सो ही बडी बात है। अब उह जरूरी माम है ता क्या करें ?”

“ता स्टेशन ता तुम भी चला कम-स-कम ।

‘देखो सारे बरतन बिबरे पडे हैं खाना रसम होते ही पहल इह जमाऊंगी। माजी ता खिलाकर चली जाएगी बाकी सब ता मुझ ही करना पडेगा। छोटा घर है, जरा-सा बिखर जाता है ता दिक्कत लगन लगती है। मुझे यो ही बिखरा घर पसंद नहीं। उसके बाद कापिया भी तो देखनी है ।’

‘पर ’

‘देखा, मैंने इसीलिए तुम्ह इधर बुलाकर कह निया है बरना वही तुम जिद करने लगामे तो मना करना बडा मदा लगेगा। कुछ कहना मत, हाँ !’

सतीग और शत्रुन साथ-साथ ही बाहर आये। सतीग को बात स भा उ यादा अच्छा लग रहा था, इस तरह भीतर बुलाकर शत्रुन का उसस कुछ कहना। आलोक

आये हैं तो क्या हुआ, उनका अपना भी तो कोई जीवन है। वार्ड ऐसी बात भी ता हा ही सकती है, जो भीतर बुलाकर ही कही जाये।

तो आलोक जा रहा है ? शकुन फिर अपनी घर गृहस्थी और स्कूल की बातों में डूबन लगी है।

खान बठे तो शकुन ने उसकी पाली में दो-तीन अतिरिक्त चीजें रखते हुए कहा "तुम सवेरे आफिस गये थे तब तब तो बनी नहीं थी, तुम अब खा लो।"

गाजर का हल्वा था, मटर की कचौड़ी थी।

"कुछ तो आप भी लीजिए आलोकजी।" शकुन मनुहार कर रही थी।

"माफ़ करो बाधा ! स्वस्थ जरूर कुछ ज्यादा हूँ, पर खाता ज्यादा नहीं हूँ। सवेरे का खाना ही अभी तो हजम नहीं हुआ।"

'ऐमा तो आपन सवेरे भी कुछ नहीं खाया। मैंने तो अपन हाथा से सब बनाया है।

तो दिन-भर इसन खाना बनाया ? कहीं ऐसा तो नहीं कि यह बेचारी बठकर उघर खाना बना रही हो और ये महाशय यहा दीवान पर सैटकर सिगरेट फूँक रहे हो। आवाज़ आती कहीं से ? पर फिर दरवाजा बंद क्या था ? हो सकता है भीद आ गयी हो, इसलिए दरवाजा बंद कर दिया हो। कमरा सड़क पर हो तो पड़ता है। वे भी तो इतवार को जब दोपहर में सोने हैं तो बंद करके ही सोत हैं। तो यह सब क्या उसका अपना ही बुगा हुआ जाल है, जिसमें फँसकर वह दिन भर से छटपटा रहा है ? उसन गौर से शकुन को देखा। उसके अग प्रत्यग को वह धूर धूरकर दबन लगी। कहीं कोई छाप है कोइ लक्षण ? काईलाल-भीला दाग ?

शकुन बिला ज्यादा रही थी, खा कम रही थी। पर वस सब कुछ बडा स्वामाविक था ?

'आप आज शाम को आ जाते तो आलोकजी को थोडा घुमा फिरा ही देत। सारे दिन घर में रखकर बार कर दिया। सोच रहे होगे, कहीं आ फँसे !'

'वाह धोर तो मैं तनिक भी गहा हुआ। बढिया खाना खाया, डटकर गप्पे मारी। हाँ, सतीशजी के साथ ज्यादा बठन का मौका नहीं मिला। और आपका बडा प्रिय अनासागर नहीं देखा। सो वह अबकी बार आऊ गा तब जरूर देखूंगा।

फिर कुछ 'खट' से बजा सतीश के दिमाग में। तो क्या फिर आन का प्राग्राम भी बन चुका है ? क्या है यह सब, उस कुछ भी तो समय में नहीं आ रहा ? उस अपनी ही समझ पर बुरी तरह खीझ आने लगी। गरीर में तो उसके कुछ गल्बड है ही पर लगता है दिमाग में और भी ज्यादा गडबडी है।

'अब आप तांगा ले आइये शायद अब शकुन जल्दी से आलोक को विदा करके अपने काम से लग जाना चाहती है। या कहीं ऐसा तो नहीं कि उसे भेजकर बिना की

आलोक ने भी स्वीकार किया कि शकुन इंटेलिजेण्ट है वह उसके सकेत को अवश्य ही समझ लेगी। और एकाएक लगा जैसे सवेरे से जिस असह्य बोझ के नीचे वह तिलमिला रहा था जिस ममातक पीडा से छटपटा रहा था, वह सब एकाएक समाप्त हो गया है।

गाडी चली तो बड़े मशीनी ढंग से वह हाथ हिलाता रहा। उसने भी चलते समय शकुन वाली बात दोहरा दी "सपरिवार आइये कभी।"

आलोक आया और चला गया, और कही कुछ नहीं हुआ। वह घर लौटेगा तो देवेगा कि शकुन उसी व्यस्तता और लगाव से अपना घर ठीक कर रही होगी।

यदि उसका काम पूरा नहीं हुआ होगा तो वह कहेगा, 'जाओ तुम आराम करा, बहुत थक गयी होगी सवेरे से, लाओ मैं जमा देता हूँ सारे बतन बतन।' वह उसकी कापिया भी दिखवा देगा। वह जरूर विरोध करेगी, 'तुम भी ता आफिस में थककर आये हो, मैं कर लूँगी, तुम आराम करो।'।

आज वह शकुन को बहुत प्यार करेगा। कितना दिन हा गये उसे बड़ी आत्मीयता से प्यार किये। उसकी अपनी ही दुबलता ने पता नहीं वैसे यह भ्रम उसके मन में पला कर दिया था कि उन दोनों के बीच में जैसे कोई है पर कही कोई नहीं है, शकुन आज भी उसी की है, उतनी ही जितनी दो साल पहले थी।

मैं कितना धीरे धीरे चल रहा हूँ। शकुन अकेली होगी। साइकिल न लाकर भूल ही की। उसने अपनी चाल बढ़ा दी।

घर पहुँचा तो देखा—खान के बतन अभी भी टेबिल पर ज्यो-के-रियो पडे थे, कापिया का बण्डल भी दीवान के नीचे जैसे का तसा बँधा पडा था। उधर जाकर देखा—शकुन पलंग पर लेटी हुई आलोक का नया उप-यास पढ़ने में डूबी हुई है। आहट पाकर एकदम चौकन्ती उठी 'कौन ?'

"मैं हूँ।"

'ओह तुम ? मैं तो डर गयी थी।' और किताब को तकिये के नीचे सरकाती हुई वह उठकर बठ गयी।

भूमि गोडसे ने जिस दिन गांधीजी की हत्या की, उसके तीसरे राज के एक छोटे से समाचार ने देर तक—या कहूँ आज तक—मेरा ध्यान बाने रखा जिला के कस्बे के दरोगा अताउल्ला खा ने गोली मारकर आत्महत्या कर ली। उसका खयाल था कि गांधीजी को सजा देने का यह एक सिर्फ उमे ही था। कहते हैं कि डेढ़ बप बाद ही दरोगा को रिटायर होना था

“श्री एन० बि० वी० वर्मा

जनरल मनेजर,

बिजारिया इण्डस्ट्रीज ग्रुप लिमिटेड

टय पलोर ”

पत्ती चस्ती पता एकदम सही था। पलटकर देखा लिफाफा जहा चिपका था, वहाँ मला हो गया था। हाथ म पेपर-नाइफ लिए ही ऊपर रोशनी की तरफ उठाया बिघर से पाडा जाये कि खत न फटे। अदर वही जगह खाली नही थी। कुछ तम बरे करे कि टेलीफोन बजा और काई चीज करण्ट की तरह तडपकर खून म दौरा लगा गयी। पते के ऊपर लाल स्याही स लिख ‘पसनल’ पर निगाहे टिकाये, हाथ का पेपर नाइफ सम पर आडा रख दिया। वह खुद भी जब पान सनी जीभ से लिफाफे का गाद गोला किया करता था तो चिपकाने पर लाल धारी उमर आती थी हालाकि लीना को कभी भी उसकी यह हरकत। लीना का बाप कहता गवार।

वही टेलीफोन है क्या ?

आपरटर ने बताया कि दिल्ली की टुक-लाइन मिल गयी है। अनजान ही एक दराज जरा-सा खालकर जुता टिकाया और रिवाविंग चेयर पर पीछे झुक लेकर हैलो गुड मॉर्निंग मिस्टर वटन क साम जब बात की तो दिल घड घट कर रहा था। घबराहट की तो यह मोचकर जीत लिया कि हूँह ऐसा आदिर क्या बात है। बड बडे गवनर-बामसरायो से दासित जब ऐस रीब स बातें कर सकता था ता वह क्या नही कर सकता ? मान लिया जाज भक्फेरी-वटन इन-कारपोरेगन बोस्टन, का गवनिंग डायरेक्टर छाटा-मोटा आदमी नही होता लेकिन खा ता नही जायेगा। या इस समय समकी बात का दुहरा महत्त्व है। बारह बराड रपय का प्लाण्ट बठगा—साभे म। पिछले

साल सेठजी अमरीवा गये थे, तमी इस सार्के की बात का बीज पडा था। लेकिन इस बार हो सकता है उसे बटन के साथ ही जाना पडे—अपनी कम्पनी की ओर से या या । उसके सामने फिर एक बहुत बडा चांस आ गया है ।

उपर से वह किसी तरह 'या-या, राइट राइट बट यू सी मिस्टर बटन' के साथ अपनी बात करता रहा, लेकिन टाई की नाँट टटोलती उसकी उँगलिया कापती रही। छ मिनट बाद जब उसने 'मो फाइण्ड आफ यू' कहकर लाइन काटी तो माथे पर भाप जम आयी थी, लेकिन चेहरे पर सन्तोष था। 'चस्सी ! चस्सी ! पीछे कुरसी की पीठ पर लटके कोट की जेब स रुमाल निकालकर मुँह पर फेरा एक घूँट पानी पिया। दीक्षित साहब अपने को लाग खुदा लगाते रहे इस आदमी से बातें करें तो नानी याद आ जाये ।

पिछले हफ्ते बटन क्लकत्ता आये थे। लीग आफ कामस की' मीटिंगें, दुनिया भर के कॉंकटेल्म डिनस का इतजाम उसने ही तो किया था। बीच-बीच में व्यावसायिक बातें भी होती रही। उस खुराट, तेज और अनुभव की व्यवसायी क सामन उसी धय और स्तर से टिके रहना सचमुच कम कौगल और काफिडेस की बात नहीं थी, हर क्षण नवस हो जाने का खतरा रहता। सही है कि सारे आदेश सेठो के थे और वह उनका नोकर था, लेकिन एकाध मीटिंग-पार्टी में उपस्थित हो जाने के अलावा उहोने किया क्या ? और मोटे मोट नफे-नुकमान, 'ले लो, बेच दो के अलावा उहे पता क्या कि आज की व्यावसायिक दुनिया है वहाँ, कसी है ? नीम की माटी दातुन रोखते हुए 'विश्वमित्र' पड लेना और बात है, और शिष्टाचार की बारीकिया, उठने-बठने के तीर-तरीको को समझना दूसरी बात देसी आदमी शायद आपके पसो के रोव में आ भी जाये, लेकिन ऐसा व्यक्ति आपके पसे का क्या गिनगा, जो सात समुंदर पार से आपके यहा आकर करोडो रुपये लगा रहा है ? किशोर जानता है, अगर वह साझा हो गया तो बही इसमें उसका बहुत बडा हाथ हागा और हो सकता है उस नयी फम में उसे ही सबसे महत्वपूर्ण पद संभालना हो' बटन के साथ मामला न भी पडे, तो भी सेठजी को इससे ज यादा योग्य और विश्वस्त आदमी कहा मिलेगा ? और मान लो अगर अगर ?

उसका मन एक नय सपने से धरधरा उठा। जब वह बटन को फवट्टी की साइट दिखान ले गया था, तो बहुत-सी बात करने का मौका मिला था—व्यक्तिगत और व्यावसायिक दोनों। मम आफ जवर कलीगज रिरीटेडली एडवाइस्ड अस, हॅल नाँट टु हैव ऐनी सच अण्डट्रॅ किंग—आइ मीन—इन-कालिबोरेगन विद इण्डियन बिजनेस फोक। दे आर नाट सपा ड टु बी फेयर माण्डेड, बटन न हँमते हुए कहा था स्पगली योर हॅल आफ मारवारीज हम लाग मनीनें भेज सकते हैं, इ जीनियस और आर्कीटेक्ट भेज सकते हैं, इहें बिजनेस-प्रेथिक्स तो नहीं मिला सकते, सारा एण्टीट्यूड ता नहीं बदल सकते। पसा हम भी कमाते हैं, और इनसे चौगुना कमाते हैं, बट नाँट दट फ्रिल्नी के।

पसा कमाना बहुत बड़ी कला है, लेकिन खच करना उससे बड़ी कला थी हायर ए मन और पायर ए मन—क्रेकट, बट वी पे द प्राइस इन ईदर केमज। गच करने के नाम पर ये लाग सिप घस रिश्कत दना जानते हैं। बयोकि'मण्टली द आर स्टिल पटी ट्रेडस एण्ड ग्रांसस डिवाइड आफ कल्चर आर एज्यूकेशन (इसका अपने-आप उसने मन म अनुवाद हुआ डण्डीमार) इण्डस्टी और इण्डस्ट्रियल कल्चर क्या हाती है इसका अभी इट व र ग भी नहीं आता। हम तो चाहते हैं इट कुछ दिना अपन यही रसर कुछ इ टेलिजेण्ट विस्म क लागो को आधुनिक व्यवस्था के तरीके और व्यापार व्यवस्था सिरसायें। आप लागो की सरकारी नीति जाड़े आती है, बरता हम तो किसी भी महयोग की जरूरत नहीं है फिर भी मैं व्यक्तिगत रूप से चाहता हूँ कि तुम एक बार आबर हम लोगो के काम का आडिया तो लो

बटन ने ये सारी बातें उस बहुत विश्वास म लेकर मजाक का पुट मिलाकर, दास्ती का वास्ता देते हुए टुकड़ो टुकड़ा म कही थी लेकिन बिगोर को सारा खया पसन्द नहा आया था—जसे माता दान कर रहा हो। इस तरह की भीतरी और बाहरी प्रतिनिधायो के बावजूद वह उनके पीछे छिपे आगम को भी समझ रहा था। फिर जब बटन न कहा हम टाप रिस्पोसिबल पोस्टस क लिए ऐसे आम्बिया की जरूरत पड़ेगी, जा काम के हमार तोर-तरीके को भी जानत हा गार्डि लाक यू (तुम्हारे जसे नोजवान) ' तब ता कुछ सामान को नहा ही रह गया

एतलिए जब उसने दिल्ली के फोन क बाद ही आपरटर म एटलस ट्रान्स मांग कर मुबह की प्लान्ट से जसे भा हा दिल्ली का टिकट मांगा ता कहा कुछ बचाट रहा था कुछ गलत कर रहा है और उसी बचाट का दमान के लिए उसने फोन पर सत्र टरी को आग्य दिया रामन, किसी को फोन एटलम भेज दो। फोन पर बात हो गयी है। किसी नाम म हा मुबह की प्लान्ट स एच टिकट उतर म जा रगे, लगा दना।

दीर्घत की ऐसी-कम-नमी उसने परम तृप्ति क भाव म गहरी मांस पेंकर दरीर डीला छाट लिया। सामा क दाता की गरिप म जाम की नाक अटा कर हवा साधी—धूसी धूसी। माथ ही सवाल आया, उमरा एम हरजन का किसी न दग-मुन तो नहीं लिया? धेम्बर म कोई नहा दा पीछे म आती एयर-कन्स्ट्रानर की बमालूम-गी आवाज थी टॉस-प्लान्ट-मै, दीवारा वाली छत क जालीदार बटाव म जल्पे नियॉन ट्यूब्स क ओर मत्र पर रम तीन टैमीफान, टैबल-लॉय बल्बडन टु गभी बग मांग द एम बार उमरा और भी जोग म ध्या ध्यी किया और बच्चा अभी अपनी नानी पर मुस्करा रहा। एम मुस्कराए क माथ हा भीतर का बचाट गुल गयी—कुछ नहीं जो बाहर मन्जरी बटन एन-कोएराएन की नोजरा दग ग्टागिदे की नोजरा म हर हालत म अरपी रूंगे यही क्या है? जब तक मत्र क हाथा म नाचा तब तक टिक है।

जहाँ जरा भी अपना कुछ दिखाना चाहो वही और दूमरी कम्पनिया के जनरल मनेजरो के मुकामल पसे बहुत कम किसीको बताओ, तो गम आये ये एयरकण्डीशण्ड चम्बर सत्रेटररी दा बरे, फनिशड फ्लट, टाइवर गाडी और दो सौ आदमिया का स्टाफ ता जो भी यहा होता, उसे ही मिलता मुझे तो वही ढाई हजार और साल म बीसेक हजार ऊपर से देते है लेकिन बटन म एससे दुगुना मिलगा, तभी जान की बात सोची जायेगी नहीं तो मगर इतना ही मिले, तब भी चले जाना चाट्टि। बहुत बड़ी बात तो यह कि बटन साला हमेशा यही हि दुस्तान म थोडे ही बठा रहेगा सेठ की तरह मिर पर फिर अमेरिकन फम की बात ही अलग है

और इस तरह का घम सकट उसे हर बार नीवरी बदलते हुए जाया है लेकिन हर बार कचोट पटले से कम तीखी होती गयी है नहीं वह किसी को धोखा नहीं दे रहा उसे तो सिफ एक आदमी को दिखा देना है ऐसा अवमर बार बार नहीं जाता और अब वह किसी भी अवसर का छोडना एफोड नहीं कर सकता। उसकी आखा म लम्बे जहाज की तरह सरकती दानदार गाडी तरती चली गयी (लार्फ और टाइम मे उसने कई बार उन्हें छाटा है) जिस लटेस्ट-मॉडल का अमेरिकन गाडी मे बठकर बिशोर घूमा करेगा, वह सेठ रामजीदास बिजारिया को दो साल बाद मिल पायेगी

उत्तेजना की मुरमुरी जब उससे नहीं सही गयी तो वह कुर्सी को अपन पीछे घूमता छोडकर, बटके से उठकर खडा हो गया फॉर टाप रिस्पॉसिवल पोस्ट गाई लाइक यू गाई लायक यू मन हुआ कि जूते की एडी पर एक चक्फेरी लगा जाये और सीटी बजान लगे लेकिन तभी उसे किसी का ध्यान आ गया, जो उत्तेजना के ऐसे आवेश का कमी भी या नहीं प्रकट हान दे सकता था। वह पीठवाली बनीगियन चिक् घीचकर सीने के पार देखता रहा दस मजिल की ऊँचाई स हर चीज का खिलौन जसा लगना अब उसे चकित नहीं करता पतली दरार जमी सडको मे काली भूरी गाडिया बीडे मकाडो की तरह लगती हैं सडक पर राइटस विन्डिंग चाहे चितनी ऊँची हा, लेकिन यहा से जमीन स जरा-सी ही उठी लगती है जिसकी बजरी बिछी चौड़ी छत पर हजारों गमलो को दजना मजदूर इधर स उधर रख रह हैं पूरा बगीचा लगा रखा है बटन वाला मामला हो जाये ता छ-सात हजार आदमी ता अपनी कम्पनी म भी हाने उसके पीचे। तब वह अपन प्रग्ने म खूब बडा बगीचा लगा दगा और नियम से बागबानी किया करेगा साला पट निक्लन लगा है इस कम करता हागा—गाई लायक यू—उस जसे टाप आदमी की पसनेलिट्टी स्माट होनी चाहिए

और उसकी उँगली अचानक नाक के नीचे वाले मस्से पर चली गयी वह उसे टटोलता रहा बहुत बार कटवा दिया है, हर बार बढ़ जाता है, डाक्टर बनर्जी कहते हैं, हज गया है। उसे क्या पता कि चेहर पर यह क्या लगता है लाट म आकर लीना इसे दो उँगलियो म दबाकर पूछती थी, 'इमें दद नहीं होता ? तुम्हारी पसने

लिटी में बस रही ।

अचानक उसे 'पसल' वाले लिफाफे का सामल हो आया । मेज से उसे उठाकर वह फिर वही आ-बुझा हुआ । नाइफ वही छूट गया था, इसलिए जेब से गुच्छा निकाल एवं पतली-सी चाबी से होशियारी से खोला, खत निकाला और फटा लिफाफा मसल कर बाहर फेंक दिया । चार तह बिया हुआ मोटा-सा कागज था और बिना किसी सम्बोधन के अंग्रेजी में एक लाइन प्रसीट दी गयी थी 'वाण्ट बी फारगेट द पास्ट ! नीचे 'लीना बिशोर' और खत के एकदम नीचे, 'डिपार्टमेण्ट आफ इ गलिश सेण्ट मेरी गार्म कालेज' और तब शहर का नाम । उसने निहायत निम्नस्वभाव रहकर समझा—क्या हम अतीत को भूल नहीं सकते ? कागज को उल्टा पल्टा भार कुछ नहीं वह यो ही चुपचाप बाहर देखता, खोया खोया खटा रहा आठ साल में यह पहला पत्र है ।

पीछे खट-खट हुई । मेज पर बहुत से टाइप किये कागज पेपर बेट से दबाकर रामन लौट रहा था । बिगोर को घूमते देख रखा । बिगोर ने मेज के पास आकर खड़े होकर ताजे टाइप किये हुए अक्षरों पर निगाहे टिकाये पूछा "यह क्या है ?"

'रोजस-नील वाले कागज हैं, लेंच के पहल मांगे हैं ।' रामन ने बताया तब तक बिगोर न खुद भी पढ़ लिया था । रोजस एण्ड नील, सोलिसिटस से लव से पहले एपाइण्टमेण्ट था । फरो एलाय वात्रो ने अभी तक रुपया नहीं दिया । झगट था हजार रुपये रोज का इण्टरेस्ट कौन दे ? बक बिजारिया इण्डस्ट्रीज से मागता था लेकिन जब ऐलायवालो न पेमेण्ट ही नहीं किया तो इण्टरेस्ट भी उहाँ क जिम्मे जायेगा 'सारी चीज उससे दिमाग में झटके से आ गयी 'ओ हा, भरे ता दिमाग से ही उतर गया था ।' और वह कागज का गौर से देखता रामन द्वारा घुमाकर सीधी की गयी बुरसी पर बठ गया । घड़ी देखी एक घण्टा है । सार कागज इसी बीच तयार हो जाने हैं

'क्या ?' उस ही रामन ने नीचे पढा कागज उठाकर बहुत धीरे-से मेज पर रखा, बिगोर चौंकि कर पूछ बठा । असल में वह भूल ही गया था कि रामन अभी तब वहीं है । कागज पर निगाह गयी—अरे लीनावाला खत है ! गायद विसवकर नीचे गिर गया था । रामन न पढ तो नहीं किया ? फौरन बाला 'तुम चलो रोजस नाउ के यहाँ निपिंग बलेम वाले कागजों का भी सामल रखना और जब रामन ने दरवाजा खोला, ता कुछ सोचते हुए धीरे से कहा 'और मुनो ' फिर कई सक्ण्ड याद करता रहा कि उसे रामन से क्या बात कहनी थी 'हो वा एटलस में मेज दिया किसी का ?

'जी'

बिना रामन का जवाब मुन माटे फेम का चन्मा नाक पर चनाकर हाथ में कुला कलम लिए वह टाइप किये हुए अक्षरों को गौर से पढ पढ़कर दस्तखत करने लगा था अब जानती है न कि मुझे चार साडे चार हजार महीना पढता है वाण्ट बी फारगेट द पास्ट अब तो भूलने की बात आसगी ही

टूट-टूट — टेलीफोन बजा, उसने बिना उधर देख ही हाथ बढ़ाकर टटालते हुए घोसा उठाया "किंगोर "

"साडे पांच पर आ रहे हो न ?" ग्राउन इन्चार्ज का गग था।

"बहा ?" किंगोर सचमुच भूल गया था।

"प्रिसेज, और कहाँ !" गग मुँसला उठा 'अजय आदमी हा

"यार आज ता बहुत ही फॅमा हूँ "

'तेरा हमेंग यही रोना होता है।" गग मुँसला उठा "अच्छा यार तू जारल मनेजर हुआ। हमने मिसेज लालचदानी को भी बुला लिया है "

"आई एम अण्डर-स्टा पड जानता है मारवाडा कसन है यह। क्या कहूँ अपनी चिटिटया तब देखने की फुरसत नहीं मिलती।" उसे लीना के खत का ध्यान आ-गया 'अच्छा, यू डाण्ट माइण्ड मैं जरा लेट हो जाऊँगा "

'ओऽ यस, गग भुग हो गया "तुमसे यार एक सलाह करनी थी। मिसेज लालचदानी की दहनवाला ही चक्कर है। तुमसे बहा था अपने दपतर मे रख ले— ऑपरेटर-कम रिसेप्निस्ट

"मुझे और पिटवा। सचमुच की लडकी की बात दूर है जानता है यहाँ लडकी की तस्वीर तक नहीं लगती। फिर जसो बडी बहन है, बसी ही छाटी भी होगी।" उसने मजाक तो कर दिया लेकिन खयाल आया, मान लो ऑपरेटर टप कर रहा हो ? जनरल मनेजर साहब उसे इस गग का तू तू करके बात करना भी पसन्द नहीं है। लेकिन आज कुछ वह भी नहीं सकता। पुराना दोस्त है जब उसे कुल जमा छ सौ रुपय मिलते थ तब का। इसलिए वह खुद गा से बहुत ही इज्जत न बात करता है, लेकिन बम्ब स्त हिण्ट ही नहीं लेता कहीं दीक्षित साहब के सामन। अचानक फोन पर उसकी आवाज कडी और सस्त हा गयी और वह सामन वाले कागजों को पढता हुआ हाँ हूँ क सन्निप्त उत्तर देता रहा। गग को लालचदानी को लेकर कहीं जाना था इसलिए किंगार की गाडी को जहरत थी। दा घंट क लिए। उस खयाल भी नहीं कि कब उसने बहा 'यह सब ता शाम को मुनेगे लेकिन जाइ का ण्ट बिलीव मुझे विश्वास नहीं हाता कि उस जमा जिद्दी औरत ऐसा लिखेगी '

'कौन ? कौन ? गग चाककर बोला कौन ऐसा लिखेगी ?

अचानक किशोर न जीम काट ली। पीरन बाला सारी यह एक साहब यहाँ बठ हैं। उनकी बात का जवाब द रहा था। अच्छा ता शाम का मिल रहे हैं ' आर उसन झट फान रख दिया। शजब हा गया न ! क्या बात मुँह स निकल गयी ? एकदम सामन बठे साहब की बात न सूचती तो ? यही प्रत्युत्पन्न मनि ही तो उम यहाँ ले आ सकी है कोई दूसरा होता तो हाथ पाँच पूल जात च्स्ती ! च्स्ती ! उसने दराज खोलकर पाइप निकाला, कागजा पर निगाहें टिकाये-टिकाय ही तम्बाहू मरा

और दाँता म दबाकर जलाने लगा यह पाइप उसे बटन ने लिया था। तभी बरे ने आवर घीरे स एन चिट सामने रख दी

"भेज दो।" बरा चला गया, तो खयाल आया कि जनरल मनेजर को एकदम किसी को नहीं बुलाना चाहिए—लगेगा भीतर गाली बठा था। चिट पर नाम के जाने 'जयन्त और बिजनेस के सामने 'बाई एपाइण्टमेण्ट' लिखा था। इसका ता उसे खयाल ही नहीं कि आज का समय दिया था। चिट रखी तो रामन का पैपरबेट से दबाया गया खत सामने था, 'वाण्ट वी फारगेट द पास्ट?' जल्दी से मोड़कर पीछे लटके कोट की जेब में डाल लिया—हर बार सामने पड़ जाता है

"गुड मानिंग, सर" डरते डरते ते एव नवयुवक ने इम तरह प्रवेश किया, मानो खेत गुरु हो जान के बाद किसी ने सिनेमा हॉल में कदम रखा हो, टटालत हुए। पाइप बुझ गया था, उस पर जली माचिस हल्लाये तीन चार बार सास खींचते-खींचते किशोर ने धीरे से सिर हिलाकर नमस्कार की स्वीकृति दी और एक हाथ स बठने का इशारा किया।

"जी, वो पर्नीचर वाले कोटेशन लाया हूँ", सिर झुकाकर श्रीफेस से बागज निकालते निकालते जयन्त बोला। वह आफिस के पर्नीचर के डिजाइन, नक्शे और दाम बताता रहा। गेहूँ आ दुबला सा नवयुवक हैण्डरूम की टाई, टरिलीन की आसमानी कमीज काली पतलून। पाइप के बन्दा लगाता हुआ किशोर कभी उसके पीलापन लिए हुए सवार बाला को देखता और कभी दाहिने हाथ में पड़ी रोहे की बूँछी को, जिसमें नग की जगह स्विक्स का चेहरा बना हुआ था। परसा किशोर का जयन्त अपनी पत्नी के साथ यू मावेंट में मिन गया था। मरे शरीर की मुदर हँस-मुख युवती थी। जयन्त के हाथ में पकट में और माला के पास पस। परिचय हुआ। उसे जयन्त का साफ मुपरा सिण्ट तौर-तरीका गुरु से ही पसन्द है। माला के परिचय के बाद ही लगा, जैसे जयन्त से उसे स्नेह भी हो। पता नहा कम उसे भ्रम हो गया कि माला को बढमिण्टन खलना पसन्द है और उसे श्रीम खाने का शौक है।

जयन्त के बड़े हुए हाथ से बागज लेकर लापरवाही से पूछा 'हाउ इज योर मिसेज ?

'फाइन, थक्यू ! जयन्त ने पिन-बुशन से पिन खींच कर दा बागज पिन किये और सामने सरका दिया "एक स्कूल में पढ़ाती हैं—भ्यूजिव।'

"क्या, माडन रिनोवेटस तुम्हें ठीक पस नहीं दते क्या ? उसे खुद आश्चर्य हुआ कि वह यह सब क्यों पूछ रहा है।

"लेकिन आफिस दु-आफिस चक्कर लगान का काम उसे पसन्द नहीं है।' अचा नक जयन्त की आँखों में एक चमक आयी 'आपक यहाँ कभी कोई जगह ही तो "

किशोर को एकदम काम और समय का साथ ही खयाल आया। दस्तखत करने से

पहले बाने मे कुछ लिखता हुआ बोला "जरूर।" फिर सोचन लगा बटनवाली कम्पनी म जयत को लिया जा सकता है। उसे जयत पसन्द भी है। जरूरत तो पडगी ही "आई लाइव यू, तुम्हारी भिसेज बहुत अच्छी जाती है क्या?" जान क्या, उसके मन मे आया कि कमी जयत की पत्नी का एक बहुत खूबसूरत रा-सिल्क की साडी मॉट देगा।

'जी हाँ' जयन्त ने गद्गन् होकर कहा "आपका एक बार हम लोग बुला मंगे। दो एक बार रेडियो पर भी प्रोग्राम हुआ है"

"डज्जण्ट गी हट यू?" जब तक वह सचेत हुआ, वाक्य उसके मुँह से निकल चुका था उसने जल्दी से बूँके पाइप सदा एक कश खींचकर कहा 'आइ मीन, यार वक तुम ये फर्नीचर और दूसरी चीजाँ के एस्टीमेट दते फिरते हो उन्हें बुरा तो लगता ही होगा?'

'जी जी, मैं बतया न, बहुत पसन्द तो नहा है। बात यह है जी, उसके घर वाले जरा से अच्छे खात-पीले लोग हैं, सो उस कही मेरे काम से सवाच टाता है। लेकिन जयन्त का चेहरा देखकर ही किशार को लग गया कि बात समझी नहीं है। उसे आश्चर्य और भयसोम होत रह कि कस वह बात उसके मुँह से निकल गयी? क्या हो गया उसे? जयत की बातों के जवाब मे 'हाँ-हाँ' करके उसने जल्दी से दस्तखत किये, फिर झटके से बरे की घण्टी बजा कर उठत हुए बीला माफ करना जयन्त, एस घन जल्दी म हूँ। मुझे लच से पहले ही रोजस-नील के यहा जाना है। और बिना उत्तर की राह देख दोना कंधा पर काट चढाते हुए बर को आदेश लिया "विलावन, रामन से कह दो, कागज लेकर नाचे गाडी म चलेगा। जयत, तुम दत्ता बाबू से मिलकर उन्हें ही सारी बातें समझा जाना।" पाइप ऐश-टो मे झाडकर कोट की जेब म रखा, ता तह किये कागज से हाथ का स्पग हुआ काण्ट वी फारगेट द पास्ट? डज्जण्ट योर वाइफ हेट यू आई मीन योर वक? बीबी तुमस मरा मतलब तुम्हारे काम से घणा नहीं करती? गाई लाइव यू बडे बाबू क चम्बर तक आते-आत यही वाक्य उसके काना में गूँजते रहे बडे बाबू यानी रामजीदास के भाई क हैयालाल बिजागिया मैनेजिंग-डायरेक्टर

रामन डायरेक्टर के पास बठा था। पीछे वह अकेला बठा-बठा पाइप पीता रहा। चोराहू की लाल रोगनी ने जब रोजा, ता अचानक कुछ माद आ-गमा हो इस तरह कहा "रामन, मकफरी बटन वाली फाइल आत ही एकदम तयार कर देनी है। शाम को लोवल डायरेक्टरस की मीटिंग है। घर पर बोल देना, घायद कुछ देर हो जाये और हाँ, चाउनवाले गग साहब को मना कर देना कि मैं घायद आ नहीं पाऊँगा।' फिर डायरेक्टर को आदेश दिया 'गाडी पाँच बजे गग साहब का चाहिए! सात, छान्दे-सात तक यही आ जाना, हम थोडा रुकना होगा।' वह जानता है भिसेज गग, यानी

वर्षों में रात दिन लगातार वह अपने-आपको इस बात के लिए ही तयार करती रही हो—इस एक लाइन को लिखने के लिए। और क्या इस एक लाइन को कुछ या-ही-से ढग से लिखकर वह कहीं अपना ही पत्र उठा तो भारी रखना नहीं चाहती? लेकिन उसका पहल करके पत्र लिखने के धरातल तक 'उत्तर आना ही क्या और क्या वह स्वयं इसी की आगवा मरी प्रत्यागा नहीं कर रहा था?

ऐसा नहीं है कि खुद विशोर के मन में हर दिन कम-से-कम एक धार यह बात में आती है कि बहुत हुआ, अब वह लीना को लिख दे, लेकिन हर रोज किसी न उसका हाथ पकड़ लिया—या कहो, जिसने उसका हाथ पकड़ा हुआ था, उसकी शक्ति का वह प्रतिरोध करता रहा। 'ओल्ड मन एण्ड द सी फिल्म का एक दृश्य इन आठ वर्षों में हजारों ही बार उसके सामने आया। शराबखाने में 'बूना मेज पर काहनी टिकाये किसी से पजा लडा रहा है—पजा नहीं, दोनों ने एक दूसरे की हथेली को अपनी पकड़ में ले रक्खा है और दोनों ताकत आजमा रहे हैं कि कब कौन, जिसके हाथ को मोड़ कर मेज पर मुका दे। ताकत से अधिक यह खेल धय का है। एक सीमा पर आकर शक्ति रुक जाती है और धयपूर्वक दूसरे की हिम्मत टूट जाने की प्रतीक्षा चल्ती रहती है। कभी कभी उसे लगता है दूसरा हाथ लीना का है, लेकिन अक्सर प्रतिरोध के रूप में, जिसका हाथ वह महसूस करता रहा है, उस व्यक्ति का सिर्फ नाम सामने है, चेहरा आज स्पष्ट याद नहीं आता। अनक चेहरों में वह इतना घुल मिल गया है कि लगता है उस तरह का कोई चेहरा कभी था ही नहीं। और यह सधय निरन्तर उम निराकार चेहरे वाले व्यक्ति से चल रहा है। दांत भीचे सास रोके गीना प्रतीक्षा कर रहे हैं कि पहले किसकी नसें ढीली पडती हैं

लीना से वह आठ वर्षों से नहीं मिला और अब तो इस स्थिति को स्वीकार कर चुका है कि आगे मिलन की आवश्यकता भी नहीं है। लेकिन ताकत आजमाती पत्नीने से पत्नीजी एक सस्त हृदेली का स्पण एक पल को उसकी चेतना से ओझल नहीं हुआ। मुबह शायद उसे खुशी ही हुई थी—एक निदय खुशी कि 'खट' की आवाज के साथ उसन लीना के हाथ को मेज पर मुक हुए पाया। फिर लगा, वह हाथ लीना का नहीं एक दूसरा सस्त हाथ है।

मुबह की निष्करण क्रूर प्रमत्तता का मुख सामन तक धीरे धीरे अनजाने ही एक अजीब अवसात में बदलता चला गया था और वह अचेतन की एक आवेगमयी इच्छा से लडता रहा कि मुबह दिल्ली न जाकर, प्लेन से सीधे गीना के पास जाये और उस हारी थकी जजर, पराजिता का बाँहा से उठा ले 'लीना, मरी लीना मुझे माफ कर दो।' कसी हो गयी होगी इन आठ वर्षों में लीना? जब वे अलग हुए थे तो वह छब्बीस की थी, आज चौतीस की होगी। काले केशों में सफेद धारिया उभर आयी होगी चेहरे पर उम्र का पकाव झलकन लगा होगा और शरीर फल या सूखकर वह

निमला भामी ऐसी महिला है, जिन्हें देखकर श्रद्धा होती है— हताशा व अनेक क्षणों में उन्होंने ही विश्व को त्रिस्तरीय और टूटने से बचाया है। लेकिन जाने क्या चीज है, जो उसके भीतर सन्तुष्ट होती है और वह जो योग को एल्फ़ा-दानी के साथ धूमने को गाड़ी दे देता है उसे उसमें कुछ भी अनुचित नहीं लगता। लेकिन आज भागो विश्व तृप्ति हुई। उसने रामन से मजाक करना चाहा। इस उल्टे मीरे टाकम से तो तुम्हारी पत्नी खासी घोर हो जाती होगी, हो सकता है उस बेचारी ने आज कोई प्रोग्राम बना रखा हो। वह जब से डायरी निकालकर कुछ देखता रहा, 'तुम्हारी पत्नी को देर से जाने पर शक नहीं होता?' उस लगा। उस उसने यह वाक्य मजाक में रामन से कह दिया हो। लेकिन कहा नहीं था सिर्फ सोचकर रह गया था क्योंकि प्रतीक्षा के बाद भी रामन की ओर से कोई जवाब नहीं आया। ऐसा मजाक तो वह कभी कर ही नहीं सकता। तम्बाकू भरने के लिए पाउच को दोनों जेबा में देखा तो लगा, सुबह से जिस चीज को वह टाले जा रहा है वह जूते की कील की तरह और बाहर निकल आयी है अधिक गहराई में छूटती है।

बलब के मोच से जब विश्व की बगड घमकर बाहर निकली, तो 'हाइट-ट्रेविल के पांच छ पग नमो में तर रहे थे। सड़क तनी हुई डोरी की तरह हवा से दरदराली लगती थी। लोक के बीच से गुजरते हुए एक अँधेरी सी जगह में अचानक गाड़ी ठिठक गयी। स्टीयरिंग को दोनों हाथों से पकड़े देर तक वह यो ही न्यू-सा देखता रहा, फिर झटके से चाबी खींची बाहर आया और फटाक से दरवाजा बंद करके एक क्षण पर आ बठा। लगातार कोई चीज कानों में सन सन गूँज रही थी— ठीक वसी ही आवाज जसी रेल की गुनसान पटरियों के किनारे खड़े टेलीग्राफ व खम्भों में गूँजती है। वह महसूस करता रहा— सुबह से ही एक सवाल उसके आस पास भँडरा रहा है लीना ने आठ साल बाद उसे क्यों लिखा? सुबह जब उसे लीना का खत मिला था, तो आयास पूर्वक उसने कुछ नहीं सोचा था— कुछ भी नहीं। एक तल्ल मुस्वान से सिर्फ उस लॉग को पढ़ लिया था क्या हम लोग अतीत को मुला नहीं सकते? अतीत? कौन-सा अतीत? अतीत को अपने साथ रखना अब उसका अभ्यास नहीं रह गया है इसलिए कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई थी। बस मन में एक बात आयी थी कि आज मैं किमी लायक हो गया हूँ इसलिए न? आठ साल बाद किम अतीत को मूलने की बात लीना करती है? इन पिछले आठ क्यों बाला अतीत या वह जो इस पहले बीता था? और अभी तरह की कोई चीज लगातार कहीं घुमचू रही है, इस वह ज़रूर महसूस करता रहा। इस समय लगा, घुमडत हुए उस निराकार ने प्रायः स्पष्ट प्रश्न का एक रूप ले लिया है। आखिर उसने क्यों लिखा? उस जिद्दी दम्भी उदर, स्वाभिमानिनी औरत ने कितनी मुश्किल से अपने को यह पत्र लिखने के लिए तयार किया होगा यह सिर्फ किंगोर ही महसूस कर सकता है। हो सकता है, इन पिछले आठ

वर्षों में रात दिन लगातार वह अपने-आपको इस बात के लिए ही तयार करती रही हो—वस एक लाइन को लिखने के लिए। और क्या इस एक लाइन को कुछ यो-ही-मे ढग से लिखकर वह कही अपना ही पलड़ा तो भारी रखना नहीं चाहती? लेकिन उसका पहल करके, पत्र लिखने के घरानल तक 'उतर' जाना ही क्या और क्या वह स्वयं इसी की आगवा भरी प्रत्यागा नहीं कर रहा था?

ऐसा नहीं है कि खुद विशोर के मन में हर दिन कम-से-कम एक बार यह बात न आती हो कि बहुत हुआ, अब वह लीना को लिख दे, लेकिन हर रोज किसी ने उसका हाथ पकड़ लिया—या कही, जिसने उसका हाथ पकड़ा हुआ था, उसकी शक्ति का यह प्रतिरोध करता रहा। ओल्ड मन एण्ड द सी फिल्म का एक दृश्य इन आठ वर्षों में हजारों ही बार उसके सामने आया। शराबखाने में 'बूढ़ा मेज पर कोहनी टिकावे' किसी स पजा लड़ा रहा है—पजा नहीं दोनों ने एक दूसरे की हथेली को अपनी पकड़ में ले रक्खा है और दोनों ताकत आजमा रहे हैं कि कब कौन, विमके हाथ को मोड़ कर मेज पर फुका दे। ताकत में अधिक् यह खेल धय का है। एक सीमा पर आकर शक्ति रुक जाती है और धयपूर्वक दूसरे की हिम्मत टूट जाने की प्रतीक्षा चलती रहती है। कभी-कभी उसे लगता है दूसरा हाथ लीना का है, लेकिन अकमर प्रतिरोध के रूप में, जिसका हाथ वह महसूस करता रहा है, उस ब्यवित का सिफ नाम सामने है, चेहरा आज स्पष्ट याद नहीं आता। अनक चेहरो में वह इतना धुल मिल गया है कि लगता है उस तरह का कोई चेहरा कभी था ही नहीं। और यह सधय निरन्तर उस निराकार चेहरे वाले ब्यवित से चल रहा है। दात भीचे, सास रोके दोनों प्रतीक्षा कर रहे हैं कि पहले किसकी नसें ढीली पडती है

लीना से वह आठ वर्षों से नहीं मिला और अब तो दस स्थिति को स्वीकार कर चुका है कि आगे मिलन की आवश्यकता भी नहीं है। लेकिन ताकत आजमाती पमीने में पसीजी एक सरत हथेली का स्पश एक पल को उसकी चेतना से जोडल नहीं हुआ। सुबह गायद उसे खुशी ही हुई थी—एक निदय खुशी कि 'खट्' की आवाज के माय उसन लीना के हाथ का मेज पर फुका हुए पाया है फिर लगा, वह हाथ लीना का नहीं एक दूसरा स रत हाथ है।

सुबह की निष्करण क्रूर प्रसन्नता का मुख साँझ तक धीरे धीरे अनजाने ही एक अजीब अवसाद में बदलता चला गया था और वह अचेतन की एक आवेगमयी इच्छा में लडता रहा कि सुबह दिल्ली न जाकर, प्लेन में सीजे लीना के पास जाये और उस हारी थकी, जजर, पराजिता का बाँहा से उठा ले 'लीना, मेरी लीना मुझे माफ कर दो।' कसी हो गयी होगी इन आठ वर्षों में लीना? जब वे अलग हुए थे तब वह छन्वीस की थी आज चौतीस की होगी। काले केशों में सफेद धारिया उभर आयी होगी, चेहरे पर उम्र का पकाव झलकन लगा होगा और शरीर फट या सूखकर वह

नहीं रह गया होगा, जिसे वह 'अ ग अ ग साजे मे ढला' कहा करता था। नहीं, अब उस हारी पकी, टूटी प्रौढ़ा का सामना करने का साहस भी तो विशोर में नहीं है। अपराध आरापती निगाहा से वह कैसे दो चार हो सकेगा? सचमुच, बेबारी बही बहुत मजबूर ही हो उठी होगी, वरना कस उसे यह पग लिख पाती?

देर तक आँसू विशोर के गालों पर टुलकते रहे। लेव के पार किनार किनार रेल गुजर रही थी और उसकी रोगनियाँ पानी के नीचे मुतहरी बाँतर जसी सरकनी जा रही थी। क्या व लोग सच ही दुर्भाग्य बनकर एक दूसरे की जिंदगी में आये थे?

लेकिन सौभाग्य किसे कहते हैं उसे जिंदगी में पहली बार विशोर ने उसी दिन जाना था जिस दिन लीना का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, लीना तुम एक बार अपने मुँह से कह दो कहो लीना! दसों, मेरे पास तुम्हें दन का एक प्यार भर दिल के सिवा कुछ भी नहीं है मुँह से लीना ने सिर्फ इतना ही कहा समय कुछ गम्दा में कहकर ही बताया जाता है कि गार? विशार का विश्वास नष्ट हुआ था। लगा, जमे ससार की हर चीज अवास्तविक बन सी गई हो उठी हो। यूनिवर्सिटी के लड़कें मुना-मुनाकर आपस में कहते, "सं कहते हैं छप्पर फाड़कर दना! जिंदगी साले की टूटनें करते फ्रीगिप और स्कालरशिप के लिए इस मन्बर से उस मन्बर के यहाँ चक्कर लगाते बीनी और आज दस ला क्या अक्डकर अमिस्ट्रेंट-कमिशनर का दामाद होन जा रहा है।

'लकिन बेट, हाथी बाँध तो रह हा उस खिलाओने क्या?

'हाथी नहीं हथिनी! सफद हथिनी! जो कतना बड़ा जानवर देगा वह दो चार ग ने क कत भी दगा हो। अमिस्ट्रेंट-कमिशनर कनकमटका कहते किस हैं कुछ पता है?'

यानी विशोर साहब वहाँ कत पर जाकर ही मड़या डान दन?

कत पर? और या जा कमिशनर साहब के तान-तीन मुँह डाय बठ है सा माना लिजा क भाई! जमाईजी का या छातिर करेण कि सीधे घर आकर ही।

और जा है सा है पर यार, काँगा मूड! नाटक तयार करके पढ़ने के पाठनर द पाप हैं ममम कुछ? तुम जिन्गी भर बठ-बठ लाल स्यागा से निगावा पर निगान लगान रहना काई छमिया पूछन नहा आदगी। पाटुराम का मिर बहारी में और पाँचा घा में। कॉलेज-स्टाफ लाजाय करनी है सा आदमी का चाहिए एक मून मूरत-गो काली में नोटम तयार करके अलग रग ल।

'मगर हाथिग यं हुआ कस? बाप मान की आँगे है कि बटन? उन जिन्गी नहा है कि जा सुन्द सार निन टूटनें करे न जिमक सिर पर छन हा और न तल पग, कफ क्या पिनादगा बिन्गिया को?

तिरिया-दूठ मि-लाइ तिरिया-दूठ! कीटिया बिना साद निद मत्यान्द दिप

पडी रह, तो योग्ये, बाप बेचारा क्या करे ?'

'अरे जनाव, करे क्यों नहीं ? मद बच्चा हो, तो हण्टरो से वो टुवाई करे कि सारा रोमांस पाल्ना हो जाये । और इन मजतूँ माहम को तो यो चुटकियो मे उडा दे कटवा के वहा दे राता रात ! क्या मजाल, जो किसी को मुराग लय जाय जरा भी ! हिम्मत होनी चाहिए मिस्टर, हिम्मत !'

हिम्मत तो भाईजान, किशोर की मान गी पडेगी ।

'नानसेस ! उमरी तो आज भी हिम्मत उस बाउण्डी में घुसने की नहीं होती । वो तो हमारी मोना लिजा ही सब कर रही है

'हाय मोना, तेरी यह दुदशा !'

एन फिकरा और कहवहा के बीच किशोर मले ही अपने को हीरो क रूप म देखने लगा हो, लेकिन यह सच है कि लीना की दत्ता और साहस के आगे कही वह अपने को बहुत छोटा और नमित महसूस करता था । और इसम भी झठ नहा कि शादी हो चुकने के बाद वाले दिन तब असिस्टेंट-कमिश्नर दीक्षित के बँगले के फाटक का 'विवेपर आफ डाग' के ऊपरवाला कुण्डा खोलते उसका दिल घड घड बरन लगता था । अल्सेशियन कुत्ता के डर से नहीं, लीना क भादयो के डर से भी नहीं, बल्कि दीक्षित साहब की नजरो के डर से । खून को जमा देने वाली उन ठण्डी निगाहा के सामने पडकर वापस आ-सवने लायक शक्ति भी उसमे रह जायेगी या नहीं ? आज सा लगता है, जो कुछ उन दिनों हुआ किशोर उस सबका मात्र तटस्थ दशक था । शादी दीक्षित साहब के यहाँ नहीं हुई थी कोट मे । इसके पहले और बाद ट्रेजेडी और फास दो नाटक हुए थ यानी शादी से पहले मार डालने, उस लफंगे को कही का न रखन और पाच दिन भूखे रहन, कमरे म बंद करके सडने देने का नाटक हुआ, जिसक अन्तिम अ क म एक दिन किशोर न लीना को अल्समुवह अपनी कीठगी के दरवाजे पर खड पाया—बदहवास, माली हाथ । 'अपन घर रहने आयी हूँ । कितनी मुश्किल हुई है निक्ली म कि बस ! अब कोई हमारा क्या कर सकता है ? कानूनन हम लोग पति-पत्नी हैं ।' फिर किस तरह भाड म-जाओ क अंदाज मे सब बिसावा करना पडा, किस तरह मसूरी के एक हाटल मे डबल बड रूम का इन्त जाम करके उहोन दो टैन टिकट किशोर को दिये और स्टेशन पर जब अपनी बेंटी को विदा किया, तो सक्ती के मुकौटे का मोम पिघल आया था । उनकी आखो मे नमी तर आई लेकिन एक तनाव बना रहा और उदासीनता का अभिनय करता किशार गदन अकडाये अपने और दूसरा को विश्वास दिलाता रहा—वग की दीवारें आखिर मनुष्यो की भावनाओ को कितने दिनों और कुचलेंगी ? आदमी ही तो है जो इतिहास को बनाता और बदलता है । प्रतिष्ठा—धन की, जाति की पोजीशन की प्रतिष्ठा—हम लोगा के भाग्य की निर्णायक क्या हो ? लेकिन ये सारे धिसे पिटे धाक्य वातावरण मे ब्याप्त अपमान के डर से उस अछूता नहीं रख पाते थे ।

पापा ने कुछ गद्दी दिया—ने की बात भी गद्दी थी और गिगोर उगाव। उम्माद भी गद्दी कर रहा था लेकिन रद्दीग पर यह मोन आयागन भी दूट गया। एट प्रोम की घडी क पाग जय हरी दण्डी हिली, तो उद्दाने लीता के हाथ म एक बन्द लिपापा रस गिया, 'इस घा' म दगना।' गाडी पली तो गिगार का रगा कि दी' गत साहब न तो उससे हाथ मिलाता चाहत है, ग आँस। ये या ही सादे-मोद स स रत घहरा किए एक ओर सड रहे और उगसे गद्दी, लीना स उगड उगड बालते रह। एट-एगप्रोस का दिव्या एक हाम स दूगर हाथ की यात्रा में मानगिन उतजना प्रवट करता रहा। गाडा पली, लिपापा गुला—लीना के नाम पाँच हजार का एवाउण्ट पेयो खक था। पटली पीड गिगार के दिमाग म टकरापी, गिग पाँच हजार !' फिर लगा, यह पाँच हजार रुपयों का गद्दी पाँच हजार अबिपासों का खक है जिस आदमी क साथ तुम जा रही हो, उसके साथ कभी भूखी मरने लगी, तो इन रुपया म काम पला लता। गिगार का चेहरा प'गर लीना समझाती रही पापा बंधुद कट्टर गिद्धातवादी आदमी है। वे कहत हैं कि भूठे दिराव और रुपये की बरवादी से क्या पाबदा ? जो रुपया दना है यह सीये ही क्या न दे दिया जाये ? बजाय इसके कि वे हम कोई उलटी-सीधी चीज द देत और हम पसाद न आती, क्या यह उयादा अच्छा नहीं है कि हम अपनी उभरत की चीज सरीद लें ? यह कुछ नहीं बाला। अपन जुधाम का बार बार रुमाल म साफ कर करके रगत और रेटे एक्सप्र स का टिन हाथ में लपर बात करते दीक्षित साहब की आकृति ही उसके सामने घूमती रही। ग्यारह बारह साल हो गये, उस आवृत्ति की रेखाएँ अब बलग-बलग लोगों क चेहरों म समा गयी हैं और उसे ज्या-का त्यो याद कर लना भी उसके लिए सम्भव नहीं रह गया है। लकिन उस दिन बाला प्रभाव आग भी दिमाग से नहीं जाता। मुँहकी आर बढ़ता गिगरट बाला हाथ, और सौबो होठा का उसे पकडने के लिए उदग्र हो आता—बाई फोवल चश्मे से बाज जसी तज आँखो का क्षिकना—मुप्रीम का'फिड'स और हर चीज को आरपार भेदकर उस जान बडे हान का दग्म—सब गिगार एक ऊँचाई पर लडे हिकारत से नीचे देखते व्यक्ति की ललकारती भगिमा—मन ही मन दाँत भीचकर किशोर ने सोचा साला गवल से ही टोडी बच्चा लगता है। हमारी सरकार ने इन लोगो को रिटायर क्यों नहीं किया ?' फिर एकदूसरा शब्द दिमाग मे आया ब्यूरोकटस !

हवा ठण्डी थी। खाना खाकर दोनो बाहर निकल थे और कुल्डी माल पार करके रिक्शा स्टण्ड के सामने ही दीवार पर, जरा एक ओर हटकर बठ गये थे। अंधेर म जगमगाती बस्तियों की आडी तिरछी मालाएँ दूट दूटकर नीचे ऊबड खाबड अंधेर म चली गई थी कि त्रंग के गुच्छे के बाद, बस कही कही बस्तिया सडक का आभास देती थी। नीचे बहुत दूर हल्के उजास को देखकर लगता था वहाँ देहरादून है।

कमी कमी में सोचता हूँ लीना तीन दिनों से घुमरती बात का विशार शब्द

देन की कोशिश कर रहा था ' वही हम लोगो से कुछ गलत तो नहीं हो गया ' वह 'डाइनेरी-चौकवाले' मण्डप को देखता रहा। लीना की उस सारी दृष्टता ने उस डरा दिया था। जो लड़की अपन दबंग बाप की फिऊ न करे, वह सचमुच डरने लायक ही है।

काले शाल को एकबार खाल कर सारे कपड़े ढँकते हुए लीना सामन दखती बोली "देखा किशोर मैं बच्ची नहीं हूँ। मैं जल्दी निणाय नहीं लेती और जब एक बार निणाय ले लेती हूँ, तो उस पर टिकन की कोशिश करती हूँ। पापा का भी जानती हूँ और तुम्हें भी समझती हूँ। सब जानना बूझत हुए पूरे हास-हवास म भी तुम्हारा साथ कोट गयी थी। और सच कहूँ, मैं इसे भी पापा की महरवानी ही समझती हूँ—उन्होंने जतना किया। मैं तो तुम्हारे यहाँ जब पहुँची थी तो इस सबका मोह छोड़कर पहुँची थी। जानती थी यह सब नहीं होगा।"

'नहीं होता तो ज यादा अच्छा था।' गहरी साँस लेकर उमन धीरे से कहा। लीना के स्वर की यह दृष्ट निणायतात्मकता उसे अपन-आपकी विरोधी लगती है और अचानक उस दीक्षित साहब की वह मुद्रा याद हो आयी जो उसे महसूस कराती थी—मानो वह जमीन पर रेंगने वाला कीड़ा हो।

खर, जो हुआ सो हुआ, पापा को माफ कर दा। दखो, उनका सोचन का दुनिया को देखने सुनन का चलने चलान का अपना एक तरीका है। शायद उसे अब वे बतल भी नहीं सकते। कम से कम तुम उनका उसी बान का लिहाज करदो कि मैं उनकी एकलौती लड़की हूँ—मादया म सबसे बड़ी। मेरी गादी वे सचमुच गीक से ही करना चाहत थे। लीना का गला भर्रा आया "यही जरा-भी अटक इस समय जा गई है वरना हम जानत हैं पापा क मन म तुम्हारे लिए कितनी इज्जत है। बहुत बार उन्होंने कहा है—किनार ईमानदार और मेहनती लड़का है। उसे दगता हूँ तो मुझे अपने लिन याद आ जात हैं।' और वह विस्तार से बताती रही "पापा खुद सल्फमड आत्मी हैं। चाचा ताउआ न तो हरी झण्डी दिखा दी थी। खुद पढ़े, छाटे भाई बहना को पढाया। मादया का नौकरी दिलाई, बहिना की गादी की। आज जो कुछ हैं, सिफ अपन बूत पर हैं। आप क सघप का वे नहीं समझेंगे, तो कौन समझेगा? खुद उन्होंने क्या कम तन गीफे दखी हैं? इसलिए जानत हैं अभाव क्या होता है। गायद यही बजह है कि हम लागा की कभी किसी इच्छा को अधूरा नहा रया। आधी रात का उठकर अगर हम लागो न कहा—पापा, ट्राइसिकिल लेंगे तो आदमी दूकान खुलवाकर ट्राइसिकिल लाया है। कहते थे—मेरी इच्छाएँ अगर अधूरी रह गयी हैं, तो मैं अपन बच्चा का मन क्या मानूँ?"

लीना का यह बहाव किशोर को किनार पर अन मीगा खड छोट जाता है और तुम आया भी हो ता एक ऐसे आदमी क साथ, जिसने खुद कभी जिन्दगी म नहा जाना कि इच्छाएँ पूरी होना किस कहने है। मया को अन्सी-न्सी रूपसे मिलत है।

बच्चे हैं बे-ग,ी मामी हैं—जिन्होंने मुझे माँ की तरह पाला है। माँ बाप का प्यार मैंने तो गिफ्त भया म ही पाया है। इसलिए कभी कभी सोचता हूँ कि दोस्ती तक हम लोगों के सम्बन्ध ठीक थे लेकिन आगे "

'फिर वही बात ! देगो कोई भी लड़की जब ऐसे निरामय ऐ-नती है किशोर, तो मूव आगानीछा सोच लेती है। मुझ गमी तरह की जिन्दगी जीन की आमत है।" उसने किशोर का हाथ अपन हाथ म ले लिया 'आज तो तुम्हारी लाचररगिप पक्की है न इसलिए एक आधार है। यह त भी हाजी तब भी मैंन आने का निरामय कर ही लिया था। अब हम दोनों के गुग दु ग अलग यही रह गये हैं ? अरे, मैं तो बहती हूँ, इस साल मैं फागल बिये लेनी हूँ फिर निश्चित हावर पी तच० डी० कर डालो। ये टपूगन और नोटग तो तुम बट ही कर दा। मैं भी कोई छोटी मोटी नौबरी ले लूंगी। फिर बट्ट ही लाह और सात्कना स उसके बच्चे पर बह रसकर बोली "छोटी सी जिन्दगी है या ही बीत जायगी।'

आज भी याद है किशोर को लगा था कि लीना के मुँह से अपनी बात नहा फिस्में और हमानी कित्तवें बाल रही थी। घटी रसकर जब वे लाग उठे तो लीना न इस तरह दिलासा दिया जस बच्चों को समना रही हो 'दत्ता, हम लोग ट्रेन मे सफर करते है। बहुत तकलीफ, असुविधाग" अपमान और बमजगी हाती है। लेकिन यात्रा पूरी करने के बाद कोई भी नर याद नही रखता। पापा न गलत बिया या रही, अब तो हमारी जिन्दगी अपनी और स्वतंत्र जि दगी है। पापा उसमें बहाँ आते हैं ?

हाँ, पापा उरुम बहाँ जात हैं। न होगा तो आगे उनस कोई सम्बन्ध नही रखने। उस दिन सुनसान माल पर विशोर न लीना को कमर स अपने पास सीच लिया। तुम बहुत समन्दार हो लीना पता नही मुझे क्या हो जाता है कमी-कमी ! ये छोटी छाटी बात बहुत महत्वपूर्ण लगने लगती है। इसी तरह भटकाव म मुझ सहारा देती रहना 'मन मे सोचा लीना जिस वग और जिन लोगो मे रहती है, निराम ददता और स्पष्ट चिन्तन उन लोगो की बहुत बडी विशेषता है, क्योकि परिस्थितियो पर उनका नियन्त्रण होता है।

छोटी छोटी बातों के महत्वपूर्ण लगने का सिलसिला शुरू बहा हुआ था—यह ता स्पष्ट याद नही लेकिन वह खत्म वहाँ नही हुआ—खत्म हुआ किशोर और लीना को अलग कराके एक नये सिलसिले की शुरूआत करके आज लीना का आशय उसी अतीत से है क्या ? उसने पाइप निकाल लिया, सुल्गाया और सिरे से पकड कर पीना रहा

कुछ घटनाएँ अभी भी भुलाए नही भूलती और आज भी किसी लडकी को टेनिस खेलते देखकर किसी पार्टी मे होटल मे छुरी-कांटे उठाते रखते याद आ जाती हैं दीपित साहब की ओर से शादी का डिनर था—उनके लान मे ही। छुरी-कांट स

को देर तक अपने हाथ व फूल बपडो पर इसी करना उस अभी तक याद है, इसलिए इसी करन के परिश्रम को भी जानता है। वह उम पुरत पाजामे को यो ही सिरहाने रखा छाडकर वही से कोई गांठे बपडे निकाल लेता—क्या है, कहाँ बोन म न पडे रह गरीर पर ही रहे—सोना ही ता है ! लीना बिदाती 'तुम्ह गन् बपडे पहनने का रास गोक है। उसे लगता कट रही हो—साफ बपडे पहनन की आदर नहा है न ?

इण्टर-पू के लिए जाना था। लीना ने उसकी अटची-विस्तर तयार किये। अपनी बत की चौकार टोचरी म दो प्लास्टिक की प्लेटें, गिलास तौलिया नपकिन केले-सन्तरे चम्पादि रख दिये। गुसलपान से निकलकर गीन बाला को झटके-से काढते छोट उडाते हुए किंगोर ने पूछा 'जरे भई, ये सब क्या है ?' लीना व्यस्त भाव से सामान लगाती रही 'कुछ नहीं, रास्ते की तयारी है। पापा की तयारी में ही करती थी।' विशोर ने मुलायम स्वर म बहा 'बयो ये सब बेकार महनत कर रही हो ? रास्त म मेरा मन ही नहीं होता कुछ खान पीन को। फिर बड-बलास म आन्मी खुद ही बठ जाये, इतना काफी है। ये ताम शाम जितना कम हो, उतना अच्छा है। बेकार टूट-टाट जाये।' फिर जब काफी अदर रखकर लौटा, तो जसली बात कही 'इसके लिए एक कुली अलग से करना होगा। अटची बिस्तर का क्या है—लिये और हाथ मे लटका लिये।' लीना का हाथ रक गया। उसने भीर से किंगोर को देखा और उसके आगे बाई फोकल चरम से ज्ञानती दीक्षित साहब की आँखें आ गयी

लीना को शोक था घर म अच्छ परद हा और उस लगता पुरानी साडियो के परदे क्या बुरे हैं ? घर म नये टी सट की जरूरत थी। भट मे मिल टी सट दीक्षित साहब के साथ ही—उस शहर म छट गये थे और वह वहाँ जाना नहीं चाहता था। तय हुआ शाम का साथ चलन। लेकिन वह खुद ही कॉलेज से बाजार चला गया और जब आया तो सेक्ण्ड ग्रेड का टी सट साइकल की डोलची मे था। किसी बेमालूम सी चटख या टैड पन को कौन गौर से देखता है ? चीज तो आपे दामो म आ गयी। लीना ने देखा, ता नाक भी सिकाड ली 'क्या उठा लाए।' अगले दिन वह खुद जाकर नया सट उठा लाए। बोली "तुम्हारे पसे नहीं खच किये हैं। अपने पसा से लायी हूँ"। अपन पसा को लेकर उससे मुँह तक कोई बात आयी भी—तभी कोई आ गया।

यह सब तो चला बिना बोले, लेकिन एक दिन जब रेस्तराँ से निकल तो बोलने का लिहाज भी टूट गया। शायद उसे इतना बुरा न लगता, लेकिन साथ म था किंगोर का एक सहकारी—अंग्रेजी विभाग का मेहता। लीना का फानल था, इसलिए मदद करने अवसर मेहता आ-जाता था। शाम को प्राय साथ ही प्रोग्राम बनता। कम से कम चाय साथ ही पीते थे। जब तक विशार पस निकाले-निकाले कि मेहता ने झटके स पस निवाल्कर दस का नोट थाली मे पेंक दिया। टिप के चार आन छोडे और बाहर आते हुए बोला 'मैं समझता हूँ इन बेचारा को जरूर कुछ-कुछ छोटना चाहिए।

य हाटल वात इहें देते ही क्या है ? मारा गुजारा तो टिप्प पर ही चलता है क्या '

"हमारे ये टिप देने में सभसे ज्यादा तबलीफ पात है," लीना हँसकर बोली "बहुत दिल बड़ा करके छाडा, ता एक आना छोड़ दिया ?"

'हम पूछते हैं, यो पसा फँवन से पायदा ?" उसन बचाव पक्ष की दरील दी 'एक तो दो पसे की चीज के चार आन दो—फिर यह टवम ! मैं कहता हूँ कि यह टिपवाजी विदेशी मन्तना बडा सिर-दद हो गया है कि लोग परेगान हैं। दरवाजा रोला है टिप दीजिये, लि पट से लाये हैं, टिप दीजिये, टवसी बा भाडा दिया है, टिप दीजिये, होटल के बरे ने आपकी डाक लाकर दी है टिप चाहिए ! टिप न हुई साली मुसीबत हो गई ! हम तो इस सब की डिस्करेज करना चाहिए । मई चीजा के दाम आप दा पसे और बड़ा दीजिये—लेकिन टिप के नाम पर यह जेवनतराई तो बंद कीजिये मैं ता इसके एकदम खिलाफ हूँ ।" वह लीना से बहस के अंदाज में बोलता रहा ।

"खर, अच्छा या बुरा, सभ्य समाज का एक तरीका बन गया है ।' लीना न बताया ।

'अच्छा सभ्य समाज है ! एक पूरे वग का बखशीश और टिप्स पर पालना गुलामी है । किंगार को गुस्सा आ गया ।

"ऐसा न करें, तो ये लोग भी तो ठीक से सब नहीं करते—कोई सुनेगा ही नहीं '

"यानी जिसके पास टिप देने का फालतू पसे न हो, उसे यहाँ आने का हक नहीं है ? उसे न खाने पीने का हक है, न अच्छी जगह उठने-बठन का !" उसकी बात में बड़बाहट आ गयी "बिल के पस हो न हो, लेकिन टिप जरूर हो ।"

इस पसनल क्यों बनाते हो किशोर ?" लीना ने निरुपम ब डग पर कहा बहरहाल, आपकी बात ठीक भी हो, फिर भी मैंने देखा है कि पसा आपसे छूटता नहीं है ।" लीना ने मेहता के बड़े हुए हाथ से पान लेकर मुँह भर लिया ।

किशोर की आँखों के आगे 'विवेयर आफ डग' का फाटक घूम गया बोला "लीनाजी, मुझे मिलते हैं दो सौ रुपये—सो भी जाज । और आपको रहने की आदत है उस माहौल में जहाँ हजार रुपये तनवा और डेढ़ हजार की ऊपरी आमदनी होती है—वे लोग पाँच रुपये के बिल पर एक रुपया टिप दे सकते हैं

उस दिन लीना की आँखों में आँसू आ गये थे, और घर आकर तो कूट कूटकर रोने लगी—रात भर रोती रही और किशोर डर बच्चे की तरह माफी मागता रहा ।

अन्तर उसे दया भी आती थी । लीना सब्जी बाटती या झाड़ू लगाती, सफाई करती, कपड़े धोती, तो किशोर का मन एक अजीब करुणा से भर भर जाता । बेचारी लाड-प्यार, नाज नखरो से पली लडकी वहाँ आ गई ! तब वह आगे-आगे सारे काम कर देता । वह कपड़े भीगे छाडकर जाती तो धोकर सुखा देता वह ब्रश करती तब तक खुद

स्टोव जलाकर चाय बना देता। यह गाना बनाती तो नहान से पहले धमरे झाड़ देता। लीना बितावे सोल पत् रही होती, और वह चुपके स धरतन मल डालता। हालाँकि यह चीज उसे और भी दुमती कि लीना जाग गयी है, फिर भी न-जानन का वहाना करके बठी पढ़ रही है। रजिन दरबार अनदगा करना मुश्किल ही जाता ता रुढता, और यह कहता "दखी लीना मुझे तो यह सब करन की आदत है। गुरु स विया है। मामी बीमार या बाहर होती थी, तो सब कुछ करता था। लेकिन तुमने तो रसाई म झाँदकर भी गही दता होगा।" उमवा गला रुच जाता 'तुम क्या सोचती होगी लीना। वहाँ 'लीना गहरी साँस लेकर पिहक देती।

जब यह सज सवरकर बाहर निकली तो बिगार उसे देखता रह जाता—हेयर स्टाइल, मचिंग सेस, हर चीज का चुगाव और स्तर—सभी म कुछ ऐसी नफासत और आगि जात्य रहता कि लगता वह बिगोर स बहुत दूर चली गयी है—अप्राप्य और दुल्म हो उठी है। उसे अपना आप बहुत ही छोटा और अकिचन महमूस होन लगता—बहुमुद ही मानो अनधिकारी गर और अजनबी बनकर उसे टगा-सा दखता रह जाता। उस क्षण उसे लीना के रोदय और सौन्दर्य-बाध पर गव मिथित सन्तोष उहर होता लेकिन पीछे कही रीढ़ के भीतर आशकित मय सुरसुराया करता—गचमुच वह लीना के लायक नहीं है? वहाँ वह, और वहाँ लीना। उरुर लीना भी तो अपने-आपको और उसे देखकर बनी-बनी सोचती ही होगी कि वह वही गलत कर बठी है जाने कसे उसे यह विश्वास हो गया था कि अब लीना को उसके साथ आन का अपसोस होने लगा है। इधर वह अधिक मुस्त और उदास रहने लगी है। वहाँ इस समय वह किसी शानदार गाडी मे बठी घूमने जा रही होती और वहाँ अब बार-बार घूप म रुमाल से गन्ने-बनपटिया का पसीना पोछती, धूल धक्कड मे रिक्श मे रुदी, पहिये स साडी बचाती चली जा रही है। साथ लगे इस बुद्धू, चुगद पुने मनूस और कजूस (या गरीब) को दखकर क्या हर क्षण धडक्ते दिल से यही नहीं मानती होगी कि हाय राम, अस वक्त कोइ जान पहचान का न मित्र जाये। हालाँकि वह खुद भी बहुत खमाल रखती थी कि जब किशोर उसके साथ हा तो सबसे अच्छे कपडा म हो मगर उसके पास अच्छे कपड थे वहाँ?

दबो, कल एक जहाज फग हो गया आई० ए० सी० का विस्काउण्ट था अखवार पढ़ते पढ़ते उसने मेहता और लीना को सुनाया। अबसर जब व सीना बठते तो बिगोर को लगता जस उसके पास बात करने का कोई विषय ही नहीं। अपनी इस कमजोरी को छिपान के लिए वह कुछ उठाकर पढ़ने लगता—हालाँकि एकाध बार लीना ने बताया भी कि यह बदतमीनी है।

'क्या था?' लीना स्टोव क पास थी, जस कम सुनती हा, इस तरह कान पर जोर दकर पूछा। बस भी स्टोव की आवाज रसोई म गूज रही थी। उसन डरते-डरते मेहता का देखा कि कहा सुन ता नहीं लिया।

“इण्डियन एयर-लाइन्स का विमान उड़ना या’ किशोर ने दाहराया। वह और मेहता आगन में मूढा पर बैठे थे। लीना रमोई में पास ही चाय बना रही थी।

‘विस्काउण्ट नहीं, प्रीफनर साहब वाइकाउण्ट बोली। लीना न हस कर कहा तो फिर वही वाई फोक्ल शीश और तुच्छता का अहसास कराती दा उपेक्षा नरी आसँ उसे तिलमिलाना छोड गयी।

“अरे हा हा, आप कावेण्ट म पडी हैं। जरा स्पलिंग तो देखो। किशोर ज़िद करता रहा।

‘मेहता साहब जरा दहे बतलाइए” वह वही से बोली।

मेहता अचक्का उठा। क्षमा भागने के लहजे में कहा प्रापेसर साहब, है तो वाइकाउण्ट ही।”

अरे इन अंग्रेजी शब्दों का कोई एक उच्चारण है?’ किशोर भडक उठा “अंग्रेज और अमेरिकनो की बात छाड दीजिए। इ गलण्ट में खुद हज़ारों शब्दों के उच्चारण तय नहीं हैं। एक अंग्रेज बोल्ता है डिक्शन दूसरा कहेगा डायरक्शन। एक कहेगा ऑफिन दूसरा बालेगा-आफिन। लिखा है स्पूटिनेट स्कीइंग—पड रहे हैं, लफिटनेट शीइंग। स्पलिंग है जी ए-ओ एल—बोला जा रहा है जेल। आई ट्रेट दिस लम्बेज जो सिफ कावेण्ट के बच्चा की बपौनी हो, यानी गरीब आदमी की पहुँच से बाहर हो—द लम्बेज आफ इम्पीरियेलिस्टम एण्ड इयूरोन टस।’ और इस शब्द के माद आते ही उसे लगा, जैसे वह मेहता और लीना को नहीं इन दोनों के पीछे वही छिपे खडे दीक्षित साहब का यह सब सुना रहा है। ‘साले हमारी जवान को कहेगे बर्ना क्युलर जानते हैं बर्नाक्युलर माने क्या होना है? बर्नाक्युलर मीन्स द लम्बेज ऑफ रोमन स्लेज जम जमातर के गुलामों की जवान”

उसके गुस्से पर लीना जोर से हँस पडी लेकिन इस पर इतना गुस्सा होने की क्या जरूरत है? अपनी गलती मान लीजिए न, और नाराज होकर भी वही भाषा बोल रहे हैं जिस पर नाराज हैं। वह हट्यो टिकाकर हँसती रही।

‘गटाप।” जाने उसे क्या हुआ कि जोर से उसने अखबार जमीन पर पटकवा और क्षटके से उठ खडा हुआ ठीक है, हम कावेण्ट म नहीं पड हैं। हमारे उच्चारण साराब सही, लेकिन इसी का वण्ट न तुम्हारा दिमाग साराब कर दिया है” और वह मेहता का स्त्राघ छोडकर बाहर चला आया—आत हुए कह आया, ‘मैं गरीब आदमी हूँ लीना लेकिन मेरी अपनी इज्जत है।”

बाद में अपनी उत्तेजना पर उस अफमोस होना रहा तीन चार दिन के तनाव रान घोने के बाद उसने खुद लीना स माफी मागी कि गलती उसकी थी, न मालूम उसे क्या हो गया था

क्या हो गया था नहीं, क्या होता चला जा रहा था—समझ में नहीं आता था।

उसे जैसे लीना से, उसके सामने पड़ने से डर लगने लगा था। लीना की एक खास तरह की हँस या चिड़ी मुद्रा है, जिसके सामने वह नवस हो जाता है और या तो कुछ ऊल जलूल वह बठता है या उससे ऐसा ही कुछ हो जाता है। उसे हमेशा खतरा रहता है कि न मालूम किसी मजाक या गम्भीरता में वह क्या-कुछ कह दे और लीना का चेहरा साबले गम्भीर चेहरे में बदल जाये और वहाँ बाई फोकल चरमा उमर उठे

वह अपनी थीसिस के सिलसिले में रोज साइको यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी जाता था, और लीना इम्तहाना की तयारी करती थी। प्रीवियस में जटठावन प्रतिशत नम्बर थे और अगर इस बार तयारी ठीक हो जाये तो कमी पूरी करके फस्ट-क्लास लाया जा सकता था। इसलिए नियमित रूप से भेदता की मोटर साइकिल दरवाजे पर पाँच बजे आ खड़ी हाती थी। तीनों साथ चाय पीते। उस क्षण लीना सबसे अधिक प्रसन्न रहती। वस प्रायः यह उसकी शिकायत रहती थी कि न तो हम किसी कहीं जाते हैं न किसी को चाय पर बुलाते हैं। तब उस खयाल हुआ था कि सचमुच उसका परिचय कितने कम लोगों से है—ऐसे लोगों से, जिनके साथ सम्पर्क रखने में लीना को प्रसन्नता हो। इसलिए वह अक्सर ही चुप रहता और खयाल रखता कि कहीं चाय से मुड-मुड का आवाज न हो या वह दाता के पीछे जीम लगाकर अपनी प्रिय चस्ती। चस्ती। न कर बैठे। खाने के बाद एक दिन यह परम तृप्त भाव से या ही दाता से जीम लगाकर सास खींच रहा था जिससे आवाज होती थी। लीना खा रही थी। अचानक बोली, 'फार गाइस सेव' यह मत करो—मुझ उलटी हो जायगी।' और तब से जब भी वह ऐसी आवाज निकालता कि लीना का यह वाक्य उसकी चस्ती। चस्ती। को बीच में ही रोक देता वह और महता कपडा की बातें करने, फिल्मों की बात करते दिल्ली और बम्बई की होटल की बातें करते—ड्राइविंग और पाटिया के दिलचस्प निस्ते मुनात मिसेज विंगार आपन रेस आफ रॉचीपुर दसा है? भुनाउ सदासीवाले विरस पर प्रेम किया है। और वह फिल्मा की कहानियाँ मुनात लगता। लीना उत्सुक मुग्धतासे मुनती रहती या कभी लीना मुनाती मुझ श्रीम खान का गीन जरा ज्यादा हा था फ्रूट श्रीम श्रीम-जली आइमश्रीम पता नहा एक दिन पापा का क्या मूझा—दस सेर श्रीम उठा लाये।

दस सेर ! मन्ना अयाह आदखय तिसाता माई माग !

'हाँ-हाँ दस सेर ! लाना उरगाह से बतानी कहते थे—आ भरकर खाला। एक बार खूब नीयत भर लो, तो नामल हा जाआग। यह पापा का मिद्धात था। — या— उन त्रिना दा घाडा की बास्की चार घाडा की बास्की आनी थी—और पापा न भर भर की घादरें उसी मितक की बनवा गी थी

वह ता बढा कामना मितक हुआ करता था ! महता प्रगता से बन्ना ।

रपद की ता पापा न कभी बिन्ता ही नहीं की। मगमल के परत शानो हवा

के गलीचे हैं उनके पास । आप सोचिए उन दिनों के दो हजार ।" उस समय वह किशोर की उपस्थिति भूल जाती । फस्ट क्लास से नीचे कमी सफर नहीं किया । और पापा सिगार पीने हैं—आप सोचिए अंग्रेज क्लकटर कहा करते थे—'मि० दीक्षित, आपके यहा जो सिगार मिलता है—वह हम इंग्लण्ड मे नसीब नहीं है।' घर के हर आदमी पर एक बरा तो आज भी है । पाच दस रुपया का तो हिसाब ही नहीं मागते ।

'कमाल है !' वं भाव से मेहता मुनता रहता । वह खुद अच्छे परिवार का था और तनखा के अलावा सौ दा सौ घर से मगाकर खच कर देता था । वह ता यहा सिफ इतजार का वक्त काट रहा था, वस्तुतः उस तो आगे पढ़ने के लिए इंग्लण्ड जाना था । माफ मुयरा स्माट मा नौजवान मुलायम घन बिना तेल के बालो का गुच्छा सामन भुका रहता और कभी वो या कमी टाई म वह सचमुच प्रभावशाली लगता था । अपन मस्से पर उंगली रखे अक्सर किशोर उसे देखता । साझ को प्राय वह सफेद पण्ट कमीज मे आता । आगन म ही नट लगाकर वेडमिण्टन कोट काढ़ लिया जाता—और घण्टा डेल् घण्टा दोनो खलते । मेरे यहा बेकार पडा था ' बहकर उमा बरले और शटल-वाक्स का पूरा डिब्बा लाकर रख दिया था—तब पढाइ होती थी । एक बार उमके आते ही लीना ने वाक्य अवूरा छोड दिया 'इह मिलता ही क्या है ?'

और इस सबम किशोर सचमुच अपने को फालतू ही पाता था । न उसे किसी ने दस सेर त्रीम लाकर दा थी और न टास्की की बड पीटम उसने देखी थी—उसके पास कमीज-कुरते तक सितक के नहीं रह पड़े ! उसे लगता—अगर मेहता लीना का क्लास फलो होता तो ? वह ये सारी बातें मुनता और दांत पीसता—शेखी यह बग सिफ शेखी पर खिदा रहता है । एक की बात मुनकर प्रतीभा करता है, दखें अब दूसरा पक्ष कौन सी शेखी इसके जबाब म खोजकर लाता है । मेहता के सने हुए बलने के डग और साडी का पल्ला कमर म खासकर बार बार झुडा खालकर बसते हुए लीना का व्यस्त भाव से खलना दखता, तो बचोट तीखी हो जाती—बही-कुछ गलत हो गया है । फिर किताब उठाने चुपचाप बाहर चल देता और 'जाईने-अकबरी' के अनुवाद म पढ़ने की कोशिश करता कि अकबर के प्रिय खेल क्या-क्या थे । उसे बार-बार के दिन याद आते रहते जब बी० ए० मे वह लीना का हिस्ट्री का पेपर तयार कराता था और लीना मुग्ध भाव से बरा म होठ खालकर उस एक्टक मुनती रहती थी मन होता था बात आधी छाटकर उन हाठों को धीरे से चूम ल बालेज की मोना लिखा फनहपुर सीकरी म खड़ी नूरजहाँ बन जाती ! मेहता के मुँह स बडले को भी ता ठीक उमी तरह मुनती होगी—और मेहता तो किशोर से हर हालत मे आगे है औरत का मन एक बार अगर आ सकता है, तो ! खुद उमके पीछे भी तो वह पागल ही हो उठी थी । कमी भूल सकता है वह लीना के चेहर के उस भाव को जब मेहता ने कहा था, 'मिसेज किशोर आपकी अग्रजे तो सचमुच कमाल की है—मन होता है घण्टो मुनता रहूँ कुछ भी

कहिए साहब, कावेण्ट की बान ही जीर है । जो उन स्कूल म एक बार पढ लेता है जिंदगी भर उमकी छाप बनी रहती है ।' और तब एक सरत चेहरा, सावल हाठो म दबा स्टेट ऐक्मप्रेस से निकलता धुआ किशोर के मन मस्तिष्क पर छा गया । विशार डरता था और किसी भी तरह कहन की हिम्मत नहा जुटा पाता था— गट जाउट आफ माई हाउस यू स्काउण्टल ।

लीना का जन्म दिन था । वह बठा-बठा काच क गिलास म ब्रेड पिस रहा था । लीना नहा धोकर साडी लपेटे निकली थी । गीले बालो को सिर पर पावती की तरह बाध लिया था । भीगी साडी को डारी पर फलाती हुई बोली अभी प्राक्नेमर महता पाम पोर्ट के सिलसिले म दिल्ली गये थे । कहते थे एक डाक्टर है, जो शतिया मस्ता दूर कर देता है ।

“बीस बार ता दूर करा लिया यार । लोग कहत हैं घोडे का बाल बाँधो— फिर नहीं हाता लेकिन हर बार जा जाता है । इसीलिए मूछे रखनी पडती हैं वह जफसोस से बोला ।

“एक बार दिखा लेने मे क्या हज है ? लीना ने स्नेह से कहा जब वे खुल जाकर डाक्टर से मिले हैं इतनी परेशानी उठायी है तो एक बार यह भी कर देगो और पता है हमारे लिए जन्म दिन पर क्या लाये हैं ?

क्या ?” उसन हाथ रोककर उत्सुक प्रश्न-मुद्रा स उभर देता ।

लीना अदर स एक डिब्बा उठा लायी । ब्राउज शोड की रा मिल्क साडी थी । लीना बता रही थी ‘दिल्ली म तो आजकल शेज है रा मिल्क ।’

विशार की हिम्मत छूटकर बपट्टा देने के नहा पड रही थी । गूरे गले से गन्ध छलकर कहा यह तो बडी वीमनी हागी । सो मवा-सो मे कम क्या होगा दाम ।

दाम ता नहा बताये लेकिन हाँ क्वास कम क्या हागी ! एक ग्लाउज-पीस भी है । उस्ताह और आह्लाद स लीना ने गाडी के नीचे रखे ग्लाउज-पीस को सीध लिया हमार पास तो मच अच्छी गाडी भी नही रह गयी कोई । बही गागी के बगल की चार ट पडी हैं ।

कम ? विशार ने भोलेपन म पूछा गाढा-ग्लाउज ही गिय है ? और कपड नही गिय ?

लीना जमो म्ना थो बसो ही रह गयी । बडी मुर्चिल स सिर्फ स्तना ही पूछा क्या मतलब ?

विशार न कोई जवाब नहा गिया और डिब्बा एक आर गिनगारर बगल पिनन मगा । तमा उतर कथा का छूतर करीब-नराय चीन्ता आवाज में लाना ने पूछा मैं पूछता हूँ मतलब बताओ ?

गन्ध-म विशार न उभर मुह धुमाया और दुःखी ऊँची आवाज म दुःख

‘मारोगी मुझे ? लो मारगे नहीं बताता मतलब ? कर लो जो तुम्हारा मन हा। मुझे भी बाप का चपरासी समझ लिया है, जा घुडकिया मे था जायेगा ? अथा हूँ ? मुझे दिखायी नहीं दता ? हूँ मुझे मिलता ही क्या है ’

लीना का स्वर गिर गया। वह न चीखी, न चिल्लाई। बहुत सन्त जावाज म वाली “देखो विशार आज स—बल्कि इसी क्षण से हम लोग साथ नहीं रहगे। मैं भी सोच रनी थी कि अब तुमसे बात कर ही ली जाये। न तुम अपने हो न बहरें। तुम सिफ इन्फिरियारिटी काम्प्लक्स के मारे हुए हो। इसलिए तुम्हें मेरी हर बात वह नहीं लगती, जा होती है। उसके पीछे और-और बातें दीखती हैं। मैं समझती थी कि मनस, बातचीत उठन-बठने के तौर-तरीके और व्यवहार ऐसी चीजें हैं जिन्हें बहुत जल्दी बदला जा सकता है। सीखा और भुलाया जा सकता है। लेकिन इस काम्प्लक्स का ता कोई दवाज ही नहीं तुम्हें मेरे हँसने-बोलने चालने-मचने शली और दिखावा लगता है ”

हा हा, मैं जाहिल हूँ, बेवकूफ हूँ।” झटके से विशार उठा और पूरी ताकत से बाँच के गिलास को जमीन पर पटककर धकता रहा। लाट साहब की बच्ची कहती हैं हमें इन्फिरियारिटी काम्प्लक्स है ! हमम बातचीत उठन बठने के मनस नहीं हैं ! हम कन्जूस और बदजवान हैं बड बाप की बटी और मिठ-बाली तो आप है ! या ता जो मन म आये, सो करने दो या ये सब सुनो जिन्दगी तबाह करके रख दी भाई भामी के पास नहीं गये। मा-बाप की तरह उहान लिखाया-पढाया और गादा के बाद से उहे पेले की मदद नहीं कर सके अपने लिए एक रूमाल नहीं लिया। कुछ बचे, तो लें दिन रात कॉलेज म मेहनत करो, थोसिस के बहाने न्यूशन करने जाया और यहाँ दिल म भरि है कोठी बँगला, नौकर चाकर बाप की नवाबी !”

देखो विशार, पापा को

“बीस बार कहूँगा। रोक तू मुझे रोक। नकलची बादर कही क। साले अँग्रेजा की नकल कर-करके, उनके जूत चाट चाटकर आज साहब बन गये हैं हा-हा हा साहब ! दस सर श्रीम लाये थ बोस्की की चादरें दा दो हजार के गलीचे ।

पता नहीं क्या-क्या बकता-बकता वह बाहर चला गया और मारे दिन अपन आपसे बातें करता सहको पर भटकता रहा। दिन छिपे के बाद जब डरता डरता आया ता दरवाजे पर ताला था और लीना चली गयी थी

घह ‘पास्ट’—अतात आठ साल पहल का है। डूमरा अतीत है आठ साल का यह काल—पानी अगले साल उसके खुद बलकता चने आन के बाद बीता हुआ समय ! उसका एक विद्यार्थी बहुत बडी जगह पर-जमाई बनकर आया था, और उसने किन्तोर को चार-सौ का स्टाट दिया था यह इस अतीत का प्रारम्भ है।

‘सारा खेल रुपये का है और अब रुपया बमाना है’ उसन निश्चय किया और

भूत की तरह रुपये के पीछे लग गया—भूल गया क्या कोई लीना है कहीं कोई दीक्षित साहब हैं और कहीं कोई अतीत है। एक नौकरी पर पाँच टिकाकर दूसरी का सौदा होना रहा पहला तल्ला दूसरा तल्ला और एक दिन लिफ्ट उम दमवें तल्ले के इस घम्बर में ले आयी जिसके दरवाजे पर लिखा था, 'जनरल मनेजर

मगर नहीं, सम्पक लीना और दीक्षित साहब से न रहा हो, और उसने दो साल पता न लगाया हो कि लीना कहीं है—भूला वह दोनों म से एक को भी नहीं था। जाज तो उसे लगता है, लीना नाम का एक परदा था—जिसके हटते ही उसने अपने-आपको दीक्षित साहब के रु-व रु गडे पाया। परदा कहना भी गलत होगा वह सिफ एक मेज का तरता थी और उस पर बोहनियाँ टिकाकर वह और दीक्षित साहब पजा लडा रहे थे—अपनी-अपनी शक्ति आजमा रहे थे। जिस दिन उसने जाना कि लीना ने लक्करर शिप ले ली है उस दिन उसे सचमुच बहुत सतोष हुआ। 'चस्मी ! चस्मी !' की अभि-व्यक्ति के साथ उसन महसूस किया कि अपराध का बोझ उसकी छाती से दूर हो गया है। दूसरे तरीको से उसने यह सदेश भी भिजवा दिया कि लीना चाहे तो किसी के साथ—चाहे तो मेहता के साथ ही—मटिल हो जाये उसे कोई आपत्ति नहीं होगी। वह चाहेगी तो कानूनन भी मरसक सब कुछ करने को तयार है उसे लीना से कोई शिकायत कोई द्वेष नहीं है। वाद म सुना, मेहता इ ग्लण्ड से ही किमी को ले आया है

वहरहाल, इस निश्चय के साथ ही उसे लगा कि वह लीना को भुला सकने में सफल हो गया है। सभी से गलत निष्पत्ति हो जाते हैं—पूरे होश हवास म सारा आगा पीछा सोचने के बावजूद ! हम लोग एक दूसरे के लायक नहीं थे। यो अवसर ही उठते बढते खाते पीते लीना क साथ वाले दिना की तस्वीरें लिमाग में बौघती थी—और आज यह आक सकना उसके लिए असम्भव हो गया है कि कितनी घटनाएँ और बात वास्तव में हुई थी और कितनी उसकी अपनी कल्पना की उपज हैं। उनकी असलियत म उसे खुद भी विश्वास नहीं है और उसने यह तो मान ही लिया है कि उन दिनों जिस अस्वाभाविक मानसिक तनाव और दबाव स वह गुजर रहा था उसके रहते हुए बातों को सही परिप्रेक्ष्य में ले सकना सचमुच उसके लिए असम्भव था। साथ ही वह उस बात का भी अच्छी तरह जानता था कि लीना मर जायेगी आत्महत्या कर लेगी लेकिन न तो किसी के साथ सटिल होगी न उसक सामने भुकेगी भुक्ना पछताना समझौता करना उसके मून में ही नहीं है। एक तो वह खुद इतनी निष्पत्ति दद और फिर उसके अपसारी-वग के सस्कार जो व्यक्ति को तोड देत हैं बिसराकर चूर चूर कर देते हैं लेकिन भुक्ने नहीं दते उसकी रग रग में सिगरेटों से काले-पडे हाठ और बार्ड फोक्ल चरम स झाकती काली खुर्राट आँखें तरती हैं

किसी ने बताया था कि दीक्षित साहब हाट फेल हो जान स चल बस है। न

उसे अफसोस हुआ, न खुशी। वे रहे १ रहें—उसकी दुनिया में कोई पक्क नहीं पड़ता। हा वह प्रतीक्षा जरूर कहीं मन में उन दिनों करता रहा कि उनकी मृत्यु की सूचना तो कम-से कम उम्रे मिलेगी ही। लेकिन कोई सूचना नहीं दी गयी। 'स्टेटसमन' के पसल कॉलम में उनके न रहने की सूचना को जरूर पक्का कर लिया। लीना ने मसूरी में हैबमन्स के सामने चलते हुए कहा था (उसे अभी भी वह जगह याद है) हमारी अपनी स्वतंत्र जिंदगी है। पापा उसमें कहा करते हैं ' लेकिन वह एक झूठ था—बहुत बड़ा और यंत्रणा दायक झूठ क्योंकि जिस दिन उन्होंने लीना को स्टेशन पर विदा किया था पांच हजार के साथ बंद लिफाफे में बठकर वे खुद किशोर की जिंदगी में भी घुस आये थे और अनचाहे महमान की तरह उसके अस्तित्व पर हावी हो गये थे—जिनसे सान जन्म में वह जाने को नहीं कह सकता था और जिनकी उपस्थिति उसकी नस-नस को तड़काये दे रही थी

हा जिस दिन लीना नाम का परदा बीच से हटा या उमने जाना कि लीना सिर्फ मेज का सक्ता थी और वे दोनों उस पर अपनी-अपनी कुहनियाँ टिकाये श्वित आजमा रहे थे उमी दिन महसूस किया कि उसकी असली लडाईं दीक्षित साहब से है

वह मनजर हुआ, तो पहली बात उसके मन में उभरी—दीक्षित साहब अब तो कमिश्नर होकर रिटायर हो गये होंगे। इनकम टक्स के मामलों में तो उनका कोई जवाब ही नहीं है। सरकारी आदमी रहे हैं—बीस ताल्लुकात होंगे और सारी भीतरी पोलें उह पता होगी सेठ से कहकर वयो न उह यहाँ बलुवा लिया जाये, उसके नीचे काम करने और बेग्नर में आन से पहले खट-खट करके कहा करेंगे 'मे आई कम इन सर ?' वह बठा-बठा जाकी फाइल के बागजो पर दस्तावत करता रहेगा और वे अदब से एक ओर खड़े रहेंगे। वह भारी आवाज में कहेगा, 'मिस्टर दीक्षित आपने वह जुपीटर-प्लार्डबुड का एनुअल स्टेटमेण्ट तयार नहा कराया ? उस परसा जाना है। उसकी ही वजह से नये परमिट बहुत डिले हो रहे हैं—' और कल्पना में मेज के पास खड़े दीक्षित साहब से यह सब कहकर उसे आत्मिक प्रमनता हुई। तभी गका हुई—उनके सामने वह यह सब कुछ कह पायेगा ? उस समय न उसका स्वर टुकलायेगा, न जबान लटखड़ायेगी ? असम्भव ! वे बात जसी तज निगाहें—वह चेहरे की अभेद्य भाव-हीनता उस सबका सामना वह कभी भी नहीं कर पायेगा यहाँ आकर व जिंदगी-भर कोई काम १ करें—वह उनके सामने कभी भी जबान नहीं खोल सकेगा। चौथे-पाँचवें क्लास में जिन मिमियन साहब से उसने बेन लाये हैं, उन्हें आज भी चाहे सवा-सी रुपये ही मिलते हा, उनके सामने उसकी आँख नहीं उठ सकती। वह भय अब उसकी प्रकृति बन गया है।

उसे याद है चुपके-स पीछे वाली बरामदे के पास वाली तिड़की के नीचे वह

साइकिल गड़ी करता और बिना जूता की आयाज किये लीना की पगल चला जाता। बाहर निकलता, तब तब दीक्षित साहब आ गये होते—या तो बीच वाले कमर में चाय पी रहें होते या बाहर जलसिगियन कुत्ते को लिए लाने में चटल बदमी कर रहें हाने। माती को तरह-तरह के आदस दे रहें होते। चोर की तरह वह बरामदा खतरता—बड़ी निगाह न पड़ जाय उम बुला न लें। साइकिल लकर ऐसा हड़बडाता हुआ निकलता, माना व भी पीछे पीछे आ रहें हो। बाहर सड़क पर आकर गुली सॉम लेता और फिर इस तरह चटकता जस पानी की तम घाट सतह के नीचे दबा जा रहा हो वे देख लेते ता बुला भी लेते किशोर घट कस हा ? हा चाय पी ला । उनके सामने रहना कितना बघटकर अनुभव था । व बहुत ही कम बोलते थ सिगार को होंठों में धुमाकर पपोलत हुए कुछ सागते रहने बार-बार माचिन जलाने रहते—तकिन व दो क्षण उसके लिए हजार रम्यहाना में बठन स ज्यादा दुस्सह हो उठत। जो टीक ह । कहने मे उस चक्कर आ-जाता, हक्लाष्ट बड़ जाती और पिडलिया तक पमीना तर आता। दीक्षित साहब ने कभी उससे कुछ नहा कहा आज लगता है कुछ न कहना उनका बहुर रिजव रहना नहा उस बात करन लामक न समजना था। उनका अपसरी दयबा बाहर का रोय और घर का—लीना तक का—मय कुछ इस तरह उमकी चेतना पर छा-गया था कि वह मजबूर हो उठता था

दूसरो द्वारा सौपा गया मय व्यक्ति को व लिए कितना घातक और प्राणात्क हो सकना है, यह बात तक स चाहें समझ में न आती हो, लेकिन खुद किशोर जानता है, उसकी सारी शक्तियाँ इन आठ वर्षों में सिर्फ उमी मय स लडने में लगी रही हैं नौकरियाँ बदलना, सासारिक दृष्टि में सफल हात चले जाना तो सिर्फ उम मय के सामन बार बार पराजित हाकर नये नये दृष्टियारो से लडने जसा रहा है। ईसफ के मेंढक की तरह वह मानो इन एक मे एक ऊ की जगहो पर खड हो होकर हर बार अपने-आपस सवाल करता क्या बल कतना बडा था ? क्या अभी भी वह दीक्षित साहब से डरता है ? क्या अभी भी वह उनसे छाटा है ? तत्र उसे खयाल आता कि व ता जान कच व गुजर चुक है

बड़ी-बड़ी पार्टिया में वह कुल्ला से दुरी कांटा का इस्तमाल करता कीमती घराबे पीता, कोई पुर मजाक बात कहता या रस्तराओ में पाच पाच दस तस रूपया की टिप छोडता बयरा चपरसिया क सलाम लता तो वहीं बाई फोकल घरम स भावता दो आँखें—आँखें नहीं, आँखा का निराकार अहसास हाता और उह यह चुनौती देकर दिखाता रहता—तुमने कभी पत्रह रूपया की टिप छोडी है ? मन का गहगई में उस लगता ही नहीं था कि व नहीं हैं । और ऐस मोको पर वह टीक वही मुदा धारण करन की कोशिश करता जो उसफ हिमाक में दीक्षित साहब ऐस मोकों पर धारण कर सकत थे—वही सचत लापरवाही हजामत बनात ममय घण्टा वह अपने चहरे का अलग-

साइकिल खड़ी करती और बिना जूतों की आवाज किये लीना को पगने घन्ना जाता। बाहर निकलता तब तब दीक्षित साहब आ गये होते—या तो बीच वाल कमर म धाय पी रह होते या बाहर अलसगिनन बुत्ते को लिए लान म चहल बदमी कर रहे हात माली को तरह-तरह के आदग द रह हात। चार की तरह वह बरामदा उतरता—वही निगाह न पड जाय उमे बुला न लें। साइकिल टेकर ऐसा हड्डनडाता हुआ निकलता माना ये भी पीछ पीछ आ रहे हो। बाहर सडक पर आकर गुली राम लेता और सिर उस तरह झटकता जस पानी की दम घाट सतह के नीचे दबा जा रहा हो वे देख लेते ता बुला भी लेते विशोर बट कस हो? लो, धाय पी ला। 'उनक सामने रहना कितना कष्टकर अनुभव था। व बहुत ही कम बोलत थ सिगार को होठा मे घुमाकर पपोलत हुण गुञ सावते रहने बार-बार माधिम जलाते रहते—लेकिन वे दो क्षण उसक लिए हजार वस्तुहानी म बठने से ज्यादा दुस्तद हो उठते। जी ठीक हूँ। कहने मे उसे चक्कर आ-जाता हकलाहट बढ़ जाती और पिडलिया तक पसीना तर आता। दीक्षित साहब न कभी उसस कुछ नहा कहा आज लगता है कुछ न कहना उनका बहुत रिजव रहना नहीं, उस बात करन लायक न समयना था। उनका अपसरी दबदबा बाहर का रोव और घर का—लीना तक का—मय कुछ इस तरह उसकी चेतना पर छा गया था कि वह मजबूर हा उठता था

दूसरो द्वारा सीपा गया मय ब्यक्तियो के लिए कितना घातक और प्राणातक हो सकता है, यह बात तक से चाहे समय मे न आती हो, लेकिन खुद किशोर जानता है, उसकी सारी शक्तियाँ इन आठ वर्षों मे सिफ उसी मय से लडने में लगी रहीं हैं नौकरियों बदलना सासारिक दृष्टि में सफल हाते चले जाना तो सिफ उस मय के सामन बार बार पराजित हाकर नय नय हथियारा से लडने जसा रहा है। ईसप के मडक की तरह वह मानो इन एक से एक ऊँची जगहो पर लडे हो होकर हर बार अपन-आपस सवाल करता क्या बल इतना बडा था? क्या अभी भी वह दीक्षित साहब से डरता है? क्या अभी भी वह उनस छाटा है? तब उस खयाल आता कि व ता जान कब क गुजर चुक है

बडी-बडी पार्टिया म वह बुगलता से सुरी काँटा का इस्तेमाल करता कामतो शराबें पीता, कोई पुर मजाक बात कहता, या रेस्तराँओ म पाच पाँच, दस दस रुपया की टिप छाडता, बयरा चपरासिया क सलाम लेता तो वही बाई फोक्ल चरम स शक्ति दो आँसों—आँसों नहीं आँता का निराकार अहसास हाता और उह वह चुनौती देकर दिखाता रहता—तुमन कभी पद्रह रुपया की टिप छोडी है? मन की महुराई म उस लगता ही नहीं था कि व तही है। और ऐस मौकों पर वह ठीक वही मुग्य धारण करन की कोशिस करता जा उसके हिमाव स दीक्षित साहब ऐस मौका पर धारण कर सकत थे—वही सचेत लापरवाहा हजामत बनात समय धण्टो वह अपन चेहर का अलग-

अलग कोणा से देखता—विधर से वह दीक्षित साहब जना रौंटीला लगता है उसने चेहरा अधिक रौंटीला करन के लिए मोठे फ्रेम का चश्मा भी ले लिया था जिसे वह झटके से उतारना जीर लगाता था

हाल एण्डसन स हजार रुपये का नया सूट बनकर आया तो पहनने से पहले उसने मन-ही मन कहा, 'तुमन देखा भी है ऐसा सूट ? पहना तो मुँह से निकला 'आगें पटी रह जायेंगी !' लकड़क बरदी म जब डान्बर अदब से लपककर बार का दरवाजा खोलता, तो वह किमी से नि शब्द कहना 'अभी तक उसी हिलमन को धकेलते होंगे !' किमी कमचारी की गलती पर उसे माफ करने को मन होता तभी ध्यान आता, 'वे' उस समय क्या रक्या दिखान ? और तभी भारी सख्त आवाज उसके गने से निकलती तो-तो, मिस्टर सेन ! मैं पूछता हूँ, ऐसा हुआ ही क्या ? आप जानते हैं, मैं गलती किसी भी हालत में बरदास्त नहीं कर सकता ' उसे लगता, कहीं इस बात को वह भी सुन रहा है और आवाज की मस्ती बढ़ जाती किमी बहुत जरूरी काम से कोई छुट्टी मांगता तो ऐप्लीकेशन स्वीकार करते वकत उसे सिगरेट वाल होठो का ग्याल हा आता और हाथ रक जाता

शुरू से ही एक अजीब विद्वेष भरी घणा भर गयी थी उस, नौकरी चाहने वाला के प्रति—ऐसे प्रायना पत्र वह बिना पढ़े फाड देता और कोई मामने ही पड जाये, तो बेमुरबती स कह देता, भूखे मर रहे हो, तो यहा क्या करन को रुके हो ? अपने घर क्या नहीं जाते ? कोई जरूरी है जि कलकता रहकर नौकरी करो ? कलक्टर के दामाद हो, जो थोड म काम नहीं चलता ? मैं न कहां न महा कोई जगह नहीं है। नहीं सुना ?' और बात पूरी होन से पहले ही बाहर खड़े बरे के सिर पर घण्टी घनघना उठती वह होता तो ठीक यही व्यवहार करता—मैं तो चुप हूँ, 'उमने तो इतनी देर में धक्के देकर निकलवा लिया होता। उसे पुरसत थी इतना सब बकवास सुनने की ? इण्टरपू म जान बूझकर जाडे पैदे प्रश्न पूछकर प्रार्थी को नवस कर दन में उसे अद्भुत त्रूर सतोप मिगता ऐसे लोगो को तो बरदास्त कर सकना ही उमके लिए मुश्किल था जो हथलात हैं, बात ठीक स नहा कर पाते, पमीने-पसीन नो जाते हैं, मसले हुए बिना इस्त्री वे, सस्ते स कपडे पहनकर आते हैं और वाइकों के विस्काउण्ट बोलते हैं—वहाँ उमे बर्षों पहले का किशोर दिग्गम देता है—वह उसे बिलकुल-बिलकुल नहीं रगना चाहता म किशोरा को धरलश तरे का कोई हक नहा है। ऐसी परीक्षा म असफल हर प्रार्थी उसे फिजूल पार करे तरे पर वह जब बहुत चिन्ता-

सिगरेट पीते-पीते अचानक उसे ग्याल सरे तरे पर वह जब बहुत चिन्ता-मग्न होता तो आधी पी हुई, सिगरेट को ही देता था। झट उसका हाथ नो बग पी हुई सिगरेट को ऐस-इ म मरोड मे भी-सा स्याल आता—ये बारह पने कमी बहुत कामनी थे। कनी-ति-उ-ने

उसे ध्यान आता कि 'उत' रुपये की चिन्ता ही नहीं थी, ता वह घटये-स रुपये लिखकर दस्तपत्र कर देता—'बह उससे' किस बात में कम है ? अचानक वह रुक होकर बाने करता तो सिगरेट का टिप्पणी उभी तरह उसका हाथ में खलता, जस लीला को जिदा परसे समय 'उसे' करते देगा था । स्टेट-रेकमप्रस के सिवा कोई सिगरेट जवान पर चन्ती ही नहीं थी । जब उसने पहले पल में उचकाकर चकार करना सीखा था ता अनसर उस दां बात साथ याद जाती थी—जिस फिल्म में या व्यक्ति को उसने इस तरह कभी उचकाकर इकार करत देगा था, उसरी कसी मूवगूरत नकल की है, दूसरी यह कि 'तुम' ता अभी भी मिर हिलार इकार करते हमे—मोल्हवा सदी का तरीका । कीमती रेशम का डू सिंग गाउन पहनकर मिगार होठा में घुमा घुमाकर पपोलते हुए, जब वह विचार मग्न बालकनी में खडा होता तो कई क्षण उसे भ्रम हा जाता मानो 'वह' खुद दरवाज पर ही ठिठका खडा है या डाइग्लूम में प्रती ता कर रहा है और यह धमन वाला व्यक्ति स्वयं नहीं—दीक्षित है ! लगता कमे आम विश्वास और रोव से वह चहल कदमी कर रहा है—जसे एरिस्टोवोसी उसके धन की बू द बू द में घुल गई है—ऐसी धान से भला 'वह' क्या खाकर धमेगा ! कभी किसी कमजोर क्षण में अपने आपसे एक सवाल करता—उस दीक्षित का का भूत तो नहीं आता ? गायद इस ही भूत आना कहते हैं ? फिर अपने को विडक देता भूत भूत

तुम्हरे बाप न भी कमी यह जहाज देखा है ?' बाइग फ़ोन में कदम रखत ही पहला वाक्य मन में जाया । किसी दूकान के सामने से गुजरते हुए कमी बिना चीज को खरीदने की जरूरत महसूस होती दो एक कदम उधर बढ़ाता भी—तभी ध्यान जाता वह इस दूकान में कदम रखना अपनी वैज्जती समझता—और वह उल्ट पाव लौट जाता । झाइवर को नोट देकर भजता । किसी भी व्यक्ति को देखकर पहला प्रश्न मन में उठता—जिसे वह किसी न किसी तरह से पूछ ही लता—किस कितना मिल्ना हागा ? वह जादमी की कीमत उसको मिलन वाले पस से लगाता । ज्यादा पस मिलन वाले के प्रति अपन लापरवाह व्यवहार का उस सचभुच जफसास होता ।

सिनेमाओ में मगजीना में जासपास की दुनिया में वह ध्यान से देखता सुनता कि ऊंची पास्ट जोर पोजीशन वाल लाम कम बोलत हैं कसे हसते हैं किस समय उनक चेहर पर क्या भाव रहता है कस खड हात हैं और काम तथा आराम के समय उनक क्या क्या पोज रहते हैं । और जब उन्हें विध्याज सरलता से नकल कर लेता ता सुनाता सुना साह्य बहादुर के नये अपसरो के उठन बठन, बोलने चालन के ढंग हैं ! तुम सोहलवी सदी के अग्रोजी की नकल करके अपन को बडा माडन लगात हो । नीच वाले कहत बास बडा सस्त है ! ता मन में कोई कह उठता देखा उसे कहत है अपसरो ! उस गांव में तुम राजा बन बठ हा । यहाँ आओ तो आटा टाटा का भाव पता चले ! फिर सताप से उसका चहरा खिल उठता, द रिम्पकट आइ बमाण्ड बाज यद

एन अनरीय ग्राइड ड्रीम फॉर यू *★

जब कभी वह घबरा जाता, या परेशानियों से बेचन हो उठता और उमक घुटन जवाब दे जात, तब वह 'उसके उस सुप्रीम-कार्ड फेटेस का ध्यान करता, और सचमुच ही मन में एक उत्साह और शक्ति भर उठती। चेतना में कभी प्रसन्न-मुख का विस्मय दण भी आता—कसी अजीब बात है ! मैं 'उसी के' हृदयारो से उससे लड़ रहा हूँ सफलतापूर्वक लड़ रहा हूँ

इस प्रकार एक अनवरत, अधोपित युद्ध था, जो हर पल अस्तित्व के रेशे रेशे में चल रहा था और उस की उपस्थिति ही उसकी जीवनी शक्ति का पर्याय बन गयी थी, जो घोंड पर चढ़े उद्वत सवार की तरह ऐडें मारती थी, कोचती थी—और यह सब उसके लिए सास लेन जसा स्वभाविक हो उठा था

लेव से उठकर किशोर गाडी के पास आया तो उसका सिर घूम रहा था अयमनस्क भाव से दरवाजे के हैण्डल वाली चाबी का सुराख टटोलता रहा फिर इजन स्टार्ट करके देर तक यो ही बठा बाहर देखता रहा अत्यन्त तटस्थ, निर्वेद जसे ऊँचाई पर खड़े होकर नीचे घाटी में पड़े घायल, पस्त गिपाही को देखकर मन में करुणा उमड़ आयी है। उसकी आँखें फिर सजल हो आयी—दो दुष्ट प शक्तियों के बीच लीना एक निरीह लड़की लीना—पिस गयी !

'क्या हम जतीत का भुला नहीं सकते ?' किशोर को लगा, यह लीना न माफी नहीं मागी—पहली बार दीक्षित साहब के वास्तव में मर जान की खबर दी है ता सब ही ताव्रत आजमाता दूसरा हाथ लीना का नहीं था ? लीना तो सिर्फ मेज का एक तस्ता थी—वह दूसरा हाथ 'उसका' था बेचारा ! उसे पहली बार लगा—महाराणा प्रताप के टूट जाने की खबर से अकबर को कसा लगा होगा एक वीर प्रतिद्वंद्वी की पराजय पर कसा लगता है

फ्लट पर आकर उसने सबसे पहले रामन का फोन किया "रामन, सुबह बटन को फोन करना है दिल्ली मैं शायद नहीं जा-पाऊँगा। तबीयत अच्छी नहीं है फिर बातें तो सारी अंतिम रूप से बड़े वाबू को ही तय करनी हैं—मैं सुबह उनसे बातेंकर ठूँगा '

फिर मानो अपने को जसन्तस उठाकर उसन पलंग पर डाल दिया। फेफड़ों में गहरी साँस लेकर धीरे धीरे छोड़ी, तो महसूस हुआ, वह बहुत-बहुत थक गया है तीस पतीस की उम्र तक आल्मी में उत्साह होता है और हर नया जगह उसे ललकार कर बुलाती है चालीस-बयालीस तक थकान शक्तिया को चूस डालती है ऐसे ढीले तन और मन से अब जिन्दगी का ढर्रा बदलना नये सिरे से नयी जिम्मेदारिया को ओढ़ना और फिर आखिर उस अब जरूरत भी क्या है ? 'वह' अब रह ही कहा गया जो

* मेरा जो रोव है, वह तुम्हें सपने में भी नसीब नहीं था।

सेलर

उस दिन शीशे में मुँह देखते समय अनायास ही जब उसकी नजर अपनी आँखों पर पड़ी तो लगा, जैसे कुछ खो सा गया हो। कम खोया, यह पता उसे नहीं चल सका, क्योंकि पिछली बार शीशे में जब उसने अपनी आँखें देखी थी, यह कोशिश करने पर भी उसे याद नहीं आया। कुछ देर तक उसी प्रकार एक हाथ में शीशा लिये वह अनिश्चित, उदासीन भाव से देखता रहा—खुली-खुली, गूँथ-सी आँखें जैसे दो दरवाज़े अपने आप खुल गये हो जिनके बीच से दूर दूर तक फला उजाड़ दिखायी देता है।

और उस दिन, इतवार की उस सुबह, कम्पनी बाग में यदि कोई उसे देखता तो उसकी आँखें उस पर एक ऐसी अमिट छाप छोड़ जाता, जो किसी अदृश्य छाया की भाँति उससे चिपटी रहती।

परन्तु उस दिन कम्पनी बाग में लोग नहीं थे। अकेले उसने सुरक्षित महसूस किया। दो घास के हिस्सों के बीच बनी पगडंडी पर लाल बजरी उसके परो के नीचे चर चर करती रही। सूरज की तिरछी किरणें यूकलिप्टस के लम्बे पेड़ों के ऊपरी भाग पर चमक रही थी। और फूल थे लाल हरे पीले। दो चार के अति रिक्त अथवा फूलों के नाम उसे मालूम नहीं थे, न कभी इसकी आवश्यकता उसने महसूस की। उस सुबह हवा ठंडी थी।

उस याद आया कि प्रातः शीशे में उसने देखा था कि आँखा में से कुछ गिर गया है या उही में कुछ खो गया हो। परन्तु उसने चिन्ता नहीं की।

फिर सुबह की ताजी हवा में वह सब भूल गया। उसके बाल हवा में उड़ने लगे, रस्सियों के खुले सिरे की भाँति। काल बालों में जब पहली बार उसने कुछ सफेद बाल दले थे, तब भी एक हाथ में शीशा पकड़े वह घनी उदासीनता के घेरे में सिमट गया था। अब उनसे अभ्यस्त हो गया है। आँखा से भी अभ्यस्त हो जायगा।

लगभग एक ही मास तो हुआ, ठीक से उसे याद नहीं आया, जब समुद्र ने अपने कमर में बुलाकर छोटी-सी भूमिका के बाद कहा था कि अपने और अपने पुत्र के साथ कौन सी रथय वह हर महीने देता है व इस बढ़ती हुई महंगाई में पर्याप्त नहीं है। अपने बचन का सत्य साबित करन के लिए उन्होंने आटा, दाल, घी, चावल आदि का नाम बतलाय थे। फिर बिजली पानी महरी और उसका कमरा और उसकी मुक्ती

हुई आँखें देखकर दबे स्वर में उन्होंने यह भी कहा था कि उसका पुत्र बड़ा होता जा रहा है, जिसे उमकी खुराक भी बर्ती जाती है। उसे चुप देखकर वे आत्मीयता भरे स्वर में कहने लगे, ' मैं अकेला होता तो कोई बात नहीं थी। तुम्हारे साले भी अब बड़ हो गये हैं, उनकी सत्तान फल रही है और अपनी बर्माई में से वे किसी दूसरे को खिन्ना नहीं चाहते। और आजकल तो अपने खून के रिस्ता तक को कोई नहीं पूछता। फिर बटा ' एक क्षण रुककर कहा था, "अलग मकान लेकर रहते तो क्या सौ रुपया में गुजारा होता ? फिर यहाँ सब तरह के आराम हैं, अपन घर की तरह तो सब कुछ है। तुम्हारी सास तुम्हारे बटे से जितना प्रेम करती है इतना उसे किसी पोते से भी नहीं है और यह बात बहुआ की आखों में खटकती है। तुमसे कुछ छिपा तो नहीं है।

और वह निरीह भाव से सब कुछ सुनता रहा, मानो वह सब किसी अय व्यक्ति के विषय में कहा जा रहा हो। फिर अपने कमरे में वापस लौट आया था।

मुन्नू न होता तो वह कहीं एक कमरा किराये पर लेकर अपना अलग ठिकाना कर लेता। मुन्नू को लेकर अकेले कैसे रहेगा ? अलग न रहने का उसके पास यह सबसे बड़ा धारणा था। फिर अलग रहकर अय चिन्ताएँ उसे घेर लेंगी—खाने की, घर-गृहस्थी की देख भाल। ससुर की बात में उस विद्वान नहीं था। वे सब मिलकर उसे सूटना चाहते हैं उसे सीधा-सादा समझकर उसका फायदा उठा रहे हैं। नहीं वह सौ से अधिक नहा देगा।

अचानक अपने सामने बेंच पर एक लडके को बठ पढ़ते देखकर वह चौंक-सा गया। उसे लगा, जस वह धीरे धीरे बरता हुआ पकड लिया गया है। यदि वह उस लडके को दूर से ही देख लेता तो चुपचाप पीछे मुड जाता या दायें-बायें निकल जाता। वह लडके को कुछ क्षण तक झुके पढ़ते देखता रहा और धीरे धीरे उसके पास बच पर बठन की उसकी इच्छा जोर पकडती गई। वह दबे-भाव बच के दूसरे कोन पर जा बठा। लडके ने उस पर एक दृष्टि डाली और कुछ देर तक उस देखता रहा, मानो इस प्रकार का आदमी वह पहली बार देख रहा हो। फिर अपनी पुस्तक पर झुक गया। लडके का अपनी तरफ देखते वक्त वह मुस्कराया, परंतु कोई उत्तर न पाकर वह सीधा कुछ दूर पर बिछरे ऐतिहासिक खडकरो को देखने लगा।

उसकी पत्नी जीवित होती तो दूसरी बात थी। अब उसका वहाँ रहना सबकी अखरने लगा है। उसके ससुर का पिचका हुआ बिना दातो का चेहरा उसके सामने आ गया। उसे थोड़ी पबराहट-सी महसूस हान लगी। वे फिर तकाजा बरने और उसे याद दिलायेंगे। उसके बडे साले की पत्नी प्राय ककण स्वर में कहती सुनायी देती कि उससे इतनी रोटिया सेंकी नहीं जाती। और जब उसकी सास उससे घीम स्वर में कहती कि नीचे दामाद मुन रहा है, ता उसकी आवाज और भी तेज हो जाती "मुभ किसी का डर नहीं है। सच्ची बातें कहन में हिचकू, ऐसी औरत मैं नहीं हूँ।" और वह नीच

अपनी कोठरी में बठा सत्र सुनता था। कोठरी के बाहर दालान के ऊपर लगे जाल में से ऊपर की सब बातें सुनायी देती थी।

“माफ कीजिये” पास बठे छात्र ने पूछा, ‘आपको मात्रूम है कि सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण पड़ने के क्या कारण हैं?’

वह चौंक सा गया। कुछ देर तक फटी फटी आँखों से वह छात्र की ओर देखता रहा, जिसकी आँखों में हँसी छिपी हुई थी। सूर्यग्रहण चन्द्रग्रहण उसके दिमाग में दा शूय बडी तेजी से घुड़दौड़ लगाने लगे, मागो एक दूसरे का पीछा कर रहे हो।

“आपने भूगोल तो पढ़ा ही होगा ?’ छात्र ने पूछा। फिर क्षण भर तक उसके चेहरे को देखने के बाद कहने लगा, “अच्छा यह बताइये कि यह कौन-सा देश है, जहाँ छ महीने रात और छ महीने दिन रहता है ?” फिर अपनी ओर ताकते देखकर छात्र के हाँठों पर एक हँसी सी फल गई। छात्र को अब विश्वास हो गया कि वह मट्रिक् पास भी नहीं है।

वह उसी प्रकार चुप बठा रहा उसे इटरव्यू के वक्त किसी प्रश्न का उत्तर न दे सकने पर नौकरी का उम्मीदवार प्रश्न पूछने वाले की ओर देखना है, ऐसा ही उसने सोचा। छात्र के चेहरे पर एक निश्चित सी हँसी थी। जाँखों में अँधेरी रात के तारे जसी क्षिप्रमिल करती हुई चमक था और प्रात शीश म जब उसने अपनी जाँखें देखी थी

‘मैं मट्रिक् की परीक्षा दे रहा हूँ” वह हाथ में दबी पुस्तक बंद करके बोला मैं सेलर बन जाऊँगा परीक्षा के बाद, जिससे दुनिया भर की सर कर सकूँ। मुझे घमने का बहुत शौक है और सेलर बनकर मैं बिना पैसे के सारी दुनिया का चक्कर लगा सकता हूँ। अच्छा क्या आप कभी जहाज में बठ हैं ?” छात्र उत्साह-भरे स्वर में कह रहा था। पहली बार उसे ऐसा व्यक्ति मिला था, जो अपना मुँह खोले बिना, दिलचस्पी के साथ उसकी बान सुन रहा था।

अचानक उसने अनुभव किया कि छात्र को देखते समय उसकी आँखों के सामने मुन्न का चेहरा ही भूमता रहा। उसे भी मुन्न को किसी स्कूल में दाखिल करा देना चाहिए। घर में रहता है तो उसे खाली देखकर सब छोट माटे काम कराते रहते हैं-कमी हलवाई की दुकान से दही लाना, कमी उसके समुद्र का हुक्का भरना, छोट साले की रोती लडकी को गौद में लेकर चुप कराना वह अपनी कोठरी में बठा मुन्न को दिये हुए आदेश सुनता रहता है विरोध में कमी कुछ नहीं कह सकता।

मुन्न उससे डरता है। उसकी कोठरी में कभी पाव रखा हो, उसे याद नहीं। जब ऊपर का कोई सदश देने उसे काठरी में आना ही पड़ता, तो दहलीज पर ही खड़े खड़े जल्दी से कह दता, बडी मामी कहती हैं कि आटा पिसवा लाइये’ या, “आचार के लिए दस सेर कच्चे आम मण्डी से ले आइय ” और फिर वह ऊपर भाग जाता।

उसे अदर बुलाने की इच्छा कई बार उसके मन में आती, लेकिन बात कभी होठों के बाहर नहीं निकली। उसे देखकर लगता है, जैसे भीतर छाया बोहरा अपने आप फटा जा रहा हो। किसी बच्चे से थगड़ा हाँ जान पर मार भी उसे हाँ पड़ती है और वह उसके रोने की आवाज़ सुना करता है, परन्तु शिकायत करने कभी मुन्न उसके पास नहीं आता। एक बार सब्जी खरीदकर जब वह थला ऊपर देने गया तो दूसरे बच्चे में मुन्न को न देखकर उसे कुछ चिंता सी हुई, परन्तु किसी स उसके विषय में पूछने का साहस नहीं हुआ। यह सोचकर कि वह शायद छत पर खेल रहा हो वह सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आ गया। अँधेरे में उसे एक कोने से मुन्न के मिसकने की आवाज़ सुनायी दी। उसे देखकर मुन्न का रोना तुरत बन्द हो गया और उसने अपना चेहरा घुटनों में छिपा लिया।

“क्या हुआ मुन्न ?” उसने धीरे से पूछा, “क्या किसी ने पीटा है ?” उससे अधिक नहीं कहा गया। हिचक हो रही थी। थिझपते हुए उसने मुन्न के सिर पर बहुत प्यार से हाथ फेरा, परन्तु वह और सिक्कड़ गया जस उसकी सहानुभूति की आवश्यकता न हो। मुन्न के बड़े बड़े रुबे, उलझे वाल उसकी उँगलियों में फस गये। उसे लगा, जैसे मुन्न के बाल बटे दो तीन महीने बीत चुके हों, उसकी कमीज कंधा पर फटी हुई थी, निकर पर मल और धूल की मोटी तह जम गई थी। लँगा का खुरदरा मांस उसे सूखा चमड़ा जान पड़ा। और वे दोनों कितनी ही देर तक रात के अँधेरे में उसी प्रकार बठे रह और अनेक धुँधली धुँधली परछाइयाँ उसके चारों ओर घूमती रही। लग रहा था जैसे वह पहली बार अपने बटे का स्पर्श कर रहा हो, मानो अभी उसका जन्म हुआ हो।

‘अप्रीका के जंगली में बहुत भयानक शेर और गड़ लडते हुए दिखायी देते हैं ऐसा मैंने अपनी एक किताब में पढ़ा था। अच्छा, आपन कभी समुद्र देखा है ? मैंने भी नहीं देखा। लेकिन जब सेलर बन जाऊँगा, तब तो समुद्र में ही रात दिन रहना पड़ेगा। इसी से मुझे रज नहीं होता कि कभी समुद्र नहीं देखा।”

छात्र को बेंच के दूसरे भिरे पर बठे देखकर उसे आश्चर्य हुआ। सुबह की हल्की हल्की धूप उन तब पहुँच गई। पेड़ों की लम्बी कतार के नीचे उसे फूल दिखायी दे रहे थे—लाल, हरे, पीले लेकिन फूलों के नाम उसे मालूम नहीं। उन्हें आखिर देख लेना ही पर्याप्त था।

पढ़ाई में मेरा मन ही नहीं लगता। जोर पढ़कर हागा भी क्या ? मेरे बड़े भाई न वी० ए० पास किया, लेकिन कहीं नौकरी नहीं मिली, सो रुपये तक की नौकरी नहीं मिली और आखिर में वह घर से भाग गया,” छात्र कह रहा था। “और पिताजी का मेरा सेलर बनना पसंद नहीं है। अगर उन्होंने विरोध किया तो मैं भी घर से भाग जाऊँगा। अपनी किताबों बेचकर मुझे बम्बई तक के टिकट के पैसे मिल सकते हैं। मैंने

एक सक्विडरैड बितावा ने बुकसेलर से बात भी कर रखी है और वह मान गया है। अच्छा आप तो बम्बई गये होंगे? वहाँ तो सकड़ो जहाज बन्दरगाह पर आते जाते रहते हैं, क्या मुझे किसी में भी काम नहीं मिलेगा? मिला क्या नहीं?"

छात्र की आँखा में समुद्र की गहराई उमर आई थी। उसकी आँखें भी उतना गहरी रही हागी? उसे लग रहा था जैसे उस छात्र के साथ वह भी जहाज में बठकर पाया कर रहा हो, चारों ओर नीले समुद्र की ऊँची ऊँची लहरें हैं, जिनके बीच में जहाज आगे बढ़ा जा रहा है।

उसकी पत्नी भी कहती थी कि मुन्नू को खूब पढ़ायेंगे। अपना खर्च कम करके उसे किसी प्रकार की तगो नहीं होने देंगे। फिर आगा मरी मुद्रा में उसकी ओर देखती हुई कहती, 'और तुम्हारी भी तो तरबकी होती जायेगी। जिदगी भर तक काई सी ही नहीं मिलते रहने।' और वह हँसते हुए उसका साथ देता था। वह आज होता तो देखती कि उसके स्वप्न किस प्रकार साकार हो रहे हैं। इतवार की एट्टी में घर पर आराम न करके वह बाग की सर कर रहा है, एक बेंच पर बठा एक छात्र से बातें कर रहा है।

उसकी सास को वास्तव में मुन्नू से स्नेह है। कभी-कभी अपनी छोटी-सी जमा पूँजी में से वे उसके लिए कोई वपडा बनवा देती कभी मेले में से कोई खिलौना खरीद लाती। परंतु यह स्नेह उनकी बहुओं को अखरता था, जिसके मय से वे कभी प्रवट रूप से मुन्नू पर अपना प्रेम जाहिर नहीं करती थी। एक दिन मुन्नू को लेकर ही घर में झगडा हो गया और दोनों बहुओं ने सास को जली-कटी सुनायी। सात दिन भर रोती रही और शाम को उसके वापस लौटने पर उसकी बोठरी में आकर बहने लगी, बेटा, घर के हाल चाल तुमसे जिने नहीं हैं। वक्त ऐसा आ गया है कि सगे रिश्तेदार भी पराये बन गए हैं। फिर बहुएँ पराये घरों से आता हैं, जो अपनी समुद्राल के पुराने रिश्ता का निभा नहीं पाती। तुम तो अब घर के जमाई हो " धोती क बाने से वे अपनी आँखें पोछने लगी। शायद जमाई के नाम से उह अपनी बटी की याद आ गई थी हमार लिए डूब मरने का दिन है कि जमाई अपने खान-पीन का खर्च खुद देना है और बट्टा को तुम्हारी दो रोटीयाँ सँकनी भी अखरती हैं।" और दबे स्वर में उहाने भी यह मुझाव दिया कि वह अपना अलग ठिकाना ढख, यही बेहतर होगा। मुन्नू को जब तक वह और बढ़ा नहीं हो जाता तब तक साल-दो साल के लिए वे अपन पास रखेंगी। एक बार वह अलग हो जायेगा ता घर में सपवो उसक सी रुपये का अभाव अजरगा। और उस रात कितनी देर तक अपनी चारपाइ पर लेटा वह करवटें बदलता रहा था। अपनी पत्नी का चेहरा बार-बार उसकी आँखा में सामने घूम जाता। उसकी मृत्यु न होती तो शायद इस समस्या का सामना उसे नहीं करना पड़ता। उसन निश्चय विद्या कि वह अगले दिन ही नये मकान की तगान करेगा। यहाँ भी तो एक बोठरी ही उसके

पास है, जहाँ दिन में भी बत्ती जलाय बिना कुछ दिखायी नहीं देता और यदि रात को घाने के बाद वही उसकी बत्ती जलती रह, तो ससुर ऊपर जाल पर खड़े होकर सीधे उससे न बहकर आम ऐलान करते हैं कि घर की सब बस्तिया तुरंत बुझा दी जायें, नहीं तो जिस कमरे की बत्ती जलेगी, उमका तार वे काट देंगे। कोठरी के पास नाली बहती है, जहाँ ऊपर से बहुत गंद दुगंध फलाना है। अब उस बदबू का वह जम्यन्त हो चुका है। लेकिन पहले पहल जब अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद उसे ऊपर वाला कमरा खाली करके नीचे आना पड़ा था, तो कोठरी की सीलन और नाली की बदबू उसे असहनीय-भी लगती थी। ऐसी कोठरी दस-पन्द्रह रूपये में उसे वही भी मिल सकती है। परन्तु सुबह होने-हाते उमका निश्चय ढीला पड़ गया और कुछ दिनों बाद वह अपन डरादे को पूरण रूप से भूल गया। जिन्दगी फिर नियमित रूप से बहने लगी।

अपन दूसरे विवाह का विचार उसके दिमाग में न आया हो, ऐसी बात नहीं। परन्तु अपन घर में कोई है नहीं और ससुराल वाले उसके दूसरे विवाह की बात कयी सोचेंगे। परन्तु एक दिन तबीअत मारी होने के कारण आधी छुट्टी लेकर जब वह स्नि में ही लौट आया था, तो घर में किसी का उसके आने की खबर नहीं लगी थी। तब उसने सुना था, घर के काम से निवृत्त हाकर उसके साला की स्त्रियाँ परस्पर बातें कर रही थी। बड़ी कह रही थी जमाई बाबू का कही फिर ब्याह हो जाये तो वे अपनी नई ससुराल जाकर बस जायेंगे और उन्हें छुट्टी मिल जायेगी। कोठरी खाली होगी तो बच्चों को पढ़ने का कमरा मिल जायेगा। दोनों जोर जोर से हँसन लगी थी, लेकिन छोटी ने कहा कि कोठरी खाली होने पर बच्चा को नहीं मिलेगी, ससुर किराये पर उठाकर किराया अपनी गाठ में दबायेंगे। सिर में दद होने पर भी वह कितनी ही देर तक इसी विषय पर सोचता रहा था।

अनायास ही सामने बठे छात्र पर नजर पड़ी, तो वह पुस्तक पर मुका हुआ पढ़ रहा था। कुछ देर तक वह छात्र को बड़े गौर से देखता रहा। हीठा के ऊपर हल्के-हल्के मूँछों के बाल उमने लगे थे, चहरे पर कोई कही मलिन छाया नहीं थी। पूरी जिन्दगी सपाट मदान की भाँति उसके सामने फली हुई है, जिसके नये-नये अनुभव पान की आशा उसके मन में हिलोरें लेती हागी। रात को सोता होगा तो दुनिया भर के सपने देखता हागा— गैर और गड की लड़ाई वह देग जहाँ छ महीने रात और छ महीने दिन रहता है जगल, पहाड, समुद्र क्षण भर को उसे लगा, जैसे मुन्न ही बढा होकर उसके मामन बढा हो। वह भी तो इसी प्रकार स्वप्न देखता हागा। और उसकी पत्नी भी ऐसे ही स्वप्न देखती थी। उस नीद में कभी सपन दिखायी नहीं देते। कोणिग भी की ता असपन रहा।

वह बेंच से उठने लगा तो उसने छात्र की ओर एक आत्मीयता भरी मुस्कराहट से हा। वह अनुभव करन लगा था, मानो उन दोनों का पुराना परिचय हो और छात्र

न उसे अपने मन की धारें बतलाई थी जो केवल अभिन्न मित्रों से ही कही जाती हैं, व रहस्य, जिह केवल वे दो ही जानते थे। परंतु उसकी आवाज सुनकर छात्र ने क्षण भर के लिए अपनी आँखें ऊपर उठाकर उसकी ओर इस प्रकार देखा, मानो उसे पहचानन की कोशिश कर रहा हो। फिर उसकी चिन्ता न कर वह अपनी पुस्तक पढ़ने में मग्न हो गया। वह धीरे धीरे आगे बढ़ गया। उसने अनुभव किया, जैसे उसकी आँखों में वही रिवतता समा गई हो जो उमन प्रातः शीर्ष में देयी थी।

उसने एक बार फिर यूकिल्प्टस के पेड़ों की कतार को देखा, जिन पर पूर्ण रूप से अब धूप फल गई थी। आज वृत्तवार है, वह कम्पनी बाग में घूम रहा है और क्या रियों में फूल लगे हैं—लाल हरे, पीले जो सदा उसके लिए अपरिचित ही बने रहेंगे, जसा बच पर बठा वह छात्र है। चारों ओर गहरा सन्नाटा है।

और घर में शोरगुल हो रहा होगा। दोनों साले आज घर पर ही रहेंगे और यदि दोनों में से एक की ससुर से झड़प भी हो जाए तो आश्चर्य नहीं। बच्चा की भी स्कूल की छुट्टी है, जापस में लड़ेंगे और कही मुन्न बीच में फँस गया तो वही पीटा जायेगा। ऐसा ही उसने देखा है। घर में रहते हुए भी रोते हुए अपने पुत्र को वह सात्वना के दो शब्द नहीं कह पाता। उसे लगा कि यदि वह घर वापस लौटकर न भी जाये तो कोई उसकी अनुपस्थिति महसूस नहीं करेगा। भोजन के समय उसकी प्रतीक्षा नहीं होती, महरी उसकी थाली लगाकर उसकी कोठरी में ही दे जाती है, उसे और रोटी या सब्जी की आवश्यकता भी पडे तो वह माग नहीं सकता।

और ससुर कहते थे कि उसका सच सी में अधिक है, मुन्न के बड़े होने के साथ उसकी सुराक भी बढ़ती जा रही है। परंतु उस दिन जब छत पर उसने मुन्न को देखा था, तो सूखी टहनियों जैसे उसके हाथ पाव देखकर उसका बड़ा सा सिर बहुत बेडौल जान पडा था। और यह भी उसने ससुर या शायद बड़े साले को कहते सुना था कि उसकी काठरी के आसानी से चालीस रुपये किराये क आ सकते हैं।

उसकी पत्नी के गहने भी ससुर के पास धरे हैं। विवाह के बाद जब वह यहा आकर रहने लगा था, तो पत्नी न गहन अपन पिता के पास रखवा दिए थे, जब आवश्यकता पडती तो मागकर पहन लेती। और उसकी मृत्यु के बाद भी वे वही पडे रहे। एक बार उसकी चर्चा चली तो ससुर ने बिना किसी शिक्षक के कहा कि मुन्न की गादी होन पर उसकी बहू को वे गहने दे दिय जायेंगे। उसने हा—ना कुछ नहीं की। परंतु एक दिन अपन छोटे साले की पत्नी को वही नेकल्स पहने देखा था, जो उसकी पत्नी पहना करती थी। तब क्रोध आन पर भी वह चुप ही रह गया था। अलग मकान लगा तो ससुर से गहने भी माग लेगा, परंतु मन में कही आगवा थी कि वे अब उसे मिलग नहीं।

धूमत धूमते उसे लगा जस वह कितन ही बोझ अपन सिर पर लाद चला जा

रहा हो। एक एक करके वे वड़त ही जान हैं, कम नहीं कर पाता।

बाग के एक कोने में स्थित वह किसी खंडहर के सामने पहुँच गया। शायद किसी का मकबरा था। ऊपर बुर्जी पर बचे हुए नीले पत्थरों के टुकड़े धूप की किरणों में चमक रहे थे। वह कुछ देर तक खड़ा दूर से खंडहर की काली दीवारों और दीवारों के सूरदासों को देखता रहा।

अचानक बेंच पर बैठे छान का चेहरा उसे याद आया तो अपने भीतर किसी के फड़फड़ाने का स्वर सुनायी दिया और वह बिना हिले डूले अपनी सास रोकें सुनता रहा, जैसे भीतर बनी गहरी साईं को कोई भर रहा हो।

अब मुन्नू को खुद ही पढ़ाया करूँगा। शाम को घर लौटने के बाद रोज दा घण्टे पढ़ाया करूँगा। एक दो साल बाद किसी स्कूल में चौथी या पाँचवीं में भरती हो सकता है। उससे छाटी उम्र के बच्चे स्कूल जाते हैं और वह घर में बठा रहता है।

इस विचार से उसके पांव अपने आप घर की ओर बढ़ गये। रास्ते में एक दूकान से उसने एक प्राइमर, एक स्लैट और पेंसिल और एक कापी खरीदी। फिर कुछ सोच कर दूकानदार से उस सामान को अच्छी तरह एक जखबार के कागज में लपेट देने के लिए कहा जिससे कोई देख न सके। उसे सामान के बाद सपन दिखायी नहीं देते लेकिन कभी कभी जागृत हुए, चारपाई पर लेटे लेटे सूनी छत पर या दफतर में कुरसी पर बैठे हुए अपनी फाइलों में उस मोतिया-जसी, झिलमिल करती हुई बूँदें दिखायी देती थीं और वह उन्हें तब तक देखता रहता, जब तक वे धीरे धीरे धुँधली होती हुई उसकी आँखा से ओझल न हो जाती।

अपनी कोठरी में चुपचाप चारपाई पर बठा वह प्राइमर के पन्नों को धीरे-धीरे सहला रहा है, मानो वपों से ऐसी मूल्यवान् वस्तु उसने न देखी हो। दिन में अंधेरा होने पर भी वह बत्ती नहीं जलाता, उसे सब दिखायी देता है। ऊपर शोर हो रहा है बच्चा का, उसके सालों की स्त्रियों का और रसोई से खाने की सुगंध आ रही है।

तभी अपने समुर को कोठरी की ओर आते देखकर उसका कलेजा धक् से रह गया। वे कबना यहाँ आये हों उसे याद नहीं। उसने तुरंत प्राइमर को कम्बल के नीचे छिपा दिया। उनके साथ एक अन्य व्यक्ति भी है और उसे लगा जैसे उसने उस व्यक्ति को पहले कहीं देखा हो। फिर पास आने पर पता चला कि सुबह भीतरे में जो अपना चेहरा दिखायी दिया था, उससे वह व्यक्ति बहुत मिलता-जुलता है। उसकी आँखा का देखकर अनुभव किया, जैसे उनमें स भी कुछ गिर गया है। दोनों को कोठरी की देहरी पर खड़े देखकर वह चारपाई से उठ खड़ा हुआ। परन्तु उसके समुर ने उस पर एक नजर तक नहीं डाली। उन्होंने कमरे की बत्ती जलाकर उस व्यक्ति से कहा, "यही कमरा है। पुताई होने के बाद इसका रंग निखर आयेगा। मेरे पास बितने ही आदमी

इसे बिराये पर लेने आये, लेकिन निस्सी अनजाने आदमी को क्या दे हूँ ? घर में औरों हैं । आपको वकील साहब ने भेजा है और वह मेरे घनिष्ठ मित्रों में हैं, इसलिए उा पर विश्वास करने आपको देने पर राजी हुआ हूँ ।" उस व्यक्ति को चुप देख कर वे फिर कहने लगे "यम इलान में चाली बमरा मिलना असम्भव है । फिर यहाँ सत्र बाग का आराम है । वचनरी डाखाना, चौक, मंडी सब कुछ बहुत करीब पड़ते हैं । दस पाँच मिनट में पदल ही सब जगह पहुँचा जा सकता है, रिक्शों के पैसे बचेंगे ।"

उसे लगा जैसे वह व्यक्ति कमरे को न देखकर उसकी ओर घूरे जा रहा है । उसने अपनी आँखें ऊपर नहीं उठाया । उसे लग रहा था कि उससे जाँचें मिलते ही वह व्यक्ति उसका गला दमोच लेगा । मय से उसका शरीर पसीन में डूब गया ।

उस यमिन न वह कमरा लेना स्वीकार कर लिया । समुर के पिचके चेहरे पर हँसी फल गई । अगले सवार तक वह अपना सामान ले आयेगा और तब तक कमरे की पुताई हो जायेगी यह समुर न वायदा किया । जाने से पूर्व उस व्यक्ति ने फिर उसकी ओर ध्यान से देखा । परंतु वह अपना सिर झुकाये ही रहा । सास तब लेना उसे दूसरे जान पड़ रहा था ।

उसके चले जाने पर भी वह खड़ा ही रहा । चारपाई पर बठने की उसकी हिम्मत नहीं पडी जैसे उसके बठने ही समुर या वह व्यक्ति आकर उसे उठा देंगे ।

उस दिन दोपहर के बाद कोठरी खाली कर देनी पडी । ऊपर छत पर टीन से ढका एक गोदाम सा था जहाँ घर का बकरा का सामान पडा रहता था । बरसात में यहाँ चारपायाँ विस्तरे रखे जाते थे । दोनों साला ने मिलकर उसके पिखरे सामान को तरतीब से एक कोने में लगा दिया और चाली स्थान पर महरी के झाड़ू लगा देने के बाद उसकी चारपाई बिछा दी उसका बक्स और दूसरा सामान एक कोने में रख दिया । वह कुछ नहीं बोला, जरा सी भी आनाकानी नहीं की । सबके नीचे चले जाने पर वह चारपाई पर सेट गया, जहाँ से दूर दूर तक फला केवल आकाश ही दिखायी देता है । उसके और आकाश के बीच और कुछ नहीं है, यह सोचकर उसे ज़ीब-सा लगा । कुछ दर बाद उसे प्रसनता ही हुई । उत्साह में उसने अपने बक्म से प्राइमर स्लेट और कापी निकाली और उह विसनी ही देर तक देखता रहा स्लेट पर टढ़ी मेढ़ी रेखाएँ खींचता रहा ।

अच्छा मुन्नू तुम बडे होकर क्या बनोगे ?" वह पास वठ मुन्नू की बडी बडी खुली आँखों में डूबकर पूछता है ।

परंतु मुन्नू की आग खुली ही रहती है जिस ककर फेंकन पर भी तालाब के पानी में कोई हलचल नहीं ।

'तुम पढ-लिखकर कुछ तो बनोगे न ? ऐसे ही तो नहीं रहोगे ?' वह खीझ कर कहता है 'कोई डॉक्टर बनता है काइ वकील, कोई ब्यापारी कोई सेलर '

और यह सोचकर कि गायद मुन्नू को सेलर का मतलब मालूम न हो, वह उसकी व्याख्या करने लगता है 'सलर जहाज में बठकर बिना पसा खच किये दुनिया-भर का चक्कर लगाता है। जिस बंदरगाह पर जहाज रुकता है वह अंदर जाकर शहर घूम आता है। नये-नये लागू दूकाना म नई-नई चीजें कहां गर और गडे की गडाई कही दिन में भी रात होती है और कही रात में भी सूरज चमकता रहता है। बहुत ऊंचे-ऊंचे वफ से दूके पहाड, घने जंगल, और मीला तक फला समुद्र वह सब देखता है। तुम भी क्या सेलर बनोगे, मुन्नू ?"

मुन्नू आश्चर्य से उसकी ओर देख जा रहा है। क्षण-भर का उसे लगा था, जैसे उसकी बातें सुनकर मुन्नू के हाठ विस्मय और कौतूहल से गुल रह गये हो उसका दिल बहुत जोर से घडकने लगा हो और उसकी आंखा में मोतिया जसी चमक आ गई हो, जसा वह स्वयं यह सब सोचत हुए अनुभव करता है और जमी मुद्रा उसने बहुत पहले एक इतवार की सुबह बेंच पर बठे हुए छान के मुख पर देखी थी। परंतु मुन्नू में बाहर भीतर ऐसी स्थिरता है, मानो दुनिया की बड़ी से-बड़ी घटना भी उसके भीतर जलकर राख हो जायेगी। क्यों नहीं मुन्नू भी उस छान की भांति उसे उत्साहित स्वर में बतलाना कि वह बडा होकर क्या बनन का स्वप्न देख रहा है ?

"मट्रिक पास करने के बाद तुम्हें बम्बई भेज दूंगा। बम्बई तक के टिकट के लिए मेर पास रुपये हैं। वहा सकडो जहाज रोज जाते जात हैं। किसी-न किसी में तुम्हें जरूर काम मिल जायेगा। और जय तू बहुत बडा सेगर बन जायेगा, ता मैं भी एक बार तेरे साथ चूंगा। हम दोना इकट्ठे दुनिया भर की भर करगे। मैं ऐसी रात कभी नहीं देखी, जब सूरज चमकता रहता है जहा कभी अ-पेरा नहीं होता। उसके स्वर में व सब चाही-अनचाही इच्छाएँ भर आई, सावुन में धुने पानी से निकले उन बुलबुला की भांति जि हे बचपन में वह दूर-दूर तक उडायो करता था।

मुन्नू को अपन सामने चुप बठे देखकर उसे आश्चर्य हुआ। वह ता समझ रहा था कि मुन्नू अब तक सलर बनकर जहाज में घूम रहा होगा। भयभीत मुद्रा में उसे अपनी ओर ताकते हुए देखकर उसे शोध आ गया, 'बोलता क्या नहीं ? क्या बडा होकर भी ऐसा गँवार बना रहेगा ?"

उसका स्वर सुनकर मुन्नू की आंखें पल भर की मुँद सी जाती हैं, हाठ फडकन लगत है और वह रोने लगता है। डर से उसने अपना चेहरा घुटनो के भीतर छिपा लिया।

"बस रोना ही सीखा है अब तक तूने ?" उसका शोध बढ़ना जा रहा है। वह मुन्नू के कान पकडकर उसका सिर ऊपर उठाने की कोशिश करता है लेकिन मुन्नू अपनी पूण शक्ति के साथ सिर भुकाये ही रोता रहता है। उसके आसू बहुत तेजी से घुटनो के नीचे बहते हुए उसकी सूखी टांगो पर टढ़ी मेढ़ी लकीरें खींच रहे हैं।

अमानक मुन्नु के कात तादकक यह अन्व हा गया। उमने राते की आवाज छउ पर कोई गारा म पाकर ऊपर उठती गई। और एक मादूमन्नी मामाया क बुँदने के साथ पिन्नी हुई उमने पारा आर पंग गई। यह मुन्नु आँगा म ऊपर मन्विक रग क आवाज की लग रहा है, माया मनु पहाड, जगत गाग रहा है।

मुन्नु का रागा भीरे भीर कम ह्राकर गागटे म गा गया। उमकी पाली-पाली टाँगे और टाँगा पर चमकी हुई नीली मंगे और उनक ऊपर धरा उमका बहा-गा बहोल गिर, त्रिमके उमके रूने बड़ हुए कागे बाल उत्राड परती म झाग पगाग-म जान पन्ने है। और ये दोगा एक दूगरे म बग दूर किगनी ही नेर तक उमी प्रचार सान्त बडे रहे।

महमा मुन्ना पर गिर टैर मुन्नु की आँगा को दगा। उम लगा जैसे किगी ने पहाड की घोटी मे उस नीचे डरेल गिया हो। हाँवे के साथ मुन्नु के पास पहुँच कर उमने उसका पहरा अपने दाया हाथा से ऊपर उठाया और मुन्नु की मुली, बिना हाप बती हुई आँगा का बहुत करीब स देगा और कुछ दर तक दगला रहा। मुन्नु की आँगा म भी जैसे कुछ सो गया है जगा कि उम इतवार को शीग म अपनी आँगा को देत कर उसने महसूस किया था। मुन्नु की मुली-मुली, दूय सी आँसों, जस कोई बन्द दर बाजा मुल गया है जिसक बीच म दूर-दूर तक यह भाँव सकता है। भीतर क्या है इस जानने के भय म उसने अपनी आँसों बन्द कर ली।

कुछ बच्चे कुछ माँएँ

इन्दौर में एक ही ऐसा काफी हाउस है जहाँ गरमी के दिना में बाहर लान में कुरसिया बिठा दी जाती हैं क्योंकि दोपहरिया उमसीली होती है और मन बाहर की आर हा दौड़ता है। ऐसे में किसी होटल की एक से एक लगी कुरसी पर जा बठो या एक दो के साथ कबिन में जा घुमो तो दम घुटने लगता है। लाख रूम एयर कंडीशन हो, या चार दिशाओं में चार पेडस्टल चल रहे हों पर बाहर का बठना बाहर का बठना ही है। वमें में रहता भी जान द है। ओवरट्रिज से आने लोग ओवरट्रिज को जाते लोग आस पास के खिले फूलों की खुशबू में जत्र बठता हूँ वहाँ ता बाहर वाली कुरसी पर बठा ही रहता हूँ। भया इन्दौर नये नये आय और हम उनके परिवार सहित घूमने निकले तो मैं घूम-घुमाकर उहे अपनी मनचीली जगह हा ले आया। बाहर लान में दो ही टेबल थे, एक चार कुरसियों वाला दूसरा तीन वाला। हमन चार कुरसियों वाला टेबल समाला। हम थे भी चार—भया मामी, तान बरस का मुन्ना और मैं। मैं फोस कर रहा था कि मशाली प्रिपॅरेशन खायें—डोसा, उपमा या रवा। भया कुछ भी खान का नयार थे पर मामी हर बात को नकार रही थी। होने-हात यह हुआ कि सारा मेनू पढ़ डाला गया और मैं था कि बाहर सडक पर कभी देखी किसी स्वट वाली लडकी की पेटी की कसावट में उलझ गया था। भया न बाय को फिर से पानी का आडर दिया और मामी मुन्ना की खुल गई बटन लगान लगी। बाय जब तीसरी बार टेबल से आ लया तो फिर सलाहें शुरू हुईं।

‘कुछ नहीं तो आरेंज ले लें।’

‘नहीं जी, शरबत लेकर क्या करेंगे?’

‘तो कोल्ड काफी पीयें।’

‘काफी तो गरम ही अच्छी लगती है।’

‘तो बाय, चार हॉट काफी।’

‘अरे, पर यह मुन्ना ता काफी छूता भी नहा, और मुझे भी काफी अच्छा नहीं लगनी।’

‘ता पहले क्या नहा कहा! बाय ए बाय आडर बॅसल।’

‘कहाँ मुश्किल में पढते हा तुम तो चार चाय मगवा लो।’

"यही ठीक है।"

"पार पाय बाँध।"

बाप आकर ले गया। वह पानी बर है कि मैंने कौन ही हाथ म बाप का आँकर दिया। मैं बोर्ड रईम नहा, पर भाभी गया कुछ मध्यमगी है। उनका रहा सहा, बाते ब्योना सब यमी ही।

मोत मग निगा भाभी ने क्या नी तीनेक ताउ म होटल म आना हुआ।

भया 'हूँ' कर रह गय ता खुद ही डिगाय लगाय लगा, "अपने मुझा स पट्टे आय ये होटल। बबिा में बठे थ और मेरी चँदेरी याती साडी पर बाय हुल गई थी। उगये बाग गिररती म ठीग प म कि 'भाभी ने बाप यही छाड लिया, क्वाकि उनकी आँरें लॉग स आ लगी एग गई 'दृण्ड्र पर रम गई थी। बोली, "साडी स दग बार का रग मग करता है।"

मुके उनका यह पहाय बडा अटपटा लगा। बार निती और की, साडी की मेच गसे हुआ ? साडी का अउउउ से, ब्लाउज का रिबिन से रिबिन का पपल से मेच समझ म आता भी है, और पति के कपडों से या खुद अपनी बार के रग स मेच का बाल की जाये तो यह भी एक बार मानी जा सकती है, पर

बार म से जोड़ी गिबली। थीमती जी सुआपसी कपडे पहने थी। हाथ का पस भी उसी रग का था। बार म बठा तीनक यप का बाबा नीच उतरा तो देखा कि वह भी उसी रग का सूट पहने है टाई भी बाँधे है। गट डीली होकर इतनी बडी हो गई थी लगी कि बालर की मट्टिया को लवा रही थी। साहब समर सूट का पट और दूधिया शाकस्वित का बुश गट पहने चुष्ट दबाये थ होठो म। प्रसन्न से वे हमारे पास बाल टेवल पर आ गये। उनके पास भी त्राय गया और थीमती जी ने तीन बाप का आकर दे दिया। वे दोनो अपने बाबा म व्यस्त थे।

"क्या बाबा, तुम्हारे लिए मोटर खरीद दें ?"

'मोटर क्या अब तो राकेट खरीद देंगे !'

फिर व बाबा से अँगरेजी बोलने लगे। बाबा रटी हुई बातें बाल रहा था 'सी ए-टी क्रेट याते बिल्ली डी-ओ जी डाग मान कुत्ता आरे-दी रेट याने चूहा, एमे एन मेन याने ।"—बाबा भूल गया था। उसकी मम्मी फिर फिर पूछने लगी, "बोलो बाबा क्या हाहा है एभ मल सेल गाले ?"

पापा भी लगे पूछने, "बोलो बाबा, बोलो !"

और बाबा था कि कुरसी पर खडा होने को हुआ तो मम्मी ने डाँट दिया, 'डर्टी, कुरसी पर खडे होते हैं कही !'

दुधर मुना को भाभी ने खुद ही कुरसी पर खडा कर दिया था 'ले देख, देख उधर !"

पूछा पूछी में जब उधर मम्मी ने डाँटकर बाबा से पूछा, 'एमे एन मेन याने क्या ?'—तो मुना अपनी मस्ती में उधर देख बोल दिया, 'उल्लू !—एम एन मेन, मेन यानी उल्लू !'—दोनों आर हँसी मच गई। भाभी जरा बटी, भया ने घणा से पास वाले टेबल के अभिजात बग को देखा और उधर वाली मम्मी ने यह कहते हुए कि एमे एन मेन यानी उल्लू नहीं, आन्मी ! अपन बाबा की हल्के-से चुम्बी ले ली और फिर बाबा जिद करन लगा मम्मी का 'बिस लेन के लिए ।

भाभी ने मुना को डाटा—'बठना क्यों नहीं कुरसी गदी हा रही है ।'—वे झूल गई कि उहोने ही मुना को कुरसी पर खड़ा कर लिया था ।

मैं इस बात को भाक कर रहा था कि वे हमारी जोर जोर हम उनकी ओर जाने कसी नजरो स देख रहे हैं । भाभी जरा से मैं ऊब गई—अभी तक नहीं आयी चाय ?

इतने में बाँय चाय ले आया । उधर मम्मी ने कहा "अरे वाय इतनी जल्दी ले आये चाय ! कही चालू चाय तो नहीं है ?"

वाय दासत्व म भुक् गया और भाभी को जाने क्या जल्दी पडी थी बाला अरे बरा, इतनी देर लगा दी चाय लान में ? इतनी देर में तो सौ आदमिया के लिए चाय बनाकर दे दूँ !"

फिर भया से बोली, 'याद है ना जी, मिसरजी को देखन वाले आये थे दो दजन लोग, तो पाँच मिनट में सब-कुछ कर दिया था ।"

तभी सामने सड़क से तीनक साल का एक गदा लडका हमारी तरफ जाया । आया और मेरे पट स लगा ता मैंन उसे लिडक दिया । तभी लान की मेहदी से लगी भिन्नारिन ने भर गले से कहा 'मेरा बच्चा है वाब चाकी जिद कर रहा है ।'—बह हाथ में एल्यूमिनियम का गिलास लिये सारी तरफ जपन चेहरे पर लाकर धिषयाने लगी 'दे दो वाबू, एक प्याला चा दे दो !"

वह गदा बच्चा पासवाली टेबल क नजदीक पहुँचा ता साहब ने जूता लियाकर कहा, 'टाँग तोड दूँगा !'—पर उस पर कोई असर नहीं पडा । उधर श्रीमतीजी घणा से मुँह बनाकर बोली "हिन्दुस्तान के लागो में जरा भर सम्मता नहीं है, अब यह ता मैंन आज ही देया कि भित्तारो काफी-हाउस में भील माँगने घुसे चने आते हैं ।

मुझे ता लगता है कि मुआपली हाडी वाली न भिन्नारिन को डाँटा, इसीलिए भाभी को दबा आ गई और उहोम आपा प्याण चाय उमवे बच्चे के गिलाम में उल्लेख दी । बच्चा चाय लेकर अपनी माँ के पास दौड गया ।

'बडी दया हा आई आपको उस पर भाभी ।'

'लया काहे की ? इय बतली में चाय ज यादा थी, तो दे दी । चार पगो की चाय में धम भी हाथ लगे तो क्या दुरा !'

दूसरे टेबल पर बान चल रही थी 'कुछ लोग सब अजीब होते है जी ! काफी

हॉलस के मामें जाते ही नगी । ये बेगली की एक एक बूट घाय भी जात हैं, जमे वह घाय गही, धाराय हो !”

“जिसने धाराय ग पी हो, यह घाय का लास ड्रॉप पीकर ही मजा ले लेना है ।”

मरे का उपर हाठ घाय पर और यारों 'मदाम वावरी' की निगापनवाली डाली दराने में स्थित हुई न हुई कि, जाने क्या हुआ, जो मामी ने मुना को एक चीटा रसीद कर दिया । बेगारा तिलमिला गया । मैंने उम पाग रोच रुपान की वाणिज्य करत हुए मामी से पूछा, “हुआ क्या ?

‘दरत नहीं, घाय हे उबलती हुई और कप से पी रहा है, गधा ! मैंने प्लेट में घाय डाल दी तो उसे फिर कप में डाल रहा है । रतता है कि नहीं बुप ?”—मामी ने फिर हाथ उठाया तो भया ने रोक दिया । वे बोलती गई, ‘प्लेट है जिसलिए कि भइ, उसमें घाय डालकर टण्डी कर लो और पी लो ! बडा आया कप से घाय पीनवाला ! किसी को देसा है तून अपन घर में कप को जूठा करते ? ”

मामी कह रही थी कि पास की टेबल पर बाबा चीज उठा । उसकी मम्मी ने बाबा के बान खीच दिव मे, स्टॉप दिख नासेस !”

बाबा बुरी तरह रो दिया ।

“अरे क्या हो गया ?” साहब बोल, ‘मैं चुस्की में बिडी हो गया और तुमने इसके बान क्यों साच दिये ? इटम नाट फेअर ।”

बाबा के हाथ फिर अपने ध्याले पर पड्डे के कि मम्मी ने फिर डांटा, “अब अगर फिर ऐसा किया तो बहुत पिटोगे और बार की छत पर बठा दूंगी ।”

‘पर क्या हुआ ?’ साहब ने बिड़कर पूछा ।

“देखिये न आप ही बाबा को, यह प्लेट में घाय डालकर पी रहा था । यह पदा हुआ तब से अब तक मैंने इसके हाठो को सौसर नहीं छून दी है ! मम्मी तमतमाकर कह रही थी, “बोली बाबा, कभी तुमन अपने घर में किसी को अपन होठो से सौसर (प्लेट) को जूठा करते देखा है, सब कप से ही घाय पीते हैं न ?”

बाबा ने हथकडी पडे अपराधी की तरह बिबश होकर हामी भरी और कप से घाय पीने लगा । मम्मी कह रही थी, “एक बार इसने दिल्ली में भी ऐसा किया था । यंग वीमेन्स एसोसिएशन की पार्टी थी, इसने सौसर में घाय डाली ही थी कि मैंन हाथ पकड लिया । ”

मम्मी कह रही थी कि महदी के पास खडी भिखारिन ने घाय का गिलास नीचे रखा और अपने बच्चों को मुक्को से मारना शुरू कर दिया ।

तीन, चार, छह दस बचारा हलक बांधकर राने चीखने लगा । बाय न उधर देखा तो उस डाटने पड्डेचा “क्या मार रही है बच्चे को ?”

बोली वह “अरे ये नासपीटा है ही ऐसाई । जान का जाखिम हे मुआ । बाबू

न दी चा, तो इस गिलास मे लेके पिला रही थी अब केता है कि कप बगी से पीऊँगा ।
—फिर उसे एक मुक्का जमाया, ' मेरी इत्ती उम्मर हा गई मैंनई कभी कप बशी से ओठ जूठे नहीं किये तो तू कासे चलके आया हे ।''

वह बोलती ही जा रही थी 'बडा आया कप बशी से पीनवाना । कमी तेरे बाप ने कप बशी से पी हे चा ?'' बच्चे ने हारकर उम सडे गिलास से होठ लगा लिये ।

मेरे प्याले मे चाय ठडी होनी गई । मैं देख रहा था कि बाबा और मुजा और उस गदे बच्चे मे कोई फक नहीं । तीनो एक-जसे हैं । कप और प्लेट जोर गिलास किमी भी रूप के हो, हैं तो बरतन ही ! कप की चाय जोर प्लेट की चाय जोर गिलास की चाय का स्वाद एव ही है, पर सुजापखी साडीवाली ममी जोर भरी भामी और वह मिखारिन तीनो नारी है, पर एक नहीं है क्योंकि तीन अलग-अलग वर्गों की पत्नियाँ हैं वे ।

“इससे तो अच्छा हाता कि कुछ कोल्ड भेंगवा लत । भया ने यह कहकर मुभ चींका दिया ।

मैंने चाय पीते हुए देखा कि भामी और मेम माहब जोर वह मिखारिन जान कसी घणा से एक दूसरी की ओर देख देखकर मुँह बना रही हैं । इतनी देर मे वे तीनो बच्चे एक कुत्ते के पिलने से खेलने लग गए थे । वे तीनो एक दूसरे के हाथ पकडे पिल्ले की पूँछ पर पर रख रहे थे ।

मेरी भामी बाबा की मम्मी और उस मिखारिन ने अपने-अपने बच्चा का इस तरह देखा तो एक साथ गुराकर एक ही वान बोली, “चल इधर सुनता है कि नहीं ?

बेचारे तीनो बच्चे डरे और अपनी अपनी माआ के पास जा गये । ये सब लखत हुए मैंने एक बात और ऐपी कि फुटपाथ पर बठी कुतिया भी गुराकर अपने बच्चे को पास बुला रही थी पर वह पिरला मान ही नहीं रहा था और लौड-लौडकर इन बच्चो के पास आने की जिद कर रहा था ।

नौ साल छोटी पत्नी

कुशल दबे पाँव उस तरह घर में घुमा था जैसे घर उसका अपना नहीं जोर खाँसी आने पर वह गली में जाकर उस तरह जी भरकर खाँस आया था जैसे मदन को नसीहत करने का अवकाश न दान के लिए वह प्रायः दुकान के बाहर जाकर खाँसा करता है। फिर उसने सोचा कि वह शायद अपने असामयिक और जावस्मिक आगमन से तृप्ता को चौकाना चाहता है। यह सोचकर वह मुस्करा दिया कि चौकाने के लिए ये छोटा छोटी बातें ही रह गई हैं।

तृप्ता ने कुशल को देखा तो सच ही चौंक गई। उसने कुशल को देखते ही कागजों का वह पुल-दा टुकड़ा में छिपा दिया जिसे वह दीवार से पीठ टिकाए सिर हिला हिलाकर बड़ी एकाग्रता से पढ़ रही थी। उसके स्वरो के आरोह अवरोह को भी लक्षित किया जा सकता था। उसने हाल ही में धोए हुए बालों का जूड़े के सिरूप में इकट्ठा करके अपना सर इस ढंग से टिकाया हुआ था जैसे बालों से तर्किए का काम ल रही हो। कुशल का देखते ही उसके माथे पर ढेर सा पसीना क्वण्टा हो गया और वह खड़ी हो गई। उसके बाल खुलकर कंधों पर बिखर गए। उसने कार्निश से लाल रंग का रिबन उठाया और बाल बाधन लगी।

कुशल ने खाट पर बैठकर अपने बूट उतारे और बोला, 'आज मदन दिल्ली गया और मैं उठ आया।'

तृप्ता की कमीज पसीन से देह पर चिपकती जा रही थी और गलन से पसाने के कतरे चूकर कालर दोन से ऐसे लटक रहे थे, जैसे मेह के बाद बिजली के तारों पर पानी रेंगता है। उसने कमीज के पल्लू से मुँह पोछा और बोली, 'आज तो बहुत गरमी है।' फिर उसने टुकड़े को खाट के नीचे सरकाते हुए कहा, 'मैं तो समझी थी प्रकाश खाना लेने आया होगा आप आज उस समय कैसे आ गए?' फिर उसने कुशल के चहरे की ओर देखते हुए कहा "तबीयत तो ठीक है न?"

कुशल सोचने लगा कि यदि वह तृप्ता के स्थान पर होता तो इस समय कैसे आ गए के स्थान पर इस समय कहाँ से टपक पड़' का प्रयोग करता। तृप्ता को उत्तरोत्तर मुख हात देखकर और दूँदून पर भी न मिलने के अंदाज में इधर उधर घूमते और दृष्टि दीहाते देखकर कुशल ने जेब से माचिस निकालकर तृप्ता की ओर प्रेषित हुए

कहा, "यह लो।"

तृप्ता ने माचिस ले ली और बोला, "आप कैसे जान गए कि मैं माचिस दूँ रही थी?"

कुशल का मासूम था कि तृप्ता माचिस नहीं दूँ रही थी बल्कि छोटी-सी बात को लेकर परेशान हो रही थी। उसने केवल उसकी घबराहट कम करने के लिए ही माचिस फेंकी थी। फिर भी उसने कहा, मैं जानता था स्टोव पर तुम्हारी नजर नहीं जाएगी। हालाँकि तुम्हें मासूम है कि माचिस वहीं पड़ी रहनी है।'

तृप्ता ने स्टोव जलाया और चाय का पानी चढ़ा लिया। फिर स्वयं भी कुशल के निकट ही खाट पर आकर बैठ गई और पर हिलान लगी। कुशल ने कहा "पर क्या हिला रहा हा?"

तृप्ता ने पर हिलान बंद कर दिए और पास रखा तालिया उठाकर रगड़-रगड़कर मुँह माफ करने लगी। पसीना सूख गया था और वह फिर भी तौलिया नहीं छोड़ रही थी। 'कुशल ने उस आश्चर्यचकित और शर्मिले बनने के लिए अपन लहजे को भरमभ्रम स्वाभाविक बनाते हुए कहा, कहानी लिख रही थी क्या?' उसने तृप्ता की पीठ थप थपाते हुए कहा, 'मुझे लगता है कि तुम कहानियाँ लिखनी रहो ता बहुत बड़ा लेखिका हो जाओगी।'

तृप्ता कुशल की आर देखकर मुस्कराए और उसकी बुझावट पर रगती हुई एक चीटी का उठाकर फकते हुए वाली गादी के बाद ता कुछ भी नहीं लिखा। वही पुरानी कहानी पढ़ रही थी, जिस सुनकर आपन मरा बहुत मजाक उठाया था। 'यह कहकर वह फिर पर हिलान लगी और उपालम्भ की मुद्रा में कुशल की आर देखने लगी।

कुशल ने महसूस किया कि कई बार बचकूप बनाकर उनका मजा नहीं आता जितना बनकर आता है। परंतु जब तृप्ता त्रिलकुल निश्चिन्त हो गई कि कुशल का पूरा बचकूप बना चुकी है तो उस यह सब अच्छा नहीं लगा। उसने कहा, अजीब बात है टॉगें ता मरी दद कर रही हैं और हिला तुम रही हो।' फिर उसने कुछ थप थप कर कहा 'तृप्ता! उरा मेरी आर दखा।'

तृप्ता ने तौलिये को ऊपर सरनाकर थोड़ी-थोड़ी आस और साँस और तुरन्त मुँह छिपाती हुई बोली, आप मुझे डरा क्यों रहे हैं?"

"डरा कैसे रहा तू?" कुशल को हल्की-थोड़ी मुग्गी हुई। उसने तृप्ता का तौलिया खींचते हुए कहा 'देखो, स्टाव गायल बुध गया है।'

तृप्ता अतिरिक्त त्वरा से भागकर स्टाव की ओर गई जस दूध उबल गया हा और फिर कुशल की आर पीठ करके स्टोव के निशट ही पट्टे पर बैठ गई।

यद्यपि बाथरूम का नर, जब तक म्यूनिसिपलिटा उसकी रगा के लिए पानी 'या कर सकती है खुला रूता है कुशल की लगा जस टव में पानी गिरने की आवाज

अभी-अभी उभरी है। इससे पहले गली में शोर मचा रहे बच्चा की आवाज भी उसे नहा सुनाई न रही थी। बच्चा का शोर सुनकर वह सहसा मुस्करा दिया। "मदन जब कभी मूड में होता है तो दुकान में आन वाले बस्टमरो को कभी कभी कुशल का हवाला देकर सुनाया करता है कि भारत में तभी धन से सोया जा सकता है।" मदन तजनी को तजनी से बात कर कुशल को हाथ सट चाय का आर्डर देने का संकेत करते हुए अपनी बात पूरी करता "जब रात को आप बच्चों की चिल्लाहट को लोरी स्वरूप समझें और प्रातः गली में न हूँ तो वे रात में आप घड़ी के अलार्म का काम लें।"

शुक्रवार की दोपहर तो कुशल जैसे तरो करके घर में ही बिता लेता है परन्तु इस समय बच्चा की धीमा-धुंधली न तो लोरी का काम दे रही थी और न घड़ी के अलार्म का। उसने तृप्ता को सम्बोधित करते हुए पूछा "बयो तृप्ता, गली के बच्चा के स्कूल कब खुल रहे ह?"

तृप्ता ने मुस्कराकर पीछे की ओर देखा वह शायद अब तक सैमल चुकी थी या शायद उक्त प्रश्न की सम्भाषना से प्रभावित होकर उसने सोच लिया था कि कुशल की हठि इतनी पनी नहीं है जितनी कि वह सम्भव बठी है। स्टोव से केतली उतारते हुए उसने उत्तर दिया "यह तो तहवीकात करने से ही पता चल सकता है।"

उसने कुशल के लिए चाय का प्याला तैयार किया और कुशल को पकड़ाते हुए बोली, "आप शक बना लें मैं तब तक आपके बपड़े प्रसन्न कर दूँ। कसा अच्छा रहे अगर आज पिवचर चल।"

"मेरा खयाल है पिवचर तो हम मदन के लौटने तक नहीं जा सकेंगे। उसे दिल्ली जाना था मैं न उसे नहीं मारिगे।"

पिवचर जितने पसे मेरे पास है।" तृप्ता ने परो से टुक को छाट के और भी नीचे धकेलते हुए कहा "कल सोम दे गया था।"

कुशल की लम्बी नाक चाय के प्याले में घुस गई उसने अंतिम घूट भरने के बाद खाली प्याला तृप्ता के हाथ में धमाते हुए कहा "पहले चाय का एक और कप बाद में कुछ और।"

कुशल कल से ही सोम की चचा टाल रहा था। कल जब सोम घर का पता जानने के लिए दुकान पर आया था तो कुशल जान बूझकर सोम के साथ स्वयं नहीं आया था बल्कि उसने दुकान के नौकरों के साथ सोम को घर भिजवा दिया था।

अब सोम जाया था तो कुशल एक पत्र टाँप कर रहा था जब वह चला गया तो वह फिर टाइपराइटर पर भुक् गया और टाँप करने लगा, "या तो सोम डरपोक था और तृप्ता भीरु ही रया। सोम डरपोक था, सोम डरपोक है सोम डरपोक रहगा। तृप्ता भीरु थी तृप्ता भीरु। कुशल ने मदन की ओर देखते हुए बागज निवाला और मज के नीचे करक फाड़कर रहीं की टोपरी में फेंक दिया। मदन बुझी बीड़ी सुलगान

मे व्यस्त था ।

साम को जब वह घर लौटा था तो साम जा चुका था । भोजन के बाद जब तृप्ता तस्तरों में आम ले आई, उसने तब भी नहीं पूछा कि आम कौन लाया है । आमकी छुठनी चूसते हुए तृप्ता ने कहा था, "पाच वज तक सोम आपकी इंतजार करता रहा ।"

कुशल ने इस बात का उत्तर नहीं दिया था और तृप्ता का चाय का आउर देकर नल की आर चला गया था । "सोम कह रहा था मैं बहुत याद कर रही थी ।" नल से लौटकर कुशल ने देखा, तृप्ता के गालों पर आम का रस लगा था । उसने तृप्ता की बात अनसुनी करते हुए कहा "अब मुँह साफ कर लो । कसे बच्ची की तरह आम चूसती हो ।"

दूसरा कप पीते ही कुशल भी पसीने में भीगन लगा । उसने बुशशट उतारकर खाट पर रख दी और अपनी छाती के घने बालों में तिरता हुआ पसीना पोछने लगा । बाल बाल के बीच एक सफेद बाल पर उसकी दृष्टि गई तो उसने उस गली पर लपेटकर जड़ समेत उखाड़ दिया और फिर छाती पर हाथ फेरन लगा ।

तृप्ता ने टेबल घसीटकर कुशल के आगे कर दी और उस पर दोबिंग सेट टिका दिया । कुशल पीछे में अपना चेहरा देखते हुए दाढ़ी पर हाथ फेरने लगा ।

'आप अब शैव बना लें ।' तृप्ता ने कहा और कुशल की उतारी हुई बुशशट का ऐसे पकड़कर बाथरूम में ले गई, जैसे चुटिया को दुम से पकड़ा हा ।

कुशल ने ब्लेड रेजर में फिट कर दिया था और मुँह पर साबुन की झाग भी कर ली थी, परंतु उसका शैव बनाना को जी नहीं हो रहा था । उसे मानूम था कि अगर उसने शैव बना ली तो नहाना भी पड़ेगा और नहाने के लिए वह बिल्कुल तयार नहा था । उसकी पिडलियो में दद हो रहा था और देह का हर जोड़ टूट-भुड़ रहा था । यह सुबह से हा रहा था और यही कारण था कि वह सुबह भी बिना स्नान किए टिकल गया था । इस अद्भुत थकावट और विचित्र दद से कुद हाकर आज प्रात उठते ही उसने तृप्ता से कहा था "क्या कारण है तुम बल से बहुत प्रेम कर रही हो ?"

कुशल को चेहर पर शाम-पर शाम उत्पन्न करते देखकर तृप्ता ने पूछा कि वह क्या सोच रहा है ?

'यही कि " कुशल ने रेजर को पानी में गीला करते हुए कहा, 'रम पहनी को एक नयी खाट ले आऊँगा ।'

तृप्ता का सुवाक उडा पिजूल लगा, 'मैं तो बहुत कम जगह घेरती हूँ ।'

'कई बातें अभी तुम्हारी समझ में नहीं आ सकती । तुम अभी बच्ची हो ।' कुशल ने शीशे में से तृप्ता की ओर कनखिया से देखते हुए कहा, "कई बार तो तुम्हारे मुँह से दूध की बू भी आती है ।"

तृप्ता कुछ दर अवाक-भी उसकी आर ताकती रही कि

जब वह स्नान करके लौगी तो कुगल तब भी बेहरे पर झाग उलान कर रहा था। तृप्ता को देखकर उसके मस्तिष्क में किसी छायामानी कवि का पतियाँ तरन लगा, उन्हें पकड़ने के बजाय तृप्ता का घतारनी देन के लहा में बहन लगा कि वह भविष्य में उसे गव बनाने और स्नान करन के लिए कभी न बह। उसकी इच्छा होगी तो वह खुद स्नान कर लेगा।

इतने में बाहर का दरवाजा टुला और किसी के आने की पदघाप सुनाई दी। तृप्ता ने उभककर बाहर दखा और बोली, 'मुझी है।'

मुझी नीली जांवा घागी पतली सी तृप्ता की हमउम्र लडकी है। उसने आंगन में आकर कुगल को दखा तो जीम निवालकर भाग गई।

'मुझी बहुत खराब लडकी है।' तृप्ता ने कहा।

'क्या सभी खराब होती हैं।' कुगल ने कहा। वह जानता था, तृप्ता की नजरों में मुझी क्या खराब है।

कुशल गव बनाता रहा। तृप्ता कुछ क्षण खबर बोली, 'दिलन में कितनी भाली लगती है, पर मुझी को लडका के खत आते हैं।'

आईने में कुगल का चेहरा मुस्कराने लगा उसने टुडडी पर रेजर चलाते हुए कहा 'देखने में तो तुम भी बहुत भोली लगती हो। तृप्ता का पल्ला उठत देखकर उसने बात का रस पलटा 'जरा लडकी को लोग बसे ही बदनाम कर दते हैं।

'मैं भला उसकी बदनामी क्या करूँगी?' तृप्ता ने दाँट में पढ़नी चूड़ियाँ उँगलियाँ से घुमाते हुए कहा 'मैं खुद देख हूँ इसके पास दान न खत। नासपीटी उनके जवाब भी लिखती है।'

तुम क्या खाक कहानियाँ लिखती होगी। कुगल के मुँह में साबुन चला गया था। उसने तौलिए से हाठ साफ किए और कहा, 'सत लिखन में क्या बुराई है? कहानी लेखिका को कुछ तो उदार होना चाहिए।' कुगल ने अपनी टाँग से टुक को थोड़ा-सा सरका दिया और फिर वह ऐसे पर हिलाने लगा जस टुक सयोग से छू गया हा।

'आप कोई और मकान देखिए।' तृप्ता ने कहा 'चीरों रखन के लिए भी जगह नहीं है। सारी रात टुक मरी पीठ पर चुभता रहता है।

सान से पहल टुक को खाट के नीचे से निकाल लिया करो। कुगल ने कहा। 'आप गव क्या नहीं बनाते?'

'गैव तो जब बन ही जाएगी। कुगल टार को पानी के गिलाम में घुमाता हुआ बोला। जब साबुन उतर गया तो उतने कहा 'मुझी तो अभी बिलकुल मामूम है। मुझ समझ में नहीं जाता कि तुम उसके बार में उलटी-सीधी बातें क्या साचता रहती हो?'

“आपकी बात का पता नहा होता और ।”

“जीर क्या । ? खत लिखने में मुझे ता कोई बुराई नजर नहीं आती । कुशल ने जान बूझकर तृप्ता से आख नहीं मिलाई । तृप्ता का साबुते पा उमन कुछ दर न्ककर रहा, ‘खत लिखने के अलावा कुछ करती हो मैं मोच नहीं सकता । तुम इस बात को क्या मूल जाती हो कि जबमर लडकिया डरपोक होती हैं ।’

“आपकी उसी दिन पता चलगा जब उसके भागन की खबर मिलेगी ।

“अगर मुझी ऐसी लडकी हूँ, तो तुम उसके साथ सम्बन्ध क्यों रखे हो ?”

‘मैं तो उसे समझानी रहती हूँ ।’

‘क्या समझाती रहती हो ?’ कुशल के गाल पर एक बट आ गया ।

‘यही कि दान खत लिखता है तो तुम जवाब क्या लिखती हो ?’

कुशल ने तौलिये स गाल साफ किया । लूने ही क्षण खून का एक और क्षतरा चमकने लगा । तृप्ता भागकर डेटोल में जाइ । रई ने उसके गाल पर लगात हुए वाली मैंन उसे यह भी समझाया है कि दान से क्यों कि जब तक वह उसके पिछले खत नहीं लौटाएगा वह उससे बात नहीं करगी ।”

कुशल ने कह रहा लगाया और बोला ‘तुम जल्द उसे फँसाओगी ।’

‘फँसाऊँगी क्या ?’

‘उससे न तो खता को नष्ट करते ही बनगा और मैंमालकर रखेगी तो किसी वक्त भी राज फुल सकता है । कुशल न कहा ।

तृप्ता डेटोल भीगी रई से कुशल के गाल सहलात हुए बोली, “भाड म जाए मुझी और उसके खत । अगर आप आज पिक्चर नहीं जाएंगे तो मैं आपसे लिए कुछ खरीदकर लाऊँगी ।”

“तुम इतना ध्यान क्या कर रही हो तृप्ता ?” कुशल न तृप्ता को बलाई पकड ली और उसी रई को तृप्ता के गाल पर घिसने हुए बोला “पहले तो तुम नतनी ।”

‘बस-बस । तृप्ता ने बात बीच में ही काटत हुए कहा, बतलाइए आपके लिए क्या लाऊँ ?’

‘मरे लिए एक खाट खरीद लाओ ।” कुशल की पिडलिया में फिर जार का दद होन लगा था ।

तृप्ता जस प्रेम का अतिरक्त म मचल उठी गिनान लगी, नहा खाट नहा । एक नई बुगाट, एक आपकी प्रिय पुस्तक, नया दुय बस और ” उमने कुछ सोचने हुए कहा ‘और टाकियाँ लालीपाप ।’

“तुम सिर्फ अपन लिए टाकियाँ, लालीपाप ल आओ ।”

‘नहा मैं मय चीजें ले आऊँगी ।’

‘तुम्हार पाम कितन पसे है ?’

“पांच रुपए ।” तृप्ता ने धूक निगलते हुए कहा ।

“पांच रुपया स तो यह सब कुछ नहीं आया, तुम्हारे पास जरूर और पस होंगे ।”

“कसम से पतने ही हैं ।” तृप्ता ने कहा, ‘आप सोम से पूछ लें, वह पांच रुपए ही दकर गया था ।’

कुशल शैव बना चुका था परंतु तुरंत नहाना नहीं चाहता था, बाला, ‘मला तुमने सोम से पसे क्या लिये ?’

तृप्ता का चेहरा छीले जालू की तरह हो गया बोला ‘आपने मना किया होता तो कभी भी न लेती ।’

पसे लेन म तो कोई हज नहीं था । कुशल न कहा क्या ताहक उसका मच करवाया जाए ? उस दिन आया तो दुकान पर बहुत से फल भी लेता आया ।” झूठ बोलकर उसे दुशी हुई ।

‘आपने बताया क्यों नहीं ?’

मला इसम बतान की क्या बात थी ? और फिर तुमने भी नहीं बताया था कि वह पसे भी दे गया है ।’

बता ता दिया है ।’

“खर ! कुशल न बात समाप्त होते देख टहोका दिया ‘साम तुम्हारा क्या रगता है ?’”

बुआ का लडका है । आपको कई बार ता बताया है । उसन चिढ़कर कहा ।

“मैं हर बार भूल जाता हूँ ।” कुशल ने हँसते हुए कहा तुम्हारे ब्याह म सबसे अलग बलग खडा जिस ढग से रा रहा था उससे तो मैंने अनुमान लगाया था कि जरूर मेरा रकीब होगा ।”

‘रकीब के मानी क्या होने हैं । तृप्ता न तुरन्त पूछा ।

जरबी म बुआ के लडके का रकीब कहते हैं । कुशल न खाट स उठन हुए कहा जार कधे पर तौलिया रखकर बायरूम म चला गया ।

जब कुशल ने बायरूम का दरवाजा बन्द किया तो उसने खाट घसीटन की आवाज सुनी । उसने सोचा, अगर वह होता तो गायद टू ब घभीटता । कपडे उतारने स पूव उसने महसूस किया कि स्नान स पूव एक सिगरेट मजा द सकती है वह खुद सिगरेट उठा लाता परंतु जब उसे चार हाथा स ताला लगाने की आवाज आई ता उसने खुद जाना उचित नहीं समजा । उसन तृप्ता की आवाज लगाई कि वह एक सिगरेट द जाए । तृप्ता न दूसर ही क्षण शरान म सिगरेट और माचिस पकटा दी । सिगरेट पकटते हुए उसक मन म तृप्ता क प्रति करुणा का भाव उतरन लगा । उस रग रहा था कि वह एक मासूगी-सी बात का स्वर नाहक ही प्र जो हा रग है और अपन मनारजन

क लिए तृप्ता को परेशान कर रहा है। और यह मनोरजन का साधन भी अर्थ के हाथ में बटोर की तरह उसे प्राप्त हो गया था। उस दिन एक पुस्तक ढूँढते-ढूँढते वह तृप्ता क टुक की भी छानबीन न करता, तो कदाचित् इससे बचित ही रहता। पुस्तक न मिलने पर उसने महसूस किया था कि टुक में वक्त काटन के लिए और बहुत सी सामग्री भरी पड़ी है। टुक में कपडों के नीचे जो एक साधारण-सा पस पड़ा था उसमें मट्टिकुलेशन का सर्टिफिकेट, तुड़ी मुन्नी-सी दाँ एक तस्वीरें, (जिनमें युवक भेष में तृप्ता का एक चित्र भी था) माला स विसरे हुए कुछ मोती एक मला पिक्चर पोस्टकार्ड और एक सट की खाली शीशी बहुत हिफाजत से रखी हुई थी। मट्टिकुलेशन का सर्टिफिकेट रखकर कुशल गिनिल हा गया था। उसे लग रहा था जैसे अनजाने में उससे चूड़ा जिवह हा गया हो। सर्टिफिकेट के हिसाब से तृप्ता की उमर कुशल से नौ साल कम उठनी था। उसने सर्टिफिकेट स तृप्ता के अक भी न पढ़े थ कि वापस पस में रख दिया। टुक में सबसे नीचे खज्वार का एक बड़ा कागज गिछा था, परतु साफ पता चलता था कि कागज के नीचे भी कुछ है क्योंकि कागज एक जगह से ऐसा उठा हुआ था जैसे उसके नीचे एक बड़ा मढ़क छिपाया हुआ हो। कुशल ने बड़ी एहतियात स वह मढ़क निकाला। कागजों का एक खस्ता पुलिदा था, जिसमें दोनों के खत थ—साम के भी और तृप्ता क भी जो शायद तृप्ता ने चालाकी से वापस ल लिए थे या सोम न शराफत स लौटा दिए थे। खत पढ़त-पढ़ते कुशल कितनी दर हंसना रहा था। तृप्ता न वही बातें लिखी थी जा कभी कभी भावुक होकर उससे भी किया करती है। साम क खत पढ़कर ता यह हँसी स लोटपोट हा गया था। सोम की शकल देखकर तो अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि वह इतना भावुक हो सकता है और स्पर्लिंग की इतनी गलतियाँ कर सकता है। उस वार जब सोम आया था तो उसने थोड़ी-थोड़ी मूँछें भी बढ़ाई हुई थी। कुशल को यह वान बड़ी अजीब लगी कि मूँछे बढ़ाकर भी व्यक्ति भावुक रह सकता है—मूँछावाला भावुक। जरूर इस बात में बही ह्यूर है जो कुशल का बेतरह हँसी था रही है।

शाम को जब तृप्ता बाजार से लौटी थी, ता उसने कहा था 'तृप्ता, तुम तीस वरम की कब होगी?'

कयो आप मुझे बूढ़ी देखना चाहते हैं?'

'नहीं, बूढ़ी नहीं, लेकिन बच्ची भी नहीं। काश ! तुम तीस साल की होता !'

यह कहकर कुशल हस पड़ा था।

कुशल बाथरूम से लौटा तो कमरे का रूप एकदम बदला हुआ था। खाट, जो उससे पूव कमर के ठीक बीच में पड़ी थी, अब दूसरे कमरे में खुलन वाले दरवाजे क साथ टिका दी गई थी और उस पर अगूरी रंग की एक नई सीट बिछी थी। खाट क साथ ही दीवार स लगा तृप्ता का टुक पड़ा था, जिस पर उसी के द्वारा काढ़ा हुआ एक

सुन्दर मेजपाश बिछा था और जिसके ऊपर बठी तृप्ता त्रिशिए से कुछ बुन रही थी। उसने अपनी फिरोजी आँखा म काजल की गहरी लकीरों खींच ली थी। होठ लिपस्टिक के हल्के-से स्पश से चिरमिजी हो गए थे।

कुशल ने यह परिवर्तन देखा तो मुस्करा दिया। उसको मुस्करात देखकर तृप्ता न बहा 'आप मुस्करा क्या रहे हैं?' यह कहकर तृप्ता त्रिशिए से पीठ खुजलान लगी जिससे उसका ब्लाउज़ गले के नीचे स गुब्बारे सा फूल आया। कुशल के मन में क्षण भर के लिए यह विचार आया कि वह बाहर का दरवाजा बंद कर आए पर तु स्नान करन से उसकी पिंडलियों को थोड़ा सा सुकून मिला था जिसे वह कुछ देर कायम रखना चाहता था। उसने सर पर कधी फेरते हुए कहा "तुम कहती हो तो नहीं मुस्कराता।"

आप कुछ सोच रहे हैं। तृप्ता त्रिशिए पर दृष्टि गडाकर बोली, क्या सोच रहे है?"

कुशल ने सोचने की कोशिश की और कल्पित प्रेमिका का पुराना किस्सा छड दिया "दरअसल मुझे शीला याद आ रही थी। जब मैं हँसता था तो वह भी तुम्हारी तरह टोक देती थी। जब सिगरेट पीता था, वह मुझसे दूर जा बठती थी। जब कभी उसके घर जाता तो नौकर को भेजकर सिगरेट मँगवा देती। अजीब लडकी थी शीला भी "

कुशल ने सिगरेट सुलगाई और खाली पकट नाटकीय अंदाज में दूर फेंक लिया। तृप्ता ने त्रिशिए से आँखें नहीं उठाई। कुशल ने तृप्ता को लक्षित करके घुँए का एक गहरा वादल उसकी आर फेंका। उसे आशा थी कि ताड़ी लिपस्टिक पर थोड़ा सा घुआँ ज़रूर जम जाएगा। अपनी बात का उस पर प्रभाव न होने देख उसने बात आगे बढाई कि कैसे वह शीला के साथ पिकनिक पर जाया करता था और।

"बस बस मैं और नहीं सुनूँगी। तृप्ता ने त्रिशिए से आँखें उठाकर कुशल की आर अविश्वासपूर्वक देखत हुए कहा आप मुझे बवकूफ बना रहे है।

कुशल ने एक लम्बा कश लिया और बाल्या अच्छा अब तुम मुझे बवकूफ बनाओ। उस बार उसने नाक से धुआ मुकत किया। तृप्ता को उप देखकर उसने कहा, बनाओ भी।"

क्या ?

'यही बवकूफ।' उसने तृप्ता का आर मरकत हुए कहा तुम शायद ममज्ञता हो कि मैं पहल ही बवकूफ हूँ।

बवकूफ ता आप मुझ बना रह है।' तृप्ता का चेहरा मुन्न हा गया या और बटुता पी जान स उमने रआसी-सी हाकर बणा, रकीर के मानी क्या हात है ?

बुआ का लडका। कुशल ने सिगरेट क टुकड का पर से मसलन हुए कहा, कहानी-कहिका हाकर हमका भी अय नहीं पना ? कुशल का विन्ति था कि अब व

बहानी-लेखिका या लवादा ओढ़ने के लिए बिना है।

‘आपका मेरा कुछ पसंद भी है?’ तृप्ता की आंखों में पानी चमकने लगा था। वह चाहता तो सरलता से तृप्ता को रला सकता था, परंतु उसने ऐसा किया नहीं। इधर-उधर सिगरेट का कोई बड़ा टुकड़ा दूँदते हुए उसने निहायत सादगी और स्वाभाविकता से कहा, “निश्चय ही मुझे तुम्हारी रचनाएँ पसंद आ सकती हैं लेकिन तुम गुनाओ, सब तो।”

तृप्ता ने कुशल की ओर नहीं देखा, उसकी बात भी अनमूर्त्ता की ओर फिर घुटने में सिर देकर बस गई। पहले तो कुशल के भी मन में आया कि तृप्ता का चुप कराया जाए और इस बहाने प्यार भी किया जाए परन्तु उसने महसूस किया कि बिना सिगरेट के क्या खींचे प्यार नहीं किया जा सकता, भावुक तो बिल्कुल नहीं हुआ जा सकता। कुशल जानता है कि तृप्ता भावुकता रहित प्यार को स्वीकार नहीं करेगी।

कुशल ने घुटना पर मुकी तृप्ता की जाँर देखा और फिर पाँव में चप्पल पहनने लगा। तृप्ता के मुखर बँटने से उसकी पीठ भरी पूरी और माँसल लग रही थी। मफेदे दायाँ के ब्लाउज में से उसके ब्रेसियर की तनियाँ बसी हुई नजर आ रही थी।

तृप्ता ने कुशल का चप्पल घमीयत बाहर जाते सुना तो वह सिसकिया मरने लगी। कुशल के मन में तृप्ता के प्रति कर्षणा घनी हो गई। उसे एकान्त में प्रकाश उठाने में कोई रुक नजर नहीं आ रही थी। उस मालूम है कि अब वह तृप्ता को जितना भी मनाने का प्रयत्न करेगा, वह उगी मात्रा में फूँटी ही बनी आणगी। मनाने की इस प्रक्रिया से तो दुकान पर दिन भर टाइप करना कहां मरना है कुशल ने सोचा और पनबाड़ा में सिगरेट का पकेट लिया और चाय पीकर घर की ओर हो लिया।

घर में घुसते ही कुशल का भरे टब में पानी गिरने की चिर परिचित ध्वनि और बच्चा के शोर को सुनकर लगा जस सहसा किसी ने देर से उसके कानों में रकी रई निकाल फेंकी हो। तृप्ता छाट पर ओधी लेटी थी और उसने अपना मुँह तकिये में छिपा रखा था। स्टाव पर पानी उबल रहा था और जले हुए कागज के पुजे सूजे और भटके पत्तों की तरह कमर में इधर-उधर उड़ रहे थे। कुछ कागज स्टोव पर रखे पानी में तिर रहे थे।

कुशल ने बड़ी गहृतियात से एक स्याह कागज उठाया और तृप्ता की पीठ पर फापड़ की तरह बूँद करते हुए बोला, “यह क्या जला डाली क्या? उठो ब्याहता स्त्रियाँ बच्चा की तरह नहीं रोया करता।

तृप्ता जो घीमे घीमे सुबक रही थी, सन्निय होकर रापेलगी और उसकी हृचनी बंध गई।

कुशल छाट के साथ ही टूक पर बस गया और खुले तारे से खलने लगा जा मजपाश पर पपरवेट-मा पडा था। सिगरेट मुलगाकर भी वह तृप्ता को चुप करवाने का साहस न बटोर सका क्योंकि उसे लग रहा था कि तृप्ता का रोना बिल्कुल जायज है।

दाम्पत्य

दोना आमने सामने की बुरसियां पर बठे थे—उर्मिला और राजनाथ मेहता । बीच में चाय की गोल तिपाई पडी थी । उस पर चाय के खाली प्याले और सिगरेट का डिब्बा पडा था । राखदान नहीं था रहना चाहिए था । उर्मिला को भी रहना चाहिए था मगर उर्मिला नहीं थी ।

कितने दिनों तक नहीं थी ?

राजनाथ ज्यादा सोच विचार करत रहने वाले व्यक्ति नहा है । चाहते भी हो तो अवसर नहीं मिलता है । जाग सी एस नहीं हो सके । हाथ पसारने पर भी डाक्टर परितोष गोस्वामी की कनिष्ठा कन्या मुस्मिता गोस्वामी से विवाह नहा कर पाये । यूरोप जाने के लिए कही कज नहीं मिला । पितामह की बनवायी हुई राजस्थानी डिब्बा इन की आलीशान कोठी बेचनी पडी । पियना क किसी रेस्तरां में बठे बियर पी रहे थे, और अपनी मकान मालकिन की लडकी से भारतीय संगीत के बारे में फ़मान मरी बातें कर रहे थे । तभी नीकर ने तार लिया था—उनकी मां का देहांत हा चुका था । सोचने को कितनी ही बातें थी लेकिन अवसर कहां मिलता है । सेट्रल एज्यू की एक गानदार नयी कोठी में दफ्तर है । नयी एम्बसडर गाडी है । क्वालिटी में बदन वाल राजनीतिक लीडरो से दोस्ती है । कम्पनी क बोट की बठक । मनेजिंग डायरेक्टर से तनापनी । ऊहरा फाफल । किरानिया की खेला की कतारें । ए ग्लोड डियन स्टनाप्रापर । लगातार टेलिफोन की बज्ज-बुज्ज बुज्ज । लगातार जनरल मनेजर का बुलावा । लगातार पार्टियां ।

भुड कर अतीत की धार ग्यन का अवकाश कहां मिलता है । सामने क गाम में भविष्य तक नहा दख मकत । यतमान पर दूमरे क्षण अतीत बन जाता है । और कभी कभी भविष्य बन जाता है ।

उर्मिला कितने दिना तक नगा था ?

कई धार उनके अन्तमन में यह प्रश्न उठा है । किन्तु दूमरे ही भण क मोषन एगे है कि गाम को धीमती मलहादा क यहाँ डिनर पर जाना है, और भीमती मलहादा बडी बानूनी औरत है और उन्गोंन कहा उर्मिला क कहीं कलत मवाउ पूरा किया था ? राजनाथ नहा चाहते कि बीते हुए दिनों के बार में उनकी पत्नी क कान प्रश्न किया जाए ।

वे उत्सुक और उतावले और शकालु स्वभाव के व्यक्ति नहीं हैं। उमिला जा कहती है निनना कहती है, मुन लेन हैं, अनिच्छा नहीं दिखाते और उत्सुकता भी नहीं। रात में अपने-अपने बिस्तरे पर होते हैं। सिरहान पर हरकी दूधिया रोशनी जलती रहती है। राजनाथ 'इन्वन्टक्स' के कागज देख रहे हैं। उमिला झटक से उपन्यास बन्द करके कोने की टेबल पर फोन दती है। उठनी है और आखें फला कर पूछती है—मुझ पर नाराज हो ?

नहीं तो !—वे एक बार सिर ऊपर उठाते हैं फिर कागजों में खो जाते हैं। इस 'नहीं तो मे क्या है ? ऊब या अनिच्छा या घणा या क्षमा या कुछ भी नहीं है ? केवल तटस्थता है ? नीचे उतरती है और बाहर गलबनी पर जा कर सामन के मकाना की बन्द खिड़किया देखती रहती है। विचारियों के उस पार पतिया का रनह है पतिया का मान-अभिमान है बच्चों की विल्कारियाँ हैं, हसी-ठहाके हैं, गारागुल है, गान्ति है मुख शान्ति है।

राजनाथ ने चाय के खाली प्याने में मिगरेट का टुकड़ा डाल दिया। उमिला बोली—घर में एक भी राखदान नहीं है, और भी कई चीजें नहीं हैं। कल दोपहर में लौटते वकत

तुम क्यों नहीं चली जाती टा ? कल गाड़ी छाड़ जाऊँगा। न्यू मार्केट जा कर खरीद परोस्त कर लेना। मुझ फुरमन कहाँ मिलनी है।—राजनाथ को लगा, जैसे आज ही वे दोनों शादी के 'रजिस्ट्रार' दोपहर से लौट रहे हैं, और जैसे कल ही शाम को घर में दोस्तों को दावत दो जान वाणी है। अपने मन में नयापन का यह भाव उन्होंने जान दूर कर पदा नहीं किया, कोराग नहीं की। यो ही पिछली सारी घटनाएँ भूल गये, और सामने की कुर्सी पर तन कर बठी हुई उमिला उठ बहुत नयी बहुत प्यारी दीखने लगी। यह स्वामाधिक नहीं है। आदमी दुघटनाओं की स्मृति जल्दी नहीं भूलता है चाहता है मगर भूल नहीं पाता है बहुत चाहता है।

राजनाथ मेहता तब तक अपनी कम्पनी के मुख्य बिनी अफसर भी नहीं हुए थे। अपनी कार भी नहीं थी। कम्पनी की कार का इस्तेमाल करते थे। अक्सर थे और मिहनती थे और ईमानदार थे। ग्रेट इस्टन के एक जलसे में एक दोस्त ने उमिला खन्ना में परिचय कराया था। वह ब धून बालेज में पढ़ती थी। बहुत कम उम्र और बहुत सुगाल दीखती थी। पिता किमी विलायती 'एम में 'पी आर आ थ। अगल ही महीने राजनाथ और उमिला कम्पनी की कार में उठ कर 'शान्ति रजिस्ट्रार' के यहाँ चले गये। राजनाथ ने पत्नी के लिए कामती जूँठठी खरीदी। उमिला कितन ही दिनों तक डरता रही गरमाती रही बात बात पर हँसती रही। जीवन का यही चक्र चरता रहा अनन्त काल तक चलता रहता लेकिन

राजनाथ ने कोशिश नहीं की, यो ही पिछली मारी घटनाएँ भूल गये और

उमिला स धोले,— नहा तो ऐसा करेंगे। तुम बल मेरे द पतर चली आओगी। यू भाकेंट चलेंगे। फिर, कोई पिक्चर' देखने चलेंगे। रात का खाना उधर ही खा लेंगे।

उमिला इतन प्यार के लिए प्रस्तुत नहा थी। भयभीत हो गयी। यह राजनाथ उससे कुछ पूछत क्या नहीं? गुस्ता क्या नहीं करत? घर से निकल जाने को क्यों नहा कहते हैं? उमिला एक बार अपनी बिभी सहली के साथ सिनेमा चली गयी थी ता राजनाथ ह पत भर पागल बने रह थे। विदवास ही नहीं हुआ था कि साथ मे कोई सहेली थी कालेज के दिना का कोई पुरुष मित्र नहीं था। उमिला कितनी रोयी धायी थी। राजनाथ कितनी बार बलब मे जाकर हिस्की पी आय थ। कितनी बार चीछे थे—उम्मी, तुम्हारी देह से परायी गंध आती है

ब आज क्या नहीं चीखते हैं?

१९५० म उमिला का विवाह हुआ था। पिताजी और माँ ने दिखावे की नारा जगो दिखायी थी फिर खुश हा गये थ। राजनाथ उमिला से दस ग्यारह साल बड है तो क्या हुआ। लडकी ने अपनी पम्द से शादी की है। अच्छी नौकरी है यू अलीपुर म कोठी है, मोसायटी म मान-आदर है। १९५२ के सितम्बर म राजनाथ को द पतर के काम से जमनी जाना पडा। लगभग सात आठ महीने उधर ही रहेगे। पूरे काटि नेट का दौरा करना होगा। हो सकता है ज्यादा दिन भी लगे। राजनाथ कोशिश करने पर भी पत्नी को साथ नहीं ले जा सके। उमिला जाकर करेगी भी क्या। ब ता इम देश से उम देश दौड़ते भागते रहेंगे। उमिला अपने पिता के यहाँ भी नहीं गयी। किराये की कोठी मे ही अकेली पडी रही एकदम अकेली। और, एकदम स्वाधीन। एक नौकर एक आधा और चार सौ रुपये किराये को कोठी। कमी-कमी राजनाथ का कोई दोस्त फोन से हाल चाल पूछ लेता था। कमी कमी उमिला अपनी मा के पास चली जाती थी। कमी कमी कोई सहेली। कमी कोई फिल्म। कमी थिएटर' और ज्यादातर जासूसी उपयास और फिल्मी परचे और रेडियो और पडोस के बच्चा से खलते रहना। वसे हर ह पत राजनाथ के पत्र आते रहते थे। लम्बे लम्बे उवा देने वाले प्यार और प्यार की बाता से भरे पत्र। उमिला एक बार म समूचा पत्र पठ भी नहीं पाती थी। थक जाती थी नाराज हा जाती थी। इतना प्यार है, तो अकेले गये ही क्यों? और जल्दी लौट या नहीं आते हैं?

एक दिन श्यामली आयी। राजनाथ के एक दास्त की बहन है, विधवा है। पति वायु सेना म था। कश्मीर मार्च पर विमान दुघटना म मारा गया। श्यामली बजीपा पानी है और हर रात सेराज ड म 'डिनर' लेती है। आजाद तबीयत की है। हँसी मडाव पसन्द करती है। बगला फिल्मो मे काम करना चाहती है। दो एक निर्माताआ से बात-चीत चल रही है। बडे ही डग से कपडे पहनती है। उमिला को श्यामली पसन्द नहीं है क्योंकि श्यामली पत्नी नहीं है माँ नहीं है बहन नहीं है सिफ श्यामली है।

विधवा भी नहीं है। मगर, श्यामली को उमिला बहुत पसन्द है क्योंकि कभी-कभी श्यामली अपना 'बघ' अपने घर में ही भूल आती है, और उमिला बीस-तीस रुपया के लिए कभी इन्वार नहीं कर पाती है। और भी कई बातें हैं, औरताना बान !

श्यामली आयी। रेडियोग्राम खोल दिया गया और बयरा काफी दे गया। श्यामली कमरे में घूम-घूमकर नाचती-बलती रही। कितने फन्दान तस्वीरें अलम जलमारी साडियाँ राजनाथ द्वारा जीती गयी ट्राफियाँ बपगाठ पर उमिला को मिली हुई भेंटें श्रृ गारदान जाईने बायलिन।

श्यामली घूम घूमकर कमरे की हर चीज उलटती-पलटती रही। रेडियोग्राम से उभरते हुए गीत के स्वर में स्वर मिलाकर गाती रही। हँसती रही। उमिला के गले में बाँहें डालती रही। फिर थक गयी, और काफी पीन लगी, और बोली—अगर मेहता वहाँ से कोई मम साहब ले आएँ तो ?

उमिला को जैसे डोंगे का धक्का लगा। लेकिन वह तुरत ही गँमल गयी और राजनाथ के पत्रों की खास-खास पत्रितियाँ दिमाग में दुहराने लगी, फिर हँसती हुई बोली—तो क्या ? मैं भी किसी सेठमाह्व के साथ बिलायत घूमन चली जाऊँगी।

श्यामली एक फिल्म निमाता के साथ तीन चार महीने ललन रह आयी थी। उमिला ने इसी बात की ओर इशारा किया था। श्यामली को मजाक बुरा नहीं लगा। उसने कहा—तुममें यह हिम्मत कहाँ है रानी !

फिर पता नहीं किस जलमारी के किस दरार में श्यामली का पुरानी ब्र डी की अठारह औंस वाली बड़ी बोतल मिल गयी। लोपहर का बक्का था। सारी खिडकियाँ बंद थी 'एयरकंडिशनर की घन् घन् घन् हल्की आवाज शुरू रही थी। फिर भी, श्यामली के हाथ में अठारह औंस की बोतल देखकर उमिला उससे भर गयी। बड़े होला न बड़े जलसो में भी वह शराब नहीं पीनी है, जो एक पेग भी नहीं। पीट या 'साइडर' तक नहीं। विश्वविद्यालय में थी तब एक बार हुगली पर नाव की सर करन गयी थी। तीन चार सहेलियाँ थी। खाने का सामान एक चीनी रेस्तरा से लिया गया था। एक अनुभव की लडकी हिलस्की के दो पाई ट' ल आयी थी। उसके पहले या उसके बाद उमिला ने शराब कभी छुई तक नहीं। देखते ही डर लगन लगता था। नाव पर आवा 'पेग' पी कर ही वह पागल हो गयी थी हुगली में कूने लगी थी। मा जान गयी थी कि उम्मी कही से शराब पी कर आयी है। पिताजी महीनो नाराज रह थे

बक्का बेवकत के लिए ही राजनाथ न ब्र डी की बानल घर में रखी थी। मरिया में ब्र डी की एक बूँद अमृत का काम करती है। मगर अगस्त-मितम्बर के कलकत्ते की इस गर्मी में, श्यामली ने नीकर को बुलाया और कहा — तू सेर बप ले आता ! सोडे की दो-तीन बोतलें भी लाना। नहीं साडा नहीं कोकाकाला लाजागे।

बातल खाली हुई तो अंधेरा कल चुका था। उमिला दम चार श्यामली का बना

चुकी थी, कि यह अकेला घर उसे काट खाता है। नीकर स भी डरती रहती है। पास्ट मन से भी। श्यामली सौ बार उर्मिला को कह चुकी थी, कि यह कितनी बड़ी फिल्म अभिनत्री क्यों न जाए, उर्मिला का नहीं भूलेगी। आज का दिन नहीं भूलेगी। आज की रात

दोनों सुर म सुर मिला कर आज की रात की खुशिया के बार म एक बगला गीत गान लगी। फिर, श्यामली ने कहा— खलो, चौरगी चलत हैं। टिकाज म बठकर खाना खाएंगे, और कबरे देसेगे। आज की रात में तुम्हारी काठी पर हा रह जाऊंगी। तुम्ह अकेली नहीं रहने दूंगी, उदास नहा रहन दूंगी।

पूर आठ साल बीत चुके है। मगर, टिकाज की वह रात उर्मिला की जीता म आज तक धु धली नहीं हुई है। कभी धु धली नहीं होगी। उर्मिला उस रात की घटनाएँ और रात के बाद सबड़ा राता की घटनाएँ अपन पति को सुनाना चाहती है। पूरा दास्तान सच-सच कह देना चाहती है। चाहती है कि उसब पाप म उसब अपराध म, उसकी पीडा म उसके पदचाताप म, उसके चले जान म और उसकी वापसी म राज नाथ हिस्सा बटाए। मगर राजनाथ न अतीत पर लाठे का दरवाजा डाल दिया है दरवाजा बन्द कर दिया है। कुछ नहा पूछत है सिफ बहत है—'यू मावेंट चलन। फिल्म देखेगे। प्रिंस जाज घाट क सामन गाड़ी लगा देंगे और टूमला म नहाता हुई चाँदनी और स्टीमरा की कतारें देखते रहेंगे।

राजनाथ भहता का यही स्वभाव है। जो वस्तु स्वाकारत है उस पर किसी दिन टका नहीं करत। जिस एक बार दोस्त बना लेत हैं उसस कभी हाथ नहा साचते। एक ही मिगरेट पीते हैं। एक ही दरजी स कपड़ मिलात हैं। एक ही 'क्लब' क सन्ध्य हैं। और जब उर्मिला नहा थी, ता उह कभी खयाल भी नग आया किसी दूसरी स्त्री स बात भी की जाए। दफ्तर जात रह और फायला म मार्गिंग म दायरा म दरना बडा म सोये रहे। कभी-कभी कहाँ और जाने रह।

दमदम हवाई अड्ड पर उतरत ता दफ्तर क लाग आद थ। उर्मिला नहीं आयी थी। राजनाथ न पत्र द्वारा खान क तारीफ मूचित कर दी था। तार भी दिया था मगर उर्मिला नहा आयी थी। उर्मिला नहा थी। नीकर घर क सामान घुरा कर भाग गया था। सिफ आया थी, और राजनाथ का दरवाजर रान लगा था। बोली कुछ भा नहा सिफ रानी रही थी। राजनाथ न कुछ पूछा भा नग। राना बगल करन का कहा। और काफी बना खान का कहा। आया बगलानि कारणाधी था। जयान थी फिर भी ईमानदार थी। उर्मिला बगो गया और चाँदा का टी-शर्ट और पैज भी कई अगवाव बाँध कर नीकर घटा गया फिर भी क नग गया। माँब क श्रेष्ठ आने का कतदार करता री। माँब आ गत ता रान भीगन लगा।

दुसर दिन राजनाथ दफ्तर गत। कहाँ बरा क सकर जनरल मनत्रर तक

का मायूम था, कि महता साहब की पत्नी उनके परोप म घर छाटकर भाग गयी है। मर्नजिग डाइरेक्टर' न बुला कर कहा—मुझे आपम पूरी सहानुभूति है मिस्टर मन्ता। आप धीरज से काम लीजिए।

राजनाथ की पत्नी हुई आंखा म आग की लपटों पदा हान लगा। व गुस्म म आ गये। बोले—महानुभूति की मुझे जरूरत नहा है, अग्रवाल साहब। मिसेज महता को यहाँ की गर्मी बदान नही हुई हागी। किमी हिलस्टगन पर हागी। चली आएँगी।

मगर, अपनी बात पर उहे स्वय ही विस्वास नही हा रहा था। व जानत थ उमिला लोट आन व लिए नही गयी है। फिर भी वे लालबाजार पुलिस स्टगन गय जोर रपट गिया आये। अखबारो म सगिप्त इतिहार भी दे दिया—उम्मी, मैं आ गया हूँ। तुम जहाँ भी हो चली आजा। रुपया की जरूरत हो ता लिमा।

रोज डाक का इन्तजार करत रह। गायद कहा से उमिला का बाई पत्र आ जाए। कोई समाचार मित्र जाए। राजनाथ महता न क्लव जाना छोड दिया। लोग सम्बेन्ना प्रकट करत थे—विचारा महता। पता नही, बीबी किम आवारे के साथ भाग गयी है।

पाटिया म जाना बाद कर दिया। एक्दम अवल हा गय। दगन और इतिनाम की वही-वडा किताब पडन की आदत डाल ली। बटॉड रसेल विल ड्युरट और टायनबी म खो गय। और उमिला वापस नही आयी। साल मर बीत गया। नो साल बीत गय। बइ साल बीत गय।

तब, एक दिन श्यामली आयी। कोई औरत राजनाथ क घर म नहा आती थी। उमिला क वक्त म आती थी। उमिला के बाद ता राजनाथ किमी दोस्त का भी नहा बुलाते थ। व्यथ म उमिला की चर्चा छिड जाएगी। व्यथ म मनस्ताप बनेगा। मगर श्यामली आयी। बोली—मैं जानती हूँ आप किसी का आना पमन् नही करत हैं। भाइ साहब न मुझे बताया था। मगर, मुझे आना ही पडा। मुझे आपम एक मदद चाहिए। नहा ता मैं मुसीबत म पड जाऊँगी

इन छह-सात वर्षों क भीतर श्यामली ने दो एक फिल्मा म अभिनय भी किया था। गयर डीडिया इटरनेगलन म 'होस्टस' भी रह चुकी थी। आटपेपर पर बीरता का एक साप्ताहिक पत्र भा निकाला था। बीमे की एजेसी भी की थी। किसी आदमी म गायी भी की थी और तलाक भी ले लिया था। फिर भी श्यामली वही श्यामली थी। ख्वसूरत तदुस्त बातूनी हरदम खुग रहने वाली, हर वाक्य मे अँग्रेजी क चार गल बोलन वाली, आधुनिक परम आधुनिक। राजनाथ ने किसी दिन भी उस गह नही दी थी। श्यामली की बाई बात उहें पमद नही थी। कयाकि श्यामली स्त्री नहा थी पाकस्ट्रीट का कोई गानदार रेस्तरा थी।

कया मदद चाहिए ?—राजनाथ ने पूछा। व रूसो का कपेशन्स पढ़ रह थ और सनिवार की शाम काट रह थ। श्यामली उहें फासीमी राजपरिवार की महिला

जसी लगी। बातों में वही घमड़। रूप में वही आभिजात्य आकषण। और चरित्र में वही सस्तापन ! श्यामली जैसे तयार होकर आयी थी। मुस्कराती हुई बोली—मैं कुछ कज में पड़ गयी हूँ। पाँच सौ रुपये की सल्ल ज़रूरत है। रुपये नहीं मिलने से बड़ी बेइज्जती हो जाएगी। मैं जानती हूँ पाँच सौ रुपये कम नहीं होते हैं। गायद मैं कभी वापस भी नहीं कर पाऊँगी। मगर आप चाहे तो मदद कर सकते हैं। आपके लिए बड़ी बात नहीं है।

श्यामली की साँसों में आडीकोलन का, और हिसकी की मिली जुली गंध आ रही थी। उसकी आँखें रह रहकर चमक उठती थीं। वह लगातार मुस्कराती जा रही थी। राजनाथ ने उमिला के जाने के बाद कभी एक घूँट भी शराब नहीं पी थी। इच्छा हुई थी और वे मावुक् भी थे। मगर उठते ही तय कर लिया था मावुकता में बहकर जिदगी बरबाद नहीं करोगे। उमिला चली गयी, तो मैं दुःख में पागल क्या हो जाऊँ ? जो मेरा अपराध नहीं है, उसके लिए सज़ा क्यों भुगतूँ ? शराब नहीं पीऊँगा। औरता के पास नहीं जाऊँगा। ऐसा कोई काम नहीं करूँगा जो भूलने के लिए अपन-आप को भूलने के लिए लोग बिया करते हैं। मैं दुःख भूलना नहीं चाहता हूँ। मैं उमिला को, और उसके चले जाने को भूलना नहीं चाहता हूँ।

राजनाथ उमिला को बहद प्यार करता था। उस प्यार में यौवन की चंचलता नहीं थी, वामनाओं की अस्थिरता नहीं थी। शांति थी और समुद्र जसी गहराई थी पृथ्वी जसी विशालता थी। उमिला थी, तब यह अगाध शांति नहीं थी। उमिला चली गयी है, तब प्यार की यह महानता पदा हुई है। अभाव ने राजनाथ के प्रेम को शांत और उदार कर दिया है। उह दुःख नहीं है, घणा नहीं है, क्रोध नहीं है, प्रतिहिमा नहीं है सिर्फ है आशा कि शायद उम्मी लौट आएगी। आशा है कि उम्मी मरी नहीं है, और वापस आ जाएगी। राजनाथ की मृत्यु से पहले वापस आ जाएगी।

मगर श्यामली की साँसों से हिसकी की तेज गंध आ रही थी। मगर उमिला को गये हुए सात-आठ साल बीत गये हैं। मगर, राजनाथ ने न कभी शराब पी थी न कभी किसी औरत के साथ कार में घूमे थे न होटल में शाम गुज़ारी थी न रात में बहुत देर से घर वापस आये थे। श्यामली मरी-पूरी औरत थी। कितनी उम्र कुछ पता नहीं चलता है। माटी हो गयी है। फूले हुए गोश्त की बहूतायत दह पर है। हसती है तो पूरा शरीर हिलने लगता है। ग्लाउज बड़े कापड़े से घटती है। अब भी लगता है, किसी फिल्म में आधुनिक गबुतला का अभिनय करके आ रही है। अब भी लगता है श्यामली पाँच सौ रुपये मांग रही है तो गर्ल नहीं माँग रही है उयाग भी नहीं। रुपये हाँ तो दना ही चाहिए।

राजनाथ ने पुकारा—गंगा, एक ग्लास प्याला दे जाओ। पाट में काफी है। पानी का ग्लास भी लाओगी।

श्यामली की समझ में आ गया, मेहता की तटस्थता का बफा पिघल रहा है। अपनी विजय पर वह खुश हुई। मेहता श्यामली से अच्छी तरह परिचित नहीं है। जो लोग परिचित हैं वे अब श्यामली के लिए काफी नहीं मँगाते हैं। अपने घर में नहीं मँगाते हैं। किराये पर कमरे लगाने वाले होटलों की बात और है। वहाँ का सजाला भी अंधेरे के बराबर होता है। और अंधेरे में कौन किसे पहचानता है! लोग खुद को भी नहीं पहचान पाते हैं। जाकृति बदल जाती है। स्वर बदल जाता है। उद्देश्य बदल जाता है।

गंगा प्याला लेकर आयी और काफी बनाने लगी। एक बार उसने श्यामली का देखा फिर सिर नीचे झुका लिया। श्यामली की तरफ दुबारा देखने का उसे साहम नहीं हुआ। राजनाथ यह बातें समझ नहीं सके। श्यामली समझ गयी और आतंकित हो गयी। गंगा ने प्याला श्यामली के पास टेबल पर रख दिया, और तब से बाहर निकल गयी। गंगा अब तक नहीं भूली है। एक छन के लिए भी नहीं भूली है। एक-दूसरे के गले में हाथ डालकर उमिला और श्यामली कमरे में बाहर निकली थी, और बिना कुछ बोले सीढ़ियाँ उतर गयी थी।

काफी पीने के बाद श्यामली ने पूछा—'बलिभूत साहब कहीं घूमने चला जाए। महा बठे बठे क्या करेंगे? आप इतने उदास क्या लीखने हैं? जरा हसिए-बोलिए, मैं पत्थर की मूरत नहीं हूँ, जवान औरत हूँ! जवान नहीं भी हूँ तो बूढ़ी नहीं हूँ।'

और श्यामली की भरपूर खिलखिलाहट डाक्टर गुरु की दीवारों में टकराने लगी। वह बड़े ही इत्मीनान से मोर्चे पर अघट्टेगी थी। कोई फिज नहीं, कोई सगाय नहीं, कोई भय नहीं। जैसे बरसों से वह इसी घर में रहती आयी है। शाम बिन रहती है, और पति-पत्नी अब सर का जाएंगे। बाजार में हल्की फुल्की चीजें खरीदेंगे खिड़कियाँ के लिए हाथ करेके के पत्ते, निपाई पर काने में रखने के लिए कोई फूडदान, कोई गिलौना, कोई लाउञ्ज-पीस'

यहाँ अच्छा नहीं लगता, श्यामली! चला बंगल का कमरे में चले यानी यह कमरा गुरु गुरु है गंगा जाती जाती रहती है यानी बंगल का कमरा मेरा मतलब है मैं—राजनाथ मेहता ने एक ही मॉम में मगर बीच-बीच में रक्कड़ इतना कहता लिया। फिर गम से लाल हो गया। जैसे स्कूट में पड़ने वाला कोई लड़का पड़ोस की लड़की का गिनमा चलन का अनुरोध कर रहा हो। वह डालने के बाद उन्हें खुद ही आश्चर्य हुआ। 'तना साहब के बस बर मक' आश्चर्य हुआ, और घणा हान लगी। अपने ऊपर और श्यामली पर।

ता तसम गरमान की क्या बात है? मैं आपका तुम्हें दूँ समझती हूँ, मेहता साहब! मैं आपकी शास्त हूँ। 'बलिभूत' में ही चल कर बैठ। हम दाना बच्च

नहीं है, जो करगे, अपनी मर्जी से करगे,—श्यामली मुस्कुराती हुई सोफ स उठी, और राजनाथ के पास आकर खड़ी हो गयी। श्यामली लम्बी चौड़ी औरत है। मजबूत है। उसका सहारा लिया जा सकता है। मगर धपन प्रस्ताव की प्रतिश्रिया, और श्यामली के उत्तर की प्रतिश्रिया राजनाथ मेहता पर और ही ढग से हुई। मैं दुख दद म हू इसीलिए श्यामली की बाँहो म दूबना चाहता हू। श्यामली मेरा दुख दद समझती है, इसीलिए मेरी बाँहो मे दूबना चाहती है। नहीं, मुझे कोई दुख नहीं है। किसी भी बात का दद नहीं है। रिफ शाम हो रही है और श्यामली पाँच सी स्पथ लेा आयी है, और मैं द्विस्की की ग घ से और शाम के हल्के अँपेरे से पागल हो रहा हूँ। मैं पागल नहीं हू।

बहुत सोच समझ कर, और बहुत स्थिर शब्दो म राजनाथ मेहता ने श्यामली से कहा—तुम बाजार औरत हा। मैं तुम्हारी दोस्ती नहीं चाहता हू। पाच सी स्पथे तुम्हे चाहिए। मैं चेक दे देता हू। चेक लेकर चली जाओ। फिर कभी मेरे पास नहीं आओगी मुझ पर सती ही दया करना

श्यामली हतप्रभ नहीं हुई। शोधित भी नहीं हुई। चुपचाप वापस लौटकर साफ पर बठ गयी। चुपचाप मेहता की ओर देखती रही। राजनाथ मेहता न 'हैगर पर टगो कोट की जेब से चेक बुक' निकाला। सधे हुए हाथ से लिखा—मिस श्यामली तालुके दार। और पाच सी का चेक काटकर श्यामली की तरफ बटा दिया। श्यामली का ध्यान चेक की तरफ नहीं था। वह सिर मुकाये कई बात सोच रही थी। चेक लेकर उठ खड़ी हुई। चेक पस म डालकर जागे लगी। दरवाज के बाटर चली गयी। फिर वापस आ कर बुभ हुए स्वर म बोली—मिस्टर मेहता उमिला बाजारू औरत है। किसा भी रात आप उससे चु गर्किंग होटल मे मिल सकते है। आप बहुत अच्छे आदमी है। शायद अब तक उमिला के लौट आन की प्रतीक्षा कर रहे है। प्रतीक्षा मत कीजिए। आप भी बाजारू आदमी बजाए। जीने का जोर टुश रहन का यही एक तरीका रह गया है। हर मद हर औरत बाजारू है। तिकाऊ है। जो नहीं है, वह आपकी ही तरह घुल घुलकर मरता रहता है। मैं मरना नहीं चाहती इसीलिए बाजारू हू। आप मरना चाहते है इसीलिए बाजारू नहीं है। मिस्टर मेहता, होश मे आइए।

श्यामली के जान के बाद, बहुत देर तक राजनाथ वही उसी स्थिति म चुपचाप बठे रहे। फिर नीचे उतरे। गगा से बोल—त्वाना गम रखना। मैं घट भर म वापस आ जाऊँगा। सो नहीं जाओगी।

'गराज स एम्ब्रेसडर निकाल कर चौड़ी सडक पर आ गय। रेलवे प्रासिंग पार किया। दुर्गापुर पुल के स पार पट्टाल पम्प पर रके। पेट्रोल का मीटर चपन लगा। पम्प का एग्लोड्रियन मेकनिक आकर बोला—गुडनाइट, मिस्टर मेहता माल्ट ?

प्रश्न मे स्वामाविकता भी है व्य ग्य मी है। रात के साज आग बज होग, जयाना

दर नहीं हुई है। मगर मेहता ता इतनी देर भी बाहर नहीं रहते हैं। द पतर स ज्यादा तर सीधे घर चले आते हैं। फिर निकलते नहीं। मेहता ने उनर दिया— 'मर्मविग स्पगल ! ऐड, इट इज नाट सो लट, जागन !

जासन काफी अरसे से इसी पेट्रोल-पम्प पर है। पहले उमिला और राजनाथ साथ ही आते थे। पेट्रोल का हिगाव उमिला ही रखनी थी। उन दिना हिलमन गाडी थी। फिर राजनाथ यूरोप चल गये, और उमिला भी वहीं चली गयी। तब स राजनाथ अकेले आत है। जासन उमिला से बहुत बातें करता था। अपन घर परिवार की बातें। हेंसी मजाक करता था। राजनाथ अक्के आन लगे थे ता उसने एक बार पूछा था। राज नाथ ने उत्तर दिया था—'गी लपट मी ! वह मुझे छोडकर चली गयी है। कहां चली गयी है ? स्वग ? या कहीं और घर बसान चली गयी है ? राजनाथ का उत्तर सुनकर जासन ने सीन पर भास बनाया था, और चुप हा गया था। इसके बाद उसने उमिला के बारे म कमी कोई सवाल नहीं किया। कोई सवाल नहीं। सहानुभूति तक प्रकट नहीं की। मगर, जासन का देखते ही राजनाथ को उमिला की याद आती है। जासन क सात बच्चे है यह सुनकर एक बार उमिला हेंसन लगी थी। जानसन न हसी मे साथ देते हुए कहा था— 'मिसेज मेहता आइ विल प्रे टु गाड, यू चुड हैव डबल दन मी !' जानसन प्रायना करेगा कि उमिला को चौदह बच्चे हो। उमिला को, यानी राजनाथ मेहता को !

राजनाथ ने गाडी स्टार्ट की बदमान रोड पर चल आये। नेशनल लाइब्रेरी। जूलाजिकल गाडन। रेसकोम। विक्टोरिया ममोरियल। मदान म पति-पत्नियो के जोडे घूम रह है। बच्चे आइमफ्रीम बागे को घेर खडे है। एक जादमी सिर पर सकडा बलून उडाता जा रहा है। एक बच्चा अपनी कार के फुटरोड पर खडा, लगातार हान बजा रहा है। बूढ़ी मद्रामिन नौकरानियां छोट छोट बच्चा के पीछ भाग रही है। कई पजाबी परिवार चाट वाले के पास रक हैं। और जहा जॅपेरा है जहां पेडा के साथ है जहां एकांत है वहाँ सस्त कपडो और सस्ते चेहरो वाली बाजार औरतें खडी है चहल-कदमी कर रही हैं पुलिस से डरती हुई, उगाले से डरता हुई, हर चीज म डरनी हुई इन्तजार कर रही हैं, किसी का भी इन्तजार !

उमिला बाजारू औरत है ! राजनाथ मेहता न जोरा म ब्रेक दबायी, जोर क्लिक विलक करती हुई, गाडी उछल कर रक गयी। वे चुपचाप गाडी म बठे रह। एक औरत कोई मद्दा गाना गुनगुनाती हुई उनक पास स गुजरी, मगर कोई इदारा नहीं पाकर, गाडी म आकर बठ नहीं गयी। उमिला बाजारू औरत है, और चु गकिग हाटल म रहती है। शादी से बहुत पहले दोन्तान तास्ता क साथ राजनाथ एक बार चु गकिग गय थ। चाइनीज होटल है, रेजिडेण्डे शयल। दस रुपये म बारह घटो क ठिए एक कमरा मिलता है। चाइनीज पोहे मे लकर, अमरीकी बारवान शराब तक मिलती है।

जयादातर जहाजी छाकरे यहाँ आते ह। साथ औरतें लाते हैं। वैसे, बु गक्विग म भी आरतें रहती हैं। देसी आरतें, बर्मीज और चाइनीज औरत। दार्जिलिम की पहानिहें। ए ग्लोइ डियन। राजनाथ महता बु गक्विग गये थे, और वहाँ का वातावरण, बहा व लोगो का देखकर ही वापस जा गये थ। रहने का साहस नहीं हुआ था। उर्मिला वहाँ रहती है। क्या रहती है ?

दो रुपये टिप पाकर, एक बूझा मुसलमान बरा उह चौदह नम्बर के फ्लट म ल गया। बोला, दो बर्मी औरतें हैं, और एक हिन्दुस्तानी औरत है। हिन्दुस्तानी का नाम है उर्मिला। आप शायद उसी क पास जाना चाहत हैं। बहुत शरीफ औरत है। कभी किसी ग्राहक से झगडा-तकरार नहीं करती है। जो मिलता है ले लेती है। शराब तक उसको हराम है। एकदम गाय है विचारी। कही जानी आनी नहीं। यहा पडी रहती है। मजहबकी खयाल की औरत है

दोनों बर्मीज औरतें ड सिय टबल क सामन खनी मकअप बना रहा था। उर्मिला पलग के किनारे पाव मोडकर बठी थी। ब्लाउज पीस पर फूल बना रही थी। केश बाध करवा लिये थे। गरीर पर कोई गहना नहा था। थोडी दुबली हा गयी थी, मगर चहरा एकदम वसा ही था। आखो म वहा सरना। वही जबोध शिशु जसी निरीहता। पहली नजर मे तो उसन पहचाना ही नहा कि राजनाथ है। पहचान कर पलग से नीचे उतर आयी। ब्लाउज का कपडा हा-हा म ही पडा रहा। आख जमीन पर झुकी रही। एक बर्मीज ने राजनाथ से पूछा,—किसको मांगता है ? उमा का ?

राजनाथ ने उसका सवाल नहीं मुता। सीधे उर्मिला की आसा म देखत हुए बान—यहा से चलो उर्मिला।

उर्मिला न हाथ का कपडा पलग पर डाल दिया, और राजनाथ क साथ कमरे स बाहर चली आयी। मीनिया उतर कर मडक पर चली आयी। एम्ब्रेसडर की पिछली सीट पर बहोस सी लेट गयी। रायी नहा चीखी नहा एक शर भी बाली नही। राजनाथ पागल की तरह तेजी से गाडी चलाते रहे, जस नाई उनका पीछा कर रहा हा। पिछली सीट पर सायी हुई बाजारू आरत का उनस छीन ले जाना चाहता हो। गाडी बहुत तज्र माग रही था और पिछल सान वनों का समय बहुत पीछ छूटा जा रहा था। यूरोप से लौटने क बाद, राजनाथ महता एक दिन के लिए भी कउकत स बाहर नहा गये थ। एक रात भी उ हान उस कमर स बाहर नहा बितायी थी, जिसम उर्मिला और व साते थे। तौशिस कई औरत न की थी। राजनाथ की नौकरी और राजनाथ का बक एकाउंट और राजनाथ की कार खबर कई आरत उनक साथ गाम और रात और जिन्दगी काटना चाहती था। उर्मिला की एक मौसरी बहन थी। राजनाथ क द फतर म एक त्रिचिबन स्टनाप्रापर थी। और, कद दास्त व जा राजनाथ का अपन मकान क खाली कमरा की जिन्दगी स बाहर निकाल कर गहन क गारागुल

और धूम घडावे में खींच लाना चाहते थे । राजनाथ वहाँ नहीं गये । कभी नहीं गया । 'बेडरूम में 'हैगर' पर उमिला का स्लीपिंग सूट' टंगा रहा । 'स्टडी टबल पर उमिला की बड़ी-नी तस्वीर पड़ी रही । अलमारियों में उमिला की साड़ियाँ और नृत्य गार का सामान, जोर छिट-पुट गहन ।

गाड़ी का 'हान' सुनते ही, गंगा दरवाजा खोलकर बाहर आई । मुशी से आश्चर्य से, भय में चीख पड़ी । राजनाथ न नीचे उतर कर पिछली सीट का दरवाजा खोला । उमिला संभल कर नीचे उतरी और बिना छत्र भर भी झिझके, अपने घर की सीटियाँ चढ़ने लगी । गाड़ी गराज में रखकर राजनाथ ऊपर आय ता उमिला उसी सोफे पर बठी हुई थी, जिस पर कुछ ही घंटा पहले श्यामली बठी थी । श्यामली बाजारू जोरत है । उमिला बाजारू जोरत है । हर औरत बाजारू औरत है और हर मद बाजारू मद है । मर और औरत में क्या भेद है ? उमिला जोर राजनाथ में क्या भेद है ? श्यामली में और ?

सारे मद और सारी औरत जानवर है । यह दुनिया जानवरा की दुनिया है । माहिस्य जिस आदश की बात करता है, सरासर भूठ है । घम जिस स्वर्ग की बातें कहता है, सरासर भूठ है । चारों ओर नरक ही नरक है । बुगकिंग होटल का नरक । सत्य कुछ नहीं है । सुन्दर कुछ नहीं है । शान्ति कहीं नहीं है । यह सब सिर्फ कित्ताबो में है । घम और दशन, और साहित्य और कविता की कित्ताबो में । और, नाटको में । फिरमो के पत्नों पर । जहाँ अग्नाक वाटिका में रह कर भी सीताएँ स्वर्ण का तरह पवित्र वापस लौट आती है । जहाँ जगल में रह कर गकुत्तला वापस लौट आता है । मयती वापस लौट आती है । पवित्र अकलकित, स्वच्छ, सुन्दर—य सारे विशेषण भूठ हैं । जानवरा की इस दुनिया में इन निरर्थक गल्पों की आवश्यकता नहीं है । जीवन सुख नहीं है । जीवन का नाटक मुखान्त नहीं है, 'कामडी नहीं है । भयानक टजनी है । भयावह जगल है जोर घना अंधकार है ।

जा कोई लेखक मुख जोर शान्ति और प्यार जोर परिवार की कल्पनिया लिखता है वह मिथ्यावादी है । परिवार कहीं है ? परिवार क्या है ? जादमा प्यार करता है । और अपनी पसंद की जोरत से गादी रचाता है । और रुपये पस इकट्ठा करता है । और मूबसूरत जोर जानाकारी बच्चे पदा करता है । आर कश्मीर में और हिल स्टेशन में छुट्टियाँ बिताता है । यह सब भूठ है । ऐसी कहानिया भूठ ह । जानवर एक दूसरे का प्यार नहीं करते है । सिर्फ गोश्त में टुकड़े को प्यार करते ह । चाह वह गान्त का टुकड़ा उनके बच्चे का कलजा हा क्या न हा । वास्तविक जीवन कहानी नहीं है, नाटक नहीं है, कामडी नहीं है । वास्तविक जीवन श्यामली है जा किसी भी चकबुक वाल मर के 'बेडरूम में सा सकता है । वास्तविक जीवन उमिला है ।

और सड़को पर, गत्रिया में बिस्तरा पर कित्ताबा में, फूलदाना पर उमिला क

रक्त के छीटे हैं। उमिला के रक्त से सारी धरती दागदार है। सारा आकाश दागदार है। हम सभी लोग राक्षस हैं, और उमिला का रक्त पीने के सिवा हमारे पास जीने का कोई तरीका नहीं है। हम चाहे कितनी भी सीता गकुन्तला सावित्री दमयन्ती, सुकन्या मन्दासारा की रचना क्यों न करें, उमिला और श्यामली और विक्टोरिया ममोरियल के साथ भेहर गाम गवडी औरता के बिना हमारा जगत् कानून चल नहीं सकता है। आज तक नहीं चल सका है। हम वन जीवन की हिंसा और रक्तपात से एक कदम भी आगे नहीं आ सके हैं।

हम नींद में सोये हुए गहरा पर हज्जारों हवाई जहाजों से बमबारी करते हैं। हम बच्चा और औरता से भरी हुई नावें पानी में डुबो देते हैं। हम उन जंगली जानवरों से बेहतर कस हैं जो निरीह और निर्दोष पशुओं पर हमला करने में जरा भी शरमाते नहीं हैं। हम अपने बच्चा को चारी करना सिखाते हैं हम अपनी बीवियाँ को वेश्याशुद्धा में छोड़ आते हैं हम अपने पडासियाँ के घरों में तिन तूहाडे डाका डालते हैं। हम अपने जादियुगान पुरखों से सम्म्य और गरवृत्त कस हैं जो नर-मांस खाते थे और वन दवताओं के सामने पराजित पशुओं की बलि देते थे और न्त्रियों का सामाजिक संपत्ति मानते थे ? हम आत्मी कस हैं ?

और सभ्यता क्या है ? सस्कृति क्या है ? सामाजिक जीवन का मीत्य क्या है ? हम किस मुँह से अपने घम और दान और विधान और साहित्य की प्रशंसा करते हैं ? क्या कित्तावा में लिखे दान भर से सत्य की स्थापना हो जाती है ? वास्तविक जीवों में सत्य कहाँ है ? सत्य कहाँ है और गिब और मुन्टर कहाँ है ? सभ्य भूट है सभ्य सिर्फ उमिला

सामने साँचे पर आँसू मूँद उमिला पत्नी थी और राजनाथ का सारा रिझाँ यंत्र समाप्त हो गया। सारा आँसू समाप्त हो गया। सारा अंतर्द्व समाप्त हो गया। अब बीच कमरे में लाल के स्तम्भ का तन्त्र गड़गड़ा गया और बाहर गड़गड़ा गया सवाल—मममाहृत्त का जदर से जाओ। तन्त्र तबीयत ठीक नहीं है। कपडें बदलवा दो और हाथ मुँह धुना दो। फिर खाना लगाओ

उमिला अपने आप उठ खड़ा हुई और गहमा हुई आँसू से अपने पति का, सान आठ गाँव के बाँस मिन्ट पति का स्तम्भों हुई गंगा के पास पापु पत्नी गयी।

राजनाथ और उमिला ने साथ साथ खाना खाया। उमिला एक एक बीर खर खर कर खा रही थी। बहुत धीरे धीरे पराठ के टुकड़े तोड़ना उस पर सँभल जायता दाँव के प्यान में शबाना और हल्ल-हल्ल खवाना था। उस पराठ का टुकड़ा नंगे ऊपर का टुकड़ा था। हाथ धान के बाँस गड़गड़ के पास था कपडें बदलवा दो गया। राजनाथ कुर्सी पर बैठे हाथ और मिगस्ट पाँव रखे। तन्त्र धाम स्वयं से बनी—अब जा कर माँ जाओ। तन्त्र ने बिस्तर लगा लिया हाँ। मैं दाँव खर बाँस गाँव था। एक ग्रेटम

तयार करना है।

उर्मिला खेल-कूद में थके हुए छोटे बच्चे की तरह, बिस्तर पर जा कर लेट गयी। यही मेरा कमरा है। दीवारों पर वही पुरानी तस्वीरें हैं। गोदरेज की जलमारी उसी जगह पर है। 'रक' पर उसी तरह कितानें रखी हैं। वायलिन उसी तरह टंगा है। मसहरी भी शायद, वही है। सिफ कलेडर बदल गया है। १९५३ के बाद एक बड़ा-सा अंतराल, और फिर, एकदम १९६१ जा गया है। सिफ कलेडर बदल गया है, राजनाथ वही हैं, एकदम वही है। अल्पभाषी और थके थके हुए, उदास उदास पति की तरह नहीं, पिता की तरह दीखते हुए। कनपटियों पर बाल सफेद हान लगे हैं। चश्मे का फ्रेम मोटा हो गया है। आवाज पहले से भारी हो गयी है। और, पहले की तानी नहीं रह गयी है। गुस्सा नहीं रह गया है। क्या राजनाथ बूढ़े हो गये हैं? शबल मूरत से तो कमजोर नहीं दीखते हैं। मगर, गुस्सा क्या नहीं करते हैं? क्यों नहीं पूछते हैं कि मैं चु गविंग म कब से थी क्यों थी? क्या नहीं पूछते हैं कि मैं घर से बाहर कदम क्यों रखा इतन बरस कहा कहा रही, किसके किसके साथ रही, कसे रही?

मेरे हाथ पाव क्यों नहीं काट डालते हैं? मर गले में रस्सी बांध कर छत से टांग क्यों नहीं देते हैं? राजनाथ इतन शांत क्या है? उर्मिला को नींद आ जाए, यह स्वाभाविक नहीं था। मगर, अपने कमरे में, अपने बिस्तर पर, अपनी मसहरी में आते ही वह सो गयी। गहरी नींद में सो गयी। बहुत दूर बाद राजनाथ आये। मसहरी में आख लगा कर देखा, उर्मिला सो रही है। अपने बिस्तर पर नहीं गयी। वापस डाइग्रेस में जाकर सोफे पर लेट गये और सारी रात रुसा के कॉफेजन्स पन्ते रहे। उर्मिला आ गयी है। उर्मिला अपने बिस्तर पर सोयी हुई है।

पूरा एक हफ्ता बीत गया। राजनाथ घर से दफतर और दफतर से घर आते रहें। किसी को बताया तक नहीं कि उनकी पत्नी वापस आ गयी है। उर्मिला धीरे धीरे स्वस्थ होने लगी थी। चेहरे पर पुरानी चमक लौट आयी थी। सिफ आत्मविश्वास नहीं लौटा था। हरदम डरी डरी रहती थी। मगर, राजनाथ के मन में कुछ नहीं था। वे चु गविंग होटल तक को भूख चुके थे। यह विस्मृति उन्होंने जान बूझ कर पदा नहीं की थी। कोणिंग नहीं की थी। यो ही पिछली सारी घटनाएँ भूल गये, और सामन की कुरसी पर तन कर बठी हुई उर्मिला उन्हें बहुत नयी, बहुत प्यारी दीखने लगी। यह स्वाभाविक नहीं है। मगर, जीवन में अधिकतर अस्वाभाविक बातें ही होती हैं। उदादा-तर ऐसा ही होता है, जिसका कोई कारण नहीं होता, कोई पूर्वान्नास नहीं होता कोई सूत्र नहीं होता है।

राजनाथ असाधारण व्यक्ति नहीं हैं। मामा-य मनुष्यों की तरह ही दुबल हैं और ईर्ष्यालु हैं, और अपने उपर दूसरों द्वारा किये गये प्रत्येक अन्याय अत्याचार का प्रतिशोध लेना चाहते हैं। शक्ति से बुद्धि से, नहीं ता छल छद्म से ही बदला लेना

चाहते हैं। समाज की विवृतियाँ, युग की कुरूपताएँ उमिला को उनसे छीन ले गयी थी। समाज ने उनका छोटा-सा परिवार उजाड़ दिया था। समाज ने, या उमिला ने बात एक ही है। वे उमिला को वापस ले आये हैं। उमिला बिस्तर पर बेसुध सोयी है। उमिला मनोयोग से खाना पका रही है। उमिला सामने बठी सुबह की चाय पी रही है। उमिला गाड़ी में साथ बठी दुगली तर कर आती हुई ठंडी हवा का मजा ले रही है। और, राजनाथ प्रतिशोध ले रहे हैं। समाज को दिखा रहे हैं, कि उन्होंने फिर से अपना आशियाना बसा लिया है। उमिला से प्रतिशोध ले रहे हैं, कि फिर से उनकी सुख-शांति उनकी निश्चिन्तता, उनका आराम उन्हें वापस मिल गया है। समाज पराजित है। उमिला मयभीत है। राजनाथ मेहता कहते हैं—उम्मी तुम्हारे छोट छोट बेश मुझे पसन्द नहीं हैं। दो चार महीनों में बेश बड़े हो जाओँ ता जूड़ा बाँधा करोगी।

और ऐसी ही बातें कह कर मुस्कराते हैं। उम्मी भी मुस्कराने की कोशिश करती है। सफल नहीं होती है। सिर झुका लेती है और बाहर जा कर बालकनी पर खड़ी हो जाती है। उसकी द्विविधा का अन्त नहीं है। उसकी अशांति की सीमा नहीं है।

उस दिन शाम को राजनाथ दफ्तर से जल्दी लौट आये, और चाय पीने के बाद उमिला के माथे पर हाथ मारकर निकल गये। कई चीजें खरीदी थी। खरीद परों हत के बाद, उमिला के माथे पर हाथ मारकर निकल गये। उमिला को ग्रीन्-वन आइसक्रीम बहुत पसन्द है। राजनाथ अब तक भूले नहीं थे। अपने लिए उन्होंने 'एस्प्रेसो' मँगवायी। तब तक जाने और शीतल वातावरण में उमिला का धीरज टूट गया। रस्तरों में बहुत थोड़ा सलोग थे। उमिला ने राजनाथ का हाथ पकड़ लिया, और लगभग सिसकती हुई बोली—तुमने मुझे माफ़ किस कर दिया? तुम तकने उदार क्या हो? मुझे अपना प्यार क्या करत हो?

अपना चीवी से कौन प्यार नहीं करता है? और गलती तो सभी सहानुभूति है! उम्मी अपनी बड़ा जितनी है। इसमें पाँच-सात साल का बच्चा कौन कौन करता है! उम्मी का मत बनो। देना आत्मगर्भीय पिघलती जा रही है—राजनाथ ने हाथ मुड़ाते हुए कहा। दूर बैठ हुए राजनाथ की तरफ लम्बे लगे थे। उमिला गाना गा रही थी। सँभल गयी। चुपचाप धम्मक से उठा-उठा कर आत्मगर्भीय गाना गयी रही।

दयामयी उसे टक्का पर अपना एक पोस्टर के पर लगवाया था। गाना किसी विन्म का निर्माता या निर्देशक था। अब तो उमिला नाम या चरित्र तक उमिला का याद नहीं था। उमिल नौकर का रज कर हाउस में खाना मगवाया था। शराब का आया थी। उमिल उमिला से कहा था कि उमिला तुमिया भर का सारी अमिनत्रिया ग ग्याग मुक मुक और क चार तो उस गल्लिबाबप गैलर और मरलिन मुनगा क मुहाबल म कहा कर सकता है। और, उमिला ने कहा था कि वह मरलिन मुनगा या मुक्किया गन मुक भा बन जाना चाहती है। और उमिल क कह कर वह कुर्मी ग नाच निर ग्या था और उमिल पर गलाजार क करन ग्या थी और बहाना हा ग्या थी। अब तक बहाना

रही थी, पता नहीं। रात में दो-तीन बजे नींद खुली थी तो कमरे में अँधेरा था, और वह उस निर्माता या निर्देशक की बाँहों में लिपटी सो रही थी। उसे विश्वास नहीं हुआ था। वह आतंकित हो कर चीखने लगी थी, और दुबारा बेहोश हो गयी थी, बेहोश हा गयी थी और मर गयी थी।

उर्मिला मर गयी, और दूसरे दिन उसे अपने घर लौट आने का साहस नहा हुआ। वह नहीं लौटी। वह कहाँ लौटती? क्या लेकर लौटती? किस ताकत से लौटती?

राजनाथ न कहा—क्या सोच रही हो? सोचने से बेकार सिरदर्द होता है। चला नाइट गों में फिल्म देखेंगे।

नहीं रुक जाओ। मैं तुम से एक बात कहना चाहती हूँ। जिस रात उस हाटल से आयी उसी रात से कहना चाहती हूँ। मगर, तुम मौका नहीं देते हो। आज कहूँगी ही। मेरी बात सुन लो। फिर जो कहेंगे, वही कहेंगे—उर्मिला सीधी तन कर बठ गयी। जैसे वह फाँसी के तख्ते पर जा रही हो। चेहरा कड़ा हो गया। आँखें राजनाथ के चेहरे पर टिक गयी। जो कहना चाहती थी, उसे व्यक्त करने के लिए उसे शब्द नहा मिल रहे थे। साहस नहीं हा रहा था। इन छह मात दिना में, भय और आतंक की स्थिति में भी जीवन का जो रस, जो गान्ति, जो तृप्ति जा सुरसा उसे मिली थी वह छान देना नहीं चाहती थी। राजनाथ पर उसे श्रद्धा थी, विश्वास था। मगर साहस नहा हा रहा था। मगर आज वह डालना ही होगा। और कोई उपाय नहीं है।

उर्मिला का कठ सूखने लगा। उसने सूखे हुए होठों पर जीम फिरायी। फिर बोलने लगी—मैं तुमसे छिपाना नहीं चाहती हूँ। चाह तुम मुझे उमी होटल में वापस क्या नहीं दे आओ। मैं एक भी बात नहीं छिपाऊँगी।

नहीं कहने से भी कोई फक नहा पड़ेगा। मैं पिछली बातें जानना नहीं चाहता हूँ। तुम वापस आ गयी हो, और हम ने एक नयी जिन्दगी शुरू की है। वापस लौटने में मेरा या तुम्हारा, किसी का लाभ नहीं है—राजनाथ न कहना चाहा, लेकिन, वह नहा सके। पता नहा, उर्मिला क्या कहना चाहती है। हो सकता है, उर्मिला बीमार हा। हा सकता है, उर्मिला ने किसी गुंडे गोहद से गान्ति कर ला हा। हो सकता है उर्मिला पर होटल वाले का कब्र हो। हो सकता है कुछ भी हो सकता है।

मैं अकेली नहीं हूँ। मेरी एक पाँच साल की बच्ची ह। मर साथ नहीं रहता है। जब तीन साल की हो गयी ता मैंने उसे लॉरेटो बॉवट में भरती कर दिया। क्या बोडिंग हाउस में मेड्रन के पास रहती है। मैं हर महीने फाँस के रपय भेज दती हूँ। वह जब पेट में थी, तो मैंने उसे मार डालने की कोशिश भी की थी। वह मरी नहा। मैं खुद भी मर जाना चाहती थी। मर नहीं सकी। मुझे साहस नहा हो सका। बड़ बार साल मर की बच्ची को गोद में छिपाये बालीगज थोल क विनारे-विनारे घूमती रही। पानी में बूदन का साहस नहीं हुआ। उसका नाम मैंने रक्खा था वीणा। मगर,

चली जाऊंगी

राजनाथ मुस्कराने हुए बोल—अब वार नहीं पन्ती हो ? तुम्हारे आन की दूगरी ही रात लालबाजार पुलिस की स्पेशल ग्रांच न चुर्गकिंग पर धावा किया । मनेजर जीर सारे वर जेल मे हैं । तुम्हागे व बर्मीज महलियां भी पकडी गयी हैं । होटल पर ताला बन्द है जीर पुलिस का पहरा है । लालबाजार का चीफ इस्पक्टर' मरा सहपाठी है, तुम्ह पना नहा है ?

और, राजनाथ हमन लगे । ठहाके लगाकर हँसन लगे । लोग जी उठत हैं हाश मे जा जात है प्यार करन लगते है तमी इस तरह हँसते है ।

उर्मिला गाडी म जाकर बठ गयी । राजनाथ ने बहुत दिनों के बाद सिगार जलायी जीर लाअर सक्थु लर रोड पर तेजी से गाडी चलन लगी । उर्मिला न पूछा—
दघर कहा जा रह हा ? हम लाग का घर ता उल्टे रास्ते पर है ?

लगिटा क वोटिंग हाउस जा रहा हूँ । तुम जाना नही चाहती हो ? राजनाथ का यह उत्तर मुनकर उर्मिला दर तक ऊपर जाकाश की आर चाँद-तारो की जोर देखती रही । फिर, पफक पफक कर रोन लगी । उर्मिला के रोने का अन्त नहा है । मगर, राजनाथ चाहत हैं कि उर्मिला का रोना देर तक न रके रोने से तबीयत हल्की और साफ हा जाती है । और, राजनाथ भाव रह हैं कि साहित्य की हर कर्मिडी' की तरह, हर सुखात नाटर की तरह यह वास्तविक जीवन भी चत म किसीन किमी तरह मूब-सुरत फूलो और पीवा और चिडिया के कलरव स मरा चमन बन ही जाता है । आप ही आप बन जाता है, या आन्मी परिस्थितियो स समनौता करके अपनापा करक चमन बना लेता है—बात एक ही है । आदमा आगिर आदमी है जानवर तो नही है !

एक वृत्तशिकन का जन्म

इंटरम्यु कमेटी के सामने मोला बहुत नवस मटसूस कर रहा था। चारों तरफ से सवालो की बौछार हो रही थी 'तुम्हें स्पोट सम दिक्कत है? कौनसी सोसाइटी के मम्बर बोगे? म्यूजिक का शौक है?' काले रंग के मोटे फ्रेम का चश्मा लगाये एक गाऊनधारी प्राफेसर मोला के जवाबो को नाट करत जा रहे थे। कालेज का प्रोस्पेक्टस पढ़ कर मोला इतना प्रभावित हुआ था कि उसने तय किया कि वह हर काम में हिस्सा लेगा।

जब रोल काल के बाद ही सारी क्लास का छट्टी दे दी गई तो मोला को एहसास हुआ कि अब वह आजाद है, कॉलेज स्टूडेंट है। हाई स्कूल की तरह अब हर छोटी-मीमात पर उसकी बेइज्जती नहीं की जायेगी वह अपनी मरजी से क्लासे अटेंड करेगा।

मोला बड़ी बेचनी से इंतजार कर रहा था कि चश्मवाल प्राफेसर उसे बुलायेंगे। वह हर रोज उह नमस्ते करता था लेकिन शायद प्राफेसर साहब उसे पहचानने नहीं थे। पंद्रह दिनों के बाद भी जब बुलावा न आया तो मोला खुद स्टाफ रूम में गया। प्राफेसर साहब ने कहा कि वे बहुत 'बिजी' हैं स्टूडेंटस से मिफ रिसेस में मिलते हैं। रिसेस में मालूम हुआ कि वे लंच खा रहे हैं और लंच के बाद पंद्रह मिनट तक आराम करते हैं। मोला का उनसे मिलने का कोई मौका न मिला।

कालेज में एक पुराने क्रान्तिकारी भाषण देन आय थे। उन्होंने अपनी जिवनी के कई बरस जल में बिनाये थे। उन्होंने अपनी जवानी के कई किस्से सुनाये जब विद्यार्थी छिपकर बम बनाते थे परचे छापते थे जुलूस निकालते थे और भगतसिंह की तरह हसते हसते अपन को देश पर 'योछावर कर देते थे।

नये भारत के नौजवानो को भी उन्ही के चरण चिन्हो पर चलना चाहिये। भाला के दिल में देशभक्ति का जाग उभर आया। उसने तय किया कि वह भी भगतसिंह की तरह अपन का देश पर 'योछावर कर दगा।

लेकिन अब जमाना बदल चुका है। हम सत्य और अहिंसा के माग पर चरना चाहिये देश के निर्माण कार्या में हिस्सा लेना चाहिये भाषणकता न करे।

मोला न सदर का कुता पाजामा सिन्धवा लिया उसने तीन और लटका के साथ मित्रकर एक कमरा किराय पर ले रखा था। नगान के लिये वे म्युजिमपण्टी के नल पर

जाते थे और एक ढाँचे में खाना खाने थे। माला ने जब अपने गेस्तो से दान्तिकारी दल और देशभक्ति की चर्चा की तो वे माला पर हमला कर 'तुम निरबुद्ध हो। जब क्रिस्मत में बलकी या रोड इन्सपेक्टर लियी है तो इन बातों के चक्कर में क्या पड़ते हो? (रोड इन्सपेक्टर वे उन बेकार नौजवानों को कहते थे जो नौकरी की तलाश में मड़का पर जूते चटखाते फिरते हैं) लेकिन अग्रजी की क्लास में जब 'मरी महत्वाकांक्षियों क्या हैं' निबंध लिखने के लिये दिया गया था तो उन्होंने लड़कों में लिखा था कि वे मनोवैज्ञानिक और बलाकार बनना चाहते हैं। क्लास का जन्म एक ही बार मिलता है, उसमें कुछ कर लिखना चाहिये। उस भूट में भोला के मन का बहुत घाट पड़ चुका। लड़कों ने समझाया "निबंध में तो ऐसी ही बातें लिखी जाती हैं।"

भोला को बचपन से ही कविता लिखने का शौक था। लेकिन जबसे एक मास्टर ने उसके कान उमथकर कहा था "तुलसीदास का बच्चा। खबरदार जो क्लास में ऐसी हरकत की। तो भोला ने कविता गुनगुनाना बंद कर दिया था। लेकिन कालेज की आजाद जिंदगी में उसका साहस फिर पनप आया था। उसने अपनी सारी किताबों और कापियों पर सुंदर अक्षरों में अपना नाम के आगे रिक्त उपनाम जोड़ दिया था, क्या कि हर कवि का उपनाम होना जरूरी होता है। जब डा० भूपेंद्र के नाम में नोटिस बोर्ड पर नोटिस लगा—जिसमें विद्यार्थियों से कॉलेज की पत्रिका के लिये 'उत्कृष्ट साहित्यिक' रचनाओं की मांग की गई थी तो माला ने अपनी कविताओं की कापी पर नई जिल्द चढ़वा ली और वह डा० भूपेंद्र से मिलने गया। डाक्टर साहब पत्रिकाओं में लेख लिखते थे, रेडियो पर उनकी वार्ताएँ अक्सर प्रसारित होती थीं। लेकिन जब से भोला कॉलेज में आया था डाक्टर साहब ने एक बार भी क्लास नहीं ली थी। वे युनिवर्सिटी के किसी ओहदे के लिये इल्बान लड़ रहे थे। उन्होंने बड़े स्नेह से भोला को बठाया लेकिन कविताओं की कापी देखते ही उनका स्वर बदल गया "देखता हूँ तुम्हें भी कविता की बीमारी लग गई है। हमारा देश में कवियों की संख्या कम है क्या" उन्होंने माला को राय दी कि वह अभी तो चार साल अध्ययन कर 'तुम्हारी उम्र में तो सबको उपवास पढ़ डालेंगे फिर डाक्टर साहब ने अपने विद्यार्थी जीवन के कई दिलचस्प किस्से सुनाये और अचानक घड़ी पर नज़र डालकर गाल- 'जरे मुझे तो एक अपाइटमेंट पर पढ़ना है। भई तुम अपना शब्द भंडार बनाओ।"

भोला ने एक फाइल खरीदी और उसे शब्द भंडार बढ़ाने के लिये रात्रि लाइब्रेरी में जान लगा। राजनाति साहित्य क्लासक सिकंडा गब्द उनमें लाल स्याहा में नाटक लिये। अनवरत लड़कों के उद्धरण उसे मुह उड़ानी याद हो गये ट्यूटोरियल मॉडिंग में एक बार जब भोला ने गाँव कुछ उद्धरण सुनाये तो सभी लड़के चिल्लाकर हँस पड़े और उन्होंने भोला का नाम "बोरनाथ" लिख दिया क्योंकि उन मॉडिंग में सिर्फ फिल्मी गान ही गाय जाते थे।

एक बार भाला अंग्रेजी के हेड आफ दी डिपार्टमेंट से एक शब्द का अर्थ पूछने गया। उन्होंने पूछा "यह शब्द तुमने कहा क्या?" जब भाला ने एक मशहूर अंग्रेजी उपन्यास का नाम लिया तो प्रोफसर साहब ने कहा 'जितना वक्त तुम नावल पढ़ने में बरवाद करते हो, वही अगर कोस की किताब में लगाओ तो तुम्हारी इंग्लिश सुधर जाये। चंबळ डिवशनरी देखी है?"

'नहीं।'

"तो लाइब्रेरी में जाकर देखो। मैं डिवशनरी तो नही हूँ।"

जब भाला स्टाफ रूम से निकल रहा था तो उसे प्रोफसर साहब का रिमाक सुनायी दिया 'साला कैंक है। दिमाग का कोई स्क्रू ढीला है। हर वक्त आकर बोर करता है" भाला के दिल के भीतर कोई चीज जैसे टूट गई।

कालज की लाइब्रेरी में दूतावासों की सचित्र पत्रिकाएँ और युलेग्नि आने थे। भाला तस्वीरों में देखता लडके लडकियाँ मिलकर सड़कें बना रहे हैं काटो और हवाई जहाजों के माडल तयार कर रहे हैं उनके चेहरों पर स्वास्थ्य की दीप्ति है। भाला की कल्पना में एक तस्वीर ने जन्म लिया—उसके कपड़े पसीने में तर हैं। वह टूट चला रहा है, इमारतें बना रहा है। उसके कपड़े मले हा गये हैं लेकिन मन उजला होता जा रहा है। उसके मन में आया कि वह पढ़ाई छोड़कर भाखडा नागल चला जाये जहाँ नये हिन्दुस्तान का जन्म हो रहा है। गाँधीजी के एक इंगारे पर भी तो लाखा नौजवानों ने पढ़ाई छोड़ दी थी। वह चाहता था वह भी किसी के इंगार पर अपनी कुरबानी दे द। उसके भीतर का नौजवान कुछ कर दिखाने के लिये मचल रहा था। वह अपने से बड़ी किसी चीज में अपनी सारी ताकत लगा देना चाहता था।

एसी उत्साह में उसने सांगल ग्रुप में नाम लिखाया। एक बार उनका ग्रुप गाँव की एक सड़क बनाते के लिये गया था। कुत्तल के स्पग में भाला की प्यासी आत्मा तृप्ति महसूस कर रही थी लेकिन फोटाग्राफरों के फ्लैश ही छात्रों को आसन्न मिला कि वे बस में जाकर बैठ जाएँ। सांगल का बहुत बुरा लगा। उसने अपने इंचार्ज से कहा क्या न हम लाग इम बार गरमा की एक्टिविटी में जाकर किमाना की मन्त्र करें? हम बजर जमीना को ताड़ सकते हैं फ्लैश बाट सकते हैं बच्चा को पढ़ा सकते हैं

जरा देखा हम गम्बहिरता का। तुममें मला किमान मन्त्र माँगा है? किमाना को गहरी बाबुआ की मन्त्र नया चाहिये। व अपनी मन्त्र मुक्त कर लेंगे। इंचार्ज आज बेहतर चिन्ते हुए थे क्योंकि हम बार अफसरों और नेताओं के साथ उनकी तम्बीर नहीं निची थी।

गरीब छात्रों के फ्लैश के लिये चला जमा करना था। भाला अपने कुछ साथियों के साथ एक महीने तक कालिख के गुरु पर बैठकर कृत्यात्मिका करता रहा। सब उस पर फ्लैशों के मत 'हलो राजकपूर! तुम्हारी नरगिनी कौन है?' 'एक्टिविटी भी

एक-दूसरे को कोहनी मार कर हँस पड़ती और कहती "हम मतवाले पालिश वाले " भोला सोचता, क्या वह सिर्फ "शो ऑफ" करने के लिए यह सब कर रहा है ? क्या सभी काम दिखावे के लिये किये जाते हैं ?

स्कूल में तो छुट्टियों के लिये टीचर बहुत काम देने थे, लेकिन कॉलेज और स्कूल में बहुत फक होता है। छुट्टी से पहले प्रोफेसरो ने कहा, छुट्टियों में सब छात्र आराम करें और खूब झुंझ करें। किसी पहाड़ पर जायें या साइकिचो पर जाकर आगरा, फतहपुर सीकरी देख आयें। योहप में तो छात्र साइकिचो पर दूर-दूर का सफर करते हैं। आराम की कल्पना से ही मोला की रूह काप रही थी। वह तीन महीने की लम्बी छुट्टिया की नीरसता की कल्पना कर रहा था।

भोला के पिता किसी दूसरे प्रान्त में काम करते थे। हर महीने मनी ग्राडर भेजने के साथ उनका परिवार से कोई खास सम्बन्ध नहीं था। मोला को छुट्टियों के दिन पहाड़ मानूम होन लगे। माँ उसे पढ़न-लिखने नहीं देती थी और दूध में वादाम डालकर पेशी थी। क्योंकि उसने ख्याल में बेटा कालज में दिमागी कसरत करना करता थक गया था। भोला सुबह हलवाई की दुकान पर जाकर अवज्जार पढ़ता और रेडियो सुनता। लाइब्रेरी में से इस बार कोई किताब नहीं मिली थी क्योंकि छुट्टियों की तनख्वाह बचाने के लिये लाइब्रेरियन को छुट्टिया से पहले ही निकाल दिया गया था। रोज अखबारों और रेडियो के जरिये देश के नेता नौअवानो से मेहनत करने की अपील करते थे। भोला ने सोचा वह भीषा नता-जो से ही पूछना कि वह किस तरह देश की मदद करे। एक बार उसने पंडित नेहरू को खत लिखा कि वह आराम को हराम समझना है। चचा नेहरू उस दश के काम के लिये जहाँ भी भजेंगे वह नयार है। फिर उसने सोचा चचा नेहरू व्यस्त रहते हैं। उसने खत फाड़ दिया। भोला अपने शहर के एम पी के पास गया जो देश के कार्यों में बड़ बड़ कर हिस्सा लेते थे। उन्होंने मोला को मन्नाह दी कि वह सबसे पहले अपना चरित्र निमाण करे। इससे देश का निमाण खुद-ब-बुद ही जायेगा। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे तडके चार बजे उठकर नहाये, चाय और सिगरेट से बचे लेकिन भोला को अपन सवाल का जवाब न मिला। उसकी समझ में नहीं आता था कि वह अपन मन की बात किससे कहें, उस लगा कि उनमें और उसके जैसे लाखों छात्रों में किसी को भी दिलचस्पी नहीं। समाज उन्हें बर्मास और आबारा समझता है। जब वे किराय पर मकान चाहते हैं तो लोग उन्हें सदिग्ध नजरों में देखते हैं और यह कहकर फौरन दरवाजे बन्द कर लेते हैं 'हमारे घर में बहू-बेटियाँ हैं। हम कालज के छात्रों को मकान नहीं दे सकते।' उन्हें देखकर सिनमा हॉल में प्रोफेसर अपनी बीवियों का सेबर अगली बतारों में चले जाते थे जैसे किसी छूट की बीमारी का डर हो। जब भोला छत पर पन्ने बठता था तो आसपास के सभी घरों की खिड़कियाँ तडाक से बंद हो जाती थी। बी. ए. में पहुँच कर भोला एकदम सामान्य हो गया। उसके

मन म उल्हाह और आन्धों की बजाय अपने आसपास के वातावरण व प्रति क्षम और म्लानि आ गई थी, उसके दोस्त कहते थे कि वह धुँगा बन गया है। दरअसल वह समझदार बनता जा रहा था। वह देखता था कि शहर ने सभी जलस्रोतों में छोटे-से-छोटा अपसर भी—यहाँ तक कि उसके बच्चा को भी सबसे आगे सोफो पर बठाया जाता था। कॉलेज की पार्टियों में भी प्राफेसर पीछे बैठते थे और इस तरह सहमे हुए रहते थे जस अनाधिकार आफिसज बल्ब में घुस आये हैं या उनके टैबल मनेज का इन्तहान हो रहा है। मोला का बेहद गुस्सा आता था। क्वेश्चन के मौके पर कॉलेज में 'मला' लगता था। पुलिस का इन्तकाम रहता था और कारों की बतारें लग जाती थी। बड़े-बड़े आदमी टाउप की हुई लम्बी स्पीच पढ़ते थे। सोफो वाली बतार पर बैठे लोग जब तालियाँ बजाते थे तो उनकी नज़र-देखी पडाल के सभी लोग तालियाँ बजाने लगते थे। मोला न दखा हर दीक्षान्त भाषण में एक ही शब्द होता था 'चाहिये। विद्यार्थियों का चाहिये अध्यापकों को चाहिये। चाहिये चाहिये। मोला को इस शब्द से दिली नफरत हो गई थी। एक भाषण में तो यह शब्द पूरे बासठ बार इस्तेमाल हुआ था। श्रोताओं में भी कोई उरसाह नहीं था। लोग सोफो पर आखे मूँदकर बैठे थे। लडके धूप के चश्म लगाकर लडकियों को तारु रह थे।

मोला ने सोचा वह श्रांतिकारी या दश मक्त बनने की बजाय विदेश जाकर पढ़ना और लौटकर खूब पसा कमायगा। उसने कई विदेशी युनिवर्सिटियों के दाखिले के फाम भी मगवा लिये थे। जब वह एक फाम पर दस्तखत कराने के लिये इकनो-मिन्स के प्रोफेसर के पास गया तो प्रोफेसर ने कहा विदेश जाकर क्या करोगे? लौट कर तुम्हारी प्रस्ट्रेशन और भी बढ़ जायेगी। इससे अच्छा है कि शाम को टाइप शोट हैण्ड सीखो। प्रोफेसर साहब खुद सात बरस विदेश रहकर आये थे और तमाम विदेशी डिग्रियों के बावजूद कालेज में पुराने ब्रेड पर काम कर रहे थे। व जहाँ भी एप्लाइ करते थे उनसे कम योग्यता वाले किसी सिफारिशी आदमी की नियुक्ति हो जाती थी। 'इन्तहार तो लोगों को उल्लू बनाने के लिये और उनसे पैसे बटोरने के लिये निकाले जाते हैं।'

अगर मदन आकर उसे निराशा की दलाल से न निकालता तो मोला जरूर पागल हो जाता।

मदन ने उसके कंधे थपथपा कर कहा था, मरी जान, चला तुम्हें 'लाइफ लिखाऊ। मदन उस कॉलेज के रस्तारों में ल गया वे लाग तिनभर एक या दो पीरियड अटक करत थे बाकी वक्त रेस्तरां में बैठकर गप्पें हाँकते थे, मदन के स्कूटर पर सर करते थे या जामूसी नावल पढ़ते थे। मदन ने उस क्लास से खिसकन का, लडकियाँ पर रिमाक कसन का आट सिखाया। उन लोगों ने सब प्राफ सरो के नाम रख छोडे थे और वे अपनी सांकेतिक भाषा में बात करते थे। मोला का यह दमकर ताज्जुब हुआ कि प्रोफेसरों की

अपने बलासूरुम की सिंठकियों के शीशे तोड़ने के लिये पहला पत्थर भाला ने उठाया। टूटते हुए शीशों की आवाज से उसे अजब विस्म की तृप्ति मिल रही थी। प्रिंसिपल साह्य चिट्ला रहे थे “तुम लोग जगली हो गये हो क्या ?”

भोला के मन में कोई बह रहा था। हाँ मैं जगली हा गया हूँ। अगर मुझे निमाण न करने दिया गया तो मैं ध्वस करूँगा उसे याद आया, बचपन में जब वह बागज पर मनपसन्द तस्वीर नहीं बना पाता था तो बागज को नोचकर फेंक देता था।

विन्दा महाराज

सवेरा हुआ। सफेद घूप की एक पतली चीर आंगन की पश्चिमी दीवार पर फल गई। कई दिना से बीमार विन्दा महाराज ने इस चटख घूप को देखा। अपने ही आंगन में, रोज रोज चमकने वाली यह घूप न जाने कसी नवीन मात्राम होती थी। साफ धुली धोती की तरह लटकती हुई इस घूप को देखकर विन्दा महाराज को लगा कि अब वह ठीक हो गया है। मच्छरा से मरे, भीगी भीगी दीवारों वाले घर में चार पाई पर लेटे लेटे विन्दा महाराज का मन बिलकुल हूबने लगा था, बतख की तरह उजली घूप को देखकर उसे बड़ी राहत मिली। उसने हाथ स हाथ छूआ, सिर का छूकर सोचा कि आज बेमानी लगने वाली यह देह उमी की है। यदि वह चाहे तो इसे अपनी इच्छा से घुमा फिरा, उठा-बठा सकता है।

चारपाई से उठते ही विन्दा महाराज दीवार में चिपके हुए आईने के टुकड़े के पास खड़ा हुआ।

‘अरी मया।’ चिह्नकर पीछे हटा। कितना अजीब रूप है! हाथ भर के लम्ब-लम्ब बाल पसीने और तेल से लटिया गये हैं। सिर पर बीच-बीच उसकी मांस का वृत्रिम सिन्दूर ऐसा उदास मात्राम होता है जैसे जेठ के दिनों में मर हुए इन्द्रमाप के कीड़े की पात हो। गूट दाढ़ी के बाल भीगी बिल्ली की छाती के ममरे रायों की तरह खड़े हो गये हैं। उसकी नाक में पीतल की लवंग थी। आंखों के पास कजराइ उतर आयी थी। भरी हुई हडिहयो के कारण गाल घूसे हुए आम की तरह लगते थे। अपन इस विचित्र रूप को देखकर विन्दा महाराज के ओठों पर बेमानी हँसी छा गयी और उसकी आँख विरूपता के आभास से बदरग लगने लगी।

विन्दा की तरह दाढ़ी-भूँछ के बालों को साफ कर जब वह फिर आंगन की शकल में आया तो आईने में उसका चेहरा लम्बोतरा मालूम हुआ। कान बकरी के गले की निरथक ललाची की तरह झूलते नजर आये, जिनमें चाँदी की नाखुनी बालियाँ पत्नी के चन्द्रमा की तरह मालूम होती। उसी ताख से काजल की डिबिया उठायी। कोटरों में पसी आँखा को आजकल, उँगली से बची बालिख से सिर पर डिठौना बना दिया। पपड़ी हीठ, पके गोद की तरह सूखे लगते थे, सो मँझली उँगली से रोरी छूकर उन्हें रगड़न लगा। एक बादासी रंग की पुरानी साड़ी पहनकर जब वह फिर आईने के सामने

आया ता जाने क्या चीज कर हंस पडा ।

विन्दा महाराज टाट का एक टुकड़ा बिनाकर जब अपने मकान के सामने चबूतरे पर बठा ता एक पहर लिंग भड़ आया था । ता पड़े पहले गाँव की समा प्रमुग गलियो बुझाई क लिंग जात वाल बल-बछरआ की घन्टिया की टुन टुन, परवाहों की हट हट, निसाना की दोट गुन और बतरा क बाग बारा कुनन की आतुर पछिया क बलरय से गुँजाता लगती थी । पर इस बात ता अजीब सभ्राता घारा तरफ छाया था । मूल सत्रक एकाध बीये मरी कौर-नाँव करत निकल जात । रनिया-म्यागारी सोन-मुमुफ सारीदने के लिय लरदू बली मा टट्टुआ पर बोखरना अनाज लिय बाजार जान लगते, तो कुछ मुट्ट-साट हो जाती, तहा ता फिर यही दमपोट सभ्राटा । विन्दा महाराज का यह सब बडा बुरा मानुस हुआ । कहीं यह मन बहलान क इराद से बाहर आया था और वही मह सूना सूना चौराहा ! न एक आत्म जात दिगायी पडता, न कोई चिडिया का पूत । यह मुँह लटकाय बठा था ।

हे है ई तो विन्दारानी है पक्क की आद म चिनगारी की तरह दो अरमें दिगायी पडी । विन्दा महाराज ऊपर से जता मुना और भीतर से गुना-मुश उघर ताकन लगा कि पाजाये क नयन की तरह अगल-अगल ताफ-शौक करता घुरबिनवा सामने आकर महाराज के रूप का एकटक निहारन लगा । विन्दा महाराज उसका एकटक अपनी आर घूरते दल बिगडा, इस तरह क्या देखता है बे हम क्या कोई रडी-मुडी हैं ए ! मुचकुचवा जसी औल फाड़कर मत दसा कर । विन्दा महाराज ने डिठोने की छूकर देला ता वह जगह पर मौजूद था । घुरबिनवा घाटा और आग बढ़ आया और अपने नास-नाल दोनो हाथो को घुटने पर टिकाकर थोडा मुककर घूरने लगा जैसे फोटो-ग्राफर वाले कपडे में हाथ डालकर लस ठीक कर रहा हो ।

विन्दा महाराज न आँचल ठीक किया । झँपते हुए मुस्कराया । लौड की पस अजीब हरकत से वह कुछ घबडाने भी लगा । घुरबिनवा बस ही दल रहा था ।

अबे तुम्हे हवा तो नहीं लग गयी बाई बतास तो नहीं चला ? अरे अभाग्य इस तरह क्या ताकता है रे ! बाप रे बाईगाले की तरह धूमते हुए इसने बढ़र को दलो न !

घुरबिनवा धक्कर खडा हो गया । रूप दशन की प्यास भूझ चुकी थी शामद वह धीरे धीरे दिसकता हुआ विन्दा महाराज क पास पहुँचा ।

'विन्दो रानी' यह भुनभुनाया 'हम तुमसे परेम करते हैं ।' विन्दा महाराज खिलखिलाकर हस पडा 'अरे वाह रे छाकरे वाह ! तू मुझको परेम करता है, परम ही ही ही ही ही हों ।' घुरबिनवा सब तक विन्दा महाराज क टाट के एक कोने पर आसन जमा चुका था और हसी के हिलकोरो के साथ बान की ललरी में बाँपती हुई बालियो की एकटक देख रहा था । न जान विन्दा महाराज को क्या खयाल आया कि

वह तमककर उठा और घुरविनवा का हाथ पकड़कर ज़ाकत हुए चिल्लाया, 'भाग बेहरामजादा। इसका दीदा न देखो। दुनिया भर का रोघट पोतकर देह म सटा जाता है, चमार सियार की जात हूँ, कसा जमाना आ गया है, बड़े-छोटे का कोई विचार नहीं।' घुरविनवा खिसककर नीचे खड़ा हुआ, फिर एक क्षण घूरता रहा सहसा मिल्खिलाकर बोला— 'हम क्या दीपू मिसिर से खराब हैं विन्दा रानी।' और फुर-से गली की ओर भागा क्योंकि विन्दा महाराज बन्-सा देला हाथ में उठाए क्रोध के मारे कांपने लगा था।

थोड़ी देर बाद घुरविनवा गली के मोड़ के पास पक्व स पीठ अड़ाये बठा दिखाई दिया। विन्दा महाराज ने एक बार बनसी में देखा—काला शरीर, गन्दा कुर्ता और छाटा-सा कद पर दरारतो का विन्गाल अम्बार मन के भीतर। जाने क्यों विन्दा महाराज की आँखें अचानक गीली हो गयीं। घुरविनवा मुँह फुलाये बठा था। उसे विश्वास था कि रोज़ की तरह आज फिर विन्दा महाराज उसे पास बुलायगा, पुचकारेगा और फिर गली के लडको के साथ खेलने की सलाह दकर भीतर चला जायेगा। किंतु जान आज विन्दा महाराज को क्या हो गया है, वह तो बालता ही नहीं। घुरविनवा बड़ी देर तक भास लगाये बठा रहा, किंतु महाराज जब न उठा तो वह भ्रुनभ्रुनाया हिजडा साला और घणा स महाराज को घूरते हुए एक ओर चल दिया।

विन्दा महाराज एक क्षण इधर-उधर दखता रहा उसके पीले लबातरे चेहर पर पक्वे की दीवार की काली छाया नाच रही थी। कितनी उपास, नीरस थी वह छाया जो चन्ते हुए मूरज के साथ अपनी सारी अवान्तर लबाई समेटकर छोटी और गाढ़ी होती जा रही थी—केन्द्रित। दुनिया के सारे नाते रिन्त केवल पुरुष और स्त्री में हैं विपरीत लिंगों का आकर्षण एक कंदायने की तमाम बस्तुएँ दूसरे में उमी प्रकार सबद्ध। विन्दा महाराज का दुनिया में कोई रिन्ता नहीं, हो भी कैसे, न ता वह मद है न औरन। प्रत-उपवास, बया-पुराण के उत्सवा में नाच गान स उपजी कमाई को राख बनाकर उस क्या मिलता—पीडा जलन। प्रसात् लन तक क लिए भी तो वही आने जिह् मीठी चीन्डा स कमी भेंट न हानी। मन की ऊपग मतह पर इनकी बात-चीन निकटता की एक लहर जगा देती, क द्र की परिधि बढ़ती बढ़ती जानी और एक लहर की उठान गिरकर रखा असूष्य रेखा में, बल्लकर लीन हा जानी।

मैं तुममें परेम करता हूँ, विन्दा रानी घुरविनवा न आज मम पर जान मारा था। विन्दा महाराज एक क्षण क लिए विलकुल ब्यथित की तरह ताकता रह गया। सहसा उस विश्वास भी न हुआ कि चमार क उम गन्त म लडके में यह बात जानकर कही है।

तब विन्दा महाराज का 'विन्दिवा कहलाना उ याता अन्ठा लगता था। पनला-सा गरीर, छरहरी देह, लाल रंग का चूनर और बूटदार छोट की अधबहियाँ। विन्दिवा क

तिर की भगनीली बिनी गुरज की ज्योति पर चक्कर की तरह जल उठी। बलाई में साल-साल बूढ़िया गिरव लम्बे-लम्बे बाल दाबुँही दा पाटिया म धुँध हा, जा उगकी छाती पर गेंदे के बन हुए कृत्रिम उमार पर झूलती रहता। बिनिया चलनी ता गाँव की गलिया म हूँगी, ठिठार्ई और मोठी दुनियाँ गिराह बाँधवर चलन लगता। गरीर का औसत स ज यादा स्त्रण ढग स सटकात हुए जब बिनिया दुनरती ता मत्र म पर सटकाय झूझा तव की मू छा व बाल परपराने लगते। बिदा महराज म साथ उसने चक्कर भाई का दस-बारह साल का लडका करीमा डोलक स्वर चलता। लडका बड़ा गोग और गुणमिजाज था। बिदा महराज उस प्राणा से ज्यादा मानता। बाई तनिक छद्द दता या कुछ बहु देता तो वह करीमा के लिए झगड़ने तन को तयार रहता। उस दिन ठाकुर के घर जगजात बच्च की बरही थी। गाँव भर की लडकियाँ बूढ़ी औरतें बिदा महराज का नाच देखन इकट्ठी हुईं। चासा मजमा था। एक-से-एक घुलबुलाती औरतें और उनक बीच बिदा महराज। करीमा के तिर पर पाँचगडी लाल साडी की पगडी बँपी थी और चमर म डोलक, जिस बहु चलते नाचनी गत पर बजा लेता था। बिदा महराज परो में घुँघरु बाँध कर लडा हुआ ता लडकिया की आँता म मूलर फूलन लगे, बूढी औरतें अपनी हँसी छिपाने के लिए होठी पर आँचल रखने लगी, मुँहजोर नीकरानियो न बिदा रानी को आँचल के गेंद छिपा लेने की मलाह दे ही दी। बिदा महराज इन मजाको का उत्तर अत्यन्त खुस और अश्लील मजाको से दता जाता। सब सह जाती, कौन बिससे बहे। बिदा महराज का गला पुरुष-कठ की तरह मोटा था, पर सघा। वह गा रहा था

मोरी घानी चुनरिया इतर गम क
घनि वारी उमरिया नइहर तरसे।

करीमा न डोलक सँमाली। कइतर की तरह घुटक कर पीछे से बोला कइसे तरसे राजा 'लडकिया म खिलतिलाहट छा गयी। जोर का ठहाका लगा, बूढ़ियाँ लोट पोट होन लगी। बिदा महराज के घुँघरजा की छमक और पगडी वाले करीमा के ठेके ने समाँ बाँध दिया था। ठाकुर के आँगन म इस विचित्र सयोग ने नये रस की सृष्टि कर दी। बिदा महराज ने अन्तिम पत्तिया गायी

कलियाँ मैं चुन चुन सज आया
मोरा सूतने वाला विदेस तरसे '

डोलक चलते पर बज रही थी। एक विचित्र तरंग सिसकारियाँ, छनछनाहट बीच-बीच मे हथेली के जोर से घुम घुम की आवाज निकालते हुए करीमा की घुटक कपसे बाधु कइसे राजा' गोरे, पीले रंग लाल होने लगते। हँसी से हुरकम्प के कारण आँचल तक धिरकने लगते बिदा महराज सौ-दय की इस जाशुत अवस्था की सपने की तरह देखता रहता। हँसता, नकल करता, डबता, उत्तराता मालूम होता किन्तु कितना

भल्लूना, कितना निलिप्त ! उस दिन ठकुरानी न छह गजी भोरपखी विनारी वाली पीली साडी भर सूप नाखनी सजीरे के चावल और चादी का एक रुपया नेग म देकर विंदा महाराज का 'खोईछा' (आचल) भर दिया था ।

शाम को घर लौटते समय गली म दीपू मिसिर मिल गये थे । घुटन तक काछेदार घोती, मोटिया की अघबहियाँ, और सिर पर जापे इच के मूइनुमा बडकडाते बाल । दीपू मिसिर को लधी लगाने की आदत थी । छोटा हा या बडा, लडका हो या जवान यदि काई आदमी दीपू मिसिर को मिलता, तो उसे पणाम व जागीर्वाद न देकर वे पास पहुँचते और उसका हाथ पकड कर पूछते, 'का गोइया मजे मे हो न !' और चटाक बगली खीचकर उसके पर मे लधी मार दत । आदमी हाशियार रहा तो सँभल गया नहीं तो लडखडा कर पारो खाने चित्त गिरने बालो को जरूरत समझ कर वही सम्हालते और ठहाके मार कर कहत रहते, शाब्बास, गाबाग ! भर मिट्टी के झर जिओ, जिआ क्या हाथ दिखाया है तूने गोइयाँ !' गोइयाँ उनकी ओर हक्का बक्का हो कर तावते रह जाते । गली मे भीड लग जाती और तब मुस्कराते हुए चुप चाप किसी से बिना कुछ कहे गोइयाँ को अपनी राह चल देना ही मौजू जान पडता ।

विंदा महाराज अपनी चूनर सम्हाले पीठ पर डोलक लटकाए, कमर को हवा म लचकाता बल-प बल खाता चला जा रहा था कि मिसिर ने देख लिया । चबूतरे से हूद कर सामने आ गये । दाना हाथ फला कर भात्रू की तरह बूट-बूद कर वह उसका रास्ता राबन लगे । वह बायें ठुनुक कर चलना ता मिसिर बायें उछलते, दाहिनी ओर मुडता तो मिसिर हूदकर दाहिनी ओर जाते ।

'दखो मिसिर', वह नजाकत स बोला हमको छेडो ना ।

दीपू मिसिर 'हो हा' कर हते—अरी बाह रे, मेरी छप्पन छूरी, ऐसे ही चली नाआगी और उहाने चटाक से उसकी कलाई पकड ली ।

'हाथ री मया' विंदा महाराज डर से चीखता हुआ गिडगिडाया, 'मेरी कलाई मुरक जावेगी, मिसिर छोड दो ना ।

तो क्या हुआ विंदो रानी' मिसिर भी स्वर का अनुकरण करते हुए बोले हम दवाई करेग ना ! तब तक दीपू मिसिर न हाथ पकड कर बगली खाची और चटाक विंदा महाराज के पर म लधी मार दी । महाराज तो विलकुल अनजाना था लडखडा कर डोलक समत मुँह के बग गिरने को हुआ । बगीमा जार स राने लगा, पर दीपू मिसिर ने बीच म ही सम्हाल लिया और वे आदत के मुताबिक हो हो करते हुए उसे 'गरो बध्यर व गिताव से विभूषित किये जा रहे थे ।

विंदा महाराज थाडा रष्ट हुआ ता मिसिर बान, 'अरी बाह री विंदो रानी मैंने ता समझा कि तुम जरूर मजदूत हागी और फिर मिसिर बाजिदअली शाह का पुराना किस्सा सुनाने लगे । बाले, एक बार बाजिदअली शाह के मन्त्री ने सलाह ली—

हज़ूर, एक जिज्ञासा की पलटन तयार की जाये और फिरगी से मिठा लिया जाये। मजा भा जायगा। कितने मजबूत हाने हाने ये लोग, न औरत न मर्' लटका पग करना होता नहीं, देह मरती-की-मरती रह जाती है नवाब मान गये। पाँच हजार जनगों की पलटन तैयार हुई। शाम पर भेज लिया गया। उधर से जय पग पग गालियाँ छूटीं तो बस बहादुरों की पलटन बंदूक पक फेंक कर 'हमनीम का मतलब रे मया' कहने हुए जो गयी तो फिर मुह कर देगा भी नहीं।' श्रोता गण मिसिर के विस्ते पर मूक रेंदकी तरह सन्नयडाने लगे थे। विंदा महाराज को जाने की देर हो रही थी, 'अच्छा, अच्छा हुआ, बड़े विदमान हो' यह बोला 'हम घर जाने की जल्दी है, लाओ एक ठो बीड़ी पिलाओ'।

'एँ बीड़ी का नाम गुावर मिसिर चौबे— पहिले चुम्मा गलबटोत्रल' फिर पाकिट से बीड़ी निकाल कर बोले, 'एक बीड़ी मे क्या है रानी तुम्हारे लिए ता कलेजा हाजिर है, बाकी हाँ कभी-कभी हम भी याद कर लिया करा। विंदा महाराज ने बीड़ी ले ली और जलाकर पीन लगा। धुएँ को अपने हाँडों से ढकेलते हुए वह तिरछी भांगी से एकटक मिसिर को देखता रहा। धुएँ की गुँजलक उसके पतले लाल होठों के साथ बहुत सुन्दर लगती। सहसा मिसिर की हाथ जोड़कर बोला, 'अच्छा मिसिरजी पालागा।'।

'गिओ बाबू जिओ ?' मिसिर बोले। विंदा महाराज छमकते हुए जाने लगा और व उसकी ओर देखते मुस्कराते रहे।

नीचे सूरज की दोरहरी किरण नीम की पतियों में उलझन लगी थी। विंदा महाराज उसी प्रकार अपने सपनों की भूलभुलैया में खोया निश्चेष्ट बठा था। हरी पतियाँ से छन छन कर आती हुई धूप छाही रोगनी उसके पीले चेहरे पर काँप रही थी। आँसों की काँजिमा पर काली छाया, सूखे होठों पर पीला प्रकाश—अस्थिर चित्त की डोलती रागनी की यह सुका छिपी। यही जीवन है विंदा महाराज का। प्यार उसकी आत्मा की व्यास थी, किंतु परिणामहीन प्रेम की त्रुता वह समझ नहीं पाता। जरा-स आकषण से चित्त बचल हो जाता। मनोरजन को प्रेम समया तो नशा छा गया, हाथ फला कर बटोरना चाहा तो हथेलियाँ टकरा गयीं। प्रेम शब्द उसके लिए केवल गड था, निर्जीव शब्द रुड़ अर्थ।

'हिजडा उस दिन बाप के कहे शब्दों को करीमा दोहराने लगा, मैं तेरे साथ मोहदा नहीं बनूँगा।' विंदा महाराज आहत अभिमान का बाँझ उठाया खडा था। उसकी अपलक आँखें जड़ित शीश की तरह गतिहीन, धूमिल। उस विश्वास कसे हाँठा कि ये शब्द करीमा के हैं। बड़ा स्नह सचित था मन में, जो आँसों में उतर आया।

मैं तुम्हे मोहदा बनाता हूँ वे हुरामी। उसने चटाक से एक पण्ड करीमा के गाल पर जड़ दिया और मुद ही रोने लगा।

उसी दिन लड झगड कर उसके माई न घर से निकाल दिया । या ही कौन उसका अपना, जो परा मे रेशमी बेडिया डालकर रोक रखता । माँ-बाप एक प्राण हीन शरीर उपजा कर चले गये । मद होता तो बीबी-बच्चे होत, पुरुषत्व का शासन होता स्त्री भी होता तो किसी पुरुष का सहारा मिलता, बच्चा की किल्कारिया स आत्मा ब कण-कण तृप्त हो जात । विंदा महाराज न डोलक उठायी और प्यासी आखी से अपन ही शरीर की देखता गाव स बाहर हो गया । वह सोने ठाकुरो के इस गाव म चला आया था । उसे उम्मीद थी कि नाच गा कर, नीब माग कर जिंदगी के नोच दिन गुजार देगा ।

विंदा महाराज को इस नये गाव म आये तीन चार महीन ही बीत ये कि गाव के एक छोर स दूसरे छोर तक उसकी मुहब्बत की कहानी फल गयी । चौराहे पर गलियो ब माड पर पनघट और कुआ की जगत पर सबत्र दीपू मिसिर और विंदा हिजडे की मुहब्बत की चर्चा होने लगी । विंदा महाराज सुनता तो खुशी के भारे उनके चेहरे पर ताबिया लाली छा जाती । कभी गम से गदन भुकाकर सोचन लग जाता— क्या सचमुच ऐसा समव है ! क्या उससे भी काई मुहब्बत कर सकता है ! फिर वह खुद ही इस प्रव तना के बोध को बरहमी से फेंक कर हँसने लगता । हाँ वह मुहब्बत करता था, सीधा, निश्छल प्यार, किंतु दीपू मिसिर से नहीं उनके दा-डाई बप के छोटे से बच्चे से जो दिन भर दीपू मिसिर की अँगुली पकड कर रबड के सकुदे गुडडे की तरह डुगुर डुगुर घूमता रहता ।

एक दिन शाम के बख्त दीपू मिसिर जब इधर से निकल तो विंदा महाराज ब खडहर के पास खडे ही गये । विंदा महाराज लडके को खुश करने क लिए तरह तरह की मुद्राण बनाता रहा कभी मँडे की तरह च्या-ब्या' करता, कभी सिवार की तरह हुआ हुआ' । लडका तालियाँ पीट-पीट कर हँसता रहा । सहसा दीपू मिसिर को धोर मुडकर बोला 'दाबू जी बूआ टमाटर की तरह लाल पतले होठ 'पू करन की शकत म सिमित कर गोल हुए फिर हँसी म बिखर गये 'बूआ । विंदा महाराज ने लडके को छाती से चिपका लिया मिसिर को यह सब अच्छा नहीं मानूम हुआ पर कुछ बोले नहा । अभी हाल मे उनकी बहन मायके आयी थी । मुना को हसाने-बहलाने क लिए वह भी ऐसे ही मुँह बनाती, हाथ हिलाती । न जाने क्या साम्ब मिला मुना को कि बहू विंदा महाराज का बूआ बहू बडा । इस विचित्र मबोषण म विंदा महाराज का रैतीला मन अकुरित हान लगा । वह बाहर जाता तो लडके ब लिए बत्तास ख डियाँ, मिठाई, कुछ-न-कुछ जरूर लाता । मिसिर भुनभुनाने लडके को घूर घूर कर कुछ न लेने का इगारा करते, किंतु लडका नहीं मानता और विंदा महाराज का ममत्व इतना वैशवान होता कि मिसिर के इगारो का लगर उमड जाता ।

नीयकी डालियाँ मजरिया न मुवासित हो जाती, पीली-पीली निबकारियो स

पन्नतरा भर जाता विन्दा महाराज के मन में एक अजीब किस्म की सुरमुरी होने लगती। वह सुबह से शाम तक आँग्य त्रिछाये दीपू मिगिर के आने का इंतजार करता रहता, उसकी इस बेगुदी पर लौंडियाँ व्यग्य करता, कुछ नौजवान छोकरे भी चिढ़ाने के लिए सीटिया बजाते गुजर जाते, किन्तु विन्दा महाराज पर इसका कोई असर न होता। कई दिनों से मुन्ना न आया, महाराज के मन की पीड़ा छिपाये नहीं छिपती। शाम को मालूम हुआ कि मुन्ना बीमार है। महाराज के चेहरे पर गाम उतर आयी। वह चुपचाप गाँव से बाहर निकल कर कालीजी के मन्दिर तक गया और उसमें चौकट कर सिर पटक दिया। जिन्दगी में पहली बार उसे कोई इच्छा लेकर देवता के पास भाना पडा था। जवाकुसुम के दा फूल, कुछ बतसा का प्रसाद लेकर घब लौट आया। कई बार इच्छा हुई कि वह प्रनाद मुन्ना को दे आये, किन्तु न जाने क्या लाज के मारे वह न जा सका। शाम गहरी हो गयी, तो अँधेरे में मन में साहस पदा किया और वह इन्ने पाँव लागा की जाँसे बचाता मिसिर के घर की ओर चल पडा, दरवाजे पर दस्तक दी।

‘कौन ?’

वह कुछ बोल नहीं सका।

दरवाजा खुला। बगल में मिसिर के जीरे सामने मिसराइन खडी थी। वे सिहती की तरह भूखा जाला से उसकी ओर देख रही थी सहसा वे पीछे हटी और खटाक से दरवाजा बन्द कर लिया। ‘यह क्या कर रही हो मुन्ना की माँ मिसिर ने शायद कुछ और कहा पर मुनाई न पडा। महाराज कुछ कहने को हुआ किन्तु शब्द जड होकर भाहत सासो में बिखर गये। वह कोलतार पुते काले दरवाजे की ओर भय और निराशा से देखता रहा फिर चुपचाप लौट पडा। हाथ में जवाकुसुम के लाल फूल मणिधर सप की तरह लहरा रहे थे, वह उह मुटठी में दबाये तेजी से चलता गया। घर आकर चारपाई पर गिर पडा और बहुत देर अँधेरे में घूरता रहा मिसराइन की दाहक आखो का मन उमकी समझ में कुछ भी न आ सका।

सुबह मुन्ना की मृत्यु हो गयी।

विन्दा महाराज आखें फाडकर पागल की तरह मिसिर के घर की ओर जाते हुए सागो को देखता, कोई कुछ कहता नहीं, सब शोक मग्न, चुप।

‘हिजडे के साथ का असर है भाई सोने जमा लडका सो गया। हवा में महादुर्भूति और आनोश के शब्द टकराने लगे।

‘दायन’ औरता की आवाज नागिन की सिसकारी की तरह कापती हुई मुनाई बहती लडके को छाती से लगा लिया था।

विन्दा महाराज कलेजे के दर्द को मुट्ठिया में पकडन की कोशिश कर रहा था। घर के अँधेरे कोने में बूआ’ की प्रतिभ्वनियाँ उठती, उसके हृदय के भीतर बफ का

होका बसकने लगता, वह त्रिपतप्त बाण से बिभे आहत पत्नी की तरह तडपता रहा । उस लगता कि वह सचमुच डायन है, आत्मभक्षी । उसके ससग म आकर काई सुखी नहीं रह सकता, कोई नहीं ।

विन्दा महाराज उसी चबूतर पर बठा था । उसन तीन्वी साँन ली । सारा शरीर जाडे से कापन लगा । मयकर बुखार का यह दूसरा दौर था । वह बुपचाप टाट समेट कर आँगने से होता हुआ कमरे मे पहुँचा और चारपाई पर लेट गया । रजाइ खाच ली । शरीर म दद मरी कँपकँपी, भट्टी के धुँए की तरह दमघोट कमरा, डूबती उतराती आहत आत्मा । ताप बन्ता जा रहा था । सिर फटने लगा । मयकर पीडा से वह कराह उठा ।

'फिर बुखार भा गया विन्दा चाचा ।' कहकर चिदाने की गरज से आये हुए घुरबिनवा ने जब कराहन की आवाज सुनी, तो भीतर आ गया ।

ठडी ठडी पतली अँगुलिया सिर पर घूम रही थी । ज्वर से आक्रात दग्ध शरीर विन्दा महाराज को लगा कि जेठ की तपी रेत मे सावन की फुहारें बरम रही हैं हजारो मँधुए, मरकती पतिया वा न अँधुए फूट रहे हैं, सदा की बजर धरती को भेद भेद कर ।

आखें खोलकर विन्दा महाराज ने देखा घुरबिनवा है । मामूम शीतल महाराज की दहकती, तपती छाती उस खीचकर चिपका लेन के लिए तरस उठी । किन्तु जाने क्या सोचकर वह जलती आत्मा स घुरबिनवा की ओर देखत हुए बोला, जवे तू फिर भा गया हरामी ! मैं कहा था न, कि पास मत आइयो और पायल की तरह चिल्लाया, भाग वे भाग, ताकता क्या है, चला जा यहाँ से ।'

घुरबिनवा भय क मारे दो कदम पीछ हट गया और सकपकाया-सा भयाक्रान्त बबी आँखा से विन्दा महाराज को दग्धता बाहर हो गया ।

महाराज मुस्कराया 'यथा मरी हँसी जो ज्वर की पाडा से भुलसकर दुपहरिया के फूल की तरह मिखरने लगी थी ।

कोसी का घटवार

गुसाई का मा पिलम में भी गरी लगा। मिहल की छाँह में चठरर यह फिर एक बार घट (पापनकी) का अन्तर गया। अभी गणपर में एक चौपाद से भी अभिय गेहूँ थाप था। गणपर में हाप डाणपर उसने ध्यय ही उलटा-गुटा और पाकी के पाटा में घृत में फले हुए आटे का शाइबर एक दर मा गिया। बाहर आते-आते उसने फिर एक बार और गणपर में हापकर देता जस घट जानना के लिए नि इतनी दर में बितनी विमाइ हा चुकी है परन्तु अन्तर की मिडदार में फाई विगप अन्तर नहा आया था। तस्स-नास्स की ध्यनि के साथ अत्यंत धीमी गति से ऊपर का पाट चल रहा था। घट का प्रवेग-द्वार बहुत कम ऊँचा था, खूब गीच तप भुक्कर घट बाहर निकला। सिर के बालो और बाँहो पर आट की एक हल्की सफेद पत बठ गई थी।

सभे का सहारा लेकर यह बुदबुदाया, जा, रसाला ! मुबह से अब तक दस पैसेरी भी नहीं हुआ। सूरज वहाँ का वहाँ चला गया है। बसी अनहोनी बात !'

बात अनहानी सी है ही। जेठ धीत रहा है। आकाश में वही चादलो का नाम निगान ही नहीं। अब मर्पों अब सब लागो की घानरोपाई पूरी हो जाती थी पर इस साल नदी नाल सब सूख पड़े हैं। खेता की सिंचाई तो दरकिनार बीज की ब्यारियाँ सूखी जा रही हैं। छोटे नाले-मूले के किनारे के घट महीना से बन्द है। कोसी के किनारे है गुसाई का यह घट। पर इसकी भी चाल ऐसी कि लट्टू घोड़ की चाल की मात देती है।

घक्की के निचले खण्ड में छच्छर छच्छर' की आवाज के साथ पानी की काटती हुई मयानी चल रही थी। बितनी धीमी आवाज ! अच्छे खाते-पीते खालो के घर में दही की मयानी जससे ज्यादा धोर करती है। इसी मयानी का वह धोर होता था कि मादमी का अपनी बात नहीं सुनायी देती और अब तो भल नदी पार कोई बोले तो बात यहाँ सुनाई दे जाय।

छप्प छप्प छप्प पुरानी फौजी पट को घुटनो तक मोडकर गुसाई पानी की धूल का अन्दर चलने लगा। वही कोई सुरास्र निकास हो तो बन्द कर दे। एक बूँद पानी भी बाहर न जाये। बूँद-बूँद की कीमत है इन दिनों। प्राय आधा फर्लांग चलकर वह बाँध पर पहुँचा। नदी की पूरी चौड़ाई को घेरकर पानी का बहाव घट की धूल की भार मोड दिया गया था। किनारे की मिट्टी पास लेकर उसने बाँध में एक-दो स्थान

पर निवास बन्द किया और फिर गूल के किनारे किनारे चलकर घट के पास आ गया।

अन्दर जाकर उसने फिर पाटो के वृत्त में फले हुए आटे का बुहार कर ढेरी में मिला दिया। खप्पर में अभी थोड़ा-बहुत गहूँ शेष था। वह उठकर बाहर आया।

दूर रास्ते पर एक आदमी सिर पर पिसान रले उमकी ओर आ रहा था। गुसाई ने उसकी मुविधा का मयाल कर वहीं से आवाज दे दी 'हैं हो' यहाँ लम्बर देर में आयेगा। दो दिन का पिसान अभी जमा है। ऊपर उमेदमिह के घट में देख लो।'

उस व्यक्ति ने मुडने से पहले एक बार और प्रयत्न किया। खूब ऊँचे स्वर में पुकार कर वह बोला, जरूरी है जी, पढ़ने हमारा लम्बर नहीं लगा दोग ?

गुसाई हाठा-हो-होठो में मुस्कराया, 'समाला क्या चीखता है जैसे घट की आवाज इतनी हो कि मैं सुन न सकूँ।' कुछ कम ऊँची आवाज में उसने हाथ हिलाकर उत्तर दे दिया 'यहाँ जरूरी का भी बाप रखा है, जी। तुम ऊपर चले जाओ।'

वह आदमी लौट गया।

मिहल की छाँव में बठकर गुसाई ने लकड़ी के जलते कुँदे को खोदकर चिलम मुलगाई और गुड गुड करता धुआँ उड़ाता रहा।

खस्सर खस्सर धक्की का पाट चल रहा था।

किट किट किट किट खप्पर से आन गिराने वाली चिड़िया पाट पर टकरा रही थी।

छिच्छर छिच्छर की आवाज के साथ मपानी पानी को काट रही थी।

और कहीं कोई आवाज नहीं। बोसी के बहाव में भी कोई ध्वनि नहीं। रेती पत्थरो के बीच में टखन-टखने तक फला पानी क्या आवाज करेगा। पानी के गम से निकल कर छोट छोटे पत्थर भी अपना सिर उठाये आकाश को निहार रहे थे। दोपहरी ढलने पर भी इतनी तेज धूप। कहीं चिरया भी नहीं बोलती। किसी प्राणी का प्रिय अप्रिय स्वर नहीं।

सूखी नदी के किनारे बठा गुसाई भोचने लगा, क्या उस व्यक्ति को लौटा दिया। लौट तो वह जाता ही घट के अन्दर टक्क पड़े पिसान के थलो को देखकर। दो चार क्षण की बातचीत का आसरा ही होता।

कभी-कभी गुसाई का यह अवेलापन काटने लगता है। सूखी नदी के किनारे का यह अवेलापन नहीं, जिदगी भर साथ देने के लिए जो अवेलापन उमके द्वार पर धरना देकर बठ गया है वही। जिसे अपना बह सक, ऐसे किमी प्राणी का स्वर उमके लिए नहीं पालतू कुत्ते बिल्ली का स्वर भी नहीं। क्या ठिकाना ऐस मानिक का जिमका घर द्वार नहीं। बीबी-बच्चे नहीं, गाने-भीने का ठिकाना नहीं।

घुटनों तक उठी हुई पुरानी फीजी पट के मोड़ को गुसाई न खोला। गूल में चलने का वह हिस्सा थोड़ा भीग गया था। पर उस पार्श्व में उमके भीगी पट की यह शीतलता

अच्छी लगी। पट की सलवटी को ठीक करते करते गुसाईं न हुपके की नली से मुँह हटाया। उसके होठों में बाएँ कोन पर हल्की-सी मुसकान उभर आई। बीती बातों की याद गुसाईं सोचने लगा, दसी पट की बदौलत यह अकेलापन उसे मिला है नहीं, याद करन को मन नहीं करता। पुरानी बहुत पुरानी बातें वह भूल गया है, पर हवलदार साहब की पट की बात उसे नहीं भूलती।

ऐसी ही फौजी पट पहनकर हवलदार धरमसिंह आया था लाडी की धुली, मोकदार, श्रीजवाली पट। वसी ही पट पहनने की महत्वाकांक्षा लेकर गुमाइ फौज में गया था। पर फौज से लौटा तो पट के साथ साथ जि दगी का अकेलापन भी उसके साथ था गया।

पट के साथ और भी कितनी ही स्मृतियाँ मुखर हैं। उस बार की छुट्टियों की बात

कौन महीना? हाँ बसाख ही था। सिर पर त्रास खुखरी के फ्रैस्ट वाली काली किन्तीनुमा टोपी को तिरछा रखकर, फौजी वर्दी पहने वह पहली बार एनुअल लीव पर घर आया, तो चीड़-वन की आग की तरह खबर इधर उधर फल गई थी। बच्चे बूढ़े सभी उसमें मिलने आये थे। चाचा का गोठ एकदम भर गया था टसाठसस। बिस्तार की नई एकदम साफ जगमग, लाल नीली धारियों वाली दरी आगन में बिछानी पड़ी थी लोमा को बिठाने के लिए। खूब याद है आगन का गोबर दरी में लग गया था। बच्चे बूढ़े सभी आये थे। सिर्फ चना गुड़ या ललदानी के तम्बाकू का लोम नहीं था, कल के गर्मले गुसाईं को इस नये रूप में देखन का कौतूहल भी था। पर गुसाईं की आग उस भीड़ में जिसे खोज रही थी, वह वहाँ नहीं थी।

नाले पार के अपने गाँव से भ्रम के कटया को खोजने के बहाने दूसरे दिन लछमा आयी थी। पर गुसाईं उस दिन उससे मिल न सका। गाँव के छाकर ही गुसाईं की जान का बवाल हो गये थे। बूढ़े नरसिंह प्रधान उन दिना ठीक ही कहते थे, आजकल गुसाईं को देखकर सोबनिया का लडका भी अपनी पटी घेर की टोपी का तिरछी पहनन लग गया है। दिन रात दिल्ली के बच्चों की तरह छोकर उसका पीछे लगे रहते थे सिगरट-बीड़ी या गणप के लोम में।

एक दिन बड़ी मुश्किल से मौका मिला था उसे। लछमा को पान पनल के लिए जगल जाते देखकर वह छाकरा स काकड व गिंकार का बहाना बनाकर अकल जगल का चल दिया था। गाँव की सीमा से बहुत दूर, काफ़्त व पड व नीच गुसाईं व घुटन पर सिर रख कर लटी-लगी लछमा काफ़ल खा रही थी। एक गन्नाय गहरे लाल लाल काफ़ल। लल लल में काफ़ल की छीना गपटी करते गुसाईं न लछमा की मुटठी माध दी थी। टप टप काफ़ल का गाढ़ा लाल रस उसकी पट पर गिर गया था। लछमा ने कहा था इस यहा रस जाना मरी पूरी बाँह की, कुर्ती भ्रम में निकल आदगी। वह

खिलखिलाकर अपनी बात पर स्वयं ही हँस दी थी।

पुरानी बात। क्या कहा था गुसाई ने, याद नहीं पड़ता तरे लिए मखमल की कुर्ती ला दूँगा, मेरी सुवा! या कुछ ऐसा ही।

पर लछमा को मखमल की कुर्ती किसने पहनाई होगी—पहाड़ी पार के रमुवान जो तुरी निसाण लेकर उसे ब्याहने आया था?

‘जिसके आगे-पीछे माई-बहिन नहीं, माई-बाप नहीं, परदेश भ बटूक की नाक पर जान रखने वाले को छोकरी कसे दे दें हम?’ लछमा के बाप ने कहा था।

उसका मन जानन के लिए गुसाई न टेढ़े तिरछे बात चल्वाई थी।

उसी साल मँगसिर की एक ठडी, उदास गाम को गुसाई की यूनिट के सिपाही किसनसिंह ने क्वाटर-मास्टर स्टोर के सामन खडे-खडे उससे कहा था, हमारे गाव के रामसिंह ने बिदा की तभी छुट्टियाँ बङानी पडी। इस साल उसकी गादी थी। खूब अच्छी औरत मिली है, यार! शकल-सूरत भी खूब है एकदम पटाखा। बडी हँसमुख है। तुमने तो देखा ही हागा तुम्हारे गाँव के नजदीक की है। लछमा-लछमा कुठ ऐसा ही नाम है।’

गुसाई को याद नहीं पड़ता, कौन-सा बहाना बनाकर वह किसनसिंह के पाम से चला आया था। रम डे था उस दिन। हमेदा आधा पग लने वाला गुसाई उम दिन दो पग रम लेकर अपनी चारपाई पर पड गया था। हवलदार मेजर न दूसरे दिन पेगी करवाई थी—मलेरिया प्रिकागन न करन के अपराध मे। सोचते-साचत गुसाई बुदबुग्याया, स्साला एडजुटेड।’

गुसाई सोचने लगा, उस साल छुट्टिया मे घर से बिदा होन से एक दिन पहले वह मौका निकालकर लछमा से मिला था।

गगानायजू की कसम जसा तुम कहागे, मैं बसा ही करूँगी।’ आँसा म आँसू मर कर लछमा न कहा था।

वपों से वह सोचता है, कमी लछमा स मॅट होगी तो वह अवक्य कटगा कि वह गगानाय का जागर लगा कर प्रायश्चित जहर कर ले। देवी देवताओं की भूठी कसमे खाकर उह नाराज करन से क्या लाभ? जिस पर भी गगानाय का कोप हुआ, वह कमी फल फूल नहीं पाया। पर लछमा से कब मॅट होगी यह वह नहा जानता। लडकपन के सगी-साथी नौकरी चाकरी के लिए मदाना भ चले गय हैं। गाँव की ओर जान का उसका मन नहा हावा। लछमा के बारे म किसी स पूछना उस अच्छा नहीं लगता।

जितने दिन नौकरी रही, वह पलटकर अपन गाँव नहीं आया। एक स्टेशन से दूसरे स्टेशन का वालटियरा ट्रासपर लेन वाला की लिस्ट म नायक गुसाई सिंह का नाम ऊपर आवा रहा—लगातार पाँद्रह साल तक।

जिसे बल्लभ के ही नाम से ही नाम दिया गया था। जिसके नाम से वह नाम दिया था। जो नामों को। वह नाम था, जिसकी वह नाम से ही नाम दिया था। जो नामों को। वह नाम था, जिसकी वह नाम से ही नाम दिया था।

अब वह अपने ही नाम से ही नाम दिया था। जो नामों को। वह नाम था, जिसकी वह नाम से ही नाम दिया था। जो नामों को। वह नाम था, जिसकी वह नाम से ही नाम दिया था।

परन्तु। जिसके ही नाम से ही नाम दिया था। जो नामों को। वह नाम था, जिसकी वह नाम से ही नाम दिया था। जो नामों को। वह नाम था, जिसकी वह नाम से ही नाम दिया था।

एक-एक गुना का ध्यान हुआ

सामने लटकी के बांध के पल्लवी के गिर पर भोग दिने एक मारी आहुति उगा धार पाये भा रही थी। गुना के भाषा यही से आवाज देकर उग ली। बागी के धिक्के, बाई-नाके पत्थरों पर बटियाँ से पत्थर उग बटो तब आकर कबल निराग ली जा। वा कया वह बाध्य कर। दूर से बिल्हा बिल्लाकर गिता। स्वीकार करवाने की लीगा की आत्म के कारण वह तब भा हुआ था। एक कारण आवाज देने का उगना था रहा हुआ। वह आहुति अब तक पल्लवी छोड़ कर नीचे सामने भा पड़ रही थी।

पानी की बदली आवाज को पहचान कर गुनाई घट के अन्दर चला गया। पत्थर का आगम समाप्त हो चुका था। पत्थर में एक कम आवाजे बँल को उलट कर उसने भय का दिखाता रोकने के लिए काठ की बिटिया का उलटा कर दिया। बिटिया का स्वर बंद हो गया। वह जल्दी-जल्दी भाटे को धल म मरने लगा। घट के अन्दर मयानी की छिछर छिछर की आवाज भी अशेषतः कम गुनायी द रही थी। केवल कबली के ऊपर बाल पाट का पिस्तली हुई परघराहट का हस्ता धीमा सगीत चल रहा था। तभी गुनाई ने गुना अपनी पीठ के पीछे घट के द्वार पर इस सगीत से भी मधुर एक मारी का कठ-स्वर, "कब मारी आयगी जी? रात की रोटी के लिए भी घर में आटा नहीं है।"

तिर पर पिसान रख एक स्त्री उतास यह पूछ रही थी। गुनाई को उसका स्वर परिचित-ना लगा। चौककर उसने पीछे मुड़कर देखा। कपड़े में पिसान डीला बधा होने के कारण बोल का एक सिरा उसके मुँह के आगे आ गया था। गुनाई उसे ठीक से नहीं देख पाया, लेकिन तब भी उसका मन जस आकर्षित हो उठा। अपनी शका का समाधान करने के लिए वह बाहर आन को मुँहा लेकिन तभी फिर अन्दर जाकर पिसान के थला की छपर ऊपर रखने लगा। काठ की बिटियाँ बिट-बिट बोल रही थी और उसी गति के साथ गुनाई को अपने हृदय की घड़कन का आभास हो रहा था।

घट के छोटे कमरे में पारो और पिस हुए अन्न का चूरा फल रहा था, जो अब तक गुनाई के पूरे शरीर पर छा गया था। इस कृत्रिम सफ़ाई के कारण वह घुड़-सा

दिखाई दे रहा था। स्त्री ने उसे नहीं पहचाना।

उसने दुबारा वे ही गन्ध दोहराये। अब वह भी तब धूप में बोसा सिर पर रख हुए गुसाई का उत्तर पाने का आतुर थी। गायद नकारात्मक उत्तर मिलन पर वह उलट पाव लौटकर किसी अय चक्की का सहारा लेती।

दूसरी बार के प्रश्न को गुसाई न टाल पाया, उत्तर देना ही पडा, "यहा पहल ही टीला लगा है, देर तो होगी ही।" उसने दबे-दबे स्वर में कह दिया।

स्त्री न किसी प्रकार की अनुनय विनय नहीं की। गाम के आटे का प्रबंध करने के लिए वह दूसरी चक्की का सहारा लन को लौट पही।

गुसाई कमर मुकाकर घट से बाहर निकला। मुडते समय स्त्री को एक सलक देखकर उसका सद्दह विन्वास में बदल गया था। हताश सा वह कुछ क्षण तक उसे जाते हुए देखता रहा और फिर अपने हाथों तथा सिर पर गिर हुए आटे का झाडकर वह एक-दो कदम आगे बढ़ा। उसके अदर की किसी अनात शक्ति ने जस उसे वापस जाती हुई उस स्त्री की बुलान को बाध्य कर दिया। आवाज देकर उसे बुला लेने को उसने मुँह खोला परन्तु आवाज न दे सका। एक भिषक, एक अममथता थी जो उसका मुँह बन्द कर रही थी। वह स्त्री नहीं तक पहुँच चकी थी। गुसाई के अन्तर में तीव्र उदल-पुपल मच गई। उस बार आधुन शतना तीव्र था कि वह स्वयं को नहीं रोक पाया रड खडाती आवाज में उसने पुकारा 'लछमा !'

घबराहट के कारण वह पूरे जोर से आवाज नहीं दे पाया था। स्त्री न यह आवाज नहीं सुनी। इस बार गुसाई न स्वस्थ होकर पुन पुकारा "लछमा !"

लछमा न पीछ मुडकर देखा। मायके में उसे समी इसी नाम से पुकारते थे यह सम्बोधन उसके लिए स्वामाधिक था। परन्तु उस सका गायद यह थी कि चक्की वाला एक बार पिसान स्वीकार न करने पर भी दुबारा उसे बुला रहा है या उस केवल भ्रम हुआ है। उसने वही से पूछा "मुझे पुकार रहे हैं जी ?"

गुसाई न समय स्वर में कहा 'हाँ, ले आ हो जायगा।'

लछमा लण भर रकी और फिर घट की ओर लौट आई।

अदानक साधात्कार होने का मौका न दन की इच्छा से गुसाई व्यस्तता का प्रन्गन करता हुआ मिहल की छाँह में चला गया।

लछमा पिसान का थला घट के अदर रख आई। बाहर निकलकर उसने आँचक के जोर से मुँह-धोछा। तेज धूप में चलन के कारण उसका मुँह लाल हो गया था। किसी पैड की छाया में विश्राम करने की इच्छा से उसन इधर-उधर देखा। मिहल के पड की छाया में घट की आर पीठ किये गुसाई बठा हुआ था। निकट स्थान में दाहिम के एक पड की छाँह को छोडकर अय कोई बठन लायक स्थान नहीं था। वह उसा आर चलने लगी।

गुमाई को उगागा के कारण गन्गी ती झोकर ही जगे उगने निश्चय जाने-आने
 क्या, गुगागे बाल-बच्चे जो रहे पटवारत्री ! बड़ा उगागर का काम कर दिया
 गुमरो ! ऊपर क पत्र में भी ग जागे जिगनी नेर म मन्वर मिगगा ।

अत्राल गन्गी क प्रति निदे गद आनीवचना का गुमाई ने मन-ही मन रिगो
 क रूप म पट्टन किया । हम कारण उगकी मागिन उगल गुपल कुछ कम हा गई ।
 लामा उगकी ओर देने इगत पूष ही उगने बहा ' जा रहें तरे बाल-बच्चे लछमा !
 मायके कब आयी ?

गुमाई ने अत्राल म गुमरकी आंभी को राककर मा प्रदन इतने गया स्वर म किया,
 जगे वह भी अत्र दम आगिया की तरफ लामा क लिए एब साधारण व्यक्ति हा ।

दाडिम की छाया म पात-पतेल शादकर बटत लछमा ने शक्ति दृष्टि स गुमाई
 की ओर दगा । बोगी की गूगी धार अपानक जल-प्लावि हाकर बहन लगती, तो भी
 लामा का इतना आश्चय गहा हागा जिगगा अपन स्याग स बवल धार पत्रम की दूरी
 पर गुमाई को इस रूप म देखने पर हुआ । विस्मय स आगे पादकर यो उस दम जा
 रही थी जैसे अब भी उस विन्वाम न हो रहा हो कि जो व्यक्ति उसके सम्मुख बठा है
 यह उनका पूर्व-परिचित गुमाई ही है ।

'तुम ? जाने लछमा क्या बहना चाहती थी धप गन् उसके कठ म ही रह
 गय ।

'हो, पिछले माल पट्टन स लोट आया था वक्त काटने क लिए यह घट लगवा
 लिया । ' गुमाई न उसकी जिगामा दांत करने के लिए बहा । हाटो पर मुस्वान लाने
 की उसने अगपत्त कीगिग की ।

कुछ क्षणो तक दोनो कुछ नहीं बोले । फिर गुसाइ न ही पूछा ' बाल-बच्चे
 टीक हैं ?

आस जमीन पर टिकाये गरलन हिगार सबेत से ही उसने बच्चो की कुशलता
 की सूचना दे दी । जमीन पर गिरे एक दाडिम के फूल को हायो म लेकर लछमा उसकी
 पलुडिया को एक एक कर निरुद्देश्य साइन लगी और गुसाई पतली सीक लेकर आग
 को नुरदता रहा ।

घातो का प्रथ बनाये रखने के लिए गुमाई ने पूछा ' तू अभी और कितने दिन
 मायके ठहरने वाली है ? '

अब लछमा क लिए अपन को रोकना असम्भव हो गया । टप् टप् टप
 बट सिर नीचा किये आसू गिराने लगी । निमकिया के साथ-साथ उसके उठते गिरते
 क्या को गुसाई देखता रहा । उस यह नहीं सूझ रहा था कि वह किन क्षणो म अपनी
 सन्तुष्टि प्रकट कर ।

इतनी देर बाद सहसा गुसाई का ध्यान लछमा के शरीर की ओर गया । उसके

गल्ल म काला चरेक (मुहाण चिह्न) नही था। हतप्रभ सा गुसाईं उसे देखता रहा। अपनी व्यावहारिक अनानता पर उसे बेहद भुँसलाहट हा रही थी।

आज अचानक लछमा से भेंट हो जाने पर वह उन सब बातों को भूल गया, जिन्हें वह कहना चाहता था। इन क्षणों में वह केवल मात्र श्रोता बनकर रह जाना चाहता था। गुसाईं की सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि पाकर लछमा आसू पोछती हुई अपना दुखड़ा रोने लगी जिसका भगवान नहीं होता उसका कोई नहीं होना। जेठ-जेठानी से किसी तरह पिंड छुड़ाकर यहाँ मा की बीमारी में आयी थी, वह भी मुझे छोड़कर चली गई। एक अमागा मुझे रात का रह गया है, उमी के लिए जीना पड़ रहा है। नहीं तो पेट पर पत्थर बांधकर कहीं डूब मरती जजाल बटता।”

‘यहाँ काका काकी के साथ रह रही हो?’ गुसाईं ने पूछा।

‘मुश्किल पड़ने पर कोई किसी का नहीं होता, जी। दादा की जायदाद पर उनकी जाखें लगी हैं माचत है कहीं मैं हक न जमा लूँ। मैंने साफ साफ कह दिया मुझे किसी का कुछ लेना दना नहीं। जगलात का लीसा दा डोकन अपनी गुजर कर लूँगी किसी की आँख का काटा बनकर नहीं रहूँगी।

गुसाईं ने किसी प्रकार की मौखिक सवेदना नहीं प्रकट की। केवल सहानुभूति पूर्ण दृष्टि से उसे देखता भर रहा। दाडिम के वृक्ष से पीठ टिकाये लछमा घुटने मोड़ कर बठी थी। गुसाईं साँचने लगा प ड्रह मोलह साल किसी की जिंदगी में अंतर लाने के लिए कम नहीं होने, समय का यह अंतराल लछमा के चेहरे पर भी एक छाप छोड़ गया था पर उसे लगा उम छाप के नीचे वह आज भी पड्रह वप पहले की लछमा का देव रहा है।

कितनी तेज धूप है इस साल!’ लछमा का स्वर उसके काना में पडा। प्रसंग बदलने के लिए ही उस लछमा ने यह बात जान पूँसकर कही हा।

और अचानक उसका ध्यान उम ओर चला गया जहाँ लछमा बठी थी। दाडिम की फली फली अघटकी डाला स छनकर धूप उसके शरीर पर पड रही थी। मूरज की एक पतली किर्न न जाने कब स लछमा के माथे पर गिरी हुई एक लट की मुनहरी रंगीनी में डुबा रही थी। गुसाईं एकटक उस स्नेहता रहा।

‘दोपहर तो बीन बुकी हागी?’ लछमा न प्रश्न किया तो गुसाईं का ध्यान टूटा हाँ अब तो दा बजने वाले हागे। उनने कहा ‘उधर धूप लग रही हो ता इधर आ जा छाँव म।’ कहता हुआ गुसाईं एक जमुहाई लेकर जपन स्थान स उठ गया।

‘नहीं यही ठीक है’ कहकर लछमा ने गुसाईं की आर दखा तैनिन वह अपनी बात कहने के साथ ही दूमरी ओर का देखन लगा था।

घट म कुछ देर पहले डाला हुआ पिमान समाप्ति पर था। नम्बर पर रत्ने हुए पिमान की जगह उसन जाकर जल्दी जल्दी लछमा का अनाज तम्पर में खाली कर दिया।

धारे पीरे चलकर गुसाईं गूल किनारे तक गया, भगोई अँडुली से मर मरकर छतन पागे निमा और फिर पाग ही एक बजर घट के अंदर नाकर पीतल और अलमूनिमम का बूत बसा लकर आग के निकट लौट प्राया।

आसपास पढी हुई मूगी लकड़ियाँ का बटोरकर उसने आग गुलगाया और एक कालिंग मुगी बटलोई में पानी रगकर जात-जाने लछमा की ओर धुँह कर वह गया चाय का टाइम भी हो रहा है। पानी उबल जाय तो पत्ती डाल देना पुडियाँ म पढी है।"

लछमा ने चाई उत्तर नहीं दिया। वह उगे नदी की ओर जान वाली पगडड़ी पर जाता हुआ दराती रहो।

सडक-किनारे की दूबान से दूध लकर लौटन लौटत गुसाईं को काफी समय लग गया था। चापस आगे पर उसने देमा, एक छ-सात बप का बच्चा लछमा की देह से सटकर बठा हुआ है।

बच्चा का परिचय देने की इच्छा में जैसे लछमा ने कहा, 'दूध छोकर की पड़ी मर के लिए भी चन नहा मिलता। जान कस पूछता गोजता मरी जान साने की यहाँ भी पहुँच गया है।

गुसाईं ने लक्ष्य किया कि बच्चा बार-बार उसकी दृष्टि बचाकर माँ से किसी चीज के लिए इदि कर रहा है। एक बार मुँहासाकर लछमा ने उस शिक्षक दिया, 'बुप रह' अमी लौटकर पर जायेंगे, इतनी-सी देर में मरा क्यों जा रहा है?"

चाय के पानी में दूध डालकर गुसाईं फिर उसी बजर घट में गया। एक घाली में आटा लेकर वह गूल के किनारे बठा बठा उस पूँधन लगा। मिहल के पेड की ओर भाते समय उसन साथ में दो एक बतन और ल लिये।

लछमा ने बटलोई में दूध चीनी डालकर चाय तयार कर दी थी। एक गिलास, एक अलमूनिमम का मग और एक अलमूनिमम के मसटिन में गुसाईं ने चाय डालकर आपस में बाँट ली और पत्थरा से बने बेंढगे बूल्हे के पास बठकर रोटियाँ बनाने का उपक्रम करने लगा।

हाथ का चाय का गिलास जमीन पर टिकाकर लछमा उठी। आटे की धाली अपनी ओर खिसकाकर उसने स्वयं रोटियाँ पका देने की इच्छा ऐसे स्वर में प्रकट की कि गुसाईं ना न कह सका। वह खरा खडा उस राठी पकाते हुए देखता रहा। गोल-गाल दिविया-सरीखी रोटियाँ बूल्हे में खिलन लगीं। बपों बाद गुसाईं ने ऐसी रोटियाँ देखीं थी, जो अनिश्चित आकार की फौजी लगर की चपातियाँ या स्वयं उसके हाथ से बनी बडोल रोटियाँ में एकदम भिन्न थी। आटे की लोई बनाने समय लछमा के छोटे छोटे हाथ बढी देखीं से धूम रहे थे। बलाई में पहुँचे हुए चाँदी के बडे जब कभी आपस में टकरा जाते तो खून खून का एक अत्यंत मधुर स्वर निकलता। चक्की के पाट पर

टकरानेवाली काठ की जिड़िया का स्वर कितना नीरस हो सकता है यह गुसाईं न आज पहली बार अनुभव किया।

कितनी काम से वह बजर घट की ओर गया और बड़ी देर तक खाली बतन डिब्बों का उठाता रखता रहा।

वह लौटकर आया तो लछमा राटी बनाकर बरतना को समेट चुकी थी और भव आटे में सने हाथों को घों रही थी।

गुसाईं न बच्चे की ओर देखा। वह दोनों हाथों में चाय का मग धाम टकटकी लगाकर गुसाईं का देखे जा रहा था। लछमा ने आप्रह के स्वर में कहा चाय के साथ खानी हा ता खालो। फिर ठंडी हा जायगी।'

'म तो अपन टैम से ही खाऊँगा। यह तो बच्चे के लिए "स्पष्ट कहने में उसे बिलक महसूस हा रही थी जैसे बच्चे के सम्बन्ध में चिंतित होने की उसकी बेध्ना अनधिकार हो।

'न-न जी' यह तो अभी घर से खाकर ही आ रहा है। म रोटियाँ बनाकर रख आयी थी', अत्यंत सकोच के साथ लछमा न आपत्ति प्रकट कर दी।

अ ५, या ही कहती है। कहा रखी थी रोटियाँ घर में?' बच्चे ने हर्षासी भावाञ्ज में वास्तविक स्थिति स्पष्ट कर दी। वह ध्यानपूर्वक अपनी माँ और इस अपरिचित व्यक्ति की बात सुन रहा था और रोटियों को देखकर उसका समय ढीला पड़ गया था।

बुप! आगे तरेरकर लछमा न उसे डाँट दिया। बच्चे के इस कथन के कारण उसकी स्थिति हास्यास्पद हो गई थी, इस कारण लज्जा से उसका मुँह आरक्त हो उठा।

बच्चा है, भूख लग आई होगी, डाँटन से क्या फायदा?" गुसाईं ने बच्चे का पक्ष लेकर दा रोटियाँ उमकी आर बढ़ा दी। परन्तु माँ की अनुमति के बिना उन्हें स्वीकारन का साहस बच्चे को नहीं हो रहा था। वह ललचाई दृष्टि से कमी रोटियों की ओर बभी माँ की ओर देख लेता था।

गुसाईं के बार-बार आप्रह करने पर भी बच्चा रोटियाँ लेने में सकोच करता रहा तो लछमा ने उसे विडक दिया, 'मर' अब ले क्यों नहीं लेता? जहाँ जायगा, वही अपन लच्छन दिखायगा।

इससे पहले कि बच्चा रोना शुरू करदे, गुसाईं ने रोटियाँ के ऊपर एक टुकड़ा गुठ का रखकर बच्चे के हाथों में द दिया। भरी भरी आँखा स इस अनोख मित्र को देखकर बच्चा बुपचाप रोटी खाने लगा। और गुसाईं कीतुकपूर्ण दृष्टि में उसके हिलते हुए हाँठों को देखता रहा।

इस छोटे-से प्रसंग के कारण वातावरण में एक तनाव-सा आ गया था जिसे

गुसाईं और लछमा दोनों ही अनुभव कर रहे थे ।

स्वयं भी एक रोटी को चाय में डुबाकर खाते खाते गुसाईं ने जैसे इस तनाव को कम करने की कोशिश में ही मुस्कराकर कहा 'लोग ठीक ही कहते हैं, औरत के हाथ की बनी रोटियां में स्वाद ही दूसरा होता है ।'

लछमा ने कर्णदृष्टि से उसकी ओर देखा । गुसाईं हा होकर खोखला हसी हंस रहा था ।

'कुछ साग सब्जी होती, तो बेचारा एक-आधी रोटी और खा लता गुसाईं ने बच्चे की ओर देखकर अपनी विवशता प्रकट की ।

ऐसी ही खान-पीने वालों की तकदीर लेकर पदा हुआ होता, तो भरे भाग क्यों पड़ता ? दो दिन से घर में तेल नमक नहीं है । आज थोड़ा पैसे मिले हैं, आज ले जाऊँगी कुछ सौदा ।'

हाथ से अपनी जेब टटालने हुए गुसाईं ने सकाचपूर्ण स्वर में कहा, 'लछमा !'

लछमा ने जिज्ञासा से उसकी ओर देखा । गुसाईं ने जेब से एक नोट निकालकर उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा 'ले, काम चलाने के लिए यह रख ले, मेरे पास अभी और है । परसा दफ्तर से मनीआडर आया था ।'

नहीं नहीं जी ! काम तो चल ही रहा है । मैं इस मतलब से थोड़े बड़े रहूँगी थी । यह तो बात में बात चली थी तो मैंने कहा 'कहकर लछमा ने सहायता लेने से इंकार कर लिया ।

गुसाईं का लछमा का यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा । रूखी आवाज में वह बोला 'तुम तकलीफ के बत ही आदमी जादमी के काम नहीं आया तो बेकार है । रसाला ! कितना कामयाब कितना फूँकना हमने इस जिन्दगी में । है कोई हिसाब ! पर क्या फायदा ! किसी के काम तो नहीं आया । उसमें अहसान की क्या बात है ! पसा मिट्टी है माला ! किसी के काम नहीं आया तो मिट्टी एकदम मिट्टी !'

परंतु गुसाईं के इस तर्क के बावजूद भी लछमा अंधी रही, बच्चे के सिर पर हाथ फेरते हुए उसने दार्शनिक गम्भीरता से कहा, 'गगनाय दाहिने रह तो भले बुरे का निमित्त जाते हैं जी ! पेट क्या है घट के खप्पर की तरह जितना डालो कम ही जाय । अपने-पराय प्रेम से हसनाल दें, तो वही बहुत है दिन काटने के लिए ।'

गुसाईं ने गौर से लछमा के मुख की ओर देखा । वहाँ पहले उठे हुए ज्वार और तूफान का वहाँ कोई चिह्न शेष नहीं था । अब वह सागर जल सीमाओं में बँधकर शांत हो चुका था ।

रफिया लेने के लिए लछमा से अधिक आग्रह करने का उसका साहस नहीं हुआ । पर गहर असंतोष के कारण बुझा बुझा सा वह धीमे चाल से चलकर वहाँ से हट गया । महामा उमकी चाल तेज हो गई और घट के अंदर जाकर उसने एक बार गतिहीन दृष्टि

से बाहर की ओर देखा। लछमा उस ओर पीठ किये बठी थी। उसने जल्दी जल्दी अपने निजी आटे के तीन स दो-ढाई सर के करीब आटा निकालकर लछमा के आटे में मिला दिया और सताप की एक साँस लेकर वह हाथ झाड़ता हुआ बाहर आकर बाघ की ओर दखने लगा। ऊपर बाघ पर किसी को धूमते हुए देखकर उसने हाक दी। गायद भेत की सिचाइ के लिए कोई पानी तोना चाहता था।

बाघ की ओर जान से पहले वह एक बार लछमा के निकट गया। पिमान पित्त जान की सूचना उस देकर वह वापस लौटते हुए फिर ठिठककर खड़ा हो गया मन की बात कहने में जैसे उसे विषय ही रही हो। अटक-अटककर वह बोला, लछमा !

लछमा न सिर उठाकर उसकी ओर देखा। गुसाई को चुपचाप अपनी आर देखते हुए उस मकोच होन लगा। वह न जाने क्या कहना चाहता है, पर गुसाई न निपकते हुए केवल इतना ही कहा, 'कमी चार पसे जुड जायें, तो गगनाथ का जागर लगाकर भूल-चूक की माफी माग लेना। पूत-परिवार वालों का देवी देवता के कोप से बच रहना चाहिये।' लछमा की बात सुनने के लिए वह नहीं रुका।

पानी तोड़ने वाले खेतिहर से थगडा निपटाकर कुछ देर बाद लौटते हुए उसने देखा, सामन वाले पहाड की पगडडी पर सिर पर आटा लिये लछमा अपन धच्चे के साथ धीरे धीरे चली जा रही थी। वह उह पहाडों के माड तक पहुँचन तक टकटकी बाघे दखता रहा।

घट के अदर काठ की चिडिया अब भी कित कित आवाज कर रही थी, चक्की का पाट खिस्सर खिस्सर चल रहा था और मथानी की पानी काटने की आवाज आ रही थी और कही कोई स्वर नहीं सब मुनसान निस्तब्ध !

दो दुखों का एक सुख

साधा, करमगनी तिन टारी —

मिरटुला बानी गाड़ी के पथरोटे पर बठी मजोरा कुटकुटा रही थी— काग अनेक बिगट बा पत्यो भसम करत गिनगारा। साधा ।

ओर गाड़ी की सडक क तहल तिनार बठ करमिया का लग रहा था कि मिरटुला बानी अपने गल की मिठाग ओर बाना की निगान स उसकी सारी दह का मजोर की तरह झनझना द रही है— अ गियन देता जाचना तिल म लानी जाग

अपने सौन्दर्य-बाध का इस तीव्रता से अटपटाकर करमिया न सचमुच अपना कण्ठ गाल दिया और टोन क मग्नू म ठ ठ उ गलिया क तिकोर मारन लगा— अ गियन देगा जाचना दिल म लागी आग र रामा ! अ गियन

मिरटुला बानी स एव सींगी ऊपर बठ सूरदास क रीत नन साभेदी बाणा की तरह मिरटुला बानी ओर करमिया की ओर घूम गए । करमिया के कण्ठ क भारी स्वर म उस अपन लिए दु सह ब्यग का बाध हुआ और उसे लगा कि करमिया क गाने की आवाज सचमुच एव जलत कोयल की तरह उसक बानो म प्रविष्ट हो गई है— अ गियन देता

श्राप और जात्राश से सूरदास का कण्ठ जलन को हो गया । एव बार उसने अपन एकदम लम्बे और तीव्र नाचनो को अपनी पिडलियो म जोर जोर से चुभाया और फिर दाना हायो की उ गलिया को हवा म नचाते हुए खुद भी गा उठा— बन मे लागी आग रे रामा बन मे लागी आग ! कोरी ज गियन भया करे जावे फूटे माग ! अ ग अ ग सब गल गए, ऐसी लागी आग ! ऐमी लागी आग रे रामा ।

सडक पार बठे करमिया को ऐसा लगा जस सूरदास न जलती हुई लकड़ी से उसके कलेजे को दाम दिया हो । मग्नू के नीचे लगाया हुआ पत्थर उठाकर सूरदास का सिग फोड देने का मन हुआ उसका मगर ठू ठ उ गलियो की पकड़ से पत्थर फिसल पडा और पांदा के कारण कुछ देर करमिया अपनी ही जगह धरधराता रह गया । उसे लगा कि उसकी सारी देह भर की नसा के सिरे खन के दबाव स फूटन फूटने को हो आए है । उसके हाथ-पाँवा की ठू ठ उँगलियाँ ऐसे सनसनाने लगी, जस कई बेर से अनहुही हाल की ब्याई भस के थन पँथुरा गए हो । सूरदास का कठोर ब्यग उसकी नस-नस मे समा

गया था। और उस लग रहा था कि असह्य आश्रम के दबाव के कारण उसके हाथ पाँवों की उँगलियाँ फूटकर छितरा जाएँगी। घोर वितृष्णा के साथ करमिया ने अपने हाथ-पाँवों की उँगलियों को दखा—थाड़ा-थोड़ा खून पीज चूने लगा था।

और करमिया की आत्मा में पानी छलछला गया—हरे, रामजी! इन्हीं गतित अ गा को बेर-बेर दखकर कलजा कोचने को द रखी हैं ये आँखें तूने मुझे? न होती समुरी ये छिनाल आखा जसी चमडलोय की जोड़ी तो अपना ही कोड़ अपनी ही आखा से देखन का सन्ताप तो न भागना पडता?

उधर सडक पार की सीढ़ी पर बठा सूरदास भी मन ही-मन कुड रहा था कि अ-वेपन से तो कोट भला। औरता के रूप-सरूप की बात सुन-सुनकर मन एक बलक पान को अकुला उठता है। लगडदीन बाबा कहा करता था—सूरदास एक कवित्ता तुझे सुनाता हूँ। तू बेर-बेर पूछता है कि औरत का रूप-सरूप और तन-बदन कसा होता है? तो बेटे, कवित्ता है कि इन्द्रधनु सतरगिया इकरग तिरिया मात। चन्द्रबदन, मृगलोचनी अहा, चदीली रात। अहा चदीली रात त्रिया सया सग सोवे

गाने की तनी कितनी भी सूख मिठाम उमम बनी रहनी है। लगडदीन बाबा के चित्त का रस मिगार भी मरते मरते तक बदस्नूर कायम था। सूरदास को अब-जब राह चलती औरता का स्पस मिलता है, तब-तब उसे ऐसा लगता है कि लगडदीन बाबा के कवित्त का एक एक अक्षर उसके कलौ पर खुद रहा है—अहा चदीली रात त्रिया

मुना है, चँदीली रात में सार समार में उजियाली छा जाती है—सरमो की पियराई मूठ जमी सुनहरी उजियाली। मगर मरसा की पीली मूठ भी तो सिफ कानो से ही सुती है। यह भी मुना है कि रूप मिगार वाली तिरिया का अ ग-अ ग सोनवरन होता है। नाक से हाठा को वृत्ताकार घेर लेने वाली सोन नधुली-जसा। नकफुआ व बीचा बीच डाली में भूलत पीतवरन मुग्गे जसी लटकी सोनबुलाकी-जसा। उँगलिया की गाठा को पियरा देने वाली मोन की अँगूठिया जमा। मगर सोन के आभूषणा का बगन में सूरदास ने काना से ही मुना है। न तान सोनवरन तिरिया का रूप-सरूप कसा होता होगा! यह जिनासा खाखनी कोटरा में प्रान चिह्न जमी खटी कर गया था लगडदीन बाबा—आज तक सूरदास क रीते ननो में बजर खण्डहर के द्वारा पर पडी साकल-जसी भूल रही है।

इन्द्रधनुष के सात रंगा को मान करन वाला तिरिया का एक रग—सोनरग। चदीली रूप, सोन के आभूषणा का रूप कुछ आभस दे सकेगा इसी ललक से सूरदास अचानक पाँव पसारकर राह चलती औरता के पाव छू लेने की चेष्ठा करता था, मगर बाद में पता चल गया कि औरतें पाँवों में सोन के जेवर नहीं पहनती हैं। खर सोन के आभूषणा का न सही, सुनहले पाँवों का स्पस कभी-कभी मिल जाता है और इस स्पस सुख का पान के लिए सूरदास अपने दिव्य को नहीं खनखनाता था। कान साधे, एकाग्र

गिस्त होकर सीढ़ियाँ से उतरती गिरती। क हायर एमचमान की टांगें लगा रहता था। जग ही पाँवा क जोयर बजने या हाथ की मूठियाँ लनछाने की ध्वनि मूरदास के निजट पट्ट पनी थी, 'हरे, राम जी ! एग ठोर पड़ पड़ टाँगें भी टुगिया गई हैं, माई-बाप !' कहत हुए मूरदास अपनी दाया या बायी टाँग आगे पगार दता था। कभी-कभार कोई औरत लंगटा जाती और उमरी अंधी जीया या बोलती, तो मूरदास का ऐगा लगता था जस उमा जलते हुए पपाटा पर किमी १ टण्डा बबदा छिन्नक दिया हा। औरता ये स्पग-मुग और उनकी जाबाज की मिठास स जटपटाकर मूरदास 'हररामजी ! हरे रामजी ! गुनगुनाता रह जाना था। और उमग लम्बे लम्बे नागूना वाली उँगलियाँ पाँवा की पिठलिया म घस जाती थी—'गहा चदीली रात प्रिया

कभी-कभी मूरदास का मन होना था कि एव हा सीढ़ी नीचे बठी मिरदुला कानी की आवाज क महार उसने पाग पट्टूच जाए। लगभगिने बाया कभी कभी मिरदुला कानी का रूप-सम्प भी बतान दिया करता था—'गम्भो दीपक द्युभे हुए हैं मगर मन्त्रि के बलगा की चमक नहा घटी है।

मिरदुला अब भी मजरीरे बजा रही थी—'साधो कर्मगती किन टारी ! कोम अनेक निजट बन फल्यां ओ जो

मूरदास क लिए या ही सारा ससार एक रग था। उस समय तो उस मिरदुला कानी की सीढ़ी और अपनी सीढ़ी क बीच का पासला ओर भी ज्याना एव रग और गिफ एक ही आवाज से गूँजता हुआ लगा—साधो कर्मगती किन

करमिया सडक पार गिदध की तरह बठा घूर रहा था। मूरदास को घिसटते घिसटते मिरदुला कानी के पास जात और काँपती हुई उँगलिया से उसकी दह को टटो लत हुए देखा ता लछमी पात्र को एक जार पटकते हुए सामन का बोडा। चिथड पट्टियो से बने रहन क वावजूद सडक के तीव ककर पाँवो म चुमत रहे और ठोकर लगन से अ गूठा फूट पडा, तो ज डे की जर्दी जसा खून मवाद चून लगा। मगर करमिया तो गुस्से से बेसुध था। तब तक दम बीस तमाशबीन और जुट गए थे। मिरदुला कानी 'हे रामजी यह मूरदास क्या पगला गया ?' चीखती मीढी स उतरकर सडक पर पहुँच गई थी। करमिया न अपने ठू ठ हाथा से ही मूरदास के मु ह पर तडातड थपड घू से जटना शुरू कर दिय और निच्च पिच्च मु ह पर धूकता हुआ, गालियाँ देता चला गया— कयो रे रसाले अये ? क्या रे अपनी महतारी के खसम ? क्या रे, तुच्चे लफगे ? रसाले तेर लिए सारी दुनिया मे ही अधकार हो रहा है। जाम सडक है। महतारियाँ-बहन आर पार जा रही है। माई-बाद लोग चल फिर रह है। और तू रसाला कार्तिक के कुत्ते की तरह बेचारी लाधारिस कानी पर चढ़ा जा रहा है ? पेशाव कर दूँगा रसाले की आखा के खड्डो मे। महाराज लोग, मुझ तो यही लगता है कि यह रसाला बहुत कुछ बना हुआ अघा है ! ऊपर वाली सीढ़ी से उतरकर, रसाले ने ठीक कानी की छाती म

हां बस हाथ डाल दिया नहीं तो ! पूरव जनम के पावो से तो स्साला इस जनम में आखो का बचा प दा हुआ है । इस जनम म फिर ऐमे ऐस कुकरम कर रहा है ! सरे बाजार म कानी की आवरू बूट रहा है—अगले जनम मे स्साला कोनी हो जाएगा कोडी ।

‘कोनी’ कहते ही करमिया कुछ जचकया गया जोग कुछ नहीं सूया तो फिर घूकते और पूंसे मारन लगा—“सूरदास बनता है स्साला साडो की तरह औरतो के पीछे गगत है । जिन महतारियो के दान पुण्य से परवगिस होनी है उही का टांग गगाता है । इस स्साले के लिए तो सारा जगत अबियारा ठहरा । भरी दोपहरो मे आम सडक की सीनिय पर बठा बदरा की तरह पुजाता रहता है ।

आखें अवी थी, सूरदास करमिया कोनी के बार नहीं बचा पा रहा था । दूसरे आस-पास लोगो के जुट जाने के बोध न उसे और भी भयभीत कर दिया था कि कहीं कई और लोग भी न जुनियान लें । करमिया की ठूँठ उँगलियो से खून पीन फूटन लगा था मारते मारते, और सूरदास का चेहरा एकदम विवृत हो चुका था । निरपार सूरदास लट्टू की तरह मिर का चारा ओर घुमाकर करमिया की चोट बचान की चपट कर रहा था और करमिया का अपनी आंखा की जात का भरपूर सुख मिल रहा था हायो की उँगलिया फूट गई थी, मगर कानी के लिए अदलील गदा के उच्चारण करने और सूरदास का मारने मे उस इतना सुख मिल रहा था कि पीडा की अनुभूति ही उसे नहीं हो रही थी ।

तभी मिरदुला कानी आगे बढ़ी । दाईं आख के सिफ एक कोने से ही उसका ज्योतिबिन्दु उघडा हुआ था । सूरदास की दुदशा देख देखकर उसका हिया पसीज रह था । पहले तो कानी डम प्रतीक्षा म रही कि शायद बाहर के कुछ लोग बीच-बचाव कर दें, मगर लाग तो घिना घिना कर तमांगा देखते जा रहे थे और करमिया कोडी स म जयाग अदलील बात कह रहे थे ।

नहा रहा गया तो मिरदुला कानी उठी और करमिया को दोनों हायो स धकेलते हुई बोली ‘ अब बस कर र कसाई ! ह राम बडा निठुर रिया है तेरा नी !’

भीड म से कोई फुसफुसा उठा कानी काने की मुहज्वल म यह कोनी बकार मे ही अपनी टांग अडा रहा है ।’

और करमिया को लगा कि उसकी मारी देह थक्कर अगत हो चुकी है । सन्क पार लौटत हुए, हाँफना-हाँफना, बीच सडक म ही बठ गया करमिया । हाथ पाँवो का उँगलिया बुरी तरह टुखन लगी थी । करमिया का लग रहा था कि कानी ने विकट ब का मसम करन वाली चिनगारी, सूरदास क साथ सबदना जताकर उसके कलेजे से चिटक दी है । असह्य पीडा और र्घ्याँ स मुँह ढापे-नपे करमिया रोन लगा—“ह रामजी मु कोडी को ता मोन भी नहा आती ”

सामने स मिरदुला बानी की आवाज आई, "अब धीन गइव म मोटर क नीच पयन को बठ गया है रे करमिया ! हे राम ! इग निर्मोही को तो न दूगरा की दया है, न भागी पीर ।"

एक बार मिरदुला बानी की ओर घुना कितुणा क साथ घूरते हुए, करमिया अपनी जगह पर खोकर पमा का चिन्वा ममाने लग गया

करमिया मूरगम और मिरदुला बानी—तीना म्पूनिमिपलिट्टी क दफ्तर के सामने की गहन और गीर्झ्या पर बठकर हा भीग मांगत थे मगर रहते थे सभी अलग अलग । मिरदुला रानी जगताराम मिहनी की गाँठ म रटती थी । जगताराम मिहनी की घरवाली गुजर चुकी थी । मूर गाँठ क पार पहुँच चुका था । गहली स तीन बर थे । मूर परनीयर की एक दुवान म मजदूरी करना था । बाल बच्चा के ही साथ बानी भी रन लती थी । मूरगम पिछल बरस तक लगहदीन बाबा क साथ रहता था । लौंडा-लौंडा ही था—वार्ग-तर्ग था । धूप टण्ड सदन का अभ्यास हो चुका था, सो कभी कहां कभी कथा—अलग अलग ठौर रात काटता रहता था । करमिया को भीव मांगत मांगत ही गीरीत-पच्चीत बरस हो चुक थे । विक्रोरिया रानी क रुपये पसा का चलन था तब स गाथी नहम् महाराज क नय पसा तक क सिबके उसक पास जमा थे, इमीलिण उस सुरी त स्थान की गोज भी रहती थी । पिछल आठ बरों से गहर से लगभग डर मीठ दूर बट्टागी माहल के पार बने उजाड घमगाल की एक कोठरी म करमिया रह रहा था । घमगाला की दो काठरिया क अलावा वहाँ ऊपर घना विकट वन था और गहरी घाटियाँ । बीच बीच म कभी गरीब मुसाफिर या बकरियाँ बचन वाले वहाँ ठहरन को आत थे मगर करमिया अपनी कोठरी म से रात रात भर ऐसी विकट चीत्कार करता रहता था कि दुबारा वहाँ कोई नही आता था । अपनी कोठरी के एक कोने म करमिया न एक टूटा हुआ कनस्तर गाड रखा था, उसी म उसके लछमी पाण के सार पसे जमा होते थे । कनस्तर गाडने भर को गडढा खोदते खोदत करमिया नै कई रातें बिना सोण ही बिता दी थी और कोन से भी ज्यादा उसकी उ गलिया उस गडडे को खोदन म ही फूटी थी और तब से घाब कभी पुरे ही नही ।

भीव माग मागकर जुटाए हुए पसा का सुख ही करमिया के लिए सबसे बडा सुख था । कुष्ठ रोग के देह को गलान वाले दाह सभी से अपने लिए सिफ धिन-अधिक हे-अधिक धिन भर्री दया—और आत्मीयता शून्य जीवन की विभीषिका के बीच, सिफ एक यही सुख शेष था—भीव के धन का और करमिया कभी-कभी सोचता था कि कान ईश्वर ने उसकी छाती ही इननी गहरी दे रखी होती जिसमे पूरा कनस्तर सहेजा जा सकता । करमिया का मन तो करता था कि तिन भर ही कनस्तर वाले कोन म साया पडा रह मगर भीव मागे बिना भी आत्मा रह नहा सकती थी । कभी कोई आकर उसकी अनुपस्थिति म उसकी कोठरी म न ठहर जाए—यह आशका उसे घेरे रहती थी ।

इसीलिए अपनी कोठरी में ठौर ठौर टट्टी पेशाब करने के अलावा वह गंदे चियड़े जोर झाड़ पात बिखेर थाता था। जब उसे विश्वास ही जाता था कि इतनी गंदगी जोर बदबू को उसके अलावा जोर कोई दूसरा सहन नहीं कर सकता तभी वह कोठरी से बाहर निकलता था।

अल्मोड़ा आण करमिया को कुल दस बरस ही हुए थे। इसमें पहले वह बागेश्वर में था। वहाँ एक दनपुरिया बानी से उमन गादी भी कर ली मगर थोड़ा ही दिनों बाद वह उसकी जोड़ी जमापूँजी करीब-करीब पूरी ही साथ उठा ले गई। तब स कानियो कोठिनों पर से करमिया का विश्वास उठ गया था क्योंकि अल्मोड़ा के करबले से भाग आर एक कोठिन न भी उसे या ही छला था। उसका औरत जन्म ही बकार हा चुका है। वह का प्रयोजन ग गल चुका है, यह पता बहुत दिना बाद चला था करमिया को और तब तक वह कोठिन करमिया की कमाई चौपट करती रही थी। जीभ की चटार थी—हमशा दूध जलबी ही माँगती थी। आखिर पाल खुलन को आई ता भाग गई थी। करमिया ने अपना माथा कुटकुटा लिया था—हे राम, तभी तो यह राड पेशाब करते में चोट खाई सुअरी की तरह बिलाप करती थी।

अल्मोड़ा आ जाने के बाद स एक अम्मास सध गया था। घरवाली रखने का मोह टूट गया था। मगर पिछले बरस स मिरदुला बानी सामने की सीटी पर बठने लगी है। बेर बेर करमिया का ध्यान उचटता रहा है उसकी सुरीली-तीखी आवाज म—साधो करमगती किन टारी

और जबसे लगडदीन बाबा के बले मूरदास ने मिरदुला बानी के सामने बठना शुरू कर दिया था तब से तो करमिया क लिए एकचित्त होकर भी मागना भीख बठिन हो गया था। भिक्षा में होन बाल घाटे को देखते हुए ता करमिया का मन कहीं दूमरे ठौर जाकर बठने को होता था मगर फिर मिरदुला बानी आला में घूमने लगती थी। करमिया सोचता था कि जब आँखा का जघा मूरदास ससुरा तक मिरदुला बानी के सामने बठने का माह नहीं छोड पाता है तो ज्योत मरी आखा के रहते वह कस मिरदुला बानी का रूप सन्प देखन का सुख छोड दे ? अब तो मिरदुला बानी के रूप सन्प स भी जयादा आकषण मूरदास की गतिविधियो पर दीठ रखने का था।

आज घमशाले की तरफ लौटते-लौटते न-आन कितनी गालियाँ मूरदास को दी थी करमिया ने। करमिया को अपना कोढ़ इसी मूरदास के कारण जयादा खलता था। बाजार की सडक और गाडी की सडक पर तियक रखा सी सीढ़ियाँ पर बडी आवत आवत रहती थी। औरता की टोलियाँ उतरती-चढ़ती थी तो मूरदास अपन हाथ-पाँवा से उनकी दह को छूता रहता था। सामने बठा करमिया देख दखकर कुन्ता रहता था। मूरदास की देखा-देखी करमिया न भी सीढ़ियाँ पर बठना शुरू कर दिया था मगर राह चलती औरतें उसक समीप स घिनाती घिनाती एक ओर को बटकर चली जाती

थी। करमिया वज्रित मूरत जसा अपन ठौर पडा रह जाता था। सूरदास से कोई नहीं घिनाता था। सूरदास की यही स्थिति करमिया को डाह स थरथरा जाती थी, और वह अपनी ठूँठ उ गलिया को आपस म घिस घिस कर पीत्र मवाद चुआने लगता था। वाद मे दफतर के अफसरा ने उसे सीढ़िया पर से हटवा दिया और करबला भेज देने की धमकी दी थी। तब से करमिया सडक-पार बठा रहता था और सूरदास की हरकतो से कुदता रहता था। कोढ़ से भी ज्यादा यह कुदन दु ख दे रही थी, मगर इस दु ख को छोटना भी कठिन था।

आज तो सूरदास की मिरदुला स छेड़खानी और मिरदुला कानी की मूरदास के साथ सहानुभूति ने करमिया के चित्त को एकत्र उद्भ्रांत कर लिया था और उसके पाव आगे बढन की जगह पीछे को मुड रह थे। सूरदास के पकडने के बाद भी मिरदुला कानी उसी का पक्ष ले रही थी, इस तथ्य से करमिया के मन मे यह धारणा कील जसी टुक गई थी कि मिरदुला कानी और मूरदास म जातमीयता का सम्बन्ध ज्यादा आग तक बढ चुका है।

करमिया वापस मुड गया। बाजार पहुँचने पर उसे सिफ मिरदुला कानी दिखाई दी जो जगत राम मिस्त्री के घर की तरफ जा रही थी। करमिया पीछे पीछे हो लिया। मिरदुला गुनगुनाती जा रही थी और करमिया कुद रहा था कि आखिर काने-कानी की जात एक ठहरी। अपनी अपनी जात का दद हरेक को होता है। करमिया अघा होता तो मिरदुला कानी उसी के साथ रहती—इस कल्पना स करमिया को फिर सूरदास के प्रति इप्या हो आई।

मिरदुला कानी जगत मिस्त्री की गाठ मे चली गई, तो सामन की दीवार पर बठकर करमिया दखता रहा उस। बाहर अ धेरा घिरने लगा था मगर बत्ती के उजाले मे मिरदुला कानी दिखाई द रही थी और जगत मिस्त्री के बाल गोपाल भी। बच्चे इजा इजा कहत हुए मिरदुला से लिपट गए तो करमिया की टाँग आश्चय के भार से काप गई—अर, यह रांड तो घरवारी बनी हुई है।

इतना तो निश्चित था कि बच्च मिरदुला कानी के नहीं थे। मिरदुला कानी अभी मुश्किल से बीस इक्कीस माल की थी और बच्चा म सभी सयान सयान ही लग रह थे। इतन म जगत मिस्त्री पहुँच गया, तो उसन पहल मिरदुला की सारी दह को टटाला। पस निवाल लिए। फिर मुह फिरावर वाला ' तर पीछे-पीछे आज करमिया कोड़ी क्या लगा हुआ था ?

करमिया एकदम दीवार स चिपक गया। मिरदुला कह रहा थी, 'उस निर्मोही कानी का नाम हो जाए। बचार मूरदास का कसाई की तरह कूट लिया आज उसन ! ' आगे करमिया से कुछ सुना नहा गया। बहनु दूर चलन तक तो उम यह गुधि भी नहा रही कि आखिर वट कहां और किसलिए जा रहा है। एकत्र प्रना गूय-सा चलता

जैसे किसी ने जल मरी लता की गाँठ तोड़ दी हो। रोते रोते ही उसन बताया कि जगत मिस्त्री ने कल रात उसे दूरी तरह जूता और कलछी से पीटा है। कल दिन भर की भिक्षा उसन रामलीला के चने म द दी थी। पूव-जन्म के पापों से ऐसी लाचार योनि मिली थी। इस जन्म में कुछ पुण्य करने से अगला जन्म सुधरने की आशा थी। इससे पहले भी मिरदुला मंदिरो में पसे चढ़ाती रहती थी, मगर कल तो उसने सारे पसे दे डाले थे।

मिरदुला ने बताया कि वह तो जात की ब्राह्मणी है। बुधा हुआ दीपक भी समालंकर रखा जाता है, मगर कानी मिरदुला को न उसके मा बाप संभाल सके थे, न किसी और ने ही महारा दिया था। फुसला बहलाकर, एक बार मणिहार कलारो का एक भुण्ड मेले में उठा ले गया था और फिर वह अपवित्र बनाकर मले में ही छोड़ गया था। वही स जगत मिस्त्री साथ लगा लाया था। दिन भर भीख मँगवाता था और फिर शराब के नशे में धुत्त होकर पीटता था, सताता था।

मिरदुला रोती चली जा रही थी—‘हे राम ! क्या पलीत जन्म दिया मुच अभागिन का तुमने ? डोमडे के घर पड़ी हुई हूँ। भीख मागती हूँ मगर उस पर भी अपना कोई बन्ध नहीं है।’

करमिया का चित्त भी पसीज उठा। बाला, “अरे मिरदुला अपने लूले कोणियो की कोई जात नहीं हाती—सब एक जात के भिखारी हाते हैं और भिखारी का दुख तो कोई भिखारी समझ सकता है, लली ! तुझ जसी दुगियारी कानी की ममता इस पापी ससार क सही सलामत लोगो को नहीं हो सकती।

नारी श्ठ के आकषण की बरसात में बूनी हुई तृष्णा फिर जागती चली गई थी पिछले दिनों मगर मिरदुला कानी के घरवाली के रूप में पा सकने की सम्भावना लगती नहीं थी। आज एक राह सूझ रही थी। मूरदास का सहारा मूज रहा था। मिरदुला विलाप कर रही थी— आज नहीं आऊंगी रे डोमड तेरे घर की ! इसने अच्छा तो यही हागा कि श्मशान घाट का तरफ चली जाऊँगी। वही कहा प्राण त्याग दूँगी। ”

करमिया बोला ‘प्राण त्यागन से पाप नहीं बटत है लली ! अगले जन्म में फिर और दुगति भागनी पडती है। तू उस बसाई डामड के घर मत जा मगर मरती क्या है मला ? तुझे कौनसी कमी है ऐसी ? दिन-भर में जपन पट भर स उयाता ही क्या लती है तू। तुझे ता सिर्फ एक सहारा ऐसा चाहिए जा तुझे दया ममता के साथ अपने साथ रखे। मरा कहना माननी है, तो बेचारे मूरदास का अपने साथ बुला ले। रहन को मर पाप एक काठरी अपनी है एक बगल में गाली पडी है। उसे तुम दोनों का दे दूंगा मैं रहते का। आराम से श्मशानी गुजारागे दोनों। मूरदास भी बेचारा जवान छाकरा है और जान का नी पन्ति ही लगना है। उसने गल में जनेऊ भूलता रहता है। वह बेचारा तर लिए जान दन का भी तयार रहता है।’

मिरदुला थम तो गई थी, मगर करमिया को लगा कि जमी कानी बहुत अस-मजस मे है। बोला, “लली, तू तो मुझे निरमोही समझती है न? मगर तू क्या जाने कि तेरी विपदा से मेरा कलेजा कितना पटा है। उस दिन जो मैं सूरदास को पीना था, वह भी तेरी ही इज्जत के लिए। अब सोचता हूँ कि पचास पचपन की उमर होने को आ गई। पहली कानी से सतान होती, तो आज तब तुम दोनों के बराबर भरे बाल बच्च होते। सोचता हूँ, ता तुम दाना पर भमता घनी होती जाती है। न जाने किस जनम के पापों से यह गत हुई है। इस जनम में एक तुम्हारी जोड़ी का सुख देने का पुण्य भी मिल जाता तो मुझ अभावे के लिए इतना ही बहुत था।”

और फिर दोनों पीछे मुड़ गए थे।

मिरदुला ने सूरदास की लाठी पकड़ ली थी, “सूरदास रे, हमारे साथ चल। हम लोग अब एक साथ रहेंगे।

कुछ दिना तक तो करमिया अपनी काठरी में अकेला सोना ग्या, मगर फिर सूरदास और मिरदुला की कोठरी में पहुँच गया, अकेले में तो न्ह ठण्ड से धर धर धर धर बौपने लगती है।”

मिरदुला को अपनी दापों और के एक काम से थोड़ा सा दियाई देता था मगर साफ-साफ नहीं। करमिया भी उसी के साथ सोए यह उस पस द नहा था, मगर कोठरी ही नहा सूरदास की संगति भी करमिया ने ही उस द रखी थी इस अहसान से विरोध करने की भावना त्य जाती थी। इसके अतिरिक्त मिरदुला अपने कामल स्वभाव के कारण डरती भी बहुत थी कि करमिया की काठरी छाँवर जान पर न जाने फिर कही ठौर मिले, न मिले। सूरदास अघा ही ठहरा, वह भी लगभग अन्धी ही—फिर न जान कहाँ-कहाँ भटकना पडे। सूरदास मिरदुला को बहुत प्यार करता था। एवदम छीने की तरह छाती से लगाकर सा जाता था और नाघना से हीले-हीले पिडलियाँ छुजलाता रहता था। मिरदुला जात्मीयता की, प्यार की दस मिठास से गद्गद् हा उठती थी। सूरदास से विछुडन की कल्पना मात्र से उसकी आँखा में आँसू उमडने लगत थे। और सूरदास के साथ-साथ रह सकने के लिए उसे करमिया की दी हुई काठरी से उपादा सुराति स्थान और कोई सुनता नहा था। दूसरे करमिया की खुली हुई आँखा का भी सहारा था। इसलिए वितृष्णा और अनिच्छा के बावजूद, करमिया को सहना पडता था।

धीरे धीरे करमिया की हरेण इच्छा पूरी हान लगी ता उसका मन यही चाहने लगा कि अब सूरदास को ता यहाँ से रफा-दफा करा द और फिर मिरदुला कानी पर पूरा पूरा अधिकार उसी का रहगा। करमिया अनुभव करता था कि मिरदुला कानी जा उग महती है, तो सिफ विवगता के कारण मगर सूरदास को बहुत चाहती है। और करमिया का मन होता था कि कभी सूरदास को जान में मार डाले। मगर यह बोध कि सूरदास के कारण ही मिरदुला यहाँ टिकी हुई है, उम दबावा रहता था। बरबला वाला

फिर करमिया जरा दप के साथ ज़ोला, "तू लो अमी लौडा ही है, सूरदाम ! यह वाला बच्चा तो मुझसे ही रहा हागा ।"

"मगर पहली घरवाली स तो तुम्हारा काई बच्चा पदा नहीं द्यूया था ?" सूरदान ने सवा की । करमिया तिलमिला उठा—बाने रसाले का दिमाग बड़ा तेज है । बात ऐसी करता है रसाला जसे चिमटे से पकडकर लोथ खीच रहा हो बात बदलकर बोला, यार सूरदास जाँखा की जोत से बढकर भी दुनिया मे कोइ चीज नहीं है । जब मिरदुला के बालक जनमेगा, ता अहा रे छोटे-छोटे माऊ के हाथ-पाव भी यार दखने ही लायक होने हैं । मैं उस गाद म बिलाया करूँगा "

'कसे होने हैं भला माऊ के हाथ-पाव ?'

'फूल—जसे खवसूरत । मन्खन—जसे मुगयम । मगर यार सूरदाम, तूने फूलो की खवसूरती भी कहा देखी है ? छोट बच्चा की मुस्कराहट ऐसी होती है जसे गलाई हुई चादी का कटोरा छलछला जाए । मगर तू बच्चे की हँसी भी कहा देख सवेगा ? हा, बच्चा जब कभी रोएगा तो तू उसका रोना जरूर सुन सवेगा ।'

'मगर मैं उसे गाद मे लेकर, हाथा से टटाल-टटालकर तो देव सकूँगा ?'

'हट, रसाले । तर नाखून चुभेंगे तो बच्चे को विय लग जाएगा । और आखें तेरी ठहरी नहीं, कही गिराकर जान से मार रलगा बच्चे को ।'

मैं नाखून बाट दूँगा जोर बठे बठे ही गोद मैं पकडूँगा । फिर तो नहीं गिरेगा बच्चा ? मगर तू उसे अपनी गोद मे लगा, तो क्या तेरा कोल नहीं सरेंगा उसे ? अगर बच्चे को काड हो गया तो फिर उमे करबला वाले उठा ले जाएँगे ।'

करमिया को लगा कि सूरदास न अपने लम्बे नाखूना से उसके काड स गले अगा को बुरद दिया है । गुस्मा नहीं सहा गया ता करमिया फिर सूरदास को पीटने लगा । इतन म मिरदुला लौट आइ तो ठहर गया । सूरदास रान लगा । मिरदुला न उमे छापी स लगा लिया ऐसे ही जो तू निरमाही सूरदास बेचारे को सताएगा, तो हम दानों तेरी कोठरी छोडकर चले जाएँगे ।

करमिया थिमिया गया । बोला यह काना मुझसे कहता है कि बच्चे का तेरा बाड मर जाएगा । करबला म ना कितन ही कोनिया के बच्चे होत हैं उह क्या नहीं सरला काड ? बस काना होन स ता कोनी हाना ही मला ।'

इस बार मिरदुला हँस पडी—'अरे, तुम बेगरमा को भी एक बेचनी-जसी हो रहो है । अमी ता पाँचवाँ भी नहीं लगा है । अमी म तुम लोगा को कोड गाल की मूझ रही है । ह रामजी, मरा बालक तो आँखा का भी टकटका हाना चाहिए, गाठ का भी साफ़ मुपरा ।'

ज्यो-ज्यो मिरदुला के तिन चढ़त गए उसके गले की मिठास भी बढती गई । सूरदाम भी प्रसन्न था । मिरदुला गाती थी ता सूरदास जस्त की देगची पर ताल दता

रहा था। करमिया भी गाँव की भाला बनाने वाला था, मगर मिरदुला और मूरदास दोनों उमरी बगुरी भावाज गुनार गिलगिला उठे थे तो चुप हो जाया था। चाहता था, मूरदास की उमंगिया परमर में मुटकृता से, मगर मिरदुला के चले जाने का आगता हरेक पूरे इलाके को दबा ली थी।

मूरदास और मिरदुला बीच भाँगे से लोटे थे ता करमिया भाँगड़ा में उतर आया था। फिर बड़ी रात तक मैं। वर्षा पानी लगी थी कि मिरदुला के ब्यात हागा ता उमरा पाला पापन कम होगा? बच्चा फिर पर उतरगा? कभी कभी करमिया का मत होता था कि अपना कामदार गिनाकर मिरदुला का लच्छा ल। मिरदुला ब्यात होत से पत्नी ही साग ताज का कि मुझे ता पर करमिया से ही रहा है। मगर फिर पत्नी का भी ब्यात था भी और करमिया अपन बनदार में ऊपर और उमादा कूड का दर लगा आता था। एक दिन करमिया बाला, मूरदास ता ओग में देगता रहा है। बच्चा के नामकरण में मोर पर मैं बटू गा। बाप को ता बच्चा के नाम धरने में निन चौक पर बटोता ही पच्छता है।

मैं भी ता बट गवता हूँ। मूरदास बोले उठा था मुझे ता मिरदुला पचकर बिठा दगा। फिर मैं अपन बटे का गाद में सपर बटा ही रहूँगा।

करमिया फिर लडा को उपनने लगा था कि मिरदुला ने दाना का लठाठ लिया तुम बोना की तो वही बहावत है कि दाई का तो पता नहा मिर भिगोकर तयार बठ मुण्डन को। अर, कमअल बेगरमा! पहल यह ता बसाओ कि बाने-बोड़ी की ओलाद का नामकरण करा को पण्डित-पुराहित वहाँ से आएगा?

मूरदास और करमिया कई बार अवल-अवल मिरदुला से यह भी पूछत रहते थे कि तेरे अदाजे से बिसस रहा होगा तुझका बच्चा? मिरदुला डाँट देती थी मैं हर बसत कोई चितरगुप्त या ताता सोकर बोड बठी रहती थी?

आगिर एक दिन मिरदुला कानी की दह दुखन लगी तो करमिया मूरदास को अपनी कोठरी में उठा ल गया। बोला अब अपनी मेहतारी को ब्यात हुए देखना चाहता है क्या? ओख फूटी हुई हैं मगर मन की हविग नहीं फूटी है। तू महा रह। मैं एक डोमनी दाई को जानता हूँ। उसे बुला लाउगा। मगर पसे तू देगा। देगा कि नहीं?

तू क्या नहीं देगा?

मेरे पास तो फूटी कौड़ी भी नहीं है। तू तो जानता ही है, मैं बहुत दिना से भीख मागा को बाजार ही नहा जाता हूँ। तरे पास तो जरूर कुछ गाँठा होगा? दाई नहा आएगी तो मिरदुला कानी भी मरगा जोर तेरा बेटा भी मर जाएगा।

मूरदास जल्दी जल्दी बोला अच्छा अच्छा। पस मैं दे दूंगा। तू बुला ला जा दाई को।

दाई आई तो दोनो इसी प्रतीक्षा में चुपचाप बठ रह कि दखें, बच्चा किस पर

उतरता है ? सूरदास से नहीं रहा गया ता बोल उठा, 'आल का काना हुआ, ता मेरा ही बेटा होगा।

" और हाथ-पाँव मे दाग होंगे तो मेरा।'

'ऐसा भी ता हो सकता है कि बच्चा आखा का अचा जोर हाथ पाँवा का कोनी पटा हो ?' सूरदास न अपनी कठार धारणा व्यक्त की। इम धार करमिया उमसे सहमन हो गया। पास बठने हुए वाला, 'अगर ऐसा ही बच्चा पदा होगा, तो वह हम दोनो का बेटा होगा। और और फिर बगड की गुजाइग भी नहीं रहेगी।'

इतन में जमुली दाई आई। हँसती हुई बोली, 'लो रे, तुम अपाहिजो की काठरी मे दीपक-जसा जल गया है।'

बच्चे की रोने की आवाज गुनकर सूरदाम और करमिया अपनी कोठरी से बाहर निकल ही रहे थे। करमिया न जल्दी से पूछा, क्या जमुली दीदी, बच्चे के हाथ-पाव कस हैं ?' करमिया सुनना चाहता था कि बच्चे के हाथ-पावा मे कोढ़ के दाग हैं। मगर जमुली न कहा "बच्चा तो हाथ पावा का एकदम नौनी जसा चुपडा है।' तो करमिया अपो ही ठौर खडा रह गया कि कही सिफ आखा का ही अचा तो पदा नहीं हुआ है ?

सूरदास न पूछा, "बच्चे की आँखें कसी हैं दाई दीदी ?"

दीपक जसी चमचमा रही हैं। बच्चा तो एकदम राजकुमार जसा गोरा-चिट्टा है। जमुली दाई वाली। फिर पसे लेकर चली गई, बडबडानी हुई, पसे की खातिर भी कसे कस पलीत काम करने पत्ते हैं।"

शव यात्रा

केवल एक खाट रखन की जगह थी।

कोठरी से बाहर निकलकर सिपाही ने सड़क पर इकट्ठे कुछ लोग से पूछा "इसका कोई वारिस है ?" जब उसे कोई जवाब नहीं मिला तो उसने अपन-आपस कहा, 'आखिर इतजाम तो करना ही पड़ेगा।

"हिंदू थी या मुसलमान ?"

अपनी साइकिल की सीट पर पीठ टिकाये हुए एक कम उम्र लड़के ने कहा, "रंडी थी।"

'मात्रूम है।' कांस्टेबल न डपटते हुए कहा।

"सिपाहीजी सवा वाला को ददा। कास्टेबल की तरफ बीड़ी का बण्डल बन्तते हुए एक और आदमी ने कहा।

'लाश कल से रखी हुई है। कुछ मात्रूम है। ज्यादा बकत करागे तो पसीज जाएगी। कास्टेबल साहब इतजाम जल्दी करो।

बीड़ी का धुआ अपनी नाक से निकालते हुए कास्टेबल ने कहा 'आखिर मात्रूम तो हो इसका वारिस रिश्तेदार भाई भतीजा कोई है ? पहले ता रपट लिखानी होगी नहीं सारी कोतवाली में बोंम पढ जाएगा। हरामजादे मुझी को कहेंगे। कुछ मात्रूम तो हो।' और बीड़ी के बक सेता हुआ वह गहरी चिंता में पड गया। कुछ लोग सिपाही के पास चुपचाप खड़े थे और कुछ दूर हटकर बातचीत कर रहे थे।

आसपास कुछ छोटे छोटे मकान, कोठरिया और झापड़िया थी। सड़क पक्की नहीं थी मगर मुरुम पडन के कारण रमीन लगती थी। सारा दिन हवा में इस मुरुम की धूल उड़ती थी और बस्ती कुछ और निजन हो जाती थी।

दो तीन साल से, इमरती ही आखिरी स्त्री थी—जो वहाँ रह रही थी। कई बार रोक टोक काह के बाद भी गई नहीं। बस्ती के लागा न भी अब उसे स्वीकार कर लिया था। जानते थे, वे उससे लड नहा सन्त थे। अधिक स-अधिक व उससे बात नहीं कर सकत थे और बात करने का काइ प्रसंग भी नहा था सिवा उन घड़िया के जब वह सेंबरकर पान की दुकान पर जा खड़ी होती थी।

सुबह स लकर आधी रात तक फित्ती गान बजाने वाले सिंधी हिंदू होटल में

भी शाम के समय जब वह अपने लिए गोश्त का शोरवा लेन आती, तब भी अपना वक्त जाया नहीं करती थी। शायद अपन अनुभव स उसने पहचान लिया था यहाँ बठन वाले मु पतखार होत हैं। और मु पतखोरो से उसे जमजात चिढ़ थी। उसने एक छोकर की पसा द रगीन चाक से मुडौल अक्षरा मे अपनी दीवार पर लिखवा रखा था—उघार मुहब्बत की कची है।

“इमरती बाई दुनिया से अलग रडी है।” उसके चले जान के बाद पान वाला कहा करता था ‘वह ज्यादा बात नहा करती है।’

उसके पास ग्राहक भी थोडे आते थे। और आखिर के दिना म तो इक्का दुक्का ही कोई आता था। उसके पास आएगा भी कौन !” वह कहता था। ‘न वह गाती है न कूल्हे मटकाती है। आदमी खाली टांगे ही थोडे चाहता है। बखत बखत की बात है।”

यह कहकर टोके जाने पर कि लोग उसके पास नाच गाना सुनने के लिए नहीं शरीर के लिए आते हैं वह जवाब देता था, मगर शरीर मे भी ता लोच चाहिए। उसके पास वह अदा नहीं। इमरती बाई साफ साफ रडी है।”

इस समय भी वह दूकान पर पान लगाता हुआ अपनी बात दुहरा रहा था जोर कह रहा था, मैं जानता था, यही हाल होगा। मैं न कहा भी था, इमरती बाई, इलाज करा लो। अब भी बच जाओगी। मगर कम्ब श्त त्रिदगी भर सारी दुनिया को बीमारी बाँटती फिरी। अब मरी तो कोई उठाने वाला भी नहीं। मगर कुछ भी कहो, इमरती बाई साफ-साफ रडी थी। मुझे उसकी बातें मालूम है।

फिर उसन वही बठे बठे पान पर कत्या लगात हुए आवाज दी, “हवलदारजी, मुर्दा जल्दी उठवा लो। बीमारी से मरा है।’

हवलदार उस समय काँच के गिलास मे मरी गरमागरम चाय फूँक फूँककर पी रहा था। उसकी बात सुनकर वह उसकी जोर मुडा और कुछ कहना चाहा। मगर तमी सामने स म्युनिसपलिटी की मला ढान वाली मसा गाडी गली म घुसती नजर आई।

चाय का एक घूँट लेकर गिलास होटल वाले लडके को थमा गाडी की तरफ झपटता हुआ वह बोला ‘क्या नाम है बे तेरा?’

गाडी से उतरते हुए गाडीवान न जवाब लिया, ‘बन्सीलाल।’

“कहाँ जा रहा है?”

‘ड्यूटी पर जा रहा हूँ।’ उसन बेरुखा से जवाब दिया। उसे सिपाहिया स खोप नहीं था। अगर भीड वहाँ उस दिखाई न देती तो वह खता भी नहीं, गाना गाते हुआ गुजर जाता। इमरती बाई बाहर आये या न आय, र्धर जब भी उसकी ड्यूटी पडती, गुजरता हुआ वह एक बार गीत जरूर छुड़ देता।

“सुन बे बंसीलाल,” सिपाही न उस तरेरते हुए कहा, ‘ड्यूटी कसिल करो। मरघटी जाना होगा।’

“कौन मरा है ?” बंसीलाल ने अपना चाबुकनुमा डण्डा गाड़ी में रखते हुए कहा।

‘इमरती बाई।’ भीड़ में से एक ने कहा।

क्या कहा ?” जोर उसन फिर पूछा, “क्या कहा ?”

“मुर्दा यहाँ से जल्दी उठाओ और ठिकान लगाने। समझे। मैं चलता हूँ कोतवाली। रपट देनी होगी।” सिपाही ने उसका कंधा थपथपाया। फिर जब से एक मली-बुचली नोटबुक निकाल पसिल से कुछ लिखता हुआ आगे बढ़ गया।

उसन गाड़ी सड़क के किनारे रोक दी थी। जरा दम् ‘कहता हुआ वह अदर की ओर बढ़ गया। अभी तक वहाँ इन्टडे लोगो में से कोई अदर नहीं गया था। वह चला, तो उनमें से कुछ उसने साथ ही लिये।

शव चारपाई पर रखा हुआ था। किसी न उस पर चादर भी नहीं उड़ाई थी।

बंसी इस बोठरी में पहली बार आया था और अदर घुसत हुए उसे हल्की सी कचोट भी हुई।

इमरती को उसन बहुत बार देखा था जोर उसने मसूना बना रखा था एक न एक दिन वहाँ जायेगा। गारी गुलाबी देह और बदन, जा इतना चल चुकने के बाद भी कसा हुआ लगता था।

मगर वह जा कभी नहीं सका। इतन पसे ही नहीं आए। वह जानता था, इमरती के गाहक भल ही कम आएँ। रट उसका ऊँचा है और वह उससे नीचे नहीं उतरेगी और अगर उतरेगी भी तो उसे क्या पसंद करेगी ? वह अपनी रग रग से वाकिफ था। उसे पता था कि वह बदसूरत है और बद छोटा होने के कारण वह दूसरों की दया और हँसी का पात्र है। इस दया और हँसा से सामना पडन पर वह अपना गुस्सा पीकर आगे बढ़ जाता।

ड्यूटी बजाने के बाद गाम को वह सफेद कुरता और महीन घोंती पहन मिनेमा घर तक टहलन निकलता जोर बासुरी पर फिरमी गान बजाकर छोरों को जमा कर लता। बासुरी के कारण उसकी अपनी महफिल है। गई थी।

इमरती का मुँह बिल्कुल विवृत हो गया था जोर आँठ कुछ खुले हुए थे। छाती से घोंती उधड़ी हुई थी जोर जाप भी काफी खुली हुई थी। उसका यह रूप देखकर उसे कुछ दुःख हुआ। दर नहा की जा सकती। यह सोचता हुआ वह बढ़ा और घोंती शरीर पर ढक दी।

चारपाई बाहर निकालन की जम्हरत नहीं। उमन अपन-आप कहा। फिर लाग की पायतान से पकड़ उसन कहा जरा मन्त्र कीजिए। एक आदमी ने गरदन और

दूसरे ने पीठ पर सहारा लिया और लाश बाहर निकाल ली गई।

'जरा रूत !' उमने फुरती से कहा। 'यात्रा गा-नी धो लें।' मुझे डाने का उसे अभ्यास था, मगर यह पहला मौका था जब उस अहसास हुआ कि शव को इस तरह गंदी गाड़ी में नहीं ले जाया जा सकता।

भस्म की पीठ पर झण्डे टिकाना हुआ वह गाड़ी पास के बम्बे तक ले गया, नल चालू किया और मज्जा ले लेकर गाड़ी घूम लगा। हथेली से वह पानी गाड़ी के बाहर और भीतर उलीचता, फिर एक भस्मे कपड से रगड़ रगड़कर साफ करता। एक बार उचककर वह भस्मे की पीठ पर बठ गया और अपनी साफ सुधरी गाड़ी को कुछ प्रसन हाकर निहारा। फिर अपने-आप ही 'जरा और धो लें' बहता हुआ उतरा और छुट गया।

लाश के जासपास दस-बीस लोग खटठे हो गए थे। गाड़ी बड़ी तेजी से हाकता वह उनकी ओर लाया। 'जरा हटिए। जरा जगह दीजिए। फिर कुछ हाफता हुआ सा उतरा और अपन को जैसे एक वार इक्कटा कर जावाज लगाइ, "जरा मदद कीजिए। लाग को सहारा दीजिए।

कुछ लोग आगे बढ़े और लाग फिर पहले की तरह उठई गई। "जरा संभाल के।'

वह गाड़ी पर गया था और लाग रखने की जगह बना रहा था। मगर जगह इतनी नहीं थी कि शव का लिटाया जा सक। उस कुछ परेशानी हुई और कुछ म्यु-निसपलिट्री पर गुस्सा आया। इतनी छोटी गाड़ी में ता बच्चे की लाश भी नहीं जा सकती।

'इस तरह नहीं, इस तरह।' उसने और दो लागों की सहायता से शव को गाड़ी में आधा लिटा दिया। कंधे पर की गमछी उतारी और शव के सिरहाने तकिया-सा बनाकर रख दिया। इतना सब कर चुकने के बाद उसे कुछ सतोप-सा हुआ।

गाड़ी पर खड़े-हो खड़े एक वार उसने उन सब पर उछलती हुई नजर डाली और अपने का उनसे कुछ ऊंचा अनुभव किया। इसके पहले कि उनमें से कोई उससे कुछ कहे, उसने गाड़ी हॉक दी और खुद कुछ इतमीनन के साथ बठ गया।

कुछ दूर जाकर मुड़कर उसने पीछे देखा तो मोड तितर बितर हो रही थी। एक आदमी बढ़कर इमरती वाइ के घर की साकल लगा रहा था।

उसने गाड़ी और तेज कर दी और ठीक मोड पर आकर रुका। उतरा और उतरकर देखा वह ठीक तो है। लाश बसी ही आधी लेटी हुई थी। बवल इस आपा धापी में बस्त्र खिसक गया था और सारा शरीर लगभग नगा हा गया था। एक वार उसकी निगाह उस पर गड़ी। फिर उसे शम-नी आई और उसने फुरती के साथ शरीर को बस्त्र से ढक दिया। फिर पान की दूकान की ओर बढ़ा।

उसकी जेब में सात रूपय थे। तनस्वाह से बचाकर रखे थे। उनमें जो-जा चीजें

उसे लेनी थी, पहिरिस्त उसके दिमाग में कई दिना से थी। रुपये उसने जेब से निकाल कर हाथ में ले लिये, फिर दूकान की ओर बढ़ता हुआ बोला "इनकी रेजगारी दे दो।"

पानवाला उसकी ओर देखकर मुस्कराया। 'इतनी रेजगारी नहा है।'

मगर उसने अनसुनी करते हुए कहा, "जरा जल्दी करें। वक्त हो रहा है।'

उसने देखा पानवाला ने एक कपड़े के थले से ढेर सारी रेजगारी निकाली और गिनने लगा।

थली हाथ में आत ही उसका हौसला ऊँचा हुआ और वह लपककर बठ गया।

हाँकते हुए उसने देखा, पानवाला और दो तीन लोग उसे देखकर मुस्करा रहे थे और पानवाला कत्थे की डण्डी हिला हिलाकर उसे मद्दे इशारे कर रहा था।

उसने मन ही मन में उह गाली दी और कमकर एक डण्डा भसे की पीठ पर रसीद किया।

मुहल्ले से बाहर निकलकर उसने फारिंग अनुभव किया। धूप तेज थी और इतने परिश्रम के बाद उसे पसीना आ रहा था। पटरियों पर लोग आ-जा रहे थे और दूकानों लगभग खुल चुकी थी।

वह एक बार पीछे मुखा और देखा, लाश किस हालत में है। सब ठीक था। केवल सिरहाना कुछ नीचे खिसक गया था। गाड़ी रोक्कर वह उतरा और सिरहाना उसने फिर ठीक कर दिया।

इधर उधर करने से शक जब जरा सा हिला तो अचानक वह थरथरा गया। उसका जीवित शरीर को छून के विचार से उसे कँपकपी-सी हुई और नाडियाँ जरा जोर से घटक उठा। वह फिर अपनी जगह पर बठ गया था और सोच रहा था अगर शरीर पर बन्दिया साड़ी होती तो कितनी बढ़िया होती! उमन उस कई बार रग बिरगी साडियाँ पहन दरवाजे पर खड़े देखा था। रानी रूपमती! हर बार उसे लगता था वह किसी की प्रतीका में खड़ी है गली में पदल घुसते ही उसका दिव घबकता और दरवाजे के सामने से गुजरते हुए ता और भी जोरो से घटकने लगता था। वह बहुत चाहकर भी उमने नजरें भी नहीं मिला पाना। नाम से गरदन नीची किये हुए आगे निकल जाता। जब काफी दूर आ जाता तो मुडकर जरूर उमने देगता और पाना कि घट अब भी वहीं खड़ी है—रानी रूपमती! उमके वहाँ खड़े हान और अपन उधर से गुजरने में एक नाता समझ जोड लिया था। एक-एक दिन में उमके पास जरूर जाऊँगा।

उमने गाल में रमी हुई थली टटाली उस पर प्यार से हाथ फरा। फिर मुटगी भर सिक्के निकाल दपर उधर दया और ऊपर की ओर फेंके। क्षण-भर बाद सडक पर बरगने हुये पमा की घनघनाहट में दूकाना पर बठे और पटरिया पर चलते हुए लोग चौक गए। कुछ छात्र-छोट लडका और मिथारिया का दृजूम उस आर लपका। उमने गाड़ी राक दी और उन सबको सिक्का पर टूटने और झपटते हुए दमना रहा। जय मारी

सड़क सिक्को से बूहर गई, तब उसने थली में हाथ डाल मुट्ठी भर मिक्के और निकाल और फिर ऊपर की ओर फेंके और भरिये हुए कण्ठ से उसने नारा लगाया, "राम-नाम सत्त है।"

'सबकी यही गत है।' पमा पर झपटते हुए उन सबने भगीनी ढग स दुहराया।

उसने मौज में गाड़ी हाक दी। जानवर की पीठ पर दनादन दम-बीम ढण्डे लगाये और भागने लगी गाड़ी। और गाड़ी के पीछ पसे तूटने वाला की मीड।

अगले मोड पर उमने भागती हुई गाड़ी एवाणक राकी और चिल्लाया, "राम-नाम सत्त है।"

सबकी यही गत है।"

अब तक गाड़ी के आगे और पीछ अचठी-म्वासी भीड हा गई थी, जिसे वह हाक रहा था। कुछ लोगो न गाड़ी पकड ली थी और गाड़ी अचानक ही मानो अरथी में परिणत हो गई थी।

उसके पास-पास चलता हुआ एक मिखारी राम-नाम क गोर में फुसफुमाता हुआ वाला "सेठजी, बाजा कर लो।"

भीतरी ब्रिह्लता में उसकी आँखें प्राय बंद थी। अपना सुझाव दुहराते हुए मिख मगे ने कहा 'ले आऊँ सेठजी?'

'ल आओ। मुट्ठी-भर पसे उमने इस बार सड़क के बाई ओर फेंके और पानी के कटाव की तरह भीड उस आर मुडकर झपट पडी।

एक दूसरा मिखारी इस बीच ढर सारे फूल और कुछ मालाएँ ले आया था। गाड़ी रुकी। वह उतरा और सारे फूल और मालाएँ उमने गव पर बिखरा दी।

"कौन था? उमने सुना। पटरी पर खडे कुछ लोग बात कर रहे थे।

"इमरती वाई।' माला फेंकत हुए शुगी में उमका हाथ कापा।

"इमरती वाई कौन?'

रडी थी।' गुस्से में उसकी नजर उठी।

मगडूर रडी।' उसने गव के साथ उन्हें देखा।

बाजा अब तक आ गया था।

'बजवाऊँ सेठजी?'

बजवाओ।"

वह उचककर फिर अपनी गाड़ी पर बठ गया और बाजा बजने लगा। बाजा के कारण मीड और जुट गई थी। उमने थली में से पमे निकाल लिये और सड़क पर छीटने और छितरान लगा।

'राम-नाम सत्त है।'

'सबकी यही गत है।"

तनी बड़ी माह दसबर वट समग नही पा रहा था वह इमे कस सँमाल ? मगर उसे विस्वास था कि वह समाल लगा । एक बार उसकी दृष्टा हुई, वह इस अरयी की लिंगा मोड द और हकिता हुआ ले जाकर टीक मरती के दरवाजे पर राक दे । उसके मन म गुणगुदी हुई । मगर अपनी गुणगुनी को छिपाते हुए उमन र पतार तज कर दी । धूप तेज हो गई थी । सारा त्रिया बम जल्द ही निपन्ना होगा । सब कुछ जल निपट जाने और सतम हो जान व मयाल स उस कसक भी हुई इसी तरह चलता रहे । उसन सिर ऊपर उठाया और दसा नीजवान और बूढ़ी स्त्रियाँ छता पर निकल आई थी । भीड और वाजे स अधिक उस दस रही था । उसन निडर और साफ उट देखा और सुनना चाहा वे क्या कह रही हैं ।

उसन बाजे व गोर म दो एव गज पकडे अर कुछ नही, बसी महतर है ।” मेहतर गज सुनते ही सब कुछ किरकिरा हो गया और उसन ऊपर और घरो के दरवाजे पर खड़ी स्त्रिया और बच्चा को गुस्से से देता ।

वह अपना महतर कहा जाना कभी बरदास्त नहा कर पाता था । वह औरा से साफ रहता था और उसने अपनी जाति के तमाम नवयुवको स कह रखा था ‘अगर कोई तुम्ह मेहतर कहे तो मला न साफ करो ।’

अपने लिए महतर सुनकर उसे झुझलाहट हुई । उसन अपने आस पास चलत मिखारियो स झल्लाकर कहा बाजा जोर से यजवाओ ।

थली टटोलते हुए उसने पाया कि बहुत थोडे से सिवके रह गए है और उसे समालकर सरचना चाहिए । पसे पवन के बजाय वह अपनी गाडी की टीन की पटरी पर खडा हो गया राम नाम सत्त है । राम-नाम सत्त है ।

शहर के बाहर नदी थी और नदी के दूसरी थोर मरघट । दूर से पुल नजर आता था । उसन थोडे-स पस हाथ म लिये और पूरी ताकत के साथ फँके ताकि वे दूर-दूर तक बिखर जाएँ । चौधियाकर तितर वितर होती भीड को उसन बुग होकर दसा ।

जब गाडी पुल तक पहुच गई ता उसन राक दी । मिखारी को थली-सहित पस सौपते हुए उसने कहा वापस ले जाओ ।

बाजा बंद हो गया और छोकरा और मिखमगो की भीड लौटने लगी । केवल तीन-चार राहगीर अब वहाँ खडे थे ।

उसन मुना उनम से एक कह रहा था, मैं कहता हूँ हिला है ।”

क्या हिला है ? उनकी आर लपकत हुए उसन कहा ।

तुम्हारा मुदा ।

क्या सचमुच हिला है ?” मुदों के जिंदा हो जाने की कहानियाँ उसने सुनी थी । उसन मुन रता था कि कई बार चिता पर से भी मुदें उठ बटते हैं । मरे हुए आदमी

के प्राण वापस आ जाते हैं। यह कैसे होता है, पता नहीं। मगर डॉक्टर तक मानते हैं कि दफनाने के पहले एक बार पूरी देखभाल कर लेनी चाहिए।

वह भागकर उस पर भुका। उसने देखा कि शव कुछ खिसक जलर गया था। उसका हाथ खुशी और अविश्वास से काप रहा था। उमन चादर के अंदर से शव का हाथ खींचकर बाहर निकाला और नाडी पर उँगलिया रख दी। कुछ घडक तो रहा था, बडी ज़ोर ज़ोर से। मगर बदन ठण्डा है और नाक के पास हाथ ले जाने में सास नहीं। फिर घडक क्या रहा है ?

अपन सीने पर उसने हाथ रखा और पाया कि दिल के दोरे के मरीज की तरह उसका दिल ज़ोर ज़ोर से घडक रहा है, बडी ज़ोर ज़ोर से। गाडी उमन फिर हाक दी थी और पुल पर से चला जा रहा था। दोना ओर पानी का विस्तार था और किनारे पर रेत के टीले, जिन पर धूप चमकमा रही थी।

मीड में रखसत पाकर वह बिलकुल अकेला हो गया था और कही कोई न था। केवल उसकी गाडी का पहिया बोल रहा था।

पुल पार कर उसने गाडी ढाल पर उतार दी। मरघट में घुसते हुए भाय भाय सा लगा।

किनारे पर एक मुर्दा जल रहा था, जिसकी हुगध उसकी नाक में घुस गई। गाडी उमने ठीक मरघट के चौकीदार के घर के सामने रोकी—बिलकुल धीरे और सँभालकर।

“कौन आया है ?” चौकीदार ने अपना रजिस्टर खोलने हुए कहा। ‘जलाना है ?’

‘दफनाना है।’

नाम ?’

‘इमरती बाई।’

उम्र ?’

बत्तीस साल।’ उसने बेलटके स कहा।

‘पति का नाम ?’ चौकीदार ने अपनी निगाह उठाते हुए सवाल किया।

बसोलाल बाल्मीकि।’ उसने हाथ बटाकर दस्तखत कर दिए।

बाहर आकर, सँभालकर उनमें शव उतारा। घाती उस पर पूरी तरह ढक दी। पावडा उठाया और गड्डा ग्यादन लगा।

समय

क्या समय हुआ है ?" एक मारवाड़ी पगड़ी पूछती है ।

'समय तो सराय ही है' वह कहता है ।

'नहीं घड़ी म ?'

'हाँ जी, पड़ी म कुछ घड़ी में कुछ ।'

मारवाड़ी पगड़ी का चेहरा अपने को अनिर्व्यक्त न कर पाने की विवशता में एक क्षण के लिए छाटा हा जाता है—

"ये हमारा मतलब है, बजा क्या है ?" पगड़ी समझाने की वाग्विण्य करती है ।

बाबा, आप जो कह रहे हैं, वह बजा ही है वरना आपकी क्या दिलचस्पी कि आप गमत कह ।

पगड़ी उसे धुरती हुई चली जाती है ।

दरअसल जब तुम किसी लडकी के पास खड हा या कोई लडकी तुम्हार पास खडी हो तो तुम या ता अतिरिक्त गम्भीर हो जाते हो या फिर अनावश्यक तरह से चुहल पसन्द ।

अभी-अभी ज यादा प्रसाधन किए एक सम्मान्त महिला उसकी ओर दस्तती हुई सामने से गुजर गई है वह जरा-सा कोण घदलकर पास रखी लडकी का दख लता है, लेकिन वह लिखाता ऐसा है कि उसन लडकी को नहीं देखा है अपना कोण भर बल्ला है —

मौसम हवा में पतझर भर गया है । पल दूटी चिडिया की तरह सडक पर दौडते हुए पत्ते, कच्चे फुट पाय पर उतर जाते हैं और वहाँ धीमी चाल म लडकन लगते हैं ।

'पत्तो क टूटने में एक खास गाय होती है ।' वह खुद म कहता है । और एक खास मगीत तुम उस खास सगीत और खास गाय को बखूरी पकड सकेत हा ।' वह दर तक उ ह यात्र की सृष्टी हुई लकीरा ओर चिन्ता म एकदमे की वाग्विण्य करता रहता है ।

"अच्छा, मान लो, माल क पूरे बारह महीना की हवा गडब मडब करक तुम्हारे सामने रख दी जाए और तुमसे कहा जाए कि उसम स पुरु पायुन की हवा पहचानो

तो तुम पहचान सकोगे ? गायद तुम न पहचान सको, लेकिन नही, तुम उस आसानी से पहचान लो क्योंकि गुरू फागुन की हवा, उन हवाआ म वसी ही होती है जसी लडकियो के झुण्ड मे तुम्हारी अपनी प्रेमिका जो किसी भी कोण स तुम्हारी नजर छुए तुम उसे पहचान लेते हो । ' वह पास खडी लडकी को बनखिया लेना है, उसे बडी निराशा होती है फागुन की हवा के वारे म इस तरह सोचना उसे अच्छा नही लगता । वह अपन खयाल को तब्दीली दना चाहता है ' बिजली के तार सीटिया बजाकर आपस म बात गुरू करते हैं और बीच बीच म हवा-चुप हो जाने हैं । सामन स्कूल बच्चा का एक झुण्ड है वे बच्चे बिल्ला बिल्लाकर आपस म बातें कर रहे हैं, जिह वह समझ नहीं पा रहा है और यह भी तय नही कर पा रहा है कि वे आपस म चगड रह हैं या महज बातें कर रहे हैं ।

' ओ समय आपकी घडी म ?''

जमी पगडी समय पूछकर चुकी है और अब यह लडकी समय पूछ रही है । समय ही तो पूछ रहा है यह लडकी यही क्या, हर काई समय पूछता है और समय है कि किसा को नही पूछता । तुम राज उमके लिए अब्बवार लेते हो उसके लिए सोफ क गिर्नाफ बरलत हो उसकी मन-पसंद तारीख कलेडर म दते हो उसके स्वागत के लिए विडकिया और दरवाजे खुले छोड दत हो औरतें उसके लिए दूध लेती हैं और सिर स नहाती है और बच्चे वे धुले कपड पहनत हैं । दफतर जाने वाल बाबू उमे घूप और छाया स नापते हैं अस्पताल म मरीज पट्टियां बदलवात हैं लेकिन कोई एक भी उसकी तटस्थता नहा ताड पाना । वह है कि सबसे बेखबर चला जाता है और पीछ मुडकर भी नही देखता जबकि लोग कितना प्रयत्न करते हैं

उसन समय के स्वागत म शेव नहा बनाई है और खुने म समय पसल कपडे भी नहा पहन हैं । वह समय की उपशा कर रहा है इत निचार स उसे खुशी महमूस होती है कि वह उन बहुता स अलग है जो समय क गुलाम हैं उठने-बठन उसकी खुदा मर करते हैं और आविर मे घब कर बीमार पड जात हैं । वह अपनी खुशी बच्चा की तरह ताली बजाकर जाहिर करना चाहता है, इससे पहले दख लेना चाहता है कि पाम खडी लडकी भी उसी की तरह खुग ह या नही । सोन से कितान मटाए लडकी की नजरें वह बम आन वाली सडक पर—जहाँ तक सडक सिखाई गता है—डीडती देखता है । लडकी क चेहरे पर समय को पकड पान की ध्यप्रता दखकर उन का मन होती है और उसक चेहरे क मुहामे उन ज यादा कुरूप लगने लगते हैं ।

तो यह लडकी भी समय क लिये परेगान है ? वह इस वाक्य का मन म छोटे काल पीत की तरह फलाता है और फिर हथेलिया म उस गूय की तरह गोल करके सिप्रर कर दता है । वह अनमना हा आता है और सामन पेडा की टहनिया म अटकी पटी पतंगो का देसन लगता है, विध्रता को पाछ फेंकन के लिए वह अपन चेहरे पर

हाथ करने लगता है। बाला की नोकें हथेलियां में चुभनी हुई महसूस करते उसे हल्की राहत मिलती है, उसके विभाग में चला मन पसल बातें आती हैं, वह उन्हे देर तक मोचता रहता है।

वह तय करता है कि उसे अब लडकी की तरफ नहीं देखना है।

बस आने पर वह लडकी से पहल बस में चढ़ जाता है—

खाली जगह पर बठत हुए, साथ बठे ऊँघते सज्जन को वह प्रशमा की दृष्टि से देखता है, बचपन में मुनी किसी अफीमची की कहानी उसे याद आ जाती है। उसे अच्छा लगता है, वह देर तक तरह-तरह के नगा के बारे में प्रशासामक नजरिए से सोचता है। उसे याद आता है कि एक बार वह नगा करके पूरे चौबीस घण्टे पडा रहा था, आगने पर उसे किसी न बताया था—किसने बताया था यह उसे याद नहीं आता—कि एक दिन और एक रात वह बेहोश पडा रहा था। तब वह अच्छी तरह हँसा था उसकी आँखों में चमक पदा हुई थी, कि उसके सिरटाने एक पूरे दिन और एक पूरी रात बठ कर समय उसकी तीमारदारी करता रहा था और उसन उसकी बिलकुल परवाह नहीं की थी।

लडकी चमडे के फीते पकडे उसके पास खडी है। इस बीच वह लगातार दूसरी सीट पर बठे अघेड खल्वाट सिर का देखता रहा है जो हर 'स्टाप' पर बस के रक्ते ही बडी आज़िजी से घडी देखता है उसका मन होता है कि तरबूज जैसे चिकने सिर को सस्ती से चपतिया दे और कहे कि वह अपनी बदतमीज हरकत से बाज़ आए। दो तीन 'स्टाप' के बाद उसम खरवाट सिर बर्दांत नहा होता, वह होठों में बुदबुदाता है 'बेहूदा'। लडकी की तरफ देखकर वह अपना कोण बदलने की गरज से उठ खडा होता है। माचिस से रगड खाते समय तीली से छिटकते उजाड़े के कतरे-सी मुस्कराएट विखेरती हुई लडकी उसकी सीट पर बठ जाती है। उसे मुँडलाहट हाती है, क्योकि बदले हुए कोण से अब लडकी उसकी नजर के रास्ते में बराबर आ रही है और छूटते हुए बाजारी के नाम पत्ती हुई ब्रेचन हो रही है। लेडीज फ्रंट वाला वाक्य और उसका अर्थ उसे कभी अच्छा और सही नहीं लगा लेकिन उसने दूसरे दकियानूस लोगो की तरह ही लडकी का जगह देदी है, उस खुद पर चिड हा आती है, उसने लडकी को जगह क्या दी—आश्चर किस रिस्त से ? हो सकता है कि लडकी अगल 'स्टाप' पर उतर जाय या उसस अगले पर और वह वह यही उतर सकता है उतर वह लडकी के साथ भी सकता है और लडकी के उतर जाने के बाद भी वह बस में बठा या खडा रह सकता है और यह लडकी जिसके लिए वह खडे रहन की तकलीफ सह रहा है, जिन्दगी में कभी उसकी तकलीफ पूछन नहा आएगी। वह इस तकलीफ को किस खाते में डालेगा ?

'क्या सचमुच तुम लडकी को जगह देना चाहते थ ?' वह स्वयं से पूछता है

और खुद को धोखा देना नहीं चाहता।

बस मोड़ पर रुक जाती है, वह सोचता है "क्या मोड़ का सही अर्थ उस पर रुक जाना है ? बस के चलने में तो मोड़ आते हैं या सवते हैं, लकिन मोड़ पर बस का रुक जाना ?" वह इससे आगे नहीं सोचना चाहता क्योंकि इस बारे में मोचने पर उसके दिमाग में कुछ अच्छे चित्र नहीं बनते।

खड़ी बस के पहियों के नीचे घूँस-सिर-छायाएँ कुचली पड़ी हैं। यहाँ लड़की उतर जानी है उसे तक्लीफ़ होनी है। लड़की से उमका परिचय नहीं था, लेकिन बस में बठे और लोगों के मुक़ाबले बतौर परिचय के उसके पास पूछे गए समय का एक पूरे से आधा वाक्य और एक छोटी-सी मुस्कराहट है। अब वह खुद को एकदम अकेला महसूस करता है, लेकिन उसे इतनी खुशी है कि बस में बठे हुए सभी लोग कहीं न कहीं, किसी न किसी मकसद से ज़रूर उतरेंगे सबके पीछे उसी समय की चाबुक है, जिसकी वह परवाह तक नहीं करता और वह कहीं भी बिना किसी मकसद के उतर सकता है। ख़ाबत सिर की हरकतें उससे बिल्कुल बर्दाश्त नहीं हो पा रही हैं व उसे अब ज़्यादा देर बठन नहीं देंगी।

बस से उतर कर वह देखता है कि लोग पागलों की तरह बिखरे हुए भीड़ में जा रहे हैं। बसों, तंगे, रिक्शों, स्कूटर और कारों बेतहाशा दौड़ी चली जा रही हैं। उसे आश्चर्य होता है कि बिना आपस में टकराए यह दौड़ हो कैसे रही है ?

वह रेल-पुल पर निकल आता है, टेढ़ी मेढ़ी सड़कें उसे किसी कुरूप अजगर-सी लगती हैं और रेंगती हुई बसों में चिपक जाते हैं। खुटम-खुटम चलते आदमी उसे अजब किसम के बौने नजर आते हैं, वह चाहे तो इन बात पर हस सकता है, वह सोचता है कि उस इस बात पर हसना चाहिए पर न हंसने पर उसे प्रसन्नता होनी है कि चाहे हुए भी वह अपने चाहे हुए पर नहीं हसा है। गाड़ी-जो अभी कुछ मिनट पहले गई थी, दूर दूर हिलती रेंगती क़ातर की तरह उस लगती है। उसे एक गिजगिजी-सी अनुभूति होनी है, वह पुल से नीचे झुक देता है, फाड़े की तरह नीचे जाते हुए झुक का वह दृष्टि से ज़मीन तक साथ देता है।

वह सोचता है कि उसने समय को मुँह पर झुक दिया है। समय उसका क्या बिगाड़ सकता है समय-वह किसी के माथे पर मस्तिष्क गोथ उछाल सकता है उसे पिछले दिनों हुई एक मृत्यु याद हो आता है समय-वह किसी की स्कूटर से टक्कर करा सकता है उसके जेहन में दुघटना पाए एक मित्र का चेहरा छटपटाते हुए दम तोड़ने लगता है। वह अयमनस्क हो आता है। तभी कोई एक उमसे समय पूछता हुआ बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए तेजी से निकल जाता है वह धीरे से फुसफुसाता है 'जब वह मक है पूछा था तो पूछ कर ही जाता।'

वह पुल छोड़कर रिहाइगी मकाना की तरफ निकल आता है। दोनों तरफ

कतारो म बन हुए मवान उसे दडबे जैसे लगते हैं जिनमे सतुष्ट मद औरत कबूतरा की तरह गुटरगू कर रहे हैं, वह बुदबुदाता है "स्ताले सब गुलाम ह ?" एक घर से मद-औरत का एक जोड़ा निकल कर उसी बगल स गुजर जाता है वह सोचता है "एक मद जिदगी भर एक औरत के साथ कसे रह सकता है और एक औरत एक ही मर के साथ कसे रह सकती है ? "कमजकम तुम्ह औरतो के बारे म ऐसे नही सोचना चाहिये ।' वह खुद से कहता है "इस तरह तुम अपने बारे मे सोच सकत हो तुम्हे अपन वार म इसी तरह सोचना चाहिये क्योंकि तुम आदमी हो इसलिये आदमी क बारे म तुम इस तरह ज्यादा सही सोच सकते हा । वह अपने बारे म इस तरह सोचने का फसला कर लेता है ।

हाथ मे हाथ दिए एक जोड़ा टाजिस्टर" लिए सामन स आ रहा है उनके पीछे पूँछ स मखियाँ उडाती पगुराती मसा का एक मुण्ड है, वह एक तरफ हटकर उहे निकल जान देता है उस किसी कवि की एक पक्ति याद आती है "भसो और ट्रांजिस्टरा का नगर" वह इसम ' फूली हुई औरत और जोडना चाहता है और फिर पक्ति को इस तरह तरताव देना चाहता है भसो, फली हुई औरत और ट्रांजिस्टरा का नगर । वह सोचता है कि कविता करके वह समय को ' किल ' कर सकता है, समय के विलाफ कविताएँ लिखकर उह प्रचारित करा सकता है । उसे आश्चय हाता है कि लोग समय के विलाफ विद्राह क्या नही कर दत ? उह बसा म बठना और सडका पर चलना छोड दना चाहिये । द फनरो और घरा के भेद को मिटाकर दरवाजे बंद रखन चाहिये यात्राआ म उद्देश्य खत्म कर दना चाहिये क्याकि इससे समय को मदद मिलती है समय का और दूसरी बाता से भा मदद मिलती है—

लोग वाकई समय को गुलामी स छूटना चाहत हैं ? वर मुन स कहता है तो उह सारी घडिया का कुओ म दाखिल कर दना चाहिये । वह माचना है कि इन घडिया से एक या डड मुआ भर सकता है उमके जिमाग म एक नित्र बनता है किट किट करती घडिया क चक्कठ गार म मुँह पर बाट डाल पन नाशुना और बल जमी बडी-बडी आना वाला कराहता मुआ खूँसार समय अपना मुह नीच रहा है । यह मुगी क मार दौड लगान तक की बात हा सकती है जिन उम महमूम हाता है कि लोगो क मिर उरूरत स ज्यादा भुव टूण हैं । उस जिमा लखक की-गायन मन्मथियर की-एक पक्ति याद आती है यदि तुम समय को नष्ट करांग तो समय तुम्ह नष्ट करेगा । उम वह लेखक बडा उजबक लगता है उम पुरान मभा लेखन बड उजबक लगते हैं क्याकि व ममी इसी तरह का लखर बाने कहत हैं । ' जब समय का तुम नष्ट कर गये तो समय रडू की जायगा तुम्हें नष्ट करने क लिए ?' उम यह तक क्या खबमूरत लगता है वह म कई बार मन म दुहराता है और जिनती बार टुराता है उतनी ती बार मुग हाता है । वह इस वाक्य क लिए मुद का गावागी रना चाहता

ह, क्योंकि समय की गिलापत के लिए यह वाक्य त्वास मावित हो सकता है। उसे इसे कही लिख लेना चाहिये। तब म वागज न मिलन पर वह इस हथेली पर लिख लेता है। उसे छोटपन के ये दिन याद हो आते हैं, जब परीक्षा में जाते समय, वह दूसरो के वाक्यो को नकल टीपने की गरज से हाथा और हथेलिया पर लिख लिया करता था।

पान वाले की दुकान में रेडियो समय बता रहा है। एक हजरत कलाई में बंधी अपनी घड़ी मिला रहे हैं, वह उन से कहना चाहता है "घय है हजरत आपको इस मिडियाक्रिटी' के लिये और धक्कार है मुझको" फिर वह सोचता है कि यदि वह इन हजरत से यह कहेगा तो पहल इनका नाम पूछेगा फिर इस तरह कहेगा 'ए पलाने हजरत आप घय हैं, इस 'मिडियाक्रिटी' के लिये और त्रिक्कार भी आपका ही है।' उसे लगता है कि कलाईया में बंधी घड़ियो के मालिक कलाई वाले नहीं हैं, बल्कि स्वयं घड़ियां उनकी मालिक हैं।

बसों भर भर कर दौड़ता हुआ समय हाँफती और कालिख उगलती सड़को को राद रहा है। थके बेहरो वाली वाबुओ की द फतर से लौटी भीडो में समय तेज चलन के लिए परो में कमचियाँ मार रहा है। बडो-बडी इमारत खिडकियो से फेंक गये प्याज के छिलके और कूड और गटर में लुडते हुए गे दे पानी की तरह लगातार जादमियाँ का उगल रही हैं जो नीली नसो में बहत हुए खराब खून की तरह रास्तो में पुर गए है। उसे अपनी नसो में चुमनी तकलीफ महसूस होती है। पास ही फुटपाथ पर रस निका लने की मशीन में गन्ना लगाया जा रहा है, जो फटन की लगातार आवाज में और पिसत हुए प्रक्रिया में छूँछ हो रहा है छूँछ गाने की दुम उमेठकर मशीन में लगाकर एकदम छूँछ कर लिया गया है और उसे सुखाकर जत्रान की गरज से एकतरफ रख लिया गया है। उसे रुमाल आता है कि आज दिन मर उसन मिगरेट नहीं पी है वह सिगरट का धुँआ चारो ओर ऐसे फेंक रहा है जस मजमे वात्रा 'दो आन दा जान दो जान की आवाज के साथ चारो तरफ की भीड का सामना करता है। यह सोचकर उमक हाठो पर तल्ल हँसी आ जाती है जिसे वह रुमाल से पाछ कर जेब में रख लेता है जहाँ वह श्वाइया की टिकिया के साथ गडड मडड हो जाती है। वह रुख होठा पर जीम फिराता है उसक दाँता के नीचे रेगिस्तान किरकिरान लगता है वह इस रेगिस्तान से निकलना चाहता है लेकिन पद बिन्हो भरा कोई रास्ता उसे नजर नहीं आता और जा नजर आता है, वह उम तरफ जाता है जिधर मकसद पसद लोग जात है और वह मकसद पसद लोगो को नापसद करता है क्योंकि मकसद पसद होना समय की गुलामी करना है।

शेष होते हुए

अपना हैण्डबग और सूटकेस रिक्शे से उतारकर मझला घरके सामन खड़ा हो गया है। रिक्शा जाते हुए झनझना रहा है, फिर भी सनाटे में कोई फक नहीं है। मझला शीघ्रता से घरमें नहीं घुस जाना चाहता। वह रुका है। मकान की सदर दीवालें जब वह पिछली बार आया था तब की बनिस्बत और उ यादा काली हो गयी हैं। कुछ वर्षों में उनकी पीली पोताई बिलकुल धूमिल पड़ जायेगी। पिछवाड़े के ऊँच पीपल की अलग बाहर निकली डाल पर आये से कम चाँद है। मझले को अपना घर एक कृत्रिम सेट सरीखा लग रहा है। जैसे वह किसी नकली जगह के सामने व्यथ खड़ा हुआ है। इस लिए कि सेट का काम पूरा हो चुका, अब वह केवल नष्ट हो जाने के लिए ही बचा है।

कुछ ही पला में यह आभास गुम हो जाता है और मझला सड़क की पटरी से घर की दृढ़ में घुस आता है।

लोहे का भूमि पर लटका फाटक खुलने के लिए मुश्किल से घसका है। मझले की आँखों में पिछले वर्षों घर आने के अपने उत्साह और उमंग की तस्वीर नाचने लगती है। वह एक खास ढंग से कालबेल बजाता, जिसमें संगीत पदा करने की हल्की चंचल कोशिश भी घुमार होती। रात साढ़े नौ या दस के आस पास का समय किसी पूब सूचना का न होना, शनिवार या किसी दूसरी छुट्टी से लगा दिन महीने का पहला पखवारा, लोग मझले की उम्मीद बिया करते थे। और मझला आता था। नौकरी के पहले दूसरे बरस तक। फिर दुनिया के सभी लोगों की तरह घर वाला में भी मझले के आने की अक्सर की जाने वाली उम्मीद चुक गयी। इधर एक मामूली मुर्दारिस के लिए भी हर उम्मीद को सुखद सपाय में बदल देना सम्भव नहीं रहा।

मझला साचन लगा कि आखिर वह अपन घर जल्दी-जल्दी अनावश्यक क्यों आता था ? क्या इसलिए कि विघटन ने उस अपने घर के प्रति बहुत अधिक मोहासकत कर लिया था ? समय की व्यापक गति-सम्पन्न धारा उस हमशा निरीह करती रही वह थककर लौट जाता रहा। लेकिन मझला अब भी आता है। उसमें उतना उत्साह नहीं रहा परिस्थितिया ने उसे पाट दिया है पर भावुकता और मोह का बेहरा बड़ा बेहया हाता है, उसमें एक इमानी हैसियत का छलावा हमेशा चमकता रहता है।

व्यापक अघकार पर केवल नक्षत्रों का प्रकाश है। मञ्जला सोच रहा है कि वह घण्टी बजायेगा, तो किसी मयोग की आशका में मा लपककर दरवाजा खोलने आ जायेगी। 'आ गये बेटा'—उसकी आँखें चमक उठेंगी। उसकी दोनों बाँहें उठेंगी और नीचे चली जायेंगी। जब मयला बहुत बड़ा हो गया है। उसके मध्यमवर्गीय सस्कार जवान बेटे को छाती पर मीचकर प्यार नहीं करने देंगे। यह सब होता रहेगा। वह सामान अन्दर रखेगा। इस बीच पिता अपने कमरे में थके-थके खाँसेंगे। इस वृद्धावस्था में उनका किसी के आगे न भुक्ने वाला मन और किस तरह से घर जिम्मेदार बेटे को आकर्षित करे? ऊपर के कमरे में फर्श पर कुर्सी के पाव पीछे खिसकेंगे। लकड़ी और सीमेण्ट के फर्श के घपण से उत्पन्न एक निहायत सन्निप्त और निरथक शोर फलकर समाप्त हो जायेगा। टीनू दो मजिले से धम धम उतरेगा। वह मञ्जले के आगे पीछे दो एक चक्कर लगायेगा, अपनी खुशी जाहिर करने के लिए मुस्करायेगा और वापस चला जायगा। मया भामी ता बड़े हैं इसलिए उह कमरे से निकलने में दर होती है या फिर वे सुबह ही मिलते हैं। तारा गायद ही जगती मिले।

मञ्जल ने जसा सोचा, बहुत कुछ वैसा ही मन्त्रवत् हुआ। वह बरामद में कपड़े बदल रहा है उधर अन्दर मा पुसपुसा रही है। मयल को लखी कोई खबर नहीं दी। इस बार बिलबुल अचानक आ गया। "एक अस्त-यस्तता से भरी चुप्पी और फिर बुद बुदाता हुआ आदम 'चादर सब चीकट हा गयी हैं। तारा दौडकर दो एक चादर तो बदल दे कम स कम। फिर लपक कर खुद झल्ली खरिया का उनचन कसने लगती है। मञ्जला एक कमरे से दूसरे कमरे में उनचन बसती हुई माँ तकियों पर धुली खोलियाँ चढ़ाती बहाल तारा छोट सफेद बालो वाली खोपड़ी स फूसी बढाते पिता निद्रित भया भामी जीर अणु-अणु पर जमी धूल की पतों पर एक 'प्रिम सुक' डालते हुए गुजर गया। वातावरण एक खास निरत्साह को 'विस्पर कर रहा है। वह कितना बचेगा। आँगन में अंधेरा है। गुसलवान का स्विच खराब हा गया है। कई बार म्पट करने के बाद मञ्जल को कुछ नहा मूझा। वह लौटकर मा के पास बठ गया।

किमी का कुछ मूझ नहीं रहा है जस। क्या बोलें? फिर पिता ही बोले। जम्हाई लेत हुए लगता है आज ता गाडी समय पर ही आयी।' उनके बोलने में नीद भरी है। अम्माँ उनचन कस चुकी हैं। वह मुझ स मयल का घूरती हुई बहती हैं। कितने काले हो गये हो तुम? नीतल से भी ज्यादा। जब पदा हुए थे तो गेहूँ आ रग या तेरा।'

मञ्जले को उठना पड गया। उसका विस्तर बिछ जाये, तब तक क लिए मञ्जला बाहर आ गया है। वह जानता है कि बाहर कुछ नहीं है फिर भी आ गया है।

इस बार मयला बहुत दिनों पर आ सका। अन्दर-बाहर दोनों तरफ बहुत सी चीजों जो आसानी में बदल सकती हैं बदल गयी हैं। परिवर्तित स्थितियों ने मञ्जले को

बोझिल कर लिया है। उस कठोर हृदय को स्वीकार करना पड़ रहा है।

बाबा की कोठरी में लाहा लगड़ कीयला लकड़ी और गोईठा आदि भर दिया गया है। बहुत पुराना एक टुटला हारमोनियम भी वही डला है। बवाइयाना। यही बाबा रामायण पढ़ा करते थे। उनकी रामायण गुलाब गन्ध से भरी रहा करती। वे पता के बीच पूजा के गुलाब दवा दिया करते। यही 'क खम खस का एक चावल'—बाबा गणित का अभ्यास कराते। परशियन गल्प के 'याय प्रिय वादशाहा की रोमाञ्चक कहानिया चलती। तब जीवन गात था। कोई घबराहट नहीं था। कभी-कभी मझले से बाबा बुरी तरह खुनमा जाते और न बोलते। कोठरी में बड़-बड़ मूस हो गये थे। मझला दरवाजा जोड़क पता है।

जिधर सहजन केला और कटहल थ उस पिछवाड़े की जमीन भया न अपना मकान बनवान के लिए न ली है। पेडा को कटवा क उहाने अपन नये पृथक जीवन की नीव डालनी शुरू कर दी है। वे पसीने स लभपथ दिन भर मजदूरा की कामचोरी बचाते रहते हैं। द पत्तर से उ होन 'सिक लीव ले ली है। भाभी उनका चाय नाश्ता भी वही पहुँचा देती हैं।

भया ने मझले से पुकार कर पूछा क्या बच जाये ?

कल रात। मझले की छोटी सी सूचना।

अरे मुझे पता ही नहीं चला। चलो अच्छा हुआ। सब ठीक ठाक चल रहा है न ?

'हा भव ठीक ठाक चल रहा है मझले ने जवाब दिया और बात समाप्त हो गयी।

मझला घूम गया। बगीचे में कुछ नहीं बचा। कुछ सूखे अघहरे डण्डल और पत्तिया वाले टूटे फूल गमने एक पड़ क नीचे एकटठे रख दिय गये हैं। इसवे अलावा वही पुरान मान्य पपीन और मीठे निम्बू के गाटे झाड़। कु उ क्यारिया में पोदीना खास कर जमीन का नर कर दिया गया है।

मझले ने देखा एक ही घर में कई घर हो गय है। हर व्यक्ति के कमरे में दूसर में अलग एक स्वतंत्र और पृथक्ता नापित करन वाला स्वभाव है। निजी व्यवस्था की प्रवृत्ति कुछ लागा में छोट पमान पर अदर ही अदर प्रयत्नशील है। उपर वाल अपन कमरे में टीनू ने एक जलमागी में गींग की रखाबिया गिलाम-प्याल और स्टाव भी छाड़ रखा है। उसक तास्त वहाँ चाय पीते हैं। वहाँ कुसिया है, वातला में मनोप्लाण्ट कट माउण्ट पर मन् चित्र और मुन्टर वारफ पेजी कल्पन्य। टीनू अपन कमरे कवल अपन कमरे का अच्छा से अच्छा रखता है। दूसरे कमरे की अच्छी चीजें रंग ला कर अपना कमरा अच्छा कर लता है।

भाभी का कमरा गुदड़ी बाजार है लेकिन ननिक उपयोग में आन वाला सबम

शेष होते हुए

नयी, सुंदर और फशनेबुल चीजों उन्ही के कमरे में हैं। प्रसाधन सामग्रिया की जसी सुगंध भाभी के कमरे में व्याप्त रहती है वसी कहीं नहीं होती।

बरामदे के पार्टीशन में तारा का स्लीपिंग-रूम स्टडी रूम बन गया है। साफ-सुथरा। उसका अपना एक पुरानी अलमारी को बदलकर बनाया गया वार शोब है। अपना आय रन, अपनी सुराही, यहा तक कि अपने कमरे को साफ करने के लिए एक अलग झाड़ू। उसका कमरा घर का हिस्सा कम, छात्रावास अधिक मानूम होता है। यूनिवर्सिटी जाते समय वह पार्टीशन डोर पर एक छोटा-सा ताला दबा देना नहीं भूलती। दरवाजों के दोनों तरफ उसने पता नहीं कहा से लाकर दो त्रिचिया के पेड गमलो में लगा रखे हैं। उसमें पानी देना तारा को रोज याद रहता है।

माँ पिता के कमरे में कुछ नहीं है। उनके लिए किसी को फुरसत नहीं। स्वयं उन लोगो को भी अपने लिए कुछ आवश्यक लगता है पता नहीं। पिता द्वारा लायी जान वाली या उनके नाम पर आने वाली चीजों मया भाभी टीनू और तारा के बीच बँट जाती हैं। उनके कमरे में सबसे पुराना टूटे हैण्डले वाला मोटा गद्देदार सोफा है वस जिसकी टेपस्ट्री फाटकर बहुत सी स्प्रिंग बाहर बाकने लगी हैं। सडक पर लटक आयी टाट की सीलिंग से दिन भर मिट्टी झडती रहती है। घाम के तिनके, छिपकलिया, गौरम्या के अण्डे और कमी-जमी पूरा का पूरा घोसला ही रोगनदान से गुजरन वाली तेज हवा वहाँ गिरा जाती है। दो हमेगा बिछी रहने वाली झिलगी चारपाइयाँ हैं जिन पर ज्यो का स्यो दीवार को बेतरताब खू टिया के सहारे सुतलिया स मच्छरदानियाँ टाँग दी गयी हैं। दिन भर इन सुतलिया पर मक्खिया की पत्तियाँ आराम करती होती हैं।

तारा जिस दिन युनिवर्सिटी या किसी सहली के घर स विदेशी फ्रूग का बगीचा देखकर आती ह उस दिन अम्माँ यादू को सुनाने की गरज से तुनकती रहती ह "पादीना को रखा ह। इतनी जमीन पडी ह यह नहीं कि एक माली रखकर बगीचा तयार कर बायें कुछ अच्छा लगे। पता नहीं शुद्ध घी खाकर क्या करेंगे, उसस तो लाग और बीमार रहत हैं।" तारा व अम्माँ-बादू भी केवल गुन लेते हैं।

टीनू ने पिता के टबुल लम्प का बत्तव न जाने कसे धूँज हा गया। धुँधलका बत्तने पर पिता को उसके खराब होन का पता चला। माँ न सञ्चाइ जानत हुए भी भयवश छुपाय रखने की कोशिश की। पिता बिगड। कोई नहीं बोला। सब धोरघण्प हा गय हैं, 'वे उत्तरोत्तर गरम हो कर चीखन लगे। फिर अम्माँ ने साहम किया 'अब जान दो टीनू से खराब हो गया शरम क बत्त शतना चिल्लान स क्या फायदा ? पिता अगान्त ही रह, 'हाँ मैं चिल्लाता हूँ सून-पसीना एक करके मैं जो कुछ जित्या भर जोहता रहा उस सब में आग लगा दो।' व अनरक अपना दुखडा रा रह हैं, मैं घर छोडकर ही चला जाता हूँ,, फिर जा चाहे करा।

सबका मन कडवा गया है। ऐमा लगता है जैसे मुचे दरवाजों स पिता मचमुच

बाहर दूर चले गये हैं। घर में स्तब्धता छा गयी। मयला निराशा-सा बिना चाय पिये चला गया है। बाहर भी बहुत देर नहीं रह सका, जल्दी ही लौट आया। वातावरण ऐसा है कि खाना खाने की इच्छा उसे बेशर्मी लगती है। वह सो गया। नींद खुलने पर उसे लगा कि वह बहुत तेर से सो रहा है, लेकिन घड़ी में दस ही बजे थे। एक सोयी बेचनी लिये वह उठा। इस घर का क्या होगा, जोर मझला ओसारे में चूल्हे के पास रख खान के टेबुल पर टिक् गया। मोट्टू दा की बोठी में ताड़ वृष के पत्ते सड़सड़ा रहे हैं। जब हवा रकी होती है तो ताड़ नहीं खड़खड़ाता, चिमगादड़ बालते हैं। टीनू सब मुच बहुत शोधी जोर उहण्ड हो गया है। पिता से कसी कसी उग्र बहस करन लगा है। पहले मझला भी ऐसी ही बहस किया करता था। फिर वह बिल्कुल ही चुप रहने लगा। बल टीनू भी चुप हो जायगा। सतत खीझ और शोघ की स्थिति में नहीं रहा जा सकता। लेकिन भानी और तारा दोनों को घर से विशेष सरोकार नहीं रहता। जम्मा अकेले गृहस्थी में घुनी जा रही हैं।

चूल्हे की राख की तरफ मझले का ध्यान चला गया। तपी हुई राख बसा रही है। गम राख सूँघते रहने से यक्ष्मा हो जाने का भय बना रहता है। मझले को पता नहीं किसने बताया था। कहीं माँ को भी मझला मान नहीं सका। लेकिन अंध विश्वास की प्रबलता और भय उस पर छाया रहा। वह टेबुल पर से हट गया। उसने चूल्हे की राख पौन से बाहर खींच एक जगह एकत्र की और उसे तवे से ढांप दिया। मयला भयभीत होकर ऐसा कर रहा था। उसके कलेजे में घबड़ाहट धड़कने लगी। अगल-बगल जूठ वस्तुओं की बिखरावट के बीच अदाज से सँभल कर चलने के बावजूद भी दाहिने पाव से एक गिलास लडी और लुढ़कने लगी। अम्मा ने अपने बिस्तर पर पड़े रहकर ही बिल्ली को 'घत्त घस ५ त्त' भगा दिया। मझले को चन हुई।

मझला अपनी खाट की तरफ लौटा। उसे सुनायी पडा अम्मा पिता से कह रही थी 'बल्ब की बात लेकर टीनू पर तुम बकार ही नाराज हुए। इतना गुम्सा नुक्सान करता है। तुम्हारा स्वास्थ्य भी ठीक नहीं।' मयला ठिठक गया। बाबू कहन लगे, "तुम क्या जानो, मेरी छाती में हमशा हाहाकार मचा रहता है। घर की हालत तुम देखती ही हो। जब भी बाहर निकलता हूँ ऐसा लगता है कि किसी शराब खाने में घुस जाऊँ। पर अदर जाते जाते रह जाते हैं।" फिर चुप्पी छा गयी-किसी ट्रेजडी के बाद की-सी चुप्पी। मझला रका नहीं, बिस्तर पर आ गया। वह सोचता रहा कि अम्मा शराब खाने वाली बाबू की बात से बिल्कुल भयभीत हो गयी होगी। उन्होंने बाबू के हाहाकार को सचमुच बड़ा ददनाक समझा होगा।

तारा की सहेलियाँ आयी हैं। वे खिल खिला उठती हैं और लडकियाँ की तरह फिल्मों पर श्राव श्राव कर रही हैं। तारा उधर ही भूमी हुई है। पिता को यह हद से गुबरा हुआ लग रहा है। पहले वे मोड़ पर बठे-बठे सहते रहे। अब उठ गये हैं। इस

कमरे से उस कमरे, उस कमरे से बरामदे, बरामदे से बाँगन और आगन से वापस माढ़े पर। जब भी माँ को देखते हैं, उनकी आँखें बगार हो जाती हैं और ये साफ-साफ चिल्लान लगती है कि तारा की लापरवाह और ढीठ प्रवृत्तियाँ की समस्त जिम्मेदारी अम्मां न ऊपर है। यहाँ पर मझले के पिता हर दूमरे मध्यवर्गीय पिता मरीब ही लगन हैं।

तारा के कम से अनियंत्रित गोर गरावा सार घर म त्रिपर रहा ह। पिता न बूढ़े मन के लिए यह उल्लास बड़ा बटु ह। उन्हें यह मत्र अनुगामन का तान पर रख दन जसा लगता होगा। लकड़ी का पार्टीशन साउण्डरूप दीवाग नहीं ह, सगिण आवाजें, ठहाके और बातचीत का जताना हल्ला अमी भी उठता ह !

वावू घूमत रहते हैं। घूप आगन छोड रही ह।

अम्मां पिता के क्षोभ को समझ रही हैं। फिर भी तरकारी काटने व अपन काम म ती सलग्न रहने की कोशिश करती हैं। हागकि वे तरकारी काटने म पूरी तरह गामिल नहा हैं पिता की बजह से डिम्ब है। पिता अपनी चिडचिडाहट को उगलन का मौका ढूँड रहे हैं। व इस मनलब से भुनभुना रह हैं कि मा उनको तवग्जा न। फिर एक दा जुमला बडबडाकर चले गये। 'खुब भई चार घण्ट हो गये गुच्छरें उडन हुए। किमी घर म एसा नहीं देखा' गोया मचमुच उहोने बहूत से घर देख ही हों। दोबारा आकर काफी कुटमुडात और तन-तन वोउते रहे अवेने।

अम्मा चूडिया से भरी अपनी क्लाइयो को बार बार चटकन, चिमटा, पु काँ और काम म आत दूसरे बासनो को पटकने तथा जबडो को भीचकर गाग म गृम्य क गढे भरन के अलावा मौन हैं। वह जानती हैं कि मझला घर में ही ह। बड़ी उमन यद् सब सुन लिया तो साइकिल लेकर चला जायेगा। कम से कम, मगला घर रहू नव तक माँ पिता का यह भुनभुनाना बतई पसंद नही करती। उधर ताग व बान में कृष्ट पठ गया तो वह अलग खडव्वान लगेगी। ऐसे ही उसे अपनी सट्टिया का घर लान म गमम लगती ह।

तारा की सहलिया गयी और वह माँ की डाट तथा मासनी पर पिता क मनकने से बच रही है। उसके चलन फिरन म चाप नहीं उच्यन हा रही है और बटु माँ स दवे स्वरो म प्यार स बोल रही है। अमी-अमी उसन हारों पर स मूख कपन तन करन के लिए उठाय हैं। साधारणतया तारा यह काम कभी नहीं करता। मझला उठ आया है। मामी अपन कमरे स निकल चाय तयार करन क त्रिण लकड़ी की बगिया तोड रही है। टीनु स्कूल से लौट बाघरम म सिमी गान का पत्रियाँ बीसु रहा है। तारा अब काफी सुरक्षा का अनुभव करती है। गाय अब त्रिण नहीं भनकेंग लकिन गाल उनके जरूर फूँड रहगे। तारा की आवाज अब जाकर कुछ स्वानादिक बूड है। एक अजीब नन्ली डग से सब व्यतान हो रह है। टीनु का अब त्रिण

सूट बनवाना, फीस देना या मिनेमा जाना होना है तो वह पिता से प्रेमपूर्वक बात भी करता है, और घर का काम भी कर देता है। तारा को ऊन या साड़ी लनी होती है अथवा पिकनिक पर जाना होता है तो माँ से लिपट लिपट कर मधु घोलती है। पिता गुंग नहीं हैं, फिर भी टीनू की आवश्यकताएँ हृद से बाहर पूरी कर रहे हैं अर्थात् निराग है फिर भी तारा के लिए पिता स संपारिसों किया करती हैं, लडती है।

बिना किसी घरू वातावरण और मिले-जुले सुन्दर वापनमा व ही मझले की अधिकौश छट्टियाँ बीत गयी। उसके चाय पीते पीते शाम हो गयी। इस समय मझला किंचित् तरल है। सुबह से ही जिस गाम का इतजार रहता है, उस शाम का आ जाना उसके लिए सुखद है। इसलिए नहीं कि उसकी शामें मव्य होती हैं, बरन् इसलिए कि शाम के बाद दिन के बीत चुनने का एहसास करना बहुत सरल हो जाता है। दिन जो कि काफी कठिन हैं, और शाम के पहले इतिहीन स लगते हैं।

पुरातन गिलालेखों के समझ उसकी लिपि से अनात दशक की जो स्थिति होती है वसी ही मझले की अपन घर के लागा म हा गयी है।

मझला घर से निकलने की तयारी कर रहा है। और मझले के शरीर तथा शरीर की गति विधियों को घर के लोग नाटक की दृष्टि में देखने लगे हैं। उहे नाटक को भुगतना भी है, और तटस्थ भी रहना है।

यह तटस्थ रहन की विवशता बड़ी दमघाट्ट है। माँ गुमसुम रहती हैं और पिता चिडचिडे। उमग गुम गयी है। पिता से टीनू तक सब अनात परिणाम वाले मविष्य के लिए बन मान की स्थितिया भेल रहे हैं।

मझले का क्या, वह अभी कपड पहन कर निकल जायेगा। लेकिन मन तो दूसरो का भी होता है। वे मसोस के रह जाते हैं।

घर की शाम बलेजे को दवाती है। बाहर जीवन मद नहीं है। यह विविध और उत्तजित करने वाला है। इसी उत्तेजना के लिए मझले न घर की शाम को त्याग रता है। छट्टिया म इधर जान पर घर की गाम का एक घूमिल एहसास उस उन सडको पर होता है, जिन पर तेजों से दफतर के बाबू घर के लिए लौटत हात है। उधर मझला किसी रेस्तराँ या बार म जादुई लफ्फाजी करते नूठी दुनिया की अनिवायता का मिर पर गम्भीर अभिनय व साथ लादे अदरुनी तीर पर मागे घबराय और बीमार लोग के ससार म शामिल हो जाता है।

दिन पूरा हा गया। अभी-अभी अघ रात्रि की सूचना देन वाले प्रेस के घण्ट बजे हैं। बारह घण्ट काफी दर तक बन। मझला साचता है, अच्छा होता य घण्टे किन्कुल न बजते अथवा जल्नी से बज जात। गायन बजाने वाला अघ सुप्तावस्या म है। मझला अभी बाहर स आकर हडबडी के साथ खाना जत्म करन म रणा है। उम दर लग रहा है माँ कुछ बोलने न लगे। माँ का बोलना माधारण बोलना मात्र नहा

होता। धीमे से बोला गया उसका हर वाक्य पक्ष कटे परिदे की बेजान उड़ान चेष्टा मा दर्नीली चीख सा होता है—इस चीख से मझला बचता है। पता नहीं बात ही बात में कब मनका बाध टूट जाये। माँ का क्या, उसकी शादी की बात या मामी की दूमरी घर बसान की प्रवृत्ति की चर्चा ही छेद दें। दम बारह दिन की तो छट्टी, उस पर वह इतनी शेर-देर तक घर क्या लौटता है अथवा पिता के बहुत गिरे स्वास्थ्य के बारे में ही। माँ के पास बहुत सी खतरनाक बातें हैं।

मझला सर भुका यन्त्रवत् खाना खा रहा है। मोचता भी है। पहले दिन उसका भाने पर माँ खीर, सलाद या और दूमरी अच्छी चीजें बनाती हैं। फिर रोज की ही तरह खाना बनने लगता है। मा के अंदर बस इतना ही उत्साह बच गया है। पचास बप की मा अपन बीस बप के मा स्वरूप को समय-ज्वाल में जग चुकी हैं। तीस बप पहले जब मयला पदा हुआ था। पदा बरन पोषण करने के बाद अपनी संतानों के लिए उसके पास कोई कायक्रम नहीं है। सिवाय इसके कि वह खुद को तिल तिल मारे और भजले, टीनू की बहू का एक कठोर स्वप्न उसमें कभी नहीं मरे।

मझले को एकदम से ख्याल आता है कि जब भी वह रात को देर से लौटा है, केवल माँ ही उसे जागती मिली है। बाकी लोग अपने-अपने बिस्तरो पर क्षण भर कुनमुनाकर पुन देखबर सो जाते हैं। टेबुल पर खाना मुँदा रहता है। माँ लाचारी से उस बफ हो गये खाने पर निगाह डाल कर मुस्त हा जाती है। मयला चुटकी में खाना निगल लेता है या खाता ही नहीं टाल जाता है। रोज तकरीबन यही होता है। बिस्तर पर जाने के बाद मझले को तरन खाने की फुरसत मिलती है। वह सोचने और गम करने लगता है कि उसे माँ की आंखों में कभी भी नींद क्यों नहीं मिलती। माँको म मानो दद की एक गिला उसे अंदर ही अंदर भेदती रहती है। मझले को भी मातृत्व का नाम पर महज यही खौफनाक दरि नमीव है।

बाहर सड़क पर मुहल्ले में गन्त लगाने वाले चौकीदार जमा होकर जोर जोर से हँसी टटठा करने लगे हैं, उनकी खोरी से धी गयी चिलम का गाजा बू मार रहा है। जो लोग सो रहे हैं उनके लिए चौकीदारों की सीटियाँ रात का पूरा मतलब देनी हैं। जागती हुई माँ और मयले के लिए रात एक त्रामद मुग्धान वाली कहानी है।

मयला टेबुल पर पानी का गिलास ढँकन लगता है। यद्यपि वह निश्चित रूप से जानता है कि टेबुल पर गिलास नहीं है। माँ उठती है। पानी ला लेती है। फिर बठ जाती है। उसके लिए मझले में कुछ बोलना जरूरी है।

‘बेटा! टीनू के बारे में क्या सोच रहे हो? उसका दिमाग खराब हाँटा जा रहा है। देखत नहीं कितना गुस्सा और बदतमीजी करने लगा है। माँ आँखिर बाली ही।’

मयला गिलास का पानी ममाप्त हो जाने के बाद भी गिलास को कोर का मोठो स नहीं हटा रहा है। वह मूठमूठ पानी पीने का अभिनय करता हुआ माँ के

प्रताप का अभाव उत्तर गात्र रहा है, मा प्रताप का भूल रहा है। आगिर उम कुछ गुणा नहीं, दगलिन गिलाग रगो हूण करता है, 'तो मैं क्या करूँ?' मगला जानता है कि यह ऐसा रहा कहना तो उसे बच ही उतगने है जायेंगी।

इस तरह म माता का समाप्न कर दाता माँ का अछा गहा लगा हाणा। सखिन उसो कहा कुछ रहा। बग यही साधने लगी कि गगल गगने मगला कितना निर्मोहा हो गया है। पहल सबका गगल करता था, अब अगता भी नहा करता।

मगल का माँ जिगगी स दगती आ रही है पर आजगल सचभुच वह बटून बटा है। मगल का कगगन उम कानर करता है। कमी-कमी माँ के नगा म एव कगगीव गिदगिदहाट भी भर आती है। मगने ग्याह कर ला। जिगी लगी स कर ला। जिगी तरह कर ला। जेठ बटू ग तुगहार बडर भया को छीन लिया, फिर भी कर ला। दुगिया म सगी करते हैं। तू अगन साधिया म अरे-ग पग जायगा। तुगहारे पिता गिरतुल लट गय है। अगर हम स कुछ गलती है। गयी हो तो बटा माफ कर दा। माँ की आँसो इसी तरह बोलती रहती है। सखिन मगल ने माँ की कमी नहीं मानी है। बचपा स बिही रहा है। बाप तो बुदापे तन है।

मा अपने सभी बच्चा स डरी रहती है। इन दिना मगल स और डरने लगी है। पिछली बार जाड के गिना से वह और सहम गयी है जब एक दिन खान के तुरन्त बाद मगले ने मल मल गाराव की डर सारी बडबूटार उलटी टैगुल पर ही कर दी थी। उन्ही दिना बड भयान भी अपन हिसाब कितान का पसला कर लिया था। माँ के मन म मगले के भविष्य के बारे म काफी डर है। स्त्री के बिना कोई कसे रह सकता है ? भयगस्तता उसके स्वभाव म शुमार हो गयी है। अगर मगला गानी को तयार हो जाये तो भी वह कि-ही बुरे परिणामो की कल्पना से डरा रहेगी।

देर से होने वाली सुबह की खटर-पटर से मगला जाग गया है। पिता माँ पर आरोप लगा रहे है कि वह लडको को 'प्रोटेक्ट' करती है नहीं तो क्या मजाल कि लोग आठ बजे तक सोते रहें। मगला अपनी तरफ किय जाने वाल उस सकेत को समझता है। वह बिस्तर पर लोटा हुआ पिता की अप्रत्यक्षता और वायरता सोचने लगता है। वे अपना हर अस-तोप आसानी से मा पर थोप देते हैं। सभी कायर हैं, क्योंकि माँ दुबल है।

वह खुद जब कभी, अपने प्रति मा की प्रेम उत्कटता का लाभ उठाता है पिता उस अपनी योग्यता और हाहाकार के भावुक शब्दो स दबोचत हैं। तारा माँ को जन रल नॉलिज से आश्रात करती है। उसके अनुसार मा को नये मनर का नहीं पता।' टीनू अपनी उच्छ खल आवाज मे बात-बात पर मा को दलकार जाता है। बडके भया की उँगली पर सम्पत्ति का एक छोटा-सा पहाड है जिसके नीचे मा को धौस के बाव-जूद भी शरण लेनी पडती है। क्योंकि उसकी आखा के सामने एक आधार है जिस पर

शेष होत हुए

मे उसे अपने अव्यवस्थित बच्चा को उतारना है, एक मृत्युक्षण तक की दूरी है, जिसे पार करना है। हालाँकि इस पहाड़ पर स भी उम्मीद की विरणु बूब रही हैं।

माँ बाहर नारियल की झाड़ से पीपल के सूखे पत्ते बटोरन चली गयी हैं। भाभी मुनाने की गरज से भ्रुनभ्रुना रही हैं, "चाय बनायी जाये या खाना। उस बजे महारानी यूनिवर्सिटी जायेंगी, उह नो बजे खाना चाहिए। यहाँ अभी तोमरो बार वूह पर चाय का बदहन चला है।"

गलगल मौसी चिडिया का एक झुण्ड तरता हुआ आया और पुढीने की ब्यारी क पाम बठ चिचिया रहा है। मा झाड़ से उ ह हौकने लगती है। चिडिया थोडा पासला छोड उड कर आगे बठ जाती हैं। ये भूने चिडियाँ शोख जीर खूब शोर करने वाली हैं। अम्मा उहें उढाने को बेताब और परेशान हैं।

मझले को खूब याद है, माँ किसी शिशु को खिलाते खा करते हुए जो बहुत सी काव्य पंक्तिया गायी करती थी, उनम से एक 'गलगल मौसी आयी हैं पत्ते म गुड लायी हैं', उहे बहुत प्रिम थी। फिर भी माँ मानती है कि 'गलगल बहुत बुरी और मनहूस चिडिया है।' गोरग्या घर बसाऊ है तो गलगल घर उजाहू। माँ हाँफ गयी है, लेकिन उमन चिडिया के झुण्ड को मकान की हद स बाहर कर दिया, क्योंकि गलगल घर उजाहू चिडिया है।

मझला खिन और अवसादग्रस्त हो गया है। भाभी रसोई म हलाकान हैं। माँ उबर नहीं जा पायेंगी। तारा पढ़ू है। भाभी भी अकेली कमे कर? मझला सोचता ह कि बठ कहा बाहर चाय पी लगा। उसकी ता बाहर चाय पीने की आदत सी ही पड गयी ह। लेकिन उसे इसी घर मे व्यतीत होना ह। यह व्यतीत होना भी कितनी मुश्किल बात हा गयी ह।

मझले को कुछ रुपया की जरूरत पड गयी। उमने मा से माँग। माँ न भया से कहा। भया का बन्पन दहाडने लगा 'क्या करेगा वह इतने रुपये? इसी तरह लागो की आदतें खराब हाती जा रही हैं। ससाला ठकदार की लडकी से इइक फरमाता ह जीर घर म दाशनिक्ता छाँटता है। मेरे पाम रुपये बूपये तही हैं। उसी लडकी से क्या नहीं लेता? माँ अपना सा मुँह लेकर वापस आ गयी। मझला सोचने लगा कि उमने नाहक कहा। शायद लोगो को अपने सरगार पर इतना अधिक खतरा नजर आने लगा ह कि व. शिवाजु शे. उठे हैं। खरलि. म. बूया. उहा. फझला.।

हर बार की तरह इस दफे भी मझले की छुट्टियाँ बडी कठिनाई से रेंगी हैं। अम्मा को दिल की तमाम खलबलिमा व िए मझले मे फिर अवसर नहीं मिला। मझले से उस उम्मीद रहनी है। चापद वह ममझती है कि मझले क पास घर की स्थिति को बदल देन वाला कोई दुस्मा ह। माँ अपनी गलतफहमियो से बदनसीब और दयनीय हो गयी ह। गिरती हुई दीवाल को मझला या कोई भी अपनी पीठ से रोकने की

सेब

चलती सड़क के किनारे एक विंगप प्रकार का जो एक्कांत होना है, उसमें मन एक लड़की का किसी की प्रतीक्षा करते पाया। उसकी भ्राँखें सड़क के पार किसी की गतिविधि को विद्युत्प्रा रही थी और भ्राँखों के साथ बसे हुए छोटी और नुनीली टुट्टी वाला उसका छोटा सा साबला चेहरा भी इधर से उधर डौलता था। पहले तो मुझ यह बड़ा मजेदार लगा पर अचानक मुझ उसके हाथ में एक छोटा-सा लाल सब टिगवाई पड़ गया और मैं एकदम हक से वहीं खड़ा रह गया।

वह एक टूटी फूटी परेम्बुलेटर में सीधी बठी हुई थी जैसे कुर्सी में बठने हैं और उसके पतले पतले दोनों हाथ घुटनों पर रखे हुए थे। वह कमीज-पजामा पहने थी, कुछ ऐसा छरहरा उसका शरीर था और कुछ ऐसी लड़कायी उसकी उम्र थी कि मैं सोच में पड़ गया कि यह लड़का है या लड़की। लड़की होती तो उस पर दा पतली पतली चोटियाँ बहुत खिलतीं यहाँ वह भबरा थी। पर तुरन्त ही मेरे मन ने मुझ टाका—भला यह भी कोई सोचन की बात है क्योंकि उस बच्ची में कहीं कोई ऐसा दद था जो मुझ फालतू बानें सोचन से रोकता था।

यह विनकुल स्वाभाविक था कि मैं पास जाकर बड़ी शरारत से पूछना क्या बात है बेटो, तू इतनी घबरायी हुई क्यों है? तूमें यहाँ कौन छाड़कर चला गया है? पर वह न उतनी घबरायी हुई थी और न उस वहाँ कोई छोड़ कर चला गया हूँ क्वाकि उसके चेहर पर एक गहरी आगा की दृढ़ता थी यद्यपि वह आगा इसी बात की थी कि उसका बाप अभी आ जायेगा। इसलिए मैं पूछा नहीं पर थोड़ा और पास आकर उस दखता रहा। मुझे डर था कि प्रम को हाथ लगाते ही वह रो पड़ेगी लेकिन एक बार मैं हुआ कि उस जरा-सा और पीछ हटा कर फुत्पाय पर बरदूँ डोजल-इजिन वाली भीड़ी बमा की दृष्टान मेरे दिल में बचपन से बठी हुई है पर फिर यह सोचकर एक गया कि हालाँकि कोई डाइवर कम कुगल होना है कोई जयान और कोई अपनी बीबी को पीता है कोई नहीं, पर ऐसा कोई नहीं होगा जो उस बचाकर नहीं निकल जायेगा।

उड़की ने एक बार मुझे धूणा से देखा फिर अपने बाप को देखने लगी। वह सब्कार जमीन पर कोई चीज ढूँढ रहा था। मुझे देखकर वह गायद मन में हँसना चाहती कि आप यहाँ खड़े क्या सब्बना लुटा रहे हैं पर वह बहुत कमजोर थी और उसके पर भाव एक अजीब लक्षण के साथ आते थे जैसे कमजोर व्यक्तियों के आते हैं : इसीलिए उसका चेहरा और सख्त होगया। अब सोचता हूँ कि उमन अपना ध्यान त मुझ पर से हटाकर खोयी हुई चीज के मिल जाने पर लगा दिया होगा।

यह स्वाभाविक ही था कि मैं अपमानित अनुभव करता कि मैं तो—जसा कि बचपन से मिखाया गया है ट्को जना के प्रति आद्र होना—उम पर तरम खा रहा और वह मेरी अनदखी कर रही है परन्तु मुझे इसमें कोई अपमान नहीं मालूम हुआ कि मुझे उसका स्वाभिमान अच्छा लगा। इस बार मन गौर किया तो दिखता कि वह त मल कपड़े पहने थी कमोज के बालर पर मल की लहरदार धारियाँ थी मगर रा साफ था जैसे उसका बाप उड़की को मुँह धुलाकर बाहर ल गया हो। लगता था घुनकर उसका मुँह और भी निरन आया है। कमोज पर उमने स्वटर पहन रक्वा जो चिपक कर पटना था पूरी बाँह की कमोज थी कफ के बटन बकायदा लगे हुए और तम बार मन गौर किया तो दिखता कि कलादयो म बहुत-सी नयी चड़िया थी।

मने मोचा ससार में कितना कष्ट है। और मैं कर ही क्या सकता हूँ सिवाय विदना देने के। इस गरीब की यह उड़की बीमार है ऊपर से कुछ पैसे जो अस्पताल की स से बचाकर ला रहा होगा उन्ही स घर का काम चलेगा, यहाँ गिर गये। किसी नी ने टक्कर खा गया होगा। वह तो कहिए कोई चोट नहीं आयी बरना बीमार की लावारिम यहा पडी रहती काई पूछने भी न आता कि क्या हुआ। मने मचमुच के बाप को वहाँ से आवाज दी 'क्या ढूँढ रहे हो ? क्या खो गया है ?

उसने वही से जवाब दिया कुछ नहीं, गाड़ी की एक दिवरी गिर गयी है।

उसकी खोज खत्म हो गयी थी। वह बिना दिवरी के इधर चला आया। उसके य मने परेन्सुलेटर के नाचे भाँककर देखा—जहाँ गाड़ी की बाँड़ी और धुरी का जोड़ ता है, जहाँ धुरी हिलती रहती है वहाँ का एक बोल्ट बिना नट के था।

मने सोचा बस ! मगर इसे ही काफी अफसोस की बात होनी चाहिए क्योंकि त तो गाड़ी वसे ही ढक्करमचर हा रही थी, ऊपर से इस नट के गिर जाने से वह विल-ल ठप हो जायेगी क्या कहावत है वह—गरीबी में आटा गीला—कितना दद है इस हावत में और कितनी सीमी चोट है आटा जहरत में ज्यादा गीला हागया और अब खेया गहिली परात लिये बठी है उमे सुखान को आटा नहीं है। यानी आटा है मगर टियाँ नहा पक सकती।

मने अपनी तार्किक चतुराई दिखायी पूछा, 'मगर दिवरी गिरी कहीं थी ? तुमको ठीक मालूम है यही गिरी थी ?

लडकी की मरी मरी आवाज आयी गिरी तो यही थी अभी मुझ दिखाई पड रही थी, अभी एक माटर आया उस स वह छिटक कर उधर चनी गयी ।

मोटर के गुदगुदे पहिय से छोटा-सा नट छिटक कर कहीं जाता पर वह लडकी अपन स्वास्थ्य से दुखी थी इससे उसका यह गलत अनुमान मने क्षमा कर दिया और सडक के पार गया उसी जगह मने भी डिबरी का खाजा ।

जब खाली हाथ म तौट कर आया तो बाप न कही मे एक छोटा-सा तार का टुकडा खोज निजाला था और बडी दक्षता से बोल्ट को छद म बठा रहा था और उम बाघन की काशिश कर रहा था । गाडी को उसने जरा-सा हुमासा ता लडकी जा नया खिसिया गयी, पर जसा कि मेन पहले बताया उसके चेहरे पर भाव बस नही था सक्ते थे उस त-तुरुस्त बच्चा के आते है, इसलिए उसने जल्दी से अपन बाप का कधा पकड लिया और नीच झींकन लगा—जैसे अपनी गाडी ठीक करने म मदद देना चाहती ही ।

मने पूछा 'अब कसे जाओगे ? ऐसे तो यह ठीक न होगी ?

बाप का मुँह दान्ते भरा था और जबडा चौडा था । उसन गाडी के नीचे मुँह डाल डाले खुरदरी आवाज म जवाब लिया चल जायेंगे । और लडकी मे कहा "बेट, तू तनिक उतर तो आ ?

बेटी न बाप के कध पर एक हाथ रक्खा एक से अपने सब को कसकर पकडे रही और नाचे उतर कर गाडा स कुछ दूर हटकर खडी हागई । म बहुत द्रवित हो उठा । बिचारी बीमार है इमे शायद सूना हागया है—या तपेन्डि इससे कम इस कोई बीमारी होनी ही नही चाहिए और वह सडी भी नहा रह पायेगी, बापती रहेगी यही गिर न पडे । हे भगवान् जल्ता से बास्ट म तार बँध जाय ।

मगर लडकी सीधी खडी रही । सिफ एक बार उसन नाक सिडकी । बीच बीच म अपने नगे परा का देवकर पन सिजोडती रहा और अधीरता से गाडा की धुरी को देखती रही यह तो स्पष्ट था ही कि वह अपन बाप की कारीगरी स बहुत प्रभावित हो उठी है । वह बहुत दुबला थी छोटी सी, और सवली थी, एक नये प्रकार का सौन्दर्य उसम था, वह जो कष्ट उठाने म आता है । पर फिर मर मन न मुझे पात्रू बाते सावन से रोत लिया ।

मन पूछा यह बीमार है ?

बाप न लडकी का पुरारा 'आ बेट बठ जा ठीक हो गयी ।

धारे-धारे चलकर अपन डील पजाम को समरकर लडकी परम्पुनेटरस चढ़ रही थी, तमी मुझ गाडी क पॅन् म एक छाने सी खिरी पडी लिय गयी । मट उम उठाकर मेने बाप की लिया, "यह कनी है, इमम काम नहीं चवेगा ?

"ओ नहा जा, ये तो बहुत छानी है । वा तो मन बना लिया जा ।

मे अपनी बरगा स परैगान मा । फिर मन पूछा 'इसे क्या हुआ है ?' और

उसके दुखी उत्तर के लिए तयार हागया। मेन सा गा था कि जय वह कहगा, साहब मज तो कुछ समझ म नही आता किमी के, तो डाक्टर टुकू का नाम सुभाऊंगा।

बाप हँसकर बोला, गब्र तो ठीक है यह, इम मोतीभाना हुआ था बहुत दिन हुए, तब म कमजोर बहुत हा गयी है। सुइयाँ लगती हैं इमे।

गाडी चूँ-चूँ करके चलने लगी थी। अब लॉडिया को शरम लगने लगी कि इतनी बड़ी होकर प्रम म बठी है।

“कहाँ रहते हो ?”

‘यही, सरकडा बाजार म। और अपनी मासल बाँह उठाकर उसने सरकडा बाजार को इ गित किया जो सामन धूप म चमकता लिख रहा था।

मुझ कुछ न सूभा तो पूछा वहा स रोज यहा तक आते हो ? तब तो बडा तकलीफ उठाने हो।’

वह हँसा तो नही पर कुछ एस मुस्कराया जस कह रहा हो कि अपनी करण का श्रेय लेना चाहत हो तो हमारी व्यथा को क्यों अति-जित कर रहे हो। मने यह भी पूछा था सुइयो म तो बडा खरचा हाता हागा।

बसे हो उत्तर आया कोई छ-बीस लगवा चुका हूँ, अभी कोई खास फायदा नहा है। धीरे-धीरे होगा। ३ रु० ६ आ० की एन लगती है।’

अब भी म और कुछ पूछना चाहता था क्याकि मेरा मत कह रहा था कि मेरा काम अभी खत्म नहा हुआ। मगर म यह भी दख रहा था कि उस लडकी की व्यथा कितनी सादी थी मामूली थी कोई खास बात थी हा नहा। म समवेदना दे सकता था तो अधिक से अधिक देना चाहता था इसलिए भरे मुँह स निकना “धबराघा नही ठीक हो जायगो लडकी। अब सोचता हूँ कि बजाय इमके अगर म पूछता, ‘आज कौन सा दिन है तो कोई फक न पडता !

बाप ने मानो मुझे सुना ही नही। लडकी ने अपने सब की तर्फ दखा पूछा ‘बप्पा ?’ बाप न बडे प्यार से मना कर दिया।

बीमार लडकी धय स अपने सेब को पक रही। उमने खान के लिए जिन् नही की। चमकती हुई काली-सफेद चूडियो से उसकी कलाईयाँ खूब ढँकी हुई थी। मुटठी म वह साज चिकना छाटा-सा सेब था जा उम बीमार होन के कारण नसीब हो गया था और इस वक्त उसके निडाल शरीर पर खूब खिल रहा था।

म जल्नी-जल्नी चलकर आगे निकल आया। अब म वहाँ बिनकुल फानतू था।

परिशिष्ट

शुद्धि-पत्र

अशुद्ध	पृष्ठ	पक्ति	शुद्ध
काठ नरे	१२	२६	को उनके
तग हस्ती	२२	२१	तग दस्ती
रानी	३८	३३	पुरानी
वनाते	४०	२३	वनते
पाट	४८	२५	पाठ
ये माए ये उच्चे	६१	२५	कुछ बच्चे कुछ माँए
हागी	६५	१	होगी
छोड	६५	२७	छेड
उनें	६६	४	उन
यह	६२	२	यहा
देश	६२	१५	दश
	६३	३३	लिए
घट	६४	१५	घटे
बूझ	६८	१८	बूझे
	१००	६	मे
वथ	१०१	५	वथा
मनोरजन	१०१	६	मनारजन
व्यतीन	१०४	१३	व्यतीत
पत्ना	११८	८	पत्नी
हा	१२०	१४	ही
उनने	२०५	१५	उसके
वचारा	२५२	१४	वे चारा
काई	२८५	५	कोई
ता	२८८	१८	ता
ना	४२५	०	लागे

